अष्टाध्यायी सहजबोध

तृतीय भाग : कृदन्तप्रकरणम्

डॉ० पुष्पा दीक्षित
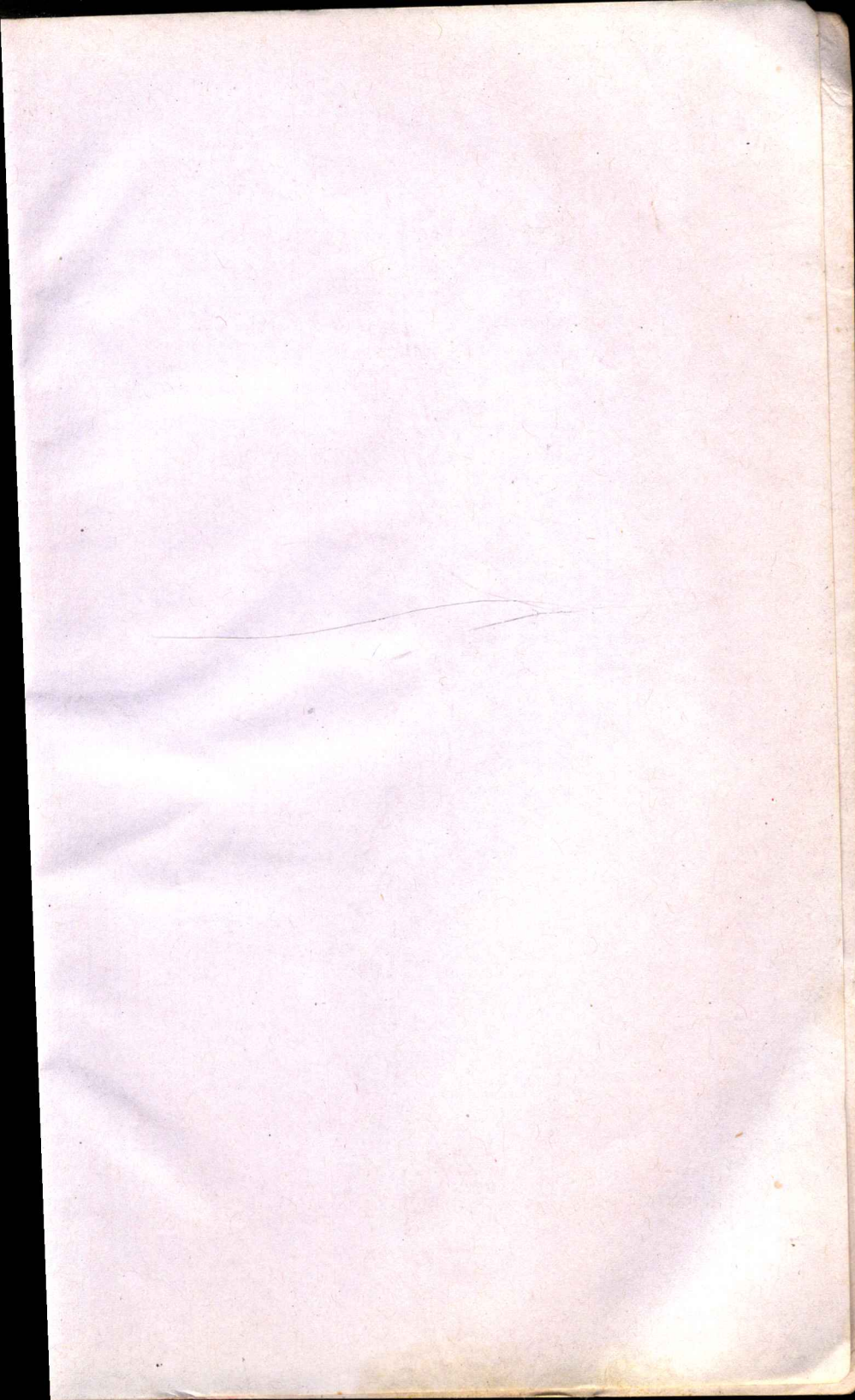
अष्टाध्यायी सहजबोध

(पाणिनीय अष्टाध्यायी की सर्वथा नवीन वैज्ञानिक व्याख्या)

तृतीय भाग

कृदन्तप्रकरणम्

रचयित्री

डॉ० (श्रीमती) पुष्पा दीक्षित

प्रतिभा प्रकाशन

दिल्ली भारत

तृतीय संस्करण 2011

ISBN : 978-81-7702-121-4 (तृतीय भाग)
978-81-7702-007-2 (सेट)

मूल्य : 1500 (Set 1-4 vols.)

प्रकाशक :
डॉ० राधेश्याम शुक्ल
एम.ए., एम. फ़िल्., पी-एच.डी.
प्रतिभा प्रकाशन
(प्राच्यविद्या-प्रकाशक एवं पुस्तक-विक्रेता)
7259/23, अजेन्द्र मार्केट, प्रेमनगर
शक्तिनगर, दिल्ली-110007
दूरभाष : (O) 011-47084852, (M) 9350884227
e-mail : pratibhabooks@ymail.com

टाईप सेटिंग : एस०के० ग्राफिक्स
दिल्ली-84

मुद्रक : एस०के० ऑफसेट, दिल्ली

AṢṬĀDHĀYĪ SAHAJABODHA

A Modern & Scientific Approach
To
Pāṇini's Aṣṭādhyāyī

Volume III
Kṛdantaprakaraṇam

By

Dr. (Smt.) Pushpa Dixit

PRATIBHA PRAKASHAN
DELHI-110007

Third Edition : 2011

ISBN : 978-81-7702-121-4 (Vol. III.)
978-81-7702-007-2 (Set)

Rs. : 1500 (Set 1-4 vols.)

Published by :
Dr. Radhey Shyam Shukla
M.A., Ph.D.
PRATIBHA PRAKASHAN
(Oriental Publishers & Booksellers)
7259/23. Ajendra Market,
Prem Nagar, Shakti Nagar
Delhi-110007
Ph. : (O) 47084852, 09350884227
e-mail : pratibhabooks@ymail.com

Laser Type Setting :
S.K. Graphics, Delhi–84

Printed at : **S.K. Offset,** Delhi

समर्पणम्

आचार्य डॉ. बच्चूलाल अवस्थी,
अधिष्ठाता,
आचार्यकुल, कालिदास अकादमी, उज्जैन, म. प्र.

अस्मादृशामबोधविक्लवानामनुग्रहायैवातिभया-
ग्रहत्रिविधतापग्राहग्रस्तेऽस्मिन् संसारचक्रे लब्धजन्म-
परिग्रहेभ्यो, धर्मस्यापरविग्रहेभ्यः, सर्वशास्त्रसंशयो-
च्छेदकेभ्यः, स्वीयावस्थितिमात्रेणैव भारतस्य भारतत्वं
प्रख्यापयद्भ्यो, ग्रन्थस्यास्य निष्पत्तेर्मूलाधारेभ्यः, स्वीय-
कृपाकटाक्षलवेनैव जडानजडयद्भ्यः, विद्वच्छिरो-
मणिभ्यः, वैयाकरणतल्लजेभ्यः, कवीश्वरानप्यतिशयानेभ्यो,
वश्यवाचामग्रणीभ्यो, गुरुवर्येभ्यः, सर्वतन्त्रस्वतन्त्रेभ्यः,
श्रीमद्बच्चूलालावस्थिपादेभ्यो ग्रन्थमिमं सादरं समर्पये।
तपःपूतचेतसां तेषामेवायं, न मम।

❀ ❀ ❀

सदाशीः

आचार्य रामयत्न शुक्ल, भूतपूर्व व्याकरणविभागाध्यक्ष, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, (उ. प्र.)

व्याकरणशास्त्र सर्वशास्त्रोपकारक है, भगवान् पाणिनि के पहिले के और भगवान् पाणिनि के बाद के भी अनेक व्याकरण हैं, किन्तु लौकिक, वैदिक उभय शब्दों को साधुत्व प्रदान करने के कारण वैज्ञानिक पद्धति से लिखा गया पाणिनीय व्याकरण ही अद्यत्वे सर्वमान्य है। पुराकाल में अष्टाध्यायी के अनुसार ही सिद्धान्तकौमुदी, रूपमाला इत्यादि ग्रन्थों के अध्ययन-अध्यापन की परम्परा थी, किन्तु यह संसार ह्रासोन्मुख है, इसीलिये कालक्रम से इस परम्परा का भी ह्रास हो गया।

आजकल सिद्धान्तकौमुदी के अध्येताओं और अध्यापकों के प्रमाद से अष्टाध्यायी के अनुसार कौमुदी के पठन-पाठन की परम्परा अस्त व्यस्त हो गई है, अतः इसके पुनरुद्धार की महती आवश्यकता थी। सिद्धान्तकौमुदी में एक एक सूत्र प्रायः एक एक प्रयोग का ही साधन करता है, जबकि उस सूत्रसम्बन्धी अन्य सारे प्रयोगों का साधन करना भी अत्यावश्यक है, अन्यथा सूत्रवैयर्थ्य प्राप्त होता है। कौमुदी के सारे प्रकरणों में यही समस्या है कि सूत्रसम्बन्धी एक एक रूप के साधन के बाद भी यह शङ्का बनी ही रहती है, कि तत् तत् प्रत्ययों में अन्य धातुओं के तिङन्त अथवा कृदन्त रूप क्या होंगे ? जो माधवीय धातुवृत्ति आदि रूपावलियाँ हैं, उनमें भी सब रूप नहीं मिलते हैं, अतः कौमुदी में तथा रूपावलियों में सारे रूप न मिलने के कारण अध्येताओं के लिये बहुत बड़ी कठिनाई है।

बहुत दिनों से मेरे मन में भी यह था, कि एक एक धातु के सारे तिङन्त और सारे कृदन्त रूप किसी विधि से एक ही स्थान पर दिखा दिये जायें, किन्तु अध्यापन में निरन्तर व्यापृत रहने के कारण समय ही नहीं मिल पाया। जब मैंने देखा कि परम विदुषी, व्याकरणमर्मज्ञा, भारतीय संस्कृति पर आस्थावती पुष्पा देवी जी ने अत्यन्त विचारपूर्वक यह कार्य कर दिया है, तो मुझे अत्यन्त आह्लाद हुआ।

उन्होंने धातुओं को उनके अन्तिम अक्षर के वर्णक्रम से विभाजित करके तथा प्रत्ययों को अनुबन्धों के आधार पर विभाजित करके प्रत्येक धातु के सारे कृत् प्रत्ययान्त रूप तथा सारे तिङन्त रूपों की प्रक्रिया को उपस्थित कर दिया है। यह विभाजन करते समय उन्होंने भाष्य में कथित अनभिधान का भी सम्पूर्ण ध्यान रखा है। यथा - 'क्विप् च' सूत्र से धातुमात्र से होने वाला क्विप् प्रत्यय अनभिधान के कारण भाष्यानुक्त आकारान्त धातुओं से नहीं होता है। इस प्रकार के भाष्यवचनों की प्रामाणिकता भी उनके इस 'अष्टाध्यायी सहजबोध' में है।

व्याकरण जगत् में इस प्रकार के समग्र विचार का सर्वथा अभाव था। पुष्पा दीक्षित जी ने इस अभाव को दूर करके और व्याकरण की इस क्षति की पूर्ति करके वह निदर्शन प्रस्तुत किया है कि इनका उपकार अनन्त काल तक स्मरण किया जायेगा। इनके इस अदम्य पुरुषार्थ को देखकर हम इन्हें लौहपुरुष कहें या इनकी देदीप्यमान कीर्ति को देखकर हम इन्हें स्वर्णपुरुष कहें, वस्तुतः ये सर्वथा अनुपम हैं।

ऐसी विदुषी की इस नवीनतम कार्यप्रणाली के प्रति, व्याकरण जगत् की ओर से उन्हें अखण्ड साधुवाद देता हुआ मैं, इस ग्रन्थ के प्रचार प्रसार के लिये और पुष्पा जी के चिरायुष्ट्व के लिये कामना करता हूँ। व्याकरण शास्त्र में उनकी आस्था अनुदिन बढ़ती जाये तथा अग्रिम सन्तान इसका लाभ ले। उनके इस कार्य का सम्मान सारे संसार को करना चाहिये। भगवान् विश्वनाथ तथा भगवती पार्वती से प्रार्थना है कि वे इनके द्वारा पाणिनीय व्याकरण का सारा कार्य सम्पन्न कराकर विश्व को आलोक प्रदान करें।

वाराणसी ५.११.२००४

।। पाणिनये नमः ।।

आचार्य डॉ. बच्चूलाल अवस्थी, पूर्व-अधिष्ठाता, आचार्यकुल, कालिदास अकादमी, उज्जैन, म. प्र.

पाणिनीय अष्टाध्यायी के अध्ययन हेतु दो परिभाषाओं द्वारा दो पद्धतियाँ बतायी गई हैं - १. यथाकालं संज्ञापरिभाषम्। २. यथोद्देशं संज्ञापरिभाषम्।

काशिकावृत्ति की यथाकाल सरणि है और प्रक्रिया ग्रन्थों में यथोद्देशपद्धति पायी जाती है। यही कारण है कि प्रक्रियाग्रन्थों में एक प्रयोग के लिये सारे सूत्र उपस्थित होकर भी तत् तत् सूत्रविषयक सारा विवरण नहीं दे पाते हैं। वह सब बुद्धिगम्य ही रह जाता है। प्रक्रियाग्रन्थों की दूसरी विसंगति यह है कि प्रक्रिया के अनुसार प्रकरणों का विभाजन हो जाने के कारण अधिकार सूत्र वहाँ अपने स्वरूप को प्रकट नहीं कर पाते हैं, अतः प्रयोग तो सिद्ध हो जाते हैं, किन्तु अष्टाध्यायी का विज्ञान अनधिगत ही रह जाता है।

सिद्धान्तकौमुदी का कृदन्तप्रकरण वस्तुतः अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय की ही क्रमिक व्याख्या है, किन्तु इसमें प्रक्रियासूत्रों का व्यवधान आ जाने से और छान्दस सूत्रों के अलग हो जाने से अष्टाध्यायी का सूत्रानुक्रम भग्न हो गया है। डॉ. श्रीमती पुष्पा दीक्षित ने बड़ी चातुरी से अङ्गकार्यों को पृथक् कर दिया है और छान्दस सूत्रों को यथास्थान स्थापित करके लौकिक, वैदिक उभय शब्दों को एक साथ सिद्ध करते हुए अष्टाध्यायी के स्वरूप की रक्षा की है।

इसके अतिरिक्त कौमुदी का अध्येता एक प्रत्यय को एक धातु से तो लगा लेता है, किन्तु अन्य सारे धातुओं में उस प्रत्यय के क्या क्या रूप होंगे, इस विचिकित्सा से मुक्त नहीं हो पाता है। डॉ. श्रीमती पुष्पा दीक्षित ने इस ग्रन्थ में एक एक प्रत्यय को सारे धातुओं में लगाकर उसके सारे रूपों को बनाने की प्रक्रिया दे दी है। इसके लिये उन्होंने अङ्गकार्यों को आधार बनाकर धातुपाठ का जो पुनः वर्गीकरण किया है, वह अद्भुत है।

इस दृष्टि से पाणिनीयशास्त्र का चिन्तन उनके पूर्व किसी ने नहीं किया है। कौमुदी में वैदिक प्रक्रिया को मूल से पृथक् कर दिया है, और उसे प्रकरणबद्ध न करके अष्टाध्यायी के क्रम से ही रख दिया है, इस कारण सामान्यत: कौमुदी का छात्र वैदिकी प्रक्रिया को कोई अलग प्रक्रिया समझकर उससे पलायन कर जाता है। इस ग्रन्थ में लौकिक, वैदिक दोनों ही सूत्रों को साथ साथ ले लेने से लौकिक, वैदिक शब्द साथ ही सिद्ध हो जाते हैं।

सम्राट् अकबर के सभासद् राजा बीरबल 'ब्रह्म' नाम से कवि भी थे। उन्होंने उस कालखण्ड में ब्राह्मणत्व के साथ साथ शास्त्रों की भी रक्षा की। अत: उनहोंने वाराणसी से वैयाकरणधौरेय शेषश्रीकृष्ण को अपने यहाँ प्रतिष्ठा दी। शेषश्रीकृष्ण के शिष्य भट्टोजिदीक्षित और पुत्र शेषवीरेश्वर थे। वहीं से नव्यव्याकरण का सूत्रपात हुआ। भट्टोजिदीक्षित के पुत्र भानुजिदीक्षित अमरकोश के मनीषी टीकाकार हैं और हरिजिदीक्षित उनके पौत्र हैं, जिन्होंने भट्टोजिदीक्षित के महनीय ग्रन्थ प्रौढ़मनोरमा पर शब्दरत्न नाम की टीका लिखी। वे शेषवीरेश्वर के शिष्य थे। शेषवीरेश्वर के अन्य शिष्य नागोजिभट्ट ने प्रौढ़मनोरमा की शब्देन्दुशेखर टीका लिखी। इस प्रकार यथोद्देश पद्धति का नव्यव्याकरण के रूप में अब तक अध्ययन होता रहा।

इस शताब्दी का आरम्भ होते न होते दोनों पद्धतियों का समागम डॉ. श्रीमती पुष्पा दीक्षित में पाया जाता है। इस प्रकार नव्यव्याकरण के सतत विकास की यह परम्परा भट्टोजिदीक्षित से लेकर पुष्पा दीक्षित तक अविच्छिन्न चल रही है।

वे बीसवीं तथा इक्कीसवीं ख्रीष्ट शताब्दी की महामहिम वैयाकरण हैं। उनकी कृतियों से यह भारतवर्ष कृतार्थ है। आगे शुभाशीर्वाद है कि वे अन्य वेदाङ्गों पर कार्य करके इस पद्धति को पूर्णता दें। शुभं भूयात्।।

उज्जयिनी, १५.११.२००४

जयति पाणिनिर्जयति पुष्पा

अष्टाध्यायी के कुल 3183 सूत्रों में तृतीय से पञ्चम अध्याय पर्यन्त 1821 सूत्र (देखिए प्रत्ययः 3.1.1; निष्प्रवाणिश्च 5.4. 160) 'प्रत्यय' के अधिकारक्षेत्र में आते हैं। जहाँ तृतीय अध्याय के 631 सूत्र धातुओं से धातुरूपात्मक (तिङ्) एवं प्रातिपदिकरूपात्मक (कृत्) प्रत्ययों का (दे. गुप् तिज्किद्भ्यः सन् 3.1.5; सनाद्यन्ता धातवः 32, कृदतिङ् 93, कृत्याः 95; ण्वुल्तृचौ 133. कर्त्तरि कृत् 3.4.67; छन्दस्युभयथा 117) प्रतिपादन करते हैं वहीं चतुर्थ एवं पञ्चम अध्यायों के 1190 सूत्र स्त्रीप्रत्यय-समासान्त सहित (स्त्रियाम् 4.1.3; तद्धिताः 76; समासान्ताः 5.4.68) तद्धित प्रत्ययों का साङ्गोपाङ्ग निरूपण करते हैं।

इससे यह स्पष्ट है कि 'पाणिनीय महाशास्त्र' में प्रत्ययों को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। लगभग 50 प्रतिशत सूत्र केवल प्रत्ययों के विधिनिषेध से ही सम्बन्ध रखते हैं। तद्धित के कम से कम दो ऐसे प्रयोग (इयत्, अधुना) हैं जहाँ पाणिनीय परम्परा में प्रकृति सर्वांशतः लुप्त हो जाती है और केवल प्रत्यय ही शेष रह जाता है। किसी आचार्य ने इस 'प्रत्ययैकशेषविधान' को बड़े अच्छे ढंग से ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या-इस वेदान्त वाक्य के साथ जोड़ा है :

उदितवति 'परस्मिन्' 'प्रत्यये' 'शास्त्रयोनौ'
गतवति विलयं च 'प्राकृते'ऽस्मिन् प्रपञ्चे।
सपदि 'पद'मुदीते केवलः प्रत्ययो यत्
त'दिय'दिति मिमीते कोऽ'धुना' पण्डितोऽपि।।

अष्टाध्यायी के तृतीय से पञ्चम अध्याय तक वर्णित प्रत्ययों को अच्छी तरह समझने के लिए उनके दृश्य और अदृश्य सहचरों (इड्विधान, अनुबन्ध, गुण, वृद्धि आदि) का ज्ञान भी आवश्यक है। सिद्धान्तकौमुदी से इन आवश्यकताओं की पूर्त्ति बहुत कुछ हो जाती है। किन्तु आज की स्थिति में, उन्हें और भी अधिक सरल शैली में प्रस्तुत करने की आवश्यकता है।

यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि महामहिम राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित विदुषी डॉ. श्रीमती पुष्पा दीक्षित ने अपने **अष्टाध्यायी सहजबोध** के माध्यम से सरल हिन्दी में अष्टाध्यायी की गुत्थियों को, प्रयोग की दृष्टि से, सुलझाने का अभिनन्दनीय प्रयास किया है। अष्टाध्यायीक्रम एवं सिद्धान्त कौमुदीक्रम-दोनों क्रमों को मिलाकर उन्होंने प्रस्तुत खण्ड में पाणिनीय प्रत्ययों एवं उनके 'सहचरों' को इस तरह आलोकित किया है कि सामान्य बुद्धि वाले हिन्दी पाठकों को भी इन्हें समझने में कोई कठिनाई नहीं होगी। 'इड्विधान' एवं तद्धित के पाँच महोत्सर्गों के प्रतिपादन इसके उदाहरण हैं। 'गागर में सागर' भरने का यह अपूर्व निदर्शन है।

पाणिनीय 'सूक्ष्मेक्षिका' आज न केवल भारत में, अपितु समस्त विश्व में भाषावैज्ञानिकों को चमत्कृत एवं प्रभावित कर रही है। अपने देश में उसे सुसज्जित और विकसित करने की दिशा में विदुषी लेखिका का यह प्रयास अत्यन्त अभिनन्दनीय है।

जयति पाणिनिर्जयति पुष्पा!

रामकरण शर्मा

– रामकरण शर्मा

वसन्त पञ्चमी
वि.सं. 2061
14-2-05

प्रास्ताविकम्

'ण्वुल्तृचौ' सूत्र धातुमात्र से ण्वुल् और तृच् प्रत्ययों का विधान करता है। अतः जब तक हम सारे धातुओं से ण्वुल् और तृच् प्रत्यय न लगा लें, तब तक इस सूत्र की कृतार्थता नहीं होती। इसी प्रकार 'निष्ठा' सूत्र धातुमात्र से क्त, क्तवतु प्रत्ययों का विधान करता है। अतः जब तक हम सारे धातुओं से क्त, क्तवतु प्रत्यय न लगा लें, तब तक इस सूत्र की कृतार्थता नहीं होती। इसी प्रकार तुमुन्, तव्य आदि प्रत्ययों के विषय में जानना चाहिये। कौमुदी में इन सूत्रों के कुछ उदाहरण देकर शेष सारा कार्य अध्येता की समझ पर छोड़ दिया गया है, जो कि दुष्कर है।

निष्ठा प्रत्यय की इडागम व्यवस्था अत्यन्त क्लिष्ट है। इसमें अतिदेश भी बहुत सारे हैं। अतः इस 'अष्टाध्यायी सहज बोध' में सर्वथा नवीन विधि से प्रक्रिया का चिन्तन है। इसमें एक एक पाठ में एक एक प्रत्यय को लेकर उसके यावत् रूपों का विचार किया गया है। जो क्तिन् आदि प्रत्यय सारे धातुओं से नहीं लगते, उनमें धातुओं को इदमित्थम् विभाजित करके यह दिखा दिया है कि किस धातु से कौन सा प्रत्यय लगेगा।

सारे धातुओं के रूपों की सिद्धि के लिये सारे धातुओं को १३ वर्गों में बाँट दिया गया है। इनमें से एक वर्ग के एक धातु का रूप बनते ही उस वर्ग के सारे धातुओं के रूप स्वतः निष्पन्न हो जाते हैं। ऐसा कर देने से अत्यन्त लाभ यह हुआ है कि एक धातु के रूप बनाने की प्रक्रिया जानते ही छात्र उसी के समान सैकड़ों रूप स्वयं बोलने लगता है क्योंकि पाणिनीय शास्त्र वस्तुतः गणितीय विधि से व्यवस्थित है।

जैसे ऋकारान्त 'कृ' धातु से कृत बनता है, वैसे ही अन्य ऋकारान्त हृ, वृ, भृ, धृ, मृ आदि धातुओं से हृत, वृत, भृत, धृत, मृत रूप ही बनेंगे। अनिट् मकारान्त गम् धातु से गत बनता है, तो अनिट् मकारान्त रम्, यम्, नम्, से रत, यत, नत ही बनेंगे,

यह बात एक बच्चा भी समझ सकता है, किन्तु यदि हम इनमें से कृत को ककारादि धातुओं में डाल दें, हृत को हकारादि धातुओं में डाल दें, मृत को मकारादि धातुओं में डाल दें, धृत को धकारादि धातुओं में डाल दें, वृत को वकारादि धांतुओं में डाल दें, तो इनके रूप तो छात्र जान जायेगा, किन्तु उन्हें बनाने का विज्ञान क्या है, जिसे जानकर वह स्वयं बना ले, कभी नहीं जान पायेगा।

अध्येता का परिश्रम उसके लिये बोझ न बने, इसके लिये आवश्यक है कि धातुरूप तथा कृदन्त रूप बनाने का कार्य धातुओं के अन्तिम अक्षर के क्रम से ही किया जाये। अष्टाध्यायी में धातु सम्बन्धी अङ्गकार्य भी इसी क्रम से हैं।

इस कृदन्त खण्ड के दो वर्ग हैं। पूर्वार्ध में एक एक प्रत्यय को लेकर उसे सारे धातुओं में लगाने की प्रक्रिया का विचार है तथा उत्तरार्ध में सूत्रों की अष्टाध्यायी क्रम से व्याख्या है। विश्वभाषा संस्कृत के विराट् वाङ्मय में जन जन का प्रवेश हो सके, इस दिशा में यह यत्न है।

जिन्हें प्रक्रिया के बिना सीधे किसी भी कृत् प्रत्यय का तैयार रूप देखना है, उनके लिये **'कृदन्तसरणि:'** है। इसमें धातुओं के इसी क्रम को अङ्गीकार करके सारे कृदन्तरूप हैं। इस क्रम से सारे समानाकार रूप एक साथ इकट्ठे हो जाने से यह सरणि कविकर्म के लिये नितान्त उपयोगी हो जाने से इसका अपर नाम **'कविकर्मरसायनम्'** भी रखा है।

पाणिनीय शास्त्र को गणितीय विधि से देखने की दृष्टि पूज्यपाद पिताजी, **प्राणाचार्य पण्डित सुन्दरलाल जी शुक्ल** ने बाल्यावस्था में ही दे दी थी। उसके बाद जब पूज्यपाद गुरुवर्य आचार्य **पण्डित विश्वनाथ जी त्रिपाठी** से सिद्धान्तकौमुदी का अध्ययन किया, तब भी वह संस्कार चित्त में स्थिर था। इन दोनों महनीय आचार्यों के पूज्य श्रीचरण ही इस कार्य के बीज हैं।

जिनके गर्भ में वास ही पाणिनीयशास्त्र में प्रवेश का हेतु बना, उन **पूजनीया जननी सौ. जानकीदेवी** के ऋण से मुक्त होने के लिये अनन्त जन्म भी अत्यल्प हैं।

अपनी प्रतिभा से पण्डित समुदाय को निस्तेज कर देने वाले, पिताजी और गुरुदेव के समवेत विग्रह, अपरपाणिनि, **आचार्य डॉ. बच्चूलाल जी अवस्थी** ने इस कार्य को करने की दिव्यदृष्टि मुझे दी है, और पदे पदे मेरी शङ्काओं को निर्मूल किया है। उनके श्रीचरणों में मैं कोटिश: प्रणाम अर्पित करती हूँ।

पूज्य पतिदेव **प्रो. शिवप्रसाद जी दीक्षित** का अखण्ड सहयोग इस कार्य में रहा

है। उन्होंने सर्वतोभावेन इस कार्य की पूर्णता की कामना की है।

हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर के आचार्य डॉ. राधावल्लभ जी त्रिपाठी जो मेरे अनुजकल्प हैं, उनकी प्रेरणा ही इसे ग्रन्थबद्ध करने का हेतु है।

जिनकी शास्त्रसाधना से काशी की विद्वत्परम्परा अखण्ड है, ऐसे परमपूज्य गुरुदेव आचार्य डॉ. रामयत्न शुक्ल जी तथा सुप्रसिद्ध वैयाकरण पूज्य आचार्य डॉ. रामकरण जी शर्मा, इस कार्य में मेरे पथप्रदर्शक हैं।

पाणिनीय शास्त्र में जिनकी गति निर्बाध है, ऐसी प्रिय मित्र डॉ. मनीषा पाठक का इस कार्य में जो असीम सहयोग मिला है, वह शब्दवाच्य नहीं हैं।

पूज्याग्रजा श्रीमती कृष्णकान्ता वाजपेयी, श्रीमती चन्द्रकान्ता मिश्र, श्रीमती सुशीला वाजपेयी श्रीमती सूर्यकान्ता वाजपेयी, डॉ. ज्ञानवती अवस्थी तथा अनुज डॉ. शिवदत्त शुक्ल और डॉ. विष्णुदत्त शुक्ल ने पूज्य पिताजी का प्रतिबिम्ब मुझ जैसे अल्पज्ञ में देखना चाहा है। मुझे विश्वास है कि वे मेरे इस कार्य से अवश्य तुष्ट होंगे।

मैं अपने महाविद्यालय की प्राचार्या डॉ. शीला तिवारी की भी कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने इस कार्य की गुरुता को समझकर, मुझे निर्विघ्न कार्य करने का अवसर दिया।

पूज्य गुरुवर्य डॉ. कृष्णकान्त जी चतुर्वेदी (जबलपुर), वेद, भारतीय दर्शन, भारतीय इतिहास तथा गणित के विद्वान् मनीषी अग्रजकल्प डॉ. विष्णुकान्त वर्मा (बिलासपुर), संस्कृत के प्रकृष्ट विद्वान् आचार्य डॉ. ओम्प्रकाश त्रिवेदी, आई. पी. एस. (बिलासपुर), श्रीमती गीता त्रिवेदी, कविराज डॉ. अभिराज राजेन्द्र मिश्र तथा डॉ. श्रीमती राजेश मिश्र (वाराणसी), डॉ. श्रीमती सत्यवती त्रिपाठी, सागर, कविवर डॉ. रमाकान्त शुक्ल (दिल्ली), डॉ. इच्छाराम द्विवेदी (दिल्ली), डॉ. भास्कराचार्य त्रिपाठी (भोपाल), वैयाकरण डॉ. किशोरचन्द्र पाढी (पुरी), डॉ. अच्युतानन्द दाश (सागर), संगणकयन्त्र से शास्त्रों को सम्बद्ध करने वाले श्री पी. रामानुजन् (बेंगलोर), डॉ. सरोजा भाटे (पुणे), वैयाकरण श्रीनिवासाचार्य जी त्रिपाठी (बिलासपुर), वैयाकरण डॉ. कमलाप्रसाद पाण्डेय (बिलासपुर), संस्कृत के महाकवि डॉ. पूर्णचन्द्र शास्त्री (बरगढ़), वैयाकरण डॉ. कामताप्रसाद त्रिपाठी, (खैरागढ़) प्रभृति

प्रभृति देश के मूर्धन्य संस्कृत विद्वज्जनों का समग्र भावजगत् ही इस कार्य की आकृति में प्रकट हुआ है। मैं उन सभी की कृतज्ञ हूँ।

दर्शनशास्त्र की आचार्या अनन्य मित्र कु. ललिता वर्मा (जबलपुर), पुत्र श्री अजेय त्रिवेदी और स्नुषा डॉ. पद्मा त्रिवेदी का समग्र अन्तर्मन इस कार्य के साथ अनवरत संलग्न था, अतः ये सभी इस कार्य के कारण हैं।

जिसके कण्ठ में पाणिनीय शास्त्र विद्यमान है, जिसकी विद्या रसनाग्रनर्तकी है और मध्यप्रदेश का संस्कृत भविष्य जिसके हाथों में है, ऐसी पुत्रीकल्पा डॉ. **पूर्णिमा केलकर**, का भी इस ग्रन्थ में अपार सहयोग है।

जब इस कार्य को प्रारम्भ किया था, तब **शिष्य अभिजित् दीक्षित** तीन वर्ष का था। आज वह २१ वर्ष का है। उसने इस ग्रन्थ के उट्टङ्कण के कार्य में समग्र सहयोग दिया है। वह पाणिनीयविज्ञान को भी आरपार जानता है। अष्टाध्यायी की इस नवीन विधि का वह प्रत्यक्ष निदर्शन है।
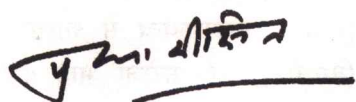
डॉ. राजकुमार तिवारी, डॉ. राजुल जैन, कु. वर्षा जैन, डॉ. दीप्ति तिवारी, डॉ. अनीता जैन, टी. एम. नरेन्द्रन्, गिरधारीलाल शर्मा, प्रभृति छात्रों के सतत सहयोग से इसका लेखन यथासमय सम्पन्न हो सका है।

अल्पज्ञजीव की कृति परिपूर्ण हो नहीं सकती अतः समग्र अवधानता के बाद भी कमियाँ बहुत सी रह ही गई होंगी। विद्वज्जन इसे मेरी अल्पज्ञता समझकर क्षमा करें तथा उनका समाधान करके उपकृत करें, यही निवेदन है। अनन्त शब्दव्योम में यह अल्पज्ञ जीव कितनी दूर तक उड़ सका है, इसे विज्ञ पाठक ही तय कर सकेंगे। पाणिनीयमहाशास्त्र का एक भी जिज्ञासु, यदि इससे कुछ पा सका, तो यही इसकी कृतार्थता होगी।

जो अव्यक्त, सर्वकारण, सर्वज्योतिः, निर्गुण, निर्विकार, अनिर्वचनीय, निष्क्रिय, केवल, विशुद्धसत्तास्वरूप होते हुए भी जगत् की प्रत्येक क्रिया में लीलारत हैं, उन्हीं भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र की यह कृति है। मेरा कहने को कुछ भी नहीं।

विजयादशमी, विक्रमाब्द २०६१

२३. १०. २००४

विषयानुक्रमणिका

विषय		पृष्ठसंख्या

परिशिष्ट -

अष्टाध्यायी सहजबोध, तृतीयखण्ड

कृदन्तप्रकरण - पूर्वार्ध

कृत् प्रत्ययों को लगाने की प्रक्रिया
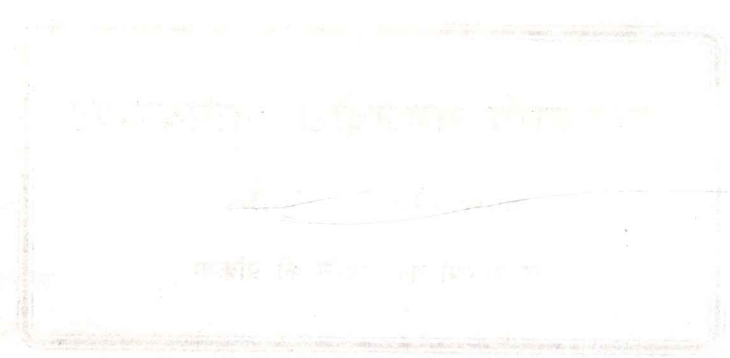
।। श्रीहरिः ।।

विषय प्रवेश

कृदन्त शब्द बनाने के लिये हमें जानना चाहिये कि -

१. किस धातु से,

२. किस अर्थ में

३. किस सूत्र से

४. कौन सा प्रत्यय

५. किस प्रकार लग रहा है ?

इस ग्रन्थ में ये कार्य दो हिस्सों में किये गये हैं। **इस पूर्वार्ध में हम आपको केवल पाँचवीं बात बतलायेंगे कि 'धातु से प्रत्यय किस प्रकार लगता है'।**

शेष चारों बातें इसी के उत्तरार्ध में पाणिनीय अष्टाध्यायी के ही सूत्रक्रम से बतलायेंगे।

इससे दो लाभ होंगे। पहिला तो यह कि जब आप इस पूर्वार्ध को पढ़कर धातुओं में प्रत्यय लगाने की प्रक्रिया जान जायेंगे, तब उत्तरार्ध में सूत्रों के जो उदाहरण आयेंगे, वे आपकी बुद्धि में झटिति स्फुरित होते जायेंगे, क्योंकि उन्हें बनाने की प्रक्रिया आप जान चुके हैं। दूसरा यह कि पाणिनीय अष्टाध्यायी का सूत्रक्रम सुरक्षित रहेगा, जिससे कि पाणिनीय शास्त्र का पूरा विज्ञान आपके सामने स्पष्ट हो जायेगा।

अतः हम पूर्वार्ध का प्रारम्भ करते हैं किन्तु उसमें प्रवेश करने के लिये हमें पाणिनीय शास्त्र के कुछ शब्दों की जानकारी होना ही चाहिये। ये इस प्रकार हैं -

धातु

होना, जाना, करना, पढ़ना, देखना आदि जितनी भी क्रियाएँ होती हैं, उन क्रियाओं के वाचक जो भू, गम्, कृ, पठ्, दृश् आदि शब्द हैं, उनको संस्कृत में धातु कहा जाता है। धातु दो प्रकार के होते हैं -

१. अप्रत्ययान्त धातु

भूवादयो धातवः (३.१.१) - क्रिया के वाची भू आदि की धातु संज्ञा होती है। ये सारे धातु भगवान् पाणिनि ने धातुपाठ में इकट्ठे करके दे दिये हैं। उसी धातुपाठ के आधार पर इस ग्रन्थ की रचना हुई है। धातुपाठ में १९४३ धातु हैं। इन **धातुओं** को

उन्होंने १० वर्गों में विभाजित किया है। इन वर्गों को गण कहते हैं।

इन समस्त धातुओं में सारे कृत् प्रत्यय लगाना हमें सीखना है। पाणिनीय धातुपाठ इस ग्रन्थ के पीछे दिया गया है।

इन धातुओं के रूपों का अनेकविधि से आलोचन करने पर, यही निष्कर्ष मिलता है कि जब भी धातु से कोई प्रत्यय लगता है, तब वह प्राय: अजन्त धातुओं के अन्तिम स्वर को तथा हलन्त धातुओं की उपधा (अन्त के ठीक पहले) के स्वर को प्रभावित करता है।

अत: प्रत्ययों के प्रभाव की दृष्टि से, तथा धातुओं के अन्य कार्यों की दृष्टि से हमने पाणिनीय धातुपाठ तो ज्यों का त्यों, पूरा का पूरा लिया है किन्तु उसके क्रम को पूर्णत: परिवर्तित कर दिया है।

२. प्रत्ययान्त धातु -

इस धातुपाठ में कहे गये धातुओं के अलावा तृतीय अध्याय में 'गुप्तिज्किद्भ्य: सन्' (३.१.५) सूत्र से लेकर 'आयादय आर्धधातुके वा' (३.१.३१) तक के सूत्रों में १२ प्रत्यय कहे गये हैं। ये प्रत्यय जिस भी शब्द के अन्त में लग जाते हैं, उसका नाम भी धातु हो जाता है। ये सूत्र इस प्रकार हैं -

१. गुप्तिज्किद्भ्य: **सन्**।
२. मान्बधदान्शान्भ्यो दीर्घश्चाभ्यासस्य।
३. धातो: कर्मण: समानकर्तृकादिच्छायां वा।
(सर्वप्रातिपदिकेभ्य: **क्विब्वा** वक्तव्य: - वार्तिक)।
४. सुप आत्मन: **क्यच्**।
५. **काम्यच्च**।
६. उपमानादाचारे।
७. कर्तु: **क्यङ्** सलोपश्च।
८. भृशादिभ्यो भुव्यच्वेर्लोपश्च हल:।
९. लोहितादिडाज्भ्य: **क्यष्**।
१०. कष्टाय क्रमणे।
११. कर्मणो रोमन्थतपोभ्यां वर्तिचरो:।
१२. वाष्पोष्मभ्यामुद्वमने।
१३. शब्दवैरकलहाभ्रकण्वमेघेभ्य: करणे।

१४. सुखादिभ्यः कर्तृवेदनायाम्।
१५. नमोवरिवसश्चित्रङः क्यच्।
१६. पुच्छभाण्डचीवराण्णिङ्।
१७. मुण्डमिश्रश्लक्ष्णलवणव्रतवस्त्रहलकलकृततूस्तेभ्यो **णिच्**।
१८. धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे **यङ्**।
१९. नित्यं कौटिल्ये गतौ।
२०. लुपसदचरजपजभदहदशगॄभ्यो भावगर्हायाम्।
२१. सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच्।
२२. हेतुमति च।
२३. कण्ड्वादिभ्यो **यक्**।
२४. गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्यः **आयः**।
२५. ऋतेरीयङ्।
२६. कमेर्णिङ्।
२७. आयादय आर्धधातुके वा।

सनाद्यन्ता धातवः (३.१.३२) - ऊपर कहे गये सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यष्, क्यङ्, क्विप्, णिङ्, ईयङ्, णिच्, यक्, आय, यङ्, ये १२ प्रत्यय जिसके भी अन्त में लगते हैं, उसका नाम भी 'धातु' हो जाता है। धातुओं तथा प्रातिपदिकों में इनके लगने से धातुओं की संख्या अनन्त हो जाती है। **इन प्रत्ययों से प्रत्ययान्त धातु बनाने की विधि 'अष्टाध्यायी सहज बोध' के द्वितीय खण्ड में विस्तार से दी गई है। उसे वहीं देखें।**

इन समस्त प्रत्ययान्त धातुओं में भी सारे कृत् प्रत्यय लगाना हमें सीखना है।

प्रत्यय

प्रत्ययः (३.१.१) - यह अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय का प्रथम सूत्र है।

यह अधिकार सूत्र है। इसका अधिकार इस सूत्र से प्रारम्भ होकर पञ्चम अध्याय के अन्त तक अर्थात् निष्प्रवाणिश्च (५.४.१६०) सूत्र तक चलता है।

इस प्रकार अष्टाध्यायी के तृतीय, चतुर्थ तथा पञ्चम अध्यायों में 'प्रत्ययः' का अधिकार है। अतः अष्टाध्यायी के ये तीन अध्याय प्रत्ययाध्याय कहलाते हैं।

इस प्रत्ययाधिकार में कहे जाने वाले प्रत्यय दो प्रकार के हैं। धातुओं से लगने वाले प्रत्यय तथा प्रातिपदिकों (किसी भी अर्थवान् शब्द) से लगने वाले प्रत्यय।

प्रत्यय का अर्थ है, जो धातुओं अथवा प्रातिपदिकों के बाद लगें और लगकर उनके

अर्थों में कुछ न कुछ वृद्धि कर दें, उन्हें प्रत्यय कहते हैं।

जैसे - कृ धातु का अर्थ है 'करना', किन्तु कृ में तृच् लगाने पर जो कृ + तृ = कर्ता, शब्द बनता है, उसका अर्थ होता है 'करने वाला'। इसी प्रकार - कृ + क्त्वा = का अर्थ होता है 'करके'। कृ + तव्य का अर्थ होता है 'करने के योग्य', आदि।

दशरथ का अर्थ है अयोध्या के राजा। पर जब दशरथ शब्द से इञ् प्रत्यय लगाकर 'दाशरथि' शब्द बनता है, तो इसका अर्थ हो जाता है 'दशरथ का अपत्य' (सन्तान) अर्थात् राम, लक्ष्मण, भरत आदि। कौसंल्या का अर्थ है दशरथ की पत्नी। पर जब कौसल्या शब्द से ढक् प्रत्यय लगाकर 'कौसल्येय' शब्द बनता है, तो इसका अर्थ हो जाता है 'कौसल्या का अपत्य' (सन्तान) अर्थात् राम।

धातुओं से लगने वाले प्रत्यय - धातुओं से लगने वाले प्रत्यय, अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय में हैं। ये चार प्रकार के हैं।

१. धातुप्रत्यय - सन्, क्यच् ,काम्यच्, क्यष्, क्यङ्, क्विप्, णिङ्, ईयङ्, णिच्, यक्, आय, यङ्, ये १२ प्रत्यय धातुप्रत्यय कहलाते हैं। ये प्रत्यय जिस भी धातु अथवा प्रातिपदिक से लगते हैं, उसे धातु बना देते हैं, अर्थात् उनकी 'सनाद्यन्ता धातवः' सूत्र से धातु संज्ञा कर देते हैं। ये प्रत्यय अष्टाध्यायी में ३.१.५ से ३.१.३२ तक के सूत्रों में हैं।

२. विकरणप्रत्यय - धातु और प्रत्यय के बीच में आकर बैठने वाले प्रत्यय को विकरण कहते हैं। विकरण का ही दूसरा नाम गणचिह्न भी है। ये प्रत्यय अष्टाध्यायी में ३.१.३३ से ३.१.९० तक के सूत्रों में हैं।

३. तिङ्प्रत्यय - लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ् तथा लृङ्। इन दस लकारों के स्थान पर होने वाले जो प्रत्यय हैं, उन्हें तिङ् प्रत्यय कहते हैं। ये प्रत्यय अष्टाध्यायी में ३.१.९१ से ३.४.११७ तक के सूत्रों के बीच हैं।

४. कृत्प्रत्यय - इन्हें जानने के लिये हमें सावधानी से समझना चाहिये कि-

अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय में दो धात्वधिकार हैं -

प्रथम धात्वधिकार - प्रथम धात्वधिकार 'धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ् (३.१.२२)' इस सूत्र के धातोः पद से लेकर 'कुषिरजोः प्राचाम् श्यन् परस्मैपदं च (३.१.९०)' सूत्र तक चलता है। इस प्रथम धात्वधिकार में धातुप्रत्यय तथा विकरण प्रत्यय कहे गये हैं। **अतः इस अधिकार में कहा गया कोई भी प्रत्यय, कृत् प्रत्यय नहीं है।**

द्वितीय धात्वधिकार - द्वितीय धात्वधिकार 'धातोः (३.१.९१)' इस सूत्र से लेकर

'छन्दस्युभयथा (३.४.११७)' सूत्र तक चलता है। इसमें दो प्रकार के प्रत्यय हैं। तिङ् प्रत्यय और कृत् प्रत्यय।

कृदतिङ् - ३.१.९३ - इस द्वितीय धात्वधिकार में कहे गये प्रत्ययों में जो प्रत्यय तिङ् नहीं हैं, उनका नाम ही कृत् प्रत्यय है। **ये १२४ हैं।**

कृत्य प्रत्यय -

इन १२४ कृत् प्रत्ययों में से तव्य, तव्यत्, अनीयर्, यत्, ण्यत्, क्यप् इन ६ प्रत्ययों का नाम कृत् प्रत्यय भी है तथा कृत्य प्रत्यय भी है।

शेष प्रत्ययों का नाम केवल कृत् प्रत्यय है। इनका भेद आगे स्पष्ट किया जायेगा। इन्हें सावधानी से पहिचानना चाहिये।

(अत: प्रथम अधिकार में कहा गया कोई भी प्रत्यय, कृत् प्रत्यय नहीं है।)

धातुओं से लगने वाले ये सारे प्रत्यय पुन: दो-दो प्रकार के होते हैं -

तिङ् शित् सार्वधातुकम् (३.४.११३) - लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् इन चार लकारों के प्रत्ययों की, तथा धातुओं से लगने वाले शित् प्रत्ययों की सार्वधातुक संज्ञा होती है। जिन कृत् प्रत्ययों में श् की इत् संज्ञा हुई है, ऐसे सार्वधातुक कृत् प्रत्यय नौ हैं - शतृ, शानच्, शानन्, चानश्, खश्, श, एश्, शध्यै, शध्यैन् = ९।

आर्धधातुकं शेष: (३.४.११४) - धातु से लगने वाले जिन प्रत्ययों की सार्वधातुक संज्ञा नहीं होती है, उनकी आर्धधातुक संज्ञा होती है। अत: इन ९ कृत् सार्वधातुक प्रत्ययों के अलावा जितने भी कृत् प्रत्यय बचे, उन्हें आप आर्धधातुक कृत् प्रत्यय समझिये। आर्धधातुक कृत् प्रत्यय ११५ हैं। ये सब आगे दिये जा रहे हैं।

प्रातिपदिकों से लगने वाले प्रत्यय -

प्रातिपदिकों से लगने वाले प्रत्यय, अष्टाध्यायी के चतुर्थ तथा पञ्चम अध्याय में हैं। ये अगले 'तद्धित खण्ड' में विस्तार से बतलाये जा रहे हैं।

व्याकरणशास्त्र की कुछ प्रमुख संज्ञाएँ

अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा (१.१.६५) - अन्तिम अल् के पूर्व के वर्ण की उपधा संज्ञा होतीं है। यथा - किसी भी शब्द के अन्तिम वर्ण के ठीक पहिले वाला वर्ण 'उपधा' कहलाता है। जिन धातुओं की उपधा में ह्रस्व 'अ' है, उन्हें हम अदुपध धातु कहते हैं। जिन धातुओं की उपधा में ह्रस्व 'इ' है, उन्हें हम इदुपध धातु कहते हैं। जिन धातुओं की उपधा में ह्रस्व 'उ' है, उन्हें हम उदुपध धातु कहते हैं। जिन धातुओं की उपधा में 'ऋ' है, उन्हें हम ऋदुपध धातु कहते हैं। जैसे -

अदुपध धातु	इदुपध धातु	उदुपध धातु	ऋदुपध धातु
पठ्	मिद्	मुद्	वृष्
वद्	भिद्	बुध्	कृष्
रट्	छिद्	शुभ्	हृष्
हन् आदि	चित् आदि	रुच् आदि	वृध् आदि

गुण - 'अदेङ् गुणः (१.१.२)' सूत्र अ, ए, ओ, की ही गुण संज्ञा करता है किन्तु 'उरण् रपरः' सूत्र ऋ, ॠ के स्थान पर होने वाले गुण को रपर करके 'अर्' बना देता है तथा लृ के स्थान पर होने वाले गुण को लपर करके 'अल्' बना देता है।

इस प्रकार गुण पाँच हो जाते हैं। अ, इ, उ, अर्, अल्।

गुण होने का अर्थ है -

'इ', 'ई' को 'ए' हो जाना - चि - चे / नी - ने आदि।
'उ', 'ऊ' को 'ओ' हो जाना - द्रु - द्रो / भू - भो आदि।
'ऋ', 'ॠ' को 'अर्' हो जाना - हृ - हर् / तॄ - तर् आदि।

वृद्धि - 'वृद्धिरादैच् (१.१.१)' सूत्र आ, ऐ, औ, की ही वृद्धि संज्ञा करता है किन्तु 'उरण् रपरः' सूत्र ऋ, ॠ के स्थान पर होने वाली वृद्धि को रपर करके 'आर्' बना देता है तथा लृ के स्थान पर होने वाली वृद्धि को लपर करके 'आल्' बना देता है।

इस प्रकार वृद्धि भी पाँच हो जाती हैं। आ, ऐ, औ, आर्, आल्।

वृद्धि होने का अर्थ है -

'इ', 'ई' को 'ऐ' हो जाना - चि - चै / नी - नै आदि।
'उ', 'ऊ' को 'औ' हो जाना - द्रु - द्रौ / भू - भौ आदि।
'ऋ', 'ॠ' को 'आर्' हो जाना - हृ - हार् / तॄ - तार् आदि।

सम्प्रसारण - इग्यणः सम्प्रसारणम् (१.१.४५) - य्, व्, र्, ल् को इ, उ, ऋ, लृ हो जाना सम्प्रसारण होना कहलाता है। जैसे - यज् - इज् / वच् - उच् / व्रश्च् - वृश्च्।

संयोग - हलोऽनन्तराः संयोगः (१.१.७) - ऐसे दो या दो से अधिक व्यञ्जन, जिनके बीच में कोई स्वर न आया हो, उनका नाम संयोग होता है। जैसे - पुष्प में - ष् + प् का संयोग है। बुद्धि में - द् + ध् का संयोग है। कृत्स्न में - त् + स् + न् का संयोग है। वृष्णि में - ष् + ण् का संयोग है।

लघु - ह्रस्वं लघु (१.४.१०) - एक मात्रा वाले, अ, इ, उ, ऋ, ऌ, इन पाँच

स्वरों का नाम ह्रस्व है। इन्हें ही लघु कहते हैं।

गुरु - संयोगे गुरु (१.४.११) - संयोग के पूर्व में स्थित लघु स्वरों की गुरु संज्ञा होती है।

दीर्घं च (१.४.१२) - आ, ई, ऊ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ इन दीर्घ स्वरों का नाम भी गुरु है।

आदि - आदि का अर्थ प्रारम्भ होता है। जैसे - पठ्, वद्, खाद् के आदि (प्रारम्भ) में, हल् (व्यञ्जन) हैं, अत: ये धातु हलादि हैं। अत्, इच्छ् आदि धातुओं के आदि (प्रारम्भ) में, अच् (स्वर) हैं, अत: ये धातु अजादि हैं।

टिसंज्ञा - अचोऽन्त्यादि टि (१.१.६४) - किसी भी अजन्त शब्द को देखिये। उसमें जो अन्तिम 'अच्' होता है, उसका नाम 'टि' होता है। जैसे - राम में 'अ', हरि में 'इ', गुरु में 'उ' आदि 'टि' हैं।

अब किसी भी हलन्त शब्द को देखिये। हलन्त शब्द में, जो अन्तिम 'अच्' होता है, उस अन्तिम 'अच्' के सहित उसके आगे जो भी 'हल्' हो, उसका नाम 'टि' होता है। जैसे - मनस् में 'अस्', चर्मन् में 'अन्', भवत् में 'अत्' आदि।

स्थानी तथा आदेश - किसी वर्ण को या पूरे शब्द को हटाकर, जब उसकी जगह, कोई दूसरा वर्ण या शब्द आकर, बैठ जाता है, तब जिसे हटाया जाता है, उसे 'स्थानी' कहते हैं तथा जो स्थानी की जगह आकर बैठ जाता है, उसे 'आदेश' कहते हैं। जैसे - प्रति + एक: = प्रत्येक: को देखिये। 'इ' को हटाकर उसके स्थान पर आकर, 'य्' बैठ गया है। अत: इ स्थानी है और य् आदेश है।

अक्षर को हटाकर उसकी जगह बैठ जाने के कारण, 'आदेश' को 'शत्रुवत्' कहा जाता है - 'शत्रुवदादेश:'।

निमित्त - 'इ' के स्थान पर 'य्' क्यों हुआ है ? इ को य् होने का निमित्त अर्थात् कारण है 'ए'। अत: जिसके कारण कोई भी कार्य होता है, उसे उस कार्य का निमित्त कहा जाता है। अत: यहाँ 'इ' के स्थान पर 'य्' होने का निमित्त 'ए' है।

आगम - जब किसी भी वर्ण को हटाये बिना कोई नया वर्ण आकर बीच में बैठ जाता है, तब उसे आगम कहते हैं। किसी भी अक्षर को हटाये बिना, आकर बैठ जाने के कारण, 'आगम' को 'मित्रवत्' कहा जाता है - 'मित्रवदागम:'।

आगम तीन प्रकार के होते हैं। टित्, कित् और मित्।

आद्यन्तौ टकितौ (१.१.४६) - टित् आगम जिसे कहे जाते हैं, उसके आदि

अवयव होते हैं। जैसे - सं + कृत / यहाँ कृ धातु को सुट् का आगम होता है। टित् होने से यह कृ धातु के आदि में बैठता है। सम् + सुट् + कृत = संस्कृत।

कित् आगम जिसे कहे जाते हैं, उसके अन्तावयव होते हैं। जैसे - सोमसु को तुक् का आगम होता है। कित् होने के कारण यह तुक्, सोमसु के अन्त में बैठता है।

सोमसु + तुक् = सोमसुत्।

मिदचोऽन्त्यात् परः (१.१.४७) - मित् आगम जिसे कहे जाते हैं, उसके अन्त्य अच् के बाद बैठते हैं। जैसे - द्विषत् को मुम् का आगम होता है। यह मुम् मित् होने के कारण द्विषत् के अन्तिम अच् के बाद बैठता है। द्विष् + मुम् + त्।

प्रातिपादिकसंज्ञा -

अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपादिकम् (१.२.४५) -

धातुओं तथा प्रत्ययों को छोड़कर, जो भी अर्थवान् शब्द होते हैं, उनका नाम प्रातिपदिक होता है। राम, बालक, कृष्ण, वृक्ष आदि का नाम प्रातिपादिक है।

कृत्तद्धितसमासाश्च (१.२.४६) - जिनसे 'कृत्' अथवा 'तद्धित' प्रत्यय लग जाते हैं, उनका नाम भी प्रातिपदिक हो जाता है। समासों की भी प्रातिपदिक संज्ञा होती है। यथा - कृ + ण्वुल्, इस कृदन्त का नाम प्रातिपदिक है।

उपगु + अण्, इस तद्धितान्त का नाम प्रातिपदिक है।

रामश्च लक्ष्मणश्च, इस समास का नाम प्रातिपदिक है।

पदसंज्ञा -

सुप्तिङन्तं पदम् (१.२.१४) - प्रातिपदिकों में प्रथमा से सप्तमी तक 'सुप्' विभक्तियाँ लगाकर जो शब्दरूप बनते हैं, वे पद हैं। धातुओं से विभिन्न लकारों में 'तिङ्' विभक्तियाँ लगाकर जो धातुरूप बनते हैं, वे भी पद हैं। अतः पद दो प्रकार के हैं। धातुरूप = तिङन्त पद, तथा शब्दरूप = सुबन्त पद।

सुप् तथा तिङ् विभक्तियों के बिना जो भी शब्द तथा धातु आदि हैं, वे अपद ही हैं, यह जानिये। **सन्धिकार्य करते समय पद अपद को पहिचानना चाहिये।**

परे होना - जब भी किसी से भी कोई भी प्रत्यय लगाया जाता है, तो हम कहते हैं कि प्रत्यय उससे परे है। जैसे - भू धातु से शप् प्रत्यय लगाया तो बना - भू + शप्। इसे यह नहीं कहेंगे कि भू धातु के बाद शप् प्रत्यय है, अपितु ऐसे कहेंगे कि भू धातु से परे शप् प्रत्यय है।

जब हम भू धातु से शप् तथा ति ये दो प्रत्यय लगायेंगे तो बनेगा - भू + शप्

+ ति। इसे हम इस प्रकार कहेंगे कि शप् प्रत्यय, भू धातु से परे है, तथा 'ति' प्रत्यय भू + शप् से परे है। परे होने का अर्थ है आगे होना।

तपर - तपरस्तत्कालस्य (१.२.७०) - जब हम 'अ' कहते हैं, तब उसका अर्थ 'अ' 'आ', दोनों ही होता है। पर यदि इस 'अ' के बाद 'त्' लगा दें, तब 'अत्' कहने पर उसका अर्थ केवल ह्रस्व 'अ' ही होगा। इसी प्रकार आत् = दीर्घ आ / इत् = ह्रस्व इ / ईत् = दीर्घ ई / उत् = ह्रस्व उ / ऊत् = दीर्घ ऊ / ऋत् = ह्रस्व ऋ / ॠत् = दीर्घ ॠ / एत् = ए / ओत् = ओ आदि जानना चाहिये। जिनके अन्त में 'त्' लगा है, ऐसे वर्ण तपर कहलाते हैं।

प्रकृति - जिससे कोई भी प्रत्यय लगाया जाता है, उसे उस प्रत्यय की प्रकृति कहते हैं। यथा - कृ + ण्वुल्, इसमें ण्वुल् प्रत्यय की प्रकृति 'कृ' है। भू + क्त्वा, इसमें क्त्वा प्रत्यय की प्रकृति 'भू है।

णत्व विधि

रषाभ्यां नो णः समानपदे (८.४.१) - र् और ष् के बाद आने वाले न् को ण् होता है, समानपद में। यथा आस्तीर् + न = आस्तीर्णः / इसको देखिये - इसमें र् के बाद 'न' आया है, अतः उसे 'ण' हुआ है। इसी प्रकार - शीर् + न = शीर्णः, तीर् + न = तीर्णः।

ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम् (वा. ८.४.१) - ऋ के बाद आने वाले न् को भी ण् होता है, समानपद में। ऋ + न = ऋणम् में, ऋवर्ण के बाद आने वाले न को णत्व हुआ है।

अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि (८.४.२) - यदि र्, ष्, ऋ के बाद 'अट्' अर्थात् अ, इ, उ, ऋ, ऌ, ए, ओ, ऐ, औ, ह, य, व, र, कवर्ग, पवर्ग, आङ् अथवा अनुस्वार आये हों, और उनके बाद 'न' आया हो, तो भी 'न' को णत्व हो जाता है।

कारणा में - र् + न् के बीच में अ है, तब भी न् को ण् हो गया है।

ग्रहणम् में - र + न के बीच में ह्, अ हैं, तब भी न् को ण् हो गया है।

उपसर्गादसमासेऽपि णोपदेशस्य (८.४.१४) - उन धातुओं को देखिये, जो 'न' अथवा 'ण' से प्रारम्भ हो रहे हैं। इनमें से, नर्द्, नाट्, नाथ्, नाध्, नन्द्, नक्क्, नृ, नृत्, इन आठ धातुओं को छोड़कर शेष नकारादि, णकारादि धातु णोपदेश कहलाते हैं।

यदि किसी उपसर्ग में 'र्' 'ष्' आये हों, तब उनसे परे आने वाले इन 'णोपदेश'

धातुओं के 'न्' को ही 'ण्' होता है, सभी धातुओं के 'न्' को नहीं। यथा - प्र + नादः = प्रणादः। प्र + नामः = प्रणामः, आदि।

यह णत्व विधि है। आगे इसी विधि से आवश्यकतानुसार णत्व करते चलें। अष्टाध्यायी में णत्व के सारे सूत्र ८.४.१ से लेकर ८.४.३९ तक हैं। इन्हें अष्टाध्यायी की काशिकावृत्ति में एक साथ देख लेना चाहिये। यहाँ प्रमुख सूत्र ही बतलाये हैं।

षत्व विधि

अष्टाध्यायी में षत्व के सारे सूत्र ८.३.५५ से लेकर ८.३.११९ तक हैं। सारे षत्व कार्यों को, अष्टाध्यायी की काशिकावृत्ति में एक साथ देख लेना चाहिये।

कृत् प्रकरण में प्रयुक्त णत्व, षत्व के, प्रमुख सूत्र तत् तत् स्थानों पर बतलाते जायेंगे।

इत्संज्ञाप्रकरण

धातुओं तथा प्रत्ययों आदि के बारे में यह जान लेना चाहिये कि धातु तथा प्रत्यय जैसे दिये गये हैं, ठीक वैसे के वैसे काम में नहीं लाये जाते। उनका कुछ हिस्सा निकालकर अलग कर दिया जाता है तथा कुछ हिस्सा बचाकर उसे काम में लिया जाता है। ऐसा ही प्रत्ययों के साथ भी होता है।

इसलिये हमें यह जानना जरूरी है कि हमारे सामने जब भी धातु या प्रत्यय आदि आयें, तो उनका कितना हिस्सा हम बचायें और कितने हिस्से का लोप कर दें। जिन्हें हम हटा देते हैं उन्हीं का नाम इत् या अनुबन्ध है।

डुकृञ् धातु को देखिये। इसमें धातु तो है 'कृ', परन्तु इसके आगे 'डु' है तथा पीछे 'ञ्'। इन दोनों को हटाकर हम बीच के कृ का उपयोग करते हैं। इसी प्रकार टुनदि, ञिमिदा, डुपचष् आदि धातुओं को समझिये, इनमें नद्, मिद्, पच् आदि ही शेष बचते हैं।

ये अनुबन्ध कभी तो धातु के आगे, कभी पीछे तथा कभी दोनों जगह लगे रहते हैं। इसी प्रकार प्रत्ययों में भी होता है। अतः हमारी सबसे पहिली आवश्यकता यह है कि ज्यों ही कोई धातु या प्रत्यय हमारे सामने आये, हम उसमें से यह पहिचान लें कि उसमें से कितना हिस्सा हटाने का है और कितना बचाने का ? इसके लिये हमें आठ सूत्रों की सहायता लेना पड़ेगी।

१. उपदेशेऽजनुनासिक इत् (१.३.२) - उपदेशावस्था में जो अनुनासिक अच् होता है उसकी इत् संज्ञा होती है।

उपदेश - उपदेश का अर्थ होता है - आद्योच्चारण। अर्थात् आचार्य ने धातु, प्रत्यय, आगम, आदेश आदि को मूलत: जिस भी रूप में पढ़ा है, वही उपदेश है। जैसे कृ धातु की उपदेशावस्था है - डुकृञ्। मिद् धातु की उपदेशावस्था है - ञिमिदा।

अनुनासिक का अर्थ तो होता है ऐसा स्वर, जिसे नासिका से बोला जाये और लिखने में जिसके ऊपर ँ ऐसा चिन्ह हो। परन्तु धातुपाठ में तो ऐसे धातु मिलते नहीं हैं, जिन पर अनुनासिक का चिह्न लगा हो, तो यहाँ हमें परम्परा का ही आश्रय लेना पड़ता है।

हमें जिन स्वरों की 'इत् संज्ञा' करना है, उनके अनुनासिकत्व की कल्पना करनी पड़ती है, अर्थात् बाधृ को हम बाधृँ ऐसा मान लेते हैं, तब उस अनुनासिक ऋ की, 'इत् संज्ञा' हम करते हैं। इसी प्रकार गम्लृ में लृ की, मदी में 'ई' की, अञ्चु में उ' की, गुपू में ऊ, कटे में ए की, वदि में 'इ' की इत् संज्ञा हम इस सूत्र से करते हैं।

२. **हलन्त्यम्** (१.३.३) - उपदेशावस्था में जो अन्तिम हल् (व्यञ्जन) होता है, उसकी इत् संज्ञा होती है। जैसे - 'भिदिर्' में 'र्' है। यह धातु का अन्तिम हल् है। इसकी इत् संज्ञा, इस सूत्र से होती है। इसी प्रकार 'शप्' प्रत्यय में 'प्' की, 'श्नम्' प्रत्यय में 'म्' की, 'णिच्' प्रत्यय में 'च्' की, इत् संज्ञा इससे होती है।

३. न विभक्तौ तुस्मा: (१.३.४) - विभक्ति में स्थित तवर्ग, सकार तथा मकार की इत् संज्ञा नहीं होती है। इसके लिये हम विभक्ति प्रत्ययों को जानें -

विभक्ति - ध्यान दीजिये कि लकारों में लगने वाले '१८ तिङ् प्रत्यय' 'विभक्ति' हैं। 'शब्दरूप बनाने वाले २१ सुप् प्रत्यय' भी विभक्ति हैं।

इन १८ + २१ के अलावा अष्टाध्यायी के तद्धिताधिकार में कहे गये तद्धित प्रत्ययों में जो प्रत्यय 'प्राग्दिशो विभक्ति:' ५.३.१ से लेकर 'दिक्शब्देभ्य:.' ५.३.२७ तक के सूत्रों में आए हैं, उनका नाम भी विभक्ति है। ये प्राग्दिशीय विभक्तिप्रत्यय इस प्रकार हैं -

तसिल्	त्रल्	ह	अत्	दा	र्हिल्	अधुना
दानीम्	द्य	द्यस्	उत्	आरि	द्यु	समसण्
एद्यवि	एद्युस्	थाल्	थमु	था		

इन सारे 'विभक्ति' नाम वाले प्रत्ययों के अन्त में यदि तवर्ग = त्, थ्, द्, ध्, न् अथवा स्, म् हों, तो **हलन्त्यम्** सूत्र से उनकी इत् संज्ञा नहीं होती है।

४. **आदिर्ञिटुडव:** (१.३.४) - उपदेशों के आदि में स्थित ञि, टु, तथा डु की इत् संज्ञा होती है। जैसे - ञिमिदा - मिद् / टुनदि - नद् / डुकृञ् - कृ आदि।

विशेष - ये चार सूत्र, धातु, प्रत्यय, आगम, आदेश आदि जितने भी उपेदश हैं, उन सभी में लगेंगे किन्तु आगे कहे जाने वाले तीन सूत्र धातुओं में नहीं लगेंगे, केवल प्रत्ययों में लगेंगे।

५. षः प्रत्ययस्य (१.३.६) - 'प्रत्यय' के आदि में स्थित 'ष्' की इत्संज्ञा होती है।

'प्रत्ययस्य' यह शब्द इस सूत्र में है, अतः यह सूत्र तथा इसके आगे के सूत्र केवल प्रत्ययों में लगेंगे, धातुओं में नहीं। अतः षाकन्, ष्वुन्, ष्वुञ् आदि 'प्रत्ययों' के आदि 'षकार' की इत् संज्ञा यह सूत्र करेगा किन्तु ध्यान रहे कि ष्वद, ष्ठिवु आदि 'धातुओं' के 'षकार' की इत् संज्ञा इससे कभी नहीं होगी।

६. चुटू (१.३.७) - प्रत्ययों के आदि में स्थित चु अर्थात् चवर्ग (च्, छ्, ज्, झ्, ञ्) की तथा टु अर्थात् टवर्ग (ट्, ठ, ड्, ढ्, ण्) की इत् संज्ञा होती है।

जैसे - 'जस्' प्रत्यय के आदि में जो 'ज्' है, यह चवर्ग है, 'ड' प्रत्यय के आदि में जो 'ड्' है यह टवर्ग है, 'ट' प्रत्यय के आदि में जो 'ट्' है यह टवर्ग है। इस सूत्र से जस् में ज् की इत् संज्ञा होकर बचेगा अस्, ट में ट् की इत् संज्ञा होकर बचेगा अ, और डु में ड् की इत् संज्ञा होकर बचेगा अ।

७. लशक्वतद्धिते (१.३.८) - तद्धित से भिन्न जो प्रत्यय हैं, उनके आदि में स्थित ल्, श् तथा कवर्ग (क्, ख्, ग्, घ्, ङ्) की इत् संज्ञा होती है। जैसे -

शानच् = आन / चानश् = आन / शानन् = आन / शतृ = अत् / क्त्वा = त्वा / क्त = त / क्तिन् = ति / ग्स्नु = स्नु / घञ् = अ / ल्युट् = यु / आदि।

ध्यान रहे कि केवल यही एक ऐसा सूत्र है, जो तद्धित प्रत्ययों में नहीं लगता। इस प्रकार ६ सूत्र तो सभी प्रत्ययों के लिये है किन्तु यह सूत्र तद्धित प्रत्ययों को छोड़कर शेष प्रत्ययों के लिये ही है।

८. तस्य लोपः (१.३.९) - ऊपर कहे गये सात सूत्रों से जिनकी भी 'इत् संज्ञा' होती है, उन सभी का लोप हो जाता है।

विशेष - देखिये ये ८ सूत्र हैं। इन ८ सूत्रों का ही इत्संज्ञा प्रकरण है। इनमें से ६ सूत्र तो इत्संज्ञा करते है। एक सूत्र (न विभक्तौ तुस्माः) इत् संज्ञा का निषेध करता है तथा यह एक सूत्र (तस्य लोपः) जिनकी इत् संज्ञा होती है उनका लोप करता है।

प्रत्ययादेश -

वेरपृक्तस्य (६.१.६७) - जब इत् संज्ञाएँ करने के बाद प्रत्यय में अकेला 'व्'

बचे तो उसका लोप हो जाता है। जैसे -

ण्वि प्रत्यय में ण् और इ की इत् संज्ञा करने के बाद अकेला 'व्' बचता है, तो इस सूत्र से उसका भी लोप कर देते हैं, और प्रत्यय में कुछ भी नहीं बचाते। जब प्रत्यय में कुछ भी नहीं बचता, तब कहते हैं कि प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हो गया। इसी प्रकार क्विप्, क्विन्, ण्विन्, विट्, विच् आदि प्रत्ययों का भी सर्वापहारी लोप होता है।

इन सूत्रों के सहारे से हमें धातुओं तथा प्रत्ययों के अनुबन्धों की इत् संज्ञा करके शुद्ध धातु तथा शुद्ध प्रत्यय बचा लेना चाहिये।

युवोरनाकौ (७.१.१) - अनुबन्धों का लोप कर लेने के बाद प्रत्यय में बचे हुए 'यु' 'वु' के स्थान पर क्रमशः 'अन' तथा 'अक' आदेश होते हैं। यथा - ण्वुल् - वु = अक / वुञ् - वु = अक / युच् - यु = अन / ल्युट् - यु = अन।

इन सूत्रों के अनुसार सारे कृत् प्रत्ययों के अनुबन्धों का लोप आदि करके प्रत्यय इस प्रकार बने -

सार्वधातुक प्रत्यय

शतृ	-	अत्	शानच्	-	आन
शानन्	-	आन	चानश्	-	आन
खश्	-	अ	श	-	अ
एश्	-	ए	शध्यै	-	अध्यै
शध्यैन्	-	अध्यै			

आर्धधातुक प्रत्यय

ण्वुल्	-	अक	वुञ्	-	अक
ण्वुच्	-	अक	णिनि	-	इन्
ण	-	अ	ण्युट्	-	अन
अण्	-	अ	खुकञ्	-	उक
ण्वि	-	०	ञ्युट्	-	अन
ण्विन्	-	०	घञ्	-	अ
घिनुण्	-	इन्	उकञ्	-	उक
उण्	-	उ	णच्	-	अ
इनुण्	-	इन्	खमुञ्	-	अम्

ण्यत्	-	य	णमुल्	-	अम्
इञ्	-	इ	क्यप्	-	य
क	-	अ	टक्	-	अ
क्विन्	-	०	विट्	-	०
विच्	-	०	क्विप्	-	०
कञ्	-	अ	कप्	-	क
क्वनिप्	-	वन्	क्त	-	त
क्तवतु	-	तवत्	ङ्वनिप्	-	वन्
कानच्	-	आन	क्वसु	-	वस्
ग्स्नु	-	स्नु	क्नु	-	नु
क्मरच्	-	मर	कुरच्	-	उर
क्वरप्	-	वर	किन्	-	इ
कि	-	इ	नजिङ्	-	नज्
क्रु	-	रु	क्रुकन्	-	रुक
क्लुकन्	-	लुक	क्त्रि	-	त्रि
नङ्	-	न	क्तिन्	-	ति
अङ्	-	अ	क्तिच्	-	ति
क्से	-	से	कसेन्	-	असे
कध्यै	-	ध्यै	कध्यैन्	-	ध्यै
तवेङ्	-	तवे	कमुल्	-	अम्
कसुन्	-	अस्	केन्	-	ए
केन्य	-	एन्य	क्त्वा	-	त्वा
केलिमर्	-	एलिम	तव्य	-	तव्य
तव्यत्	-	तव्य	अनीयर्	-	अनीय
यत्	-	य	तृच्	-	तृ
ल्यु	-	अन	अच्	-	अ
ष्वुन्	-	अक	थकन्	-	थक
वुन्	-	अक	ट	-	अ

इन्	-	इ	खच्	-	अ
ड	-	अ	डर	-	अर
खिष्णुच्	-	इष्णु	अतृन्	-	अत्
मनिन्	-	मन्	वनिप्	-	वन्
इनि	-	इन्	ख्युन्	-	अन
तृन्	-	तृ	इष्णुच्	-	इष्णु
युच्	-	अन	षाकन्	-	आक
आलुच्	-	आलु	रु	-	रु
घुरच्	-	उर	उ	-	उ
ऊक	-	ऊक	र	-	र
आरु	-	आरु	वरच्	-	वर
डु	-	उ	ष्ट्रन्	-	त्र
इत्र	-	इत्र	तुमुन्	-	तुम्
अप्	-	अ	अथुच्	-	अथु
नन्	-	न	अ	-	अ
अनि	-	अन्	ल्युट्	-	अन
घ	-	अ	खल्	-	अ
से	-	से	सेन्	-	से
असे	-	असे	असेन्	-	असे
अध्यै	-	अध्यै	अध्यैन्	-	अध्यै
तवै	-	तवै	तवेन्	-	तवे
तोसुन्	-	तोस्	त्वन्	-	त्व

धातुओं में इत् संज्ञा के बाद होने वाले कार्य

इत् संज्ञा प्रकरण को पढ़कर सारे धातुओं में लगे हुए अनुबन्धों की इत् संज्ञा भी इसी प्रकार कर लीजिये। उसके बाद यदि प्राप्त हों, तो इन कार्यों को कीजिये-

१. सत्व विधि

जब आप धातुओं के अनुबन्धों की इत् संज्ञा कर लें, तब आप यह देखें कि किन

किन धातुओं के आदि में 'ष्' है ? जिन धातुओं के आदि में आपको 'ष्' दिखे उस 'ष्' को आप इस सूत्र से 'स्' बना दीजिये -

धात्वादेः षः सः (६.१.६४) - धातु के आदि में स्थित ष् को स् आदेश होता है। जैसे ष्वद् = स्वद्। ष्णा = स्ना। ष्ठा = स्था आदि।

यहाँ ध्यान दें कि ष्ठा धातु में 'ष्' के कारण 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'थ' को 'ठ' हुआ है। अतः जब भी आप 'धात्वादेः षः सः' सूत्र से ष् को स् बनायें, तो देखें कि उस ष् के बाद यदि टवर्ग (ट, ठ, ड, ढ, ण) हो, तो उन्हें आप उसी क्रम से तवर्ग अर्थात् (त, थ, द, ध, न) बना दें। जैसे -

ष्ठा - यहाँ 'ष्' के बाद 'ठ' है। यह टवर्ग का द्वितीयाक्षर है। जब भी आप इसके 'ष्' को **धात्वादेः षः सः** सूत्र से 'स्' बनायें तब इस 'ष्' के बाद में स्थित 'ठ' को आप तवर्ग का द्वितीयाक्षर 'थ' बना दें तो बनेगा 'स्था'। इसी प्रकार 'ष्टभ्' को 'स्तभ्'। 'ष्णा' को 'स्ना', 'ष्णिह्' को 'स्निह्', आदि बना लें।

किन्तु 'ष्वद्' में 'ष्' के बाद 'व' है। यह टवर्ग नहीं है, तो यह ज्यों का त्यों 'स्वद्' ही रहेगा।

षकारादि धातुओं में कुछ धातु ऐसे भी हैं, जिनके ष् को 'धात्वादेः षः सः' सूत्र से सत्व नहीं होता है। ये धातु इस प्रकार हैं -

सुब्धातुष्ठिवुष्वष्कादीनां सत्वप्रतिषेधो वक्तव्यः (वार्तिक) - ष्वष्क धातु, ष्ठिवु धातु तथा नामधातुओं के आदि षकार को सकार आदेश नहीं होता। अतः ष्वष्क को ष्वष्क ही रहता है - ष्वष्कते / तथा ष्ठिवु को ष्ठिवु ही रहता है - ष्ठीवति।

सुब्धातु का अर्थ है नामधातु। इन नामधातुओं के आदि में स्थित ष् को भी स् आदेश नहीं होता। जैसे - षण्ढीयते।

२. नत्व विधि

णो नः (६.१.६५) - धातु के आदि में स्थित 'ण्' को 'न्' आदेश होता है। जैसे - णदि = नद्, णम् = नम् आदि। यहाँ 'ण्' स्थानी है तथा 'न्' आदेश है।

३. नुमागम विधि

इदितो नुम् धातोः (७.१.५८) - जिन धातुओं में 'इ' की इत् संज्ञा हुई हो, ऐसे वदि, मदि, भदि आदि इदित् धातुओं को नुम् (न्) का आगम होता है। वदि - वद् - नुमागम होकर - वन्द् / इसी प्रकार - कपि - कप् - कंप् / लबि - लब् - लंब् आदि।

४. उपधादीर्घ विधि

उपधायां च (८.२.७८) - जिन धातुओं की उपधा में 'र्' हो और उस 'र्' के पूर्व में इ, उ, हों, उन इ, उ को दीर्घ हो जाता है। जैसे - कुर्द् - कूर्द् / खुर्द् - खूर्द् / गुर्द् - गूर्द् आदि।

अत: धातुओं के अनुबन्धों की इत् संज्ञा कर चुकने के बाद, ये चार कार्य यदि प्राप्त हैं, तो आपको अवश्य कर लेना चाहिये। इनको कर लेने के बाद जो धातु तैयार हो, उसी से आप कृत् प्रत्यय लगायें। यह सब अष्टाध्यायी सहज बोध के खण्ड एक में विस्तरेण दिया गया है।

हमने जाना कि - धातु सामने आने पर हम सबसे पहले -

१. उपदेशेऽजनुनासिक इत्	३. आदिर्ञिटुडव:
२. हलन्त्यम्	४. तस्य लोप:

इन चारों सूत्रों की सहायता से धातुओं के अनुबन्धों की इत् संज्ञा करके उनका लोप कर लें। जब अनुबन्धों का लोप हो जाये तब -

१. णो न:	३. इदितो नुम् धातो:
२. धात्वादे: ष: स:	४. उपधायां च

इन चार सूत्रों की सहायता से यदि नत्व, सत्व, नुमागम, और उपधादीर्घ कार्य प्राप्त हैं तो उन्हें भी कर लें, अन्यथा आगे बढ़ें।

भगवान् पाणिनि ने धातुओं तथा प्रत्ययों में इन अनुबन्धों को लगाया है तथा लगाकर इनका लोप कर दिया है, तो प्रश्न होता है कि जब लोप ही कर देना था तो फिर लगाया ही क्यों ? इसका उत्तर है कि ये अनुबन्ध ही शब्द बनाते समय हमारे निर्देशक बनते हैं। ये ही बतलाते हैं कि किस प्रत्यय के लगने पर हमें हमें कौन कौन से कार्य करना है।

जैसे जब हम किसी अज्ञात रास्ते पर चल लेते हैं, तो हमें रास्ते में अनेक चिह्न मिलते हैं। कोई चिह्न कहता है, दाहिने मुड़ो, कोई चिह्न कहता है, बाँयें मुड़ो। कोई चिह्न कहता है, रुक जाओ। कोई चिह्न कहता है, आगे ढाल है। कोई चिह्न कहता है, यह रास्ता अमुक स्थान को जाता है, कोई चिह्न कहता है, आगे गत्यवरोधक है, आदि। इन चिह्नों के कहे अनुसार हम चलते हैं, तो सही गन्तव्य तक पहुँच जाते हैं।

इसी प्रकार धातुओं तथा प्रत्ययों में लगे हुए ये अनुबन्ध ही चिह्न बनकर हमसे

कहते हैं, कि जब प्रत्यय में 'ण्' या 'ञ्' अनुबन्ध लगा हुआ देखो, तो धातु के अन्तिम अच् को वृद्धि कर दो। जब प्रत्यय में 'क्' या ' ङ्' अनुबन्ध लगा हुआ देखो, तो धातु के किसी भी स्वर को न तो गुण करो न ही वृद्धि करो। जब प्रत्यय में 'ण्' या 'ञ्' या 'क्' या 'ङ्' के अलावा कोई अनुबन्ध लगा हुआ देखो, तो धातु के अन्तिम स्वर को गुण कर दो, आदि।

अत: इन अनुबन्धों के कहे अनुसार हम चलते हैं, तो हम स्वत: ही सही शब्द बना लेते हैं और ये अनुबन्ध ही शब्द बनाते समय हमारे निर्देशक बनते हैं। ये ही बतलाते हैं कि किस प्रत्यय के लगने पर हमें हमें कौन कौन से कार्य करना है तथा कौन कौन से कार्य नहीं करना है।

अत: ये अनुबन्ध अनर्थक नहीं हैं, इसलिये इन्हें हटाने के बाद भी यह बहुत अच्छे से ध्यान रखना चाहिये कि जिन प्रत्ययों में 'क्' की इत् संज्ञा हुई है, वे प्रत्यय कित् कहलाते हैं। जिनमें 'ङ्' की इत् संज्ञा हुई है, वे प्रत्यय ङित् कहलाते हैं। जिनमें 'श्' की इत् संज्ञा हुई है, वे प्रत्यय शित् कहलाते हैं। इसी प्रकार 'ञ्' की इत् संज्ञा से ञित्, 'ण्' की इत् संज्ञा से णित्, आदि, ऐसे प्रत्ययों के नाम जानना चाहिये।

इसी प्रकार धातुओं को भी जानना चाहिये कि ञिमिदा, ञिष्विदा आदि धातुओं में 'आ' की इत् संज्ञा हुई है, अत: ये धातु आदित् कहलायेंगे। वदि, मदि, भदि आदि में हमने 'इ' की इत् संज्ञा की है, अत: ये धातु इदित् कहलायेंगे। मदी, नृती में हमने 'ई' की इत् संज्ञा की है, अत: ये धातु ईदित् कहलायेंगे। इसी प्रकार गाहू, गुपू आदि ऊदित् कहलायेंगे। कटे, चते आदि एदित् कहलायेंगे।

इस प्रकार, जिस भी अनुबन्ध की आप इत् संज्ञा करें, उसी इत् के नाम से उस धातु अथवा प्रत्यय को विशेषित करके, उसका नाम स्मरण रखें। इसकी आवश्यकता हमें आगे पड़ेगी, क्योंकि प्रत्ययों तथा धातुओं के इन्हीं नामों से आगे के सूत्र हमें कार्य करने का निर्देश करेंगे।

धात्वादेश

कुछ धातु ऐसे होते हैं, जिनकी आकृति सार्वधातुक प्रत्यय लगने पर बदल जाती है। जैसे - पा + शतृ - पा + अत् = पिबत्। घ्रा + शतृ - घ्रा + अत् = जिघ्रत्।

कुछ धातु ऐसे होते हैं, जिनकी आकृति आर्धधातुक प्रत्यय लगने पर बदल जाती है। जैसे - अस् + क्त - भू + त = भूत। चक्ष् + क्त - ख्या + क्त = ख्यात, आदि।

ये धात्वादेश तत् तत् स्थलों में प्रत्यय लगाते समय बतलाते चलेंगे।

अतिदेश

जो धर्म जिसमें नहीं है, वह धर्म उसमें किसी सूत्र के द्वारा ला देने का नाम अतिदेश है। कभी कभी ऐसा होता है कि प्रत्यय में जो धर्म नहीं है, वह धर्म उसमें किसी सूत्र के द्वारा ला दिया जाता है। जैसे - प् की इत्संज्ञा न होने से शतृ, शानच् प्रत्यय 'अपित् सार्वधातुक प्रत्यय' हैं। किन्तु '**सार्वधातुकमपित्**' सूत्र से जो अपित् सार्वधातुक प्रत्यय होते हैं, वे ङित् न होते हुए भी ङित् जैसे मान लिये जाते हैं। अब 'ङित्वत्' होने के कारण इनके परे होने पर अङ्ग को वे सारे कार्य होंगे, जो कार्य ङित् प्रत्ययों के परे होने पर होते हैं।

इसी प्रकार क्त्वा प्रत्यय कित् है किन्तु 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से जो सेट् क्त्वा प्रत्यय होता है, वह कित् होते हुए भी अकित् जैसा मान लिया जाता है। अब 'अकित्वत्' होने के कारण इनके परे होने पर अङ्ग को वे सारे कार्य होंगे, जो कार्य अकित् प्रत्ययों के परे होने पर होते हैं। अष्टाध्यायी में इस प्रकार के सारे अतिदेश सूत्र १.२.१ से लेकर १.२.२६ तक बैठे हैं, जो कि हम यथास्थान बतलाते चलेंगे।

अङ्गसंज्ञा

यस्मात् प्रत्ययविधिस्तदादिप्रत्ययेऽङ्गम् (१.४.१३) -

जब हम कोई प्रत्यय लगाते हैं, तब उस प्रत्यय के पूर्व में जो जो कुछ भी होता है, वह पूरा का पूरा उस प्रत्यय का अङ्ग कहलाता है। जैसे - भू + ण्वुल्। यहाँ ण्वुल् प्रत्यय का अङ्ग भू है, क्योंकि वह ण्वुल् प्रत्यय के पूर्व में है। इसी प्रकार - कृ + तृच्। यहाँ तृच् प्रत्यय का अङ्ग कृ है, क्योंकि वही तृच् प्रत्यय के पूर्व में है।

किन्तु 'भवन्' को देखिये। इसके दो खण्ड न होकर, तीन खण्ड हैं - भू + शप् + शतृ। इनमें 'भू' धातु के बाद दो प्रत्यय हैं। शप् तथा शतृ। शप् प्रत्यय के पूर्व में 'भू' है, अतः 'शप्' प्रत्यय का अङ्ग केवल 'भू' है, किन्तु 'शतृ' प्रत्यय के पूर्व में भू + शप् है, अतः 'शतृ' प्रत्यय का अङ्ग, भू + शप् यह पूरा का पूरा है।

अतः जिस भी प्रत्यय का अङ्ग पहिचानना हो, उस प्रत्यय को देखिये। उसके पूर्व में जो भी दिखे, उसे उस प्रत्यय का अङ्ग समझिये।

अङ्गकार्य

प्रत्यय को देखकर अङ्ग में जो जो भी कार्य होते हैं, उन कार्यों को अङ्गकार्य

कहा जाता है। जैसे - भू + ण्वुल् (अक) / इस 'अक' को देखकर भू को वृद्धि होकर 'भौ' हो जाता है। भौ + अक = भावक:। यह वृद्धि होना ही यहाँ अङ्गकार्य है।

कृ + क्त्वा = कृत्वा / इस 'त्वा' को देखकर कृ को गुण, वृद्धि नहीं होते हैं। यह गुण, वृद्धि न होना ही यहाँ अङ्गकार्य है।

ध्वंस् + क्त = ध्वस्त: / इस 'क्त' को देखकर ध्वंस् के न् का लोप हुआ है। यह नलोप होना ही यहाँ अङ्गकार्य है।

प्रातिपदिकसंज्ञा, अलौकिक विग्रह, सुब्लुक् तथा सुबुत्पत्ति

प्रातिपदिकसंज्ञा -

कृत्तद्धितसमासाश्च (१.२.४६) - कृदन्त और तद्धितान्त तथा समास की प्रातिपदिक संज्ञा होती है। अत: कृत् प्रत्यय लगते ही इस कृत् प्रत्ययान्त शब्द अर्थात् कृदन्त शब्द की, इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा कीजिये।

कुछ प्रत्यय केवल धातु से न होकर, उपपद सहित धातु से होते हैं। यथा कर्मण्यण् सूत्र से जो अण् प्रत्यय होता है, वह केवल कृ धातु से न होकर कर्म उपपद में रहने पर ही धातुओं से होता है। जैसे - कुम्भं करोति इति कुम्भकार:, इसे बनाने के लिये हम 'कुम्भं' इस कर्म के उपपद में रहते हुए कृ धातु से अण् प्रत्यय लगाते हैं। कुम्भं + कृ + अण्।

उपपदमतिङ् (२.२.१) - जब किसी उपपद के रहने पर किसी धातु से किसी कृत् प्रत्यय का विधान किया जाता है, तब उस कृदन्त शब्द का उस उपपद के साथ समास हो जाता है। अत: कुम्भं + कृ + अण् का 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास कीजिये। अब समास होने के कारण 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र से कुम्भं + कृ + अण्, की प्रातिपदिक संज्ञा कीजिये।

अलौकिक विग्रह तथा सुब्लुक् -

जिन जिन शब्दों का समास होता है, उनकी विभक्तियों का लुक् हो जाता है। विभक्तियों के लुक् को ही सुब्लुक् कहते हैं। सुब्लुक् करने वाला सूत्र है -

सुपो धातुप्रातिपदिकयो: (२.४.७१) - धातु और प्रातिपदिक के अवयव सुप् का लुक् होता है। यथा - कुम्भं + कृ + अण्, में कुम्भम् में जो द्वितीया है, उसका इस सूत्र से लुक् हो जाता है। लुक् करने के लिये विभक्ति को अलग करके लिखना ही अलौकिक विग्रह कहलाता है।

अलौकिक विग्रह करने के लिये ध्यान रहे कि करोति के साथ हमें यद्यपि 'कुम्भं' में द्वितीया दिख रही है, किन्तु कृत् प्रत्यय 'अण्' के लगते ही **'कर्तृकर्मणोः कृति'** सूत्र से कर्म में द्वितीया के स्थान पर षष्ठी आ जायेगी। अतः जो 'कुम्भ + अम् + कृ + अण्' दिख रहा है, वह अलौकिक विग्रह में कुम्भ + ङस् + कृ + अण्, हो जायेगा। अतः जहाँ भी कर्म में द्वितीया दिखे, उसे आप षष्ठी ही लिखें।

अब इस सूत्र से प्रातिपदिक के अवयव सुप् का लुक् करके - कुम्भ + ङस् + कृ + अण् को कुम्भ + कृ + अण् हो जायेगा। अब अचो ञ्णिति सूत्र से ऋ को वृद्धि करके - कुम्भकार् + अ = कुम्भकार बनाइये।

'कर्तृकर्मणोः कृति' सूत्र के अपवाद -

न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम् (२.३.६९) - लकारों के स्थान पर होने वाले शतृ, शानच्, क्वसु, कानच् आदि प्रत्यय, उ, उक, प्रत्यय, क्त्वा, तुमुन् आदि अव्यय कृदन्त, निष्ठा प्रत्यय, खलर्थ प्रत्यय और तृन् प्रत्याहार में आने वाले प्रत्यय, इतने कृत् प्रत्यय लगने पर अनुक्त कर्म में द्वितीया ही होती है। अतः इनके विग्रह में आप द्वितीया ही लिखें।

इसके अतिरिक्त जहाँ अन्य कारकों का निर्देश किया हो, वहाँ तत्, तत् विभक्तियाँ लिखें। यथा - अग्निष्टोमेन इष्टवान् इति अग्निष्टोमयाजी में अग्निष्टोम + टा + यज् + णिनि। गर्ते शेते इति गर्तशयः में - गर्त + ङि + शी + अच्।

सुबुत्पत्ति - जब कृत् प्रत्यय लगाकर पूरा शब्द बन जाये, तब आप देखें कि कृदन्त होने के कारण यह प्रातिपदिक है। प्रातिपदिक होने के कारण उसमें सारी सुप् विभक्तियाँ आ सकती हैं। अतः प्रथमा एकवचन में 'सु' विभक्ति लगाकर उसका प्रथमा एकवचन का रूप ही आप दीजिये। यथा - कुम्भ + कृ + अण् = कुम्भकार, यह बना है। इसमें सु विभक्ति लगाकर आप कुम्भकार + सु = कुम्भकारः, बनाकर ही दें।

जब भी किसी धातु से कोई प्रत्यय लगे, तब आप इस क्रम से कार्य कीजिये -

१. धातु के अनुबन्धों की इत् संज्ञा करके उनका लोप कीजिये।

२. अनुबन्धों की इत् संज्ञा करके उनका लोप करने के बाद यदि धातु में नत्व, सत्व, उपधादीर्घ या नुमागम में से कोई भी कार्य प्राप्त हो, तो उसे कर लीजिये।

३. अनुबन्धों की इत् संज्ञा करके उनका लोप करने के बाद यदि प्रत्यय को कोई अन, अक, आदि आदेश प्राप्त हो, तो उस प्रत्ययादेश को कर लीजिये।

४. यदि किसी उपपद के रहने पर किसी धातु से किसी प्रत्यय का विधान किया गया है, तब 'उपपदमतिङ्' सूत्र से उपपद के साथ उस कृत्प्रत्ययान्त का समास करके कृत्तद्धितसमासाश्च सूत्र से उसकी प्रातिपदिक संज्ञा कीजिये और प्रातिपदिक संज्ञा होने के बाद 'सुपो धातुप्रातिपदिकयो:' सूत्र से विभक्ति का लोप कर दीजिये।

५. अब प्रत्यय को पहिचानिये कि वह सार्वधातुक है या आर्धधातुक है ?

६. यदि सार्वधातुक प्रत्यय है, तब धातु और प्रत्यय के बीच में उस गण का विकरण बैठाइये, जिस गण का वह धातु है। यदि आर्धधातुक प्रत्यय है, तब धातु और प्रत्यय के बीच में इडागम करने का विचार कीजिये।

७. अब विचार कीजिये कि कहीं प्रत्यय को देखकर धातुओं के स्थान पर सम्पूर्ण आदेश करके उनकी आकृति बदल देने के लिये कोई सूत्र तो प्राप्त नहीं हैं ? यदि प्रत्यय को देखकर किसी धातु के स्थान पर कोई धात्वादेश प्राप्त हो रहा हो, तो उसे कर लीजिये।

८. अब विचार कीजिये कि किसी अतिदेश सूत्र के बल से प्रत्यय में किसी नये धर्म का अतिदेश तो नहीं किया जा रहा है ? अतिदेश आगे बतलाये जायेंगे।

९. अतिदेश का विचार करने के बाद ही अङ्गकार्य कीजिये। प्रत्ययों से सम्बन्धित अङ्गकार्य तत् तत् प्रत्ययों के साथ बतलाते चलेंगे।

१०. अङ्गकार्य करने के बाद सन्धि कीजिये।

११. अब यदि णत्व, षत्व आदि प्राप्त हैं, तो उन्हें कीजिये।

१२. कृत् प्रत्यय लगाकर जो भी शब्द बने, उसमें प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति लगाकर, उसका प्रथमा एकवचन का रूप लिख दीजिये।

ये सारी बातें जानकर ही अब हम धातुओं में प्रत्यय लगायें।

पहिले हम धातुओं में सार्वधातुक प्रत्यय लगायें -

धातुओं में सार्वधातुक कृत् प्रत्यय लगाने की विधि

तिङ्शित्सार्वधातुकम् (३.४.११३)- धातुओं से विहित तिङ् तथा शित् प्रत्ययों की सार्वधातुक संज्ञा होती है।

शित् होने के कारण, शतृ, शानच्, शानन्, चानश्, खश्, श, एश्, शध्यै, शध्यैन् = ९, ये कृत् प्रत्यय सार्वधातुक हैं।

अत्यावश्यक - ध्यान दें कि जब भी किसी धातु से कर्ता अर्थ में 'तिङ् या कृत् सार्वधातुक प्रत्यय' लगते है, तब धातु और प्रत्यय के बीच में आकर उस गण का विकरण अथवा गणचिह्न अवश्य बैठता है, जिस गण का वह धातु होता है।

अतः जब भी धातुओं से ये ९ कर्त्रर्थक सार्वधातुक कृत् प्रत्यय लगेंगे, तब धातु और प्रत्यय के बीच में आकर उस गण का विकरण अथवा गणचिह्न अवश्य बैठेगा, और हमें तीन खण्ड मिलेंगे - धातु + विकरण + कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय।

शतृ, शानच् प्रत्यय

लट् लकार के स्थान में शतृ, शानच् प्रत्यय -

वर्तमाने लट् (३.२.१२३) -

प्रारम्भ की हुई क्रिया जब तक समाप्त नहीं होती, तब तक का काल वर्तमानकाल कहलाता है। ऐसे वर्तमानकाल में विद्यमान धातु से लट् लकार होता है। जैसे - पचति - पकाता है। पठति - पढ़ता है। भवति - होता है।

लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे (३.२.१२४) - धातु से लट् के स्थान में कर्ता अर्थ में शतृ तथा शानच् आदेश होते हैं यदि अप्रथमान्त के साथ उस लट् का सामानाधिकरण्य हो तो। पचन्तं देवदत्तं पश्य (पकाते हुए देवदत्त को देखो।)। पचमानं देवदत्तं पश्य (पकाते हुए देवदत्त को देखो।)

कभी कभी प्रथमान्त के साथ उस लट् का सामानाधिकरण्य होने पर भी शतृ, शानच् प्रत्यय हो जाते हैं। यथा - सन् द्विजः / ब्राह्मणस्य कुर्वन् देवदत्तः (ब्राह्मण के लिये करता हुआ देवदत्त)। / ब्राह्मणस्य कुर्वाणः देवदत्तः (ब्राह्मण के लिये करता हुआ देवदत्त)।

लट् का अर्थ है 'वर्तमान'। वर्तमान का अर्थ है - प्रारब्धापरिसमाप्तत्वम्। अर्थात् कोई क्रिया प्रारम्भ तो हो गई है किन्तु अभी वह समाप्त नहीं हुई है। जब तक प्रारम्भ

की हुई क्रिया समाप्त नहीं हो जाती, तब तक का काल वर्तमानकाल कहलाता है।

इसी वर्तमानता को बतलाने के लिये धातुओं से लट् के स्थान पर शतृ, शानच् प्रत्यय भी हो सकते हैं।

तात्पर्य - तात्पर्य यह है कि जब किसी भी क्रिया को 'होते हुए' बतलाना हो, जैसे - बालक ***गाते हुए*** जाता है / तुम ***खेलते हुए*** खाते हो / तुम ***लेटे हुए*** पढ़ते हो / वे ***देखते हुए*** जाते हैं / माता ***रोते हुए*** बच्चे को दूध देती है / मैं ***याचना करने वाले को*** धन देता हूँ / ***खेलते हुए*** बच्चे को देखो / ***रोते हुए*** बच्चे को चुप करो, आदि।

इनमें जो शब्द तिरछे अक्षरों में लिखे हैं, उनसे 'चलती हुई' क्रिया सूचित हो रही है। ऐसी अपूर्ण वर्तमान क्रिया को बताने के लिये धातुओं से लट् लकार के स्थान पर शतृ, शानच् प्रत्यय होते हैं।

शतृ, शानच् प्रत्ययों को वर्तमान कृदन्त भी कहते हैं।

माङ्याक्रोशे इति वाच्यम् (वा.) - आक्रोश गम्यमान होने पर माङ् के उपपद रहने पर धातुविहित लट् के स्थान पर शतृ तथा शानच् आदेश होते हैं। मा पचन्। मा पचमानः। मा जीवन् यः परावज्ञा दुःखदग्धोऽपि जीवति।

सम्बोधने च - (३.२.१२५) - सम्बोधन विषय में भी धातु से लट् लकार के स्थान में शतृ, शानच् आदेश होते हैं। हे पचन् (हे पकाते हुए) ! हे पचमान (हे पकाते हुए) !

लक्षणहेत्वोः क्रियायाः - (३.२.१२६) - क्रिया के लक्षण तथा हेतु अर्थों में वर्तमान धातु से लट् के स्थान में शतृ शानच् आदेश होते हैं।

लक्षण अर्थ में - शयाना भुञ्जते यवनाः (यवन लेटे हुए खाते हैं।) तिष्ठन् मूत्रयति पाश्चात्यः (पाश्चात्य आदमी खड़े खड़े लघुशङ्का कर रहा है।)

हेतु अर्थ में - अर्जयन् वसति (कमाने के लिये रहता है।) अधीयानो वसति (पढ़ने के लिये रहता है)।

तौ सत् - (३.२.१२७) - शतृ तथा शानच् प्रत्यय सत्संज्ञक होते हैं। अर्थात् शतृ, शानच् प्रत्ययों को 'सत् प्रत्यय' कहते हैं।

लट् लकार के स्थान में न होने वाले शतृ, शानच् प्रत्यय -

अब आगे के तीन सूत्रों के द्वारा कहा जाने वाला शतृ प्रत्यय लट् लकार के स्थान पर होने वाला आदेश नहीं है, अतः इसे धातु के पद की अपेक्षा नहीं है।

इङ्धार्योः शत्रकृच्छ्रिणि - ३.२.१३० - इङ् धातु तथा ण्यन्त धारि धातु से वर्तमानकाल में शतृ प्रत्यय होता है, यदि जिसके लिये क्रिया कष्टसाध्य न हो ऐसा कर्ता वाच्य हो तो। अकृच्छ्रेण अधीते परायणम् - अधीयन् परायणम् (अधि + इ + शतृ)। इसी प्रकार - धारयन् उपनिषदम् (धृ + णिच् + शतृ)।

(ध्यान रहे कि यहाँ भी **'लटः शतृशानचौ'** की अनुवृत्ति नहीं है। अतः यह शतृ प्रत्यय ण्वुल्, तृच् आदि के समान कर्ता अर्थ में होने वाला स्वतन्त्र प्रत्यय है। अतः इसका धातु के पद से कोई प्रयोजन नहीं है। **इङ् धातु आत्मनेपदी है तथा णिजन्त होने से धारि धातु उभयपदी है। इनसे शतृ ही हो, इसीलिये यह अलग सूत्र बनाया है।)** (यहाँ से 'शतृ' की अनुवृत्ति ३.२.१३३ तक जायेगी।)

द्विषोऽमित्रे - ३.२.१३१ - द्विष् धातु से अमित्र शत्रु कर्ता वाच्य हो तो शतृ प्रत्यय वर्तमानकाल में होता है। द्विषन् (शत्रु), द्विषन्तौ, द्विषन्तः।

सुञो यज्ञसंयोगे - (३.२.१३२) - यज्ञ से संयुक्त अभिषव में वर्तमान षुञ् धातु से वर्तमान काल में कर्ता अर्थ में शतृ प्रत्यय होता है। सुन्वन्तः यजमानाः (सोमरस निचोडने वाले यजमान)।

अर्हः प्रशंसायाम् - (३.२.१३४) - अर्ह धातु से प्रशंसा गम्यमान हो तो वर्तमानकाल में शतृ प्रत्यय होता है। अर्हन् इह भवान् विद्याम् (आप विद्या पढ़ने के योग्य हैं)। अर्हन् इह भवान् पूजाम् (आप सत्कार पाने के योग्य हैं)।

लृट् लकार के स्थान में शतृ, शानच् प्रत्यय -

लृटः सद्वा (३.३.१४) - भविष्यत् काल में विहित जो लृट् उसके स्थान में सत् संज्ञक शतृ, शानच् प्रत्यय विकल्प से होते हैं।

यह व्यवस्थितविभाषा है। अतः अप्रथमा सामानाधिकरण्य में, सम्बोधन में, लक्षण और हेतु में तथा प्रत्यय और उत्तरपद परे होने पर, ये प्रत्यय धातुओं से नित्य होते हैं।

करिष्यन्तं देवदत्तं पश्य। करिष्यमाणं देवदत्तं पश्य। हे करिष्यन्, हे करिष्यमाण। अर्जयिष्यमाणो वसति।

अप्रथमा सामानाधिकरण्य में - करिष्यन्तं देवदत्तं पश्य। (जो करेगा, ऐसे देवदत्त को देखो।) करिष्यमाणं वा देवदत्तं पश्य। (जो करेगा, ऐसे देवदत्त को देखो।)

सम्बोधन में - हे करिष्यन् ! हे करिष्यमाण !

लक्षण में - शयिष्यमाणा भोक्ष्यन्ते यवनाः।

हेतु में - अर्जयिष्यन् वसति । अर्जयिष्यमाण: वसति । (कमायेगा, इसलिये रहता है ।)

प्रत्यय परे होने पर - करिष्यत: अपत्यं कारिष्यत: (जो करेगा, उसका पुत्र ।)

उत्तरपद परे होने पर - करिष्यद्भक्ति: ।

किन धातुओं से शतृ लगायें और किनसे शानच् ?

तङानावात्मनेपदम् (१.४.१००)-

तङ् और आन प्रत्यय आत्मनेपदसंज्ञक होते हैं । तङ् का अर्थ है - त, आताम्, झ । थास्, आथाम्, ध्वम् । इड्, वहि, महिङ् । आन का अर्थ है - शानच् और कानच् प्रत्यय ।

अनुदात्तङित आत्मनेपदम् (१.३.१२)- जिन धातुओं में अनुदात्त स्वर की इत् संज्ञा हुई हो, उन धातुओं को अनुदात्तेत् धातु कहते हैं । जिन धातुओं में ङ् की इत् संज्ञा हुई हो, उन धातुओं को ङित् धातु कहते हैं ।

अनुदात्तेत् और ङित्, इन धातुओं से आत्मनेपदसंज्ञक प्रत्यय होते हैं ।

हम जानते हैं कि शानच् और कानच् की आत्मनेपद संज्ञा है । अत: अनुदात्तेत् और ङित्, इन धातुओं से ही शानच्, कानच् प्रत्यय होते हैं । जैसे - एधमान: (बढ़ता हुआ ।) । वर्धमान: । (बढ़ता हुआ ।) ।

स्वरितञित: कर्त्रभिप्राये क्रियाफले (१.३.७८)-

जिन धातुओं में स्वरित स्वर की इत् संज्ञा हुई हो, उन धातुओं को स्वरितेत् धातु कहते हैं । जिन धातुओं में ञ् की इत् संज्ञा हुई हो, उन धातुओं को ञित् धातु कहते हैं । ऐसे स्वरितेत् तथा ञित् धातुओं की क्रिया का फल जब कर्ता को मिलता हो, तब इन धातुओं से आत्मनेपद होता है,

जैसे - यजमान: (अपने लिये यज्ञ करता हुआ ।) हरमाण: (अपने लिये ले जाता हुआ ।) ।

यदि इन स्वरितेत् तथा ञित् धातुओं की क्रिया का फल कर्ता को न मिलता हो, तब उन स्वरितेत् तथा ञित् धातुओं से परस्मैपद होता है । यजन् (यजमान के लिये यज्ञ करता हुआ ।) हरन् (दूसरे के लिये ले जाता हुआ ।)

शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् - अनुदात्तेत्, ङित्, स्वरितेत् तथा ञित्, धातुओं से जो भी धातु शेष बचे, अर्थात् जो उदात्तेत् आदि धातु, उनसे कर्तृवाच्य में परस्मैपद संज्ञक प्रत्यय होते हैं । जैसे - गच्छन् (जाता हुआ), पठन् (पढ़ता हुआ ।)

स्पष्ट है कि शतृ तथा शानच् प्रत्यय, लट् के स्थान पर होने वाले आदेश हैं। इनमें से शतृ प्रत्यय परस्मैपदी धातुओं से होता है। शानच् प्रत्यय आत्मनेपदी धातुओं से ही होता है और उभयपदी धातुओं से क्रिया का फल परगामी होने पर शतृ प्रत्यय और क्रिया का फल कर्तृगामी होने पर शानच् प्रत्यय होता है।

अब हम धातुओं में शतृ, शानच् प्रत्यय लगायें -

शतृ प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से श् की और 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से ऋ की इत् संज्ञा होकर 'अत्' शेष बचता है।

शानच् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से श् की और 'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की इत् संज्ञा होकर 'आन' शेष बचता है। **श् की इत्संज्ञा होने से ये प्रत्यय 'शित्' हैं। शित् होने से ये सार्वधातुक हैं।**

प् की इत्संज्ञा न होने से ये प्रत्यय 'अपित् सार्वधातुक प्रत्यय' भी हैं।

सार्वधातुकमपित् (१.२.४)- जो अपित् सार्वधातुक प्रत्यय होते हैं, वे ङित् न होते हुए भी ङित् जैसे मान लिये जाते हैं।

ध्यान रहे कि अपित् होने के कारण ये शतृ, शानच् प्रत्यय इस सूत्र से 'ङित्वत्' मान लिये जाते हैं अतः इनके परे होने पर अङ्ग को वे सारे कार्य होंगे, जो कार्य ङित् प्रत्ययों के परे होने पर होते हैं।

अत्यावश्यक - ध्यान दें कि जब भी किसी धातु से कर्ता अर्थ में 'तिङ् या कृत् सार्वधातुक प्रत्यय' लगते है, तब धातु और प्रत्यय के बीच में आकर उस गण का विकरण अथवा गणचिह्न अवश्य बैठता है, जिस गण का वह धातु होता है।

अतः जब भी धातुओं से ये ९ कर्त्रर्थक सार्वधातुक कृत् प्रत्यय लगेंगे, तब धातु और प्रत्यय के बीच में आकर उस गण का विकरण अथवा गणचिह्न अवश्य बैठेगा, और हमें तीन खण्ड मिलेंगे - धातु + विकरण + कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय।

धातु + विकरण + कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय, इन तीनों को जोड़ने का कार्य दो हिस्सों में किया जाता है -

१. पहिले धातु + विकरण को जोड़ा जाता है।

२. धातु + विकरण को जोड़ने से जो भी बनता है, उसी में कर्त्रर्थक सार्वधातुक कृत् प्रत्यय लगाये जाते हैं। अर्थात् 'शतृ, शानच् प्रत्यय' धातुओं से सीधे कभी नहीं जोड़े जाते। **इनमें से हम दूसरे वाले कार्य को करना पहिले सीखें -**

धातुओं में विकरण लगाने के बाद
शतृ प्रत्यय लगाना

आगे धातुओं में तत् तत् गणों के विकरण लगाना बतलाया जा रहा है। उसे पढ़कर पहिले धातुओं में तत् तत् गणों के विकरण लगा लें।

अब आप देखें कि किन किन गणों के धातुओं से विकरण लगाकर बनने वाले शब्दों के अन्त में 'ह्रस्व अ' है।

हम पाते हैं कि जब हम भ्वादिगण के धातुओं से शप् (अ), दिवादिगण के धातुओं से श्यन् (य), तुदादिगण के धातुओं से श (अ), और चुरादिगण के धातुओं से णिच् + शप् (अय) विकरण लगाते हैं, तब धातुओं में विकरण लगाकर जो भी शब्द बनते हैं, वे सारे के सारे शब्द अदन्त ही होते हैं अर्थात् उनके अन्त में 'ह्रस्व अ' ही होता है।

अत: भ्वादि, दिवादि, तुदादि और चुरादि गणों के धातुओं से विकरण लगाने के बाद आप उनमें शतृ प्रत्यय इस प्रकार लगायें -

भू + शप् = भव / भव + शतृ / भव + अत् -

अतो गुणे (६.१.९७)- अपदान्त अत् से गुण परे होने पर, पूर्वपर के स्थान पर पररूप एकादेश होता है। अर्थात् पूर्व अ और पर अ, इन दानों के स्थान पर एक 'अ' हो जाता है। जैसे - भव + अत् / अतो गुणे से दोनों 'अ' के स्थान पर पररूप आदेश करके - भव् + अत् = भवत्।

प्रथमा एकवचन में भवत् + सु / **उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातो:** सूत्र से नुम् का आगम करके - भव नुम् त् स् - भव न् त् स् /

हल्ङ्याब्भ्यो दीघात् सुतिस्यपृक्तं (६.१.६८) - इस सूत्र से स् का लोप करके और **संयोगान्तस्य लोप:** सूत्र से त् का लोप करके = भवन्।

इसी प्रकार - गम् + शप् - गच्छ। गच्छ + शतृ - गच्छत् = गच्छन्।

पठ + शप् - पठ। पठ + शतृ - पठत् = पठन्।

चुर् + णिच् + शप् - चोरय। चोरय + शतृ - चोरय + अत् / अतो गुणे से दोनों 'अ' के स्थान पर पररूप आदेश करके - चोरय् + अत् = चोरयत्। प्रथमा एकवचन में चोरयत् + सु = चोरयन्।

गण् + णिच् + शप् - गणय / गणय + शतृ - गणयन् / कथ् + णिच् + शप् - कथय / कथय + शतृ - कथयन्, आदि।

दिव् + श्यन् + शतृ / 'हलि च' से दीर्घ करके - दीव्य + शतृ / दीव्य + अत् / अतो गुणे से दोनों 'अ' के स्थान पर पररूप आदेश करके - दीव्य् + अत् = दीव्यत्। प्रथमा एकवचन में दीव्यत् + सु = दीव्यन्, आदि।

तुद + शतृ / तुद + अत् / अतो गुणे से दोनों 'अ' के स्थान पर पररूप आदेश करके - तुद् + अत् = तुदत्। प्रथमा एकवचन में तुदत् + सु = तुदन्, आदि।

अन्य गणों के विकरण अदन्त नहीं होते हैं, अतः उनसे शतृ प्रत्यय लगाने की विधि तत् तत् गणों में ही बतलाई जायेगी।

धातुओं में विकरण लगाने के बाद शानच् प्रत्यय लगाना

ध्यान दें कि आगे जब हम भ्वादिगण के धातुओं से शप् (अ), दिवादिगण के धातुओं से श्यन् (य), तुदादिगण के धातुओं से श (अ), और चुरादिगण के धातुओं से णिच् + शप् (अय) विकरण लगायेंगे, तब धातुओं में विकरण लगाकर जो भी शब्द बनेंगे, वे सारे के सारे अदन्त ही होंगे अर्थात् उनके अन्त में 'ह्रस्व अ' ही होगा।

भ्वादि, दिवादि तुदादि तथा चुरादिगण के धातुओं में विकरण लगाकर बने हुए अदन्त अङ्गों से शानच् प्रत्यय इस प्रकार लगाया जाता है -

आने मुक् (७.२.८२) - अदन्त अङ्गों को मुक् का आगम होता है, आन परे होने पर।

आद्यन्तौ टकितौ (१.१.४६) - टित् और कित् आगम जिससे विहित होते हैं, उसके क्रम से आदि और अन्तावयव होते हैं। मुक् कित् आगम है, और अदन्त अङ्ग को विहित है, अतः यह अदन्त अङ्ग के अन्त में बैठेगा।

वर्ध + शानच् / वर्ध + मुक् + शानच् / वर्ध + म् + आन = वर्धमान / प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति लगाकर - वर्धमानः।

शोभ + मुक् + शानच् / शोभ + म् + आन = शोभमान / प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति लगाकर - शोभमानः।

अन्य गणों के विकरण अदन्त नहीं होते हैं, अतः उनसे शानच् लगाने की विधि तत् तत् गणों में ही बतलाई जायेगी।

अब हम एक एक गण के धातुओं को लेकर उनमें पहिले तत् तत् गणों के विकरण लगा लें, उसके बाद धातु + विकरण को जोड़कर जो भी

बने, उसमें पूर्वोक्त विधि से शतृ, शानच् प्रत्यय लगायें -

अब हम अलग अलग गणों के धातुओं में अलग अलग विकरण लगाकर ही उनमें पूर्वोक्त विधि से शतृ, शानच् प्रत्यय लगायें।

भ्वादिगण

कर्तरि शप् (३.१.६८) - अदादि, जुहोत्यादि, दिवादि, स्वादि, तुदादि, रुधादि, तनादि, क्र्यादि, गण के धातुओं को छोड़कर अन्य किसी भी धातु से कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर 'शप्' विकरण लगता है।

अतः धातु का कोई भी पद हो, कर्ता अर्थ में भ्वादिगण के धातुओं से **'शतृ, शानच् प्रत्यय'** परे होने पर पहिले 'शप् विकरण' लगाइये। शप् प्रत्यय में **हलन्त्यम्** सूत्र से प् की तथा लशक्वतद्धिते सूत्र से श् की इत्संज्ञा करके 'अ' शेष बचता है। श् की इत्संज्ञा होने से यह प्रत्यय 'शित्' है। शित् होने से यह सार्वधातुक है। प् की इत्संज्ञा होने से यह प्रत्यय 'पित्' भी है। अतः यह 'पित् सार्वधातुक प्रत्यय' है।

१. भ्वादिगण के विशिष्ट धातु

शित् प्रत्यय लगने पर भ्वादिगण के कुछ धातुओं में विशेष कार्य होते हैं। ये धातु इस प्रकार हैं -

पा घ्रा ध्मा स्था म्ना दाण् दृशि अर्ति सर्ति शद सदां, पिब जिघ्र धम तिष्ठ मन यच्छ पश्य ऋच्छ धौ शीय सीदाः (७.३.७८) -

'शित् प्रत्यय' परे होने पर, पा, घ्रा, ध्मा, स्था, म्ना, दाण्, दृश्, ऋ, सृ, शद्, सद् इन धातुओं के स्थान पर क्रमशः पिब्, जिघ्र्, धम्, तिष्ठ्, मन्, यच्छ्, पश्य्, ऋच्छ्, धौ, शीय्, तथा सीद् आदेश हाते हैं। यथा - पा + शप् + शतृ - पिब + अ + अत्। अब 'अतो गुणे' सूत्र से बकारोत्तर अकार को पररूप एकादेश करके - पिब + अत्। पुनः अतो गुणे से पररूप एकादेश करके - पिबत्। पूरे धातु इस प्रकार बनायें -

पा	+	शप्	-	पिब	/	पिब	+	शतृ	=	पिबन्
घ्रा	+	शप्	-	जिघ्र	/	जिघ्र	+	शतृ	=	जिघ्रन्
ध्मा	+	शप्	-	धम	/	धम	+	शतृ	=	धमन्
स्था	+	शप्	-	तिष्ठ	/	तिष्ठ	+	शतृ	=	तिष्ठन्
म्ना	+	शप्	-	मन	/	मन	+	शतृ	=	मनन्
दाण्	+	शप्	-	यच्छ	/	यच्छ	+	शतृ	=	यच्छन्

दृश् + शप् - पश्य / पश्य + शतृ = पश्यन्
ऋ + शप् - ऋच्छ / ऋच्छ + शतृ = ऋच्छन्
सृ + शप् - धाव / धाव + शतृ = धावन्
सद् + शप् - सीद / सीद + शतृ = सीदन्
शद् + शीय - शीय / शीय + शानच् = शीयमानः

इष्, गम्, यम् धातु -

इषुगमियमां छः (७.३.७७) - इष्, गम्, तथा यम् धातुओं के अन्तिम वर्ण के स्थान पर छ् आदेश होता है। अब देखिये कि छ् होने से ये धातु इछ्, गछ्, तथा यछ् बन गये हैं। अब छकार परे होने पर इन्हें **'छे च'** सूत्र से तुक् का आगम करें -

गम् + शप् - गच्छ / गच्छ + शतृ = गच्छन्
यम् + शप् - यच्छ / यच्छ + शतृ = यच्छन्

(ध्यान दें कि इष् - इच्छ् धातु तुदादिगण का है। इसे आगे बतलायेंगे।)

भ्राश्, भ्लाश्, भ्रम्, क्रम्, त्रस्, त्रुट्, लष् धातु -

वा भ्राशभ्लाशभ्रमुक्रमुक्लमुत्रसित्रुटिलषः (३.१.७०) - भ्राश्, भ्लाश्, भ्रम्, क्रम्, क्लम्, त्रस्, त्रुट्, लष् इन धातुओं से विकल्प से श्यन् प्रत्यय होता है। पक्ष में यथाप्राप्त विकरण होता है।

क्रमः परस्मैपदेषु (७.३.७६) - क्रम् धातु को दीर्घ होता है, परस्मैपदसंज्ञक शित् प्रत्यय परे होने पर।

क्रम् + शप् - क्राम / क्राम + शतृ = क्रामन्
क्रम् + श्यन् - क्राम्य / क्राम्य + शतृ = क्राम्यन्

आत्मनेपद में दीर्घ नहीं होगा -

क्रम् + शप् - क्रम / क्रम + शानच् = क्रममाणः

शमामष्टानां दीर्घः श्यनि (७.३.७४) - शमादि आठ धातुओं को दीर्घ होता है, श्यन् परे होने पर। अतः शप् परे होने पर दीर्घ न करें -

भ्रम् + शप् - भ्रम / भ्रम + शतृ = भ्रमन्
भ्रम् + श्यन् - भ्राम्य / भ्राम्य + शतृ = भ्राम्यन्

अब शेष धातुओं में विकल्प से शप्, श्यन् प्रत्यय लगाकर शतृ, शानच् लगायें-

शप् प्रत्यय लगाकर -

भ्राश् + शप् - भ्राश / भ्राश + शानच् = भ्राशमानः
भ्लाश् + शप् - भ्लाश / भ्लाश + शानच् = भ्लाशमानः

त्रस् + शप् - त्रस / त्रस + शतृ = त्रसन्
त्रुट् + श - त्रुट / त्रुट + शतृ = त्रुटन्
लष् + शप् - लष / लष + शतृ = लषन्

श्यन् प्रत्यय लगाकर -

भ्राश् + श्यन् - भ्राश्य / भ्राश्य + शानच् = भ्राश्यमानः
भ्लाश् + श्यन् - भ्लाश्य / भ्लाश्य + शानच् = भ्लाश्यमानः
त्रस् + श्यन् - त्रस्य / त्रस्य + शतृ = त्रस्यन्
त्रुट् + श्यन् - त्रुट्य / त्रुट्य + शतृ = त्रुट्यन्
लष् + श्यन् - लष्य / लष्य + शतृ = लष्यन्

ष्ठिव्, क्लम्, चम् धातु -

ष्ठिवुक्लमुचमां शिति (७.३.७५) - ष्ठिव्, क्लम् तथा चम्, इन धातुओं को शित् प्रत्यय परे होने पर दीर्घ होता है -

ष्ठिव् + शप् - ष्ठीव / ष्ठीव + शतृ = ष्ठीवन्
आ + चम् + शप् - आचाम / आचाम + शतृ = आचामन्
क्लम् + शप् - क्लाम / क्लाम + शतृ = क्लामन्
क्लम् + श्यन् - क्लाम्य / क्लाम्य + शतृ = क्लाम्यन्

श्रु, अक्ष्, तक्ष् धातु -

श्रुवः शृ च (३.१.७४) - श्रु धातु में शप् विकरण न लगकर, श्नु विकरण लगता है, साथ ही श्रु धातु को 'शृ' ऐसा आदेश भी होता है।

श्रु + श्नु + शतृ / शृ + नु = शृणु / शृणु + शतृ - शृण्वन्।

(धातुओं में श्नु प्रत्यय लगाने की विधि स्वादिगण में देखें।)

अक्षोऽन्यतरस्याम् (३.१.७५) - अक्षू धातु से विकल्प से शप् तथा श्नु विकरण लगते हैं।

अक्ष + शप् - अक्ष / अक्ष + शतृ = अक्षन्
अक्ष् + श्नु - अक्ष्णु / अक्ष्णु + शतृ = अक्ष्णुवन्

तनूकरणे तक्षः - तनूकरण (छीलना) अर्थ में तक्षू धातु से शप्, श्नु विकरण विकल्प से लगते हैं।

तक्ष + शप् - तक्ष / तक्ष + शतृ = तक्षन्
तक्ष् + श्नु - तक्ष्णु / तक्ष्णु + शतृ = तक्ष्णुवन्

धिवि, कृवि धातु -

धिन्विकृण्व्योर च (३.१.८०) - धिवि, कृवि, इन धातुओं से 'उ' विकरण लगता है, साथ ही इसके अन्तिम वर्ण को 'अ' आदेश होता है।

धिवि + उ / 'इ' की इत् संज्ञा होकर 'इदितो नुम् धातोः' सूत्र से 'नुम्' का आगम होकर, धिन्व् + उ / अन्तिम 'व्' को 'अ' आदेश होकर - धिन - उ, 'अतो लोपः' से 'अ' का लोप होकर - धिन् + उ = धिनु - धिनु + शतृ = धिन्वन्।

इसी प्रकार कृवि + उ / 'इ' की इत् संज्ञा होकर 'इदितो नुम् धातोः' सूत्र से 'नुम्' का आगम होकर, कृन्व् + उ / अन्तिम 'व्' को 'अ' आदेश होकर - कृन - उ, 'अतो लोपः' से 'अ' का लोप होकर कृन् + उ - कृनु / णत्व होकर = कृणु - कृणु + शतृ = कृण्वन्।

गुप्, तिज्, कित् धातु -

गुप्तिज्किद्भ्यः सन् (३.१.५) - गुप् धातु से निन्दा अर्थ में, तिज् धातु से क्षमा अर्थ में, तथा कित् धातु से व्याधिप्रतीकार अर्थ में, सन् प्रत्यय लगता है।

धातुओं में 'सन्' प्रत्यय को कैसे जोड़ते हैं, यह अष्टाध्यायी सहज बोध द्वितीय खण्ड में विस्तार से बतलाया गया है। जिज्ञासु पाठक वहीं देखें। यहाँ हमने इन धातुओं में 'सन्' प्रत्यय को जोड़कर ही रूप दे दिये हैं।

गुप् + सन् - जुगुप्स / जुगुप्स + शप् + शानच् - जुगुप्समानः
तिज् + सन् - तितिक्ष / तितिक्ष + शप् + शानच् - तितिक्षमाणः
कित् + सन् - चिकित्स / चिकित्स + शप् + शतृ - चिकित्सन्

दंश्, सञ्ज्, स्वञ्ज्, रञ्ज् धातु -

दंशसञ्जस्वञ्जां शपि / रञ्जेश्च - दंश्, सञ्ज्, स्वञ्ज्, रञ्ज्, इन धातुओं के 'न्' का लोप होता है शप् परे होने पर।

दंश् + शप् - दश / दश + शतृ = दशन्
सञ्ज् + शप् - सज / सज + शतृ = सजन्
स्वञ्ज् + शप् - स्वज / स्वज + शानच् = स्वजमानः
रञ्ज् + शप् - रज / रज + शतृ = रजन्
/ रज + शानच् = रजमानः

गुपू, धूप्, विच्छ् धातु -

गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्य आयः - गुपू, धूप् तथा विच्छ् धातुओं से, 'आय'

लगता है। गुप् + आय - में 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा को गुण करके-

गोप् + आय + शप् - गोपाय / गोपाय + शतृ = गोपायन्

धूप् + आय + शप् - धूपाय / धूपाय + शतृ = धूपायन्

विच्छ् + आय + श - विच्छाय / विच्छाय + शतृ = विच्छायन्

(ध्यान दें कि विच्छ् धातु तुदादिगण का है।)

पण् तथा पन् धातु - पण् धातु का अर्थ स्तुति तथा व्यवहार है किन्तु पन् धातु का अर्थ केवल स्तुति है। यहाँ यह ध्यान देना चाहिये कि स्तुति अर्थ में ही, इन दोनों धातुओं से 'आय' प्रत्यय लगता है। साथ ही 'आय' प्रत्यय लगने पर इनसे परस्मैपदी शतृ प्रत्यय लगता है। पण् + आय - पणाय + शप् / 'अतो गुणे' से सूत्र से पररूप होकर - पणाय। इसी प्रकार पन् से पनाय बनाइये।

पण् धातु का अर्थ जब व्यवहार होता है, तब इससे 'आय' प्रत्यय नहीं लगता है। पण् + शप् - पण। आत्मनेपदी होने पर इसमें शानच् लगेगा।

पण् + आय + शप् / पणाय + शतृ = पणायन्

पण् + - शप् / पण + शानच् = पणमानः

पन् + आय + शप् / पनाय + शतृ = पनायन्

२. भ्वादिगण के इगन्त धातु

अब भ्वादिगण के जो धातु बच गये, उन्हें देखिये। उनमें से जिन धातुओं के अन्त में इक् है, अर्थात् इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ हैं, वे इगन्त धातु हैं। ऐसे इगन्त धातुओं में शप् प्रत्यय को इस प्रकार लगाइये -

सार्वधातुकार्धधातुकयोः (७.३.८४) - पित् सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर, अथवा कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अङ्ग के अन्तिम इक् को गुण होता है। जैसे - जि + शप् - जे + अ / भू + शप् - भो + अ / हृ + शप् - हर् + अ आदि।

एचोऽयवायावः (६.१.७८) - ए के स्थान पर अय्, ओ के स्थान पर अव्, ऐ के स्थान पर आय्, औ के स्थान पर आव् आदेश होते हैं, अच् परे होने पर। जैसे - जे + अ - जय् + अ = जय / भो + अ - भव् + अ = भव / आदि।

इन इगन्त धातुओं से शतृ, शानच् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

जि + शप् - जय - जय + शतृ = जयन्

नी + शप् - नय - नय + शतृ = नयन्

द्रु	+	शप्	-	द्रव	-	द्रव	+	शतृ	=	द्रवन्
भू	+	शप्	-	भव	-	भव	+	शतृ	=	भवन्
हृ	+	शप्	-	हर	-	हर	+	शतृ	=	हरन्
तॄ	+	शप्	-	तर	-	तर	+	शतृ	=	तरन्

३. भ्वादिगण के एजन्त धातु

अब भ्वादिगण के उन धातुओं को देखिये, जिन धातुओं के अन्त में ए, ओ, ऐ, औ हैं। ये एजन्त धातु हैं। ऐसे एजन्त धातुओं से शप् प्रत्यय परे होने पर, 'एचोऽयवायाव:' सूत्र से ए के स्थान पर अय्, ओ के स्थान पर अव्, ऐ के स्थान पर आय्, औ के स्थान पर आव् आदेश कीजिये। जैसे -

ए	को	अय् बनाइये	-	धे	+	शप्	-	धय	-	धय	+ शतृ	=	धयन्
ऐ	को	आय् बनाइये	-	म्लै	+	शप्	-	म्लाय	-	म्लाय	+ शतृ	=	म्लायन्
औ	को	आव् बनाइये	-	धौ	+	शप्	-	धाव	-	धाव	+ शतृ	=	धावन्

अब भ्वादिगण के हलन्त धातुओं का इस प्रकार वर्गीकरण करके, उनमें शप् प्रत्यय जोड़िये -

४. भ्वादिगण के इदुपध, उदुपध, ऋदुपध धातु

अब भ्वादिगण के उन धातुओं को देखिये, जिन धातुओं की उपधा में लघु इ, लघु उ, लघु ऋ, हैं, ये लघु इगुपध धातु हैं। ऐसे लघु इगुपध धातुओं में शप् प्रत्यय को इस प्रकार लगाइये -

पुगन्तलघूपधस्य च - जिनकी उपधा में लघु इ, लघु उ, लघु ऋ है, ऐसे लघु इगुपध धातुओं की उपधा के लघु इक् को गुण होता है, सार्वधातुक तथा आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

अत: उपधा के लघु इ को ए, लघु उ को ओ, लघु ऋ को अर् बनाइये -

चित्	+	शप्	=	चेत	-	चेत	+	शतृ	=	चेतन्
घुष्	+	शप्	=	घोष	-	घोष	+	शतृ	=	घोषन्
वृष्	+	शप्	=	वर्ष	-	वर्ष	+	शतृ	=	वर्षन्

विशेष - सार्वधातुकार्धधातुकयो: सूत्र से अन्त के इक् के स्थान पर होने वाला गुण ह्रस्व तथा दीर्घ, इन दोनों ही 'इक्' को होता है किन्तु पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से होने वाला उपधागुण केवल लघु इ, लघु उ, लघु ऋ को ही होता है।

इसलिये ध्यान रहे कि यदि उपधा में दीर्घ इक् हों, तब उन्हें कदापि गुण न करें। जैसे - मील् + शप् = मीलन्, मूष् + शप् = मूषन् आदि।

५. भ्वादिगण के शेष धातु

इगन्त, एजन्त, लघु इगुपध, विशिष्ट तथा विकारी धातुओं के अलावा अब जितने भी धातु बचते हैं उनमें शप् लगाने के लिये आपको कोई श्रम नहीं करना है, बस धातु + शप् को मिलाकर जोड़ देना है, जैसे -

मील्	+	शप्	-	मील	-	मील	+	शतृ	-	मीलन्
वन्द्	+	शप्	-	वन्द	-	वन्द	+	शानच्	-	वन्दमानः
एध्	+	शप्	-	एध	-	एध	+	शानच्	-	एधमानः
मूष्	+	शप्	-	मूष	-	मूष	+	शतृ	-	मूषन्
शीक्	+	शप्	-	शीक	-	शीक	+	शानच्	-	शीकमानः
वद्	+	शप्	-	वद	-	वद	+	शतृ	-	वदन्
बाध्	+	शप्	-	बाध	-	बाध	+	शानच्	-	बाधमानः

यह भ्वादिगण के धातुओं में शतृ, शानच् प्रत्यय लगाने की विधि पूर्ण हुई।

चुरादिगण के धातु तथा णिजन्त धातु

चुरादिगण के धातुओं में शतृ, शानच् प्रत्यय लगाने के पहिले णिच् प्रत्यय लगाया जाता है। णिच् प्रत्यय लगने से ये धातु प्रत्ययान्त हो जाते हैं। प्रत्ययान्त धातुओं से शतृ, शानच् आदि सार्वधातुक प्रत्यय लगाने की विधि के चार हिस्से होते हैं।

१. धातु में णिच् प्रत्यय लगाना।

२. उसके बाद धातु + णिच् को जोड़कर, जो णिजन्त धातु बने, उसकी 'सनाद्यन्ता धातवः' सूत्र से धातु संज्ञा करना।

३. उसके बाद इन णिजन्त धातुओं से शतृ, शानच् आदि कोई भी प्रत्यय लगाना।

४. शतृ, शानच् आदि सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर धातुओं से 'कर्तरि शप्' सूत्र से शप् विकरण लगाकर रूप तैयार करना।

इस ग्रन्थ के परिशिष्ट - १ में सारे भी धातुओं में णिच् प्रत्यय जोड़ने की विधि दी गई है। उसे वहाँ देखकर, तब णिजन्त धातुओं में शतृ, शानच् प्रत्यय लगायें।

णिच्प्रत्ययान्त धातुओं के पद का विचार

१. **आकुस्मादात्मनेपदिनः** - चुरादिगण के धातुपाठ में आकुस्मीय धातु देखिये।

इनकी विशेषता यह है, कि णिच् प्रत्यय लगने के बाद, इनके रूप केवल आत्मनेपद में ही बनते हैं, परस्मैपद में नहीं। अतः इनसे शानच् ही लगेगा, शतृ नहीं।

चित् - चेतयमानः / गन्ध् - गन्धयमानः / कुस्म् - कुस्मयमानः आदि।

२. **आगर्वादात्मनेपदिनः** - चुरादिगण के धातुपाठ में आगर्वीय धातु देखिये। इनसे भी शानच् ही लगेगा, शतृ नहीं। जैसे - मृग - मृगयमाणः / गर्ह् - गर्हयमाणः आदि।

३. **णिचश्च (१.३.७४)** - आकुस्मीय तथा आगर्वीय से बचे हुए जो णिजन्त धातु हैं, उनके रूप दोनों पदों में बनते हैं। अतः इनसे शानच्, शतृ दोनों ही लग सकते हैं। यथा - चोरयन्, चोरयमाणः आदि।

णिचश्च सूत्र के अपवाद -

बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुभ्यो णेः (१.३.८६) - बुध् युध् नश् जन् इङ् प्रु, द्रु, स्रु, इन णिजन्त धातुओं से कर्त्रभिप्राय क्रियाफल होने पर भी परस्मैपद ही होता है। बोधयति, योधयति, नाशयति, जनयति, अध्यापयति, प्रावयति, द्रावयति, स्रावयति।

निगरणचलनार्थेभ्यश्च (१.३.८७) - निगरणार्थक और चलनार्थक णिजन्त धातुओं से कर्त्रभिप्राय क्रियाफल होने पर भी परस्मैपद ही होता है। निगरणार्थक - निगारयति, आशयति, भोजयति। चलनार्थक - चलयति, चोपयति, कम्पयति, आदि।

अणावकर्मकाच्चित्तवत् कर्तृकात् (१.३.८८) - जो धातु अण्यन्तावस्था में अकर्मक हो और जिसका कर्ता चेतन हो, उससे णिच् प्रत्यय होने पर परस्मैपद ही होता है।

आस्ते देवदत्तः - आसयति देवदत्तम् / शेते देवदत्तः - शाययति देवदत्तम्।

न पादम्याङ्यमाङ्यसपरिमुहरुचिनृतिवदिवसः (१.३.८९) - पा, दम, आङ् + यम्, आङ् + यस्, परिमुह्, रुच्, नृत्, वद्, वस्, इन णिजन्त धातुओं से परस्मैपद नहीं होता। पाययते, दमयते, आयामयते, आयासयते, परिमोहयते, रोचयते, नर्तयते, वादयते, वासयते। 'धेट उपसंख्यानम्' वार्तिक से धापयेते शिशुमेकं समीची भी बनता है। यहाँ ध्यान देना चाहिये कि पूर्वोक्त दो सूत्रों से कर्त्रभिप्राय क्रियाफल होने पर भी जो परस्मैपद कहा गया है, उस परस्मैपद का यह सूत्र निषेध करता है, अतः अकर्त्रभिप्राय क्रियाफल होने पर तो 'शेषात् कर्तरि परस्मैपदम्' सूत्र से परस्मैपद हो ही जायेगा। वत्सान् पाययति पयः।

णिजन्त धातुओं से शतृ, शानच् प्रत्यय
प्रत्यय लगाना

हम जानते हैं कि अदादि, जुहोत्यादि, दिवादि, स्वादि, तुदादि, रुधादि, तनादि,

क्र्यादि, गण के धातुओं को छोड़कर अन्य किसी भी धातु से कर्त्रर्थक सार्वध ातुक प्रत्यय परे होने पर 'कर्तरि शप् (३.१.६८)' सूत्र से 'शप्' विकरण लगता है। अत: इन णिजन्त धातुओं से भी शप् विकरण लगाइये। यथा - चोरि + शप् + शतृ -

ध्यान दें कि सारे णिजन्त धातुओं के अन्त में णिच् प्रत्यय का णिच् (इ) ही रहता है। अत: ये सारे इकारान्त ही होते हैं। इसलिये भ्वादिगण के इकारान्त जि, नी आदि धातुओं में शप् विकरण लगाया था, ठीक वैसे ही इन णिजन्त धातुओं से भी लगाइये - चोरि + शप् / **सार्वधातुकार्धधातुकयो:** सूत्र से इ को गुण करके - चोरे + अ / **एचोऽयवायाव:** सूत्र से ए के स्थान पर 'अय्' आदेश करके - चोरय।

चोरय + शतृ - अनुबन्धों की इत् संज्ञा करके - चोरय + अत् / **अतो गुणे** सूत्र से 'अ' को पररूप करके - चोरयत्। चोरयत् + सु = चोरयन्।

इसी प्रकार - पाठि + शप् + शतृ = पाठयन् / लेखि + शप् + शतृ = लेखयन् / बोधि + शप् + शतृ = बोधयन् / पाति + शप् + शतृ = पातयन्, आदि बनाइये।

चोरि + शप् + शानच् / इत् संज्ञा करके - चोरि + अ + आन / **सार्वधातुकार्धधातुकयो:** सूत्र से इ को गुण करके - चोरे + अ + आन / **एचोऽयवायाव:** सूत्र से ए के स्थान पर 'अय्' आदेश करके - चोरय + आन - देखिये कि णिच् + शप् लगाकर बना हुआ 'चोरय' अदन्त अङ्ग है। अत: **आने मुक्** सूत्र से अदन्त अङ्ग को मुक् का आगम करके - चोरय + मुक् + आन / चोरय + म् + आन / न् को णत्व करके - चोरयमाण / प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति लगाकर - चोरयमाण:। इसी प्रकार - कथि + शप् + शानच् = कथयमान: / ज्ञपि + शप् + शानच् = ज्ञपयमान: / नाटि + शप् + शानच् = नाटयमान: / चूर्णि + शप् + शानच् चूर्णयमान: / आदि बनाइये।

सन्नन्त धातुओं से शतृ, शानच् प्रत्यय लगाना

धातुओं में सन् प्रत्यय लगाने की विधि 'अष्टाध्यायी सहज बोध' द्वितीय खण्ड में देखें।

कर्तरि शप् (३.१.६८) - अदादि, जुहोत्यादि, दिवादि, स्वादि, तुदादि, रुधादि, तनादि, क्र्यादि, गण के धातुओं को छोड़कर अन्य किसी भी धातु से कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर 'शप्' विकरण लगता है।

अतो गुणे (६.१.९७) अपदान्त अत् से गुण परे होने पर, पूर्वपर के स्थान

पर पररूप एकादेश होता है। अर्थात् पूर्व अ और पर अ, इन दानों के स्थान पर एक 'अ' हो जाता है। जैसे -

जिगमिष + शप् + शतृ / जिगमिष + अ + अत् / अतो गुणे से पररूप एकादेश करके - जिगमिष् + अ + अत् / पुनः अतो गुणे से 'अ' को पररूप करके = जिगमिषत्। प्रथमा एकवचन में जिगमिषत् + सु = जिगमिषन्। इसी प्रकार - पिपठिष - पिपठिषन्। विवक्ष - विवक्षन्। पिपक्ष - पिपक्षन्, आदि बनाइये। **(ध्यान दें कि सन्नन्त धातुओं के अन्त में सदा 'ह्रस्व अ' ही होता है।)**

पूर्ववत्सनः (१.३.६२) - सन् प्रत्यय लगने के बाद भी धातु का पद वही रहता है, जो पद धातु में सन् प्रत्यय लगने के पहिले था। अतः आत्मनेपदी सन्नन्त धातुओं से शानच् लगाकर - विवर्धिष - विवर्धिषमाणः। शुशोभिष - शुशोभिषमाणः, आदि बनाइये।

क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्ययान्त धातुओं से शतृ, शानच् प्रत्यय लगाना

ध्यान दें कि ङित् होने के कारण सारे क्यङन्त धातु आत्मनेपदी ही होते हैं, अतः इनसे शानच् ही लगेगा, शतृ नहीं।

क्यङन्त धातु - श्येनाय + शप् + शानच् = श्येनायमानः। पुष्कराय + शप् + शानच् = पुष्करायमाणः।

क्यजन्त धातु परस्मैपदी ही होते हैं, अतः इनसे शतृ ही लगेगा, शानच् नहीं।

क्यषन्त धातु उभयपदी होते हैं। अतः इनसे दोनों लग सकते हैं।

कर्तरि शप् से शप् विकरण ही लगेगा। रूप बिल्कुल सन्नन्त धातुओं के समान ही बनेंगे। यथा -

क्यजन्त धातु - पुत्रीय - पुत्रीयन्। समिध्य - समिध्यन्। प्रावारीय - प्रवारीयन्।

क्यषन्त धातु - निद्राय - निद्रायन्। निद्राय - निद्रायमाणः।

यङन्त धातुओं से शतृ, शानच् प्रत्यय लगाना

ध्यान दें कि ङित् होने के कारण सारे यङन्त धातु आत्मनेपदी ही होते हैं, अतः इनसे शानच् ही लगेगा, शतृ नहीं। कर्तरि शप् से शप् विकरण ही लगेगा।

लेलिख्य + शप् + शानच् / इत् संज्ञा करके - लेलिख्य + अ + आन / अतो गुणे से 'अ' को पररूप करके - लेलिख्य + आन / आने मुक् सूत्र से अदन्त अङ्ग को मुक् का आगम करके - लेलिख्य + मुक् + आन / लेलिख्य + म् + आन / लेलिख्यमान - प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति लगाकर - लेलिख्यमानः।

इसी प्रकार - लोलूय - लोलूयमान: / पोपूय - पोपूयमान: / नेनीय - नेनीयमान: / बोभूय - बोभूयमान: / वरीवृत्य - वरीवृत्यमान:, आदि।

यङ्लुगन्त धातुओं से शतृ, शानच् प्रत्यय लगाना

यङन्त धातुओं के 'यङ्' का 'यङोऽचि च' सूत्र से लुक् करके 'यङ्लुगन्त' घातु बनते हैं। सारे यङन्तलुगन्त धातु परस्मैपदी ही होते हैं, अत: इनसे शतृ ही लगता है, शानच् नहीं। यह भी ध्यान रहे कि यङन्तलुगन्त धातुओं से विकरण नहीं लगता।

'यङ्लुगन्त' धातु बनाने की विधि तथा 'यङ्लुगन्त' घातुओं के रूप बनाने की विधि 'अष्टाध्यायी सहज बोध के द्वितीय खण्ड में देखें। वहाँ लट् लकार प्रथमपुरुष बहुवचन का 'अति' प्रत्यय अजादि अपित् सार्वधातुक प्रत्यय है।

शतृ प्रत्यय भी अजादि अपित् सार्वधातुक प्रत्यय है। अत: जिस प्रकार 'यङ्लुगन्त' धातुओं में प्रथम पुरुष बहुवचन के अति प्रत्यय को लगाया गया है, ठीक उसी विधि से 'यङ्लुगन्त' धातुओं से शतृ=अत् प्रत्यय लगा लीजिये। यथा - बोभू + अति से बोभुवति बना है, तो आप बोभू + शतृ से बोभू + अत् = बोभुवत् बना लीजिये।

यह प्रत्ययान्त धातुओं से सार्वधातुक प्रत्यय लगाने की विधि पूर्ण हुई।

दिवादिगण

दिवादिभ्य: श्यन् (३.१.६९) - कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर दिवादिगण के धातुओं से 'श्यन्' विकरण लगाया जाता है।

श्यन् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से 'न्' की तथा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से 'श्' की इत् संज्ञा होकर 'तस्य लोप:' सूत्र से उन न्, श् का लोप होकर 'य' शेष बचता है।

शित् होने से यह सार्वधातुक प्रत्यय है। प् की इत् संज्ञा न होने से यह अपित् सार्वधातुक प्रत्यय है। अपित् सार्वधातुक प्रत्यय होने के कारण **यह 'सार्वधातुकमपित्'** सूत्र से ङिद्वत् है।

जब भी कोई प्रत्यय ङित् या कित् होता है तब ये तीन अङ्गकार्य होते हैं -

१. अनिदित् धातुओं की उपधा के न् का लोप।

२. सम्प्रसारणी धातुओं को सम्प्रसारण।

३. अन्त और उपधा के इक् को गुणनिषेध।

अब हम दिवादिगण के धातुओं का वर्गीकरण करें और उनमें श्यन् लगाकर उनके धातुरूप बनायें -

१. दिवादिगण के अनिदित् धातु

जिन धातुओं में 'इ' की इत् संज्ञा होती है, उन्हें इदित् धातु कहा जाता है। जो धातु इदित् नहीं होते, उन्हें अनिदित् धातु कहा जाता है।

दिवादिगण में रञ्ज्, भ्रंश्, ये दो ही अनिदित् धातु हैं। इनमें श्यन् प्रत्यय इस प्रकार लगायें -

अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति - अनिदित् धातुओं की उपधा के न् का लोप होता है कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर।

रञ्ज् + श्यन् - रज् + य - रज्य - रज्य + शतृ = रज्यन्
भ्रंश् + श्यन् - भ्रश् + य - भ्रश्य - भ्रश्य + शतृ = भ्रश्यन्

२. दिवादिगण के सम्प्रसारणी धातु

ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च (६.१.१६) - ग्रह्, ज्या, वय्, व्यध्, वश्, व्यच्, व्रश्च्, प्रच्छ्, भ्रस्ज् इतने धातुओं को सम्प्रसारण होता है कित् अथवा ङित् प्रत्यय परे होने पर।

इग्यणः सम्प्रसारणम् (१.१.४५) - य्, व्, र्, ल् को इ, उ, ऋ, लृ हो जाना सम्प्रसारण होना कहलाता है।

व्यध् + श्यन् - य् को सम्प्रसारण होकर - व् इ अ ध् + य / 'सम्प्रसारणाच्च' से 'अ' को पूर्वरूप होकर - विध् + य - विध्य / विध्य + शतृ - विध्य + अत् /अतो गुणे से पररूप करके = विध्यन्।

३. दिवादिगण का मिद् धातु

मिदेर्गुणः (७.३.८२) - मिद् धातु को गुण होता है, भले ही उससे परे आने वाला प्रत्यय कित् या ङित् ही क्यों न हो। अतः मिद् को गुण करके मेद् बनाइये -

मिद् + श्यन् - मेद् + य - मेद्य / मेद्य + शतृ = मेद्यन्।

४. दिवादिगण का जन् धातु

ज्ञाजनोर्जा (७.३.७९) - क्र्यादिगण के ज्ञा धातु को तथा दिवादिगण के जन् धातु को जा आदेश हो जाता है शित् प्रत्यय परे रहने पर। जन् + श्यन् - जा + य - जाय / जाय + शानच् - जायमानः।

५. दिवादिगण का यस् धातु

यसोऽनुपसर्गात् (३.१.७१) - यस् धातु यदि उपसर्ग से रहित हो, तो उसमें

विकल्प से शप् या श्यन् विकरण लगते हैं। अतः इसके दो दो रूप बनेंगे।
यस् + श्यन् + शतृ = यस्यन् / यस् +शप् + शतृ - यसन्।
ध्यान रहे कि उपसर्ग होने पर केवल श्यन् होता है - आयस्य - आयस्यन्।

६. दिवादिगण के ओदित् धातु

ओतः श्यनि (७.३.७१) - दिवादिगण के ओकारान्त धातुओं के ओ का लोप होता है, श्यन् परे होने पर। दिवादिगण का धातुपाठ देखिये।

शो	+	श्यन्	-	श्य	/	श्य	+	शतृ	=	श्यन्
दो	+	श्यन्	-	द्य	/	द्य	+	शतृ	=	द्यन्
छो	+	श्यन्	-	छ्य	/	छ्य	+	शतृ	=	छ्यन्
षो	+	श्यन्	-	स्य	/	स्य	+	शतृ	=	स्यन्

७. दिवादिगण के शमादि अन्तर्गण के धातु

शमामष्टानां दीर्घः श्यनि (७.३.७४) - अष्टाध्यायी सहज बोध में दिवादिगण में क्रमाङ्क ११५३ से ११६० तक जो ८ धातु हैं, वे शमादि धातु कहलाते हैं। श्यन् परे होने पर, इन शमादि ८ धातुओं को दीर्घ होता है।

शम्	+	श्यन्	-	शाम्य	/	शाम्य	+	शतृ	=	शाम्यन्
तम्	+	श्यन्	-	ताम्य	/	ताम्य	+	शतृ	=	ताम्यन्
दम्	+	श्यन्	-	दाम्य	/	दाम्य	+	शतृ	=	दाम्यन्
श्रम्	+	श्यन्	-	श्राम्य	/	श्राम्य	+	शतृ	=	श्राम्यन्
भ्रम्	+	श्यन्	-	भ्राम्य	/	भ्राम्य	+	शतृ	=	भ्राम्यन्
क्षम्	+	श्यन्	-	क्षाम्य	/	क्षाम्य	+	शतृ	=	क्षाम्यन्
क्लम्	+	श्यन्	-	क्लाम्य	/	क्लाम्य	+	शतृ	=	क्लाम्यन्
मद्	+	श्यन्	-	माद्य	/	माद्य	+	शतृ	=	माद्यन्

८. दिवादिगण के दीर्घ ॠकारान्त धातु

ॠत इद् धातोः (७.१.१००) - धातु के अन्त में दीर्घ ॠ हो, तथा उससे परे आने वाला प्रत्यय कित् या ङित् हो, तो दीर्घ ॠ को इ आदेश होता है।

उरण् रपरः सूत्र की सहायता से यह इ 'रपर' हो जाता है। जैसे -

जॄ	+	श्यन्	=	जिर्	+	श्यन्	-
झॄ	+	श्यन्	=	झिर्	+	श्यन्	-

हलि च (८.२.७७)- यदि धातु के अन्त में र्, या व् हों और और र्, व्

के पूर्व में अर्थात् उपधा में, इक् (इ, उ, ऋ) हों, तो उन इक् को, दीर्घ हो जाता है, हल् परे होने पर।

जॄ + श्यन् - जिर् + य - जीर् + य - जीर्य + शतृ = जीर्यन्
झॄ + श्यन् - झिर् + य - झीर् + य - झीर्य + शतृ = झीर्यन्

(यहाँ यह ध्यातव्य है कि रेफान्त, वान्त धातुओं की उपधा के इ, उ को दीर्घ तभी होगा, जब प्रत्यय हलादि होगा।)

९. दिवादिगण के वकारान्त इगुपध धातु

हलि च सूत्र से उपधा के इक् को दीर्घ करके -

दिव्	+	श्यन्	-	दीव्य	+	शतृ	= दीव्यन्
षिव्	+	श्यन्	-	सीव्य	+	शतृ	= सीव्यन्
स्त्रिव्	+	श्यन्	-	स्त्रीव्य	+	शतृ	= स्त्रीव्यन्
ष्ठिव्	+	श्यन्	-	ष्ठीव्य	+	शतृ	= ष्ठीव्यन्

१०. दिवादिगण के शेष धातु

क्ङिति च (१.१.५) - कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर, इक् के स्थान पर होने वाले गुण या वृद्धि कार्य नहीं होते हैं।

हमने जाना कि अपित् सार्वधातुक होने के कारण, श्यन् प्रत्यय ङित्वत् है। अतः इसके लगने पर, धातुओं में बिना गुण किये, श्यन् प्रत्यय जोड़ दिया जाता है। जैसे-

पुष्	+	श्यन्	-	पुष्य	+	शतृ	= पुष्यन्
श्लिष्	+	श्यन्	-	श्लिष्य	+	शतृ	= श्लिष्यन्
नृत्	+	श्यन्	-	नृत्य	+	शतृ	= नृत्यन्

ध्यातव्य - ध्यान दें कि अपित् सार्वधातुक प्रत्यय 'श्यन्' लगने के कारण इनकी उपधा के इ, उ, ऋ, ज्यों के त्यों हैं। इन्हें गुण नहीं हुआ है, जबकि पित् शप् लगने पर भ्वादिगण में हुआ था। पित् और अपित् प्रत्यय का, यही सबसे बड़ा भेद है।

तुदादिगण

तुदादिभ्यः शः (३.१.७७) - कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर तुदादिगण के धातुओं से 'श' विकरण लगाया जाता है। शित् होने से यह सार्वधातुक प्रत्यय है। प् की इत् संज्ञा न होने से यह अपित् सार्वधातुक प्रत्यय है। अपित् सार्वधातुक प्रत्यय होने के कारण **यह 'सार्वधातुकमपित्'** सूत्र से ङिद्वत् है।

अब हम तुदादिगण के धातुओं का वर्गीकरण करके, उनमें 'श' विकरण लगाकर शतृ, शानच् प्रत्यय लगायें -

१. तुदादिगण के इकारान्त तथा उकारान्त धातु

अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ (६.४.७७) -

इण् धातु को छोड़कर एक अच् वाले सारे इवर्णान्त धातु, जैसे रि, क्षि आदि / जिनके पूर्व में दो या दो से अधिक व्यञ्जनों का संयोग है, ऐसे संयोगपूर्व अनेकाच् इवर्णान्त धातु, जैसे - जिह्री आदि / जिनके पूर्व में दो या दो से अधिक व्यञ्जनों का संयोग है, ऐसे संयोगपूर्व श्नुप्रत्ययान्त धातु, जैसे - शक्नु, आप्नु आदि / एवं हु धातु को छोड़कर शेष सारे उवर्णान्त धातु / इन्हें अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर इयङ् उवङ् आदेश होते हैं।

ध्यान रहे कि 'इ' को इयङ्, तथा 'उ' को 'उवङ्' होता है।

अतः 'श' प्रत्यय परे होने पर तुदादिगण के इकारान्त, ईकारान्त धातुओं को इस सूत्र से इयङ् = इय् बनाइये -

रि	+	श	-	रिय्	+	अ	-	रिय	+	शतृ	=	रियन्
पि	+	श	-	पिय्	+	अ	-	पिय	+	शतृ	=	पियन्
धि	+	श	-	धिय्	+	अ	-	धिय	+	शतृ	=	धियन्
क्षि	+	श	-	क्षिय्	+	अ	-	क्षिय	+	शतृ	=	क्षियन् आदि।

'श' प्रत्यय परे होने पर तुदादिगण के उकारान्त, ऊकारान्त धातुओं को इसी सूत्र से उवङ् = उव् बनाइये

गु	+	श	-	गुव्	+	अ	-	गुव	+	शतृ	=	गुवन्
ध्रु	+	श	-	ध्रुव्	+	अ	-	ध्रुव	+	शतृ	=	ध्रुवन्
कु	+	श	-	कुव्	+	अ	-	कुव	+	शानच्	=	कुवमानः
नु	+	श	-	नुव्	+	अ	-	नुव	+	शतृ	=	नुवन्
सू	+	श	-	सुव्	+	अ	-	सुव	+	शतृ	=	सुवन् आदि।

२. तुदादिगण के ऋकारान्त धातु

रिङ्शयग्लिङ्क्षु (७.४.२८) - श, यक् और लिङ् परे होने पर ऋकारान्त धातुओं के ऋ को रिङ् (रि) आदेश होता है। यथा - पृ + श = प्रि + अ

देखिये कि यह धातु अब इकारान्त बन गया है, अतः इसे अचि श्नुधातुभ्रुवां

य्वोरियङुवङौ सूत्र से इयङ् (इय्) बना दीजिये, तो बना - पृ + श - प्रि + अ / इ को इयङ् करके - प्रिय् + अ = प्रिय - प्रिय + शानच् = प्रियमाणः।

इसी प्रकार - मृ से म्रिय - म्रिय + शानच् = म्रियमाणः। दृ से द्रिय / द्रिय + शानच् = द्रियमाणः। धृ से ध्रिय - ध्रिय + शानच् = ध्रियमाणः, आदि।

३. तुदादिगण के दीर्घ ॠकारान्त धातु

ॠत इद् धातोः - 'दीर्घ ॠ' के स्थान पर इर् आदेश होता है।

कॄ	+	श	-	किर्	+ अ	/	किर	+	शतृ	= किरन्
गॄ	+	श	-	गिर्	+ अ	/	गिर	+	शतृ	= गिरन् आदि।

इसे इस प्रकार याद रखें।

श लगने पर - इ को इय् / उ को उव् / ऋ को रिय् / ॠ को इर् बनाइये।

४. तुदादिगण के मुचादि धातु

शे मुचादीनाम् (६.१.५९) - तुदादिगण के मुचादि अन्तर्गण के धातुओं को, नुम् का आगम होता है, 'श' परे होने पर।

नुम् में म्, उ की इत् संज्ञा होकर न् शेष बचता है। म् की इत् संज्ञा होने से यह आगम, मित् आगम है।

मिदचोऽन्त्यात्परः (१.१.४७) - मित् आगम जिसे कहे जाते हैं, उसके अन्तिम अच् के बाद बैठते हैं। अतः यह नुम्, मुचादि धातुओं के अन्तिम अच् के बाद बैठेगा। नुमागम करके तथा सन्धि करके, इनके रूप इस प्रकार बनेंगे -

मुच्	+	नुम्	+	श	-	मु न् च्	+ अ	-	मुञ्च	+	शतृ	= मुञ्चन्
लुप्	+	नुम्	+	श	-	लु न् प्	+ अ	-	लुम्प	+	शतृ	= लुम्पन्
विद्	+	नुम्	+	श	-	वि न् द्	+ अ	-	विन्द	+	शतृ	= विन्दन्
लिप्	+	नुम्	+	श	-	लि न् प्	+ अ	-	लिम्प	+	शतृ	= लिम्पन्
सिच्	+	नुम्	+	श	-	सि न् च्	+ अ	-	सिञ्च	+	शतृ	= सिञ्चन्
कृत्	+	नुम्	+	श	-	कृ न् त्	+ अ	-	कृन्त	+	शतृ	= कृन्तन्
खिद्	+	नुम्	+	श	-	खि न् त्	+ अ	-	खिन्द	+	शतृ	= खिन्दन्
पिश्	+	नुम्	+	श	-	पि न् श्	+ अ	-	पिंश	+	शतृ	= पिंशन्

५. तुदादिगण के सम्प्रसारणी धातु

ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च (६.१.१६)

- ग्रह्, ज्या, वय्, व्यध्, वश्, व्यच्, व्रश्च्, प्रच्छ्, भ्रस्ज् इतने धातुओं को सम्प्रसारण होता है कित् अथवा ङित् प्रत्यय परे होने पर।

'श' प्रत्यय अपित् होने के कारण ङित्वत् है अत: इसके लगने पर तुदादिगण के इन धातुओं को सम्प्रसारण होगा -

व्रश्च् + श - वृश्च् + अ - वृश्च + शतृ = वृश्चन्
व्यच् + श - विच् + अ - विच + शतृ = विचन्
प्रच्छ् + श - पृच्छ् + अ - पृच्छ + शतृ = पृच्छन्
भ्रस्ज् + श - भृज्ज् + अ - भृज्ज + शतृ = भृज्जन्

६. तुदादिगण के विशेष धातु

मस्ज् लस्ज् धातु - स्तो: श्चुना श्चु: सूत्र से स् को श् करके, झलां जश् झशि से जश्त्व करके, 'मज्ज्' 'लज्ज्' ऐसा आदेश करके, मज्ज् + श - मज्ज = मज्जन् तथा लज्ज् + श - लज्ज = लज्जमान:, रूप बनाइये।

इष् धातु - इषुगमियमां छ: सूत्र से इष् को इच्छ् बनाइये।

इष् + श - इच्छ् + अ - इच्छ + शतृ = इच्छन्

षद्, शद् धातु - 'पाघ्राध्मास्थाम्नादाण्दृश्यर्तिसर्तिशदसदां, पिबजिघ्रधम तिष्ठ-मनयच्छपश्यर्च्छधौशीयसीदा:', इस सूत्र से षद् को सीद् तथा शद् को शीय् बनाइये।

षद् + श - सीद् + अ - सीद + शतृ = सीदन्
शद् + श - शीय् + अ - शीय + शानच् = शीयमान:

'इषुगमियमां छ:' तथा 'पाघ्राध्मा'. सूत्र भ्वादि में दिये जा चुके हैं, इन्हें वहीं देखें।

विच्छ् धातु - 'गुपूधूपविच्छपणिपनिभ्य: आय:' सूत्र से विच्छ् धातु में 'आय' लगाकर विच्छाय - विच्छंायन् बनाइये।

७. तुदादि गण के तृम्फादि धातु

यद्यपि तुदादि गण के तृम्फादि धातु अनिदित् धातु हैं, अत: **अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति सूत्र** से इनकी उपधा के न् का लोप होता है। जैसे - गुम्फ् + श - गुफ् + अ, आदि। किन्तु -

शे तृम्फादीनां नुम् वाच्य: (वार्तिक) - इन तृम्फादि धातुओं के न् का लोप होकर इस वार्तिक से पुन: वहाँ न् आकर बैठ जाता है।

अत: गुफ् से पुन: गुम्फ् बन जाता है। ऐसी स्थिति में यहाँ 'न्' का लोप होता हुआ भी दिखाई नहीं देता। गुम्फ - गुम्फन्।

८. तुदादिगण के शेष धातु

क्ङिति च (१.१.५) - कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर, इक् के स्थान पर होने वाले गुण या वृद्धि कार्य नहीं होते हैं।

श प्रत्यय भी ङित्वत् है। अत: इन धातुओं के अलावा तुदादि गण के जो शेष धातु हैं, उनमें बिना किसी परिवर्तन के 'श' विकरण जोड़ दीजिये। यथा -

दिश् + श (अ) - दिश = दिश + शतृ = दिशन्
तुद् + श (अ) - तुद = तुद + शतृ = तुदन् आदि।

शेष छह गणों के धातुओं में शतृ, शानच् प्रत्यय लगाने की विधि

हमने देखा कि भ्वादि, दिवादि तुदादि तथा चुरादिगण के धातुओं में विकरण लगाने पर जो भी अङ्ग बने हैं, वे अदन्त ही हैं। जैसे -

भू + शप् = भव - इसके अन्त में 'अ' है।
चुर् + णिच् + शप् = चोरय - इसके अन्त में 'अ' है।
दिव् + श्यन् = दीव्य - इसके अन्त में 'अ' है।
तुद् + श = तुद - इसके अन्त में भी 'अ' है।

अब क्र्यादिगण से लेकर आगे जो भी धातु आयेंगे, उनमें विकरण लगाने के बाद जो भी अङ्ग बनेंगे, वे कभी भी अदन्त नहीं होंगे।

हम यह जानते हैं कि 'आने मुक्' सूत्र से होने वाला मुक् का आगम अदन्त अङ्गों को ही होता है। अत: **शप्, श्यन्, श, इन तीन विकरणों से बने हुए अङ्गों को ही मुक् का आगम होता है, जो हम कर चुके हैं।**

आगे के छह गणों में जो विकरण लगेंगे, उनसे बनने वाले अङ्ग कभी भी अदन्त नहीं होंगे, अत: उनसे शानच् परे होने पर उन्हें 'आने मुक्' सूत्र से मुक् का आगम कभी नहीं होगा। अत: जिस विधि से अङ्गों में शतृ को जोड़ेंगे, उसी विधि से अङ्गों में शानच् को भी जोड़ा जायेगा।

क्र्यादिगण

क्र्यादिभ्य: श्ना (३.१.८१) - क्र्यादिगण का विकरण 'श्ना' है। कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर क्र्यादिगण के धातुओं से श्ना विकरण लगाना चाहिये।

क्रीणा + श्ना + शतृ। क्रीणा + श्ना + शानच्, आदि।

यह श्ना प्रत्यय, शित् होने से सार्वधातुक प्रत्यय है। पित् न होने से अपित् सार्वधातुक प्रत्यय है तथा अपित् सार्वधातुक प्रत्यय होने के कारण **'सार्वधातुकमपित्' सूत्र से** ङित्वत् है। अतः इसे ङित् मानकर ही हम अङ्गकार्य करें -

क्री + श्ना - क्री + ना / **अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि सूत्र से न को णत्व करके** = क्रीणा। **अब इसमें शतृ प्रत्यय लगाइये** - क्रीणा + शतृ - क्रीणा + अत् -

श्नाभ्यस्तयोरातः (६.४.११२) - श्नान्त और अभ्यस्त संज्ञक अङ्गों के अन्तिम 'आ' का लोप होता है, अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

इस सूत्र से आ का लोप करके - क्रीण् + अत् - क्रीणत् / क्रीणत् + सु = क्रीणन्।

इसी प्रकार - क्रीणा + शानच् / श्नाभ्यस्तयोरातः से आ का लोप करके - क्रीण् + आन = क्रीणान / क्रीणान + सु = क्रीणानः।

इसी प्रकार क्र्यादिगण के सभी धातुओं से 'श्ना' विकरण लगाकर शतृ, शानच् प्रत्यय लगाइये -

क्री	+ श्ना	=	क्रीणा	-	क्रीणा	+ शतृ	=	क्रीणन्	/	क्रीणानः
प्री	+ श्ना	=	प्रीणा	-	प्रीणा	+ शतृ	=	प्रीणन्	/	प्रीणानः
श्री	+ श्ना	=	श्रीणा	-	श्रीणा	+ शतृ	=	श्रीणन्	/	श्रीणानः
मी	+ श्ना	=	मीना	-	मीना	+ शतृ	=	मीनन्	/	मीनानः
सि	+ श्ना	=	सिना	-	सिना	+ शतृ	=	सिनन्	/	सिनानः
स्कु	+ श्ना	=	स्कुना	-	स्कुना	+ शतृ	=	स्कुनन्	/	स्कुनानः
यु	+ श्ना	=	युना	-	युना	+ शतृ	=	युनन्	/	युनानः
क्नू	+ श्ना	=	क्नूना	-	क्नूना	+ शतृ	=	क्नूनन्	/	क्नूनानः
द्रू	+ श्ना	=	द्रूणा	-	द्रूणा	+ शतृ	=	द्रूणन्	/	द्रूणानः
व्री	+ श्ना	=	व्रीणा	-	व्रीणा	+ शतृ	=	व्रीणन्	/	व्रीणानः
भ्री	+ श्ना	=	भ्रीणा	-	भ्रीणा	+ शतृ	=	भ्रीणन्	/	भ्रीणानः
क्षी	+ श्ना	=	क्षीणा	-	क्षीणा	+ शतृ	=	क्षीणन्	/	क्षीणानः
वृङ्	+ श्ना	=	वृणा	-	वृणा	+ शानच्	=	-		वृणानः

क्र्यादिगण के प्वादि धातु

प्वादीनां ह्रस्वः (७.३.८०) - क्र्यादिगण के धातुओं में क्रमाङ्क १४८२ (पू)

धातु से क्रमाङ्क १५०३ (प्ली) तक के धातु, प्वादि धातु कहलाते है।

श्ना प्रत्यय परे होने पर, इन धातुओं को 'प्वादीनां ह्रस्वः' सूत्र से ह्रस्व कीजिये।

पू + श्ना = पुना - पुना + शतृ = पुनन् / पुनानः
लूञ् + श्ना = लुना - लुना + शतृ = लुनन् / लुनानः
स्तॄञ् + श्ना = स्तृणा - स्तृणा + शतृ = स्तृणन् / स्तृणानः
कॄञ् + श्ना = कृणा - कृणा + शतृ = कृणन् / कृणानः
वॄञ् + श्ना = वृणा - वृणा + शतृ = वृणन् / वृणानः
धू + श्ना = धुना - धुना + शतृ = धुनन् / धुनानः
शॄ + श्ना = शृणा - शृणा + शतृ = शृणन्
पॄ + श्ना = पृणा - पृणा + शतृ = पृणन्
वॄ + श्ना = वृणा - वृणा + शतृ = वृणन्
भॄ + श्ना = भृणा - भृणा + शतृ = भृणन्
मॄ + श्ना = मृणा - मृणा + शतृ = मृणन्
दॄ + श्ना = दृणा - दृणा + शतृ = दृणन्
जॄ + श्ना = जृणा - जृणा + शतृ = जृणन्
नॄ + श्ना = नृणा - नृणा + शतृ = नृणन्
कॄ + श्ना = कृणा - कृणा + शतृ = कृणन्
ॠ + श्ना = ऋणा - ऋणा + शतृ = ऋणन्
गॄ + श्ना = गृणा - गृणा + शतृ = गृणन्
री + श्ना = रिणा - रिणा + शतृ = िणन्
ली + श्ना = लिना - लिना + शतृ = लिनन्
ब्ली + श्ना = ब्लिना - ब्लिना + शतृ = ब्लिनन्
प्ली + श्ना = प्लिना - प्लिना + शतृ = प्लिनन्

विशेष – दृणा, ऋणा, मृणा, आदि में जो ऋ के बाद आने वाले न् को ण् हुआ है, वह 'ऋवर्णान् नस्य णत्वं वाच्यम्' इस वार्तिक से हुआ है।

क्र्यादिगण का ज्या धातु

ज्या + श्ना / 'ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च' इस सूत्र से सम्प्रसारण करके – ज्या + श्ना – ज् इ + श्ना।

अब 'हलः' सूत्र से इस 'इ' को दीर्घ होकर – ज् + ई + ना बनता है। अनन्तर

प्वादीनां ह्रस्वः सूत्र से इस 'ई' को ह्रस्व होकर पुनः ज् + इ + ना = जिना - जिना + शतृ - जिनन् बन जाता है।

क्र्यादिगण का ज्ञा धातु

ज्ञाजनोर्जा (७.३.७९) - शित् प्रत्यय परे होने पर, ज्ञा धातु को जा आदेश होता है। ज्ञा + श्ना - जा + ना = जाना - जाना + शतृ - जानन्।

क्र्यादिगण का ग्रह् धातु

'ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च' इस सूत्र से सम्प्रसारण होकर - ग्रह् + श्ना - गृह् + ना = गृह्णा - गृह्णा + शतृ - गृह्णन्।

गृह्णा में जो 'ऋ' के बाद आने वाले 'न्' को 'ण्' हुआ है, वह 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' इस सूत्र से हुआ है।

क्र्यादिगण के अनिदित् धातु

अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति (६.४.२४) - अनिदित् धातुओं की उपधा के 'न्' का लोप होता है, कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर।

बन्ध्	+	श्ना	=	बध्ना	-	बध्ना	+	शतृ	=	बध्नन्
श्रन्थ्	+	श्ना	=	श्रथ्ना	-	श्रथ्ना	+	शतृ	=	श्रथ्नन्
ग्रन्थ्	+	श्ना	=	ग्रथ्ना	-	ग्रथ्ना	+	शतृ	=	ग्रथ्नन्
कुन्थ्	+	श्ना	=	कुथ्ना	-	कुथ्ना	+	शतृ	=	कुथ्नन्
मन्थ्	+	श्ना	=	मथ्ना	-	मथ्ना	+	शतृ	=	मथ्नन्

क्र्यादिगण के शेष सारे धातु

शेष धातुओं में 'क्ङिति च' से गुणनिषेध होने के कारण श्ना को ज्यों को त्यों जोड़ दीजिये -

पुष्	+	श्ना	=	पुष्णा	-	पुष्णा	+	शतृ	=	पुष्णन्
मृद्	+	श्ना	=	मृद्ना	-	मृद्ना	+	शतृ	=	मृद्नन्

स्वादिगण

स्वादिभ्यः श्नुः (३.१.७३) - स्वादिगण का विकरण 'श्नु' है। स्वादिगण के धातुओं से कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे रहने पर श्नु विकरण लगता है।

यह श्नु प्रत्यय, शित् होने से सार्वधातुक प्रत्यय है। पित् न होने से अपित् सार्वधातुक प्रत्यय है तथा अपित् सार्वधातुक प्रत्यय होने के कारण **'सार्वधातुकमपित्' सूत्र से** ङित्वत् है।

अत: इसे ङित् मानकर ही हम अङ्गकार्य करें -

स्वादिगण के अजन्त धातुओं में शतृ, शानच् प्रत्यय लगाना

चि + श्नु / चि + नु / क्ङिति च सूत्र से गुणनिषेध होकर = चिनु / इसी प्रकार - सु + श्नु = सुनु / स्तृणु + शतृ = स्तृणु, आदि।

ध्यान दें कि जब अजन्त धातुओं से श्नु प्रत्यय लगता है, जैसे - चि + नु = चिनु / सु + नु = सुनु, स्तृणु + शतृ = स्तृणु आदि में, तब जो अङ्ग बनते हैं, उन अङ्गों के अन्तिम उकार के पूर्व कभी भी दो व्यञ्जनों का संयोग नहीं होता। अत: ये अङ्ग असंयोगपूर्व श्नु प्रत्ययान्त अङ्ग कहलाते हैं।

असंयोगपूर्व श्नुप्रत्ययान्त धातुओं में शतृ, शानच् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये-

हुश्नुवो: सार्वधातुके (६.४.८७) - हु धातु को तथा असंयोग पूर्व श्नुप्रत्ययान्त अङ्ग के 'उ' को यण् = 'व्' ही होता है, अजादि अपित् सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर।

यथा - चिनु + शतृ / चिनु + अत् / हुश्नुवो: सार्वधातुके सूत्र से यण् होकर - चिन्वत् / चिन्वत् + सु = चिन्वन्।

चिनु + शानच् / चिनु + आन / हुश्नुवो: सार्वधातुके सूत्र से यण् होकर - चिन्वान / चिन्वान + सु = चिन्वान:। इसी प्रकार -

सुनु + शतृ = सुन्वन् / सुनु + शानच् = सुन्वान: / स्तृणु + शतृ = स्तृण्वन् / स्तृणु + शानच् = स्तृण्वान: / वृणु + शतृ = वृण्वन् / वृणु + शानच् = वृण्वान:।

स्वादिगण के हलन्त धातुओं में शतृ, शानच् प्रत्यय लगाना

तिग् + श्नु - क्ङिति च सूत्र से गुणनिषेध होकर = तिग्नु / स्तिघ् + श्नु = स्तिघ्नु / आप् + नु = आप्नु / शक् + नु = शक्नु / आदि।

ध्यान दें कि हलन्त धातुओं में जब श्नु प्रत्यय लगता है, जैसे - आप् + नु = आप्नु / शक् + नु = शक्नु / आदि में, तब जो अङ्ग बनते हैं, उन अङ्गों के अन्तिम उकार के पूर्व में सदा दो या दो से अधिक व्यञ्जनों का संयोग होता ही है। अत: ये अङ्ग संयोगपूर्व श्नु प्रत्ययान्त अङ्ग कहलाते हैं।

संयोगपूर्व श्नुप्रत्ययान्त धातुओं में शतृ, शानच् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये-

शक्नु + शतृ / शक्नु + अत् / "अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ' सूत्र से उवङ् होकर - शक्नुव् + अत् -शक्नुवत् / शक्नुवत् + सु = शक्नुवन्।

अश्नु + शानच् / अश्नु + आन / अचि श्नु. सूत्र से उवङ् होकर - अश्नुव् + आन - अश्नुवान / अश्नुवान + सु = अश्नुवान:, आदि।

तनादिगण

तनादिकृञ्भ्य: उ: (३.१.७९) - तनादि गण के इन धातुओं से कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर, 'उ' विकरण लगता है। यह 'उ' विकरण आर्धधातुक है। कित्, ङित् नहीं है। अत: इसके परे होने पर यथाप्राप्त गुण होगा।

क्षिण् + उ / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण करके - क्षेण् + उ = क्षेणु / ऋण् + उ = अर्णु / तृण् + उ = तर्णु / घृण् + उ = घर्णु।

तनादिगण के धातुओं में 'उ' विकरण लगाने के बाद उनसे शतृ, शानच् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

इको यणचि (६.१.७७) - इक् के स्थान पर यण् होता है, अच् परे होने पर।

यथा - तनु + शतृ / इको यणचि से उ को यण् करके - तन्व् + अत् - तन्वत् / तन्वत् + सु = तन्वन्।

तनु + शानच् / इको यणचि से उ को यण् करके - तन्व् + आन - तन्वान / तन्वान + सु = तन्वान:।

तन्	+	उ	=	तनु	-	तनु	+	शतृ	-	तन्वन् / तन्वान:
सन्	+	उ	=	सनु	-	सनु	+	शतृ	-	सन्वन् / सन्वान:
क्षण्	+	उ	=	क्षणु	-	क्षणु	+	शतृ	-	क्षण्वन् / क्षण्वान:
क्षिण्	+	उ	=	क्षेणु	-	क्षेणु	+	शतृ	-	क्षेण्वन् / क्षेण्वान:
ऋण्	+	उ	=	अर्णु	-	अर्णु	+	शतृ	-	अर्ण्वन् / अर्ण्वान:
तृण्	+	उ	=	तर्णु	-	तर्णु	+	शतृ	-	तर्ण्वन् / तर्ण्वान:
घृणु	+	उ	=	घर्णु	-	घर्णु	+	शतृ	-	घर्ण्वन् / घर्ण्वान:
वनु	+	उ	=	वनु	-	वनु	+	शानच्	-	वन्वान:
मन्	+	उ	=	मनु	-	मनु	+	शानच्	-	मन्वान:

कृ धातु - कृ + उ / 'सार्वधातुकार्धधातुकयो:' सूत्र से गुण करके - कर् + उ / 'अत उत्सार्वधातुके' सूत्र से अ के स्थान पर उ आदेश करके - कुर् + उ - कुरु।

कुरु + शतृ / इको यणचि से उ को यण् करके - कुर्व् + अत् - कुर्वत् / कुर्वत् + सु = कुर्वन्।

कुरु + शानच् / इको यणचि से उ को यण् करके - कुर्व् + आन - कुर्वाण / कुर्वाण + सु = कुर्वाणः।

अदादिगण

अदिप्रभृतिभ्यः शपः (२.४.७२) - अदादिगण के धातुओं से कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर 'कर्तरि शप्' से शप् विकरण लगता है, किन्तु अदादिगण के धातुओं से परे आने वाले शप् विकरण का 'अदिप्रभृतिभ्यः शपः' सूत्र से लोप हो जाता है।

अतः अदादिगण के धातुओं से कर्तरि शप् सूत्र से शप् विकरण लगाइये और अदिप्रभृतिभ्यः शपः सूत्र से उस शप् का लुक् कर दीजिये।

विकरण का लुक् हो जाने के बाद जो धातु बचे, उसी से शतृ, शानच् प्रत्ययों को इस प्रकार लगाइये। इसके लिये धातुओं का इस प्रकार वर्गीकरण कर लीजिये -

जक्ष्, दरिद्रा, जागृ, चकास्, शास्, दीधी, वेवी धातु

जक्षित्यादयः षट् (६.१.६) - अदादिगण में जक्ष्, दरिद्रा, जागृ, चकास्, शास्, दीधी, वेवी, ये सात धातु अभ्यस्तसंज्ञक हैं।

नाभ्यस्ताच्छतुः (७.१.७८) - अभ्यस्तसंज्ञा का फल यह होता है कि अभ्यस्त-संज्ञक अङ्गों को नुमागम नहीं होता।

यथा - दरिद्रा + शतृ - दरिद्रा + अत् / श्नाभ्यस्तयोरातः सूत्र से 'आ' का लोप करके - दरिद्रत् / दरिद्रत् + सु - हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल् सूत्र से स् का लोप करके = दरिद्रत्।

जागृ + शतृ - जागृ + अत् / इको यणचि सूत्र से 'ऋ' के स्थान पर यण् करके - जाग्रत् / जाग्रत् + सु - पूर्ववत् - जाग्रत्।

जक्ष् + शतृ - जक्ष + अत् - जक्षत् / जक्षत् + सु = जक्षत्।

इसी प्रकार - चकास् + शतृ से चकासत् तथा शास् + शतृ से शासत् बनाइये।

दीधी, वेवी, आत्मनेपदी हैं, तथापि 'व्यत्ययो बहुलम्' सूत्र से इनसे शतृ लग सकता है - दीधी + शतृ - दीधी + अत् / एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य सूत्र से यण् करके - दीध्यत्। इसी प्रकार वेवी से वेव्यत् बनाइये।

दरिद्रा को छोड़कर अदादिगण के शेष आकारान्त धातु

वा + शतृ / वा + अत् / 'अकः सवर्णे दीर्घः' सूत्र से दीर्घ सन्धि होकर - वात् / वात् + सु - वान्।

अदादिगण के आकारान्त या, वा, भा, ष्णा, श्रा, द्रा, प्सा, पा, रा, ला, दा, ख्या, प्रा, मा, धातुओं के रूप इसी प्रकार बनाइये।

गा धातु (आत्मनेपदी) - गा + शानच् - गा + आन - गान + सु = गानः।

अदादिगण के इकारान्त, ईकारान्त धातु

दीधी, वेवी धातु -

दीधी + शानच् / 'एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य' सूत्र से ई को यण् करके दीध्य् + आन = दीध्यानः। इसी प्रकार वेवी - वेव्यानः।

इण् गतौ (परस्मैपदी) - इ + शतृ / इ + अत् -

इणो यण् (६.४.८१) - इण् धातु रूप अङ्ग को यण् आदेश होता है, अजादि अपित् प्रत्यय परे हाने पर। इ + अत् - य् + अत् - यत् / यत् + सु = यन्।

इक् स्मरणे (परस्मैपदी) -

इण्वदिक इति वक्तव्यम् (वा.) - इक् धातु, इण् धातु के समान ही होता है।

परन्तु यह ध्यान रखें कि इस धातु का प्रयोग अधि उपसर्ग के साथ ही होता है अकेले नहीं। अतः यन् में ही अधि लगाकर - अधियन्।

शेष इकारान्त धातुओं को इयङ् कीजिये -

इङ् अध्ययने (आत्मनेपदी) - यह धातु भी सदा अधि उपसर्ग से युक्त ही रहता है। अधि + इ + शानच् / अधि + इ + आन / अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ सूत्र से इयङ् करके - अधि + इय् + आन - अधीयान / अधीयान + सु = अधीयानः।

वी धातु (परस्मैपदी) - वी + शतृ / वी + अत् / पूर्ववत् इयङ् करके - वियत् - वियन्।

शीङ् स्वप्ने (आत्मनेपदी) - शी + शानच् / 'शीङः सार्वधातुके गुणः' सूत्र से गुण करके - शयानः।

अदादिगण के उकारान्त, ऊकारान्त धातु

यु + शप् + शतृ / शप् का लुक् होकर - यु + अत् / 'अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ' सूत्र से उवङ् करके - युव् + अत् - युवत् / प्रथमा एकवचन में युवन्। इसी प्रकार - ब्रू - ब्रुवन् / ऊर्णु - ऊर्णुवन् / रु - रुवन् आदि बनाइये।

आत्मनेपद में भी 'अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ' सूत्र से उवङ् करके - ह्नु + शानच् = ह्नुवानः / ब्रू + शानच् = ब्रुवाणः / सू + शानच् = सुवानः।

अदादिगण के हलन्त धातु

हन् धातु - हन् + शतृ / हन् + अत् / 'गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि' सूत्र से हन् की उपधा का लोप करके - ह्न् + अत् / 'हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु' सूत्र से ह् को कुत्व करके - घ्न् + अत् - घ्नत् / घ्नत् + सु = घ्नन्।

वश् धातु - वश् + शतृ / 'ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च' सूत्र से व् को सम्प्रसारण करके - उश् + अत् - उशत् / उशत् + सु = उशन्।

अस् धातु - अस् + शतृ / अस् + अत् / 'श्नसोरल्लोपः' सूत्र से अस् के अ का लोप करके - स् + अत् - सत् / सत् + सु = सन्।

मृज् धातु - मृज् + शतृ / मृज् + अत् / 'क्ङित्यजादौ वेष्यते' वार्तिक से ऋ को विकल्प से वृद्धि करके - मार्ज् + अत् - मार्जत् - मार्जन्।

वृद्धि न होने पर - मृज् + अत् - मृजत् - मृजन्।

आस् धातु - आस् + शानच् / आस् + आन -

ईदासः (७.२.८३) - आस् धातु से परे आने वाले आन को ईत् आदेश होता है। आस् + ईन - आसीन - आसीनः।

विद् धातु - विद् + शतृ -

विदेः शतुर्वसुः (७.१.३६) - विद् धातु से परे आने वाले शतृ प्रत्यय को विकल्प से क्वसु आदेश होता है।

क्वसु आदेश होने पर -विद् + शतृ / विद् + क्वसु / विद् + वस् - विद्वस् / प्रथमा एकवचन में विद्वान्। स्त्रीलिङ्ग में - विदुषी।

क्वसु आदेश न होने पर - विद् + शतृ / विद् + अत् - विदत् - विदन्।

द्विष् धातु - द्विष् + शतृ / द्विष् + अत् - द्विषत् - द्विषन्।

द्विषोऽमित्रे (३.२.१३१) - द्विष् धातु से शतृ प्रत्यय वर्तमानकाल में शत्रु अर्थ में होता है। द्विषन् = शत्रुः।

अदादिगण के शेष हलन्त धातु -

अब अदादिगण के जो हलन्त धातु बचे, उन हलन्त धातुओं को कुछ नहीं होता। अतः जो परस्मैपदी हैं, उनसे बिना कुछ किये शतृ - अत्, जोड़ दीजिये और जो आत्मनेपदी हैं, उनसे बिना कुछ किये शानच् - आन, जोड़ दीजिये, बस। जैसे -

शतृ प्रत्यय -

रुद् + शतृ - रुद् + अत् - रुदत् - रुदत् + सु = रुदन्
स्वप् + शतृ - स्वप् + अत् - स्वपत् - स्वपत् + सु = स्वपन्
श्वस् + शतृ - श्वस् + अत् - श्वसत् - श्वसत् + सु = श्वसन्
दुह् + शतृ - दुह् + अत् - दुहत् - दुहत् + सु = दुहन्
दिह् + शतृ - दिह् + अत् - दिहत् - दिहत् + सु = दिहन्
अद् + शतृ - अद् + अत् - अदत् - अदत् + सु = अदन्
विद् + शतृ - विद् + अत् - विदत् - विदत् + सु = विदन्
द्विष् + शतृ - द्विष् + अत् - द्विषत् - द्विषत् + सु = द्विषन्
सस् + शतृ - सस् + अत् - ससत् - ससत् + सु = ससन्
लिह् + शतृ - लिह् + अत् - लिहत् - लिहत् + सु = लिहन्
संस्त् + शतृ - संस्त + अत् - संस्तत् - संस्तत् + सु = संस्तन्

शानच् प्रत्यय -

निञ्ज् + शानच् - निञ्ज् + आन - निञ्जान - निञ्जान + सु = निञ्जानः
शिञ्ज् + शानच् - शिञ्ज् + आन - शिञ्जान - शिञ्जान + सु = शिञ्जानः
पिञ्ज् + शानच् - पिञ्ज् + आन - पिञ्जान - पिञ्जान + सु = पिञ्जानः
पृच् + शानच् - पृच् + आन - पृचान - पृचान + सु = पृचानः
वृज् + शानच् - वृच् + आन - वृजान - वृजान + सु = वृचानः
ईश् + शानच् - ईश् + आन - ईशान - ईशान + सु = ईशानः
ईड् + शानच् - ईश् + आन - ईडान - ईडान + सु = ईडानः
ईर् + शानच् - ईश् + आन - ईराण - ईराण + सु = ईराणः
चक्ष् + शानच् - चक्ष् + आन - चक्षाण - चक्षाण + सु = चक्षाणः
वस् + शानच् - वस् + आन - वसान - वसान + सु = वसानः
आशास् + शानच् - आशास् + आन - आशासान - आशासान + सु = आशासानः
कंस + शानच् - कंस् + आन - कंसान - कंसान + सु = कंसानः
निंस् + शानच् - निंस् + आन - निंसान - निंसान + सु = निंसानः

जुहोत्यादिगण

जुहोत्यादिभ्यः श्लुः (२.४.७५) - सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर जुहोत्यादिगण के सारे धातुओं से कर्तरि शप् सूत्र से शप् विकरण लगाया है। किन्तु इस सूत्र से उसका

श्लु (लोप) हो जाता है। दा + शप् + शतृ / श्लु होकर - दा + शतृ।

श्लौ - श्लु परे होने पर, धातु को द्वित्व होता है। जैसे - दा - दादा - ददा / हु - हुहु - जुहु / मा - मामा - ममा / हा - हाहा - जहा आदि।

उभे अभ्यस्तम् (६.१.५) - जब भी किसी धातु को द्वित्व हो जाता है, तब उन दोनों का नाम अभ्यस्त होता है। अत: जुहोत्यादिगण के ये सारे धातु जिन्हें हम द्वित्व करते हैं, इनका नाम अभ्यस्त होता है।

अभ्यस्तसंज्ञक धातुओं को सर्वनामस्थान विभक्तियों में 'नाभ्यस्ताच्छतु:' सूत्र से नुमागम का निषेध होता है, यह जानिये।

जुहोत्यादिगण के इन अभ्यस्त धातुओं में शतृ, शानच् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये-

जुहोत्यादिगण के आकारान्त धातु

श्नाभ्यस्तयोरात: सूत्र से इन आकारान्त धातुओं के 'आ' का लोप कीजिये -

दा + श्लु - ददा - ददा + शतृ = ददत्
दा + श्लु - ददा - ददा + शानच् = ददान:
धा + श्लु - दधा - दधा + शतृ = दधत्
धा + श्लु - दधा - ददा + शानच् = दधान:
मा + श्लु - मिमा - मिमा + शानच् = मिमान:
हा + श्लु - जिहा - जिहा + शानच् = जिहान:
हा + श्लु - जहा - जहा + शतृ = जहत्
गा + श्लु - जिगा - जिगा + शतृ = जिगत्

जुहोत्यादिगण के इकारान्त, ईकारान्त धातु

असंयोगपूर्वक अनेकाच् इकारान्त, ईकारान्त धातु - एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य सूत्र से इ, ई के स्थान पर यण् आदेश कीजिये -

कि + श्लु - चिकि - चिकि + शतृ = चिक्यत्
भी + श्लु - बिभी - बिभी + शतृ = बिभ्यत्

संयोगपूर्वक अनेकाच् इकारान्त, ईकारान्त धातु - अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ सूत्र से इ, ई के स्थान पर इयङ् आदेश कीजिये -

ह्री + श्लु - जिह्री - जिह्री + शतृ = जिह्रियत्

जुहोत्यादिगण के उकारान्त, ऊकारांन्त धातु

'अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ' सूत्र से उ, ऊ के स्थान पर इयङ् आदेश करके-

हु + श्लु - जुहु - जुहु + शतृ = जुह्वत्

जुहोत्यादिगण के ऋकारान्त, ॠकारान्त धातु

'इको यणचि' सूत्र से ऋ के स्थान पर यण् आदेश कीजिये -

घृ + श्लु - जिघृ - जिघृ + शतृ = जिघ्रत्
सृ + श्लु - ससृ - ससृ + शतृ = सस्रत्
ऋ + श्लु - इऋ - इऋ + शतृ = इय्रत्
भृ + श्लु - बिभृ - बिभृ + शतृ = बिभ्रत्
भृ + श्लु - बिभृ - बिभृ + शानच् = बिभ्राणः

ॠकारान्त धातु - 'उदोष्ठ्यपूर्वस्य' सूत्र से ॠ के स्थान पर उर् कीजिये-

पॄ + श्लु - पिपॄ - पिपॄ + शतृ = पिपुरत्

जुहोत्यादिगण का जन् धातु - जजन् + शतृ / जजन् + अत् -

गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि (६.४.९८) - गम्, हन्, जन्, खन्, घस्, इन धातुओं की उपधा के 'अ' का लोप होता है, अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

इस सूत्र से उपधा का लोप करके - जज्न् + अत् / स्तोः श्चुना श्चुः से न् को श्चुत्व करके जज्ञ् + अत् / ज्ञ् = ज्ञ् बनाकर - जज्ञत्।

जुहोत्यादिगण का भस् धातु - भस् + शतृ / भस् + श्लु + शतृ / बभस् + अत् / 'घसिभसोर्हलि च' सूत्र से भस् धातु की उपधा के अ का लोप करके बभ्स + अत् / 'खरि च' सूत्र से भ् को चर्त्व करके - बप्स् + अत् = बप्सत्।

जुहोत्यादिगण के शेष हलन्त धातु- शेष हलन्त धातुओं को कुछ मत कीजिये-

धन् + श्लु - दधन् - दधन् + शतृ = दधनत्
धिष् + श्लु - दिधिष् - दिधिष् + शतृ = दिधिषत्
तुर् + श्लु - तुतुर् - तुतुर् + शतृ = तुतुरत्
निज् + श्लु - नेनिज् - नेनिज् + शतृ = नेनिजत्
निज् + श्लु - नेनिज् - नेनिज् + शानच् = नेनिजानः
विज् + श्लु - वेविज् - वेविज् + शतृ = वेविजत्
विज् + श्लु - वेविज् - वेविज् + शानच् = वेविजानः
विष् + श्लु - वेविष् = वेविषत् + शतृ = वेविषत्
विष्लृ + श्लु - वेविष् = वेविषत् + शानच् = वेविषाणः

रुधादिगण

रुधादिभ्य: श्नम् (३.१.७८) - कर्त्रर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर रुधादिगण के धातुओं से श्नम् विकरण लगता है। श्नम् में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से श् की, तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से म् की इत् संज्ञा होकर 'न' शेष बचता है। म् की इत् संज्ञा होने से यह श्नम् विकरण मित् है।

मिदचोऽन्त्यात् पर: (१.१.४७) - मित् प्रत्यय जिससे भी लगता है, उसके अन्तिम अच् के बाद ही वह बैठता है। यथा - रुध् - रुनध् / भिद् - भिनद् / कृत् - कृनत् / तृद् - तृनद् / खिद् - खिनद् / तृह् - तृनह् आदि।

श्नान्नलोप: (६.४.२३) - श्नम् के बाद आने वाले 'न्' का लोप होता है। यथा - इन्ध् - श्नम् लगाकर - इनन्ध् / श्नम् के बाद आने वाले 'न्' का लोप करके - इनध्।

इसी प्रकार - तृन्ह् - तृनन्ह् - तृनह् आदि बनाइये।

यह श्ना प्रत्यय, शित् होने से सार्वधातुक प्रत्यय है। पित् न होने से अपित् सार्वधातुक प्रत्यय है तथा अपित् सार्वधातुक प्रत्यय होने के कारण 'सार्वधातुकमपित्' सूत्र से ङित्वत् है। अत: इसे ङित् मानकर ही हम अङ्गकार्य करें -

श्नसोरल्लोप: (६.४.१११) - श्नम् के 'अ' का लोप होता है, ङित् सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर। यथा - रुनध् - रुन्ध् / भिनद् - भिन्द् / कृनत् - कृन्त् / क्षुनद् - क्षुन्द् / तृनह् - तृंह् आदि।

ध्यान दें कि रुधादिगण के ये सभी धातु हलन्त हैं। इनमें बिना कुछ किये यथाप्राप्त शतृ - अत् अथवा शानच् - आन को जोड़ दीजिये, बस। जैसे -

परस्मैपदी धातुओं से शतृ

तच्	+	श्नम्	-	तञ्च्	+	शतृ	=	तञ्चन्
पृच्	+	श्नम्	-	पृञ्च्	+	शतृ	=	पृञ्चन्
भज्	+	श्नम्	-	भञ्ज्	+	शतृ	=	भञ्जन्
अज्	+	श्नम्	-	अञ्ज्	+	शतृ	=	अञ्जन्
विज्	+	श्नम्	-	विञ्ज्	+	शतृ	=	विञ्जन्
वृज्	+	श्नम्	-	वृञ्ज्	+	शतृ	=	वृञ्जन्
कृत्	+	श्नम्	-	कृन्त्	+	शतृ	=	कृन्तन्

उन्द्	+	श्नम्	-	उन्द्	+	शतृ	=	उन्दन्
शिष्	+	श्नम्	-	शिन्ष्	+	शतृ	=	शिंषन्
पिष्	+	श्नम्	-	पिन्ष्	+	शतृ	=	पिंषन्
हिंस्	+	श्नम्	-	हिन्स्	+	शतृ	=	हिंसन्
तृह	+	श्नम्	-	तृन्ह	+	शतृ	=	तृंहन्

आत्मनेपदी धातुओं से शानच्

खिद्	+	श्नम्	-	खिन्द्	+	शानच्	=	खिन्दानः
विद्	+	श्नम्	-	विन्द्	+	शानच्	=	विन्दानः
इन्ध्	+	श्नम्	-	इन्ध्	+	शानच्	=	इन्धानः

उभयपदी धातुओं से दोनों

विच्	+	श्नम्	-	विंच्	=	विञ्चन्	/	विञ्चानः
रिच्	+	श्नम्	-	रिंच्	=	रिञ्चन्	/	रिञ्चानः
युज्	+	श्नम्	-	युंज्	=	युञ्जन्	/	युञ्जानः
भुज्	+	श्नम्	-	भुंज्	=	भुञ्जन्	/	भुञ्जानः
भिद्	+	श्नम्	-	भिंद्	=	भिन्दन्	/	भिन्दानः
छिद्	+	श्नम्	-	छिंद्	=	छिन्दन्	/	छिन्दानः
रुध्	+	श्नम्	-	रुंध्	=	रुन्धन्	/	रुन्धानः
क्षुद्	+	श्नम्	-	क्षुंद्	=	क्षुन्दन्	/	क्षुन्दानः
छृद्	+	श्नम्	-	छृंद्	=	छृन्दन्	/	छृन्दानः
तृद्	+	श्नम्	-	तृंद्	=	तृन्दन्	/	तृन्दानः

शतृप्रत्ययान्त शब्दों के तीनों लिङ्गों में रूप बनाने के लिये सामान्य सूत्र

उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः (७.१.७०) - धातुभिन्न उगित् अङ्ग और अञ्चु धातुरूप जो अङ्ग, उन्हें नुम् का आगम होता है, सर्वनामस्थान परे होने पर।

नाभ्यस्ताच्छतुः (७.१.७८) - अभ्यस्तसंज्ञक अङ्गों से परे जो शतृ उसे नुमागम नहीं होता।

वा नपुंसकस्य (७.१.७९) - अभ्यस्त अङ्ग से परे जो शतृ प्रत्यय, तदन्त जो नपुंसकलिङ्ग, उसे विकल्प से नुमागम होता है, सर्वनामस्थान परे होने पर।

आच्छीनद्योर्नुम् (७.१.८०) - जिनमें शप् और श्यन् विकरण नहीं लगे हैं, उन धातुओं में विकरण को लगाकर जो अङ्ग अवर्णान्त बने हैं, उनसे परे आने वाले शतृ प्रत्यय को विकल्प से नुमागम होता है, शी, नदी परे होने पर।

शप्श्यनोर्नित्यम् (७.१.८१) - शप् और श्यन् से परे जो शतृ, उसे नित्य नुम् का आगम होता है, शी और नदी = ङीप् प्रत्यय परे होने पर।

अब इन सूत्रों के आधार पर हम तीनों लिङ्गों में कारकरचना करें -

पुंल्लिङ्ग

१. अभ्यस्तसंज्ञक शत्रन्त धातुओं के पुंल्लिङ्ग के रूप -

जक्षित्यादयः षट् सूत्र से अदादिगण में जक्ष्, दरिद्रा, जागृ, चकास्, शास्, दीधी, वेवी, ये सात धातु अभ्यस्तसंज्ञक हैं।

जुहोत्यादिगण के सारे द्वित्व किये हुए धातु, **उभे अभ्यस्तम्** सूत्र से अभ्यस्तसंज्ञक हैं तथा सारे यङ्लुगन्त धातु अभ्यस्तसंज्ञक हैं। इनके शत्रन्त रूपों की कारकरचना इस प्रकार कीजिये -

नाभ्यस्ताच्छतुः (७.१.७८) - अभ्यस्तसंज्ञा का फल यह होता है कि सु, औ, जस्, अम् औ, विभक्तियाँ परे होने पर अभ्यस्तसंज्ञक अङ्गों को नुमागम नहीं होता। यथा -

दरिद्रत् + सु - हल्ङ्याब्भ्यो दीघात् सुतिस्यपृक्तं हल् सूत्र से स् का लोप करके = दरिद्रत् / इसी प्रकार - जाग्रत् + सु = जाग्रत् / जक्ष् + सु = जक्षत् / चकास् + सु = चकासत् / शास् + सु = शासत्। दीधी, वेवी, आत्मनेपदी हैं, तथापि व्यत्ययो बहुलम् सूत्र से इनसे शतृ लगाकर - दीधी - दीध्यत् / वेवी - वेव्यत्।

एक अभ्यस्तसंज्ञक धातु के शत्रन्त रूप की कारकरचना

जाग्रत्	जाग्रतौ	जाग्रतः
जाग्रतम्	जाग्रतौ	जाग्रतः
जाग्रता	जाग्रद्भ्याम्	जाग्रद्भिः
जाग्रते	जाग्रद्भ्याम्	जाग्रद्भ्यः
जाग्रतः	जाग्रद्भ्याम्	जाग्रद्भ्यः
जाग्रतः	जाग्रतोः	जाग्रताम्
जाग्रति	जाग्रतोः	जाग्रत्सु
हे ! जाग्रत्	हे ! जाग्रतौ	हे ! जाग्रतः

अदादिगण के दरिद्रत् / जक्षत् / चकासत् / शासत् / दीध्यत् / वेव्यत् / के रूप इसी प्रकार बनायें।

जुहोत्यादिगण के सारे द्वित्व किये हुए धातु, **उभे अभ्यस्तम्** सूत्र से अभ्यस्तसंज्ञक हैं तथा सारे यङ्लुगन्त धातु अभ्यस्तसंज्ञक हैं। इनके शत्रन्त रूपों की कारकरचना भी इसी प्रकार कीजिये।

२. जो अभ्यस्तसंज्ञक नहीं हैं, उन शत्रन्त धातुओं के पुंल्लिङ्ग के रूप -

शतृ प्रत्यय में ऋ की इत्संज्ञा होने से यह प्रत्यय उगित् है और इससे बने हुए सारे शब्द उगिदन्त हैं।

उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः (७.१.७०) - धातुभिन्न उगित् अङ्ग और अञ्चु धातुरूप जो अङ्ग, उन्हें नुम् का आगम होता है, सर्वनामस्थान परे होने पर।

(सर्वनामस्थान = सु, औ, जस्, अम्, औट् विभक्तियाँ)

गम् - गच्छ् धातु से शतृ प्रत्यय लगाकर हमने गच्छ् + शप् + शतृ = गच्छत् बनाया है। इससे प्रथमा एकवचन में - गच्छत् + सु / 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुम् का आगम करके - गच्छ नुम् त् स् - गच्छ न् त् स् / हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल् सूत्र से स् का लोप करके और संयोगान्तस्य लोपः सूत्र से त् का लोप करके = गच्छन्। **पूरे रूप इस प्रकार बनाइये -**

गच्छन्	गच्छन्तौ	गच्छन्तः
गच्छन्तम्	गच्छन्तौ	गच्छतः
गच्छता	गच्छद्भ्याम्	गच्छद्भिः
गच्छते	गच्छद्भ्याम्	गच्छद्भ्यः
गच्छतः	गच्छद्भ्याम्	गच्छद्भ्यः
गच्छतः	गच्छतोः	गच्छताम्
गच्छति	गच्छतोः	गच्छत्सु
हे ! गच्छन्	हे ! गच्छन्तौ	हे ! गच्छन्तः

इसी प्रकार -

अदादिगण के धातुओं से - सन्, सन्तौ, सन्तः आदि।

दिवादिगण के धातुओं से - दीव्यन्, दीव्यन्तौ, दीव्यन्तः आदि।

स्वादिगण के धातुओं से - चिन्वन्, चिन्वन्तौ, चिन्वन्तः आदि।
तुदादिगण के धातुओं से - तुदन्, तुदन्तौ, तुदन्तः आदि।
रुधादिगण के धातुओं से - रुन्धन्, रुन्धन्तौ, रुन्धन्तः आदि।
तनादिगण के धातुओं से - तन्वन्, तन्वन्तौ, तन्वन्तः आदि।
क्र्यादिगण के धातुओं से - क्रीणन्, क्रीणन्तौ, क्रीणन्तः आदि।
चुरादिगण के धातुओं से - चोरयन्, चोरयन्तौ, चोरयन्तः आदि बनाइये।

यह सारे धातुओं से शतृ प्रत्यय लगाकर बने हुए शब्दों के पुंल्लिङ्ग में रूप बनाने की विधि पूर्ण हुई।

नपुंसकलिङ्ग

नपुंसकाच्च (७.१.१९) - नपुंसकलिङ्ग में औ प्रत्यय के स्थान पर 'शी' आदेश होता है।

जश्शसो: शि: (७.१.२०) / शि सर्वनामस्थानम् (१.१.४२) - नपुंसकलिङ्ग में जस्, शस् प्रत्ययों के स्थान पर शि आदेश होता है और उसकी सर्वनामस्थान संज्ञा होती है।

१. अभ्यस्तसंज्ञक शत्रन्त धातुओं के नपुंसकलिङ्ग के रूप -

वा नपुंसकस्य - अभ्यस्त अङ्ग से परे जो शतृ प्रत्यय, तदन्त जो नपुंसकलिङ्ग, उसे सर्वनामस्थान परे होने पर विकल्प से नुमागम होता है।

ददत्	ददती	ददति / ददन्ति
ददत्	ददती	ददति / ददन्ति

(नपुंसकलिङ्ग में प्रथमा, द्वितीया के अलावा सारे रूप पुंल्लिङ्ग के समान ही बनेंगे।)

२. भ्वादि, दिवादि, चुरादिगण के शत्रन्त धातुओं के नपुंसकलिङ्ग के रूप-

शप्श्यनोर्नित्यम् - शप् और श्यन् से परे जो शतृ, उसे नित्य नुम् का आगम होता है, शी और नदी परे होने पर।

हमने देखा कि भ्वादिगण तथा चुरादिगण के धातुओं से शप् विकरण लगा है और दिवादिगण के धातुओं से श्यन् विकरण लगा है। अतः इनके शत्रन्त रूप शप्श्यनोर्नित्यम् से नित्य नुम् करके इस प्रकार बनाइये -

भ्वादिगण -

गच्छत्   गच्छन्ती   गच्छन्ति
गच्छत्   गच्छन्ती   गच्छन्ति

दिवादिगण -

दीव्यत्   दीव्यन्ती   दीव्यन्ति
दीव्यत्   दीव्यन्ती   दीव्यन्ति

चुरादिगण -

चोरयत्   चोरयन्ती   चोरयन्ति
चोरयत्   चोरयन्ती   चोरयन्ति
कथयत्   कथयन्ती   कथयन्ति
कथयत्   कथयन्ती   कथयन्ति

(नपुंसकलिङ्ग में प्रथमा, द्वितीया के अलावा सारे रूप पुंल्लिङ्ग के समान ही बनेंगे।)

३. **भ्वादि, दिवादि, चुरादिगण से बचे हुए वे धातु, जो विकरण लगने पर अवर्णान्त हो जाते हैं,** उनसे परे आने वाले शतृ प्रत्यय को विकल्प से नुमागम होता है, शी, नदी परे होने पर। सूत्र है -

आच्छीनद्योर्नुम् (७.१.८०) - जिनमें शप् और श्यन् विकरण नहीं लगे हैं, उन धातुओं को देखिये। इनमें धातु + विकरण को लगाकर जो अङ्ग अवर्णान्त बने हैं, उनसे परे आने वाले शतृ प्रत्यय को विकल्प से नुम् का आगम होता है, शी, नदी परे होने पर।

भ्वादि, दिवादि, चुरादि गणों में तो 'शप्श्यनोर्नित्यम्' से नित्य नुम् का विधान हो चुका है। अत: इनको छोड़कर शेष गणों के जितने भी अवर्णान्त अङ्ग मिलें, उनसे परे आने वाले शतृ को विकल्प से नुम् का आगम कीजिये, शी और नदी परे होने पर।

अदादिगण के आकारान्त धातु विकरण लगने पर अवर्णान्त हैं -

यात्   याती / यान्ती   यान्ति
यात्   याती / यान्ती   यान्ति

तुदादिगण के सभी धातु विकरण लगने पर अवर्णान्त हैं -

तुदत्   तुदती / तुदन्ती   तुदन्ति
तदत   तुदती / तुदन्ती   तुदन्ति

४. शेष वे सारे धातु, जो विकरण लगने पर अवर्णान्त नहीं होते -

अदादिगण के आकारान्त धातुओं को छोड़कर सारे धातु, विकरण लगने पर अवर्णान्त नहीं होते अतः इनसे परे आने वाले शतृ को नुमागम नहीं होगा, शी, नदी परे होने पर -

घ्नत्	घ्नती	घ्नन्ति
घ्नत्	घ्नती	घ्नन्ति

स्वादि के सारे धातु, विकरण लगने पर अवर्णान्त नहीं होते, अतः इनसे परे आने वाले शतृ को नुमागम नहीं होगा, शी, नदी परे होने पर -

चिन्वत्	चिन्वती	चिन्वन्ति
चिन्वत्	चिन्वती	चिन्वन्ति

तनादिगण के सारे धातु, विकरण लगने पर अवर्णान्त नहीं होते, अतः इनसे परे आने वाले शतृ को नुमागम नहीं होगा, शी, नदी परे होने पर -

तन्वत्	तन्वती	तन्वन्ति
तन्वत्	तन्वती	तन्वन्ति

स्त्रीलिङ्ग

१. अभ्यस्तसंज्ञक शत्रन्त धातुओं के स्त्रीलिङ्ग के रूप -

उगितश्च (६.३.४५) - उगिदन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीप् प्रत्यय होता है। अतः सारे शत्रन्त शब्दों से ङीप् प्रत्यय लगाकर ही स्त्रीलिङ्ग बनेगा।

नाभ्यस्ताच्छतुः (७.१.७८) - अभ्यस्तसंज्ञक अङ्गों से परे जो शतृ उसे नुमागम नहीं होता।

ददत् + ङीप् = ददती / इसी प्रकार - बिभ्यत् - बिभ्यती / जुह्वत् - जुह्वती / दधत् - दधती / जिह्रियत् - जिह्रियती आदि बनाइये।

यह शब्द ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग है। अतः इसके रूप 'नदी' के समान चलेंगे।

२. भ्वादि, दिवादि, चुरादिगण के शत्रन्त धातुओं के स्त्रीलिङ्ग के रूप -

शप्श्यनोर्नित्यम् (७.१.८१) - शप् और श्यन् से परे जो शतृ, उसे नित्य नुम् का आगम होता है, शी और नदी परे होने पर।

नुम् मित् है, अतः यह 'मिदचोऽन्त्यात्परः' सूत्र से अन्तिम अच् के बाद ही बैठेगा। यथा - गच्छत् + ङीप् / गच्छत् + ई / नुम् का आगम करके - गच्छ नुम् त् + ई / गच्छ + न् + त् + ई = गच्छन्ती।

हमने देखा कि भ्वादिगण तथा चुरादिगण के धातुओं से शप् विकरण लगा है और दिवादिगण के धातुओं से श्यन् विकरण लगा है। अत: इनके शत्रन्त रूप नित्य नुम् करके इस प्रकार बनाइये -

भ्वादिगण - गच्छत् - गच्छन्ती / भवत् - भवन्ती / पठत् - पठन्ती, आदि।

दिवादिगण - दीव्यत् - दीव्यन्ती / क्रुध्यत् - क्रुध्यन्ती आदि।

चुरादिगण - चोरयत् - चोरयन्ती / कथयत् - कथयन्ती आदि।

३. भ्वादि, दिवादि, चुरादिगण से बचे हुए वे धातु, जो विकरण लगने पर अवर्णान्त हो जाते हैं -

आच्छीनद्योर्नुम् - जिनमें शप् और श्यन् विकरण नहीं लगे हैं, उन धातुओं को देखिये। इनमें धातु + विकरण को लगाकर जो अङ्ग अवर्णान्त बने हैं, उनसे परे आने वाले शतृ प्रत्यय को विकल्प से नुमागम होता है, शी, नदी परे होने पर।

भ्वादि, दिवादि, चुरादि गणों में तो शप्श्यनोर्नित्यम् से नित्य नुम् का विधान हो चुका है। अत: इनको छोड़कर शेष गणों के जितने भी अवर्णान्त अङ्ग मिलें, उनसे परे आने वाले शतृ को विकल्प से नुम् का आगम कीजिये, शी और नदी परे होने पर।

अदादिगण के आकारान्त धातु विकरण लगने पर अवर्णान्त हैं -

यात् - याती, यान्ती। भात् - भाती, भान्ती।

तुदादिगण के सभी धातु विकरण लगने पर अवर्णान्त हैं -

तुदत् - तुदती, तुदन्ती । दिशत् - दिशती, दिशन्ती।

क्र्यादिगण के सभी धातु विकरण लगने पर अवर्णान्त हैं -

क्रीणत् - क्रीणती, क्रीणन्ती। जानत् - जानती, जानन्ती।

४. शेष वे सारे धातु, जो विकरण लगने पर अवर्णान्त नहीं होते -

इनसे परे आने वाले शतृ को नुमागम नहीं होता है, शी, नदी परे होने पर।

अदादिगण के आकारान्त को छोड़कर सारे धातु, विकरण लगने पर अवर्णान्त नहीं होते - घ्नत् - घ्नती / सत् - सती / अदत् - अदती / स्वपत् - स्वपती आदि।

स्वादि के सारे धातु, विकरण लगने पर अवर्णान्त नहीं होते -

चिन्वत् - चिन्वती / शक्नुवत् - शक्नुवती आदि।

तनादिगण के सारे धातु, विकरण लगने पर अवर्णान्त नहीं होते -

तन्वत् - तन्वती / कुर्वत् - कुर्वती।

शानजन्त शब्दों के स्त्रीलिङ्ग बनाने की विधि -

अजाद्यतष्टाप् (४.१.४) - अजादि अदन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में टाप् प्रत्यय होता है। शानच् प्रत्यय अदन्त है, अतः सारे शानजन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में टाप् प्रत्यय ही लगेगा। वर्धमान + टाप् - वर्धमान + आ - वर्धमाना। चोरयमाण + टाप् - चोरयमाण + आ - चोरयमाणा। जायमान + टाप् - जायमान + आ - जायमाना। तुदमान + टाप् - तुदमान + आ - तुदमाना। क्रीणान + टाप् - क्रीणान + आ - क्रीणाना। चिन्वान + टाप् - चिन्वान + आ - चिन्वाना। शक्नुवान + टाप् - शक्नुवान + आ - शक्नुवाना। कुर्वाण + टाप् - कुर्वाण + आ - कुर्वाणा। तन्वान + टाप् - तन्वान + आ - तन्वाना।

सारे शानच्प्रत्ययान्तों की कारकरचना

शानच्प्रत्ययान्त 'वर्धमान' के रूप पुंल्लिङ्ग में 'राम' के समान चलेंगे ।

शानेच्प्रत्ययान्त 'वर्धमान' के रूप नपुंसकलिङ्ग में 'वन' के समान चलेंगे।

शानच्प्रत्ययान्त 'वर्धमान' में 'टाप् = आ' लगाकर स्त्रीलिङ्ग में 'वर्धमाना' बनेगा और इसके रूप आकारान्त स्त्रीलिङ्ग 'रमा' के समान चलेंगे।

सभी गणों के शानजन्त रूपों के स्त्रीलिङ्ग इसी प्रकार बनाइये।

लृट् लकार के स्थान पर होने वाले शतृ, शानच् प्रत्ययों को धातुओं में लगाने की विधि

लृटः सद्वा (३.३.१४) - भविष्यत् काल में विहित जो लृट् उसके स्थान में सत् संज्ञक शतृ, शानच् प्रत्यय विकल्प से होते हैं।

जब ये प्रत्यय लृट् लकार के स्थान पर धातुमात्र से होंगे, तब धातुओं के रूप ठीक उसी प्रकार बनेंगे, जैसे लृट् लकार के बनते हैं। धातुओं के लृट् लकार के रूप बनाने की विधि **'अष्टाध्यायी सहज बोध - द्वितीय खण्ड'** में विस्तार से दी हुई है। उसे देखें।

उसमें से किसी भी धातु के प्रथम पुरुष एकवचन का रूप ले लें। उसमें से ति को हटा दें, तो धातु + स्य से बना हुआ रूप हाथ में आ जायेगा। यथा -

कृ धातु का प्रथम पुरुष एकवचन का रूप है - करिष्यति। इसमें से ति को हटाकर बचा - करिष्य। यह अदन्त ही होगा।

इसमें ही लृट् के स्थान पर होने वाला शतृ प्रत्यय लगाइये - करिष्य + शतृ / करिष्य + अत् / अतो गुणे से दोनों 'अ' के स्थान पर पररूप आदेश करके - करिष्य्

+ अत् = करिष्यत्। द्वितीया एकवचन में - करिष्यन्तं देवदत्तं पश्य।

करिष्य + शानच् / करिष्य + मुक् + शानच् / करिष्य + म् + आन = करिष्यमाण / द्वितीया एकवचन में - करिष्यमाणं देवदत्तं पश्य।

शानन् प्रत्यय

पूङ्यजोः शानन् - (३.२.१२८) - पूङ् तथा यज् धातुओं से वर्तमान काल में शानन् प्रत्यय होता है।

शानन् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से ल् की और 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की इत् संज्ञा होकर 'आन' शेष बचता है।

श् की इत्संज्ञा होने से यह प्रत्यय 'शित्' है। शित् होने से सार्वधातुक है।

यहाँ दो बातें ध्यातव्य हैं।

पहिली यह कि शित् होने के कारण शानच् और शानन् की प्रक्रिया में कोई अन्तर नहीं है। अतः प्रक्रिया शानच् में ही देखें।

पू + शानन् = पवमानः। यज् + शानन् = यजमानः।

अलग प्रत्यय इसलिये बनाया कि शानन् प्रत्यय लट् लकार के स्थान पर होने वाला आदेश नहीं है। यह ण्वुल्, तृच् आदि के समान स्वतन्त्र प्रत्यय है। अतः इसका धातु के पद से कोई प्रयोजन नहीं है। यह परस्मैपदी धातुओं से भी हो सकता है और आत्मनेपदी धातुओं से भी हो सकता है।

दूसरी बात यह कि शानच् प्रत्यय चित् है। शानन् प्रत्यय नित् है।

चितः (६.१.१६३) - चित् प्रत्यय से बने हुए शब्द अन्तोदात्त होते हैं। अतः शानजन्त शब्द अन्तोदात्त होंगे।

ञ्नित्यादिर्नित्यम् (६.१.१९७) - ञित् और नित् प्रत्यय परे रहते आदि को उदात्त होता है। अतः शानन् प्रत्यय से बने हुए शब्द आद्युदात्त होंगे।

चानश् प्रत्यय

ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश् - (३.२.१२९) - ताच्छील्य, वयोवचन, शक्ति इन अर्थों में द्योतित होने पर धातु से वर्तमान काल में चानश् प्रत्यय होता है।

चानश् प्रत्यय में 'चुटू' सूत्र से च् की और 'हलन्त्यम्' सूत्र से श् की इत् संज्ञा होकर 'आन' शेष बचता है।

श् की इत्संज्ञा होने से यह प्रत्यय 'शित्' है। शित् होने से सार्वधातुक है।

यहाँ तीन बातें ध्यातव्य हैं।

१. यह कि शित् होने के कारण शानच् और चानश् की प्रक्रिया में कोई अन्तर नहीं है। अतः प्रक्रिया शानच् में ही देखें।

२. दोनों के अर्थ अलग अलग हैं।

३. चानश् प्रत्यय लट् लकार के स्थान पर होने वाला आदेश नहीं है। यह ण्वुल्, तृच् आदि के समान स्वतन्त्र प्रत्यय है।

ध्यान देना चाहिये कि तङ् और आन की आत्मनेपद संज्ञा करने वाले सूत्र 'तङानावात्मनेपदम् १.४.१००' में 'लः परस्मैपदम् १.४.९९' सूत्र से 'लः' की अनुवृत्ति आती है। अतः लादेश जो 'आन' हैं, उनकी ही आत्मनेपद संज्ञा होती है।

शानच् प्रत्यय लट् के स्थान पर होने वाला लादेश है और कानच् प्रत्यय लिट् के स्थान पर होने वाला लादेश है। अतः इनकी आत्मनेपद संज्ञा होती है।

किन्तु चानश् प्रत्यय किसी लकार के स्थान पर होने वाला आदेश नहीं है, अतः इसकी आत्मनेपद संज्ञा नहीं होती है। यह ण्वुल्, तृच् आदि के समान स्वतन्त्र प्रत्यय है। इसका धातु के पद से कोई प्रयोजन नहीं है। यह परस्मैपदी धातुओं से भी हो सकता है और आत्मनेपदी धातुओं से भी हो सकता है।

(दोनों के चित् होने के कारण स्वर में कोई भेद नहीं होगा।)

ताच्छील्य अर्थ में – भोगं भुञ्जानः (भोग भोगना जिसका स्वभाव है।) कतीह मुण्डयमानाः (कितने यहाँ मुण्डन किये हुए हैं)। कतीह भूषयमाणाः (कितने यहाँ सजे हुए हैं)। शिवाग्नौ जुह्वानाः (सौन्दर्यलहरी।)

वयोवचन अर्थ में – कवचं बिभ्राणः (कवच धारण करने योग्य जिसकी वय हो गई है।) कवच धारण करने से शरीर की अवस्था यौवन का पता चलता है, क्योंकि बच्चे तथा बूढ़े कवच धारण नहीं कर सकते हैं)। कतीह कवचं पर्यस्यमानाः (कितने यहाँ कवच धारण कर सकते हैं ?)। कतीह शिखण्डं वहमानाः (कितने ही यहाँ शिखा धारण करने वाले हैं)।

शक्ति अर्थ में – शत्रून् निघ्नानः (शत्रु को मारने की शक्ति वाला)। कतीह निघ्नानाः (कितने ही यहाँ मार सकने वाले हैं)। कतीह पचमानाः (कितने ही यहाँ पका सकने वाले हैं)। **यदि अनादेश होने के बाद भी चानश् प्रत्यय की आत्मनेपद संज्ञा होती, तो वह हु, हन् आदि परस्मैपदी धातुओं से न होता।**

खश् प्रत्यय

खश् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से श् की तथा लशक्वतद्धिते सूत्र से ख् की इत्

संज्ञा होकर तस्य लोपः सूत्र से दोनों का लोप होकर 'अ' शेष बचता है।

शित् होने के कारण 'तिङ् शित् सार्वधातुकम्' सूत्र से इसकी सार्वधातुक संज्ञा है। ख् की इत् संज्ञा होने से यह खित् है।

खश् प्रत्यय परे होने पर पाँच कार्य होते ही हैं -

१. सार्वधातुक होने के कारण पहिले धातु में विकरण को जोड़ा जाता है।

२. उसके बाद धातु + विकरण को जोड़ने से जो भी बनता है, उसी में खश् प्रत्यय को लगाया जाता है।

३. सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर होने वाले जिन धातुओं को जो धात्वादेश प्राप्त हैं, वे कर लिये जाते हैं।

४. खित् होने के कारण पूर्वपद को 'अरुर्दिषदजन्तस्य मुम्' सूत्र से मुम् का आगम होता है।

५. यदि पूर्वपद का अन्तिम अच् दीर्घ है, तो 'खित्ययनव्ययस्य' सूत्र से उसे ह्रस्व हो जाता है।

अब हम धातुओं से खश् प्रत्यय लगायें। पर ध्यान रहे कि खश् प्रत्यय केवल उन्हीं धातुओं से लगता है, जिन धातुओं से इसका विधान है।

अङ्गमेजयः - अङ्ग + ङस् + एजि + खश् / हलन्त्यम् सूत्र से श् की तथा लशक्वतद्धिते सूत्र से ख् की इत् संज्ञा होकर तस्य लोपः सूत्र से दोनों का लोप होकर - अङ्ग + ङस् + एजि + अ / कर्तरि शप् से शप् विकरण लगाकर -

अङ्ग + ङस् + एजि + शप् + अ / श्, प् की इत् संज्ञा करके - अङ्ग + ङस् + एजि + अ + अ / 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिकसंज्ञा होने के कारण 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से ङस् का लोप करके - अङ्ग + एजि + अ + अ /

ख् की इत् संज्ञा होने के कारण अरुर्दिषदजन्तस्य मुम् सूत्र से मुम् का आगम करके - अङ्ग + मुम् + एजि + अ + अ / मुम् में उ और म् की इत् संज्ञा करके - अङ्ग + म् + एजि + अ + अ / सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इ को गुण करके - अङ्ग + म् + एजे + अ + अ / एचोऽयवायावः सूत्र से ए को अय् आदेश होकर - अङ्ग + म् + एजय् + अ + अ / अतो गुणे सूत्र से दोनों 'अ' के स्थान पर एक पररूप आदेश करके - अङ्ग + म् + एजय् + अ - अङ्गमेजय /

प्रथमा एकवचन में 'सु' विभक्ति करके - अङ्गमेजय + सु = अङ्गमेजयः।

इसी प्रकार यथाप्राप्त कार्य करके -

जन + ङस् + मुम् + एजि + शप् + खश् = जनमेजयः
वृक्ष + ङस् + मुम् + एजि + शप् + खश् = वृक्षमेजयः
कूल + ङस् + मुम् + उद्+रुज् + श + खश् = कूलमुद्रुजः
कूल + ङस् + मुम् + उद्+वह् + शप् + खश् = कूलमुद्वहः आदि।

नासिकन्धयः

नासिका + ङस् + धे + शप् + खश् / पूर्ववत् इत्संज्ञादि कार्य करके तथा मुम् का आगम करके - नासिका + म् + धे + अ + अ / एचोऽयवायावः सूत्र से ए को अय् आदेश होकर - नासिका + म् + धय् + अ + अ /

खित्यनव्ययस्य - खिदन्त उत्तरपद परे होने पर अनव्यय को ह्रस्व होता है,

इस सूत्र से अनव्यय पूर्वपद नासिका को ह्रस्व करके - नासिक + म् + धय् + अ + अ / अतो गुणे सूत्र से दोनों 'अ' के स्थान पर एक पररूप आदेश करके - नासिक + म् + धय् + अ / मोऽनुस्वारः' सूत्र से म् को अनुस्वार करके - नासिकं + धय / 'अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः' सूत्र से अनुस्वार को परसवर्ण करके - नासिकन्धय / प्रथमा एकवचन में 'सु' विभक्ति करके - नासिकन्धय + सु = नासिकन्धयः।

स्तनन्धयः -

स्तन + धे + शप् + खश् / पूर्ववत् इत्संज्ञादि कार्य करके तथा मुम् का आगम करे - स्तन + म् + धे + अ + अ / एचोऽयवायावः सूत्र से ए को अय् आदेश होकर तथा अन्य कार्य पूर्ववत् करके = स्तनन्धयः।

नासिकन्धमः -

नासिका + ध्मा + शप् + खश् / शित् प्रत्यय होने के कारण **'पा घ्रा ध्मा स्था म्ना दाण् दृशि अर्ति सर्ति शद सदां, पिब जिघ्र धम तिष्ठ मन यच्छ पश्य ऋच्छ धौ शीय सीदाः'** सूत्र से ध्मा के स्थान पर धम् आदेश करके - नासिका + धम् + धय् + खश् / खित्यनव्ययस्य सूत्र से नासिका को ह्रस्व करके शेष कार्य यथायोग्य पूर्ववत् करके - नासिकन्धमः।

उग्रम्पश्यः -

उग्र + ङस् + दृश् + शप् + खश् / शित् प्रत्यय होने के कारण 'पा घ्रा ध्मा स्था म्ना दाण् दृशि अर्ति सर्ति शद सदां, पिब जिघ्र धम तिष्ठ मन यच्छ पश्य ऋच्छ धौ शीय सीदाः' सूत्र से दृश् के स्थान पर पश्य आदेश करके तथा शेष कार्य पूर्ववत् करके - उग्र + म् + पश्य् + अ + अ = उग्रम्पश्यः।

इनके स्त्रीलिङ्ग कैसे बनायें -

धेट् धातु के टित् होने के कारण स्त्रीत्व की विवक्षा में 'टिड्ढाणञ्. सूत्र से ङीप् होकर - स्तनन्धयी।

धेट् के अलावा अन्य धातु होने पर 'अजाद्यतष्टाप्' सूत्र से टाप् होकर -स्तनन्धमा, खारिम्पचा आदि बनाइये।

असूर्यम्पश्या -

असूर्य + ङस् + दृश् + शप् + खश् / शित् प्रत्यय होने के कारण 'पा घ्रा ध्मा स्था म्ना दाण् दृशि अर्ति सर्ति शद सदां, पिब जिघ्र धम तिष्ठ मन यच्छ पश्य ऋच्छ धौ शीय सीदाः' सूत्र से दृश् के स्थान पर पश्य आदेश करके तथा शेष कार्य पूर्ववत् करके - असूर्य + म् + पश्य् + अ + अ = असूर्यम्पश्य / स्त्रीत्व विवक्षा में टाप् करके - असूर्यम्पश्य + टाप् = असूर्यम्पश्या।

प्रस्थम्पचा -

प्रस्थ + ङस् + पच् + शप् + खश् / शेष मुमागम आदि कार्य पूर्ववत् करके - प्रस्थ + म् + पच् + अ + अ = प्रस्थम्पच / स्त्रीत्व विवक्षा में टाप् करके - प्रस्थम्पच + टाप् = प्रस्थम्पचा।

इसी प्रकार यथायोग्य कार्य करके -

स्तन	+	ङस्	+	मुम्	+	ध्मा	+	शप्	+	खश्	=	स्तनन्धमः
नाडी	+	ङस्	+	मुम्	+	ध्मा	+	शप्	+	खश्	=	नाडिन्धमः
नाडी	+	ङस्	+	मुम्	+	धे	+	शप्	+	खश्	=	नाडिन्धयः
मुष्टि	+	ङस्	+	मुम्	+	ध्मा	+	शप्	+	खश्	=	मुष्टिन्धमः
मुष्टि	+	ङस्	+	मुम्	+	धे	+	शप्	+	खश्	=	मुष्टिन्धयः
वह	+	ङस्	+	मुम्	+	लिह्	+	शप्	+	खश्	=	वहंलिहः।
अभ्र	+	ङस्	+	मुम्	+	लिह्	+	शप्	+	खश्	=	अभ्रंलिहः।
द्रोण	+	ङस्	+	मुम्	+	पच्	+	शप्	+	खश्	=	द्रोणम्पचः।
खारी	+	ङस्	+	मुम्	+	पच्	+	शप्	+	खश्	=	खारिम्पचः।

इत्यादि प्रयोग बनाइये।

श प्रत्यय

श प्रत्यय शित् होने के कारण सार्वधातुक है। इसीलिये इसके परे होने पर सब धातुओं से तत्-तत् गणों के विकरण लगेंगे ही।

उत्पिबः - उत् + पा + श / 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से श् की इत् संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप होकर - उत् + पा + अ / 'कर्तरि शप्' से शप् विकरण लगाकर - उत् + पा + शप् + अ / श्, प् की इत् संज्ञा करके - उत् + पा + अ + अ / शित् प्रत्यय होने के कारण **'पा घ्रा ध्मा स्था म्ना दाण् दृशि अर्ति सर्ति शद सदां, पिब जिघ्र धम तिष्ठ मन यच्छ पश्य ऋच्छ धौ शीय सीदाः'** सूत्र से पा के स्थान पर पिब् आदेश करके - उत् + पिब् + अ + अ / 'अतो गुणे से अ को पररूप करके - उत् + पिब् + अ - उत्पिब / प्रथमा एकवचन में 'सु' विभक्ति करके - उत्पिबः। इसी प्रकार -

वि	+	घ्रा	+	शप्	+	श	=	विजिघ्रः।
उद्	+	ध्मा	+	शप्	+	श	=	उद्धमः।
वि	+	ध्मा	+	शप्	+	श	=	विधमः।
उद्	+	धे	+	शप्	+	श	=	उद्धयः।
वि	+	धे	+	शप्	+	श	=	विधयः।
उद्	+	दृश्	+	शप्	+	श	=	उत्पश्यः।
वि	+	दृश्	+	शप्	+	श	=	विपश्यः।

उपसर्ग न होने पर भी इन धातुओं से श प्रत्यय होकर ठीक इसी प्रकार - घ्रा + श = जिघ्रः, ध्मा + श = धमः। धे + श = धयः, आदि बनेंगे।

लिम्पः - लिप् + श / यह धातु तुदादिगण का है, अतः 'तुदादिभ्यः शः' से श विकरण करके - लिप् + श + श / 'शे मुचादीनां' सूत्र से नुम् का आगम करके - लिम्प् + अ + अ - लिम्पः। ठीक इसी प्रकार -

विन्दः - विद् + श + श - विन्दः।

धृ धातु चुरादिगण का है। अतः इसमें 'सत्यापपाश'. सूत्र से स्वार्थिक णिच् प्रत्यय लगाकर ही अन्य कोई प्रत्यय लगेगा।

धारयति इति धारयः - धृ + णिच् - धारि / धारि + श / धारि + शप् + श / धारि + अ + अ / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से इ को गुण करके - धारे + अ + अ / 'एचोऽयवायावः' सूत्र से ए को अय् आदेश होकर - धारय् + अ + अ = धारयः। इसी प्रकार -

पारयति इति पारयः - पृ + णिच् - पारि / पारि + शप् + श = पारयः।

वेदयति इति वेदयः - विद् + णिच् - वेदि / वेदि + शप् + श = वेदयः।

उदेजयति इति उदेजयः - उद् + एज् + णिच् - उदेजि / उदेजि + शप् + श = उदेजयः।

चेतयति इति चेतयः - चित् + णिच् - चेति / चेति + शप् + श = चेतयः। सातयतीति सातयः। साहयतीति साहयः। आदि भी इसी प्रकार बनाइये।

ध्यातव्य - उपसर्ग होने पर अच् प्रत्यय ही होगा, श नहीं।

किन्तु देव अर्थ में नि उपसर्ग पूर्वक लिप् धातु से श होगा -

निलिम्पः - नि + लिप् + श + श / शे मुचादीनां' सूत्र से नुम् का आगम करके - नि + लिम्प् + अ + अ / 'अतो गुणे' सूत्र से पूर्व 'अ' को पररूप करके = निलिम्पः।

गोविन्दः - गो + आम् + विद् + श + श / 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिकसंज्ञा होने के कारण 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से आम् का लोप करके - गो + विद् + अ + अ / 'शे मुचादीनां' सूत्र से नुम् का आगम करके - गो + विन्द् + अ + अ / 'अतो गुणे' सूत्र से पूर्व 'अ' को पररूप करके - गोविन्दः।

अरविन्दः - अर + विद् + श + श से अरविन्दः बनाइये।

ददः - दा + श / कर्तरि शप् से शप् करके - दा + शप् + श / यह धातु जुहोत्यादिगण का है, अतः 'जुहोत्यादिभ्यः श्लुः' सूत्र से शप् को श्लु (लोप) करके और श्लौ सूत्र से दा को द्वित्व करके - दा दा + श / ह्रस्वः सूत्र से अभ्यास को ह्रस्व करके - ददा + श / ददा + अ / 'आतो लोप इटि च' सूत्र से आ का लोप करके - दद् + अ - दद = ददः।

दधः - धा + श / कर्तरि शप् से शप् करके - धा + शप् + श / यह धातु जुहोत्यादिगण का है, अतः 'जुहोत्यादिभ्यः श्लुः' सूत्र से शप् को श्लु (लोप) करके और श्लौ सूत्र से धा को द्वित्व करके - धा धा + श / ह्रस्वः सूत्र से अभ्यास को ह्रस्व करके - धधा + श / 'अभ्यासे चर्च' सूत्र से अभ्यास के ध को द बनाकर - दधा + अ / आतो लोप इटि च से आ का लोप करके - दध् + अ - दध = दधः।

'स्त्रियां क्तिन्' के अधिकार से स्त्रीलिङ्ग में होने वाला श प्रत्यय -

भाव अर्थ में श प्रत्यय होने पर - कृ + श + टाप् / श प्रत्यय सार्वधातुक है, अतः 'सार्वधातुके यक्' सूत्र से यक् करके - कृ + यक् + श + टाप् / 'रिङ्शयग्लिङ्क्षु' सूत्र से ऋ को रिङ् आदेश करके - क्रि + य + अ + आ = क्रिया।

श प्रत्यय भाव अर्थ में न होने पर - 'अचि श्नु धातु.' सूत्र से इयङ् आदेश

करके - क्रिय् + अ + आ = क्रिया।

इच्छा (३-३-१०१) - भाव स्त्रीलिङ्ग में तुदादिगण के 'इष इच्छायाम्' धातु से श प्रत्ययान्त इच्छा शब्द निपातन किया जाता है। भावार्थक प्रत्यय होने के कारण श परे होने पर 'सार्वधातुके यक्' सूत्र से यक् भी प्राप्त था। उसका अभाव भी निपातन से होता है। इष् + श = इच्छा।

परिचर्यापरिसर्यामृगयाऽटाट्यानामुपसंख्यानम् (वार्तिक) - श प्रत्ययान्त परिचर्या, परिसर्या, मृगया, अटाट्या शब्दों को भी निपातन किया जाता है।

श प्रत्यय लगाकर निपातन से बनने वाले शब्द

परि + सृ + श = परिसर्या मृग् + श = मृगया
परि + चर् + श = परिचर्या अट् + श = अटाट्या।

(अट् धातु से श, यक् परे होने पर, टकार को द्वित्व, पूर्वभाग में यकार की निवृत्ति, और दीर्घ, ये सारे कार्य निपातन से होते हैं।)

जागर्तेरकारो वा (वार्तिक)- जागृ धातु से विकल्प से अ प्रत्यय तथा श प्रत्यय होते हैं। जागृ + श + टाप् / श प्रत्यय सार्वधातुक है, अतः 'सार्वधातुके यक्' सूत्र से यक् करके - जागृ + यक् + श + टाप् / रिङ् आदेश को बाधकर - 'जाग्रोऽविचिण्णल्ङित्सु' सूत्र से गुण करके - जागर् + य + अ + आ = जागर्या।

एश् प्रत्यय

अवचक्षे च (३.४.१५) - कृत्यार्थ अभिधेय हो तो अवपूर्वक चक्षिङ् धातु से शेन् प्रत्ययान्त अवचक्षे शब्द भी निपातन किया जाता है। अवचक्षे इति अवख्यातव्यमित्यर्थः।

श् की इत् संज्ञा होने से यह प्रत्यय सार्वधातुक है।

अव + चक्ष् + एश् / अव + चक्ष् + ए / यह धातु अदादिगण का धातु है, अतः 'अदिप्रभृतिभ्यः' शपः सूत्र से शप् का लुक् करके - अव + चक्ष् + ए = अवचक्षे।

शध्यै, शध्यैन् प्रत्यय

तुमर्थे सेसेनसेऽसेन्क्सेकसेनध्यैअध्यैनन्कध्यैकध्यैन्शध्यैशध्यैन्तवैतवेङ्तवेनः (३.४.९) - वेद विषय में धातुमात्र से तुमर्थ में से, सेन् आदि १५ प्रत्यय होते हैं। ये सारे प्रत्यय वैदिक हैं। लोक में इनका प्रयोग नहीं होता।

शध्यै प्रत्यय में लशक्वतद्धिते सूत्र से श् की इत् संज्ञा होकर तस्य लोपः सूत्र से लोप होकर 'अध्यै' शेष बचता है। शित् होने के कारण 'तिङ् शित् सार्वधातुकम्' सूत्र से इसकी सार्वधातुक संज्ञा है।

शध्यैन् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की तथा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से श् की इत् संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' सूत्र से दोनों का लोप होकर 'अध्यै' ही शेष बचता है। शित् होने के कारण 'तिङ् शित् सार्वधातुकम्' सूत्र से इसकी भी सार्वधातुक संज्ञा' है।

सार्वधातुक होने के कारण इन्हें भी पूर्ववत् लगाइये -

पा + शध्यै / पा + अध्यै / 'पाघ्राध्मा'. सूत्र से पा को पिब आदेश करके तथा 'कर्तरि शप्' से शप् करके - पिब् + शप् + अध्यै / पिब + अ + अध्यै / 'अतो गुणे' से अ को पररूप करके - पिबध्यै।

पा + शध्यैन् सें भी इसी प्रकार पिबध्यै बनाइये।

प्रयै रोहिष्यै अव्यथिष्यै - (३.४.१०) - प्रयै, रोहिष्यै, अव्यथिष्यै ये शब्द तुमर्थ में निपातन किये जाते हैं। प्रयातुम् = प्रयै / रोढुं = रोहिष्यै / अव्यथितुम् = अव्यथिष्यै।

दृशे विख्ये च - (३.४.११) - दृशे और विख्ये ये शब्द भी तुमर्थ में निपातन किये जाते हैं। दृशे विश्वाय सूर्यम्। विख्ये त्वा हरामि।

ये सारे प्रयोग वेद में निपातन से बनते हैं।

आर्धधातुक कृत् प्रत्यय लगाने की सामान्य विधि

हमने धातुओं से सारे सार्वधातुक प्रत्यय लगा लिये हैं। अब हम धातुओं से आर्धधातुक प्रत्यय लगायें। विषयप्रवेश को बुद्धिस्थ रखें, अथवा उसकी आवृत्ति कर लें।

जब भी किसी धातु से कोई प्रत्यय लगे, तब आप
इस क्रम से कार्य कीजिये -

१. धातु के अनुबन्धों की इत् संज्ञा करके उनका लोप कीजिये।

२. उसके बाद यदि धातु में नत्व, सत्व, उपधादीर्घ या नुमागम में से कोई भी कार्य प्राप्त हो, तो उसे कर लीजिये।

३. प्रत्यय के अनुबन्धों की इत् संज्ञा करके उनका लोप कीजिये। उसके बाद यदि प्रत्यय को कोई अन, अक, आदि आदेश प्राप्त हो, तो उस प्रत्ययादेश को कर लीजिये।

४. यदि किसी उपपद के रहने पर किसी धातु से किसी प्रत्यय का विधान किया गया है, तब 'उपपदमतिङ्' सूत्र से उपपद के साथ उस कृत्प्रत्ययान्त का समास करके कृत्तद्धितसमासाश्च सूत्र से उसकी प्रातिपदिक संज्ञा कीजिये और प्रातिपदिक संज्ञा होने के बाद 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप कर दीजिये।

५. अब प्रत्यय को पहिचानिये कि वह सार्वधातुक है या आर्धधातुक है ?

६. यदि प्रत्यय आर्धधातुक है, और सेट् है, तब धातु और प्रत्यय के बीच में इट् के आगम का विचार कीजिये।

७. अब विचार कीजिये कि कहीं प्रत्यय को देखकर धातुओं के स्थान पर सम्पूर्ण आदेश करके उनकी आकृति बदल देने के लिये कोई सूत्र तो प्राप्त नहीं हैं ? यदि प्रत्यय को देखकर किसी धातु के स्थान पर कोई धात्वादेश प्राप्त हो रहा हो, तो उसे कर लीजिये।

अष्टाध्यायी में २.४.३५ से लेकर २.४.५७ तक 'आर्धधातुके' का प्रथम अधिकार है। इन सूत्रों में 'आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर होने वाले धात्वादेश कहे गये हैं। धात्वादेश करने वाले सूत्र आगे पृष्ठ ७९ पर कहे जा रहे हैं।

८. कभी कभी ऐसा होता है कि कोई सूत्र, कित् प्रत्यय को अकित्वत् बना देता है और कभी कभी ऐसा भी होता है कि कोई सूत्र अकित् प्रत्यय को कितवत् या ङिद्वत् बना देता है। एक के धर्म को दूसरे में बतलाने का नाम ही अतिदेश होता है और एक

के धर्म को दूसरे में बतलाने वाले सूत्र का नाम अतिदेश सूत्र होता है।

अत: किसी भी प्रत्यय के लगने पर यह विचार अवश्य कीजिये कि प्रत्यय में, किसी अतिदेश सूत्र के बल से किसी नये धर्म का अतिदेश तो नहीं किया जा रहा है ?

यह जानना अत्यावश्यक है, क्योंकि प्रत्यय में जैसा धर्म होगा, ठीक वैसे ही अङ्गकार्य होंगे। **अष्टाध्यायी में १.२.१ से लेकर १.२.२६ तक 'अतिदेश सूत्र' कहे गये हैं। ये अतिदेश सूत्र आगे तत् तत् प्रत्ययों के साथ आगे बतलाये जायेंगे।**

९. अतिदेश का विचार करने के बाद ही अङ्गकार्य कीजिये।

अष्टाध्यायी में ६.४.४६ से लेकर ६.४.६८ तक 'आर्धधातुके' का दूसरा अधिकार है। इसमें केवल आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर होने वाले अङ्गकार्य कहे गये हैं। इन्हें ध्यान में रखें। प्रत्येक प्रत्यय सम्बन्धी अङ्गकार्य प्रत्यय लगने पर बतलाये जायेंगे। अङ्गकार्य के लिये पहिचानिये कि जिस धातु में आप प्रत्यय लगा रहे हैं, वह धातु, ऊपर कहे हुए वर्गों में से, किस वर्ग में आता है।

साथ ही आप, धातु तथा प्रत्यय के अनुबन्धों को भी पहिचानिये। यथा -

पा + ण्वुल् / यहाँ हमें जानना चाहिये कि धातु आकारान्त है, और उससे लगा हुआ प्रत्यय णित् है।

बन्ध् + क्त / यहाँ हमें जानना चाहिये कि धातु अनिदित् है, और उससे लगा हुआ प्रत्यय कित् है।

वच् + क्त्वा / यहाँ हमें जानना चाहिये कि धातु सम्प्रसारणी धातु है और उससे लगा हुआ प्रत्यय कित् है।

नी + तृच् / यहाँ हमें जानना चाहिये कि धातु ईकारान्त है, और उससे लगा हुआ प्रत्यय ञित्, णित्, कित्, ङित् से भिन्न है।

कुट् + तृच् / यहाँ हमें जानना चाहिये कि धातु कुटादि है, और उससे लगा हुआ प्रत्यय ञित्, णित्, कित्, ङित् से भिन्न है।

प्रत्ययों से सम्बन्धित विशेष अङ्गकार्य तत् तत् प्रत्ययों के साथ बतलाते चलेंगे।

१०. अङ्गकार्य करने के बाद सन्धि कीजिये।

११. अब यदि णत्व, षत्व आदि प्राप्त हैं, तो उन्हें कीजिये।

१२. कृत् प्रत्यय लगाकर जो भी शब्द बने, उसमें प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति लगाकर, उसका प्रथमा एकवचन का रूप लिख दीजिये।

आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर, होने वाले धात्वादेश

अष्टाध्यायी में २.४.३५ से लेकर २.४.५७ तक 'आर्धधातुके' का प्रथम अधिकार है। इस अधिकार में वे धातु हैं, जिनकी आकृति आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर बदल जाती है। इन सूत्रों को अष्टाध्यायी में एक साथ देखा जा सकता है। उनमें से यहाँ केवल उन्हीं सूत्रों को दे रहे हैं, जो कि कृत् प्रत्ययों के परे होने पर धात्वादेश करते हैं।

अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति (२.४.३६) - अद् धातु को जग्ध् आदेश होता है ल्यप् तथा तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। प्र + अद् + ल्यप् = प्रजग्ध्य / अद् + क्त = जग्धः / अद् + क्तवतु = जग्धवान्।

घञपोश्च (२.४.३८) - घञ् तथा अप् प्रत्यय परे होने पर अद् धातु को घस्लृ - घस् आदेश होता है। अद् + घञ् = घासः / प्र + अद् + अप् = प्रघसः।

बहुलं छन्दसि (२.४.३९) - घञ् तथा अप् प्रत्यय परे होने पर अद् धातु को घस्लृ - घस् आदेश बहुल करके होता है। घस् आदेश होने पर - घस्तान्नूनम् / सग्धिश्च मे / घस् आदेश न होने पर - आत्तामद्य मध्यतो मेद उद्धृतम्।

अस्तेर्भूः (२.४.५२) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अस् धातु को भू आदेश होता है। अस् + तुम् = भवितुम्।

ब्रुवो वचिः (२.४.५३) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ब्रू धातु को वच् आदेश होता है। ब्रू + तुम् = वक्तुम्।

चक्षिङः ख्याञ् (२.४.५४) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर चक्ष् धातु को ख्या आदेश होता है। चक्ष् + तुम् = ख्यातुम्।

अजेर्व्यघञपोः (२.४.५६) - घञ्, अप् को छोड़कर शेष सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अज् धातु को वी आदेश होता है। अज् + तुम् = वेतुम्।

वा यौ (२.४.५७) - ल्युट् प्रत्यय परे होने पर अज् धातु के स्थान विकल्प से वी आदेश होता है। प्रवयणो दण्डः, प्राजनो दण्डः।

आदेच उपदेशेऽशिति (६.१.४५) - अशित् प्रत्यय परे होने पर सारे एजन्त धातुओं को 'आ' अन्तादेश होता है। यक् प्रत्यय अशित् प्रत्यय है अतः इसके परे होने पर सारे एजन्त धातुओं को 'आ' अन्तादेश होगा। जैसे - ग्लै - ग्ला, म्लै - म्ला, ध्यै - ध्या, शो - शा, सो - सा, वे - वा छो - छा आदि।

ध्यान रहे कि इन धातुओं से ऊपर कहे हुए आर्धधातुक कृत् प्रत्यय लगाते समय आप इन इन धातुओं की आकृति इन सूत्रों के अनुसार अवश्य बदल दें।

ये सारी बातें जानकर ही अब हम धातुओं में प्रत्यय लगायें।

प्रत्यय लगाने के लिये धातुओं का वर्गीकरण

ध्यान दें कि यदि हम एक एक प्रत्यय को लेकर एक एक धातु से लगायेंगे, तो वर्षों तक लगाते ही रह जायेंगे, अतः सरलता के लिये हम, प्रक्रिया के अनुसार धातुओं के वर्ग बना लेंगे, और एक एक वर्ग के एक एक धातु में प्रत्यय लगायेंगे, तो उस वर्ग के शेष धातुओं के रूप ठीक उसी प्रकार स्वयं बन जायेंगे।

धातुओं का वर्गीकरण इस प्रकार कीजिये -

अप्रत्ययान्त धातुओं का वर्गीकरण

१. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के आकारान्त तथा एजन्त धातु
२. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के इकारान्त धातु
३. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के ईकारान्त धातु
४. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के उकारान्त धातु
५. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के ऊकारान्त धातु
६. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के ऋकारान्त धातु
७. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के ॠकारान्त धातु
८. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के अदुपध धातु
९. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के इदुपध धातु
१०. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के उदुपध धातु
११. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के ऋदुपध धातु
१२. भ्वादि से क्र्यादिगण तक के शेष धातु

प्रत्ययान्त धातुओं का वर्गीकरण

१. चुरादिगण के णिजन्त धातु तथा अन्य णिजन्त धातु।
२. सन्नन्त धातु।
३. यङन्त धातु।
४. यङ्लुगन्त धातु।
५. क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्ययान्त धातु।

धातुओं का यह स्थूल वर्गीकरण है। विशेष धातुओं को तत् तत् स्थलों पर बतलाते चलेंगे।

प्रत्ययों का वर्गीकरण

प्रत्ययों के भी मुख्य रूप से तीन वर्ग बनाकर अङ्गकार्यों का विचार करना चाहिये - १. ञित् णित् आर्धधातुक प्रत्यय

२. ञित् णित्, कित्, ङित् से भिन्न आर्धधातुक प्रत्यय

३. कित् ङित् आर्धधातुक प्रत्यय

अब हम धातुओं में एक एक वर्ग के प्रत्यय लगायें -

१. ञित् णित् आर्धधातुक प्रत्यय

जब प्रत्यय ञित् णित् हो तब इस प्रकार अङ्गकार्य कीजिये -

१. अचो ञ्णिति (७.२.११५) - अजन्त अङ्ग को वृद्धि होती है, ञित् णित् प्रत्यय परे होने पर। यथा - नी + ण्वुल् - नै + अक। भू + ण्वुल् - भौ + अक। कृ + ण्वुल् - कार् + अक = कारकः।

एचोऽयवायावः (६.१.७८) - एच् अर्थात् ए, ओ, ऐ, औ के स्थान पर क्रमशः अय् अव् आय् आव् आदेश होते हैं, अच् परे होने पर। यथा ऊपर कहे हुए -

नै + अक - नाय् + अक = नायकः। इसी प्रकार - भू + ण्वुल् / भौ + अक / भाव् + अक = भावकः।

२. अत उपधायाः (७.२.११६) - उपधा के 'अ' को वृद्धि होती है ञित् णित् प्रत्यय परे होने पर। यथा - वद् + ण्वुल् - वद् + अक / वाद् + अक = वादकः। इसी प्रकार पठ् + ण्वुल् = पाठकः, हस् + ण्वुल् = हासकः आदि बनाइये।

३. पुगन्तलघूपधस्य च (७.३.८६) - धातुओं की उपधा के लघु इ को ए, लघु उ को ओ तथा लघु ऋ को अर् गुण होता है कित् ङित् से भिन्न सार्वधातुक अथवा आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

ण्वुल् प्रत्यय भी कित् ङित् से भिन्न प्रत्यय है, आर्धधातुक भी है, अतः इसके परे होने पर लघु इगुपध धातुओं की उपधा को इस प्रकार गुण कीजिये -

भिद् + ण्वुल् / उपधा के लघु इ को गुण करके - भिद् + अक / भेद् + अक = भेदकः। इसी प्रकार छिद् + ण्वुल् = छेदकः आदि।

विशेष अङ्गकार्यों को तत् तत् स्थलों पर बतलाते चलेंगे।

अब धातुओं का ऊपर कहे अनुसार वर्गीकरण करके उनमें ण्वुल् प्रत्यय लगायेंगे। इसके लिये हम ञित् णित् वर्ग के एक एक प्रत्यय को लेकर उन्हें धातुओं में लगाने की प्रक्रिया का विचार करें।

ण्वुल् प्रत्यय

ण्वुल्तृचौ सूत्र से ण्वुल् प्रत्यय, कर्ता अर्थ में सभी धातुओं से लगता है।

ण्वुल् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से ल् की तथा चुटू सूत्र से ण् की इत् संज्ञा करके तस्य लोप: सूत्र से उनका लोप करके 'वु' शेष बचाइये। उसके बाद 'युवोरनाकौ' सूत्र से वु के स्थान पर 'अक' आदेश कीजिये। ध्यान दें कि ण्वुल् प्रत्यय णित् प्रत्यय है। **अब धातुओं का ऊपर कहे अनुसार वर्गीकरण करके उनमें ण्वुल् प्रत्यय लगायेंगे।**

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के आकारान्त तथा एजन्त धातु

आतो युक् चिण्कृतो: (७.३.३३) - आकारान्त धातुओं को युक् का आगम होता है चिण् प्रत्यय परे होने पर तथा ञित् णित् कृत् प्रत्यय परे होने पर। जैसे - दा + ण्वुल् / दा + अक / 'आतो युक् चिण् कृतो:' सूत्र से युक् का आगम करके दा + युक् + अक / युक् में 'हलन्त्यम्' सूत्र से क् की इत् संज्ञा करके तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से उ की इत् संज्ञा करके तस्य लोप: सूत्र से दोनों का लोप करके - दा + य् + अक = दायक। 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा होने के कारण प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति लगाकर - दायक + सु - दायक:। इसी प्रकार-

धा + ण्वुल् - धा + युक् + अक = धायक:
पा + ण्वुल् - पा + युक् + अक = पायक:

एजन्त धातुओं के ए, ऐ, ओ, औ को 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से आ बनाकर पूर्ववत् 'आतो युक् चिण्कृतो:' सूत्र से युक् का आगम कीजिये। यथा -

गै + ण्वुल् - गा + युक् + अक = गायक:
धे + ण्वुल् - धा + युक् + अक = धायक:

दरिद्रातेरार्धधातुके विवक्षिते आलोपो वाच्य: - दरिद्रा धातु से के आ का लोप होता है आर्धधातुक प्रत्यय की विवक्षा में। **सनि ण्वुलि ल्युटि च न** - सन्, ण्वुल् तथा ल्युट् प्रत्यय की विवक्षा में दरिद्रा धातु से के आ का लोप नहीं होता है। अत: ण्वुल् परे होने पर आ का लोप न होने से युक् का आगम होकर दरिद्रायक: बनेगा।

इसी प्रकार सारे आकारान्त और एजन्त धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाइये।

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के इकारान्त तथा ईकारान्त धातु

इ, ई को 'अचो ञ्णिति' सूत्र से 'ऐ' वृद्धि करके 'एचोऽयवायाव:' सूत्र से 'ऐ' के स्थान पर 'आय्' आदेश कीजिये -

नी + ण्वुल् - नै + अक - नाय् + अक = नायक:
चि + ण्वुल् - चै + अक - चाय् + अक = चायक:
शी + ण्वुल् - शै + अक - शाय् + अक = शायक:

इसी प्रकार सारे इकारान्त और ईकारान्त धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाइये।

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के उकारान्त तथा ऊकारान्त धातु

ब्रू धातु - 'ब्रुवो वचि:' से ब्रू धातु को वच् आदेश करके - ब्रू + ण्वुल् - वच् + अक - अत उपधाया: सूत्र से उपधा के अ को वृद्धि करके - वाच् + अक = वाचक:।

शेष उकारान्त, ऊकारान्त धातु - शेष धातुओं के उ, ऊ को 'अचो ञ्णिति' सूत्र से 'औ' वृद्धि करके 'एचोऽयवायाव:' सूत्र से औ के स्थान पर 'आव्' आदेश कीजिये-

यु + ण्वुल् - यौ + अक - याव् + अक = यावक:
रु + ण्वुल् - रौ + अक - राव् + अक = रावक:
भू + ण्वुल् - भौ + अक - भाव् + अक = भावक:
पू + ण्वुल् - पौ + अक - पाव् + अक = पावक:

इसी प्रकार सारे उकारान्त और ऊकारान्त धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाइये।

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के ऋकारान्त तथा ॠकारान्त धातु

ऋ, ॠ को 'अचो ञ्णिति' सूत्र से 'आर्' वृद्धि कीजिये -

कृ + ण्वुल् - कार् + अक = कारक:
भृ + ण्वुल् - भार् + अक = भारक:
तॄ + ण्वुल् - तार् + अक = तारक:
पॄ + ण्वुल् - पार् + अक = पारक:

यह अजन्त धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाने की विधि पूर्ण हुई।

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के अदुपध धातु

विशेष अदुपध धातु -

१. **अस् धातु -** अस् + ण्वुल् / 'अस्तेर्भू:' सूत्र से अस् धातु को भू आदेश करके - भू + अक / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से ऊ के स्थान पर 'औ' वृद्धि करके 'एचोऽयवायाव:'

सूत्र से 'औ' के स्थान पर 'आव्' आदेश कीजिये - भाव् + अक = भावकः।

२. **अज् धातु** - अज् + ण्वुल् / 'अजेर्व्यघञपोः' सूत्र से अज् धातु को वी आदेश करके - वी + अक / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से ई के स्थान पर 'ऐ' वृद्धि करके 'एचोऽयवायावः' सूत्र से 'ऐ' के स्थान पर 'आय्' आदेश कीजिये - वाय् + अक = वायकः।

३. हन् धातु -

हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु (७.३.५४) - हन् धातु के 'ह' को कुत्व (घ) होता है ञित् णित् प्रत्यय परे होने पर तथा नकार परे होने पर। ण्वुल् णित् प्रत्यय है अतः इसके परे होने पर हन् के 'ह' को कुत्व करके 'घ' बनाइये - हन् + ण्वुल् - घन् + अक -

हनस्तोऽचिण्णलोः (७.३.३२) - हन् धातु के न् को त् आदेश होता है, चिण् और णल् से भिन्न, ञित् णित् प्रत्यय परे होने पर। घन् + अक - घत् + अक, अत उपध ाायाः से उपधा के 'अ' को वृद्धि होकर - घात् + अक = घातकः बनेगा।

४, ५. जन् तथा वध् धातु -

जनिवध्योश्च (७.३.३५) - जन् तथा वध् धातुओं को ञित्, णित् कृत् प्रत्यय परे होने पर तथा चिण् प्रत्यय परे होने पर, वृद्धि नहीं होती है।

(यह वध् धातु हलन्त है। यह हन् के स्थान पर होने वाला आदेश नहीं है तथा यह धातु, धातुपाठ में पठित भी नहीं है।)

जन्	+	ण्वुल्	-	जन्	+	अक	=	जनकः
वध्	+	ण्वुल्	-	वध्	+	अक	=	वधकः

६. रभ् धातु -

रभेरशब्लिटोः (७.१.६३) - रभ् धातु को नुम् का आगम होता है, शप् तथा लिट् से भिन्न अजादि प्रत्यय परे होने पर।

ण्वुल् प्रत्यय में 'अक' बचता है अतः यह भी अजादि प्रत्यय है तथा शप् और लिट् से भिन्न है, अतः इसके परे होने पर रभ् धातु को नुम्=न् का आगम होगा, जो कि मिदचोऽन्त्यात्परः सूत्र से अन्त्य अच् के बाद बैठेगा - आरभ् + ण्वुल् - आरभ् + अक / नुमागम करके - आरम्भ् + अक = आरम्भकः।

७. लभ् धातु -

लभेश्च (७.१.६४) - लभ् धातु को भी नुम् का आगम होता है, शप् तथा लिट् से भिन्न अजादि प्रत्यय परे होने पर।

लभ् + ण्वुल् - लभ् + अक / नुमागम करके - लम्भ् + अक = लम्भकः ।

८. मकारान्त धातु -

नोदात्तोपदेशस्य मान्तस्यानाचमेः (७.३.३४) -

अनाचमिकमिवमीनाम् इति वक्तव्यम् (वार्तिक) -

चम्, कम् और वम् को छोड़कर जो उदात्तोपदेश मकारान्त धातु, उन्हें चिण् परे होने पर तथा ञित्, णित् कृत् प्रत्यय परे होने पर वृद्धि नहीं होती है।

इसे इस प्रकार समझें -

१. गम् रम् नम् यम् ये चार मकारान्त धातु अनिट् हैं। अनिट् धातु को ही अनुदात्तोपदेश कहते हैं। इन्हें 'अत उपधायाः' से प्राप्त होने वाली वृद्धि होती है।

२. जो सेट् मकारान्त धातु हैं उनमें से केवल चम् कम् वम् धातुओं को 'अत उपधायाः' सूत्र से प्राप्त होने वाली वृद्धि होती है। यथा -

रम्	+	ण्वुल्	-	राम्	+	अक	=	रामकः
यम्	+	ण्वुल्	-	याम्	+	अक	=	यामकः
नम्	+	ण्वुल्	-	नाम्	+	अक	=	नामकः
गम्	+	ण्वुल्	-	गाम्	+	अक	=	गामकः
आ+चम्	+	ण्वुल्	-	आचाम्	+	अक	=	आचामकः
कम्	+	ण्वुल्	-	काम्	+	अक	=	कामकः
वम्	+	ण्वुल्	-	वाम्	+	अक	=	वामकः

३. गम्, रम्, नम्, यम्, चम्, कम्, वम् इन सात मकारान्त धातुओं के अलावा जो सेट् मकारान्त धातु बचे, उन मकारान्त धातुओं को 'अत उपधायाः' सूत्र से प्राप्त होने वाली वृद्धि का 'नोदात्तोपदेशस्य मान्तस्यानाचमेः' सूत्र से निषेध हो जाता है। यथा -

शम्	+	ण्वुल्	-	शम्	+	अक	=	शमकः
अम्	+	ण्वुल्	-	अम्	+	अक	=	अमकः
छम्	+	ण्वुल्	-	छम्	+	अक	=	छमकः
जम्	+	ण्वुल्	-	जम्	+	अक	=	जमकः
झम्	+	ण्वुल्	-	झम्	+	अक	=	झमकः
क्षमूष्	+	ण्वुल्	-	क्षम्	+	अक	=	क्षमकः

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के शेष अदुपध धातु

शेष अदुपध धातुओं को 'अत उपधाया:' सूत्र से वृद्धि होती है -

वद्	+	ण्वुल्	-	वाद्	+	अक	=	वादक:
वच्	+	ण्वुल्	-	वाच्	+	अक	=	वाचक:
चल्	+	ण्वुल्	-	चाल्	+	अक	=	चालक:
नट्	+	ण्वुल्	-	नाट्	+	अक	=	नाटक:
पठ्	+	ण्वुल्	-	पाठ्	+	अक	=	पाठक:
पच्	+	ण्वुल्	-	पाच्	+	अक	=	पाचक: आदि।

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के इदुपध धातु

'पुगन्तघूपधस्य च' सूत्र से धातुओं की उपधा के लघु इ को 'ए' गुण करके -

भिद्	+	ण्वुल्	-	भेद्	+	अक	=	भेदक:
छिद्	+	ण्वुल्	-	छिद्	+	अक	=	छेदक:
चित्	+	ण्वुल्	-	चेत्	+	अक	=	चेतक: आदि।

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के उदुपध धातु

'पुगन्तघूपधस्य च' सूत्र से धातुओं की उपधा के लघु उ को 'ओ' गुण करके-

बुध्	+	ण्वुल्	-	बोध्	+	अक	=	बोधक:
मुद्	+	ण्वुल्	-	मोद्	+	अक	=	मोदक:
तुष्	+	ण्वुल्	-	तोष्	+	अक	=	तोषक: आदि।

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के ऋदुपध धातु

'पुगन्तघूपधस्य च' सूत्र से धातुओं की उपधा के लघु ऋ को 'अर्' गुण करके-

कृष्	+	ण्वुल्	-	कर्ष्	+	अक	=	कर्षक:
वृष्	+	ण्वुल्	-	वर्ष्	+	अक	=	वर्षक:
हृष्	+	ण्वुल्	-	हर्ष्	+	अक	=	हर्षक:
तृप्	+	ण्वुल्	-	तर्प्	+	अक	=	तर्पक:
सृप्	+	ण्वुल्	-	सर्प्	+	अक	=	सर्पक: आदि।

कॄत् धातु

उपधा के दीर्घ ॠ को 'उपधायाश्च' सूत्र से इर् बनाकर 'उपधायां च' सूत्र से दीर्घ कीजिये - कॄत् + ण्वुल् - कीर्त् + अक = कीर्तक:।

चक्ष् धातु

चक्ष् + ण्वुल् / 'चक्षिङः ख्याञ्' सूत्र से चक्ष् धातु को ख्या आदेश करके - ख्या + अक / आतो युक् चिण् कृतोः सूत्र से युक् का आगम करके ख्या + युक् + अक / ख्या + य् + अक = ख्यायकः ।

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के शेष हलन्त धातु

अब जिन हलन्त धातुओं की उपधा में लघु अ, इ, उ, ऋ, ॠ नहीं हैं, ऐसे हलन्त धातुओं में बिना किसी परिवर्तन के अक को ज्यों का त्यों जोड़ दीजिये। जैसे -

ध्वंस् + ण्वुल् - ध्वंस् + अक = ध्वंसकः
मील् + ण्वुल् - मील् + अक = मीलकः
भूष् + ण्वुल् - भूष् + अक = भूषकः आदि।

प्रत्ययान्त धातुओं से ण्वुल् प्रत्यय

णिजन्त धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाना

णिच् प्रत्यय लगाने की विधि को देखकर णिजन्त धातु बना लें। ध्यान दें कि सारे णिजन्त धातुओं के अन्त में णिच् प्रत्यय का णिच् (इ) ही रहता है।

णेरनिटि (६.४.५१) - अनिडादि आर्धधातुक प्रत्यय (ऐसा आर्धधातुक प्रत्यय, जिसे इट् का आगम नहीं हुआ है) परे होने पर, 'णिच् प्रत्यय' का लोप हो जाता है। यथा -

चुर् + णिच् = चोरि। यह णिजन्त धातु है। इससे जब हम ण्वुल्, ल्युट् आदि अनिडादि प्रत्यय लगायेंगे, तब इस सूत्र से णिच् का लोप हो जायेगा। यथा -

चोरि + ण्वुल् / चोर् + अक = चोरकः। प्रेरि + ण्वुल् / प्रेर् + अक = प्रेरकः। गमि + ण्वुल् / गम् + अक = गमकः, आदि।

सन्नन्त धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाना

अतो लोपः (६.४.४८) - अङ्ग के अन्तिम 'ह्रस्व अ' का लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। यथा -

पिपठिष + ण्वुल् / पिपठिष + अक / पिपठिष् + अक = पिपठिषकः।
जिगमिष + ण्वुल् / जिगमिष + अक / जिगमिष् + अक = जिगमिषकः।

यङन्त धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाना

यङन्त धातुओं के दो वर्ग बनाइये -

१. लोलूय, पोपूय, नेनीय, बोभूय, आदि यङन्त धातुओं में जो 'य' है, वह अच् के बाद है। इनमें ण्वुल् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

अतो लोपः (६.४.४८) - अङ्ग के अन्तिम 'ह्रस्व अ' का लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। यथा -

नेनीय + ण्वुल् / नेनीय + अक / नेनीय् + अक = नेनीयकः।
लोलूय + ण्वुल् / लोलूय + अक / लोलूय् + अक = लोलूयकः।

२. दन्द्रम्य, चङ्क्रम्य, लेलिख्य, पापठ्य, वावश्य, आदि यङन्त धातुओं में जो 'य' है, वह हल् के बाद है। इनमें ण्वुल् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

यस्य हलः (६.४.४९) - हल् के बाद आने वाले 'य' का लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। यथा - दन्द्रम्य + अक / यहाँ 'यस्य हलः' सूत्र से 'य्' का लोप करके तथा 'अतो लोपः' सूत्र से 'अ' का लोप करके - दन्द्रम् + अक / अब 'अत उपधायाः' सूत्र से यद्यपि उपधा के 'अ' को वृद्धि प्राप्त है किन्तु -

अचः परस्मिन् पूर्वविधौ (१.१.५७) - परनिमित्तक अजादेश स्थानिवत् होता है, स्थानिभूत अच् से पूर्वत्वेन दृष्टविधि की कर्तव्यता में।

अतः जब हम 'अत उपधायाः' सूत्र से उपधा को वृद्धि करने चलेंगे, तब 'ण्वुल्' को निमित्त मानकर होने वाला 'अलोप' स्थानिवत् हो जायेगा, अतः उपधा को वृद्धि नहीं हो पायेगी। अतः - दन्द्रम् + अक = दन्द्रमकः ही बनेगा।

इसी प्रकार - चङ्क्रम्य + अक = चङ्क्रमकः। पापच्य + अक = पापचकः। पापठ्य + अक = पापठकः, आदि।

बेभिद्य + ण्वुल् / बेभिद् + अक / पूर्ववत् स्थानिवद्भाव करके - बेभिदकः।
मोमुद्य + ण्वुल् / मोमुद् + अक / पूर्ववत् स्थानिवद्भाव करके - मोमुदकः।
वरीवृष्य + ण्वुल् / वरीवृष् + अक / पूर्ववत् स्थानिवद्भाव करके - वरीवृषकः।

यङ्लुगन्त धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाना

'यङोऽचि च' सूत्र से यङन्त धातुओं के यङ् का लोप करके जो धातु बनते हैं, वे यङ्लुगन्त धातु होते हैं। यथा - नेनीय - नेनी। बोभूय - बोभू, आदि।

ध्यान दें कि 'यङोऽचि च' में जो अच् है, वह प्रत्यय है, प्रत्याहार नहीं। अतः

'अच् प्रत्यय' के अलावा कोई भी प्रत्यय 'यङोऽचि च' सूत्र से होने वाले यङ्लुक् का निमित्त नहीं बनता। अतः यङ्लुक् परनिमित्तक न होने के कारण, यङ्लुगन्त धातुओं से परे अच् के अलावा कोई भी प्रत्यय आने पर 'अचः परस्मिन् पूर्वविधौ' सूत्र से स्थानिवद्भाव नहीं होगा, इसलिये यथाप्राप्त अङ्गकार्य ही होंगे - अतः नेनी + ण्वुल् - 'अचो ञ्णिति' सूत्र से 'ई' को वृद्धि करके - नेनै + अक = नेनायकः।

इसी प्रकार - बोभू + ण्वुल् / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से 'ऊ' को वृद्धि करके - बोभौ + अक = बोभावकः।

चर्कृ + ण्वुल् / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से 'ऋ' को वृद्धि करके - चर्कार् + अक = चर्कारकः।

इसी प्रकार - तातॄ + ण्वुल् / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से 'ऋ' को वृद्धि करके = तातारकः। पापच् + ण्वुल् / 'अत उपधायाः' से वृद्धि करके पापाच् + अक = पापाचकः।

लेलिख् + ण्वुल् / लेलिख् + अक / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से अङ्ग की उपधा के 'इ' को गुण करके = लेलेखकः।

मोमुद् + ण्वुल् / मोमुद् + अक = मोमुदकः / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से अङ्ग की उपधा के 'उ' को गुण करके = मोमोदकः।

वरीवृष् + ण्वुल् / वरीवृष् + अक / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से अङ्ग की उपधा के 'ऋ' को गुण करके = वरीवर्षकः।

क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्ययान्त धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाना

क्यस्य विभाषा (६.४.५०) - हल् से उत्तर जो क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्यय, उनका विकल्प से लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

समिध्य + ण्वुल् = समिधकः, समिध्यकः।

यह समस्त धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाने की विधि पूर्ण हुई।

धातुओं में वुञ् प्रत्यय लगाने की विधि

ध्यान रहे कि वुञ् प्रत्यय समस्त धातुओं से नहीं लगाया जाता है। अतः इसके जो उदाहरण सूत्रों में दिये जायेंगे, उतने रूप ही इससे बनाइये।

वुञ् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ञ् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उसका लोप करके 'वु' शेष बचाइये। उसके बाद 'युवोरनाकौ' सूत्र से वु के स्थान पर

'अक' आदेश कीजिये। यह प्रत्यय ञित् है।

ञित् होने के कारण वुञ् प्रत्यय धातुओं में ठीक उसी विधि से लगाया जायेगा, जिस विधि से धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाया गया है।

निन्द् + वुञ् = निन्दकः। हिंस् + वुञ् = निन्दकः। क्लिश् + वुञ् = क्लेशकः।

धातुओं में ण्वुच् प्रत्यय लगाने की विधि

ण्वुच् प्रत्यय भी समस्त धातुओं से नहीं लगाया जाता है। अतः इसके जो उदाहरण सूत्रों में दिये जायेंगे, उतने रूप ही इससे बनाइये।

ण्वुच् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की तथा चुटू सूत्र से ण् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके 'वु' शेष बचाइये। उसके बाद 'युवोरनाकौ' सूत्र से वु के स्थान पर 'अक' आदेश कीजिये। णित् होने के कारण इसे भी धातुओं में ठीक उसी विधि से लगाइये, जिस विधि से धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाया है।

विशेष - ध्यान रहे कि कि ण्वुच् प्रत्यय से बने हुए शब्द स्त्रीलिङ्ग में ही होते हैं। अतः प्रत्यय लगाकर जो रूप बने उससे 'टाप् = आ' लगाकर स्त्रीलिङ्ग बना लीजिये।

शी + ण्वुच् - शी + अक / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से अन्तिम अच् को वृद्धि करके - शै + अक / 'एचोऽयवायावः' सूत्र से ऐ के स्थान पर 'आय्' आदेश करके -

शाय् + अक = शायक / स्त्रीलिङ्ग में 'अजाद्यतष्टाप्' सूत्र से टाप् प्रत्यय करके शायक + टाप् - शायक + आ -

प्रत्ययस्थात्कात् पूर्वस्यात इदाप्यसुपः (७.३.४४) -

प्रत्यय में स्थित जो ककार, उससे पूर्ववर्ती जो ह्रस्व अ, उसे इ आदेश होता है, आप् परे होने पर, यदि वह आप् सुप् से परे न हो तो। इस सूत्र से प्रत्यय के ककार से पूर्ववर्ती अकार को 'इ' करके - शायिका / शायिका + सु = शायिका।

अग्र + ङि + ग्रस् + ण्वुच् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - अग्र + ग्रस् + अक / 'अत उपधायाः' सूत्र उपधा के 'अ' को वृद्धि करके - अग्र + ग्रास् + अक - अग्रग्रासक / स्त्रीलिङ्ग में पूर्ववत् टाप् करके - अग्रग्रासिका / अग्रग्रासिका + सु = अग्रग्रासिका।

इक्षु + ङस् + भक्ष् + णिच् / ण्वुच् -

पूर्ववत् 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - इक्षु +

भक्ष् + णिच् + अक / 'णेरनिटि' सूत्र से णिच् का लोप करके - इक्षु + भक्ष् + अक / उपधा में अ न होने के कारण वृद्धि नहीं होगी, अतः - इक्षुभक्षक / स्त्रीलिङ्ग में पूर्ववत् - इक्षुभक्षिका।

णमुल् प्रत्यय

आभीक्ष्ण्ये णमुल् च (३.४.२२) - समान है कर्ता जिन दो क्रियाओं का, उनमें जो पूर्वकाल में वर्तमान धातु, उससे णमुल् प्रत्यय होता है, यदि पौनःपुन्य अर्थात् आभीक्ष्ण्य अर्थ गम्यमान हो, तो। आभीक्ष्ण्य का अर्थ है, बार बार करना। इस अर्थ में णमुल् प्रत्यय सभी धातुओं से लगाया जा सकता है।

तात्पर्य यह कि जब कोई एक ही कर्ता, एक क्रिया करके दूसरी क्रिया करता है, तब पहिली क्रिया को बतलाने वाला जो धातु, उसे यदि बार बार किया जा रहा है, तो उस धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। जैसे -

देवदत्त खा खाकर जाता है - देवदत्तः भोजं भोजं व्रजति। यहाँ एक ही कर्ता देवदत्त, बार बार खाने की क्रिया करके जाने की क्रिया कर रहा है, अतः पहिली क्रिया को बतलाने वाला जो धातु भुज्, उससे णमुल् प्रत्यय लगाया गया है।

णमुल् प्रत्यय में 'चुटू' सूत्र से ण् की तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से ल् की इत्संज्ञा होकर, 'तस्य लोपः' सूत्र से दोनों का लोप होकर 'अम्' शेष बचता है। ध्यान रहे कि ण् की इत् संज्ञा होने के कारण यह णित् प्रत्यय है। अतः इसके परे होने पर णित्त्वप्रयुक्त वे सारे कार्य होंगे, जो ण्वुल् प्रत्यय परे होने पर कहे गये हैं।

अतः ण्वुल् प्रत्यय में जिस धातु का जो भी रूप दिया हुआ है, उसमें से ण्वुल् प्रत्यय का 'अकः' हटाकर उसकी जगह णमुल् प्रत्यय का 'अम्' रख दीजिये तो जानिये कि सारे णमुलन्त रूप तैयार हो गये। जैसे - आकारान्त पा से हमने - पा + ण्वुल् = पायकः, बनाया है। इसमें से अकः को हटाकर, अम् को रखा, तो बना - पायम्।

कृन्मेजन्तः (१.१.३९) - मकारान्त और एजन्त जो कृदन्त होते हैं, उनकी अव्यय संज्ञा होती है। णमुल् - अम्, यह भी मकारान्त कृदन्त है, अतः इससे बने हुए शब्दों की अव्यय संज्ञा होती है। अतः पायम् की अव्यय संज्ञा है।

अव्ययादाप्सुपः (२.४.८२) - अव्यय से परे आने वाले आप् तथा सुप् का लुक् होता है। अतः णमुल् प्रत्यय से बने हुए जो शब्द, उनके बाद आने वाली सुप् विभक्तियों का लोप हो जाता है और उनके रूप किसी भी विभक्ति में नहीं चलाये जा सकते।

नित्यवीप्सयोः (८.१.४) - जब आभीक्ष्ण्य (बार बार करना) अर्थ में णमुल् प्रत्यय होता है, तब जो णमुलन्त पद बनता है, उसे 'नित्यवीप्सयोः' सूत्र - ८.१.४ से द्वित्व हो जाता है। यथा - पायं पायं व्रजति (पी पीकर जाता है।)

इसी प्रकार - कृ धातु से कारकः के ही समान कारम् कारम् / भुज् धातु से भोजकः के ही समान भोजम् भोजम् आदि बनाइये। (ध्यान रहे कि जब आभीक्ष्ण्य अर्थ नहीं होगा तब यह द्वित्व भी नहीं होगा। यथा - स्वादुंकारम् भुङ्क्ते आदि में।)

अब वे विशेष सूत्र बतला रहे हैं, जो कि ण्वुल् प्रत्यय में नहीं लगे थे और णमुल् में लग रहे हैं।

अप + गुर् धातु -

अपगुरो णमुलि (६.१.५३) - अप उपसर्ग पूर्वक गुर् धातु से णमुल् प्रत्यय परे होने पर, एच् के स्थान पर विकल्प से 'आ' आदेश होता है। अपगुर् + णमुल् / पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा को गुण करके - अपगोर् + अम् = अपगोरम् अपगोरम्/

ओ के स्थान पर विकल्प से 'आ' आदेश करके - अपगारम् अपगारम्।

मित् धातु -

चिण्णमुलो दीर्घोऽन्यतरस्याम् (६.४.९३) - मित् धातुओं की उपधा को विकल्प से दीर्घ होता है, चिण् तथा णमुल् परक णिच् प्रत्यय परे होने पर। मित् धातुओं की उपधा को जो 'मितां ह्रस्वः' सूत्र से ह्रस्व कहा गया है, उसका यह विकल्प है। शम् + णिच् = शामि / शामि + णमुल् / 'णेरनिटि' सूत्र से णिच् का लोप करके - शाम् + अम् / 'नित्यवीप्सयोः' सूत्र से द्वित्व करके - शामम् शामम् / दीर्घ न होने पर शमम् शमम्।

लभ् धातु -

विभाषा चिण्णमुलोः (७.१.६९) - लभ् धातु को विकल्प से नुम् का आगम होता है, चिण् तथा णमुल् प्रत्यय परे होने पर - लभ् + णमुल् - लभ् + अम् / नुमागम होकर - लम्भ् + अम् - लम्भं लम्भम्।

नुमागम न होने पर - लभ् + णमुल् - लभ् + अम् / 'अत उपधायाः' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - लाभ् + अम् - लाभम् लाभम्।

पूरी धातु -

वर्षप्रमाण ऊलोपश्चास्यान्यतरस्याम् (३.४.३२) - वर्षा का प्रमाण गम्यमान हो तो कर्म उपपद में होने पर ण्यन्त पूरी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है तथा इस पूरी धातु के ऊकार का विकल्प से लोप होता है।

गोष्पदं पूरयति इति गोष्पदप्रम्। गोष्पद + ङस् + पूर् + णमुल् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - गोष्पद + पूर् + अम् / वर्षप्रमाण ऊलोपश्चास्यान्यतरस्याम् सूत्र से ऊ का लोप करके - गोष्पद + प् र् + अम् = गोष्पदप्रम्।

ऊलोप न होने पर - गोष्पदपूरं वृष्टो देवः (गोष्पद + ङस् + पूर् + णमुल्)।

इसी प्रकार - सीताप्रम् वृष्टो देवः।

ऊलोप न होने पर - सीतापूरं वृष्टो देवः (गोष्पद + ङस् + पूर् + णमुल्)।

घञ् प्रत्यय

घञ् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ञ् की इत् संज्ञा करके, 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से घ् की इत् संज्ञा करके तथा 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके 'अ' शेष बचाइये। घञ् प्रत्यय ञित् है। अतः इसमें वे सारे कार्य होंगे, जो ण्वुल् प्रत्यय में हुए हैं।

घञबन्तः (पुंसि) - **(लिङ्गानुशासन)** - घञ् प्रत्यय से बने हुए सारे शब्द पुंल्लिङ्ग ही होते हैं।

घित् प्रत्यय और ण्यत् प्रत्यय सम्बन्धी कुत्वविधि

घित् और ण्यत् प्रत्यय परे होने पर चकारान्त, जकारान्त धातुओं को कुत्व होता है। कुत्व के सूत्र अष्टाध्यायी के सप्तमाध्याय के द्वितीयपाद में इस प्रकार हैं -

चजोः कु घिण्ण्यतोः ७.३.५२
न्यङ्क्वादीनां च ७.३.५३
हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु ७.३.५४
अभ्यासाच्च ७.३.५५
हेरचङि ७.३.५६
सन्लिटोर्जेः ७.३.५७
विभाषा चेः ७.३.५८
न क्वादेः ७.३.५९
अजिव्रज्योश्च ७.३.६०
भुजन्युब्जौ पाण्युपतापयोः ७.३.६१
प्रयाजानुयाजौ यज्ञाङ्गे ७.३.६२
वञ्चेर्गतौ ७.३.६३
ओक उचः के ७.३.६४
ण्य आवश्यके ७.३.६५
यजयाचरुचप्रवचर्चश्च ७.३.६६
वचोऽशब्दसंज्ञायाम् ७.३.६७
प्रयोज्यनियोज्यौ शक्यार्थे ७.३.६८
भोज्यं भक्ष्ये ७.३.६९

चजोः कु घिण्ण्यतोः - (७.३.५२) - **निष्ठायामनिट इति वक्तव्यम्** (वा)- जो चकारान्त और जकारान्त धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर अनिट् हैं, उन्हें कुत्व होता है, घित् तथा ण्यत् प्रत्यय परे होने पर। कुत्व होने पर च् को क् होता है

और ज् को ग् होता है। उदाहरण - पच् + घञ् / 'अत उपधायाः' सूत्र से उपधा के 'अ' को वृद्धि करके और चकार को कुत्व करके = पाकः। त्यज् + घञ् = त्यागः।

'चजोः कु घिण्ण्यतोः' इस सूत्र में **'निष्ठायामनिट इति वक्तव्यम्'** इस वार्तिक को जोड़ देने के कारण 'न क्वादेः' और 'अजिव्रज्योश्च' सूत्र, तथा यजयाचरुचप्रवचर्चश्च (७.३.६६) सूत्र में याच्, रुच्, ऋच् धातुओं का प्रत्याख्यान हो जाता है, इस कारण सूत्रकार तथा वार्तिककार के मत अलग अलग हो जाते हैं।

'उत्तरोत्तरं मुनीनां प्रामाण्यम्' कहकर भाष्य और कौमुदी आदि में वार्तिककार के पक्ष में इसका समाधान किया गया है। यह सब विषय भाष्य और कौमुदी में देख लेना चाहिये। यहाँ इनका निष्कृष्टार्थ इस प्रकार दे रहे हैं -

निष्ठा प्रत्यय परे होने पर अनिट् चकारान्त और जकारान्त धातु जिन्हें घित् और ण्यत् प्रत्यय परे होने पर कुत्व होता है -

पच्	-	पाकः, पाक्यम्	मुच्	-	मोकः, मोक्यम्
रिच्	-	रेकः, रेक्यम्	वच्	-	वाकः, वाक्यम्, वाच्यम्
विच्	-	वेकः, वेक्यम्	सिच्	-	सेकः, सेक्यम्
तञ्चु	-	तङ्कः, तङ्क्यम्	म्रुञ्चु	-	म्रुङ्कः, म्रुङ्क्यम्
म्रुचु	-	म्रोकः, म्रोक्यम्	म्लुचु	-	म्लोकः, म्लोक्यम्
म्लुञ्चु	-	म्लुङ्कः, म्लुङ्क्यम्	ग्रुचु	-	ग्रोकः, ग्रोक्यम्
ग्लुचु	-	ग्लोकः, ग्लोक्यम्	ग्लुञ्चु	-	ग्लुङ्कः, ग्लुङ्क्यम्
वञ्चु	-	वङ्कः, वङ्क्यम्	तञ्चु	-	तङ्कः, तङ्क्यम्
त्वञ्चु	-	त्वङ्कः, त्वङ्क्यम्	ओव्रश्चू	-	व्रस्कः, व्रस्क्यम्
तञ्चू	-	तङ्कः, तङ्क्यम्	पृची	-	पर्कः
ई शुचिर्	-	शोकः, शोक्यम्	त्यज्	-	त्यागः, त्याज्यम्
निजिर्	-	नेगः, नेग्यम्	भज्	-	भागः

विशेष - द्विवचनविभज्य. (५.३.५७) सूत्र के निर्देश से भज् धातु से यत् होता है, ण्यत् नहीं। अतः भज्यम् ही बनेगा। भज् धातु से ण्यत् करके 'विभाज्यम्' प्रयोग अशुद्ध है। 'भाज पृथक्कर्मणि' धातु से विभाज्यम् बन सकता है।

भञ्ज्	-	भङ्गः, भङ्ग्यम्	वृजी	-	वर्गः
टुमस्जो	-	मद्गः, मद्ग्यम्	ओलस्जी	-	लद्गः, लद्ग्यम्

यज्	-	यागः, याज्यम्	युज्	-	योगः, योग्यम्
रुज्	-	रोगः, रोग्यम्	रञ्ज्	-	रङ्गः, रङ्ग्यम्
स्वञ्ज्	-	स्वङ्गः, स्वङ्ग्यम्	सञ्ज्	-	सङ्गः, सङ्ग्यम्
सृज्	-	सर्गः	कुजु	-	कोगः, कोग्यम्
खुजु	-	खोगः, खोग्यम्	मृजू	-	मार्गः
अञ्जू	-	अङ्कः, अङ्क्यम्	भृजी	-	भर्गः
भुज् (रु.)	-	भोगः, भोग्यम्	भुजो (तु.)	-	भोगः, भोग्यम्
विजिर्(जु.)	-	वेगः, वेग्यम्	ओविजी(तु.रु.)	-	वेगः वेग्यम्
टुओस्फूर्जा	-	स्फूर्गः, स्फूर्ग्यम्	ओलजी	-	लागः, लाग्यम्

भ्रस्ज् - भ्रद्गः, भर्गः / भ्रद्ग्यम्, भ्रर्ग्यम्।

अञ्चु - पूजा अर्थ में सेट् होने पर - अञ्चः, अञ्च्यम्।

- अन्यत्र अनिट् होने पर कुत्व होकर - अङ्कः, अङ्क्यम्।

निष्ठा प्रत्यय परे होने पर जो धातु सेट् हैं, उन्हें घित् और ण्यत् प्रत्यय परे होने पर कुत्व नहीं होता है। यथा - तर्ज् + घञ् = तर्जः। कूज् + घञ् = कूजः। खर्ज् + घञ् = खर्जः। सम् + अज् + घञ् = समाजः / उद् + अज् + घञ् = उदाजः / परि + व्रज् + घञ् = परिव्राजः।

विशेष - 'त्यजेश्च' वार्तिक से 'त्याज्यम्' में, 'यजयाच' सूत्र से 'याज्यम्' में और 'वचोऽशब्दसंज्ञायाम्' सूत्र से 'वाच्यम्' में कुत्वनिषेध आगे कहा जा रहा है।

कुत्व के अपवाद -

शुच्युब्जोर्घञि कुत्वम् (वा.) - 'शुच शोके' और 'उब्ज आर्जवे' धातु यद्यपि सेट् हैं, किन्तु इन्हें घञ् प्रत्यय परे होने पर कुत्व होता है - शुच् + घञ् = शोकः। सम् + उब्ज् + घञ् = समुद्गः। (वस्तुतः यह धातु दकारोपध स्वीकृत है।) 'तुन्दशोकयोः परिमृजापनुदोः' सूत्र के निर्देश से भी 'शोकः' शब्द बन सकता है।

न्यङ्क्वादीनां च - (७.३.५३) - न्यङ्क्वादिगण पठित शब्दों को निपातनात् कुत्व होता है। अर्ह् + घञ् - अर्घ् + अ = अर्घः। अव + दह् + घञ् - अवदघ् + अ = अवदाघः। नि + दह् + घञ् - निदघ् + अ = निदाघः। इसी प्रकार -

उद् + अञ्च् + घञ् = उदङ्कः मिह् + घञ् = मेघः

अव + उन्द् + घञ् = अवोदः अर्ह् + घञ् = अर्घः

नि + 'उब्ज आर्जवे' धातु तथा 'भुज पालनाभ्यवहारयोः' धातु -

भुजन्युब्जौ पाण्युपतापयो: - (७.३.६१) - पाणि और उपताप अर्थ में घञ् प्रत्यय लगाकर भुज और न्युब्ज शब्द निपातन से बनते हैं।

भुज् + घञ् = भुज: (हाथ या भुजा अर्थ होने पर)

भुज् + घञ् = भोग: (हाथ या भुजा अर्थ न होने पर)

प्रयाजानुयाजौ यज्ञाङ्गे - (७.३.६२) - प्रयाज और अनुयाज शब्द, यज्ञाङ्ग अर्थ में घञ् प्रत्यय लगाकर निपातन से बनते हैं। यज्ञाङ्ग अर्थ न होने पर कुत्व होकर प्रयाग: और अनुयाग: शब्द, बन सकते हैं।

वञ्चु धातु -

वञ्चेर्गतौ (७.३.६३)- गति अर्थ में वर्तमान जो वञ्च् धातु, उसे कवर्गादेश नहीं होता। वञ्च् + घञ् = वञ्च:। गति अर्थ न होने पर - वङ्क:।

रञ्ज् धातु -

घञि च भावकरणयो: - (६.४.२७) - रञ्ज् धातु की उपधा के न् का लोप होता है भाव तथा करणवाची घञ् प्रत्यय परे होने पर।

रञ्ज् + घञ् - रञ्ज् + अ / उपधा के न् का लोप करके - रज् + अ / 'चजो: कु घिण्ण्यतो:' सूत्र से ज् को कुत्व करके - रग् + अ / 'अत उपधाया:' सूत्र से उपधा के 'अ' को वृद्धि होकर - राग:।

ध्यान रहे कि यदि भाव अथवा करण अर्थ नहीं होगा तब उपधा के न् का लोप भी नहीं होगा - रज्यतेऽस्मिन् इति रङ्ग:। रंज् + घञ् - रंज् + अ / ज् को कुत्व होकर रंग् + अ / अनुस्वारस्य ययि परसवर्ण: से अनुस्वार को परसवर्ण होकर रङ्ग:।

स्यन्द् धातु -

स्यदो जवे - (६.४.२८) - जव (वेग) अर्थ होने पर स्यन्द् धातु से घञ् प्रत्यय लगने पर निपातन से - स्यद: शब्द बनता है। अश्वस्यद:, गोस्यद:।

ध्यान दें कि यहाँ स्यन्द् के न् का लोप तथा लोप के बाद 'अत उपधाया:' सूत्र से प्राप्त होने वाली वृद्धि का निषेध निपातन से हुए हैं। जव अर्थ न होने पर - स्यन्द् + घञ् - स्यन्द् + अ = स्यन्द:। यहाँ स्यन्द: का अर्थ 'बहना' है - यथा तैलस्यन्द:।

अवोदैधौद्मप्रश्रथहिमश्रथा: - (६.४.२९) -

अव + उन्द् + घञ् = अवोद:। इन्ध् + घञ् = एध:। प्र + श्रन्थ् + घञ् = प्रश्रथ:। हिम + श्रन्थ् + घञ् = हिमश्रथ:। ये शब्द निपातन से बनते हैं।

लस्ज्, मस्ज्, षस्ज् धातु - मस्ज् + घञ् / 'चजो: कु घिण्ण्यतो:' सूत्र से ज्

को कुत्व करके - मस्ग् + अ / 'झलां जश् झशि' सूत्र से स् को जश्त्व करके - मद्ग् + अ = मद्गः। इसी प्रकार - लस्ज् + घञ् = लद्गः। षस्ज् + घञ् = सद्गः।

भ्रस्ज् धातु - भ्रस्ज् + घञ् / पूर्ववत् = भ्रद्गः। पक्ष में भ्रस्ज् धातु के 'र्' और उपधा और के 'स्' के स्थान पर 'भ्रस्जो रोपधयो रमन्यतरस्याम्' सूत्र से 'रम्' आदेश करके - भर्ज् + अ / 'चजोः कु घिण्ण्यतोः' सूत्र से जकार को कुत्व करके = भर्गः।

अद् धातु -

घञपोश्च (२.४.३८) - घञ् तथा अप् प्रत्यय परे होने पर अद् धातु को घस्लृ - घस् आदेश होता है। अद् + घञ् / घस् + अ / अत उपधायाः सूत्र से उपधा के 'अ' को वृद्धि होकर घास् + अ = घासः।

अस् धातु - अस् + घञ् / अस् धातु को 'अस्तेर्भूः' सूत्र से भू आदेश करके भू + घञ् / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से ऊ के स्थान पर 'औ' वृद्धि करके एचोऽयवायावः सूत्र से औ के स्थान पर 'आव्' आदेश = भावः।

लभ् धातु -

उपसर्गात् खल्घञोः (७.१.६७)- लभ् धातु यदि उपसर्ग से युक्त हो तो उसे नुम् का आगम होता है, खल्, घञ् प्रत्यय परे होने पर। यथा - प्र + लभ् + घञ् / अ = प्रलम्भः। इसी प्रकार विप्रलम्भः, उपालम्भः आदि बनाइये।

न सुदुर्भ्यां केवलाभ्याम् (७.१.६८)- यदि लभ् धातु केवल सु या दुर् उपसर्ग से युक्त हो तब नुम् का आगम नहीं होता। सुलभ् + घञ् - सुलाभः / दुर् + लभ् + घञ् - दुर्लभः। यदि लभ् धातु में सु या दुर् उपसर्ग के साथ अन्य उपसर्ग मिल जायें तब नुम् का आगम हो जाता है। सु + प्र + लभ् + घञ् - सुप्रलम्भः।

लभ् धातु यदि उपसर्ग से रहित हो तो घञ् प्रत्यय लगने पर नुमागम नहीं होता। उपसर्ग से रहित होने पर इस प्रकार रूप बनता है - लभ् + घञ् - लभ् + अ / 'अत उपधायाः' से उपधा के 'अ' को वृद्धि होकर - लाभ् + अ = लाभः।

ग्रह् धातु - लोक में - सम् + ग्रह् + घञ् = संग्राहः।

छन्दसि निपूर्वादपीष्यते स्रुगुद्यमननिपातनयोः (वा.) - वेद में ह् को भ् होता है - उद्ग्राभं निग्राभं च ब्रह्म देवा अवीवृधन्।

प्र + यज् धातु तथा अनु + यज् धातु -

हन् धातु - हन् + ण्वुल् / 'हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु' सूत्र से ह को कुत्व करके - घन् + अ / 'हनस्तोऽचिण्णलोः' सूत्र से हन् धातु के न् को त् आदेश करके और 'अत

उपधायाः' सूत्र से उपधा के 'अ' को वृद्धि करके - घात् + अ = घातः ।

रभ् धातु - रभेरशब्लिटोः (७.१.६३)- रभ् धातु को नुम् का आगम होता है, शप् तथा लिट् से भिन्न अजादि प्रत्यय परे होने पर।

आरभ् + घञ् - आरभ् + अ / नुमागम करके - आरम्भ् + अ = आरम्भः ।

स्फुर्, स्फुल् धातु -

स्फुरतिस्फुलत्योर्घञि (८.३.७६) - पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के 'उ' को गुण करके स्फुर् स्फुल् धातुओं के एच् के स्थान पर 'आ' आदेश होता है, घञ् परे होने पर।

स्फुर् + घञ् - स्फोर् + अ - स्फार् + अ = स्फारः
स्फुल् + घञ् - स्फोल् + अ - स्फाल् + अ = स्फालः

स्फुरतिस्फुलत्योर्निर्निविभ्यः (८.३.७६)- नि, वि उपसर्ग पूर्वक स्फुर्, स्फुल् धातुओं को विकल्प से षत्व होता है।

वि + स्फुर् + घञ् - विस्फार् + अ = विस्फारः, विष्फालः
वि + स्फुल् + घञ् - विस्फाल् + अ = विस्फालः, विष्फालः

शेष धातुओं से घञ् प्रत्यय

शेष धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय के समान ही कार्य कीजिये। यथा -

आकारान्त तथा एजन्त धातु

आकारान्त धातुओं को 'आतो युक् चिण्कृतोः' सूत्र से युक् (य्) का आगम कीजिये-

दा + घञ् - दा + युक् + अ = दायः
धा + घञ् - धा + युक् + अ = धायः

एजन्त धातुओं के ए, ऐ, ओ, औ को आदेच उपदेशेऽशिति सूत्र से आ बनाकर पूर्ववत् 'आतो युक् चिण्कृतोः' सूत्र से युक् (य्) का आगम कीजिये -

गै + घञ् - गा + युक् + अ = गायः
ध्यै + घञ् - ध्या + युक् + अ = ध्यायः

इकारान्त तथा ईकारान्त धातु

चि धातु - निवासचितिशरीरोपसमाधानेष्वादेश्च कः (३.३.४१) - निवास, चिति,शरीर, उपसमाधान (राशीकरण) अर्थ में चि धातु से घञ् प्रत्यय होता है और धातु के आदि को क होता है।

निवास अर्थ में - चिखल्लिनिकाय:। **चिति अर्थ में** - आकायमग्निं चिन्वीत। **शरीर अर्थ में** - अनित्यकाय:। उपसमाधान अर्थ में - महागोमयनिकाय:।

इन सभी के चि धातु के आदि को 'क' आदेश हुआ है।

शेष **इकारान्त तथा ईकारान्त धातु** - इ, ई को 'अचो ञ्णिति' सूत्र से ऐ' वृद्धि करके 'एचोऽयवायाव:' सूत्र से ऐ के स्थान पर 'आय्' आदेश कीजिये -

अधि + इ + घञ् - ऐ + अ - अध्याय् + अ = अध्याय:
नी + घञ् - नै + अ - नाय् + अ = नाय:

उकारान्त तथा ऊकारान्त धातु

उकारान्त तथा ऊकारान्त धातु - 'अचो ञ्णिति' सूत्र से उ, ऊ के स्थान पर 'औ' वृद्धि करके 'एचोऽयवायाव:' सूत्र से औ के स्थान पर 'आव्' आदेश कीजिये -

सम + यु + घञ् - संयौ + अ - सं याव् + अ = संयाव:
वि + रु + घञ् - विरौ + अ - वि राव् + अ = विराव:
प्र + स्तु + घञ् - प्रस्तौ + अ - प्र स्ताव् + अ = प्रस्ताव:
सम् + द्रु + घञ् - संद्रौ + अ - सं द्राव् + अ = संद्राव:

ऋकारान्त तथा ॠकारान्त धातु

ऋ, ॠ को 'अचो ञ्णिति' सूत्र से 'आर्' वृद्धि कीजिये -

सृ + घञ् - सार् + अ = सार:
भृ + घञ् - भार् + अ = भार:
कॄ + घञ् - कार् + अ = कार:
शॄ + घञ् - शार् + अ = शार:
अव + स्तॄ + घञ् - अवस्तार् + अ = अवस्तार:

अदुपध धातु

शेष अदुपध धातुओं को 'अत उपधाया:' से वृद्धि कीजिये -

वद् + घञ् - वाद् + अ = वाद:

जिन चकारान्त, जकारान्त धातुओं को कुत्व प्राप्त है, उन्हें कुत्व भी कीजिये-

पच् + घञ् - पाक् + अ = पाक:
यज् + घञ् - याग् + अ = याग:

इदुपध धातु

शेष इदुपध धातुओं को 'पुगन्तघूपधस्य च' सूत्र से 'ओ' गुण कीजिये -

भिद् + घञ् - भेद् + अ = भेदः
खिद् + घञ् - खेद् + अ = खेदः

जिन चकारान्त, जकारान्त धातुओं को कुत्व प्राप्त है, उन्हें कुत्व भी कीजिये-

रिच् + घञ् - रेक् + अ = रेकः
सिच् + घञ् - सेक् + अ = सेकः

उदुपध धातु

शेष उदुपध धातुओं को 'पुगन्तघूपधस्य च' सूत्र से 'ओ' गुण कीजिये -

बुध् + घञ् - बोध् + अ = बोधः
मुद् + घञ् - मोद् + अ = मोदः

जिन चकारान्त, जकारान्त धातुओं को कुत्व प्राप्त है, उन्हें कुत्व भी कीजिये-

शुच् + घञ् - शोक् + अ = शोकः
मुच् + घञ् - मोक् + अ = मोकः

ऋदुपध धातु

शेष ऋदुपध धातुओं को 'पुगन्तघूपधस्य च' सूत्र से 'ओ' गुण कीजिये -

हृष् + घञ् - हर्ष् + अ = हर्षः
वृष् + घञ् - वर्ष् + अ = वर्षः
कृष् + घञ् - कर्ष् + अ = कर्षः

जिन चकारान्त, जकारान्त धातुओं को कुत्व प्राप्त है, उन्हें कुत्व भी कीजिये-

मृजू धातु - इसकी उपधा को 'मृजेर्वृद्धिः' सूत्र से वृद्धि करके कुत्व कीजिये-

मृज् + घञ् - मार्ग् + अ = मार्गः
अप + मृज् + घञ् - अपामार्ग् + अ = अपामार्गः
वि + मृज् + घञ् - विमार्ग् + अ = वीमार्गः

(उपसर्ग को 'उपसर्गस्य घञ्यमनुष्ये बहुलम् ६.३.१२२' सूत्र से दीर्घ हुआ है।)

शेष हलन्त धातु

बचे हुए हलन्त धातुओं में जिन चकारान्त, जकारान्त धातुओं को कुत्व प्राप्त है, उन्हें कुत्व कीजिये। शेष को कुछ मत कीजिये -

अञ्ज् + घञ् - अङ्ग् + अ = अङ्गः
भञ्ज् + घञ् - भङ्ग् + अ = भङ्गः
खर्ज + घञ् - खर्ज् + अ = खर्जः

ण्यत् प्रत्यय

धातुओं से भाव, कर्म अर्थ में ण्यत् प्रत्यय होता है। किन्तु ध्यान रहे कि ण्यत् प्रत्यय सारे धातुओं से नहीं लगता है। ण्यत् प्रत्यय में 'चुटू' सूत्र से ण् की तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से त् की इत् संज्ञा होकर 'य' शेष बचता है। ण् की इत् संज्ञा होने से यह णित् प्रत्यय है। अत: इस प्रत्यय के लगने पर ण्वुल् प्रत्यय के समान ही कार्य होंगे।

ण्यत् प्रत्यय सम्बन्धी कुत्व विधि

चजो: कु घिण्ण्यतो: - (सूत्र ७.३.५२) - **निष्ठायामनिट इति वक्तव्यम्** (वा)-

जो चकारान्त और जकारान्त धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर अनिट् हैं, उन्हें कुत्व होता है, घित् तथा ण्यत् प्रत्यय परे होने पर। **(निष्ठा में अनिट् जो चकारान्त, जकारान्त धातु हैं, उनके कुत्व करके बने हुए ण्यत् प्रत्ययान्त रूप पृष्ठ ९४ पर देखें।)**

उदाहरण - पच् + ण्यत् / 'अत उपधाया:' सूत्र से उपधा के 'अ' को वृद्धि करके और चकार को कुत्व करके = पाक्यम्। मृज् + ण्यत् / मृजेर्वृद्धि: से वृद्धि और 'चजो: कु घिण्ण्यतो:' से कुत्व करके = मार्ग्यम्।

पाणि + भ्याम् + सृज् + ण्यत् - 'उपपदमतिङ्' से समास करके - 'सुपो धातुप्रातिपदिकयो:' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - पाणि + सृज् + य / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा को गुण करके तथा ज् को कुत्व करके - पाणि + सर्ग् + य = पाणिसर्ग्य - स्त्रीत्व की विवक्षा में 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् प्रत्यय करके - पाणिसर्ग्य + टाप् = पाणिसर्ग्या रज्जु:। इसी प्रकार - सम् + अव + सृज् + ण्यत् = समवसर्ग्या रज्जु:।

जो चकारान्त और जकारान्त धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर सेट् हैं, उन्हें 'चजो: कु घिण्ण्यतो:' सूत्र से कुत्व नहीं होता है। यथा - कूज् + ण्यत् = कूज्यम् / खर्ज् + ण्यत् = खर्ज्यम् / गर्ज् + ण्यत् = गर्ज्यम्। परि + व्रज् + ण्यत् = परिव्राज्यम्।

ण्यत् प्रत्यय परे होने पर कुत्व के अपवाद -

वञ्चेर्गतौ - (७.३.६३)- गति अर्थ में वर्तमान जो वञ्चु धातु, उसे कवगदिश नहीं होता। वञ्च् + ण्यत् = वञ्च्यम्। गति अर्थ न होने पर कुत्व होकर - वङ्क्यम्।

ण्य आवश्यके -(७.३.६५) - जिन धातुओं को कुत्व प्राप्त है, उन्हें भी कुत्व नहीं होता है, आवश्यक अर्थ में ण्यत् प्रत्यय परे होने पर।

अवश्य + अम् + पच् + ण्यत् / 'उपपदमतिङ्' से समास करके - 'सुपो धातुप्रातिपदिकयो:' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - 'अत उपधाया:' से उपधा के

अ को वृद्धि करके, तथा इस सूत्र से कुत्वाभाव होकर - अवश्यपाच्यम्। अवश्यवाच्यम् / अवश्यरेच्यम्। आवश्यक अर्थ न होने पर कुत्व होकर - पाक्यम्, वाक्यम्, रेक्यम्।

विशेष - यहाँ 'अवश्य' शब्द का होना जरूरी नहीं है, अर्थ में आवश्यकता होना चाहिये।

यजयाचरुचप्रवचर्चश्च - (७.३.६६) - यज्, याच्, रुच्, प्रवच्, ऋच्, इन्हें ण्यत् प्रत्यय परे होने पर, कवर्गादेश नहीं होता है।

याच् + ण्यत् = याच्यम्। यज् + ण्यत् / अत 'उपधायाः' से उपधा के अ को वृद्धि होकर, तथा इस सूत्र से कुत्वाभाव होकर - याज्यम्। इसी प्रकार - प्र + वच् - प्रवाच्यम्। (यह ग्रन्थविशेष की संज्ञा है।) रुच् + ण्यत् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा को गुण करके - रोच्यम्। इसी प्रकार - ऋच् + ण्यत् - अर्च्यम्।

विशेष - १. यद्यपि ऋच् धातु से 'ऋदुपधात्' सूत्र से क्यप् प्राप्त है, किन्तु इसी सूत्र के ज्ञापन से ऋच् धातु से ण्यत् प्रत्यय होता है। २. 'निष्ठायामनिट.' इस वार्तिक को मानने से यहाँ याच्, रुच्, ऋच्, धातु सेट् होने से प्रत्याख्यात हैं।)

त्यजेश्च - (वा. ७.३.६६) - त्यज् धातु यद्यपि निष्ठा में अनिट् है, किन्तु ण्यत् प्रत्यय परे होने पर इसे कुत्व नहीं होता है। त्यज् + ण्यत् / 'अत उपधायाः' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - त्याज्यम्।

अत्यावश्यक - जो 'योज्यः' 'भाज्यः' आदि शब्द लोक में बिना कुत्व के दिखते हैं, उन्हें णिजन्त धातुओं से यत् प्रत्यय करके बने हुए रूप समझना चाहिये।

वचोऽशब्दसंज्ञायाम् - (७.३.६७) - वच् धातु से ण्यत् प्रत्यय परे होने पर, शब्दसंज्ञा अर्थ में वच् धातु को कुत्व होता है।

शब्दसंज्ञा अर्थ होने पर कुत्व होकर - वच् + ण्यत् / 'अत उपधायाः' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - वाच् + ण्यत् / 'चजोः कु.' से कुत्व होकर - वाक्यम्।

शब्दसंज्ञा अर्थ न होने पर, वच् धातु को कुत्व न होकर - वच् + ण्यत् / अत उपधायाः से उपधा के अ को वृद्धि होकर - वाच्यम्।

प्रयोज्यनियोज्यौ शक्यार्थे -(७.३.६८) - शक्य अर्थ में प्रयोज्य और नियोज्य शब्द, कुत्व न होकर निपातन से बनते हैं। शक्यः प्रयोक्तुम् - प्रयोज्यः / शक्यो नियोक्तुम् - नियोज्यः। शक्यार्थ न होने पर कुत्व होकर प्रयोग्यः, नियोग्यः रूप बनते हैं।

भोज्यं भक्ष्ये - (७.३.६९) - भक्ष्य अर्थ में कुत्व न होकर भोज्य शब्द निपातन

से बनता है। भोज्यः ओदनः / भोज्या यवागूः।

भोज्य अर्थ न होने पर कुत्व होकर भोग्यः कम्बलः, आदि रूप बनते हैं।

ण्यत् प्रत्यय लगाकर निपातन से बने हुए शब्द

अमावस्यदन्यतरस्याम् - (३.१.१२२) - अमापूर्वक वस् धातु से काल अधिकरण में वर्तमान होने पर ण्यत् प्रत्यय होता है तथा अत उपधाया से होने वाली वृद्धि का विकल्प से निपातन किया जाता है। सह वसतोऽस्मिन् काले सूर्यचन्द्रमसौ अमावास्या / अमावस्या।

छन्दसि निष्टर्क्यदेवहूयप्रणीयोन्नीयोच्छिष्यमर्यस्तर्याध्वर्यखन्यखान्यदेवयज्या-पृच्छ्यप्रतिषीव्यब्रह्मवाद्यभाव्यस्ताव्योपचाय्यपृडानि - (३.१.१२३) - निष्टर्क्यम्। देवहूयः। प्रणीयः। उन्नीयः। उच्छिष्यम्। मर्यः। स्तर्या। ध्वर्यः। खन्यः। खान्यः। देवयज्या। आपृच्छ्यः। प्रतिषीव्यः। ब्रह्मवाद्यः। भाव्यः। स्ताव्यः। उपचाय्यपृडम्। वेद में ये सारे शब्द निपातन से बनते हैं।

आनाय्योऽनित्ये - (३.१.१२७) - आङ्पूर्वक नी धातु से ण्यत् प्रत्यय करके 'आनाय्यः' शब्द निपातन किया जाता है। आङ् + नी + ण्यत् - आनाय्यो दक्षिणाग्निः।

प्रणाय्योऽसंमतौ - (३.१.१२८) - असम्मति अर्थ अभिधेय होने पर प्र उपसर्गपूर्वक नी धातु से ण्यत् प्रत्यय तथा आय् आदेश निपातित होते हैं। प्र + नी + ण्यत् - प्रणाय्यः चौरः। असम्मति का अर्थ है पूजा का अभाव, चोर निन्दित है इसीलिये ण्यत् का विधान किया गया है। यहाँ पर 'उपसर्गादसमासे' सूत्र से णत्व हुआ है।

पाय्यसांनाय्यनिकाय्यधाय्यामानहविर्निवाससामिधेनीषु - (३.१.१२९) - पाय्य, सान्नाय्य, निकाय्य और धाय्य शब्द मान, हवि, निवास, सामिधेनी अर्थ अभिधेय होने पर निपातन किये जाते हैं।

सम् + नी	+	ण्यत्	-	सांनाय्यं हविः	=	सांन्नाय्य नामक हंवि।
नि + चि	+	ण्यत्	-	निकाय्यः	=	निवास।
डुधाञ्	+	ण्यत्	-	धाय्या	=	एक ऋचा का नाम।
माङ्	+	ण्यत्	-	पाय्यं मानम्	=	तौलने के बाँट।

क्रतौ कुण्डपाय्यसंचाय्यौ - (३.१.१३०) - क्रतु अभिधेय होने पर तृतीयान्त कुण्ड शब्द उपपद होने पर पा धातु से अधिकरण अर्थ में यत् प्रत्यय तथा युक् का आगम निपातन करके कुण्डपाय्य शब्द बनता है और सम् उपसर्गपूर्वक चिञ् धातु से ण्यत् प्रत्यय करके आयादेश निपातन करके संचाय्य शब्द बनता है।

कुण्डेन पीयतेऽस्मिन् सोम इति कुण्डपाय्यः क्रतुः = वह यज्ञ जिसमें कुण्ड के द्वारा सोम पिया जाता है। सञ्चीयतेऽस्मिन् सोम इति संचाय्यः क्रतुः = वह यज्ञ जिसमें सोम का संचय किया जाता है। क्रतु अर्थ न होने पर कुण्डपानम् और संचेयः ही बनेंगे।

अग्नौ परिचाय्योपचाय्यसमूह्याः - (३.१.१३१) - अग्नि अभिधेय होने पर परि उपसर्गपूर्वक चि धातु से ण्यत् प्रत्यय तथा आयादेश निपातन करके 'परिचाय्यः' शब्द बनता है। इसी प्रकार उप उपसर्गपूर्वक चि धातु से ण्यत् प्रत्यय तथा आयादेश निपातन करके 'उपचाय्यः' शब्द बनता है। सम् उपसर्गपूर्वक वह् धातु से ण्यत् प्रत्यय करके तथा सम्प्रसारण और दीर्घ निपातन करके 'समूह्यम्' शब्द बनता है।

परिचीयतेऽस्मिन् परिचाय्यः = वह स्थान, जहाँ यज्ञ की अग्नि स्थापित की जाती है। उपचीयतेऽसौ इति उपचाय्यः = यज्ञ में संस्कार की गई आग। समूह्यं चिन्वीत पशुकामः = पशु की कामना करने वाला समूह्य नामक यज्ञ की अग्नि का चयन करे।

चित्याग्निचित्येषु - (३.१.१३२) - अग्नि अभिधेय होने पर चिञ् धातु से कर्म अर्थ में क्यप् प्रत्यय निपातन करके तथा 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' सूत्र तुक् का आगम करके चित्य तथा अग्निचित्या शब्द बनते हैं। यह क्यप् प्रत्यय यत् का अपवाद है।

उकारान्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय

लू + ण्यत् - 'अचो ञ्णिति' से वृद्धि करके - लौ + य -

धातोस्तन्निमित्तस्यैव (८.१.८०) - धातु को निमित्त मानकर बने हुए जो ओ, औ, उन्हें क्रमशः अव्, आव् आदेश होते है, यकारादि प्रत्यय परे होने पर।

लौ + य / 'धातोस्तन्निमित्तस्यैव' सूत्र से औ को आव् आदेश करके - लाव् + य = लाव्यम् (काटने योग्य)। इसी प्रकार पू + ण्यत् - पाव्यम्। आ + सु + ण्यत् = आसाव्यम्। यु + ण्यत् = याव्यम्, आदि बनाइये।

ऋकारान्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय

कृ + ण्यत् - 'अचो ञ्णिति' से वृद्धि करके - कार् + य - कार्यम्। इसी प्रकार - हृ + ण्यत् - हार्यम् आदि बनाइये।

अदुपध धातुओं से ण्यत् प्रत्यय

वप् + ण्यत् - 'अत उपधायाः' से वृद्धि करके - वाप् + य = वाप्यम्। इसी प्रकार रप् + ण्यत् = राप्यम्। लप् + ण्यत् = लाप्यम्। त्रप् + ण्यत् = त्राप्यम्। आ + चम् + ण्यत् = आचाम्यम्।

इदुपध धातुओं से ण्यत् प्रत्यय

लिख् + ण्यत् - 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा को गुण करके - लेख्यम्।

उदुपध धातुओं से ण्यत् प्रत्यय

बुध् + ण्यत्- 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा को गुण करके - बोध्यम्।

ऋदुपध धातुओं से ण्यत् प्रत्यय

ऋच् + ण्यत् - 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा को गुण करके - अर्च्यम्।

ण्युट् प्रत्यय

'ण्युट् च' सूत्र से यह प्रत्यय केवल 'गै - गा' धातु से लगता है।

ण्युट् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ट् की तथा 'चुटू' सूत्र से ण् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके 'यु' शेष बचाइये और 'युवोरनाकौ' सूत्र से प्रत्यय के यु के स्थान पर 'अन' आदेश कीजिये।

यह ध्यान रखें कि ण् की इत् संज्ञा होने से यह प्रत्यय णित् है।

गै + ण्युट् / 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से एजन्त धातु के 'ऐ' के स्थान पर 'आ' आदेश करके - गा + अन - 'आतो युक् चिण्कृतोः' सूत्र से आदन्त धातु को युक् का आगम करके - गा + युक् + अन - गा + य् + अन = गायनः।

प्रत्यय के टित् होने का फल यह है कि इस शब्द का स्त्रीलिङ्ग बनाते समय 'टिड्ढाणञ्द्वयसज्दघ्नञ्मात्रच्तयप्ठक्ठञ्कञ्क्वरपः' सूत्र से इससे ङीप् प्रत्यय होकर - गायन + ङीप् = गायनी, बनेगा।

णिनि प्रत्यय

णिनि प्रत्यय सारे धातुओं से नहीं लगता है।

णिनि प्रत्यय में 'चुटू' सूत्र से ण् की तथा उ'पदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इ की इत् संज्ञा करके तस्य लोपः सूत्र से उनका लोप करके 'इन्' शेष बचाइये।

इसमें ण् की इत् संज्ञा हुई है अतः यह प्रत्यय णित् है, यह ध्यान रखिये।

णित् होने के कारण इसे भी धातुओं में ठीक उसी विधि से लगाया जायेगा, जिस विधि से धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाया गया है। यथा -

आकारान्त धातु - शतं + दा + णिनि / शतं + दा + इन् / 'आतो युक् चिण्कृतोः' सूत्र से युक् का आगम करके - शतं + दा + युक् + इन् - शतं दायिन् / प्रथमा एकवचन में - शतं दायी। इसी प्रकार सहस्रं दायी।

विशेष - ध्यान रहे कि शतम्, सहस्त्रम् आदि उपपद नहीं हैं, इसलिये इनकी विभक्ति का लुक् नहीं हुआ है।

कषाय + ङस् + पा + णिनि / 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - कषाय + पा + इन् / 'आतो युक् चिण्कृतोः' सूत्र से युक् का आगम करके - कषाय + पा + युक् + इन् - कषायपायिन् / प्रथमा एकवचन में - कषायपायिन् + सु = कषायपायी। इसी प्रकार क्षीरपायी।

इकारान्त धातु - स्थण्डिल + ङि + शी + णिनि / 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - स्थण्डिल + शी + णिनि / अचो ञ्णिति से ई को वृद्धि करके - स्थण्डिल + शै + इन् / 'एचोऽयवायावः' से आय् आदेश करके - स्थण्डिल + शाय् + इन् - स्थण्डिलशायिन् / प्रथमा एकवचन में स्थण्डिलशायी।

ऋकारान्त धातु - अवश्यम् + कृ + णिनि / अचो ञ्णिति से ऋ को वृद्धि करके - अवश्यं + कार् + इन् / अवश्यंकारिन् / प्रथमा एकवचन में - अवश्यंकारी।

अदुपध धातु - ग्रह् + णिनि / ग्रह् + इन् / 'अत उपधायाः' सूत्र से उपधा के अकार को वृद्धि करके - ग्राह् + इन् - ग्राहिन् / प्रथमा एकवचन में ग्राही।

दर्शनीय + ङस् + मन् + णिनि / 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - दर्शनीय + मन् + इन् / 'अत उपधायाः' सूत्र से उपधा के 'अ' को वृद्धि करके - दर्शनीय + मान् + इन् - दर्शनीयमानिन् - दर्शनीयमानी।

इसी प्रकार अग्निष्टोम + टा + यज् + णिनि से अग्निष्टोमयाजी बनाइये।

हन् धातु - कुमार + ङस् + हन् + णिनि / 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - कुमार + हन् + इन् / 'हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु' सूत्र से हन् धातु के 'ह' को कुत्व करके - कुमार + घन् + इन् / 'हनस्तोऽचिण्णलोः' सूत्र से हन् के न् को त् आदेश करके - कुमार + घत् + इन् - 'अत उपधायाः' से उपधा के 'अ' को वृद्धि करके - कुमार + घात् + इन् - कुमारघातिन् - प्रथमा एकवचन में कुमारघाती।

इसी प्रकार - शिरस् + ङस् + हन् + णिनि / शिरस् शब्द को निपातन से शीर्ष आदेश करके पूर्ववत् - शीर्षघाती बनाइये।

पितृव्य + ङस् + हन् + णिनि / 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो

धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - 'हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु' सूत्र से हन् धातु के 'ह' को कुत्व करके - पितृव्य + घन् + इन् / 'हनस्तोऽचिण्णलोः' सूत्र से हन् के न् को त् आदेश करके - पितृव्य + घत् + इन् / 'अत उपधायाः' से उपधा के 'अ' को वृद्धि करके - पितृव्य + घात् + इन् - पितृव्यघातिन् / प्रथमा एकवचन में पितृव्यघाती।

इसी प्रकार - मातुलघाती।

उदुपध धातु - उष्ण + ङस् + भुज् + णिनि / 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - उष्ण + भुज् + इन् - 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा को गुण करके - उष्ण + भोज् + इन् - उष्णभोजिन् - प्रथमा एकवचन में उष्णभोजी।

इसी प्रकार - उष्ट्र + सु + क्रुश् + णिनि / 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - उष्ट्र + क्रुश् + णिनि - 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा को गुण करके - उष्ट्र + क्रोश् + इन् - उष्ट्रक्रोशिन् - प्रथमा एकवचन में उष्ट्रक्रोशी। इसी प्रकार - ध्वाङ्क्ष + सु + रु + णिनि = ध्वाङ्क्षरावी।

घिनुण् प्रत्यय

घिनुण् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ण् की, 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से उ की तथा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से घ् की इत् संज्ञा करके, 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके, 'इन्' शेष बचाइये। ण् की इत् संज्ञा होने से यह प्रत्यय णित् है तथा घ् की इत् संज्ञा होने से यह प्रत्यय घित् भी है, इसलिये इसे धातुओं में ठीक उसी विधि से लगाया जायेगा, जिस विधि से धातुओं में घञ् प्रत्यय लगाया गया है। **घित् होने के कारण यथाप्राप्त कुत्व होगा। कुत्वविधि को से ९३ से ९४ पृष्ठों पर देखिये।**

उकारान्त धातु - प्रद्रु + घिनुण् / अचो ञ्णिति सूत्र से अजन्त अङ्ग को वृद्धि करके - प्रद्रौ + इन् / 'एचोऽयवायावः' सूत्र से औ को आव् आदेश करके - प्रद्राव् + इन् - प्रद्राविन् / प्रथमा एकवचन में प्रद्रावी बनाइये।

ऋकारान्त धातु - परिसृ + घिनुण् / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से अजन्त अङ्ग को वृद्धि करके - परि + सार् + इन् - परिसारिन् / प्रथमा एकवचन में परिसारी बनाइये।

प्रसृ + घिनुण् / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से अजन्त अङ्ग को वृद्धि करके - प्रसार् + इन् - प्रसारिन् / प्रथमा एकवचन में प्रसारी बनाइये।

मान्त अदुपध धातु - शम् + घिनुण् / शम् + इन् / 'अत उपधायाः' से उपधा के अ को वृद्धि प्राप्त हुई, किन्तु 'नोदात्तोपदेशस्य मान्तस्यानाचमेः' सूत्र से उस सेट्

मान्त धातु को वृद्धि का निषेध होकर - शम् + इन् - शमिन् / प्रथमा एकवचन में - शमी। इसी प्रकार - तम् + घिनुण् - तमी / दम् + घिनुण् - दमी / श्रम् + घिनुण् - श्रमी / भ्रम् + घिनुण् - भ्रमी / क्षम् + घिनुण् - क्षमी / क्लम् + घिनुण् - क्लमी।

त्यज्, भज् धातु - त्यज् + घिनुण् / 'अत उपधाया:' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - त्याज् + इन् / घित् प्रत्यय होने के कारण 'चजो: कु घिण्ण्यतो:' सूत्र से ज् को कुत्व करके - त्याग् + इन् - त्यागिन् / प्रथमा एकवचन में त्यागी बनाइये।

इसी प्रकार - भज् + घिनुण् से भागी बनाइये।

हन् धातु - अभि + हन् + घिनुण् / अभिहन् + इन् / 'हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु' सूत्र से ह को कुत्व करके - अभिघन् + इन् / 'हनस्तोऽचिण्णलो:' सूत्र से न् को त् करके - अभिघत् + इन् / 'अत उपधाया:' सूत्र से उपधा के अ को वृद्धि होकर - अभिघात् + इन् - अभिघातिन् / प्रथमा एकवचन में अभिघाती बनाइये।

शेष अदुपध धातु - प्रमद् + इन् / अत उपधाया: सूत्र से उपधा के अ को वृद्धि होकर - प्रमादिन् - प्रमादी / इसी प्रकार - उन्मादी।

इसी प्रकार - वि + लस् + घिनुण - विलासी / विकष् + घिनुण् -विकाषी / प्रलप् + घिनुण् - प्रलापी / प्रमथ् + घिनुण् - प्रमाथी।

प्रवद् + घिनुण् - प्रवादी / प्रवस् + घिनुण् - प्रवासी / अप + लष् + घिनुण् - अपलाषी / आ + यम् + घिनुण् - आयामी। आ + यस् + घिनुण् - आयासी / संज्वर् + घिनुण् - संज्वारी / अतिचर् + घिनुण् - अतिचारी / अपचर् + घिनुण् - अपचारी / परिरट् + घिनुण् - परिराटी। परिवद् + घिनुण् - परिवादी / परिदह् + घिनुण् - परिदाही।

इदुपध धातु - विविच् + घिनुण् - 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के इ को गुण करके - विवेच् + इन् / घित् प्रत्यय होने के कारण 'चजो: कु घिण्ण्यतो:' सूत्र से च् को कुत्व करके - विवेक् + इन् - विवेकिन् - प्रथमा एकवचन में विवेकी।

परिदेव् + घिनुण् / परिदेव् + इन् - परिदेविन् - परिदेवी। परिक्षिप् + घिनुण् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के इ को गुण करके - परिक्षेप् + इन् - परिक्षेपिन् / प्रथमा एकवचन में परिक्षेपी।

उदुपध धातु - अनु + रुध् + घिनुण् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के ऋ को गुण करके - अनुरोध् + इन् - अनुरोधिन् - प्रथमा एकवचन में अनुरोधी।

परिमुह् + घिनुण् - परिमोही / दुष् + घिनुण् - दोषी / द्विष् + घिनुण् - द्वेषी / द्रुह् + घिनुण् - द्रोही / दुह् + घिनुण् - दोही / आमुष् + घिनुण् - आमोषी, बनाइये। इसी प्रकार - युज् + घिनुण् - योगी।

ऋदुपध धातु - सम् पृच् + घिनुण् / संपृच् + इन् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के ऋ को गुण करके - संपर्च् + इन् - घित् प्रत्यय होने के कारण 'चजोः कु घिण्ण्यतोः' सूत्र से च् को कुत्व करके - संपर्क् + इन् - संपर्किन् - प्रथमा एकवचन में संपर्की। इसी प्रकार - संसृज् + घिनुण् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के ऋ को गुण करके - संसर्ज् + इन् / घित् प्रत्यय होने के कारण 'चजोः कु घिण्ण्यतोः' सूत्र से ज् को कुत्व करके - संसर्ग् + इन् - संसर्गिन् - प्रथमा एकवचन में संसर्गी।

रञ्ज् धातु - रञ्ज् + घिनुण् -

घिनुणि च रञ्जेरुपसंख्यानम् कर्तव्यम् (वा.) - घिनुण् प्रत्यय परे होने पर रञ्ज् धातु की उपधा के न् का लोप होता है।

इस वार्तिक से न् का लोप करके - रज् + इन् / 'अत उपधायाः' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - राज् + इन् / घित् प्रत्यय होने के कारण 'चजोः कु घिण्ण्यतोः' सूत्र से ज् को कुत्व करके - राग् + इन् - रागिन् / प्रथमा एकवचन में रागी बनाइये।

शेष धातु - इन्हें कुछ मत कीजिये -

आक्रीड् + घिनुण् / आक्रीड् + इन् / आक्रीडिन् - आक्रीडी।
कत्थ् + घिनुण् / कत्थ् + इन् / कत्थिन् - कत्थी।

ण प्रत्यय

ण प्रत्यय में 'चुटू' से ण् की इत् संज्ञा करके, 'तस्य लोपः' सूत्र से उसका लोप करके, 'अ' शेष बचाइये। ण् की इत् संज्ञा होने से यह प्रत्यय णित् है। अतः इसे धातुओं में उसी विधि से लगाइये, जिस विधि से धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाया गया है। यथा -

आकारान्त तथा एजन्त धातु - दा + ण / 'आतो युक् चिण्कृतोः' ये युक् का आगम करके - दा + युक् + अ = दायः।

इसी प्रकार धा + ण = धायः / अव + षो + ण / 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से एच् को आ आदेश करके - अव + सा + अ / 'आतो युक् चिण्कृतोः' ये युक् का आगम करके - अवसा + युक् + अ = अवसायः आदि।

अव + श्यै + ण / 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से एच् को आ आदेश करके - अवश्या + अ / 'आतो युक् चिण्कृतोः' ये युक् का आगम करके - अवश्या + युक् +

अ = अवश्याय: । इसी प्रकार प्रतिश्याय: ।

इकारान्त धातु - अति + इ + ण / 'अचो ञ्णिति' से वृद्धि करके - अति + ऐ + अ / आय् आदेश करके - अत्याय: ।

इसी प्रकार - नी + ण / 'अचो ञ्णिति' से वृद्धि करके - नाय् + अ - नाय: ।

उकारान्त धातु - आस्रु + ण / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से अजन्त अङ्ग को वृद्धि करके - आस्रौ + अ / 'एचोऽयवायाव:' सूत्र से आव् आदेश करके - आस्राव: ।

इसी प्रकार - संस्रु + ण - संस्राव: । दु + ण - दाव: ।

ऋकारान्त धातु - अव + हृ + ण / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से अजन्त अङ्ग को वृद्धि करके - अव + हार् + अ - अवहार: ।

अदुपध धातु - ज्वल् + ण / ज्वल् + अ / 'अत उपधाया:' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - ज्वाल् + अ = ज्वाल: / श्वस् + ण / 'अत उपधाया:' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - श्वास् + अ - श्वास: । इसी प्रकार - ग्रह् + ण / 'अत उपधाया:' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - ग्राह् + अ - ग्राह: । इसी प्रकार - व्यध् + ण / 'अत उपधाया:' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - व्याध: ।

इदुपध धातु - लिह् + ण / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के ऋ को गुण करके - लेह् + अ - लेह: ।

श्लिष् + ण / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के ऋ को गुण करके - श्लेष् + अ - श्लेष: ।

उदुपध धातु - रुह् + ण / रुह् + अ / 'पुगन्तलघूपधस्य च' से उपधा के उ को गुण होकर - रोह् + अ = रोह: ।

शेष धातु - शेष धातुओं में कुछ नहीं कीजिये - मांस + ङस् + शील् + ण - 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयो:' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - मांस + शील् + अ = मांसशील: ।

इसी प्रकार - मांस + ङस् + भक्ष् + ण = मांसभक्ष: / सुख + अम् + प्रति + ईक्ष् + ण - सुखप्रतीक्ष: / बहु + क्षम् + ण = बहुक्षम: ।

मांस + ङस् + कामि + ण / यह णिजन्त धातु है, अत: 'णेरनिटि' सूत्र से णिच् (इ) का लोप करके - मांस + काम् + अ = मांसकाम: ।

अण् प्रत्यय

अण् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ण् की इत् संज्ञा करके, 'तस्य लोप:' सूत्र से

उसका लोप करके, 'अ' शेष बचाइये। ण् की इत् संज्ञा होने से यह प्रत्यय णित् है, इसलिये इसे धातुओं में ठीक उसी विधि से लगाया जायेगा, जिस विधि से धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाया गया है। धातुओं से अण् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

आकारान्त धातु - स्वर्ग + ङस् + ह्वा + अण् / 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - स्वर्ग + ह्वा + अण् / 'आतो युक् चिण्कृतोः' सूत्र से युक् का आगम करके - स्वर्ग + ह्वा + युक् + अण् / स्वर्ग + ह्वा + य् + अ = स्वर्गह्वायः। इसी प्रकार - तन्तु + ङस् + वा +, अण् से तन्तुवायः / धान्य + ङस् + मा + अण् से धान्यमायः आदि बनाइये।

कम्बल + ङस् + दा + अण् / 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - कम्बल + दा + अण् / 'आतो युक् चिण्कृतोः' सूत्र से युक् का आगम करके - कम्बल + दा + युक् + अण् - कम्बल + दा + य् + अ = कम्बलदायः।

इकारान्त धातु - वेद + ङस् + अधि + इ + अण् / 'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - वेद + अधि + इ + अ / अचो ञ्णिति से वृद्धि करके - वेद + अधि + ऐ + अ / 'एचोऽयवायावः' से आय् आदेश करके - वेद + अधि + आय् + अ = वेदाध्यायः।

उकारान्त धातु - काण्ड + ङस् + लू + अण् / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके तथा 'अचो ञ्णिति' सूत्र से वृद्धि करके - काण्ड + लौ + अ / एचोऽयवायावः सूत्र से औ को आव् आदेश करके - काण्ड + लाव् + अ = काण्डलावः।

ऋकारान्त धातु - कुम्भ + ङस् + कृ + अण् / 'उपपदमतिङ्' से समास करके, 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके तथा 'अचो ञ्णिति' से वृद्धि करके - कुम्भ + कार् + अ - कुम्भकारः।

दार्वाघाटः / चार्वाघाटः -

दारावाहनोऽणन्तस्य च टः संज्ञायाम् (वा.) - दारु शब्द के उपपद में होने पर आङ्पूर्वक हन् धातु से अण् प्रत्यय होता है तथा अन्त को ट आदेश भी होता है।

दारु आहन्ति दार्वाघाटः। दारु + आ + हन् + अण्/'हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु' सूत्र से ह को कुत्व करके-दारु + आ + घन् + अ/'हनस्तोऽचिण्णलोः' सूत्र से न् को त् आदेश करके और 'अत उपधायाः' से उपधा के 'अ' को वृद्धि करके - दारु + आ

+ घात् + अ - 'दारावाहनो-' इस वार्तिक से अन्त को ट आदेश करके - दार्वाघाटः।

चारौ वा (वा.) - चारु शब्द के उपपद में होने पर आङ्पूर्वक हन् धातु से अण् प्रत्यय होता है तथा अन्त को विकल्प से ट आदेश होता है।

चारु आहन्ति चार्वाघाटः, चार्वाघातः।

वर्णसंघातः, वर्णसंघाटः / पदसंघातः, पदसंघाटः -

कर्मणि समि च (वा.) - कर्म उपपद में होने पर सम्पूर्वक हन् धातु से अण् प्रत्यय होता है तथा विकल्प से टकारान्तादेश भी होता है।

वर्णान् संहन्ति वर्णसंघाटः, वर्णसंघातः। पदानि संहन्ति पदसंघाटः, पदसंघातः।

निपातन से बनने वाले शब्द -

न्यङ्क्वादीनां च (७.३.५३) - न्यङ्क्वादिगण पठित शब्दों में कुत्व निपातन होता है। मांसपाकः / श्वपाकः / कपोतपाकः / उलूकपाकः।

यद्यपि ये शब्द कर्म उपपद में रहते हुए पच् धातु से अण् प्रत्यय करके बने हैं, किन्तु 'चजोः कु घिण्ण्यतोः' सूत्र से केवल घित् और ण्यत् प्रत्यय परे होने पर होने वाला कुत्व यहाँ अण् प्रत्यय में 'न्यङ्क्वादीनां च' सूत्र से निपातन से हुआ है।

अन्य कार्य ण्वुल् के समान ही होंगे।

उण् प्रत्यय

उण् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से ण् की इत्संज्ञा होकर उ शेष बचता है। यह प्रत्यय णित् है। णित् होने के कारण -

वा + उण् - आतो युक्चिण्कृतोः सूत्र से युक् का आगम करके - वाय् + उ - वायुः। इसी प्रकार - पायुः / जायुः / मायुः।

कृ + उण् - अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके - कार् + उ - कारुः।

उकञ् प्रत्यय

उकञ् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ञ् की इत् संज्ञा करके, 'तस्य लोपः' सूत्र से उसका लोप करके, 'उक' शेष बचाइये। ञ् की इत् संज्ञा होने से यह प्रत्यय ञित् है, इसलिये इसे धातुओं में ठीक ण्वुल् प्रत्यय के समान लगाइये।

आकारान्त धातु -उप + स्था + उकञ् / 'आतो युक् चिण्कृतोः' सूत्र से युक् का आगम करके - उप + स्था + युक् + उक = उपस्थायुकः।

इकारान्त धातु - कामि + उकञ् / 'णेरनिटि' से णिच् (इ) का लोप करके

- काम् + उक = कामुकः।

उकारान्त धातु - प्र + भू + उकञ् / 'अचो ञ्णिति' से वृद्धि करके - प्र + भौ + उक / 'एचोऽयवायावः' सूत्र से औ को आव् आदेश करके - प्र भाव् + उक = प्रभावुकः।

ऋकारान्त धातु - किम् + शॄ + उकञ् / 'अचो ञ्णिति' से वृद्धि करके - किम् + शार् + उक = किंशारुकः।

अदुपध धातु - अप + लष् + उकञ् / 'अत उपधायाः' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - अपलाष् + उक = अपलाषुकः। इसी प्रकार - प्रपत् + उकञ् / 'अत उपधायाः' से उपधा के अ को वृद्धि करके - प्रपात् + उक = प्रपातुकः।

आ + हन् + उकञ् / 'हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु' सूत्र से ह को कुत्व करके - आघन् + उक / 'हनस्तोऽचिण्णलोः' सूत्र से न् को त् करके - आघत् + उक / 'अत उपधायाः' सूत्र से उपधा के अ को वृद्धि होकर - आघात् + उक - आघातुकः। आ + गम् + उकञ् / 'अत उपधायाः' से उपधा के अ को वृद्धि करके - आगाम् + उक = आगामुकः।

ऋदुपध धातु - प्र + वृष् + उकञ् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के ऋ को गुण करके - प्र + वर्ष् + उक = प्रवर्षुकः।

णिजन्त धातु - कामि + उकञ् / 'णेरनिटि' सूत्र से णिच् (इ) का लोप करके - काम् + उक = कामुकः।

ञ्युट् प्रत्यय

ञ्युट् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ट् की इत् संज्ञा करके, 'चुटू' सूत्र से ञ् की इत् संज्ञा करके तथा 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके, 'यु' शेष बचाइये। 'युवोरनाकौ' सूत्र से यु के स्थान पर 'अन' आदेश कीजिये। ञित् होने के कारण इसे धातुओं में ठीक उसी विधि से लगाइये, जिस विधि से धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाया गया है।

हव्य + ङस् + वह् + ञ्युट् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - हव्य + वह् + ञ्युट् / 'अत उपधायाः' से उपधा के अ को वृद्धि होकर - हव्य + वाह् + अन = हव्यवाहनः।

इसी प्रकार - कव्यवाहनः / पुरीषवाहनः / पुरीष्यवाहनः आदि।

इञ् प्रत्यय

ञ् की इत् संज्ञा होने से यह प्रत्यय ञित् है, इसलिये इसे धातुओं में ठीक उसी

विधि से लगाया जायेगा, जिस विधि से धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाया गया है।

कृ + इञ् / अचो ञ्णिति से वृद्धि करके - कार् + इ = कारिः।

इनुण् प्रत्यय

इनुण् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ण् की तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से उ की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके 'इन्' शेष बचाइये।

इसमें ण् की इत् संज्ञा हुई है अतः यह प्रत्यय णित् है। णित् होने के कारण इनुण् प्रत्यय को धातुओं में ठीक उसी विधि से लगाया जायेगा, जिस विधि से धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाया गया है।

सम् + कूट् + इनुण् / सम् + कूट् + इन् - संकूटिन् - संकूटिन्।

अणिनुणः (५.४.१५) – जिससे अभिविधि अर्थ में भाव में इनुण् प्रत्यय विहित होता है, उस प्रातिपदिक से स्वार्थ में 'अण्' प्रत्यय लगता है।

ध्यान रहे कि यह 'अण्' प्रत्यय तद्धित प्रत्यय है।

संकूटिन् + अण् / 'तद्धितेष्वचामादेः' सूत्र से आदि अच् को वृद्धि होकर - साम् + कूटिन् + अ = सांकूटिन / प्रथमा एकवचन में सांकूटिनम् वर्तते। (सब ओर से दाह है।)

इसी प्रकार - सम् + रु + इनुण् / सम् + रु + इन् / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से वृद्धि होकर - सं + रौ + इन् / आव् आदेश करके - संराविन् / 'अणिनुणः' सूत्र से स्वार्थ में 'अण्' प्रत्यय करके = सांराविन - णत्व करके सांराविण - प्रथमा एकवचन में सांराविणम् वर्तते। (सब ओर से शोर मचा है)।

इसी प्रकार - सम् + द्रु + इनुण् / सम् + द्रु + इन् / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से वृद्धि होकर - सं + द्रौ + इन् / आव् आदेश करके - संद्राविन् / 'अणिनुणः' सूत्र से स्वार्थ में 'अण्' प्रत्यय करके = सांद्राविन - णत्व करके सांद्राविण - प्रथमा एकवचन में - सांद्राविणं वर्तते (सब ओर से भगदड़ है) आदि।

ण्वि प्रत्यय

ण्वि प्रत्यय में 'चुटू' सूत्र से ण् की तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इ की इत् संज्ञा करके तस्य लोपः सूत्र से उनका लोप कीजिये। अब जो अपृक्त व् बचा, उसका वेरपृक्तस्य सूत्र से लोप कर दीजिये। इस प्रकार इस प्रत्यय में कुछ भी शेष नहीं बचता।

जब प्रत्यय में कुछ भी शेष नहीं बचे, तो कहते हैं, कि प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हो गया।

अनुबन्धों का लोप हो जाने के बाद भी अनुबन्ध अपना फल तो देते ही हैं। इसमें ण् की इत् संज्ञा होने से यह प्रत्यय णित् है, इसलिये इसे धातुओं में ठीक उसी विधि से लगाया जायेगा, जिस विधि से धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाया गया है।

अर्ध + ङस् + भज् + ण्वि / ण्वि का सर्वापहारी लोप करके - अर्ध + भज् - उपपदमतिङ् से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - अर्ध + भज् / अत उपधायाः से उपधा के 'अ' को वृद्धि करके - अर्ध + भाज् - अर्धभाज् / प्रथमा एकवचन में अर्धभाक्।

तुरा + सह् + ण्वि / ण्वि का सर्वापहारी लोप करके - तुरा + ङस् + सह् / उपपदमतिङ् से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - तुरा + सह् / 'अत उपधायाः' से उपधा के 'अ' को वृद्धि करके - तुरा + साह् - तुरासाह् - 'सहेः साडः सः (८.३.५६)' सूत्र से स को षत्व करके - तुराषाह् / प्रथमा एकवचन में तुराषाट्।

प्रष्ठ + ङस् + वह् + ण्वि / ण्वि का सर्वापहारी लोप करके - प्रष्ठ + वह् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - प्रष्ठ् + वह् / 'अत उपधायाः' से उपधा के 'अ' को वृद्धि करके - प्रष्ठ + वाह् - प्रष्ठवाह् / प्रथमा एकवचन में प्रष्टवाह् + सु = प्रष्ठवाट्। इसी प्रकार दित्यवाट्।

ण्विन् प्रत्यय

श्वेतवह्, उक्थशस्, पुरोडाश, अवयस्, ये वैदिक प्रयोग हैं, जो ण्विन् प्रत्यय लगाकर निपातन से बनते हैं।

खमुञ् प्रत्यय

खमुञ् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ञ् की तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से उ की तथा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से ख् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके 'अम्' शेष बचाइये। इसमें ञ् की इत् संज्ञा हुई है, अतः यह प्रत्यय ञित् है। ख् की इत् संज्ञा होने से यह खित् भी है, यह ध्यान रखिये।

ञित् होने के कारण इसे धातुओं में उसी विधि से लगाया जायेगा, जिस विधि से धातुओं में ण्वुल् प्रत्यय लगाया गया है। साथ ही वे कार्य भी होंगे, जो ख् की इत् संज्ञा

होने पर होते हैं। खित् प्रत्यय परे होने पर होने वाले कार्य आगे बतला रहे हैं।

चोर + अम् + कृ + खमुञ् / उपपदमतिङ् से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - चोर + कृ + अम् / अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके - चोर + कार् + अम् -

प्रत्यय के खित् होने के कारण -

अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् (६.३.६७) - अरुष्, द्विषद्, और अजन्त अङ्गों को मुम् (म्) का आगम होता है, खिदन्त परे होने पर।

'चोर', यह अजन्त अङ्ग है, तथा 'कारम्', यह खिदन्त है। अतः इसके परे होने पर, 'चोर' इस अजन्त अङ्ग को मुम् (म्) का आगम कीजिये। मित् आगम होने के कारण 'मिदचोऽन्त्यात्परः' सूत्र से यह मुम् अन्त्य अच् के बाद बैठेगा - चोर + ङस् + मुम् + कारम् / चोर + म् + कारम् = चोरङ्कारम्। इसी प्रकार - दस्युङ्कारम् आदि बनाइये।

खुकञ् प्रत्यय

खुकञ् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ञ् की तथा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से ख् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके 'उक' शेष बचाइये।

इसमें ञ् की इत् संज्ञा हुई है, अतः यह प्रत्यय ञित् है। ख् की इत् संज्ञा होने से यह खित् भी है, अतः इसे ठीक खमुञ् के समान ही धातुओं में लगाइये।

स्थूल + अम् + भू + खुकञ् /

'उपपदमतिङ्' से समास करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लुक् करके - स्थूल + भू + उक / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से वृद्धि करके - स्थूल + अम् + भौ + उक / 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' से मुम् का आगम करके - स्थूल + मुम् + भौ + उक / स्थूलं + भौ + उक / औ को अवादेश करके - स्थूलं + भाव् + उक = स्थूलंभावुकः। इसी प्रकार पलितंभावुकः, अन्धंभावुकः, नग्नंभावुकः आदि बनाइये।

णच् प्रत्यय

कर्मव्यतिहार अर्थात् क्रिया का अदल बदल गम्यमान होने पर 'कर्मव्यतिहारे णच्स्त्रियाम्' सूत्र से स्त्रीलिङ्ग में धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा विषय में तथा भाव में णच् प्रत्यय होता है।

व्यावक्रोशी वर्तते - आपस में चिल्लाना हो रहा है। वि + अव + क्रुश् + णच् / वि + अव + क्रुश् + अ / 'पुगन्तलघूपधस्य च' से उपधा को गुण करके तथा वि के इकार को 'इको यणचि' सूत्र से यण् करके - व्यवक्रोश -

णचः स्त्रियामञ् (५.४.१४) - णच् प्रत्ययान्त शब्दों से स्त्रीलिङ्ग में स्वार्थ में अञ् प्रत्यय होता है। (ध्यान रहे कि यह अञ् प्रत्यय तद्धित प्रत्यय है।)

व्यवक्रोश + अञ् -

न कर्मव्यतिहारे (७.३.६) - क्रिया का परस्पर विनिमय गम्यमान होने पर 'न य्वाभ्यां पदान्ताभ्यां पूर्वस्य तु ताभ्यामैच्' सूत्र से होने वाले ऐच् आगम का निषेध होता है। अतः -

व्यवक्रोश + अ / इसमें 'तद्धितेष्वचामादेः' सूत्र से आदि अच् को वृद्धि करके - व्यावक्रोश + अ -

यस्येति च (६.४.१४८) - ईकार और तद्धित परे होने पर भसंज्ञक इवर्ण, अवर्ण का लोप होता है। व्यावक्रोश् + अ - व्यावक्रोश् + अ - व्यावक्रोश / अब स्त्रीलिङ्ग में 'टिड्ढाणञ्द्वयसज्दघ्नञ्मात्रच्तयप्ठक्ठञ्कञ्क्वरपः' सूत्र से ङीप् करके - व्यावक्रोश + ङीप् / पुनः 'यस्येति च' से अकार का लोप करके - व्यावक्रोशी वर्तते - आपस में चिल्लाना हो रहा है।

इसी प्रकार लिख् धातु से - (वि + अव + लिख् + णच् + अञ् + ङीप् = व्यावलेखी वर्तते - आपस में लिखना हो रहा है।)

हस् धातु से - (वि + अव + हस् + णच् + अञ् + ङीप् = व्यावहासी वर्तते - आपस में हँसना हो रहा है।)

कित् ङित्, ञित्, णित् से भिन्न आर्धधातुक कृत् प्रत्यय

हम जानते हैं कि धातु से प्रत्यय लगने पर धातु का नाम अङ्ग हो जाता है। प्रत्यय लगने पर, प्रत्यय का अङ्ग पर जो प्रभाव पड़ता है, उस प्रभाव का नाम ही अङ्गकार्य कहलाता है। अंङ्गकार्य कैसा हो, यह प्रत्यय के अनुबन्धों पर ही निर्भर करता है। प्रत्यय में जैसे अनुबन्ध होते हैं, अङ्गकार्य भी वैसे ही होते हैं। अत: **अङ्गकार्य करने के लिये प्रत्यय की सही पहिचान सबसे आवश्यक है।**

यदि प्रत्यय कित्, गित् या ङित् होगा, तो अङ्गकार्य अलग प्रकार का होगा। यदि प्रत्यय कित्, गित्, ङित्, नहीं होगा, तो अङ्गकार्य अलग प्रकार का होगा।

अतिदेश

कभी कभी ऐसा होता है कि कोई सूत्र, कित् प्रत्यय को अकित्वत् बना देता है और कभी कभी ऐसा भी होता है कि कोई सूत्र अकित् प्रत्यय को कितवत् या ङिद्वत् बना देता है। एक के धर्म को दूसरे में बतलाने का नाम ही अतिदेश होता है और एक के धर्म को दूसरे में बतलाने वाले सूत्र का नाम अतिदेश सूत्र होता है।

अत: किसी भी प्रत्यय के लगने पर यह विचार अवश्य कीजिये कि प्रत्यय में, किसी अतिदेश सूत्र के बल से किसी नये धर्म का अतिदेश तो नहीं किया जा रहा है ?

ये अतिदेश सूत्र इस प्रकार हैं -

गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित् - 'इङ्' धातु के स्थान पर होने वाले 'गाङ्' धातु से, तथा तुदादिगण के अन्तर्गत जो कुट् से लेकर कुङ् तक ३६ धातुओं का कुटादिगण है, उस कुटादिगण में आने वाले धातुओं से परे आने वाले, ञित् णित् से भिन्न, सारे प्रत्यय, ङित्वत् मान लिये जाते हैं। कुटादि धातु इस प्रकार हैं -

कुट्	पुट्	कुच्	गुज्	गुड्	छुर्	स्फुट्	मुट्	त्रुट्
तुट्	चुट्	छुट्	जुट्	लुट्	कुड्	पुड्	घुट्	तुड्
थुड्	स्थुड्	स्फुर्	स्फुल्	स्फुड्	चुड्	व्रुड्	क्रुड्	गुर्
कृड्	मृड्	कड्	डिप्	नू	धू	गु	ध्रु	कु = ३६

'क्त्वा' प्रत्यय भी ञित् णित् से भिन्न प्रत्यय है, अत: यह जब गाङ् या कुटादि धातुओं के बाद आता है, तब इसे ङित् प्रत्यय जैसा मान लिया जाता है।

विज इट् - तुदादि तथा रुधादि गण के 'ओविजी भयचलनयो:' धातु से परे आने

वाले सारे सेट् प्रत्यय ङित्वत् माने जाते हैं।

व्यचे: कुटादित्वमनसीति वक्तव्यम् (वार्तिक) - व्यच् धातु से परे आने वाले 'अस्' से भिन्न सारे प्रत्यय ङिद्वत् होते हैं।

विभाषोर्णो: (१.२.३) - ऊर्णु धातु से परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्यय विकल्प से ङित्वत् माने जाते हैं।

विशेष प्रत्ययों के अतिदेश तत् तत् प्रत्ययों के साथ बतलाते चलेंगे।

अत्यावश्यक - कोई भी आर्धधातुक प्रत्यय प्रत्यय लगाने के तत्काल बाद पृष्ठ ७८ पर कहे गये धात्वादेशों को और अभी कहे गये इन अतिदेशों को बुद्धि में रखकर ही कार्य प्रारम्भ करें -

जब प्रत्यय कित्, ङित् हो या कित्, ङित् जैसा हो जाये, तब इस प्रकार अङ्गकार्य कीजिये

१. गुणनिषेध -

क्ङिति च (१.१.५) - कित्, ङित्, प्रत्यय परे होने पर, धातु के अन्तिम इक् तथा उपधा के लघु इक् के स्थान पर प्राप्त होने वाले गुण, वृद्धि कार्य नहीं होते।

क्त प्रत्यय भी कित् है, अत: इसके परे होने पर न तो धातुओं के अन्तिम इक् को गुण होगा, न ही धातुओं की उपधा के लघु इक् को गुण होगा। यथा -

जि	+	क्त	=	जित:	भी	+	क्त	=	भीत:
हु	+	क्त	=	हुत:	भू	+	क्त	=	भूत:
कृ	+	क्त	=	कृत:	वृ	+	क्त	=	वृत:

२. सम्प्रसारण -

वचिस्वपियजादीनाम् किति (६.१.१५) - वच्, स्वप् तथा यज्, वप्, वह्, वस्, वद्, वेञ्, ह्वेञ्, श्वि, व्येञ्, धातुओं को सम्प्रसारण होता है, कित् प्रत्यय परे होने पर।

ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च (६.१.१६) - ग्रह्, ज्या, वय्, व्यध्, वश्, व्यच्, व्रश्च्, प्रच्छ्, भ्रस्ज् इन धातुओं को सम्प्रसारण होता है कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर। **सम्प्रसारण आगे यथास्थान बतलायेंगे।**

३. नलोप -

अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति (६.४.२४) - अनिदित् हलन्त धातुओं की उपधा के 'न्' का लोप होता है, कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर। **नलोप आगे बतलायेंगे।**

जब प्रत्यय कित्, ङित् भी न हो और ञित्, णित् भी न हो तब इस प्रकार अङ्गकार्य कीजिये

१. सार्वधातुकार्धधातुकयोः (७.३.८४) - इगन्त अङ्ग को गुण होता है, कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न सार्वधातुक अथवा आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

अर्थात् अङ्ग के अन्त में आने वाले - इ - ई को ए / उ - ऊ को ओ / ऋ - ॠ को अर् / ऐसे गुण आदेश होते हैं।

२. पुगन्तघूपधस्य च (७.३.८६) - धातुओं की उपधा के लघु इ को ए, लघु उ को ओ तथा लघु ऋ को अर् गुण होता है, कित् ङित् से भिन्न सार्वधातुक अथवा आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

३. शेष धातुओं को कुछ नहीं होता।

इन अङ्गकार्यों को यहीं बुद्धिस्थ करके ही हम आगे धातुओं में एक एक करके कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न प्रत्यय लगायें -

अनीयर् प्रत्यय

अनीयर् प्रत्यय भावकर्म अर्थ में सभी धातुओं से लगाया जा सकता है। इसमें 'हलन्त्यम्' सूत्र से र् की इत्संज्ञा होकर अनीय शेष बचता है। यह प्रत्यय कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न है। धातुओं का वर्गीकरण करके इसे इस प्रकार लगाइये -

विशेष धातु

कुटादि धातु - हम जानते हैं कि 'गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित्' सूत्र से कुटादि धातुओं से परे आने वाला अनीयर् प्रत्यय ङिद्वत् होता है।

कुटादि धातु इस प्रकार हैं -

कुट्	पुट्	कुच्	गुज्	गुड्	छुर्	स्फुट्	मुट्	त्रुट्
तुट्	चुट्	छुट्	जुट्	लुट्	कुड्	पुड्	घुट्	तुड्
थुड्	स्थुड्	स्फुर्	स्फुल्	स्फुड्	चुड्	व्रुड्	क्रुड्	गुर्
कृड्	मृड्	कड्	डिप्	नू	धू	गु	ध्रु	कु = ३६

विशेष - कड् धातु के कुटादिगण में पाठ करने का कोई भी फल नहीं है।

इनसे अनीयर् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

नू, धू, गु, ध्रु, कु धातुओं से अनीयर् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ (६.४.७७)- श्नु प्रत्ययान्त, इवर्णान्त, उवर्णान्त जो धातु और भ्रू रूप जो अङ्ग, उन्हें इयङ्, उवङ् आदेश होते हैं, अच् परे होने पर। यथा -

नू	+	अनीयर्	-	नुव्	+	अनीय	=	नुवनीयम्
धू	+	अनीयर्	-	धुव्	+	अनीय	=	धुवनीयम्
गु	+	अनीयर्	-	गुव्	+	अनीय	=	गुवनीयम्
ध्रु	+	अनीयर्	-	ध्रुव्	+	अनीय	=	ध्रुवणीयम्
कु	+	अनीयर्	-	कुव्	+	अनीय	=	कुवनीयम्

शेष कुटादि धातुओं से अनीयर् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

'क्ङिति च' सूत्र से गुण निषेध होने के कारण इनमें अनीयर् प्रत्यय को सीधे जोड़ दीजिये, गुण मत कीजिये। यथा -

कुट्	-	कुटनीयम्	पुट्	-	पुटनीयम्	कुच्	-	कुचनीयम्
गुज्	-	गुजनीयम्	गुड्	-	गुडनीयम्	छुर्	-	छुरणीयम्
स्फुट्	-	स्फुटनीयम्	मुट्	-	मुटनीयम्	त्रुट्	-	त्रुटनीयम्
तुट्	-	तुटनीयम्	चुट्	-	चुटनीयम्	छुट्	-	छुटनीयम्
जुट्	-	जुटनीयम्	लुट्	-	लुटनीयम्	कुड्	-	कुडनीयम्
पुड्	-	पुडनीयम्	घुट्	-	घुटनीयम्	तुड्	-	तुडनीयम्
थुड्	-	थुडनीयम्	स्थुड्	-	स्थुडनीयम्	स्फुर्	-	स्फुणनीयम्
स्फुल्	-	स्फुलनीयम्	स्फुड्	-	स्फुडनीयम्	चुड्	-	चुडनीयम्
व्रुड्	-	व्रुडनीयम्	क्रुड्	-	क्रुडनीयम्	गुर्	-	गुरणीयम्
डिप्	-	डिपनीयम्	कृड्	-	कृडनीयम्	मृड्	-	मृडनीयम्
कड्	-	कडनीयम्।						

अब जो धातु बचे, उनमें अनीयर् प्रत्यय को इस प्रकार लगाइये -

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के आकारान्त तथा एजन्त धातु

इन्हें कुछ मत कीजिये -

दा	+	अनीयर्	-	दा	+	अनीय	=	दानीयम्
धा	+	अनीयर्	-	धा	+	अनीय	=	धानीयम्
पा	+	अनीयर्	-	पा	+	अनीय	=	पानीयम्
घ्रा	+	अनीयर्	-	घ्रा	+	अनीय	=	घ्राणीयम्

एजन्त धातुओं के ए, ऐ, ओ, औ को आदेच उपदेशेऽशिति सूत्र से आ बनाइये-

गै	+	अनीयर्	-	गा	+	अनीय	=	गानीयम्
म्लै	+	अनीयर्	-	म्ला	+	अनीय	=	म्लानीयम्

ध्यै	+	अनीयर्	-	ध्या	+	अनीय	=	ध्यानीयम्
धे	+	अनीयर्	-	धा	+	अनीय	=	धानीयम्
षो	+	अनीयर्	-	सा	+	अनीय	=	सानीयम्
छो	+	अनीयर्	-	छा	+	अनीय	=	छानीयम्

इसी प्रकार सारे आकारान्त और एजन्त धातुओं में अनीयर् प्रत्यय लगाइये।

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के इकारान्त तथा ईकारान्त धातु

इ, ई को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से 'ए' गुण करके एचोऽयवायावः सूत्र से ऐ के स्थान पर 'अय्' आदेश कीजिये -

चि	+	अनीयर्	-	चे	+	अनीय	-	चय्	+	अनीय	=	चयनीयम्
शी	+	अनीयर्	-	शे	+	अनीय	-	शय्	+	अनीय	=	शयनीयम्
डी	+	अनीयर्	-	डे	+	अनीय	-	डय्	+	अनीय	=	डयनीयम्
क्री	+	अनीयर्	-	क्रे	+	अनीय	-	क्रय्	+	अनीय	=	क्रयणीयम्

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के उकारान्त तथा ऊकारान्त धातु

ब्रू धातु -

ब्रुवो वचिः (२.४.५३) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ब्रू धातु को वच् आदेश होता है। ब्रू + अनीयर् / वच् + अनीय = वचनीयम् (कहने योग्य)।

शेष उकारान्त, ऊकारान्त धातु - उ, ऊ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से 'ओ' गुण करके एचोऽयवायावः सूत्र से ऐ के स्थान पर 'आव्' आदेश कीजिये -

यु	+	अनीयर्	-	यो	+	अनीय	-	यव्	+	अनीय	=	यवनीयम्
रु	+	अनीयर्	-	रो	+	अनीय	-	रव्	+	अनीय	=	रवनीयम्
भू	+	अनीयर्	-	भो	+	अनीय	-	भव्	+	अनीय	=	भवनीयम्
लू	+	अनीयर्	-	लो	+	अनीय	-	लव्	+	अनीय	=	लवनीयम्
पू	+	अनीयर्	-	पो	+	अनीय	-	पव्	+	अनीय	=	पवनीयम्

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के ऋकारान्त तथा ॠकारान्त धातु

ऋ, ॠ को को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से 'अर्' गुण कीजिये -

कृ	+	अनीयर्	-	कर्	+	अनीय	=	करणीयम्
भृ	+	अनीयर्	-	भर्	+	अनीय	=	भरणीयम्
हृ	+	अनीयर्	-	हर्	+	अनीय	=	हरणीयम्
तॄ	+	अनीयर्	-	तर्	+	अनीय	=	तरणीयम्

दॄ	+	अनीयर्	-	दर्	+	अनीय	=	दरणीयम्
पॄ	+	अनीयर्	-	पर्	+	अनीय	=	परणीयम्

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के अदुपध धातु

व्यच् धातु - व्यच् + अनीयर् -

व्यचे: कुटादित्वमनसीति वक्तव्यम् (वार्तिक) - व्यच् धातु से परे आने वाले 'अस्' से भिन्न सारे प्रत्यय ङिद्वत् होते हैं।

अत: ग्रहिज्यावयिव्यधि. सूत्र से सम्प्रसारण करके - विच् + अनीय - विचनीयम्।

अस भुवि धातु (अदादिगण) -

अस्तेर्भू: (२.४.५२) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अस भुवि धातु (अदादिगण) को भू आदेश होता है। अस् + अनीयर् / भू + अनीय / सार्वधातुकार्धधातुकयो: सूत्र से इगन्त अङ्ग को गुण करके - भो + अनीय / एचोऽयवायाव: सूत्र से ओ को अव् आदेश करके - भव् + अनीय - भवनीय = भवनीयम् (होने योग्य)।

अज् धातु -

अजेर्व्यघञपो: (२.४.५६) - घञ्, अप् को छोड़कर शेष सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अज् धातु को वी आदेश होता है। अज् + अनीयर् - वी + अनीय / सार्वधातुकार्धधातुकयो: सूत्र से इगन्त अङ्ग को गुण करके - वे + अनीय - एचोऽयवायाव: सूत्र से ए को अय् आदेश करके - वय् + अनीय - वयनीय = वयनीयम् (बुनने योग्य)।

शेष अदुपध धातु - इन्हें कुछ मत कीजिये -

वद्	+	अनीयर्	-	वद्	+	अनीय	=	वदनीयम्
चल्	+	अनीयर्	-	चल्	+	अनीय	=	चलनीयम्
नट्	+	अनीयर्	-	नट्	+	अनीय	=	नटनीयम्
पठ्	+	अनीयर्	-	पठ्	+	अनीय	=	पठनीयम्
पच्	+	अनीयर्	-	पच्	+	अनीय	=	पचनीयम्

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के इदुपध धातु

पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के लघु इ को गुण कीजिये -

भिद्	+	अनीयर्	-	भेद्	+	अनीय	=	भेदनीयम्
छिद्	+	अनीयर्	-	छेद्	+	अनीय	=	छेदनीयम्
चित्	+	अनीयर्	-	चेत्	+	अनीय	=	चेतनीयम्

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के उदुपध धातु

पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के लघु उ को गुण कीजिये -

उपधा के लघु 'उ' को पुगन्तघूपधस्य च सूत्र से 'ओ' गुण कीजिये-

बुध् + अनीयर् - बोध् + अनीय = बोधनीयम्

मुद् + अनीयर् - मोद् + अनीय = मोदनीयम्

तुष् + अनीयर् - तोष् + अनीय = तोषणीयम्

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के ऋदुपध धातु

पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के लघु ऋ को गुण कीजिये -

कृष् + अनीयर् - कर्ष् + अनीय = कर्षणीयम्

वृष् + अनीयर् - वर्ष् + अनीय = वर्षणीयम्

तृप् + अनीयर् - तर्प् + अनीय = तर्पणीयम्

भ्वादि से क्र्यादिगण तक के शेष हलन्त धातु

चक्ष् धातु -

चक्षिङः ख्याञ् (२.४.५४) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर चक्ष् धातु को ख्या आदेश होता है। चक्ष् + अनीयर् / ख्या + अनीय = ख्यानीयम् (कहने योग्य)।

शेष हलन्त धातु - जिन हलन्त धातुओं की उपधा में लघु अ, इ, उ, ऋ, ॠ नहीं हैं, ऐसे हलन्त धातु में बिना किसी परिवर्तन के अनीय को ज्यों का त्यों जोड़ दीजिये। जैसे -

ध्वंस् + अनीयर् - ध्वंस् + अनीय = ध्वंसनीयम्

मील् + अनीयर् - मील् + अनीय = मीलनीयम्

भूष् + अनीयर् - भूष् + अनीय = भूषणीयम्

लङ्घ् + अनीयर् - लङ्घ् + अनीय = लङ्घनीयम्

प्रत्ययान्त धातु

णिजन्त धातुओं में अनीयर् प्रत्यय लगाना

अष्टाध्यायी सहज बोध के द्वितीय खण्ड में प्रत्येक धातु में णिच् प्रत्यय लगाने की विधि विस्तार से दी गई है। उसे देखकर णिजन्त धातु बना लें। ध्यान दें कि सारे णिजन्त धातुओं के अन्त में णिच् प्रत्यय का णिच् (इ) ही रहता है।

णेरनिटि - अनिडादि आर्धधातुक प्रत्यय (ऐसा आर्धधातुक प्रत्यय, जिसे इट्

का आगम नहीं हुआ है) परे होने पर, 'णिच् प्रत्यय' का लोप हो जाता है। यथा -

चुर् + णिच् = चोरि। यह णिजन्त धातु है। इससे जब हम ण्वुल्, ल्युट्, अनीयर् आदि अनिडादि प्रत्यय लगायेंगे, तब इस सूत्र से णिच् का लोप हो जायेगा। यथा -

चोरि + अनीयर् / चोर् + अनीय = चोरणीयम्। प्रेरि + अनीयर् / प्रेर् + अनीय = प्रेरणीयम्। गमि + अनीयर् / गम् + अनीय = गमनीयम्, आदि।

सन्नन्त धातुओं में अनीयर् प्रत्यय लगाना

अतो लोपः (६.४.४८) - 'ह्रस्व अ' का लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। यथा -

पिपठिष + अनीयर् / पिपठिष + अनीय / पिपठिष् + अनीय = पिपठिषणीयम्
जिगमिष + अनीयर् / जिगमिष + अनीय / जिगमिष् + अनीय = जिगमिषणीयम्

यङन्त धातुओं में अनीयर् प्रत्यय लगाना

ध्यान दें कि दन्द्रम्य, चङ्क्रम्य, लेलिख्य, पापठ्य, वावश्य, आदि धातुओं में जो 'य' है, वह हल् के बाद है। लोलूय, पोपूय, नेनीय, बोभूय, आदि धातुओं में जो 'य' है, वह अच् के बाद है।

अतो लोपः - 'ह्रस्व अ' का लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

नेनीय + अनीयर् / नेनीय + अनीय / नेनीय् + अनीय = नेनीयनीयम्
लोलूय + अनीयर् / लोलूय + अनीय / लोलूय् + अनीय = लोलूयनीयम्

यस्य हलः (६.४.४९)- हल् के बाद आने वाले 'य' का लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। यथा - दन्द्रम्य + अनीय / यहाँ 'यस्य हलः' सूत्र से 'य्' का लोप करके तथा 'अतो लोपः' सूत्र से 'अ' का लोप करके - दन्द्रम् + अनीय = दन्द्रमणीयम् ही बनेगा।

इसी प्रकार य का लोप करके - चङ्क्रम्य + अनीय = चङ्क्रमणीयम्। पापच्य + अनीय = पापचनीयम्। पापठ्य + अनीय = पापठनीयम्, आदि।

बेभिद्य + अनीयर् / बेभिद् + अनीय / यहाँ पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के लघु इ को गुण प्राप्त होने पर -

अचः परस्मिन् पूर्वविधौ (१.१.५७) - परनिमित्तक अजादेश स्थानिवत् होता है, स्थानिभूत अच् से पूर्वत्वेन दृष्टविधि की कर्तव्यता में।

अतः जब हम 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा को गुण करने चलेंगे, तब

'अनीयर्' को निमित्त मानकर होने वाला 'अलोप' स्थानिवत् हो जायेगा, अतः उपधा को गुण नहीं हो पायेगा। अतः - बेभिद् + अनीय = बेभिदनीयम्। मोमुद्य + अनीयर् / मोमुद् + अनीय / पूर्ववत् स्थानिवद्भाव करके = मोमुदनीयम्। वरीवृष्य + अनीयर् / वरीवृष् + अनीय / पूर्ववत् स्थानिवद्भाव करके = वरीवृषणीयम्।

यङ्लुगन्त धातुओं में अनीयर् प्रत्यय लगाना

'यङोऽचि च (२.२.७४)' सूत्र से यङन्त धातुओं के यङ् का लोप, जब अच् प्रत्यय परे होने पर होता है तब अच् प्रत्यय उस लोप का निमित्त बनता है।

किन्तु जब अन्यत्र होता है, तब अन्य प्रत्यय उस लोप के निमित्त नहीं बनते, यह जानना चाहिये।

'यङोऽचि च' सूत्र से लोप करके जो धातु बनते हैं, वे यङ्लुगन्त धातु कहलाते हैं। यथा - नेनीय - नेनी। बोभूय - बोभू, आदि।

न धातुलोप आर्धधातुके (१.१.४) - धातुलोपनिमित्तक आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर इक् के स्थान पर होने वाले गुण वृद्धि कार्य नहीं होते।

ध्यान रहे कि यङ् के लुक् का निमित्त केवल अच् प्रत्यय बनता है, अतः उसे निमित्त मानकर होने वाले गुण, वृद्धि कार्य, अङ्ग को नहीं होंगे।

किन्तु अच् के अलावा अन्य कोई भी प्रत्यय परे होने पर यथाप्राप्त गुण, वृद्धि आदि होंगे ही। अतः जैसे रूप अप्रत्ययान्त में बनाये हैं, वैसे ही यथाप्राप्त कार्य कीजिये।

क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्ययान्त धातुओं में अनीयर् प्रत्यय लगाना

क्यस्य विभाषा (६.४.५०) - हल् से उत्तर जो क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्यय, उनका विकल्प से लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

समिध्य + अनीयर् = समिधनीयम्, समिध्यनीयम्।

यह समस्त धातुओं में अनीयर् प्रत्यय लगाने की विधि पूर्ण हुई।

ल्युट् प्रत्यय

ध्यान रहे कि ल्युट् प्रत्यय सभी धातुओं से लगाया जा सकता है। इससे बने हुए शब्द नपुंसकलिङ्ग ही होते हैं।

ल्युट् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से ट् की तथा लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की इत्संज्ञा होकर यु शेष बचता है, जिसे युवोरनाकौ सूत्र से 'अन' आदेश होता है।

इसकी प्रक्रिया पूर्णतः 'अनीयर्' प्रत्यय के समान ही होगी। अतः जैसे - गम् + अनीयर् से 'गमनीयम्' बनता है, ठीक उसी प्रकार - गम् + अन से गमनम् बनाइये।

जैसे - लिख् + अनीयर् से 'लेखनीयम्' बनता है, ठीक उसी प्रकार - लिख् + अन से लेखनम् बनाइये। जैसे - पुष् + अनीयर् से 'पोषणीयम्' बनता है, ठीक उसी प्रकार - पुष् + अन से पोषणम् बनाइये।

इसके अपवाद - दंश् + ल्युट् / दंश् + अन / इससे दंशनम् बनना था, किन्तु 'दाम्नीशसयु- युजस्तुतुदसिसिचमिहपतदशनहः करणे ३.२.१८१' सूत्र में दंश् धातु के अनुनासिक लोप करके जो निर्देश किया है, वह यह ज्ञापित करता है, कि कभी कभी कित्, ङित् से भिन्न प्रत्यय परे होने पर भी नकार का लोप होता है। अतः - दंश् + ल्युट् / दश् + अन = दशनम्।

अज् धातु

वा यौ (२.४.५७) - ल्युट् प्रत्यय परे होने पर अज् धातु के स्थान विकल्प से वी आदेश होता है। प्र + अज् + ल्युट् - प्र + वी + अन -

सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अङ्ग को गुण करके - प्र + वे + अन - एचोऽयवायावः सूत्र से ए को अय् आदेश करके - प्र + वय् + अन - प्रवयन -

कृत्यचः (८.४.२९)- उपसर्गस्थ निमित्त से परे जो अच्, उससे उत्तर जो कृत्स्थ नकार, उसे णकार आदेश होता है। इस सूत्र से न के स्थान पर णत्व करके - प्रवयणो दण्डः। वी आदेश न होने पर - प्राजनो दण्डः।

शेष धातु

शेष धातुओं में हमने अनीयर् प्रत्यय लगाकर जो भी रूप, जिस प्रकार बनाया है, ठीक उसी प्रक्रिया से उस धातु में ल्युट् = अन प्रत्यय लगाकर रूप बनाइये।

अर्थात् उस रूप से अनीय को हटाकर उसमें 'अन' लगा लीजिये, बस।

यथा - हमने नू + अनीयर् - नुव् + अनीय = नुवनीयम् बनाया है, तो ल्युट् लगाकर ठीक उसी प्रक्रिया से आप नू + ल्युट् - नू + अन = नुवनम् बना लीजिये।

चि + अनीयर् से हमने चयनीयम् बनाया है, तो अनीय को हटाकर अन को लगाकर आप उसी प्रकार चयनम् बना लीजिये।

पठ् + अनीयर् से हमने पठनीयम् बनाया है, तो अनीय को हटाकर अन को लगाकर आप उसी प्रकार पठनम् बना लीजिये।

ल्यु प्रत्यय

यह प्रत्यय सब धातुओं से नहीं लगता। ल्यु प्रत्यय में लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की इत्संज्ञा होकर यु शेष बचता है, जिसे युवोरनाकौ सूत्र से 'अन' आदेश होता है। इसे

भी धातुओं में ठीक 'अनीयर्' प्रत्यय के समान ही लगाइये। यथा - नन्दयतीति नन्दनः (प्रसन्न करनेवाला) - नन्द् + ल्यु / नन्द् + अन = नन्दनः। वाश्यतीति वाशनः (शब्द करने वाला पक्षी)। वाश् + ल्यु / वाश् + अन = वाशनः।

अच् प्रत्यय

अच् प्रत्यय सारे धातुओं से लग सकता है। इसमें हलन्त्यम् सूत्र से च् की इत्संज्ञा होकर अ शेष बचता है। यद्यपि **'अज्विधिः सर्वधातुभ्यः'** कहकर अच् प्रत्यय सारे धातुओं से कहा गया है, तथापि प्रयुक्त शब्द ही बनाना चाहिये।

अच् प्रत्यय लगाकर निपातन से बने हुए शब्द -

न्यङ्क्वादीनां च - (७.३.५३) - न्यङ्क्वादिगण पठित शब्दों में कुत्व निपातन होता है। वि + अति + सञ्ज् + अच् / वि + अति + सङ्ग् + अ / आदेशप्रत्यययोः से षत्व होकर व्यतिषङ्गः।

दूरे + पच् + अच् = दूरेपाकः। इसमें भी निपातन से कुत्व तथा उपधादीर्घ हुए हैं। इसी प्रकार - फलेपाकः, अक्षेपाकः आदि बनाइये।

न्यक् + रुह् + अच् / 'पुगन्त.' से उ को गुण करके, क् को जश्त्व करके तथा 'न्यङ्क्वादीनां च' सूत्र से ह् को ध निपातन करके = न्यग्रोधः।

इसी प्रकार - अव + सृज् + अच् = अवसर्गः / उप + सृज् + अच् = उपसर्गः / मिह् + अच् = मेघः। इन शब्दों में इसी सूत्र से निपातन से कुत्व होता है।

उपपद होने पर - ख + ङि + शी + अच् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - ख + शी + अ -

'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' से गुण करके ख + शय् + अ = खशय / प्रातिपदिक संज्ञा होने के कारण सु विभक्ति लगाकर - खशय + सु = खशयः। इसी प्रकार गर्तशयः / उत्तानशयः / उदरशयः आदि बनाइये।

अंश + ङस् + हृ + अच् - 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' से गुण करके अंश + ङस् + हर् + अ = अंशहरः। इसी प्रकार रिक्थहरः / अस्थिहरः श्वा / कवचहरः क्षत्रियः।

शक्ति + ङस् + ग्रह् + अच् = शक्तिग्रहः। इसी प्रकार - यष्टिग्रहः, घटग्रहः, धनुर्ग्रहः अंकुशग्रहः लाङ्गलग्रहः, घटीग्रहः आदि बनाइये।

निपातन के अलावा शेष सारे कार्य अनीयर् प्रत्यय के समान ही कीजिये। यथा-

आकारान्त तथा एजन्त धातु

दा + अच् - दा + अ = दाः
धा + अच् - धा + अ = धाः
गै + अच् - गा + अ = गाः
म्लै + अच् - म्ला + अ = म्लाः
धे + अच् - धा + अ = धाः
छो + अच् - छा + अ = छाः

इकारान्त तथा ईकारान्त धातु

इ, ई को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से 'ए' गुण करके एचोऽयवायावः सूत्र से ऐ के स्थान पर 'अय्' आदेश कीजिये -

चि + अच् - चे + अ - चय् + अ = चयः
जि + अच् - जे + अ - जय् + अ = जयः
शी + अच् - शे + अ - शय् + अ = शयः
नी + अच् - ने + अ - नय् + अ = नयः
क्री + अच् - क्रे + अ - क्रय् + अ = क्रयः
भी + अच् - भे + अ - भय् + अ = भयम्

('भयादीनामुपसंख्यानम्' वार्तिक से भय शब्द नपुंसकलिङ्ग होता है।)

उकारान्त तथा ऊकारान्त धातु

विशेष उकारान्त धातु -

ब्रू + अच् - वच् + अ = वचः

शेष उकारान्त धातु - उ, ऊ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से 'ओ' गुण करके एचोऽयवायावः सूत्र से ऐ के स्थान पर 'आव्' आदेश कीजिये -

यु + अच् - यो + अ - यव् + अ = यवः
रु + अच् - रो + अ - रव् + अ = रवः
भू + अच् - भो + अ - भव् + अ = भवः
लू + अच् - लो + अ - लव् + अ = लवः

ऋकारान्त तथा ॠकारान्त धातु

ऋ, ॠ को को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से 'अर्' गुण कीजिये -

कृ + अच् - कर् + अ = करः

भृ + अच् - भर् + अ = भरः

अदुपध धातु

विशेष अदुपध धातु -

अस् धातु - अस् + अच् / 'अस्तेर्भूः' सूत्र से भू आदेश करके - अस् + अच् - भू + अ = भवः।

व्यच् धातु - व्यच् + अच् / 'व्यचेः कुटादित्व'. सूत्र से ङिद्वद्भाव होने ग्रहिज्या. सूत्र से सम्प्रसारण करके - विच् + अ = विचः।

अज् धातु - अज् + अच् / 'अजेर्व्यघञपोः' सूत्र से वी आदेश करके - वी + अ / 'सार्वधातुकार्ध.' से गुण करके - वे + अ / अयादेश करके - वय् + अ = वयः।

शेष अदुपध धातु -

पठ् + अच् - पठ् + अ = पठः

पच् + अच् - पच् + अ = पचः

शेष सारे धातु अनीयर् के समान ही बनाइये।

यङ्लुगन्त धातुओं से अच् प्रत्यय लगाना

यङन्त धातुओं के यङ् का 'यङोऽचि च' सूत्र से लोप करके जो धातु बनते हैं, वे यङ्लुगन्त धातु होते हैं। यथा - नेनीय - नेनी। बोभूय - बोभू, आदि।

ध्यान दें कि 'यङोऽचि च' में जो अच् है, वह प्रत्यय है, प्रत्याहार नहीं। अतः 'यङोऽचि च' सूत्र से होने वाले यङ्लुक् का निमित्त 'अच् प्रत्यय' बनता है।

न धातुलोप आर्धधातुके (१.१.४) - धातुलोपनिमित्तक आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर इक् के स्थान पर होने वाले गुण वृद्धि कार्य नहीं होते।

अतः यङ्लुगन्त धातुओं से परे **'अच् प्रत्यय'** आने पर अङ्ग को गुण वृद्धि कार्य नहीं होंगे। यथा - नेनी + अच् / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से प्राप्त होने वाले गुण का निषेध करके - नेनी + अ -

एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य (६.४.८२) - असंयोगपूर्वक जो इवर्णान्त अङ्ग, उसे यण् होता है, अच् परे होने पर। नेनी + अ / इस सूत्र से यण् करके - नेन्यः।

बोभू + अच् / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से प्राप्त गुण का निषेध करके - बोभू + अ -

अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ (६.४.७७) - श्नु प्रत्ययान्त, इवर्णान्त,

उवर्णान्त जो धातु और भ्रू रूप जो अङ्ग, उन्हें इयङ्, उवङ् आदेश होते हैं, अच् परे होने पर।

बोभू + अ / इस सूत्र से उवङ् आदेश करके - बोभुव् + अ = बोभुवः।

इसी प्रकार - लोलू + अच् = लोलुवः। पोपू + अच् = पोपुवः।

वरीवृष् + अच् / 'पुगन्तलघूपधस्य' च सूत्र से उपधा के लघु इ के स्थान पर प्राप्त होने वाले गुण का 'न धातुलोप आर्धधातुके' सूत्र से निषेध करके - वरीवृषः इसी प्रकार - मरीमृज् + अच् = मरीमृजः।

अत्यावश्यक - ध्यान रहे कि यङ्लुगन्त धातुओं से अच् प्रत्यय परे होने पर, उसे निमित्त मानकर होने वाले गुण, वृद्धि कार्य, अङ्ग को नहीं होते हैं। किन्तु अच् के अलावा अन्य कोई भी प्रत्यय परे होने पर यथाप्राप्त गुण, वृद्धि आदि होंगे ही।

शेष धातु - शेष धातुओं में 'अच्' प्रत्यय को ठीक 'अनीयर्' प्रत्यय के समान ही लगाइये। अर्थात् धातुओं में हमने अनीयर् प्रत्यय लगाकर जो भी रूप, जिस प्रकार बनाया है, ठीक उसी प्रक्रिया से उस धातु में अच् = अ प्रत्यय लगाकर रूप बनाइये।

अर्थात् उस रूप से अनीय को हटाकर उसमें 'अ' लगा लीजिये, बस। यथा - हमने चि + अनीयर् से चयनीयम् बनाया है, तो अनीय को हटाकर 'अ' को लगाकर आप उसी प्रकार चयः बना लीजिये। इसी प्रकार जि + अच् = जयः / इ + अच् = अयः / भी + अच् = भयम्, आदि।

अप् प्रत्यय

यह प्रत्यय सब धातुओं से नहीं लगता। अप् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से प् की इत्संज्ञा होकर 'अ' शेष बचता है।

हन् धातु -

हनश्च वधः (३.३.६) - अनुपसर्ग हन् धातु से भाव अर्थ में अप् प्रत्यय होता है, तथा हन् धातु को वध् आदेश होता है। हन् + अप् - वध् + अ = वधः।

मूर्तौ घनः (३.३.७७) - मूर्ति अभिधेय होने पर हन् धातु से भाव अर्थ में अप् प्रत्यय होता है और अप् प्रत्यय लगने पर हन् धातु को घन् आदेश भी होता है।

हन् + अप् - घन् + अ = घनो मेघः / घनं वस्त्रम् / अन्तर्घनो देशः / उद्घनः / अपघनः / अयोघनः / विघनः / द्रुघनः / स्तम्बघनः, आदि।

अगारैकदेशे प्रघणः प्रघाणश्च (३.३.७९) - गृह का एकदेश वाच्य हो तो प्रघण

और प्रघाण शब्द में प्र पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय और हन् को घन आदेश कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में निपातन किये जाते हैं। प्रघणः / प्रघाणः।

परौ घः (३.३.८४) - परिपूर्वक हन् धातु से करण कारक में अप् प्रत्यय होता है तथा हन् के स्थान में घ आदेश भी होता है। परि + हन् + अप् - परि + घ + अ / 'अतो लोपः' से अ का लोप होकर परिघ् + अ - परिघः।

अद् धातु -

घञपोश्च (२.४.३८) - घञ् तथा अप् प्रत्यय परे होने पर अद् धातु को घस्लृ - घस् आदेश होता है। प्र + अद् + अप् / प्र + घस् + अ = प्रघसः।

शेष धातु -

शेष धातुओं में इसे ठीक 'अनीयर्' प्रत्यय के समान ही लगाइये। यथा -

निस् + चि + अप् - 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' से गुण करके निस् + चय् + अ / स्तोः श्चुना श्चुः से स् को श्चुत्व करके - निश्चयः।

यु + अप् - 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' से गुण करके यव् + अ = यवः। इसी प्रकार स्तवः, लवः, पवः।

कृ + अप् - 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' से गुण करके कर् + अ = करः। इसी प्रकार - वृ + अप् = वरः / दृ + अप् = दरः।

कॄ + अप् - 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' से गुण करके कर् + अ = करः। इसी प्रकार - गॄ + अप् = गरः / शॄ + अप् = शरः।

ग्रह्	+	अप्	-	ग्रह्	+	अ	=	ग्रहः।
गम्	+	अप्	-	गम्	+	अ	=	गमः।
वश्	+	अप्	-	वश्	+	अ	=	वशः।
रण्	+	अप्	-	रण्	+	अ	=	रणः।
सम् + अज्	+	अप्	-	समज्	+	अ	=	समजः।
उद् + अज्	+	अप्	-	उदज्	+	अ	=	उदजः।

षाकन् प्रत्यय

यह प्रत्यय सब धातुओं से नहीं लगता।

षाकन् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की तथा 'षः प्रत्ययस्य' सूत्र से ष् की इत्संज्ञा होकर आक शेष बचता है। इसे भी धातुओं में 'अनीयर्' प्रत्यय के समान ही

लगाइये।

वृ + षाकन् - 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' से गुण करके वर् + आक = वराकः।
जल्प + षाकन् - जल्प + आक = जल्पाकः। इसी प्रकार भिक्षाकः / कुट्टाकः लुण्टाकः।

युच् प्रत्यय

यह प्रत्यय सब धातुओं से नहीं लगता।

युच् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से च् की इत्संज्ञा होकर यु शेष बचता है, जिसे युवोरनाकौ सूत्र से 'अन' आदेश होता है। इसे भी ठीक 'अनीयर्' के समान ही लगाइये-

दुष्पानः - दुः + पा + युच् / दुः + पा + अन -

इदुदुपधस्य चाप्रत्ययस्य (८.३.४१) - इकारोपध, उकारोपध प्रत्ययभिन्न जो विसर्ग, उसे षकारादेश होता है, कवर्ग पवर्ग परे होने पर।

इस सूत्र से विसर्ग को षत्व करके - दुष् + पान - दुष्पानः।

जु + युच् - जो + अन - जव् + अन = जवनः। इसी प्रकार -

चल्	+	अन	-	चलनः	/	पत्	+	युच्	- पतनः
शब्द्	+	युच्	-	शब्दनः	/	ज्वल्	+	युच्	- ज्वलनः
पद्	+	युच्	-	पदनः	/	चुप्	+	युच्	- चोपनः
शुच्	+	युच्	-	शोचनः	/	क्रुध्	+	युच्	- क्रोधनः
वृध्	+	युच्	-	वर्धनः	/	गृध्	+	युच्	- गर्धनः
मण्ड्	+	युच्	-	मण्डनः	/	वृत्	+	युच्	- वर्तनः

रु + युच् - रो + अन - रव् + अन / 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से णत्व करके - रवणः। इसी प्रकार -

सृ	+	युच्	-	सरणः	/	लष्	+	युच्	- लषणः
रुष्	+	युच्	-	रोषणः	/	भूष्	+	युच्	- भूषणः

स्त्रीलिङ्ग में युच् प्रत्यय - जो युच् प्रत्यय 'स्त्रियाम्' के अधिकार में आता है, उससे बने हुए शब्द स्त्रीलिङ्ग में ही होते हैं।

यथा - श्रन्थ् धातु से श्रन्थना / आस् से आसना / घट्ट से घट्टना / वन्द् से वन्दना / अधि + इष् + अन से उपधागुण करके अध्येषणा / अनु + इष् + अन से उपधागुण करके - अन्वेषणा / परि + इष् + अन से उपधागुण करके पर्येषणा आदि बनाइये।

णिजन्त धातु - कृ + णिच् = कारि / कारि + युच् / 'णेरनिटि' सूत्र से णिच् के इ का लोप करके - कार् + अन / णत्व करके - कारण / स्त्रीलिङ्ग में टाप् करके - कारण + टाप् = कारणा। इसी प्रकार - हृ + णिच् = हारि से हारणा आदि।

वुन् प्रत्यय

वुन् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उसका लोप करके 'वु' शेष बचाइये और ''युवोरनाकौ' सूत्र से प्रत्यय के वु के स्थान पर 'अक' आदेश कीजिये। इसे भी ठीक 'अनीयर्' के समान ही लगाइये -

प्रु	+	वुन्	-	प्रु	+	अक	-	प्रो	+	अक	=	प्रवकः
सृ	+	वुन्	-	सृ	+	अक	-	सर्	+	अक	=	सरकः
लू	+	वुन्	-	लू	+	अक	-	लो	+	अक	=	लवकः

जीव् + वुन् = जीवकः / नन्द् + वुन् = नन्दकः। इनका प्रयोग लोट् लकार के जीवतात्, नन्दतात् के स्थान पर किया जाता है।

ष्वुन् प्रत्यय

ष्वुन् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की तथा 'षः प्रत्ययस्य' से ष् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके 'वु' शेष बचाइये और 'युवोरनाकौ' सूत्र से वु के स्थान पर 'अक' आदेश कीजिये। इसे भी ठीक 'अनीयर्' के समान ही लगायें-

नृत्	+	ष्वुन्	-	नृत्	+	अक	-	नर्त्	+	अक	=	नर्तकः
खन्	+	ष्वुन्	-	खन्	+	अक	-	-	-	-	=	खनकः
रज्	+	ष्वुन्	-	रज्	+	अक	-	-	-	-	=	रजकः

प्रत्यय के षित् होने का फल - षित् प्रत्यय से बने हुए जो शब्द होते हैं, उनसे स्त्रीलिङ्ग में 'षिद्गौरादिभ्यः' सूत्र से ङीप् प्रत्यय होता है। अतः स्त्रीत्व की विवक्षा में - नर्तक + ङीप् = नर्तकी। इसी प्रकार खनकी, रजकी बनाइये।

अनि प्रत्यय

इसे भी ठीक 'अनीयर्' के समान ही लगायें। यथा - नञ् + कृ + अनि / नञ् के ञ् की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा होकर - न + कृ + अन् -

नलोपो नञः (६.३.७३) - नञ् के न् का लोप होता है, उत्तरपद परे होने पर। इस सूत्र से न् का लोप करके, 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से ऋ को गुण करके - अकर् + अनि / न् को णत्व होकर - अकरणिः। अकरणिस्ते वृषल भूयात् (नीच !

तेरी करनी का नाश हो जाये।)

इत्र प्रत्यय

इसे भी ठीक 'अनीयर्' के समान ही लगायें।

धू + इत्र - धो + इत्र - धवित्र = धवित्रम्
लू + इत्र - लो + इत्र - लवित्र = लवित्रम्
सू + इत्र - सो + इत्र - सवित्र = सवित्रम्
पू + इत्र - पो + इत्र - पवित्र = पवित्रम्
ऋ + इत्र - अर् + इत्र - अरित्र = अरित्रम्
खन् + इत्र - खन् + इत्र - खनित्र = खनित्रम्

इसी प्रकार चर् से चरित्रम्, सह् से सहित्रम् आदि बनाइये।

अथुच् प्रत्यय

'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की इत्संज्ञा होकर अथु शेष बचता है। इसे भी ठीक 'अनीयर्' के समान ही लगायें।

श्वि + अथु - श्वे + अथु - श्वय् + अथु = श्वयथुः
क्षु + अथु - क्षो + अथु - क्षव् + अथु = क्षवथुः
वेप् + अथु - वेप् + अथु - वेप् + अथु = वेपथुः

इन् प्रत्यय

'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की इत्संज्ञा होकर इ शेष बचता है। इसे भी ठीक 'अनीयर्' के समान ही लगायें।

शकृत् करोति इति शकृत्करिः - शकृत् + ङस् + कृ + इन् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - शकृत् + कृ + इ / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' से गुण करके शकृत् + कर् + इ = शकृत्करि / प्रातिपदिक संज्ञा होने के कारण सु विभक्ति लगाकर - शकृत्करि + सु = शकृत्करिः।

इसी प्रकार - दृतिं हरति इति दृतिहरिः।

इनि प्रत्यय

'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' (१.३.२) सूत्र से इ की इत्संज्ञा करके इन् शेष बचता है। इसे भी ठीक 'अनीयर्' के समान ही लगायें।

जि + इनि - जे + इन् - जय् + इन् - जयिन् = जयी
क्षि + इनि - क्षे + इन् - क्षय् + इन् - क्षयिन् = क्षयी
वि+श्रि + इनि - विश्रे + इन् - विश्रय् + इन् - विश्रयिन् = विश्रयी
अति+इ + इनि - अत्ये + इन् - अत्यय् + इन् - अत्ययिन् = अत्ययी
प्रजु + इनि - प्रजो + इन् - प्रजव् + इन् - प्रजविन् = प्रजवी
प्र+भू + इनि - प्रभो + इन् - प्रभव् + इन् - प्रभविन् = प्रभवी

इसी प्रकार - सोम + वि + क्री + इनि - सोमविक्रे + इन् - सोमविक्रय् + इन् - सोमविक्रयिन् = सोमविक्रयी, बनाइये।

अतृन् प्रत्यय

'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की इत्संज्ञा कर तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से ऋ की इत्संज्ञा करके अत् शेष बचता है। इसे भी ठीक 'अनीयर्' के समान ही लगायें।

जॄ + अतृन् / जॄ + अत् / जर् + अत् = जरत् / प्रथमा एकवचन में जरन्।

आलुच् प्रत्यय

'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से उसका लोप करके आलु शेष बचता है । इसे भी ठीक 'अनीयर्' के समान ही लगायें।

दय् + आलुच् = दयालुः / निद्रा + आलुच् = निद्रालुः / तन्द्रा + आलुच् = तन्द्रालुः / श्रद्धा + आलुच् = श्रद्धालुः।

णिजन्त धातु इसे इस प्रकार लगाइये -

स्पृह् + णिच् + आलुच् - स्पृह् + णिच् + आलु -

यहाँ णेरनिटि से णिच् का लोप प्राप्त है। उसे बाधकर -

अयामन्ताल्वाय्येत्न्विष्णुषु (६.४.५५) - आम्, अन्त, आलु, आय्य, इत्नु तथा इष्णु परे होने पर णिच् को अय् आदेश होता है।

इससे णिच् का लोप न करके उसके स्थान पर अय् आदेश करके - स्पृह् + अय् + आलु = स्पृहयालुः। इसी प्रकार - गृह् + णिच् + आलुच् = गृहयालुः / पत् + णिच् + आलुच् = पतयालुः।

अ प्रत्यय

कुण्ड् + अ = कुण्ड / 'स्त्रियाम्' के अधिकार में आने के कारण इस अ प्रत्यय से बने हुए शब्द स्त्रीलिङ्ग में ही होते हैं, अतः स्त्रीत्व की विवक्षा में टाप् प्रत्यय लगाकर

- कुण्ड + टाप् = कुण्डा / इसी प्रकार ईह् + अ से ईहा / ऊह् + अ से ऊहा आदि बनाइये।

प्रत्ययान्त धातु चिकीर्ष से अ लगाने पर - चिकीर्ष + अ -

अतो लोपः (६.४.४८) - अत् अर्थात् ह्रस्व अ का लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। इससे अ का लोप करके - चिकीर्ष् + अ - चिकीर्ष / स्त्रीत्व की विवक्षा में 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् प्रत्यय लगाकर - चिकीर्ष + टाप् = चिकीर्षा।

इसी प्रकार प्रत्ययान्त धातुओं से जिहीर्ष + अ = जिहीर्षा / पुत्रकाम्य + अ = पुत्रकाम्या / लोलूय + अ = लोलूया / कण्डूय + अ = कण्डूया आदि बनाइये।

आरु प्रत्यय

वन्द् + आरु = वन्दारुः। इसी प्रकार शॄ + आरुः - 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - शर् + आरु = शरारुः।

इष्यै प्रत्यय

यह प्रत्यय वैदिक है। रुह् + इष्यै / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के लघु उ को गुण करके - रोहिष्यै। अपामोषधीनां रोहिष्यै (रोहणाय)।

इसी प्रकार नञ् पूर्वक व्यथ् धातु से - नञ् + व्यथ् + इष्यै। नञ् के ञ् की हलन्त्यम् से इत् संज्ञा होकर और न् का नलोपो नञः से लोप होकर - अव्यथिष्यै।

इष्णुच् प्रत्यय

अलंकृ + इष्णुच् / 'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की इत्संज्ञा होकर अलंकृ + इष्णु / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - अलंकर् + इष्णु = अलंकरिष्णुः।

इसी प्रकार भू + इष्णु से भविष्णुः बनाइये।

वृध् + इष्णुच् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के लघु ऋ को गुण करके - वर्ध् + इष्णु = वर्धिष्णुः। इसी प्रकार रुच् + इष्णु = रोचिष्णुः आदि जानना चाहिये।

णिजन्त धातु - धृ + णिच् = धारि, इस णिजन्त धातु से - धारि + इष्णुच् / यहाँ णेरनिटि से णिच् का लोप प्राप्त है, उसे बाधकर - 'अयामन्ताल्वाय्येत्न्विष्णुषु' सूत्र से णिच् को अय् आदेश करके - धार् + अय् + इष्णु = धारयिष्णुः।

उ प्रत्यय

न्यङ्क्वादीनां च (७.३.५३)

इस सूत्र से निपातन से बनने वाले शब्द -

'नावञ्चतेः' इस उणादिसूत्र से उ प्रत्यय करके - नी + अञ्च् + उ - 'न्यङ्क्वादीनां च' सूत्र से निपातन से कुत्व करके न्यङ्कुः।

'मिमस्जिभ्य उः' इस उणादिसूत्र से उ प्रत्यय करके - मस्ज् + उ - 'न्यङ्क्वादीनां च' सूत्र से निपातन से कुत्व करके मद्गुः।

'प्रथिम्रदिभ्रस्जां सम्प्रसारणं सलोपश्च' इस उणादिसूत्र से उ प्रत्यय करके - भ्रस्ज् + उ - 'न्यङ्क्वादीनां च' सूत्र से निपातन से कुत्व करके - भृगुः।

दूरे + पच् + उ - दूरेपाकुः। फले + पच् + उ - फलेपाकुः। इनमें 'न्यङ्क्वादीनां च' सूत्र से कु प्रत्यय का विधान, कुत्व और वृद्धि, ये सारे कार्य निपातन से होते है।

शेष धातु - आ + शंस् + उ = आशंसुः / भिक्ष् + उ = भिक्षुः।

चिकीर्ष + उ / 'अतो लोपः' से अ का लोप करके - चिकीर्ष् + उ = चिकीर्षुः।

इसी प्रकार वेद में - देवय + उ = देवयुः। सुम्नय + उ / 'अतो लोपः' सूत्र से अ का लोप करके = सुम्नयुः। इसी प्रकार - अघाय + उ = अघायु, बहुवचन में अघायवः।

इक प्रत्यय

आ + खन् + इक = आखनिकः।

इकवक प्रत्यय

आ + खन् + इकवक = आखनिकवकः।

ट प्रत्यय

'चुटू' सूत्र से ट् की इत्संज्ञा होकर अ शेष बचता है -

कुरुषु चरति इति कुरुचरः। कुरु + ङि + चर् + ट / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - कुरु + चर् + अ = कुरुचर / प्रातिपदिक संज्ञा होने के कारण सु विभक्ति लगाकर - कुरुचर + सु = कुरुचरः।

इसी प्रकार भिक्षां चरति इति भिक्षाचरः / सेनायां चरति इति सेनाचरः / आदाय चरति इति आदायचरः।

प्रत्यय के टित् होने का फल -

टित् प्रत्यय से बने हुए जो शब्द होते हैं, उनसे स्त्रीलिङ्ग में 'टिड्ढाणञ्द्वयसज्दघ्नञ्मात्रच्तयप्ठक्ठञ्कञ्क्वरपः' सूत्र से ङीप् प्रत्यय लगाया जाता है। अतः

कुरुचर का स्त्रीलिङ्ग कुरुचर + ङीप् = कुरुचरी बनेगा।

यशः करोति इति यशस्करी विद्या - यशस् + ङस् + कृ + ट / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - यशस् + कृ + अ = कुरुचर -

'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - यशस् + कर् + अ / सकार को ससजुषो रुः सूत्र से रुत्व और 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' सूत्र से विसर्ग करके - यशःकर-

अतः कृकमिकंसकुम्भपात्रकुशाकर्णीष्वनव्ययस्य (८.३.४६) -

अकार से उत्तर समास में जो अनुत्तरपदस्थ अनव्यय का विसर्जनीय उसको नित्य ही सकारादेश होता है, कृ, कमि, कंस, कुम्भ, पात्र, कुशाकर्णी परे होने पर।

इस सूत्र से विसर्ग को सत्व करके यशस्कर / 'टिड्ढाणञ्'. सूत्र से ङीप् करके - यशस्करी। इसी प्रकार - अहः + कृ + ट से अहस्करः बनाइये।

धनुष्करः - धनुस् + कृ + ट / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - धनुः + कर् + अ -

नित्यं समासेऽनुत्तरपदस्थस्य (८.३४५५) - अनुत्तरपदस्थ इस्, उस् के विसर्जनीय को समास विषय में नित्य ही षत्व होता है, कवर्ग, पवर्ग परे रहते।

इस सूत्र से विसर्ग को षत्व करके धनुष् + कर - धनुष्करः। इसी प्रकार - अरुः + कृ + ट से अरुष्करः बनाइये।

विट् प्रत्यय

विट् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ट् की इत् संज्ञा करके, 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इ की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके 'वेरपृक्तस्य' सूत्र से व् का लोप कीजिये। इस प्रकार विट् प्रत्यय में कुछ भी शेष न बचने से इसका सर्वापहारी लोप हो जाता है।

ध्यान रहे कि विट् प्रत्यय भी कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न है।

क्रव्य + अद् + विट् / विट् का सर्वापहारी लोप करके - क्रव्य + अद् = क्रव्याद् / प्रथमा एकवचन में क्रव्याद् + सु / सु का लोप करके, द् को 'वाऽवसाने' से विकल्प से चर्त्व करके - क्रव्याद्, क्रव्यात्।

अनुनासिकान्त धातुओं से विट् लगाने पर -

अप् + जन् + विट् / विट् का सर्वापहारी लोप करके - अप् + जन् -

विड्वनोरनुनासिकस्यात् (६.४.४१) - विट् और वन् प्रत्यय परे होने पर अनुनासिकान्त धातुओं के अन्त को 'आ' आदेश होता है।

अतः - अप् + ङि + जन् में सुब्लुक् करके न् को 'आ' आदेश करके - अप् + जा / 'झलां जशोऽन्ते' से प् को जश्त्व करके = अब्जा / प्रथमा एकवचन में - अब्जाः।

इसी प्रकार गो + जन् + विट् से गोजाः बनाइये।

विच् प्रत्यय

विच् प्रत्यय का भी विट् के समान सर्वापहारी लोप हो जाता है। कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न होने के कारण इसे भी ठीक विट् के समान लगाइये।

कीलाल + ङस् + पा + विच् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, कृत्तद्धितसमासाश्च से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके = कीलालपाः / शुभ + या + विच् = शुभयाः।

उप + यज् + विच् / विच् का सर्वापहारी लोप करके - उप + यज् = उपयज् / प्रथमा एकवचन में उपयज् + सु / सु का लोप करके - उपयज् /

'व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः' सूत्र से ज् को ष् करके - उपयष् / झलां जशोऽन्ते से ष् को जश्त्व करके उपयड्।

रिष् + विच् / विच् का सर्वापहारी लोप करके - रिष् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के लघु इ को गुण करके रेष् / रेष् + सु / सु का लोप करके - 'झलां जशोऽन्ते' से ष् को जश्त्व करके रेड्।

मनिन् प्रत्यय

मनिन् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इ की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके मन् शेष बचता है।

सु + दा + मनिन् / सु + दा + मन् = सुदामन् / प्रथमा एकवचन में सुदामन् + सु / सु का लोप करके - सुदामन् -

'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' सूत्र से उपधा को दीर्घ करके - सुदामान् / नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य से न् का लोप करके - सुदामा।

इसी प्रकार - अश्व + सु + स्था + मनिन् = अश्वत्थामा।

वनिप् प्रत्यय

वनिप् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से प् की तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र

से इ की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उनका लोप करके वन् शेष बचता है।

भूरि + दा + वनिप् / भूरि + दा + वन् = भूरिदावन् / प्रथमा एकवचन में भूरिदावा।

इसी प्रकार - घृत + ङस् + पा + वनिप् / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लोप करके पूर्ववत् = घृतपावा।

नन् प्रत्यय

'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की इत् संज्ञा करके तस्य लोपः सूत्र से उसका लोप करके न शेष बचता है। स्वप् + नन् / स्वप् + न = स्वप्नः।

थकन् प्रत्यय

थकन् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उसका लोप करके थक शेष बचता है। गै + थकन् / 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से ऐ को आत्व करके - गा + थक - गाथक = गाथकः।

रु प्रत्यय

दा + रु = दारु - दारुः / शद् + रु = शद्रुः / सद् + रु = सद्रुः / धे + रु - 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से ए को आत्व करके - धा + रु = धारुः / सि + रु - सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से गुण करके - से + रु = सेरुः।

र प्रत्यय

नम् + र = नम्रः / कम्प् + र = कम्प्रः / नञ् + जस् + र - नञ् के ञ् की 'हलन्त्यम्' से इत् संज्ञा होकर और न् का 'नलापो नञः' से लोप होकर -

अ + जस् + र = अजस्रः / कम् + र = कम्रः / हिंस् + र = हिंस्रः / दीप् + र = दीप्रः / स्मि + र = स्मेरः।

से, सेन्, असे, असेन्, अध्यै, अध्यैन् प्रत्यय

ये सारे प्रत्यय वैदिक हैं।

वच् + से / 'चोः कुः' से च् को कुत्व करके - वक् + से / 'आदेशप्रत्यययोः' से स को षत्व करके - वक् + षे / क् + ष् को क्ष् बनाकर = वक्षे।

जीव् + असे = जीवसे / उप + आ + चर् + अध्यै = उपाचरध्यै।

वरच् प्रत्यय

स्था + वरच् - स्था + वर = स्थावरः / ईश् + वरच् = ईश्वरः / भास्

+ वरच् = भास्वरः / वि + कस् + वरच् = विकस्वरः / पिस् + वरच् - 'पुन्तलघूपधस्य च' से उपधागुण करके - पेस्वरः ।

यत् प्रत्यय

यत् प्रत्यय भी समस्त धातुओं से नहीं लगाया जाता है।

यत् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से त् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से उसका लोप करके 'य' शेष बचाइये। यत् प्रत्यय भी कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न है।

आकारान्त धातुओं से यत् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

ईद्यति - यत् प्रत्यय परे होने पर धातु के 'आ' को 'ई' आदेश होता है।

पा + यत् - पी + य / ई को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - पे + य = पेय / पेय + सु = पेयम् (पीने योग्य)।

एजन्त धातुओं से यत् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

आदेच उपदेशेऽशिति (६.१.४५) - शित् भिन्न प्रत्यय परे होने पर एजन्त धातु के अन्तिम 'एच्' के स्थान पर 'आ' आदेश होता है।

गै + यत् - गा + य / 'ईद्यति' सूत्र से 'आ' को 'ई' आदेश करके - गी + य / ई को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - गे + य = गेय, गेयम् (गाने योग्य)।

इकारान्त, ईकारान्त धातुओं से यत् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

जि + यत् - इ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - जे + य = जेय, जेयम् (जीतने योग्य)।

नी + यत् - इ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - ने + य = नेय, नेयम् (ले जाने योग्य)।

उकारान्त, ऊकारान्त धातुओं से यत् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

हु + यत् - अन्तिम उ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' से गुण करके - हो + य-

धातोस्तन्निमित्तस्यैव (६.१.८०) - धातु को निमित्त मानकर बने हुए जो ओ, औ, उन्हें क्रमशः अव्, आव् आदेश होते है, यकारादि प्रत्यय परे होने पर।

हो + य - हव् + य = हव्यम् (हवि देने योग्य)।

लू + यत् - अन्तिम उ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - लो + य / धातोस्तन्निमित्तस्यैव सूत्र से ओ को अव् आदेश करके - लव् + य = लव्यम् (काटने योग्य)।

ऋकारान्त, ॠकारान्त धातुओं से यत् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

ऋकारान्त, ॠकारान्त धातुओं से यद्यपि 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से ण्यत् का विधान है, तथापि अपवाद बनकर कुछ धातुओं से यत् प्रत्यय भी हो जाता है। ये इस प्रकार हैं-

वृ + यत् - अन्तिम ऋ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - वर् + य = वर्य / स्त्रीलिङ्ग में 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् करके - शतेन वर्या कन्या (सौ लोगों से वरण करने योग्य कन्या), सहस्रेण वर्या कन्या (सहस्र लोगों से वरण करने योग्य कन्या)।

ऋ + यत् - अन्तिम ऋ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - अर् + य = अर्य - अर्यः (स्वामी अथवा वैश्य)

उपसृ + यत् से इसी प्रकार उपसर्य, बनाकर स्त्रीलिङ्ग में उपसर्या बनाइये।

जॄ + यत् से इसी प्रकार जर्य, बनाकर, नञ् समास करके - न जर्यं अजर्यं बनाइये।

हलन्त धातु - शप् - शप्यम् / जप् - जप्यम् / लभ् - लभ्यम् / रभ् - रभ्यम् / गम् - गम्यम् / तक्यम् / शस्यम् / चत्यम् / जन्यम्। शक् - शक्यम् / सह् - सह्यम् / गद् - गद्यम् / मद् - मद्यम् / चर् - चर्यम् / यम् - यम्यम् / आ + चर् + यत् - आचर्यम्।

खच् प्रत्यय

खच् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की तथा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से ख् की इत् संज्ञा करके तस्य लोपः सूत्र से उनका लोप करके अ शेष बचता है।

ख् की इत् संज्ञा होने के कारण यह प्रत्यय खित् है।

प्रियंवदः - प्रियं वदति इति प्रियंवदः / प्रिय + ङस् + वद् + खच् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - प्रिय + वद् + अ /

प्रत्यय के खित् होने का फल -

अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् (६.३.६७) - अरुष्, द्विषत् और अजन्त अनव्यय शब्दों को मुम् (म्) का आगम होता है, खिदन्त परे होने पर।

इस सूत्र से मुम् का आगम करके - प्रिय + मुम् + वद् + अ / मुम् में उ और म् की इत् संज्ञा करके - प्रिय + म् + वद् + अ / 'मोऽनुस्वारः' से म् को अनुस्वार करके तथा प्रियंवद / प्रियंवद + सु = प्रियंवदः। इसी प्रकार वशंवदः, सर्वंसहः।

सर्वंकषः, अभ्रंकषः, कूलंकषा, करीषंकषा, आदि में **'वा पदान्तस्य'** से विकल्प

से अनुस्वार को परसवर्ण करके - सर्वङ्कषः, अभ्रङ्कषः, कूलङ्कषा, करीषङ्कषा भी बनाइये।

विश्वंभरः - विश्वं भरति इति विश्वंभरः, इसमें - विश्व + ङस् + भृ + खच् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - ऋ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके तथा शेष मुमागमादि कार्य पूर्ववत् करके - विश्वंभरः।

इसी प्रकार - कृ धातु से प्रियंकरः, क्षेमंकरः, भयंकरः, अभयंकरः, मेघंकरः, ऋतिंकरः, मद्रंकरः, आदि / वृ धातु से पतिंवरा कन्या, तॄ से रथन्तरं साम आदि बनाइये।

इसी प्रकार भू धातु से - आशित + ङस् + भू + खच् / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके तथा शेष कार्य पूर्ववत् करके - आशितंभवम्, आशितंभवः आदि।

शत्रु + ङस् + जि + खच् / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके तथा शेष कार्य पूर्ववत् करके - शत्रुंजयः।

दम् से अरिन्दमः, तप् से शत्रुंतपः, गम् से मितंगमः आदि बनाइये।

पुरन्दरः - पुरं दारयति इति पुरन्दरः - पुर् + ङस् + दॄ + णिच् + खच् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - पुर् + दॄ + णिच् + खच् / ख्, च् की इत् संज्ञा करके तथा 'अचो ञ्णिति' सूत्र से ॠ को वृद्धि करके - पुर् + अम् + दार् + णिच् + अ -

'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से ङस् का लुक् करके - पुर् + दार् + णिच् + अ / अब देखिये कि पुर् शब्द अजन्त नहीं है, अतः इसे 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' सूत्र से मुमागम नहीं हो सकता। इसलिये यहाँ वाचंयमपुरन्दरौ सूत्र से पुर् को अमन्त निपातन करके - पुरम् + दार् + णिच् + अ -

खचि ह्रस्वः (६.४.९४) - खच्परक णिच् परे होने पर अङ्ग की उपधा को ह्रस्व होता है। पुरम् + दर् + णिच् + अ / णेरनिटि से णिच् का लोप करके - पुरं + दर् + अ = पुरन्दरः।

द्विषन्तपः - द्विषत् + ङस् + तप् + णिच् + खच् / अनुबन्धकार्य करके, 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके, 'अत उपधायाः' सूत्र से उपधा

के अ को वृद्धि करके - द्विषत् + ताप् + इ + अ / 'खचि ह्रस्वः' सूत्र से ताप् की उपधा को ह्रस्व करके -

द्विषत् + तप् + इ + अ / 'अरुर्दिषदजन्तस्य मुम्' से मुम् का आगम करके - (ध्यान दें कि मुम् मित् है अतः यह 'मिदचोऽन्त्यात्परः' सूत्र से द्विषत् के अन्तिम अच् के बाद होगा।) द्विष + म् + त् + तप् + अ / अब 'संयोगान्तस्य लोपः' से त् का लोप करके पूर्ववत् - द्विषम् + तप् + अ = द्विषन्तपः।

युगन्धरः - युग + ङस् + धृ + णिच् + खच् / पूर्ववत् समासत्वात् 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से ङस् का लोप करके - युग + धृ + णिच् + खच् / 'अचो ञ्णिति' सूत्र से ऋ को वृद्धि करके - युग + धार् + णिच् + अ / 'खचि ह्रस्वः' सूत्र से धार् की उपधा को ह्रस्व करके - युग + धर् + णिच् + अ / 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' से मुम् का आगम करके - युग + म् + धर् + अ = युगन्धरः।

वाचंयमः - वाचं यच्छति इति वाचंयमः - वाच् + ङस् + यम् + खच् / वाच् + खच् / अब देखिये कि वाच् शब्द अजन्त नहीं है, अतः इसे 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' सूत्र से मुमागम नहीं हो सकता। इसलिये यहाँ 'वाचंयमपुरन्दरौ' सूत्र से वाच् को अमन्त निपातन करके - वाचंयमः।

विहंगमः - विहायस् + टा + गम् + खच् / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से टा का लोप करके - विहायस् + गम् + अ -

'विहायसो विहादेशो वक्तव्यः' इस वार्तिक से विहायस् को विह आदेश करके और उसे मुम् आगम करके - विहंगमः।

विहंगः - विहायस् + टा + गम् + खच् / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से टा का लोप करके - विहायस् + गम् + अ / **'विहायसो विहादेशो वक्तव्यः' (वा)** से विहायस् को विह आदेश करके - विह + गम् + अ / मुम् आगम करके - विह + मुम् + गम् + अ /

'खच्च डिद् वा वक्तव्यः' (वा) - खच् प्रत्यय विकल्प से डित्वत् होता है।

प्रत्यय के डित् होने का फल -

टेः **(६.४.१४३)** - डित् प्रत्यय परे होने पर अङ्ग की टि का लोप होता है।

(यद्यपि इस सूत्र से होने वाला टिलोप, भसंज्ञक अङ्ग को ही होता है किन्तु 'डित्यभस्याप्यनुबन्धकरणसामर्थ्यात्' इस भाष्य वार्तिक से भसंज्ञा न होने पर भी डित्चकरण

के सामर्थ्य से डित् प्रत्यय परे होने पर टि का लोप हो जाता है।)

अतः विह + मुम् + गम् + अ / 'टि' का लोप करके - विह + मुम् + ग् + अ / मोऽनुस्वारः से म् को अनुस्वार करके = विहंगः। **'वा पदान्तस्य'** से विकल्प से अनुस्वार को परसवर्ण करके - विहङ्गः।

ख्युन् प्रत्यय

ख्युन् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से न् की तथा लशक्वतद्धिते सूत्र से ख् की इत्संज्ञा होकर यु शेष बचता है, जिसे युवोरनाकौ सूत्र से 'अन' आदेश होता है। यह प्रत्यय भी खित् है।

अनाढ्यम् आढ्यं कुर्वन्ति अनेन इति आढ्यंकरणम् -

आढ्य + ङस् + कृ + ख्युन् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - आढ्य + कृ + अन / ख् की इत् संज्ञा होने के कारण अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् से मुम् का आगम करके - आढ्य + मुम् + कृ + अन / ऋ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके, न को णत्व करके तथा शेष कार्य पूर्ववत् करके - आढ्यंकरणम्।

इसी प्रकार - सुभगंकरणम्। प्रियंकरणम्। स्थूलंकरणम्। पलितंकरणम्। नग्नंकरणम्। अन्धंकरणम्।

खिष्णुच् प्रत्यय

'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की तथा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से ख् की इत्संज्ञा होकर इष्णु शेष बचता है। यह प्रत्यय भी कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न है।

अनाढ्य आढ्यो भवति इति आढ्यंभविष्णुः -

आढ्य + ङस् + भू + खिष्णुच् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, कृत्तद्धितसमासाश्च से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - आढ्य + भू + इष्णु / ख् की इत् संज्ञा होने के कारण अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् से मुम् का आगम करके - आढ्य + मुम् + भू + इष्णु / ऊ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके, अवादेश करके तथा शेष कार्य पूर्ववत् करके - आढ्यंभविष्णुः।

खल् प्रत्यय

खल् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से ल् की तथा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से ख् की इत्संज्ञा होकर अ शेष बचता है। यह प्रत्यय भी कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न है।

ईषद् उपपद में होने पर धातुओं से खल् लगाकर -

ईषद् + कृ + खल् / पूर्ववत् समासादि करके, ऋ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से अर् गुण करके, ईषत्करः । इसी प्रकार - ईषद् + भुज् + खल् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के लघु उ को गुण करके - ईषद्भोजः ।

दुस् उपपद में होने पर धातुओं से खल् लगाकर -

दुः + कृ + खल् / ऋ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से अर् गुण करके - दुः + कर् + अ -

इदुदुपधस्य चाप्रत्ययस्य (८.३.४१) - इकारोपध, उकारोपध प्रत्ययभिन्न जो विसर्ग, उसे षकारादेश होता है, कवर्ग पवर्ग परे होने पर।

इस सूत्र से विसर्ग को षत्व करके - दुष् + कर - दुष्करः ।

दुस् + भुज् + खल् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के लघु उ को गुण करके - दुस् + भोज् + अ / स् को 'ससजुषो रुः' से रुत्व करके - दुर्भोजः ।

सु उपपद में होने पर धातुओं से खल् लगाकर -

सु + कृ + खल् / ऋ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से अर् गुण करके, सुकरः । इसी प्रकार - सु + भुज् + खल् / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के लघु उ को गुण करके - सुभोजः ।

ध्यान दें कि ईषद् शब्द अजन्त नहीं है और दुस्, सु अव्यय हैं, अतः इन्हें अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् सूत्र से मुम् का आगम नहीं हुआ है।

किन्तु आढ्य शब्द अजन्त अनव्यय है अतः इसके बाद खिदन्त आने पर मुम् का आगम होगा -

ईषद् + आढ्य + ङस् + भू + खल् / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - ईषद् + आढ्य + भू + अ / ख् की इत् संज्ञा होने के कारण 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' से मुम् का आगम करके - ईषद् + आढ्य + मुम् + भू + अ / ऊ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके, अवादेश करके तथा शेष कार्य पूर्ववत् करके - ईषदाढ्यंभवम् ।

इसी प्रकार दुर् से दुराढ्यंभवम् और सु से स्वाढ्यंभवम् बनाइये।

ईषद् + आढ्य + ङस् + कृ + खल् / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से अम् का लुक् करके - ईषद् + आढ्य + कृ + अ -

ख् की इत् संज्ञा होने के कारण 'अरुर्दिषदजन्तस्य मुम्' से मुम् का आगम करके

- ईषद् + आढ्य + मुम् + कृ + अ / ऋ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके, तथा शेष कार्य पूर्ववत् करके - ईषदाढ्यंकरः। इसी प्रकार दुर् से दुराढ्यंकरः और सु से स्वाढ्यंकरः बनाइये।

डु प्रत्यय

डु प्रत्यय में 'चुटू' सूत्र से ड् की इत्संज्ञा होकर उ शेष बचता है। यह प्रत्यय डित् है। अतः इसके लगने पर 'टेः' सूत्र से अङ्ग की टि का लोप होगा।

वि + भू + डु / वि + भू + उ / डित् होने के कारण 'टेः' सूत्र से भू की 'टि' का लोप करके - वि + भ् + उ = विभुः।

इसी प्रकार प्रभुः, संभुः, मितद्रुः, शंभुः आदि बनाइये।

ड प्रत्यय

ड प्रत्यय में 'चुटू' सूत्र से ड् की इत्संज्ञा होकर अ शेष बचता है। यह प्रत्यय डित् है। अतः ड प्रत्यय लगने पर 'टेः' सूत्र से अङ्ग की टि का लोप होगा।

अन्तगः - अन्त + गम् + ड / 'टेः' सूत्र से टि का लोप होकर - अन्त + ग् + अ = अन्तगः। इसी प्रकार अत्यन्तगः, दूरगः, पारगः, सर्वगः, अनन्तगः, सर्वत्रगः, आदि बनाइये।

अध्वगः - अध्वन् + गम् + ड / यहाँ 'नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य से न् का लोप होगा। शेष कार्य पूर्ववत् होकर - अध्वगः।

शत्रुहः - शत्रु + ङस् + हन् + ड / पूर्ववत् टि का लोप करके - शत्रुहः।

इसी प्रकार दुःखहः आदि बनाइये।

क्लेशापहः - क्लेश + अप + हन् से पूर्ववत् - क्लेशापहः।

तमोऽपहः - तमस् + ङस् + अप + हन् से पूर्ववत् टिलोप करके - तमस् + अपह् + अ / ससजुषो रुः से स् को रुत्व करके - तम रु + अपह / 'अतो रोरप्लुतादप्लुते' से रु को उत्व करके - तम उ + अपह / आद्गुणः से उ को गुण करके - तमो + अपह / 'एङः पदान्तादति' से अ को पूर्वरूप करके - तमोऽपहः।

मन्दुरायां जातः मन्दुरजः - मन्दुरा + ङि + जन् + ड / 'उपपदमतिङ्' सूत्र से समास करके, 'कृत्तद्धितसमासाश्च' से प्रातिपदिक संज्ञा करके 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लुक् करके - मन्दुरा + जन् + अ / पूर्ववत् टिलोप करके - मन्दुरा + ज् + अ / **ङ्यापोः संज्ञाछन्दसोर्बहुलम् (६.१.३१)** - सूत्र से ह्रस्व करके - मन्दुरजः।

उपसरे जातः उपसरजः - उप + सर + ङि + जन् + ड / पूर्ववत् - उपसरजः ।

इसी प्रकार - कटजः, वारिजः आदि बनाइये ।

सरसि जातं सरसिजम् - सरस् + ङि + जन् + ड / टेः सूत्र से टि का लोप होकर तथा 'तत्पुरुषे कृति बहुलम्' (६.३.१४) सूत्र से सप्तमी का अलुक् होकर - सरसिजम् ।

गिरौ शेते गिरिशः - गिरि + ङि + शी + ड / पूर्ववत् टिलोप करके - गिरि + श् + अ = गिरिशः ।

शोकात् जातः शोकजः - शोक + ङसि + जन् + ड / पूर्ववत् टि का लोप करके - शोकज् + अ - शोकजः ।

इसी प्रकार - संस्कारात् जातः संस्कारजः / बुद्धेः जातः बुद्धिजः / ब्राह्मणात् जातः ब्राह्मणजः / क्षत्रियात् जातः क्षत्रियजः / आदि बनाइये ।

प्रकर्षेण जाता प्रजा - प्र + जन् + ड / पूर्ववत् टि का लोप करके - प्रज् + अ - प्रज - स्त्रीत्व की विवक्षा में टाप् करके - प्रजा ।

पुमांसम् अनुजातः पुमनुजः - पुम् + अम् + अनु + जन् + ड / पूर्ववत् टि का लोप करके - पुमनुजः । इसी प्रकार - स्त्र्यनुजः ।

अन्य उपपद होने पर भी इसी प्रकार - अजः, परिजः, द्विजः, स्त्र्यगारगः, गुरुतल्पगः आदि बनाइये ।

ब्रह्म जिनाति इति ब्रह्मज्यः - ब्रह्म + ङस् + ज्या + ड / पूर्ववत् टि का लोप करके - ब्रह्मज्यः ।

परिखा - अन्य धातुओं से भी ड प्रत्यय होता है । यथा - परि + खन् + ड / पूर्ववत् टिलोप होकर - परिख / स्त्रीत्व की विवक्षा में टाप् करके - परिखा ।

आखः - आ + खन् + ड / पूर्ववत् टिलोप करके - आखः ।

विहगः - विहायस् + ङि + गम् + ड - समास, सुब्लुक् आदि कार्य करके- '**डे च विहायसो विहादेशो वक्तव्यः**' इस वार्तिक से विहायस् को विह आदेश करके - विह + गम् + अ / पूर्ववत् टिलोप करके - विहगः ।

डर प्रत्यय

डर प्रत्यय में चुटू सूत्र से ड् की इत्संज्ञा होकर अर शेष बचता है । यह प्रत्यय डित् है । आ + खन् + डर / पूर्ववत् - आखरः ।

ऊक प्रत्यय

जागृ + ऊक - 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - जागर् + ऊक = जागरूकः। यायज् + ऊक - यायजूकः, जञ्जप् + ऊक - जञ्जपूकः। दन्दश् + ऊक - दन्दशूकः।

घ प्रत्यय

'लशक्वतद्धिते' सूत्र से घ् की इत्संज्ञा होकर अ शेष बचता है।

दन्त + छद् + णिच् + घ / 'अत उपधायाः' सूत्र से उपधा के अत् को वृद्धि करके - दन्तछाद् + इ + अ / 'णेरनिटि' से णिच् का लोप करके - दन्तछाद् + अ-

छादेर्घेऽद्व्युपसर्गस्य (६.४.९६) - इस सूत्र से छाद् के अ को ह्रस्व करके - दन्तछद् + अ = दन्तछदः। **छे च** (६.१.७३) सूत्र से तुक् का आगम करके - दन्त + तुक् + छद् / त् को 'स्तोः श्चुना श्चुः' से श्चुत्व करके - दन्तच्छदः।

आखन् + घ / आखन् + अ = आखनः।

आ + कृ + घ / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - आकर् + अ = आकरः / आ + ली + घ / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके तथा 'एचोऽयवायावः' सूत्र से अय् आदेश करके - आलय् + अ = आलयः।

घुरच् प्रत्यय

घुरच् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की तथा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से घ् की इत्संज्ञा होकर उर शेष बचता है। ध्यान रहे कि यह प्रत्यय भी घित् है।

भास् + घुरच् - भास् + उर = भासुरः।

मिद् + घुरच् - मिद् + उर - 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा को गुण होकर = मेदुरः।

प्रत्यय के घित् होने का फल -

चजोः कु घिण्ण्यतोः - (७.३.५२) - चकारान्त और जकारान्त धातुओं को कुत्व होता है, घित् तथा ण्यत् प्रत्यय परे होने पर।

(ध्यान रहे कि च् चवर्ग का पहिला अक्षर है अतः उसके स्थान पर कवर्ग का पहिला अक्षर क् ही होगा। ज् चवर्ग का तीसरा अक्षर है अतः उसके स्थान पर कवर्ग का तीसरा अक्षर ज् ही होगा।)

भञ्ज् + घुरच् / भञ्ज् + उर / भङ्ग् + उर = भङ्गुरः।

ष्ट्रन् प्रत्यय

'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की तथा 'षः प्रत्ययस्य' सूत्र से ष् की इत्संज्ञा करके त्र शेष बचता है। यह प्रत्यय भी कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न है।

आकारान्त धातु - दा + त्र - दात्रम्। इसी प्रकार -

धा + त्र - धात्र। ष् की इत्संज्ञा होने के कारण स्त्रीत्व की विवक्षा में इससे 'षिद्गौरादिभ्यः' सूत्र से ङीष् प्रत्यय होगा। धात्र + ङीष् / 'यस्येति च' से अ का लोप होकर - धात्री।

इकारान्त, ईकारान्त धातु - नी + ष्ट्रन् / उ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - ने + त्र - नेत्रम्। इसी प्रकार सि + ष्ट्रन् से सेत्रम्।

उकारान्त धातु - यु + ष्ट्रन् / यु + त्र / उ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - यो + त्र - योत्रम्। स्तु + ष्ट्रन् से स्तोत्रम्। पू से पोत्रम्।

हलन्त धातु - युज् + ष्ट्रन् / युज् + त्र / 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के उ को गुण करके - योज् + त्र - 'चोः कुः' से कुत्व करके - योग् + त्र / खरि च से चर्त्व करके - योक्त्रम्।

सिच् + ष्ट्रन् / सिच् + त्र / उपधा को 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण करके - सेच् + त्र - 'चोः कुः' से कुत्व करके - सेक् + त्र - सेक्त्रम्।

तुद् + ष्ट्रन् / तुद् + त्र / उपधा को 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण करके - तोद् + त्र - खरि च से चर्त्व करके - तोत्त्रम्।

मिह् + ष्ट्रन् / मिह् + त्र / उपधा को 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण करके - मेह् + त्र - हो ढः से ह् को ढत्व करके - मेढ् + त्र / 'झषस्तथोर्धोऽधः' से त् को ध् करके - मेढ् + ध्र / ष्टुना ष्टुः से ध् को ष्टुत्व करके - मेढ् + ढ्र / 'ढो ढे लोपः' से पूर्व ढ् का लोप करके - मेढ्रम्।

नह् + ष्ट्रन् / नह् + त्र / नहो धः सूत्र से ह् हो ध् करके - नध् + त्र / 'झषस्तथोर्धोऽधः' से त् को ध् करके - नध् + ध्र / 'झलां जश् झशि' से ध् को जश्त्व करके - नद् + ध्र / स्त्रीत्व की विवक्षा में इससे ङीष् प्रत्यय करके - नद्ध्री।

दंश् + ष्ट्रन् / दंश् + त्र / 'व्रश्चभ्रस्ज्'. सूत्र से श् को ष् करके - दंष् + त्र / ष्टुना ष्टुः से त को ष्टुत्व करके - दंष् + ट्र -

दंष्ट्रा शब्द अजादिगणपठित है, अतः स्त्रीत्व की विवक्षा में 'अजाद्यतष्टाप्' से

टाप् प्रत्यय करके - दंष्ट्रा। इसी प्रकार शस् से शस्त्रम् / पत् से पत्रम्।

(जो सन्धियाँ की हैं, उन्हें अगले पाठ में देखिये।)

तवेन् प्रत्यय

ध्यान रहे कि यह प्रत्यय वैदिक या छान्दस है।

गम् + तवेन् / 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की इत्संज्ञा होकर तथा म् को 'नश्चापदान्तस्य झलि' से अनुस्वार होकर - गं + तवे / 'अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः' सूत्र से अनुस्वार को परसवर्ण होकर - गन्तवे।

कृ + तवेन् / 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' से गुण करके - कर् + तवे - कर्तवे।

इसी प्रकार - हृ + तवेन् = हर्तवे। स्वर्देवेषु गन्तवे, कर्तवे, हर्तवे।

त्वन् प्रत्यय

ध्यान रहे कि यह प्रत्यय भी वैदिक या छान्दस है।

कृ + त्वन् / 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की इत्संज्ञा होकर कृ + त्व -

सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से ऋ को गुण करके - कर् + त्व - कर्त्व - कर्त्वम्।

तवै प्रत्यय

यह प्रत्यय भी कित्, ङित्, ञित्, णित् से भिन्न है। ध्यान रहे कि यह प्रत्यय वैदिक या छान्दस है। परि + धा + तवै = परिधातवै।

अनु + इ + तवै / इ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - अनु + ए + तवै / इको यणचि से यण् करके = अन्वेतवै।

परि + स्तॄ + तवै / ॠ को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके - परि + स्तर् + तवै / सेट् धातु होने के कारण 'आर्धधातुकस्येड् वलादेः' सूत्र से इडागम होकर = परि + स्तर् + इ + तवै = परिस्तरितवै।

तोसुन् प्रत्यय

ध्यान रहे कि यह प्रत्यय वैदिक या छान्दस है।

अभि + चर् + तोसुन् / 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की इत्संज्ञा होकर - अभि + चर् + तोस् / 'आर्धधातुकस्येड् वलादेः' सूत्र से तोसुन् को इडागम होकर - अभि + चर् + इट् + तोस् / अभि + चर् + इ + तोस् / स् को रुत्व विसर्ग होकर - अभिचरितोः। ईश्वरोऽभिचरितोः।

❀ ❀ ❀

हल् सन्धि

अब हम धातुओं में **तुमुन्, तव्य, तव्यत्, तृच्, तृन्, क्त, क्तवतु, क्त्वा, क्तिन्,** प्रत्यय लगायेंगे। ध्यान दें कि ये सारे प्रत्यय तकारादि हैं।

यहाँ हम केवल यही विचार करेंगे कि हलन्त धातुओं के बाद, तकारादि प्रत्ययों के आने पर सन्धि किस प्रकार होगी। इसे भलीभाँति जानकर ही हम इन प्रत्ययों में प्रवेश करेंगे।

ध्यान रहे कि तकारादि प्रत्ययों के आदि में कभी कभी 'इट्' का आगम हो जाता है। जो आगे बतलाया जायेगा। यथा - लिख् + तव्य - लेख् + इ + तव्य / यहाँ ध्यान दें कि अब ख् के बाद प्रत्यय का 'त' न दिखकर 'इ' दिख रहा है।

जब भी अपदान्त हल् के बाद अच् आता है, तब कोई सन्धि नहीं होती, अपितु हल् + अच् का संयोगमात्र होता है। अतः लेख् + इ + तव्य को जोड़कर लेखितव्य बना लीजिये। इसी प्रकार - पठ् + इ + तव्य = पठितव्य आदि बनाइये।

किन्तु जब प्रत्यय को इट् का आगम नहीं होता है, तब धातु के अन्तिम हल् के बाद प्रत्यय का हल् दिखता है। जैसे - रुध् + त / बोध् + तव्य / दह् + क्त्वा, आदि। ऐसी स्थिति में दोनों हलों के मध्य किस प्रकार से सन्धि की जाये, यह जानना अत्यावश्यक है। अतः इस पाठ में तकारादि प्रत्यय परे होने पर होने वाले सन्धिकार्यों का निरूपण किया जा रहा है।

'त' झल् भी है और खर् भी है। अतः तकारादि प्रत्ययों के परे होने पर, वे कार्य प्राप्त होंगे, जो सूत्रों में झल् और खर् को निमित्त मानकर कहे गये हैं।

ये कार्य इस प्रकार होंगे -

पहिले हम प्रत्येक वर्ग के प्रथम, द्वितीय, तृतीय वर्णों से अन्त होने वाले धातुओं को तकारादि प्रत्ययों में जोड़ें -

क्, ख्, ग् से अन्त होने वाले धातु

खरि च - खर् परे होने पर झल् के स्थान पर चर् होता है।

अर्थात् यदि प्रत्यय के आदि में खर् (वर्ग का प्रथम या द्वितीय अक्षर अथवा श, ष, स) हो, तब उसके पहिले वाला वर्ण अपने वर्ग का प्रथमाक्षर (चर्) बन जाता है।

अतः तकारादि प्रत्यय परे होने पर क् ख् ग् को खरि च सूत्र से क् बनाइये

तथा प्रत्यय के त् को कुछ मत कीजिये -

शाशक्	+	ति	-	शाशक्	+	ति	= शाशक्ति
लेलेख्	+	ति	-	लेलेक्	+	ति	= लेलेक्ति
तात्वङ्ग्	+	ति	-	तात्वङ्क्	+	ति	= तात्वङ्क्ति

च्, छ्, ज् से अन्त होने वाले धातु

चवर्गान्त धातुओं के तीन वर्ग बनाइये -

१. व्रश्च्, भ्रस्ज्, सृज्, मृज्, यज्, राज्, भ्राज् तथा सारे छकारान्त धातु -

स्कोः संयोगाद्योरन्ते च (८.२.२९) - संयोग के आदि में स्थित क्, स् का लोप होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में।

जैसे - भ्रस्ज् + तुम् / इस धातु के अन्त में स् + ज् का संयोग है। इसके बाद झल् है। अतः झल् परे होने पर इस संयोग के आदि अवयव 'स्' का लोप करके - भ्रज् + तुम्। इसी प्रकार -

व्रश्च् + तुम् / संयोग के आदि अवयव 'स्' का लोप करके - व्रच् + तुम्।

(ध्यान रहे कि यहाँ जो 'श्' दिख रहा है, वह 'स्' ही है। यह 'स्' ही 'च्' से मिलकर 'स्तोः श्चुना श्चुः' सूत्र से श्चुत्व होकर 'श्' बन गया है।)

व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः (८.२.३६) - व्रश्च्, भ्रस्ज्, सृज्, मृज्, यज्, राज्, भ्राज्, छकारान्त तथा शकारान्त धातुओं के अन्तिम वर्ण को ष् होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में।

ष्टुना ष्टुः (८.४.४७) - सकार तवर्ग के स्थान पर षकार, टवर्ग होता है, षकार, चवर्ग के योग में। इस सूत्र से ष् के बाद आने वाले 'त' को 'ट' बनाइये -

व्रश्च्	+	ता	-	व्रष्	+	टा	= व्रष्टा
भ्रस्ज्	+	ता	-	भ्रष्	+	टा	= भ्रष्टा
सृज्	+	ता	-	स्रष्	+	टा	= स्रष्टा
मृज्	+	ता	-	म्रष्	+	टा	= म्रष्टा
यज्	+	ता	-	यष्	+	टा	= यष्टा
प्रच्छ्	+	ता	-	प्रष्	+	टा	= प्रष्टा
क्रोश्	+	ता	-	क्रोष्	+	टा	= क्रोष्टा

२. मस्ज् धातु - मस्जिनशोर्झलि (७.१.६०) - मस्ज् और नश् धातु को नुम्

का आगम होता है, झल् परे होने पर।

मस्जेरन्त्यात् पूर्वं नुम् वक्तव्यः (वा.) - मस्जिनशोझलि से होने वाला नुमागम नुम् 'मिदचोऽन्त्यात्परः' से अन्तिम अच् के बाद न होकर अन्तिम अच् के पूर्व होता है।

मस्ज् + ता / म स् न् ज् + ता / **स्कोः संयोगाद्योरन्ते च** सूत्र से स् का लोप करके - म न् ज् + ता / 'चोः कुः' सूत्र से ज् को कुत्व करके - म न् ग् + ता - खरि च सूत्र से ग् को चर्त्व करके - म न् क् + ता / नश्चापदान्तस्य झलि सूत्र से न् को अनुस्वार करके - मंक् + ता / अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः सूत्र से अनुस्वार को परसवर्ण करके - मङ्क्ता। इसी प्रकार - मङ्क्तुम्। मङ्क्तव्य, आदि।

३. शेष चकारान्त तथा जकारान्त धातु -

ध्यान रहे कि हम अभी केवल प्रथम, द्वितीय, तृतीय वर्णों का ही विचार कर रहे हैं। चवर्ग के द्वितीयाक्षर 'छ्' को तो हम ष् बना ही चुके हैं। अतः च्, ज् ही बचे।

चोः कुः (८.२.३०) - व्रश्च्, भ्रस्ज्, सृज्, मृज्, यज्, राज्, भ्राज् तथा छकारान्त धातुओं से बचे हुए जो चवर्गान्त धातु, उनके 'चवर्ग' के स्थान पर 'कवर्ग' होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में।

च्, ज् को 'चोः कुः' सूत्र से कुत्व करके क्, ग् बनाइये, उसके बाद उन्हें 'खरि च' से चर्त्व करके 'क्' बना दीजिये, और प्रत्यय के त को कुछ मत कीजिये। यथा -

पच् + ता - पक् + ता = पक्ता
त्यज् + ता - त्यग् + ता = त्यक्ता

ट्, ठ्, ड् से अन्त होने वाले धातु

अन्तिम ट् ठ् ड् को खरि च सूत्र से ट् बनाइये। उसके बाद ष्टुना टुः सूत्र से प्रत्यय के त को ट बनाइये।

चोकुट् + तः - चोकुट् + टः = चोकुट्टः
लोलुठ् + तः - लोलुट् + टः = लोलुट्टः
ईड् + ते - ईट् + टे = ईट्टे

त्, थ्, द् से अन्त होने वाले धातु

त् थ् द् को खरि च सूत्र से त् बनाइये। प्रत्यय के त को कुछ मत कीजिये -

पापत् + ति - पापत् + ति = पापत्ति
मामन्थ् + ति - मामन्त् + ति = मामन्ति

अद् + ति - अत् + ति = अत्ति

झरो झरि सवर्णे (८.४.६५) - हल् से परे जो झर्, उसका लोप होता है, झर् परे होने पर। अतः पूर्व तकार का विकल्प से लोप करके - मामन्त्ति, मामन्ति।

प्, फ्, ब् से अन्त होने वाले धातु

प् फ् ब् को खरि च सूत्र से प् बनाइये। प्रत्यय के त को कुछ मत कीजिये -

छोप्	+	ता	-	छोप्	+	ता	= छोप्ता
जोगुम्फ्	+	ति	-	जोगुम्प्	+	ति	= जोगुम्प्ति
लालम्ब्	+	ति	-	लालम्ब्	+	ति	= लालम्प्ति

यह सभी वर्गों के प्रथम, द्वितीय, तृतीय वर्णों का विचार पूर्ण हुआ।

वर्ग के चतुर्थ वर्ण से अन्त होने वाले अर्थात् झषन्त धातु

झषस्तथोर्धोऽधः (८.२.४०) - यदि धातु के अन्त में झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षर हैं, तब उनसे परे आने वाले 'त' और 'थ' को 'ध' हो जाता है।

यथा - लालङ्घ् + ति / धातु के अन्त में झष् अर्थात् वर्ग का चतुर्थाक्षर है, अतः उसके परे आने वाले 'त' को 'ध' करके - लालङ्घ् + धि -

झलां जश् झशि (८.४.५३) - अपदान्त झल् के स्थान में जश् होता है, झश् परे होने पर। यथा - लालङ्घ् + धि / लालङ्ग् + धि = लालङ्ग्धि /

हमने जाना कि जब धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर हो, तब धातुओं के बाद में आने वाले -

१. प्रत्यय के त, थ को **'झषस्तथोर्धोऽधः'** सूत्र से 'ध' होता है।

२. और धातु के अन्त में बैठे हुए, वर्ग के चतुर्थाक्षर को **'झलां जश् झशि'** सूत्र से उसी वर्ग का तृतीयाक्षर होता है।

दोघ्	+	ता	-	दोग्	+	धा	=	दोग्धा
लभ्	+	ता	-	लब्	+	धा	=	लब्धा
रोध्	+	ता	-	रोद्	+	धा	=	रोद्धा
जाझर्झ्	+	ति	-	जाझर्ग्	+	धि	=	जाझर्ग्धि

जाझर्ग्धि - जाझर्झ् + ति। यह चवर्गान्त है, अतः पहिले 'चोः कुः' से कुत्व करके अथ्रात् 'झ्' को कवर्ग का चतुर्थाक्षर 'घ्' बनाकर - जाझर्घ् + ति -

अब 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से प्रत्यय के 'त' को 'ध' बनाकर - जाझर्घ् + धि

/ अब 'झलां जश् झशि' सूत्र से घ् को जश्त्व करके - जाझर्ग् + धि - जाझर्ग्धि।

न्, म्, से अन्त होने वाले धातु

नकारान्त, मकारान्त धातुओं में अर्थात् अनुनासिकान्त धातुओं में प्रत्यय जोड़ने के पहिले यह निर्णय अवश्य कीजिये कि जो तकारादि प्रत्यय आप धातु में लगाने जा रहे हैं, वह तकारादि प्रत्यय कहीं कित् ङित् तो नहीं है ?

क्योंकि तकारादि प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं -

१. कित् ङित् तकारादि प्रत्यय, जैसे - क्त, क्तवतु, क्तिन् आदि।

२. कित् ङित् से भिन्न तकारादि प्रत्यय, जैसे - तुमुन्, तव्य, तृच्, आदि।

बहुत सावधानी से पहिचानिये, कि जो तकारादि प्रत्यय आप लगाने जा रहे हैं, वह तकारादि प्रत्यय कित् ङित् तकारादि प्रत्यय है अथवा कित् ङित् से भिन्न तकारादि है।

यदि नकारान्त, मकारान्त धातुओं अर्थात् अनुनासिकान्त धातुओं से लगा हुआ तकारादि प्रत्यय, कित् ङित् है, तब हमें सन्धि करने के पहिले अङ्गकार्य करने वाले दो सूत्रों को सामने रखकर ही सन्धि करना चाहिये।

१. अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति (६.४.३७) - अनुदात्तोपदेश मन्, हन्, गम्, रम्, नम्, यम् धातु / भ्वादिगण का वन् धातु, तथा तनादिगण के तन्, सन्, क्षण्, क्षिण्, ऋण्, तृण्, घृण्, वन्, मन् धातु, इन १६ धातुओं के अन्तिम अनुनासिक वर्णों का लोप हो जाता है, झलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर। यथा -

हन् + तः = हतः   गम् + तः = गतः
मन् + तः = मतः   रम् + तः = रतः

२. अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति (६.४.१५) -

इन १५ धातुओं के अलावा जितने भी अनुनासिकान्त धातु हैं, उनकी उपधा को, झलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर दीर्घ होता है।

शम् + क्त - शाम् + त - शां + त - शान् + त = शान्तः
वम् + क्त - वाम् + त - वां + त - वान् + त = वान्तः

जिन धातुओं को यह लोप या उपधादीर्घ कार्य प्राप्त हो, उसे पहिले कर लें। उसके बाद ही इन अनुनासिकान्त धातुओं में, सन्धि करें। जहाँ ये कार्य नहीं प्राप्त हैं, वहाँ सीधे सन्धि कर लीजिये।

सन्धि इस प्रकार कीजिये

नश्चापदान्तस्य झलि (८.३.२४) - जब पद के अन्त में नहीं, अपितु अपद के अन्त में न्, म् आयें, तो उन्हें अनुस्वार होता है, यदि उन न्, म् के बाद आने वाला व्यञ्जन झल् हो, अर्थात् वर्ग का प्रथम, द्वितीय, तृतीय, अथवा चतुर्थ व्यञ्जन हो अथवा श्, ष्, स्, ह्, हो। यथा -

मन् + ता / हन् + ता / शाम् + तः / गम् + ता / दाम् + तः / वाम् + तः / गम् + तुम् / रम् + तुम् / नम् + तुम् / आदि को देखिये।

इनमें मन्, हन्, गम् आदि तो 'धातु' हैं और ता, तः, तुम् आदि 'प्रत्यय' है। जब ये दोनों जुड़ जायेंगे तभी 'सुप्तिङन्तं पदं' सूत्र से इनका नाम 'पद' होगा। अभी तो ये पद नहीं हैं, अपद हैं।

इन अपदों के अन्त में स्थित नकार, मकार, अपदान्त नकार, मकार हैं और इनसे परे झल् है। ऐसे अपदान्त नकार, मकार को 'नश्चापदान्तस्य झलि' सूत्र से अनुस्वार होता है। जैसे -

मन् + ता = मंता / हन् + ता = हंता / गम् + ता = गंता / यम् + ता = यंता / रम् + ता = रंता / शाम् + त = शांत / वाम् + त = वांत / दाम् + त = दांत / आदि।

अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः (८.४.५८) - अनुस्वार को परसवर्ण होता है, यय् परे होने पर। यय् का अर्थ होता है, श् स् ष् ह् को छोड़कर सारे व्यञ्जन।

परसवर्ण - परसवर्ण का अर्थ होता है, अपने आगे आने वाले वर्ण के समान, उसी स्थान का वर्ण बन जाना।

जैसे - मंता = मन्ता / हंता = हन्ता / गंता = गन्ता / यंता = यन्ता / शांत = शान्तः / वांत = वान्तः / दांत = दान्तः / गं + तुम् = गन्तुम् / रं + तुम् = रन्तुम् / नं + तुम् = नन्तुम्।

य्, व्, से अन्त होने वाले धातु

यकारान्त, धातुओं के 'य्' का 'लोपो व्योर्वलि' सूत्र से लोप कीजिये। जैसे - जाहय् + ति = जाहति / जाहय् + तः = जाहतः / जाहय् + थः = जाहथः आदि।

शकारान्त धातु

शकारान्त धातुओं के 'श्' को **'व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः'** सूत्र

से 'ष्' बनाइये और प्रत्यय के त को ष्टुना ष्टुः सूत्र से ट बनाइये -

क्रुश्	+	तः	-	क्रुष्	+	टः	=	क्रुष्टः
विश्	+	तः	-	विष्	+	टः	=	विष्टः

षकारान्त धातु

धातुओं के 'ष्' को कुछ मत कीजिये। केवल प्रत्यय के 'त' को ष्टुना ष्टुः सूत्र से ष्टुत्व करके 'ट', बनाइये -

द्विष्	+	तः	=	द्विष्टः	कृष्	+	तः	=	कृष्टः
शोष्	+	ता	=	शोष्टा	पोष्	+	तुम्	=	पोष्टुम्

सकारान्त धातु

इन्हें कुछ भी नहीं होता। वस् + ता = वस्ता। वस् + तव्य = वस्तव्य। इसी प्रकार - घस् + ता = घस्ता। घस् + तुम् = घस्तुम्। घस् + तव्य = घस्तव्य।

हकारान्त धातु

१. नह् धातु -

नहो धः (८.२.३४) - नह् के 'ह्' को 'ध्' होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में।

जैसे - नह् + ता - नध् + ता / प्रत्यय के त, थ को **'झषस्तथोर्धोऽधः'** सूत्र से ध बनाकर - नध् + धा / धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर ध् को **'झलां जश् झशि'** सूत्र से जश्त्व करके - नद् + धा = नद्धा। इसी प्रकार - नह् + तुम् = नद्धुम्। नह् + तव्यत् = नद्धव्यम्।

२. दकारादि हकारान्त धातु, जैसे - दुह्, दिह् आदि -

दादेर्धातोर्घः (८.२.३२) - यदि धातु के आदि में 'द' हो और अन्त में 'ह्' हो, तब ऐसे दकारादि हकारान्त धातुओं के 'ह्' को 'घ्' होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में। दोह् + ता - दोघ् + ता / प्रत्यय के त को **झषस्तथोर्धोऽधः** सूत्र से ध बनाकर - दोघ् + धा / धातु के अन्तिम घ् को **झलां जश् झशि** सूत्र से जश्त्व करके उसी वर्ग का तृतीयाक्षर ग् बनाकर - दोग् + धा = दोग्धा।

दोह्	+	ता	-	दोघ्	+	धा	-	दोग्	+	धा	=	दोग्धा
दह्	+	ता	-	दघ्	+	धा	-	दग्	+	धा	=	दग्धा
देह्	+	ता	-	देघ्	+	धा	-	देग्	+	धा	=	देग्धा

३. द्रुह् ,मुह्, स्नुह्, स्निह् धातु -

वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम् (८.२.३३) - द्रुह्, मुह्, ष्णुह्, स्निह्, धातुओं के ह् के स्थान पर विकल्प से घ् और ढ् आदेश होते हैं, झल् परे होने पर और पदान्त में।

'ह्' को 'घ्' बनाने पर -

द्रोह्	+	ता	-	द्रोघ्	+	धा	-	द्रोग्	+	धा	=	द्रोग्धा
मोह्	+	ता	-	मोघ्	+	धा	-	मोग्	+	धा	=	मोग्धा
स्नेह्	+	ता	-	स्नेघ्	+	धा	-	स्नेग्	+	धा	=	स्नेग्धा
स्नोह्	+	ता	-	स्नोघ्	+	धा	-	स्नोग्	+	धा	=	स्नोग्धा

'ह्' को 'ढ्' बनाने पर -

द्रोह् + ता / द्रोढ् + ता / धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर 'ढ्' होने पर - प्रत्यय के त को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से ध बनाकर - द्रोढ् + धा / प्रत्यय के 'ध' को ष्टुना ष्टुः सूत्र से 'ढ' बनाकर - द्रोढ् + ढा -

ढो ढे लोपः (८.३.१३) - ढ् के बाद ढ् आने पर, पूर्व वाले ढ् का लोप होता है। इस सूत्र से पूर्व ढ् का लोप करके - द्रो + ढा = द्रोढा। इसी प्रकार -

द्रोह्	+	ता	-	द्रोढ्	+	धा	-	द्रोढ्	+	ढा	=	द्रोढा
मोह्	+	ता	-	मोढ्	+	धा	-	मोढ्	+	ढा	=	मोढा
स्नेह्	+	ता	-	स्नेढ्	+	धा	-	स्नेढ्	+	ढा	=	स्नेढा
स्नोह्	+	ता	-	स्नोढ्	+	धा	-	स्नोढ्	+	ढा	=	स्नोढा

४. सह्, वह् धातु -

सह् + ता / हो ढः से ह् को ढ् बनाने पर - सढ् + ता / प्रत्यय के 'त' को **झषस्तथोर्धोऽधः** सूत्र से 'ध' करके - सढ् + धा / ष्टुना ष्टुः सूत्र से प्रत्यय के 'ध' को ष्टुत्व करके - सढ् + ढा / 'ढो ढे लोपः' से पूर्व ढकार का लोप करके - स + ढा / अब 'सहिवहोरोदवर्णस्य' सूत्र से लुप्त ढकार के पूर्ववर्ती 'अ' को 'ओ' बनाकर 'सोढा' बनाइये। इसी प्रकार, वह् + ता से 'वोढा' बनाइये।

५. शेष हकारान्त धातु -

हो ढः (८.२.३१) - धातुओं के अन्त में स्थित 'ह्' को 'ढ्' होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में।

ऊपर कहे हुए धातुओं के अलावा जितने भी हकारान्त धातु बचे, उनके 'ह्'

की 'हो ढः' सूत्र से 'ढ्' बनाइये - लिह् - लेह् + ता - लेढ् + ता / प्रत्यय के 'त' को **'झषस्तथोर्धोऽधः'** सूत्र से 'ध' करके - लेढ् + धा / ष्टुना ष्टुः सूत्र से प्रत्यय के 'ध्' को ष्टुत्व करके - लेढ् + ढा - 'ढो ढे लोपः' से पूर्व ढकार का लोप करके - ले + ढा = लेढा। इसी प्रकार -

रोह्	+	ता	-	रोढ्	+	धा	-	रोढ्	+ ढा	= रोढा
मेह्	+	ता	-	मेढ्	+	धा	-	मेढ्	+ ढा	= मेढा

लुप्त ढकार के पूर्व में अण् होने पर - लिह् + क्त / लिढ् + ध / लिढ् + ढः / लि + ढ / इसे देखिये। यहाँ लुप्त ढकार के पूर्व में 'इ' है।

ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः (६.३.१११) - ढ् और र् का लोप होने पर, उन लुप्त ढ् और र् के पूर्व में स्थित जो अण् अर्थात् अ, इ, उ, उन्हें दीर्घ होता है।

अतः इस अण् का 'ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' सूत्र से दीर्घ करके - लि + ढ = लीढः। यह हलन्त धातुओं में तकारादि प्रत्ययों को जोड़ने की विधि पूर्ण हुई।

प्रथमा एकवचन में 'सु' विभक्ति लगाने पर होने वाली सन्धि

अपृक्त एकाल् प्रत्ययः (१.२.४१) - एक अल् (वर्ण) वाले प्रत्ययों को अपृक्त प्रत्यय कहा जाता है। इसलिये प्रथमा एकवचन का सु = स् प्रत्यय, एक अल् वाला प्रत्यय होने से, अपृक्त प्रत्यय है।

हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल् (६.१.६८) - हल् के बाद आने वाले, अपृक्त प्रत्ययों का लोप हो जाता है। यथा - मधुलिह् + स् = मधुलिह् / रेष् + स् = रेष्।

अब ध्यान दीजिये कि यहाँ स् का लोप होने के बाद, जो शब्द बचे हैं, वे अब 'सुप्तिङन्तं पदं' सूत्र के अनुसार 'सुबन्त पद' हैं और इनके अन्त में आने वाले 'हल्' अब 'पदान्त हल्' हैं।

संयोगान्तस्य लोपः (८.२.२३) - यदि पद के अन्त में संयोग हो, और उस संयोग के आदि में स् या क् न हों, तब उस संयोग के अन्तिम वर्ण का लोप हो जाता है, पदान्त में तथा झल् परे होने पर। जैसे -

युज् + क्विन् - प्रत्यय का सर्वापहारी लोप होकर - युज्। प्रथमा में सु विभक्ति लगाने पर - 'युजेरसमासे' सूत्र से नुम् का आगम करके - यु नुम् ज् + सु - 'हल्ङ्याब्भ्यो

दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से सु का लोप करके युन्ज् / 'संयोगान्तस्य लोपः' सूत्र से ज् का लोप करके - युन्।

रात्सस्य (८.२.२४) - रेफ से परे आने पर संयोगान्त स् का ही लोप होता है, अन्य वर्णों का नहीं। यह सूत्र संयोगान्तस्य. सूत्र का नियमन करता है। यथा -

ऊर्ज् + सु / ऊर्ज् + स् - स् का लोप करके - ऊर्ज्। अब यहाँ संयोगान्तस्य लोपः से ज् का लोप प्राप्त है, किन्तु रात्सस्य सूत्र कहता है कि रेफ से परे आने पर संयोगान्त स् का ही लोप होता है, अन्य वर्णों का नहीं। अतः ज् का लोप नहीं होगा - ऊर्ज् -

चोः कुः (८.२.३०) - व्रश्च्, भ्रस्ज्, सृज्, मृज्, यज्, राज्, भ्राज् तथा छकारान्त धातुओं से बचे हुए जो चवर्गान्त धातु, उनके 'चवर्ग' के स्थान पर 'कवर्ग' होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में। जैसे - वाच् - वाक्। ऊर्ज् - ऊर्ग्।

झलां जशोऽन्ते (८.२.३९) - पदान्त झल् के स्थान पर जश् होता है। जश्त्व होने का अर्थ होता है - वर्ग के प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ व्यञ्जनों को उसी वर्ग का तृतीय व्यञ्जन बना देना। वाक् - वाग्।

वाऽवसाने (८.४.५६) - अवसान अर्थात् अन्त में स्थित झल् को विकल्प से चर् होता है। चर्त्व का अर्थ होता है - वर्ग के प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ व्यञ्जनों को उसी वर्ग का प्रथम व्यञ्जन बना देना। ऊर्ग्, ऊर्क्। वाक्, वाग्।

स्कोः संयोगाद्योरन्ते च (८.२.२९) - यदि पद के अन्त में संयोग हो, और उस संयोग के आदि में स् या क् हों, तब उस संयोग के आदि में स्थित 'स्' 'क्' का लोप हो जाता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में। शाखावृश्च् = शाखावृच्।

ध्यान रहे कि यहाँ जो 'श्' दिख रहा है, वह 'स्' ही है। यह 'स्' ही 'च्' से मिलकर 'स्तोः श्चुना श्चुः' सूत्र से श्चुत्व होकर 'श्' बन गया है।

व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः (८.२.३६) - व्रश्च्, भ्रस्ज्, सृज्, मृज्, यज्, राज्, भ्राज्, छकारान्त तथा शकारान्त धातुओं के अन्तिम वर्ण को ष् होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में। जैसे - शाखावृच् - शाखावृष् / विराज् - विराष्।

वाऽवसाने सूत्र से विकल्प से जश्त्व और चर्त्व करके - विराट्, विराड्। शाखावृट्, शाखावृड्।

हो ढः (८.२.३१) - धातुओं के अन्त में स्थित 'ह्' को 'ढ्' होता है, झल् = त, थ, ध, स परे होने पर तथा पदान्त में। मधुलिह् = मधुलिढ् -

दादेर्धातोर्घः (८.२.३२) - यदि धातु के आदि में 'द' हो और अन्त में 'ह्'

हो, तब ऐसे दकारादि हकारान्त धातुओं के 'ह्' को 'घ्' होता है, झल् = त, थ, ध, स परे होने पर तथा पदान्त में। यथा - कामदुह् - कामदुघ् -

एकाचो बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः (८.२.३७) - जिन एकाच् धातुओं के अन्त में वर्ग के चतुर्थाक्षर 'झष्' अर्थात् झ्, भ्, घ्, ढ्, ध्, हों, तथा आदि में बश् = ब, ग, द, हों, तो उन्हें 'एकाच् बशादि झषन्त' धातु कहते हैं। यथा बन्ध्, बुध् आदि।

यदि धातु एकाच् बशादि झषन्त न हों, किन्तु ऊपर कहे गये सूत्रों से 'ह्' के स्थान पर ढ्, घ् आदि बन जाने से, वे एकाच् बशादि झषन्त हो गये हों, जैसे - दुह् - दुघ् आदि, उन्हें भी 'एकाच् बशादि झषन्त' धातु कहते हैं।

ऐसे एकाच् बशादि झषन्त धातु के आदि में स्थित ब, ग, द, के स्थान पर भी उसी वर्ग के चतुर्थाक्षर भष् = भ, घ, ध, हो जाते हैं, सकारादि प्रत्यय परे होने पर, ध्व शब्द परे होने पर, तथा पदान्त में।

कामदुघ् - कामधुघ् - वाऽवसाने सूत्र से विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके - कामधुग्, कामधुक्।

वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम् (८.२.३३) - द्रुह्, मुह्, ष्णुह्, ष्णिह्, धातुओं के ह् के स्थान पर विकल्प से घ् और ढ् आदेश होते हैं, झल् परे होने पर और पदान्त में।

ह् के स्थान पर घ् आदेश होने पर - मित्रद्रुह् - मित्रद्रुघ् -

'एकाचो बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः' सूत्र से बश् 'द' के स्थान पर भष् 'ध' आदेश करके - मित्रद्रुघ् - मित्रध्रुघ्।

वाऽवसाने सूत्र से विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके - मित्रध्रुक्, मित्रध्रुग्।

ह् के स्थान पर ढ् आदेश होने पर - मित्रद्रुह् - मित्रद्रुढ् -

पूर्ववत् भष्भाव करके - मित्रध्रुढ्। वाऽवसाने सूत्र से विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके - मित्रध्रुड्, मित्रध्रुट्।

नहो धः (८.२.३४) - नह् धातु के ह् के स्थान पर ध् आदेश होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में। चर्मनह् - चर्मनध् - वाऽवसाने सूत्र से विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके - चर्मनत्, चर्मनद्।

❀ ❀ ❀

इडागम

हम जानते हैं कि धातु से लगने वाले जिन प्रत्ययों की सार्वधातुक संज्ञा नहीं होती है, उन प्रत्ययों की 'आर्धधातुकं शेषः' सूत्र से आर्धधातुक संज्ञा होती है।

कभी कभी इन आर्धधातुक प्रत्ययों के पहिले आकर एक इट् बैठ जाता है। इस इट् के बैठने को ही इडागम होना कहते हैं। जैसे - पठ् + तव्य - पठ् + इ + तव्य = पठितव्य / पठ् + तुमुन् - पठ् + इ + तुम् = पठितुम् / पठ् + ता - पठ् + इ + ता = पठिता, आदि।

जिन प्रत्ययों को यह इडागम होता है, वे प्रत्यय इट् के सहित होने के कारण सेट् प्रत्यय कहलाते हैं। इडागम के लिये धातु तथा प्रत्यय दोनों का विचार करना चाहिये।

प्रत्यय की दृष्टि से इडागम का विचार -

आर्धधातुकस्येड् वलादेः (७.२.३५) - जो आर्धधातुक प्रत्यय वल् प्रत्याहार से प्रारम्भ होते हैं, ऐसे वलादि आर्धधातुक प्रत्ययों को इट् का आगम होता है।

नेड् वशि कृति (७.२.८) - वलादि आर्धधातुक प्रत्ययों में से भी, जो वशादि कृत् आर्धधातुक प्रत्यय होते हैं, उन्हें इडागम नहीं होता है।

तितुत्रतथसिसुसरकसेषु च (७.२.९) - वलादि होने के बाद भी ति, तु, त्र, त, थ, सि, सु, सर, क, स, इन दस आर्धधातुक प्रत्ययों को इडागम नहीं होता है।

जिन प्रत्ययों को यह इडागम नहीं होता है, वे प्रत्यय इट् से रहित होने के कारण अनिट् प्रत्यय कहलाते हैं। यथा - 'पठनीय' को देखिये। पठ् + अनीय के बीच में इट् नहीं बैठा है। पाठ्य को देखिये। पठ् + ण्यत् के बीच में भी इट् नहीं बैठा है। इसी प्रकार - ईश् + वरच् = ईश्वरः। दीप् + वरच् = दीप्रः, आदि। अतः ये ण्यत्, अनीयर्, वरच्, र, आदि अनिट् प्रत्यय हैं।

अब धातु की दृष्टि से इडागम का विचार कीजिये -

'कर्तव्य' को देखिये। यहाँ शङ्का होती है कि - कृ + तव्य = कर्तव्य में, तव्य प्रत्यय को इडागम नहीं हुआ है किन्तु पठ् + इ + तव्य = पठितव्य में, उसी तव्य प्रत्यय को इडागम हुआ है। ऐसा इसलिये कि 'कृ' धातु अनिट् है और पठ् धातु सेट् है।

जिन धातुओं से लगने वाले सेट् प्रत्ययों को भी, यह इडागम नहीं होता है, वे धातु अनिट् धातु कहलाते हैं। जिन धातुओं से लगने वाले सेट् प्रत्ययों को इडागम

होता है, वे धातु सेट् धातु कहलाते हैं।

इस प्रकार हमने जाना कि -

१. पठ् + इट् + तव्य = पठितव्य में, इडागम इसलिये होता है कि पठ् धातु भी सेट् है, तव्य प्रत्यय भी सेट् है।

२. कृ + तव्य = कर्तव्य में, इडागम इसलिये नहीं होता है कि तव्य प्रत्यय तो सेट् है, किन्तु कृ धातु अनिट् है।

३. पठ् + अनीय = पठनीय में, इडागम इसलिये नहीं होता है कि पठ् धातु तो सेट् है, किन्तु अनीय प्रत्यय अनिट् है।

४. गम् + अनीय = गमनीय में, इडागम इसलिये नहीं होता है कि गम् धातु भी अनिट् है, अनीय प्रत्यय भी अनिट् है।

अतः हमने अब जाना, कि कुछ धातु सेट् होते हैं, कुछ धातु अनिट् होते हैं। इसी प्रकार कुछ प्रत्यय सेट् होते हैं, कुछ प्रत्यय अनिट् होते हैं।

जब सेट् धातु से सेट् आर्धधातुक प्रत्यय लगता है, तभी उस आर्धधातुक प्रत्यय को 'आर्धधातुकस्येड् वलादेः' सूत्र से इडागम होता है।

इस प्रकार आर्धधातुक प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं - सेट् तथा अनिट्।

धातु भी दो प्रकार के होते हैं - सेट् तथा अनिट्।

किसी भी आर्धधातुक प्रत्यय लगाने के लिये दोनों की अलग अलग पहिचान अत्यावश्यक है।

भगवान् पाणिनि ने, सेट्-अनिट् धातु और सेट्-अनिट् प्रत्यय पहिचानने का विज्ञान अष्टाध्यायी में 'नेड्वशि कृति' सूत्र ७.२.८ से 'ईडजनोर्ध्वे च' ७.२.७८ तक के सूत्रों में बतलाया है। वस्तुतः लाघव (संक्षेप) ही अष्टाध्यायी का प्राण होने के कारण यह व्यवस्था इसमें एक साथ मिली सी लगती है। अतः हमने इस अध्याय में उन्हें पृथक् पृथक् कर दिया है, ताकि आप सेट्, अनिट् धातुओं तथा सेट्, अनिट् प्रत्ययों को अलग अलग पहिचान सकें।

सेट्, अनिट् आर्धधातुक प्रत्यय

कुल ३० आर्धधातुक प्रत्यय ही सेट् हैं। अतः केवल इन्हीं के परे होने पर इडागम का विचार करना चाहिये। ये इस प्रकार हैं -

लिट् लकार के सात प्रत्यय - थल् (थ) व, म, से, ध्वे, वहे, महे = ७।

चौदह तकारादि प्रत्यय - क्त, क्तवतु, क्त्वा, तुमुन्, तव्य, तव्यत्, तृच्, तृन्, तास्, तवै, तवेन्, तोसुन्, त्वन्, तवेङ् = १४।

आठ सकारादि प्रत्यय - सिच्, सीयुट्, सन्, स्य, क्से, से, सेन्, सिप् = ८।

एक वकारादि प्रत्यय - क्वसु = १। इस प्रकार कुल ३० प्रत्यय सेट् हैं।

इनके अलावा सारे आर्धधातुक प्रत्यय अनिट् हैं।

इन सेट् आर्धधातुक प्रत्ययों में से केवल **क्त, क्तवतु, क्त्वा, तुमुन्, तव्य, तव्यत्, तृच्, तृन्, क्वसु,** इन नौ प्रत्ययों का विचार ही इस ग्रन्थ में किया जायेगा, क्योंकि शेष का विचार 'अष्टाध्यायी सहज बोध' के द्वितीय खण्ड में किया जा चुका है। साथ ही 'आर्धधातुक प्रत्ययों की इडागम व्यवस्था' नामक ग्रन्थ में तीसों आर्धधातुक प्रत्ययों की इडागम व्यवस्था का विचार विस्तार से किया जा चुका है।

सेट् अनिट् धातु

विशेष - चुरादिगण के सारे धातु णिच् प्रत्यय लगने से अनेकाच् हो जाते हैं। यथा - चुर् + णिच् = चोरि। ध्यान रहे कि अनेकाच् धातु सेट् ही होते हैं। अतः चुरादिगण के सारे धातु सेट् ही हैं। इसलिये यह सेट्, अनिट् का विचार केवल भ्वादि से क्र्यादिगण के धातुओं के लिये ही है।

एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् (७.२.१०) - उपदेशावस्था में जो धातु एकाच् भी हों तथा अनुदात्त भी हों, वे अनिट् होते हैं। ऐसे अनिट् धातुओं से परे आने वाले इन ३० सेट् प्रत्ययों को भी इडागम नहीं होता।

स्पष्ट है कि एकाच् धातु, केवल एकाच् होने से अनिट् नहीं हो जाते हैं अपितु एकाच् होने के साथ साथ जब वे अनुदात्त भी होते हैं तभी वे अनिट् कहलाते हैं। जैसे - 'पच्' यह एकाच् अनुदात्त धातु है, अतः अनिट् है। किन्तु पठ् धातु एकाच् तो है, पर अनुदात्त न होकर उदात्त है, इसलिये यह सेट् है।

एकाच् तो हम देखकर पहिचान लेंगे, किन्तु अनुदात्त धातुओं को हम कैसे पहिचानें ? इन अनुदात्त धातुओं को रटने के सिवा और कोई विधि नहीं है।

उपदेशावस्था में जो धातु एकाच् तथा अनुदात्त हैं, उन्हें हम, उनके अन्तिम वर्ण को वर्णमाला के क्रम से रखकर, दे रहे हैं। इन्हें याद करके ही आप जान सकेंगे कि एकाच् धातुओं में से कौन से धातु सेट् हैं और कौन से अनिट्।

हम इन अनिट् धातुओं में 'तृच् = ता' प्रत्यय को लगाकर, उदाहरण देते हुए

धातुओं का सेट् अनिट् विभाग बतला रहे हैं -

एकाच् अजन्त धातुओं में से, सेट् तथा अनिट् धातुओं को पहिचानने की विधि

१. एकाच् आकारान्त धातु - सारे एकाच् आकारान्त धातु अनिट् ही होते हैं। जैसे - पा + ता = पाता। दा + ता = दाता। घ्रा + ता = घ्राता।

२. एकाच् ह्रस्व इकारान्त धातु - इनमें श्वि, श्रि धातु सेट् होते हैं। अत: इडागम करके इनके रूप बनेंगे - श्रि + इ + ता = श्रयिता / श्वि + इ + ता = श्वयिता। श्वि, श्रि को छोड़कर, शेष सारे एकाच् ह्रस्व इकारान्त धातु अनिट् ही होते हैं। जैसे - जि + ता = जेता। चि + ता = चेता।

३. एकाच् दीर्घ ईकारान्त धातु - इनमें शीङ्, डीङ् धातु सेट् होते हैं। अत: इडागम करके इनके रूप बनेंगे - शी + इ + ता = शयिता / डी + इ + ता = डयिता। इन दो को छोड़कर, शेष सारे एकाच् दीर्घ ईकारान्त धातु अनिट् ही होते हैं। जैसे - नी + ता = नेता। क्री + ता = क्रेता।

४. एकाच् ह्रस्व उकारान्त धातु - इनमें स्नु, नु, क्षु, यु, रु, क्ष्णु ये छह उकारान्त धातु सेट् होते हैं। इन्हें इडागम होकर रूप बनेंगे - स्नु + इ + ता - स्नविता / नु + इ + ता - नविता / क्षु + इ + ता - क्षविता / यु + इ + ता - यविता / रु + इ + ता - रविता / क्ष्णु + इ + ता - क्ष्णविता।

इन ६ धातुओं को छोड़कर, शेष सारे एकाच् ह्रस्व उकारान्त धातु अनिट् ही होते हैं। जैसे - हु + ता = होता। द्रु + ता = द्रोता।

५. एकाच् दीर्घ ऊकारान्त धातु - इनमें सू, धू, वेट् होते हैं। सोता, सविता / धोता, धविता। शेष सारे एकाच् ऊकारान्त धातु सेट् ही होते हैं। जैसे - भू + इ + ता = भविता / पू + इ + ता = पविता।

६. एकाच् ह्रस्व ऋकारान्त धातु - इनमें वृङ्, वृञ् धातु सेट् होते हैं - वृ + इ + ता - वरिता आदि। स्वृ धातु वेट् होता है - स्वृ + इ + ता - स्वरिता / स्वृ + ता - स्वर्ता आदि। शेष सारे एकाच् ह्रस्व ऋकारान्त धातु अनिट् होते हैं। जैसे - कृ + ता = कर्ता। हृ + ता = हर्ता।

७. एकाच् दीर्घ ॠकारान्त धातु - ये सभी सेट् होते हैं। जैसे - तॄ + इ + ता = तरिता।

८. एजन्त धातु - जिनके अन्त में ए, ओ, ऐ, औ, हों, उन्हें एजन्त धातु कहते हैं। ये धातु आर्धधातुक प्रत्यय परे रहने पर **आदेच उपदेशेऽशिति** सूत्र से आकारान्त बन जाते हैं। आकारान्त धातुओं के समान ये सब भी अनिट् ही होते हैं। जैसे - गै + ता = गाता / धे + ता = धाता आदि।

यह एकाच् अजन्त धातुओं में से सेट् तथा अनिट् धातुओं को अलग अलग पहिचानने की विधि पूर्ण हुई। अब एकाच् हलन्त धातुओं में से सेट् तथा अनिट् धातुओं को कैसे अलग - अलग पहिचाना जाये, यह विधि बतला रहे हैं।

एकाच् हलन्त धातुओं में से, सेट् तथा अनिट् धातुओं को पहिचानने की विधि

अब नीचे अन्तिम वर्ण के वर्णमालाक्रम से १०२ हलन्त एकाच् धातु दिये जा रहे हैं। ये सब एकाच् तथा अनुदात्त होने के कारण अनिट् हैं। इनके अतिरिक्त जो भी एकाच् हलन्त धातु आप पाएँगे, वे सब सेट् ही होंगे, यह जानना चाहिए।

१. एकाच् ककारान्त धातुओं में - शक्, यह १ धातु ही अनिट् होता है। शक् + ता = शक्ता। शेष सारे ककारान्त धातु सेट् होते हैं।

२. एकाच् चकारान्त धातुओं में - पच्, मुच्, रिच्, वच्, विच्, सिच्, ये ६ धातु अनिट् होते हैं। जैसे - पच् + ता = पक्ता / मुच् + ता = मोक्ता / रिच् + ता = रेक्ता / वच् + ता = वक्ता / विच् + ता = वेक्ता / सिच् + ता = सेक्ता। शेष सारे चकारान्त धातु सेट् होते हैं।

३. एकाच् छकारान्त धातुओं में - प्रच्छ्, यह १ धातु अनिट् होता है। जैसे - प्रच्छ् + ता = प्रष्टा / शेष सारे छकारान्त धातु सेट् होते हैं।

४. एकाच् जकारान्त धातुओं में - त्यज्, निजिर्, भज्, भञ्ज्, भुज्, भ्रस्ज्, मस्ज्, यज्, युज्, रुज्, रञ्ज्, विजिर् (जुहोत्यादि), स्वञ्ज्, सञ्ज्, सृज् - ये १५ धातु अनिट् होते हैं। जैसे - त्यज् + ता = त्यक्ता / निज् + ता = नेक्ता / भज् + ता = भक्ता / भञ्ज् + ता = भङ्क्ता / भुज् + ता = भोक्ता / भ्रस्ज् + ता = भ्रष्टा / मस्ज् + ता = मङ्क्ता / यज् + ता = यष्टा / युज् + ता = योक्ता / रुज् + ता = रोक्ता / रञ्ज् + ता = रङ्क्ता / विज् + ता = वेक्ता / स्वञ्ज् + ता = स्वङ्क्ता / सञ्ज् + ता = सङ्क्ता / सृज् + ता = स्रष्टा। शेष सभी जकारान्त धातु सेट् होते हैं।

५. एकाच् दकारान्त धातुओं में - अद्, क्षुद्, खिद् (तीनों), छिद्, तुद्, नुद्,

पद् (दिवादिगण), भिद्, विद् (दिवादिगण), विद् (रुधादिगण), शद्, सद्, स्विद्, स्कन्द्, और हद् ये १५ धातु अनिट् होते हैं। जैसे - अद् + ता = अत्ता / क्षुद् + ता = क्षोत्ता / खिद् + ता = खेत्ता / छिद् + ता = छेत्ता / तुद् + ता = तोत्ता / नुद् + ता = नोत्ता / पद् + ता = पत्ता / भिद् + ता = भेत्ता / विद् + ता = वेत्ता / विद् + ता = वेत्ता / शद् + ता = शत्ता / सद् + ता = सत्ता / स्विद् + ता = स्वेत्ता / स्कन्द् + ता = स्कन्त्ता / हद् + ता = हत्ता। शेष सभी दकारान्त धातु सेट् होते हैं।

विशेष - विद् धातु चार हैं। इनमें से दिवादि तथा रुधादिगण के विद् धातु अनिट् होते हैं और अदादिगण तथा तुदादिगण के विद् धातु सेट् होते हैं।

६. एकाच् धकारान्त धातुओं में - क्रुध्, क्षुध्, बुध् (दिवादिगण), बन्ध्, युध्, रुध्, राध्, व्यध्, साध्, शुध्, सिध् (दिवादिगण) ये ११ धातु अनिट् होते हैं। जैसे - क्रुध् + ता = क्रोद्धा / क्षुध् + ता = क्षोद्धा / बुध् + ता = बोद्धा / बन्ध् + ता = बन्द्धा / युध् + ता = योद्धा / रुध् + ता = रोद्धा / राध् + ता = राद्धा / व्यध् + ता = व्यद्धा / साध् + ता = साद्धा / शुध् + ता = शोद्धा / सिध् + ता = सेद्धा। शेष सभी धकारान्त धातु सेट् होते हैं।

विशेष - यहाँ यह ध्यान देना चाहिये कि बुध् धातु दो हैं। इनमें से भ्वादिगण का बुध् धातु सेट् है। इससे इडागम होकर बोधिता बनता है। दिवादिगण का बुध् धातु अनिट् है। इससे इडागम न होकर बोद्धा बनता है।

७. एकाच् नकारान्त धातुओं में - मन् (दिवादिगण) तथा हन्, ये २ धातु अनिट् होते हैं। मन् + ता = मन्ता / हन् + ता = हन्ता। शेष सारे नकारान्त धातु सेट् होते हैं।

८. एकाच् पकारान्त धातुओं में - आप्, छुप्, क्षिप्, तप्, तिप्, तृप् (दिवादिगण), दृप् (दिवादिगण), लिप्, लुप्, वप्, शप्, स्वप्, सृप्, ये १३ धातु अनिट् होते हैं, जैसे - आप् + ता = आप्ता / छुप् + ता = छोप्ता / क्षिप् + ता = क्षेप्ता / तप् + ता = तप्ता / तिप् + ता = तेप्ता / तृप् + ता = तर्प्ता / दृप् + ता = दर्प्ता / लिप् + ता = लेप्ता / लुप् + ता = लोप्ता / वप् + ता = वप्ता / शप् + ता = शप्ता / स्वप् + ता = स्वप्ता / सृप् + ता = सर्प्ता। शेष सारे पकारान्त धातु सेट् होते हैं।

विशेष - यहाँ यह ध्यान देना चाहिये कि तृप् धातु तीन हैं। इनमें से स्वादिगण तथा तुदादिगण के तृप् धातु सेट् होते हैं। इनसे इडागम होकर तर्पिता बनता है। दिवादिगण

का तृप् धातु वेट् होता है। इससे इडागम होने पर तर्पिता बनता है तथा इडागम न होने पर त्रप्ता / तर्प्ता रूप बनते हैं।

९. एकाच् भकारान्त धातुओं में - यभ्, रभ्, लभ्, ये ३ धातु अनिट् होते हैं। यभ् + ता = यब्धा / रभ् + ता = रब्धा / लभ् + ता = लब्धा। शेष सारे भकारान्त धातु सेट् होते हैं।

१०. एकाच् मकारान्त धातुओं में - गम्, नम्, यम्, रम्, ये ४ धातु अनिट् होते हैं। गम् + ता = गन्ता / नम् + ता = नन्ता / यम् + ता = यन्ता / रम् + ता = रन्ता। शेष सारे मकारान्त धातु सेट् होते हैं।

११. एकाच् शकारान्त धातुओं में - क्रुश्, दंश्, दिश्, दृश्, मृश्, रिश्, रुश्, लिश्, विश्, स्पृश्, ये १० धातु अनिट् होते हैं। जैसे - क्रुश् + ता = क्रोष्टा / दंश् + ता = दंष्टा / दिश् + ता = देष्टा / दृश् + ता = द्रष्टा / मृश् + ता = म्रष्टा / रिश् + ता = रेष्टा / रुश् + ता = रोष्टा / लिश् + ता = लेष्टा / विश् + ता = वेष्टा / स्पृश् + ता = स्प्रष्टा। शेष सारे शकारान्त धातु सेट् होते हैं।

१२. एकाच् षकारान्त धातुओं में - कृष्, त्विष्, तुष्, द्विष्, दुष्, पुष् (दिवादि गण), पिष्, विष्, शिष्, शुष्, श्लिष् (दिवादिगण), ये ११ धातु अनिट् होते हैं। जैसे - कृष् + ता = कर्ष्टा / त्विष् + ता = त्वेष्टा / तुष् + ता = तोष्टा / द्विष् + ता = द्वेष्टा / दुष् + ता = दोष्टा / पुष् + ता = पोष्टा / पिष् + ता = पेष्टा / विष् + ता = वेष्टा / शिष् + ता = शेष्टा / शुष् + ता = शोष्टा / श्लिष् + ता = श्लेष्टा। शेष षकारान्त धातु सेट् होते हैं।

१३. एकाच् सकारान्त धातुओं में - वस्, घस्, ये २ धातु अनिट् होते हैं। जैसे - वस् + ता = वस्ता / घस् + ता = घस्ता। शेष सारे सकारान्त धातु सेट् होते हैं।

१४. एकाच् हकारान्त धातुओं में - दह्, दिह्, दुह्, नह्, मिह्, रुह्, लिह्, वह्, ये ८ धातु अनिट् होते हैं। दह् + ता = दग्धा / दिह् + ता = देग्धा / दुह् + ता = दोग्धा

सेट्, अनिट् के अलावा कुछ धातु वेट् भी होते हैं, जिनसे परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्ययों को भी विकल्प से इट् का आगम होता है। ये इस प्रकार हैं -

वेट् हलन्त धातु

स्वरतिसूतिसूयतिधूञूदितो वा (७.२.४४) - स्वृ धातु, अदादिगण का सू धातु,

दिवादिगण का सू धातु, स्वादि तथा क्र्यादिगण का धूञ् धातु तथा सारे ऊदित् धातुओं से परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है।

ऊदित् धातु - 'ऊदित्' का अर्थ होता है, ऐसे धातु जिनमें 'ऊ' की इत् संज्ञा हुई हो। धातुपाठ में पढ़े गये सारे 'ऊदित् धातु' इस प्रकार हैं -

अक्षू	तक्षू	त्वक्षू	गृहू	मृजू	अशू	वृहू	तृन्हू
क्षमू	क्लिदू	अञ्जू	क्लिशू	षिधू	त्रपूष्	क्षमूष्	गाहू
गुहू	स्यन्दू	कृपू	गुपू	ओव्रश्चू	तृहू	स्तृहू	तञ्चू।

विशेष - यहाँ यह ध्यान देना चाहिये कि स्वादि, क्र्यादि तथा चुरादिगण में धूञ् कम्पने धातु हैं। तुदादिगण में धू विधूनने धातु है। इनमें से स्वादिगण तथा क्र्यादिगण के धूञ् कम्पने धातु ही वेट् होते हैं। इनसे परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है - धोता / धविता।

तुदादिगण का धू विधूनने धातु तथा चुरादिगण का धूञ् कम्पने धातु सेट् होता है। इनसे परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्ययों को नित्य इडागम होता है - धविता।

रधादिभ्यश्च (७.२.४५) - रध्, नश्, तृप्, दृप्, द्रुह्, मुह्, स्निह्, स्नुह्, ये ८ धातु वेट् होते हैं। ये आठों धातु दिवादिगण के हैं। इन आठों धातुओं से परे आने वाले सेट् प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है।

रध् + ता - रद्धा, रधिता | नश् + ता - नंष्टा, नशिता
तृप् + ता - तर्प्ता, तर्पिता | दृप् + ता - दर्प्ता, दर्पिता
द्रुह् + ता - द्रोग्धा, द्रोढा, द्रोहिता | मुह् + ता - मोग्धा, मोढा, मोहिता
स्नुह् + ता - स्नोग्धा, स्नोढा, स्नोहिता | स्निह् + ता - स्नेग्धा, स्नेढा, स्नेहिता

निरः कुषः (७.२.४६) - निर् + कुष् धातु से परे आने वाले सेट् प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है। निर् + कुष् निष्कोष्टा, निष्कोषिता

इस प्रकार ये ३६ धातु वेट् हैं। इन ३६ वेट् धातुओं से परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है।

विशेष - जहाँ एक आकृति के अनेक धातु हैं, वहाँ हमने स्पष्ट निर्देश करके कोष्ठक में उस गण का नाम लिख दिया है, जिस गण का धातु अनिट् होता है। इससे यह जानना चाहिये कि जिसका नाम नहीं लिखा है, वह सेट् ही है।

सेट् हलन्त धातु

इन अनिट् और वेट् धातुओं के अलावा जितने भी हलन्त धातु बचे, वे सब

के सब सेट् ही हैं, यह जानना चाहिये।

ये ३० सेट् आर्धधातुक प्रत्यय जब किसी सेट् धातु से लगेंगे तब इन प्रत्ययों को नित्य इडागम होगा। जब ये किसी वेट् धातु से लगेंगे तब इन्हें विकल्प से इडागम होगा और जब ये ३० प्रत्यय जब किसी अनिट् धातु से लगेंगे तब इन्हें इडागम नहीं होगा।

यह सेट्, अनिट् तथा वेट् धातुओं को पहिचानने की तथा सेट् अनिट् प्रत्ययों को पहिचानने की औत्सर्गिक अर्थात् सामान्य व्यवस्था है। इसे कण्ठस्थ कर लीजिये।

विशेष - ध्यान रहे कि ये अनिट् धातु भी यदि किसी प्रत्यय के लग जाने से अनेकाच् बन जाते हैं, तब वे अनेकाच् होते ही सेट् हो जाते हैं। जैसे - पा धातु अनिट् है, किन्तु सन् प्रत्यय के लगने से यह 'पिपास' बन जाता है। देखिये कि अब इसमें तीन अच् हैं। अतः अब यह सेट् है।

तृच्, तृन् प्रत्ययों के लिये विशेष इडागम व्यवस्था

ग्रसितस्कभितस्तभितोत्तभितचत्तविकस्ताविशस्तृशंस्तृशास्तृतरुतृतरूतृवरुतृवरूतृवरूत्रीरुज्ज्वलितिक्षरितिवमित्यमितीति च - इन धातुओं से तृच् प्रत्यय परे होने पर लोक तथा वेद में अलग अलग प्रकार से इडागम व्यवस्था है। अतः इनके लोक तथा वेद में बनने वाले रूप अलग अलग बतलाये जा रहे हैं।

		लोक में इडागम होकर	वेद में इडागम न होकर
वि + शस्	-	विशसिता	विशस्ता
शंस्	-	शंसिता	शंस्ता
प्र + शास्	-	प्रशासिता	प्रशास्ता
तॄ	-	तरिता / तरीता	तरुता / तरूता
वृ	-	वरिता / वरीता	वरुता / वरूता, वरूत्री (स्त्रीलिङ्ग)

तुमुन्, तव्य, तव्यत् प्रत्ययों के लिये विशेष इडागम व्यवस्था

तीषसहलुभरुषरिषः (७.२.४८) - तुदादिगण के इष इच्छायाम् धातु, सह, लुभ्, धातु, चुरादिगण के रुष रोषे धातु, भ्वादि तथा दिवादि गण के रुष्, रिष् हिंसायाम् धातु, इन धातुओं से परे आने वाले सेट् तकारादि आर्धधातुक प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है। अतः इष्, सह, लुभ्, रुष्, रिष् धातुओं से परे आने वाले, तुमुन्, तव्य, तृच्, प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होगा।

इष् - एष्टव्य, एषितव्य सह - सहितव्य, सोढव्य लुभ् - लोब्धव्य, लोभितव्य
रुष् - रोष्टव्य, रोषितव्य रिष् - रेष्टव्य, रेषितव्य।

जब भी तृच्, तृन्, तुमृन् तव्य, तव्यत् प्रत्यय लगाकर कोई भी शब्द आप बनायें तब औत्सर्गिक इडागम व्यवस्था के साथ इन अपवादों को देखकर ही कार्य प्रारम्भ करें।

धात्वादेश

आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर, नीचे कहे जाने वाले धातुओं के स्थान पर इस प्रकार आदेश (परिवर्तन) कीजिये -

अस्तेर्भूः (२.४.५२) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अस् धातु को भू आदेश होता है। अस् + तुम् = भवितुम्।

ब्रुवो वचिः (२.४.५३) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ब्रू धातु को वच् आदेश होता है। ब्रू + तुम् = वक्तुम्

चक्षिङ् ख्याञ् (२.४.५४) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर चक्ष् धातु को ख्या आदेश होता है। चक्ष् + तुम् = ख्यातुम्

अजेर्व्यघञपोः (२.४.५६) - घञ्, अप् को छोड़कर शेष सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अज् धातु को वी आदेश होता है। अज् + तुम् = वेतुम्।

वा यौ (२.४.५७) - ल्युट् प्रत्यय परे होने पर अज् धातु के स्थान विकल्प से वी आदेश होता है। प्रवयणो दण्डः, प्राजनो दण्डः।

आदेच उपदेशेऽशिति (६.१.४५) - अशित् प्रत्यय परे होने पर सारे एजन्त धातुओं को 'आ' अन्तादेश होता है। यक् प्रत्यय अशित् प्रत्यय है अतः इसके परे होने पर सारे एजन्त धातुओं को 'आ' अन्तादेश होगा। जैसे - ग्लै - ग्ला, म्लै - म्ला, ध्यै - ध्या, शो - शा, सो - सा, वे - वा छो - छा आदि।

अतिदेश

प्रत्यय लगने पर कभी कभी ऐसा भी होता है कि जो प्रत्यय जैसा नहीं होता है, उसे वैसा मान लिया जाता है। इस मानने को ही अतिदेश करना कहते हैं।

यह मानने का कार्य जिन सूत्रों के कारण होता है, उन सूत्रों को हम अतिदेश सूत्र कहते हैं। अतिदेश का अर्थ होता है, एक के धर्म को दूसरे में बतलाना। अतिदेश करने वाले सामान्य सूत्र इस प्रकार हैं -

गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित् (१.२.१) - 'इङ्' धातु के स्थान पर होने वाले 'गाङ्' धातु से, तथा तुदादिगण के अन्तर्गत जो कुट् से लेकर कुङ् तक ३६ धातुओं का कुटादिगण है, उस कुटादिगण में आने वाले धातुओं से परे आने वाले, ञित् णित् से भिन्न, सारे प्रत्यय, ङित्वत् मान लिये जाते हैं। कुटादि धातु इस प्रकार हैं -

कुट्	पुट्	कुच्	गुज्	गुड्	छुर्	स्फुट्	मुट्	त्रुट्
तुट्	चुट्	छुट्	जुट्	लुट्	कुड्	पुड्	घुट्	तुड्
थुड्	स्थुड्	स्फुर्	स्फुल्	स्फुड्	चुड्	व्रुड्	क्रुड्	गुर्
डिप्	कृड्	मृड्	कड्	नू	धू	गु	ध्रु	कु = ३६

जब भी गाङ् या कुटादि धातुओं के बाद ञित् णित् से भिन्न प्रत्यय आयें, तब उन्हें ङित् प्रत्यय जैसा मान लीजिये, और वही कार्य कीजिये जो कार्य ङित् प्रत्यय लगने पर कहे गये हैं।

विज इट् (१.२.२) - तुदादि गण के विज् धातु से परे आने वाले सारे सेट् प्रत्यय ङित्वत् माने जाते हैं।

व्यचेः कुटादित्वमनसीति वक्तव्यम् (वार्तिक) - व्यच् धातु से परे आने वाले 'अस्' से भिन्न सारे प्रत्यय ङिद्वत् होते हैं।

विभाषोर्णोः (१.२.३) - ऊर्णु धातु से परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्यय विकल्प से ङित्वत् माने जाते हैं।

इन ३९ धातुओं में कोई भी प्रत्यय लगाते समय इन अतिदेशों को सदा ध्यान में रखकर ही कोई भी अङ्गकार्य करें।

इस प्रकार धातु में कोई भी 'आर्धधातुक प्रत्यय' जोड़ते समय हमारी दृष्टि में ये तीन बातें एकदम स्पष्ट होना चाहिये

१. प्रत्यय सेट् है, अथवा अनिट्। जिस धातु में हम प्रत्यय जोड़ रहे हैं, वह धातु सेट् है या अनिट्।

२. प्रत्यय को देखकर कहीं किसी धातु को धात्वादेश होकर धातु की आकृति तो नहीं बदल रही है ?

३. कहीं किसी अतिदेश सूत्र के प्रभाव से प्रत्यय कहीं कित् जैसा, कहीं ङित् जैसा और कहीं अकित् जैसा तो नहीं मान लिया गया है ?

इन तीन निर्णयों पर ही हमारे सारे अङ्गकार्य आधारित होंगे। सामान्य अङ्गकार्य इस प्रकार हैं -

जब प्रत्यय कित्, ङित्, गित्, ञित्, णित्, से भिन्न हो,
तब इस प्रकार अङ्गकार्य करें

सार्वधातुकार्धधातुकयोः - धातु के अन्त में आने वाले इक् को गुण होता है, कित्, ङित्, गित्, ञित्, णित्, से भिन्न, सार्वधातुक अथवा आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

गुण होने का अर्थ होता है - इ, ई के स्थान पर ए / उ, ऊ के स्थान पर ओ / ऋ, ॠ के स्थान पर अर् तथा ऌ के स्थान पर अल् हो जाना।

जैसे - नी + तृच् - ने + तृच् - नेता / हु + तृच् - हो + तृच् - होता / स्वृ + तृच् - स्वर् - + तृच्- स्वर्ता, आदि।

पुगन्तलघूपंधस्य च - धातु की उपधा में स्थित लघु इक् के स्थान पर गुण होता है, कित्, ङित्, गित् से भिन्न सार्वधातुक तथा आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। जैसे -

लिख् + तृच् - लेख् + तृच् - लेखिता / मिद् + तृच् - मेद् + तृच् - मेदिता / वृष् + तृच् - वर्ष् + तृच् - वर्षिता / क्लृप् + तृच् - कल्प् + तृच् - कल्पिता आदि।

जब प्रत्यय कित्, ङित् हो या किद्वत्, ङिद्वत् मान लिया जाये, तब इस प्रकार अङ्गकार्य करें

क्ङिति च (१.१.५) - कित्, ङित्, गित् प्रत्यय परे होने पर, धातुओं के अन्त में आने वाले इक् को न तो 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण होता है, और न ही उपधा में स्थित लघु इक् को 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण होता है।

अचिश्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ - अजादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर अङ्ग के अन्तिम इ को इयङ् (इय्) अन्तिम उ को उवङ् (उव्) होता है।

ऊर्णु + इता - ऊर्णुव् + इता - ऊर्णुविता।

ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च (६.१.१६) - ग्रह्, ज्या, वय्, व्यध्, वश्, व्यच्, व्रश्च्, प्रच्छ्, भ्रस्ज् इन धातुओं को सम्प्रसारण होता है कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर। व्यच् + इता - विच् + इता = विचिता।

वचिस्वपियजादीनाम् किति (६.१.१५) - वच्, स्वप् तथा यज्, वप्, वह्, वस्, वद्, वेञ्, ह्वेञ्, श्वि, व्येञ्, धातुओं को सम्प्रसारण होता है, कित् प्रत्यय परे होने पर।

अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति (६.४.२४) - कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर, अनिदित् हलन्त धातुओं की उपधा के 'न्' का लोप होता है। ये आगे यथास्थान बतलाये जायेंगे। **अब हम धातुओं से सेट् प्रत्यय लगायें -**

तुमुन्, तव्य, तव्यत्, तृच्, तृन् प्रत्यय

ये चारों प्रत्यय यहाँ एक साथ इसलिये बतला रहे हैं, कि इन चारों को धातुओं में लगाने की प्रक्रिया बिल्कुल समान है। अतः एक को बनाने से ये चारों साथ ही बन जायेंगे। धातुओं में इन्हें लगाने के पहिले इनके अर्थ का हम विचार कर लें -

तृच् प्रत्यय

ण्वुल्तृचौ - (३.१.१३३) - समस्त धातुओं से कर्ता अर्थ में ण्वुल् तथा तृच् प्रत्यय होते हैं। कृ + ण्वुल् - कारकः, पठ् + ण्वुल् - पाठकः / कृ + तृच् - कर्ता आदि।

ये दोनों कृत् प्रत्यय कर्ताकारक अर्थ में होते हैं। अर्थात् इनके लगने पर जो शब्द बनता है, उसका अर्थ होता है, उस कार्य को करने वाला। जैसे - करोति इति कर्ता (कृ + तृच्), पठति इति पठिता (पठ् + तृच्)। करोति इति कारकः (कृ + ण्वुल्), पठति इति पाठकः (पठ् + ण्वुल्)।

तृन् प्रत्यय

तृन् - (३.२.१३५) - तच्छील, तद्धर्म, तत्साधुकारी कर्ता हो, तो वर्तमान काल में धातुमात्र से तृन् प्रत्यय होता है।

तच्छील अर्थ में - कटान् कर्तुं शीलम् अस्य इति कर्ता कटान् (कृ + तृन्)। (चटाई बनाना इसका स्वभाव है।) जनापवादान् वदितुम् शीलम् अस्य इति वदिता जनापवादान् (लोगों की निन्दा करना इसका स्वभाव है।) (वद् + इट् + तृन्)।

इसी प्रकार - मृदु वक्ता। धर्मम् उपदेष्टा, आदि।

तद्धर्म अर्थ में - मुण्डयितारः श्राविष्ठायना भवन्ति वधूमूढाम्। (श्राविष्ठायन गोत्र के लोग नवोढा वधू का मुण्डन करने वाले होते हैं। यह उनका कुलधर्म है।) (मुण्ड् + णिच् + इट् + तृन्)। अन्नमपहर्तारः आह्वरका भवन्ति श्राद्धे सिद्धे। (अप + हृ + तृन्)। उन्नेतारः तौल्वलायना भवन्ति पुत्रे जाते। (उत् + नी + तृन्)।

तत्साधुकारी अर्थ में - कटं साधु करोति इति कर्ता कटम्। (कृ + तृन्)।

आवश्यक - ध्यान दें कि तृन् तथा तृच् दोनों ही प्रत्ययों के रूप समानाकार ही बनते हैं, किन्तु दोनों का अन्तर यह होता है कि **'ण्वुल्तृचौ'** सूत्र से होने वाले तृच् प्रत्यय के योग में **'कर्तृकर्मणोः कृति'** सूत्र से कर्म में षष्ठी विभक्ति होती है। यथा - कटस्य कर्ता। धर्मस्य उपदेष्टा, आदि, और **'तृन्'** सूत्र से तच्छीलादि अर्थ में होने वाले तृन् प्रत्यय के योग में **'न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्'** सूत्र से षष्ठी का निषेध हो जाने से **'कर्मणि द्वितीया'** सूत्र से कर्म में द्वितीया ही होती है। यथा - धर्मम् उपदेष्टा। कटं कर्ता।

तुमुन् प्रत्यय

तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् - (३.३.१०) - क्रियार्था क्रिया उपपद में हो तो धातु से तुमुन् तथा ण्वुल् प्रत्यय भविष्यत् काल में होते हैं।

कृष्णं द्रष्टुं याति (कृष्ण को देखने के लिये जाता है।) कृष्णं दर्शको याति (कृष्ण

को देखने के लिये जाता है।)

इसी प्रकार - अन्नं भोक्तुं व्रजति (अन्न खाने के लिये जाता है।)। अन्नं भोजको व्रजति (अन्न खाने के लिये जाता है।)।

क्रियार्था क्रिया का अर्थ है - क्रिया अर्थः प्रयोजनं यस्याः क्रियायाः सा क्रियार्था क्रिया। अर्थात् ऐसी क्रिया, जिसका प्रयोजन कोई दूसरी क्रिया हो।

'भोक्तुं व्रजति', इस वाक्य को देखिये। यहाँ जाने की क्रिया, खाने की क्रिया के लिये हो रही है, अतः जाने की क्रिया, क्रियार्था क्रिया है। क्रियार्था क्रिया उपपद में हो, तो उस धातु से तुमुन् और ण्वुल् प्रत्यय होते हैं, जिसके लिये यह क्रियार्था क्रिया की जा रही है। 'व्रजति' क्रियार्था क्रिया है। अतः इसके उपपद में रहने पर 'भुज्' धातु से तुमुन् अथवा ण्वुल् प्रत्यय कर्ता अर्थ में होते हैं, यह तात्पर्य है।

समानकर्तृकेषु तुमुन् (३.३.१५८) - समान है कर्ता जिनका, ऐसे इच्छार्थक धातुओं के उपपद रहते, धातुमात्र से तुमुन् प्रत्यय होता है।

देवदत्तः इच्छति भोक्तुम्। देवदत्तः कामयते भोक्तुम्। देवदत्तः वाञ्छति भोक्तुम्। देवदत्तः वष्टि भोक्तुम्। (दिवदत्त खाना चाहता है।)

इन वाक्यों में इच्छति, कामयते, वाञ्छति, वष्टि आदि क्रियाओं के उपपद में रहने पर भुज् धातु से तुमुन् प्रत्यय हुआ है। यहाँ ध्यान दें कि जो कर्ता इच्छा का है, वही कर्ता भोजन का भी है। अतः इच्छ् और भुज्, ये दोनों धातु समानकर्तक हैं। अतः इच्छार्थक धातुओं के उपपद में रहने पर भुज् धातु से तुमुन् प्रत्यय हुआ है।

शकधृषज्ञाग्लाघटरभलभक्रमसहार्हास्त्यर्थेषु तुमुन् (३-४-६५) -

शक, धृष, ज्ञा, ग्ला, घट, रभ, लभ, क्रम, सह, अर्ह तथा अस्ति अर्थवाले धातुओं के उपपद रहते धातुमात्र से तुमुन् प्रत्यय होता है।

तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् ३.३.१० सूत्र से तुमुन् प्राप्त था। तो भी पुनर्विधान इसलिये किया कि क्रियार्था क्रिया उपपद में न होने पर भी तुमुन् हो जाये।

शक्नोति भोक्तुम् (खाने में प्रवीण है।)। धृष्णोति भोक्तुम् (खाने में प्रवीण है।) जानाति भोक्तुम् (खाने में प्रवीण है।) ग्लायति भोक्तुम् (खाने में अशक्त है।) घटते भोक्तुम् (खाने में योग्य है।) आरभते भोक्तुम् (खाना शुरू करता है।) लभते भोक्तुम् (भोजन प्राप्त करता है।) प्रक्रमते भोक्तुम् (खाना आरम्भ करता है।) उत्सहते भोक्तुम् (खाने में प्रवृत्त होता है।) अर्हति भोक्तुम् (खाने में योग्य है।) अस्ति भोक्तुम् (भोजन है।) भवति भोक्तुम् (भोजन है।) विद्यते भोक्तुम् (भोजन है।)

पर्याप्तिवचनेष्वलमर्थेषु (३-४-६६) - अलम् अर्थ वाले पर्याप्तिवाची शब्दों के उपपद रहते भी धातुओं से तुमुन् प्रत्यय होता है।

पर्याप्ति का अर्थ अन्यूनता या परिपूर्णता है। यह दो प्रकार से संभव है। भोजन के आधिक्य से अथवा भोक्ता के सामर्थ्य से।

यहाँ पर्याप्ति शब्द भोक्ता के सामर्थ्य को बतला रहा है। पर्याप्तो भोक्तुम्। समर्थो भोक्तुम्। अलं भोक्तुम्। (खाने में समर्थ है।)

इसलिये पर्याप्तं भुङ्क्ते में तुमुन् प्रत्यय नहीं होता है, क्योंकि यह पर्याप्त शब्द भोजन की पर्याप्ति को बतला रहा है, भोक्ता की पर्याप्ति को नहीं।

कालसमयवेलासु तुमुन् (३.३.१६७) - काल, समय, वेला, ये शब्द उपपद रहते धातु से तुमुन् प्रत्यय होता है। कालो भोक्तुम्। समयो भोक्तुम्। वेला भोक्तुम्। (खाने का समय है।) अनेहा भोक्तुम्।

तुमुन् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से नकार की तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से उकार की इत् संज्ञा करके तथा 'तस्य लोपः' से दोनों का लोप करके 'तुम्' शेष बचता है।

कृन्मेजन्तः (१.१.३९) - मकारान्त और एजन्त कृदन्तों की अव्ययसंज्ञा होती है।

अतः तुमुन् प्रत्यय से बने हुए सारे शब्द अव्यय ही होंगे। इसलिये इनसे परे आने वाली स्वादि विभक्तियों का 'अव्ययादाप्सुपः' सूत्र से लोप हो जायेगा।

अव्ययकृतो भावे - जिन कृदन्तों की अव्ययसंज्ञा होती है, वे कर्ता अर्थ में न होकर भाव अर्थ में होते हैं।

इस प्रकार हमें जानना चाहिये कि **'तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्'** से होने वाले तुमुन् और ण्वुल् प्रत्ययों में से तुमुन् प्रत्यय तो **'अव्ययकृतो भावे'** से भाव अर्थ में होता है और ण्वुल् प्रत्यय **कर्तरि कृत्** से कर्ता अर्थ में ही होता है।

अब दोनों ण्वुल् प्रत्ययों के अर्थों का विचार करें -

ण्वुल्तृचौ सूत्र से होने वाला ण्वुल् प्रत्यय तथा **तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्** से होने वाला ण्वुल् प्रत्यय, ये दोनों ही कर्ता अर्थ में होते हैं -

किन्तु दोनों का अन्तर यह होता है कि **'ण्वुल्तृचौ'** सूत्र से होने वाले ण्वुल् प्रत्यय के योग में **'कर्तृकर्मणोः कृति'** सूत्र से कर्म में षष्ठी विभक्ति होती है। ओदनस्य पाचकः, जगतः कारकः, आदि, और **'तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्** से भविष्यत् अर्थ में होने वाले ण्वुल् प्रत्यय के योग में **'अकेनोर्भविष्यदाधमर्ण्ययोः'** सूत्र से षष्ठी का निषेध हो जाने

से 'कर्मणि द्वितीया' सूत्र से कर्म में द्वितीया ही होती है। यथा - कृष्णं दर्शको याति।

तव्य, तव्यत् प्रत्यय

तव्यत्तव्यानीयरः (३.१.९६) - धातुओं से भाव, कर्म अर्थ में तव्यत्, तव्य, अनीयर् प्रत्यय होते हैं।

अर्हे कृत्यतृचश्च (३.३.१६९) - अर्ह अर्थात् योग्य कर्ता वाच्य हो या गम्यमान हो तो धातु से कृत्यसंज्ञक प्रत्यय तथा तृच् प्रत्यय होते हैं तथा चकार से लिङ् भी होता है। भवता खलु पठितव्या विद्या, पाठ्या, पठनीया वा (आप विद्या पढने के योग्य हैं।) तृच् - पठिता विद्याया भवान् (आप विद्या पढने के योग्य हैं।) भवान् विद्यां पठेत्।

कृत्याश्च (३.३.१७१) - आवश्यक और आधमर्ण्य = ऋण विशिष्ट कर्ता वाच्य हो तो धातु से कृत्यसंज्ञक प्रत्यय होते है।

आवश्यक अर्थ में - भवता खलु अवश्यं कटः कर्तव्यः, करणीयः, कार्यः, कृत्यः।

आधमर्ण्य अर्थ में - भवता शतं दातव्यम्, सहस्रं देयम्।

तव्य प्रत्यय के अर्थ का विचार -

तयोरेव कृत्यक्तखलर्थाः (३-४-७०) - कृत्यसंज्ञक प्रत्यय, क्त तथा खलर्थ प्रत्यय, भाव तथा कर्म अर्थ में ही होते हैं।

कर्म अर्थ में तव्य प्रत्यय - कर्तव्यो घटः कुलालेन। कृतो घटः कुलालेन।

भाव अर्थ में तव्य प्रत्यय - आसितव्यं भवता। आसितं भवता।

अब हम तव्य, तव्यत्, तृच्, तृन् और तुमुन् प्रत्ययों को धातुओं में लगायें

यह कार्य हम धातुओं के वर्ग बनाकर, इस प्रकार करें -

वर्ग - १ - कुटादि धातु।

वर्ग - २ - भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के अजन्त धातु।

वर्ग - ३ - भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के हलन्त धातु।

वर्ग - ४ - चुरादिगण के धातु तथा अन्य णिजन्त धातु।

वर्ग - ५ - सन्, यङ्, क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्ययों से बने हुए प्रत्ययान्त धातु।

तुमुन् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से न् की तथा उपदेशेऽजनुनासिक इत् सूत्र से उ की इत्संज्ञा करके तथा 'तस्य लोपः' सूत्र से दोनों का लोप करके 'तुम्' शेष बचता है। तव्यत् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से त् की इत्संज्ञा करके तव्य शेष बचता है। तृच् तथा तृन् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से च् की इत्संज्ञा करके तृ शेष बचता है।

तुमुन्, तव्यत्, तव्य, तृन् और तृच् की प्रक्रिया एक ही है। अतः जो रूप तुमुन् प्रत्यय लगाकर बनेगा, वही रूप शेष चार प्रत्ययों में भी बनेगा। अतः हम प्रक्रिया केवल तुमुन् की देंगे, शेष रूप आप स्वयं वैसे ही बना लीजिये।

तव्य के समान ही तव्यत् बनाइये तथा तृच् के समान ही तृन् बनाइये।

तृच् प्रत्ययान्त शब्दों का प्रथमा एकवचन में रूप 'ता' बनता है। जैसे -

कर्तृ + सु = कर्ता / हर्तृ + सु = हर्ता / भर्तृ + सु = भर्ता, आदि। अतः हम 'ता' लगाकर ही, तृच् प्रत्ययान्त शब्दों का प्रथमा एकवचन का रूप आगे देंगे।

ये प्रत्यय सेट् हैं। अतः इनके परे होने पर सबसे पहिले यह विचार अवश्य करना चाहिये कि धातु सेट् है अथवा अनिट् ?

वर्ग - १ - कुटादि धातु

गु धातु / ध्रु धातु / कुङ् धातु - ये कुटादि धातु अनिट् हैं। अतः इनसे परे आने वाले तुमुन्, तव्य, तृच् को इडागम मत कीजिये।

गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित् (१.२.१) - 'इङ्' धातु के स्थान पर होने वाले 'गाङ्' धातु से, तथा तुदादिगण के अन्तर्गत जो कुट् से लेकर कुङ् तक ३६ धातुओं का कुटादिगण है, उस कुटादिगण में आने वाले धातुओं से परे आने वाले, ञित् णित् से भिन्न, सारे प्रत्यय, ङित्वत् मान लिये जाते हैं।

अतः **'क्ङिति च'** सूत्र से गुणनिषेध होकर इनके रूप इस प्रकार बनेंगे -

गु + तुम् = गुतुम् गुतव्यम् गुता।
ध्रु + तुम् = ध्रुतुम् ध्रुतव्यम् ध्रुता।
कु + तुम् = कुतुम् कुतव्यम् कुता।

नू, धू धातु - ये कुटादि धातु सेट् है।

गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित् सूत्र से प्रत्यय के ङिद्वत् होने के कारण गुणनिषेध करके **अचिश्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ** सूत्र से उवङ् करके -

नू + इट् + तुम् - नुव् + इ + तुम् = नुवितुम् नुवितव्यम् नुविता।
धू + इट् + तुम् - धुव् + इ + तुम् = धुवितुम् धुवितव्यम् धुविता।

शेष सेट् कुटादि धातु - 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध करके -

कुच् = कुचितुम् कुचितव्यम् कुचिता
कुट् = कुटितुम् कुटितव्यम् कुटिता

पुट्	=	पुटितुम्	पुटितव्यम्	पुटिता
स्फुट्	=	स्फुटितुम्	स्फुटितव्यम्	स्फुटिता
मुट्	=	मुटितुम्	मुटितव्यम्	मुटिता
त्रुट्	=	त्रुटितुम्	त्रुटितव्यम्	त्रुटिता
तुट्	=	तुटितुम्	तुटितव्यम्	तुटिता
चुट्	=	चुटितुम्	चुटितव्यम्	चुटिता
छुट्	=	छुटितुम्	छुटितव्यम्	छुटिता
जुट्	=	जुटितुम्	जुटितव्यम्	जुटिता
लुट्	=	लुटितुम्	लुटितव्यम्	लुटिता
घुट्	=	घुटितुम्	घुटितव्यम्	घुटिता
लुठ्	=	लुठितुम्	लुठितव्यम्	लुठिता
गुड्	=	गुडितुम्	गुडितव्यम्	गुडिता
कुड्	=	कुडितुम्	कुडितव्यम्	कुडिता
पुड्	=	पुडितुम्	पुडितव्यम्	पुडिता
तुड्	=	तुडितुम्	तुडितव्यम्	तुडिता
थुड्	=	थुडितुम्	थुडितव्यम्	थुडिता
स्थुड्	=	स्थुडितुम्	स्थुडितव्यम्	स्थुडिता
स्फुड्	=	स्फुडितुम्	स्फुडितव्यम्	स्फुडिता
चुड्	=	चुडितुम्	चुडितव्यम्	चुडिता
व्रुड्	=	व्रुडितुम्	व्रुडितव्यम्	व्रुडिता
क्रुड्	=	क्रुडितुम्	क्रुडितव्यम्	क्रुडिता
कृड्	=	कृडितुम्	कृडितव्यम्	कृडिता
मृड्	=	मृडितुम्	मृडितव्यम्	मृडिता
गुज्	=	गुजितुम्	गुजितव्यम्	गुजिता
डिप्	=	डिपितुम्	डिपितव्यम्	डिपिता
छुर्	=	छुरितुम्	छुरितव्यम्	छुरिता
गुर्	=	गुरितुम्	गुरितव्यम्	गुरिता
स्फुर्	=	स्फुरितुम्	स्फुरितव्य	स्फुरिता

स्फुल्	=	स्फुलितुम्	स्फुलितव्यम्	स्फुलिता
कड्	=	कडितुम्	कडितव्यम्	कडिता

वर्ग - २

भ्वादि से लेकर क्र्यादिगण के अजन्त धातु

ध्यान रहे कि इस ग्रन्थ में धातुओं के रूप उत्सर्गापवाद विधि से ही बनाये गये हैं। अत: इसमें हम सब धातुओं के रूप न बनाकर, केवल उन धातुओं के रूप बनायेंगे, जिनमें प्रत्यय लगने पर, धातु, प्रत्यय अथवा दोनों को कुछ न कुछ परिवर्तन होता है।

जिनके रूप इन वर्गों में न मिलें, उन्हें बनाने की विधि अन्त में दी है। उसे पढ़कर शेष रूप आप स्वयं बना लें। अब हम धातुओं के रूप, धातुओं के आद्यक्षर के क्रम से न बनाकर, धातुओं के अन्तिम अक्षर को वर्णमाला के क्रम से रखकर बनायें -

आकारान्त तथा एजन्त धातु

दरिद्रा धातु - दरिद्रा धातु अनेकाच् होने से सेट् है।

दरिद्रातेरार्धधातुके विवक्षित आलोपो वाच्य: (वा. ६.४.११४) - दरिद्रा धातु के आ का लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। अत: दरिद्रा + इट् + तुमुन् / आ का लोप करके - दरिद्र् + इ + तुम् = दरिद्रितुम्। दरिद्रितव्यम्। दरिद्रिता।

शेष आकारान्त धातु - शेष सारे आकारान्त धातु अनिट् ही होते हैं।

अत: आकारान्त धातुओं के बाद आने वाले **'तुमुन्, तव्य, तृच्'** प्रत्ययों को इट् का आगम मत कीजिये -

पा	+	तुमुन्	-	पा	+	तुम्	=	पातुम्	पातव्यम्	पाता।
दा	+	तुमुन्	-	दा	+	तुम्	=	दातुम्	दातव्यम्	दाता।
धा	+	तुमुन्	-	धा	+	तुम्	=	धातुम्	धातव्यम्	धाता।

एजन्त धातु - सारे एजन्त धातु भी अनिट् ही होते हैं।

अत: इनके रूप भी आकारान्त धातुओं के समान ही बनाइये।

आदेच उपदेशेऽशिति (६.१.४५) - अशित् प्रत्यय परे होने पर सारे एजन्त धातुओं को 'आ' अन्तादेश होता है। यथा -

धे	-	धा	-	धातुम्	धातव्यम्	धाता
ध्यै	-	ध्या	-	ध्यातुम्	ध्यातव्यम्	ध्याता
शो	-	शा	-	शातुम्	शातव्यम्	शाता

ग्लै	-	ग्ला	-	ग्लातुम्	ग्लातव्यम्	ग्लाता
गै	-	गा	-	गातुम्	गातव्यम्	गाता

इकारान्त धातु

श्रि, श्वि धातु - एकाच् इकारान्त धातुओं में श्रि, श्वि ये दो धातु ही सेट् होते हैं। अतः इनसे परे आने वाले तुमुन्, तव्य, तृच् को **'आर्धधातुकस्येड् वलादेः'** सूत्र से इट् का आगम कीजिये। यथा - श्रि + तुमुन् / श्रि + इट् + तुम् / **'सार्वधातुकार्धधातुकयोः'** सूत्र से गुण करके - श्रे + इ + तुम् / **'एचोऽयवायावः'** सूत्र से 'ए' को अयादेश करके - श्रय् + इ + तुम् = श्रयितुम्। / श्रयितव्यम् / श्रयिता।

इसी प्रकार - श्वि से श्वयितुम् श्वयितव्यम् श्वयिता बनाइये।

शेष एकाच् इकारान्त धातु अनिट् ही होते हैं, अतः इनसे इट् मत लगाइये। धातु के अन्तिम इ, ई को सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से गुण करके ए बनाइये -

जि + तुमुन् - जे + तुम् = जेतुम् जेतव्यम् जेता।
अधि + इ + तुमुन् - अध्ये + तुम् = अध्येतुम् अध्येतव्यम् अध्येता।

ईकारान्त धातु

डीङ्, शीङ् धातु - एकाच् ईकारान्त धातुओं में डीङ्, शीङ्, ये दो धातु ही सेट् होते हैं। अतः इनसे परे आने वाले तुमुन्, तव्य, तृच् को इट् का आगम कीजिये।

यथा - शी + तुमुन् / शी + तुम् / सेट् होने के कारण तुमुन् को आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् का आगम करके - शी + इट् + तुम् / सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से गुण करके - शे + इ + तुम् / एचोऽयवायावः सूत्र से 'ए' को अयादेश करके - शय् + इ + तुम् = शयितुम् शयितव्यम् शयिता।

इसी प्रकार - डी से डयितुम् डयितव्यम् डयिता, बनाइये।

दीधी, वेवी धातु - अनेकाच् होने से ये सेट् हैं।

दीधीवेवीटाम् (१.१.६) - दीधी और वेवी धातुओं के इक् के स्थान पर कोई भी गुण या वृद्धि कार्य नहीं होते।

यीवर्णयोर्दीधीवेव्योः (७.३.५३) - यकारादि और इकारादि प्रत्यय परे होने पर दीधी, वेवी धातुओं के 'ई' का लोप होता है।

दीधी + इ + तुमुन् - दीध् + इ + तुम् = दीधितुम् दीधितव्यम् दीधिता।
वेवी + इ + तुमुन् - वेव् + इ + तुम् = वेवितुम् वेवितव्यम् वेविता।

ली धातु - ली धातु अनिट् है।

ली + तुम् / धातु के अन्तिम इ, ई को सार्वधातुकार्धधातुकयो: सूत्र से गुण करके - ले + तुम् - लेतुम् लेतव्यम् लेता।

विभाषा लीयते: (६.१.५१) - जब भी 'ली' धातु को गुण होकर 'ए' होता है, तब उस 'ए' को विकल्प से 'आ' आदेश होता है। लातुम् लातव्यम् लाता।

शेष एकाच् ईकारान्त धातु - अनिट् ही होते हैं, अत: इनसे इट् मत लगाइये। धातु के अन्तिम इ, ई को सार्वधातुकार्धधातुकयो: सूत्र से गुण करके ए बनाइये -

नी + तुमुन् - ने + तुम् = नेतुम् नेतव्यम् नेता।
भी + तुमुन् - भे + तुम् = भेतुम् भेतव्यम् भेता।

उकारान्त धातु

सेट् यु, रु, नु, स्नु, क्षु, क्ष्णु धातु -

उकारान्त धातुओं में यु, रु, नु, स्नु, क्षु, क्ष्णु, ये ६ धातु ही सेट् होते हैं। अत: इनसे परे आने वाले तुमुन्, तव्य, तृच् को इट् का आगम कीजिये।

यु + इट् + तुमुन् / यु + इ + तुम् / **'सार्वधातुकार्धधातुकयो:'** सूत्र से गुण करके - यो + इ + तुम्। **'एचोऽयवायाव:'** सूत्र से इस ओ को अवादेश करके - यव् + इ + तुम् = यवितुम्।

यु	-	यो	-	यव्	=	यवितुम्	यवितव्यम्	यविता
रु	-	रो	-	रव्	=	रवितुम्	रवितव्यम्	रविता
नु	-	नो	-	नव्	=	नवितुम्	नवितव्यम्	नविता
स्नु	-	स्नो	-	स्नव्	=	स्नवितुम्	स्नवितव्यम्	स्नविता
क्षु	-	क्षो	-	क्षव्	=	क्षवितुम्	क्षवितव्यम्	क्षविता
क्ष्णु	-	नो	-	क्ष्णव्	=	क्ष्णवितुम्	क्ष्णवितव्यम्	क्ष्णविता

ऊर्णु धातु - ध्यान रहे कि ऊर्णु धातु से परे आने वाले सेट् प्रत्यय **'विभाषोर्णो:'** सूत्र से विकल्प से ङिद्वत् होते हैं।

ङिद्वत् न होने पर गुण करके - ऊर्णु + इ + तुम् / **'सार्वधातुकार्धधातुकयो:'** सूत्र से गुण करके - ऊर्णव् + इतुम् - ऊर्णवितुम् ऊर्णवितव्यम् ऊर्णविता।

ङिद्वत् होने पर गुणनिषेध करके - ऊर्णु + इ + तुम् / गुणनिषेध होने के कारण करके **अचिश्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ** सूत्र से उ को उवङ् आदेश करके -

ऊर्णुव् + इतुम् - ऊर्णुवितुम् ऊर्णुवितुम् ऊर्णुविता।

शेष उकारान्त धातु - अनिट् होते हैं।

अतः इडागम न करके - हु + तुमुन् / हु + तुम् / **'सार्वधातुकार्धधातुकयोः'** सूत्र से गुण करके -

हु - होतुम् होतव्यम् होता।

द्रु - द्रोतुम् द्रोतव्यम् द्रोता आदि बनाइये।

ऊकारान्त धातु

ध्यान रहे कि ऊकारान्त धातुओं में धूञ् धातु, सू धातु (अदादिगण) सू धातु (दिवादिगण), ये वेट् होते हैं। ब्रू धातु अनिट् होता है, शेष ऊकारान्त धातु सेट् होते हैं।

वेट् धू, सू धातु -

इट् होने पर - धू + इट् + तुमुन् / **'सार्वधातुकार्धधातुकयोः'** सूत्र से गुण करके धू + इ + तुम् / **'एचोऽयवायावः'** सूत्र से ओ को अवादेश करके - धव् + इ + तुम् = धवितुम्, धवितव्यम्, धविता। इसी प्रकार सू से सवितुम्, सवितव्यम्, सविता।

इट् न होने पर - धू + तुम् - धो + तुम् = धोतुम्, धोतव्यम्, धोता। इसी प्रकार - सू - सोतुम्, सोतव्यम्, सोता।

अनिट् ब्रू धातु - इसे 'ब्रुवो वचिः' सूत्र से 'वच्' आदेश होता है।

ब्रू + तुम् / वच् + तुम् / चोः कुः से च् को कुत्व करके - वक् + तुम् = वक्तुम् वक्तव्यम् वक्ता।

शेष सारे ऊकारान्त धातु - सेट् हैं, अतः इनके रूप इस प्रकार बनाइये -

पू + इट् + तुमुन् / पू + इ + तुम् / **'सार्वधातुकार्धधातुकयोः'** सूत्र से गुण करके - पो + इ + तुम्। एचोऽयवायावः सूत्र से इस ओ को अवादेश करके - पव् + इ + तुम् = पवितुम् पवितुम् पविता।

ऋकारान्त धातु

ध्यान रहे कि ऋकारान्त धातुओं में वृङ्, वृञ् धातु सेट् होते हैं, स्वृ धातु वेट् होता है। शेष ह्रस्व ऋकारान्त धातु अनिट् होते हैं।

सेट् वृङ्, वृञ् धातु - इनसे परे आने वाले तुमुन्, तव्य, तृच् प्रत्ययों को इट् का आगम कीजिये। ऋ को **'सार्वधातुकार्धधातुकयोः'** सूत्र से गुण करके अर् बनाइये - वृ + इट् + तुमुन् / वर् + इट् + तुम् -

वृतो वा (७.२.३८) - वृङ् धातु, वृञ् धातु, तथा सारे दीर्घ ॠकारान्त धातुओं से परे आने वाले, इट् को विकल्प से दीर्घ होता है।

वृ + इ + तुम् - वर् + इतुम् = वरितुम् वरितव्यम् वरिता
वरीतुम् वरीतव्यम् वरीता

वेट् स्वृ धातु - इससे परे आने वाले तुमुन्, तव्य, तृच् प्रत्ययों को विकल्प से इट् का आगम कीजिये।

इडागम होने पर - स्वृ + इट् + तुमुन् / **'सार्वधातुकार्धधातुकयोः'** सूत्र से गुण करके - स्वर् + इ + तुम् - स्वरितुम्, स्वरितव्यम्, स्वरिता ।

इडागम न होने पर - स्वृ + तुमुन् / **'सार्वधातुकार्धधातुकयोः'** सूत्र से गुण करके - स्वर्तुम्, स्वर्तव्यम्, स्वर्ता।

शेष ऋकारान्त धातु - अनिट् होते हैं। अतः इनसे परे आने वाले तुमुन्, तव्य, तृच् प्रत्ययों को इट् का आगम मत कीजिये। कृ + तुमुन् / **'सार्वधातुकार्धधातुकयोः'** सूत्र से गुण करके - कर् + तुम् - कर्तुम्, कर्तव्यम्, कर्ता। इसी प्रकार -

धृ + तुम् - धर् + तुम् = धर्तुम् धर्तव्यम् धर्ता
भृ + तुम् - भर् + तुम् = भर्तुम् भर्तव्यम् भर्ता

ॠकारान्त धातु

दीर्घ ॠकारान्त सारे धातु सेट् ही होते हैं। अतः इनसे परे आने वाले तुमुन्, तव्य, तृच् प्रत्ययों को इट् का आगम कीजिये।

पूर्ववत् **'सार्वधातुकार्धधातुकयोः'** सूत्र से गुण करके ऊपर कहे गये **'वृतो वा'** सूत्र से ॠकारान्त धातुओं से परे आने वाले 'इट्' को विकल्प से दीर्घ कर दीजिये।

तॄ + इ + तुम् - तर् + इता = तरितुम् तरितव्यम् तरिता
तरीतुम् तरीतव्यम् तरीता
शॄ + इ + तुम् - शर् + इता = शरितुम् शरितव्यम् शरिता
शरीतुम् शरीतव्यम् शरीता
जॄ + इ + तुम् - जर् + इता = जरितुम् जरितव्यम् जरिता
जरीतुम् जरीतव्यम् जरीता
गॄ + इ + तुम् - गर् + इता = गरितुम् गरितव्यम् गरिता
गरीतुम् गरीतव्यम् गरीता

वर्ग - ३

भ्वादि से लेकर क्र्यादिगण के हलन्त धातु

ध्यान रहे कि -

१. यदि उपधा में लघु इक् हो तो उसे **'पुगन्तलघूपधस्य च'** सूत्र से गुण करने के बाद ही, सन्धिकार्य करें।

२. अनिट् प्रत्यय परे होने पर, जिन धातुओं के बीच में वर्ग के पञ्चमाक्षर हों, उन्हें आप पहिले अनुस्वार बना लें। जैसे - भञ्ज् + तुम् - भंज् + तुम् / अञ्ज् + तुम् - अंज् + तुम् / सञ्ज् + तुम् - संज् + तुम्, आदि।

३. जिन हलन्त धातुओं के रूप बनाकर यहाँ नहीं दे रहे हैं, उनके रूप बनाने की विधि इस पाठ के अन्त में देखिये।

ककारान्त धातु

शक् धातु - यह अनिट् है।

शक् + तुम् = शक्तुम् शक्तव्यम् शक्ता

शेष ककारान्त धातु - शेष ककारान्त धातु सेट् हैं। इनके रूप बनाने की विधि पाठ के अन्त में देखिये।

चकारान्त धातु

तञ्चू धातु - यह धातु वेट् है।

इडागम न होने पर - तंच् + तुमुन् / 'च्' को 'चो: कु:' सूत्र से कुत्व करके - तंक् + तुम् / अनुस्वार के स्थान पर **'अनुस्वारस्य ययि परसवर्ण:'** सूत्र से परसवर्ण करके - तङ्क् + तुम् =

तङ्क्तुम् तङ्क्तव्यम् तङ्क्ता

इडागम होने पर -

तञ्चितुम् तञ्चितव्यम् तञ्चिता

(ध्यान दें कि अनुस्वार जब क् को देखता है, तब उसका परसवर्ण ङ् हो जाता है और जब च् को देखता है, तब उसका परसवर्ण ञ् हो जाता है)

व्यच् धातु - यह धातु सेट् है। व्यच् इट् + तुमुन् -

'व्यचे: कुटादित्वमनसीति वक्तव्यम्' इस वार्तिक से व्यच् धातु से परे आने वाले 'अस्' से भिन्न सारे प्रत्यय ङिद्वत् होते हैं। अत: व्यच् धातु को **ग्रहिज्यावयिव्यधि-**

वष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च सूत्र से सम्प्रसारण करके -

विच् + इ + तुम् = विचितुम् विचितव्यम् विचिता

व्रश्च् धातु - यह धातु वेट् है।

इडागम न होने पर - व्रश्च् + तुम् - **'स्कोः संयोगाद्योरन्ते च'** सूत्र से संयोग के आदि में स्थित 'स्' का लोप करके - व्रच् + तुम् / अब अन्त में आने वाले 'च्' को **'व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः'** सूत्र से 'ष्' बनाकर - व्रष् + तुम् / प्रत्यय के 'त' को **'ष्टुना ष्टुः'** सूत्र से 'ट' बनाकर - व्रष् + टुम् = व्रष्टुम् व्रष्टव्यम् व्रष्टा।

इडागम होने पर -

व्रश्च् + इतुम् = व्रश्चितुम् व्रश्चितव्यम् व्रश्चिता।

शेष अनिट् चकारान्त धातु -

यदि उपधा में लघु इक् हो तो उसे पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से गुण कीजिये। अनन्तर धातु के अन्त में आने वाले 'च्' को 'चोः कुः' सूत्र से कुत्व करके 'क्' बनाइये।

पच्	+	तुम्	=	पक्तुम्	पक्तव्यम्	पक्ता
मुच्	+	तुम्	=	मोक्तुम्	मोक्तव्यम्	मोक्ता
रिच्	+	तुम्	=	रेक्तुम्	रेक्तव्यम्	रेक्ता
वच्	+	तुम्	=	वक्तुम्	वक्तव्यम्	वक्ता
विच्	+	तुम्	=	वेक्तुम्	वेक्तव्यम्	वेक्ता
सिच्	+	तुम्	=	सेक्तुम्	सेक्तव्यम्	सेक्ता

छकारान्त धातु -

अनिट् झलादि प्रत्यय परे होने पर छकारान्त धातु के अन्त में आने वाले 'छ्' को व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः' सूत्र से 'ष्' बनाइये। उसके बाद प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाइये।

प्रच्छ् + तुम् = प्रष्टुम् प्रष्टव्यम् प्रष्टा

जकारान्त धातु -

मस्ज् धातु -

मस्जिनशोर्झलि (७.१.६०) - मस्ज् तथा नश् धातु को अनिट् झलादि प्रत्यय परे होने पर नुम् का आगम होता है।

मस्जेरन्त्यात् पूर्वो नुम् वक्तव्यः - मस्ज् धातु को होने वाला नुमागम अन्तिम

वर्ण के पूर्व में होता है।

मस्ज् + तुम् - म स् न् ज् + तुम् / **'स्कोः संयोगाद्योरन्ते च'** सूत्र से संयोग के आदि में स्थित 'स्' का लोप करके - मंज् + तुम् / ज् को चोः कुः से कुत्व करके - मंग् + तुम् / ग् को खरि च से चर्त्व करके - मंक् + तुम् / अनुस्वार को 'अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः' से परसवर्ण करके = मङ्क्तुम् मङ्क्तव्यम् मङ्क्ता।

सृज् धातु - सृज् + तुमुन् - सृज् + तुम् -

सृजिदृशोर्झल्यमकिति (६.१.५८) - सृज् तथा दृश्, इन दो अनिट् ऋदुपध ा धातुओं को झलादि अकित् प्रत्यय परे होने पर अम् का आगम होता है।

सृ अम् ज् + तुम् / म् की इत् संज्ञा करके - सृ अ ज् + तुम् -

'इको यणचि' सूत्र से ऋ के स्थान पर यण् आदेश करके - स्रज् + तुम् / धातु के अन्त में आने वाले 'ज्' को व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः' सूत्र से 'ष्' बनाकर - स्रष् + तुम् / 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाकर - स्रष् + टुम् =

स्रष्टुम् स्रष्टव्यम् स्रष्टा।

भ्रस्ज् धातु -

भ्रस्जो रोपधयोः रमन्यतरस्याम् (६.४.४७) - आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर भ्रस्ज् धातु के 'र्' तथा उपधा के स्थान पर, विकल्प से 'रम्' का आगम होता है।

'र्' तथा उपधा के स्थान पर, 'रम्' का आगम होने पर -

भ्रस्ज् + तुम् / भ्रस्जो रोपधयोः रमन्यतरस्याम् सूत्र से 'रम्' का आगम होकर - भर्ज् + तुम् / धातु के अन्त में आने वाले 'ज्' को **'व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः'** सूत्र से 'ष्' करके - भर्ष् + तुम् / प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' करके - भर्ष् + टुम् = भर्ष्टुम् भर्ष्टव्यम् भर्ष्टा।

भ्रस्ज् के स्थान पर भ्रस्ज् ही रहने पर -

भ्रस्ज् + तुम् - **'स्कोः संयोगाद्योरन्ते च'** सूत्र से संयोग के आदि में स्थित 'स्' का लोप करके - भ्रज् + तुम् / धातु के अन्त में आने वाले 'ज्' को **'व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयज-राजभ्राजच्छशां षः'** सूत्र से 'ष्' बनाकर - भ्रष् + तुम् / प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाकर - भ्रष्टुम् भ्रष्टव्यम् भ्रष्टा।

अज् धातु - अज् + तुम् / **अजेर्व्यघञपोः** से 'वी' आदेश करके - वी + तुम् - **'सार्वधातुकार्धधातुकयोः'** सूत्र से गुण करके - वे + तुम् = वेतुम् वेतव्यम् वेता।

वेट् अञ्जू धातु -

इडागम न होने पर - 'ज्' को 'चोः कुः' सूत्र से कुत्व करके 'ग्' बनाइये। अब 'खरि च' सूत्र से उस 'ग्' को कवर्ग का प्रथमाक्षर क् बनाइये।

अञ्ज् + तुम् - अङ्क्तुम् अङ्क्तव्यम् अङ्क्ता

इडागम होने पर - अञ्जितुम् अञ्जितव्यम् अञ्जिता

वेट् मृज् धातु - इडागम न होने पर -

मृजेर्वृद्धिः (७.२.११४) - मृज् धातुरूप जो अङ्ग, उसके इक् के स्थान पर वृद्धि होती है।

मृज् + तुम् - मार्ज् + तुम् / **'व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः'** सूत्र से 'ज्' को 'ष्' बनाकर - मार्ष् + तुम् / प्रत्यय के 'त' को **'ष्टुना ष्टुः'** सूत्र से ष्टुत्व करके - मार्ष् + टुम् = मार्ष्टुम् मार्ष्टव्यम् मार्ष्टा।

इडागम होने पर - मृज् + इ + तुम् - मार्ज् + इतुम् =

मार्जितुम् मार्जितव्यम् मार्जिता।

विज् धातु - यह धातु सेट् है। इससे परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्यय **'विज इट्'** सूत्र से ङिद्वत् होते हैं। अतः **'क्ङिति च'** सूत्र से गुणनिषेध करके -

उद्विज् + इ + तुम् = उद्विजितुम् उद्विजितव्यम् उद्विजिता

शेष अनिट् जकारान्त धातु -

यदि उपधा में लघु इक् हो तो उसे **'पुगन्तलघूपधस्य च'** सूत्र से गुण कीजिये। धातु के अन्त में आने वाले 'ज्' को **'चोः कुः'** सूत्र से कुत्व करके 'ग्' बनाइये। अनन्तर उसे खरि च सूत्र से चर्त्व करके 'क्' बनाइये।

निज्	+	तुम्	=	नेक्तुम्	नेक्तव्यम्	नेक्ता
भुज्	+	तुम्	=	भोक्तुम्	भोक्तव्यम्	भोक्ता
रुज्	+	तुम्	=	रोक्तुम्	रोक्तव्यम्	रोक्ता
विज्	+	तुम्	=	वेक्तुम्	वेक्तव्यम्	वेक्ता
युज्	+	तुम्	=	योक्तुम्	योक्तव्यम्	योक्ता
त्यज्	+	तुम्	=	त्यक्तुम्	त्यक्तव्यम्	त्यक्ता
भज्	+	तुम्	=	भक्तुम्	भक्तव्यम्	भक्ता
भञ्ज्	+	तुम्	=	भङ्क्तुम्	भङ्क्तव्यम्	भङ्क्ता

रञ्ज्	+	तुम्	=	रङ्क्तुम्	रङ्क्तव्यम्	रङ्क्ता
स्वञ्ज्	+	तुम्	=	स्वङ्क्तुम्	स्वङ्क्तव्यम्	स्वङ्क्ता
सञ्ज्	+	तुम्	=	सङ्क्तुम्	सङ्क्तव्यम्	सङ्क्ता
युज्	+	तुम्	=	योक्तुम्	योक्तव्यम्	योक्ता

दकारान्त धातु

यदि उपधा में लघु इक् हो तो उसे **'पुगन्तलघूपधस्य च'** सूत्र से गुण कीजिये। अनन्तर धातु के अन्त में आने वाले, त्, थ्, द्, ध् को 'खरि च' सूत्र से उसी वर्ग का प्रथमाक्षर त् बनाइये।

वेट् क्लिद् धातु -

इडागम न होने पर	-	क्लेत्तुम्	क्लेत्तव्यम्	क्लेत्ता
इडागम होने पर	-	क्लेदितुम्	क्लेदितव्यम्	क्लेदिता

वेट् स्यन्द् धातु -

इडागम न होने पर	-	स्यन्तुम्	स्यन्तव्यम्	स्यन्ता
इडागम होने पर	-	स्यन्दितुम्	स्यन्दितव्यम्	स्यन्दिता

शेष दकारान्त अनिट् धातु -

अद्	+	तुम्	=	अत्तुम्	अत्तव्यम्	अत्ता
क्षुद्	+	तुम्	=	क्षोत्तुम्	क्षोत्तव्यम्	क्षोत्ता
खिद्	+	तुम्	=	खेत्तुम्	खेत्तव्यम्	खेत्ता
छिद्	+	तुम्	=	छेत्तुम्	छेत्तव्यम्	छेत्ता
तुद्	+	तुम्	=	तोत्तुम्	तोत्तव्यम्	तोत्ता
नुद्	+	तुम्	=	नोत्तुम्	नोत्तव्यम्	नोत्ता
पद्	+	तुम्	=	पत्तुम्	पत्तव्यम्	पत्ता
भिद्	+	तुम्	=	भेत्तुम्	भेत्तव्यम्	भेत्ता
विद्	+	तुम्	=	वेत्तुम्	वेत्तव्यम्	वेत्ता
सद्	+	तुम्	=	सत्तुम्	सत्तव्यम्	सत्ता
शद्	+	तुम्	=	शत्तुम्	शत्तव्यम्	शत्ता
स्विद्	+	तुम्	=	स्वेत्तुम्	स्वेत्तव्यम्	स्वेत्ता
स्कन्द्	+	तुम्	=	स्कन्तुम्	स्कन्तव्यम्	स्कन्ता

हद्			+	तुम्	=	हत्तुम्	हत्तव्यम्	हत्ता

धकारान्त धातु

झषस्तथोर्धोऽधः - जिनके अन्त में वर्ग के चतुर्थाक्षर हैं, ऐसे झषन्त धातुओं से परे आने वाले प्रत्यय के त, थ को ध होता है, धा धातु को छोड़कर। यथा - सिध् + तुमुन् / **'पुगन्तलघूपधस्य च'** सूत्र से उपधा के इक् को गुण करके - सेध् + तुम् / **'झषस्तथोर्धोऽधः'** सूत्र से प्रत्यय के **'त'** को **'ध'** बनाकर - सेध् + धुम् / **झलां जश् झशि** सूत्र से झल् के स्थान पर जश् आदेश करके - सेद् + धुम् = सेद्धुम्।

हमने जाना कि धातु के अन्त में झष् = वर्ग का चतुर्थाक्षर हो, और उसके बाद त या थ हो, तो दो कार्य होते हैं -

१. प्रत्यय के त, थ को ध होता है।

२. धातु के अन्त में आने वाले वर्ग के चतुर्थाक्षर को तृतीयाक्षर होता है, धा धातु को छोड़कर।

धकारान्त वेट् षिधू - सिध् धातु - उपधा के इक् को गुण करके -

सिध्			+	तुम्	=	सेद्धुम्	सेद्धव्यम्	सेद्धा
सिध्	+	इट्	+	तुम्	=	सेधितुम्	सेधितव्यम्	सेधिता

धकारान्त वेट् रध् धातु -

रधिजभोरचि (७.१.६१) - रध् और जभ् धातुओं को नुमागम होता है, अजादि प्रत्यय परे होने पर। इस सूत्र से नुमागम प्राप्त होने पर -

नेट्यलिटि रधेः (७.१.६२) - रध् धातु को नुमागम नहीं होता है, लिट् भिन्न प्रत्यय परे होने पर। अतः नुमागम न करके -

रध्			+	तुम्	=	रद्धुम्	रद्धव्यम्	रद्धा
रध्	+	इट्	+	तुम्	=	रधितुम्	रधितव्यम्	रधिता

धकारान्त अनिट् धातु - उपधा के इक् को गुण करके -

क्रुध्	+	तुम्	=	क्रोद्धुम्	क्रोद्धव्यम्	क्रोद्धा
क्षुध्	+	तुम्	=	क्षोद्धुम्	क्षोद्धव्यम्	क्षोद्धा
युध्	+	तुम्	=	योद्धुम्	योद्धव्यम्	योद्धा
रुध्	+	तुम्	=	रोद्धुम्	रोद्धव्यम्	रोद्धा
राध्	+	तुम्	=	राद्धुम्	राद्धव्यम्	राद्धा

व्यध्	+	तुम्	=	व्यद्धुम्	व्यद्धव्यम्	व्यद्धा
साध्	+	तुम्	=	साद्धुम्	साद्धव्यम्	साद्धा
शुध्	+	तुम्	=	शोद्धुम्	शोद्धव्यम्	शोद्धा
सिध्	+	तुम्	=	सेद्धुम्	सेद्धव्यम्	सेद्धा
बुध्	+	तुम्	=	बोद्धुम्	बोद्धव्यम्	बोद्धा
बन्ध्	+	तुम्	=	बन्द्धुम्	बन्द्धव्यम्	बन्द्धा

नकारान्त धातु

न्, म्, को 'नश्चापदान्तस्य झलि' सूत्र से अनुस्वार बनाइये। उसके बाद 'अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः' सूत्र से परसवर्ण करके उस अनुस्वार को न् बनाइये -

मन्	+	तुम्	=	मन्तुम्	मन्तव्यम्	मन्ता
हन्	+	तुम्	=	हन्तुम्	हन्तव्यम्	हन्ता

पकारान्त धातु

सृप् धातु -

अनुदात्तस्य चर्दुपधस्यान्यतरस्याम् (६.१.५९) - सृप्, स्पृश्, मृश्, कृष् धातु, अनिट् ऋदुपध धातु हैं। तृप्, दृप् धातु विकल्प से अनिट् हैं। अनिट् ऋदुपध धातुओं को झलादि अकित् प्रत्यय परे होने पर विकल्प से अम् का आगम होता है।

सृप् + तुम् / उक्त सूत्र से अम् का आगम करके - सृ अम् प् + तुम् / म् की इत् संज्ञा करके तथा इको यणचि सूत्र से ऋ के स्थान पर यण् आदेश करके -

स्रप् + तुम् = स्रप्तुम् स्रप्तव्यम् स्रप्ता।

अम् का आगम न होने पर इसकी उपधा के ऋ को 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण करके अर् बनाइये। सृप् + तुम् - सर्प् + तुम् = सर्प्तुम् सर्प्तव्यम् सर्प्ता।

दिवादिगण के वेट् तृप्, दृप् धातु -

'अनुदात्तस्य चर्दुपधस्यान्यतरस्याम्' सूत्र से विकल्प से अम् का आगम होने से इनके तीन रूप बनेंगे -

१. प्रत्यय को इट् का आगम न होने पर - तृप् + तुम् / धातु को अम् का आगम करके - तृ अम् प् + तुम् - त्रप् + तुम् - त्रप्तुम् त्रप्तव्यम् त्रप्ता।

२. तृप् + तुम् - धातु को अम् का आगम करके तथा प्रत्यय को इट् का आगम न करके, पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के ऋ को गुण करके - तर्प् + तुम् =

तर्प्तुम् तर्प्तव्यम् तर्प्ता

३. तृप् + इट् + तुम् - धातु को अम् का आगम न करके तथा प्रत्यय को इट् का आगम करके, पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के ऋ को गुण करके -

तर्पितुम् तर्पितव्यम् तर्पिता

ठीक इसी प्रकार दृप् धातु से -

द्रप्तुम् द्रप्तव्यम् द्रप्ता

दर्प्तुम् दर्प्तव्यम् दर्प्ता

दर्पितुम् दर्पितव्यम् दर्पिता

वेट् त्रप् धातु - इससे इडागम न होने पर -

त्रप्तुम् त्रप्तव्यम् त्रप्ता

त्रपितुम् त्रपितव्यम् त्रपिता

वेट् गुपू धातु - ऊदित् होने से यह धातु वेट् है।

आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर इसे 'आयादय आर्धधातुके वा' सूत्र से स्वार्थ में 'आय' प्रत्यय विकल्प से होता है - गुप् + आय - गोपाय। 'आय' लग जाने पर, यह धातु अनेकाच् हो जाने से सेट् हो जाता है।

आय प्रत्यय लगने पर - गोपाय + इट् + तुम् / 'अतो लोपः' सूत्र से 'अ' का लोप करके - गोपाय् + इ + तुम् = गोपायितुम् गोपायितव्यम् गोपायिता।

'आय' प्रत्यय न लगने पर इडागम करके - गुप् + इट् + तुम् =

गोपितुम् गोपितव्यम् गोपिता

'आय' प्रत्यय न लगने पर इडागम न करके - गुप् + तुम् =

गोप्तुम् गोप्तव्यम् गोप्ता

वेट् कृपू धातु - कृपो रो लः (८.२.१८) - कृप् के 'ऋ' के स्थान पर 'लृ' आदेश होता है - कृप् - क्लृप्। पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के ऋ को गुण करके - कल्प् -

कल्प्तुम् कल्प्तव्यम् कल्प्ता

कल्पितुम् कल्पितव्यम् कल्पिता

शेष पकारान्त अनिट् धातु -

आप् + तुम् = आप्तुम् आप्तव्यम् आप्ता

छुप्	+	तुम्	=	छोप्तुम्	छोप्तव्यम्	छोप्ता
क्षिप्	+	तुम्	=	क्षेप्तुम्	क्षेप्तव्यम्	क्षेप्ता
तप्	+	तुम्	=	तप्तुम्	तप्तव्यम्	तप्ता
तिप्	+	तुम्	=	तेप्तुम्	तेप्तव्यम्	तेप्ता
लिप्	+	तुम्	=	लेप्तुम्	लेप्तव्यम्	लेप्ता
लुप्	+	तुम्	=	लोप्तुम्	लोप्तव्यम्	लोप्ता
वप्	+	तुम्	=	वप्तुम्	वप्तव्यम्	वप्ता
शप्	+	तुम्	=	शप्तुम्	शप्तव्यम्	शप्ता
स्वप्	+	तुम्	=	स्वप्तुम्	स्वप्तव्यम्	स्वप्ता

भकारान्त धातु

धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर होने पर -

१. प्रत्यय के त, थ को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से ध बना दीजिये -

२. और धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर को झलां जश् झशि सूत्र से जश्त्व करके उसी वर्ग का तृतीयाक्षर बनाइये। जैसे -

यभ्	+	तुम्	=	यब्धुम्	यब्धव्यम्	यब्धा
रभ्	+	तुम्	=	रब्धुम्	रब्धव्यम्	रब्धा
लभ्	+	तुम्	=	लब्धुम्	लब्धव्यम्	लब्धा

वेट् भकारान्त लुभ् धातु - उपधा के लघु इक् को **'पुगन्तलघूपधस्य च'** सूत्र से गुण करके इडागम न होने पर - लोब्धुम् / इडागम होने पर - लोभितुम्।

मकारान्त धातु

तकारादि प्रत्यय परे होने पर धातु के अन्त में आने वाले न्, म्, को 'नश्चापदान्तस्य झलि' सूत्र से अनुस्वार बनाइये। उसके बाद 'अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः' सूत्र से परसवर्ण करके उस अनुस्वार को न् बनाइये -

नम् + तुम्	- नं + तुम्	- नन् + तुम्	=	नन्तुम्	नन्तव्यम्	नन्ता
यम् + तुम्	- यं + तुम्	- यन् + तुम्	=	यन्तुम्	यन्तव्यम्	यन्ता
रम् + तुम्	- रं + तुम्	- रन् + तुम्	=	रन्तुम्	रन्तव्यम्	रन्ता
गम् + तुम्	- गं + तुम्	- गन् + तुम्	=	गन्तुम्	गन्तव्यम्	गन्ता

वेट् क्षमू धातु -

इडागम न होने पर पूर्ववत् - क्षन्तुम् क्षन्तव्यम् क्षन्ता
इडागम होने पर पूर्ववत् - क्षमितुम् क्षमितव्यम् क्षमिता

शकारान्त धातु

दृश् धातु -

सृजिदृशोर्झल्यमकिति (६.१.५८) - सृज् तथा दृश्, इन दो अनिट् ऋदुपधा धातुओं को झलादि अकित् प्रत्यय परे होने पर अम् का आगम होता है।

दृश् + तुम् - दृ अम् श् + तुम् / इको यणचि ये ऋ के स्थान पर यण् आदेश करके - द्रश् + तुम् -

धातु के अन्त में आने वाले 'श्' को **'व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयज- राजभ्राजच्छशां षः (८.२.३६)'** सूत्र से 'ष्' बनाकर - द्रष् + तुम् / उसके बाद प्रत्यय के 'त' को **'ष्टुना ष्टुः'** सूत्र से ष्टुत्व करके - द्रष् + टुम् =

द्रष्टुम् द्रष्टव्यम् द्रष्टा

स्पृश्, मृश् धातु -

अनुदात्तस्य चर्दुपधस्यान्यतरस्याम् (६.१.५९) - अनिट् ऋदुपध धातुओं को, झलादि अकित् प्रत्यय परे होने पर, विकल्प से अम् का आगम होता है।

अमागम होने पर - स्पृश् + तुम् / अम् का आगम करके तथा प्रत्यय को इट् का आगम न करके, पूर्ववत् -

स्प्रष्टुम् स्प्रष्टव्यम् स्प्रष्टा। इसी प्रकार मृश् धातु से -
म्रष्टुम् म्रष्टव्यम् म्रष्टा

अमागम न होने पर - स्पृश् + तुम् / धातु को अम् का आगम न होने पर **'पुगन्तलघूपधस्य च'** सूत्र से ऋ को गुण करके - स्पर्श् + तुम् / पूर्ववत् **'व्रश्चभ्रस्ज'**. सूत्र से श् को ष् करके तथा प्रत्यय के 'त' को **'ष्टुना ष्टुः'** सूत्र से ष्टुत्व करके -

स्पर्ष्टुम् स्पर्ष्टव्यम् स्पर्ष्टा। इसी प्रकार मृश् धातु से -
मर्ष्टुम् मर्ष्टव्यम् मर्ष्टा

वेट् अशू, क्लिशू धातु -

इडागम न होने पर पूर्ववत् -

अष्टुम् अष्टव्यम् अष्टा
क्लेष्टुम् क्लेष्टव्यम् क्लेष्टा

इडागम होने पर -

अशितुम्	अशितव्यम्	अशिता
क्लेशितुम्	क्लेशितव्यम्	क्लेशिता

वेट् नश् धातु -

मस्जिनशोर्झलि (७.१.६०) - मस्ज् तथा नश् धातु से परे आने वाले झलादि प्रत्ययों को नुम् का आगम होता है। शेष कार्य पूर्ववत् करके -

नश् + तुम् - नंश् + तुम् - नंष् + टुम् = नंष्टुम् नंष्टव्यम् नंष्टा

इडागम होने पर नुमागम न करके -

नशितुम्	नशितव्यम्	नशिता

शेष अनिट् शकारान्त धातु - उपधा के लघु इक् को **'पुगन्तलघूपधस्य च'** सूत्र से गुण करके, **'व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः'** सूत्र से 'श्' को 'ष्' बनाइये। उसके बाद प्रत्यय के 'त' को **'ष्टुना ष्टुः'** सूत्र से 'ट' बनाइये।

क्रुश्	+	तुम्	=	क्रोष्टुम्	क्रोष्टव्यम्	क्रोष्टा
दंश्	+	तुम्	=	दंष्टुम्	दंष्टव्यम्	दंष्टा
दिश्	+	तुम्	=	देष्टुम्	देष्टव्यम्	देष्टा
रिश्	+	तुम्	=	रेष्टुम्	रेष्टव्यम्	रेष्टा
रुश्	+	तुम्	=	रोष्टुम्	रोष्टव्यम्	रोष्टा
लिश्	+	तुम्	=	लेष्टुम्	लेष्टव्यम्	लेष्टा
विश्	+	तुम्	=	वेष्टुम्	वेष्टव्यम्	वेष्टा

षकारान्त धातु

कृष् धातु - अनुदात्तस्य चर्दुपधस्यान्यतरस्याम् सूत्र से झलादि अकित् प्रत्यय परे होने पर विकल्प से अम् का आगम होने पर - कृष् - क्रष् - क्रष्टुम्।

अम् का आगम न होने पर उपधा के 'लघु ऋ' को 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण करके - कृष् - कर्ष् -

कर्ष्टुम्	कर्ष्टव्यम्	कर्ष्टा
क्रष्टुम्	क्रष्टव्यम्	क्रष्टा

वेट् अक्षू, तक्षू, त्वक्षू, इष्, रुष रोषे (चुरादि) रुष्, रिष् हिंसायाम् (भ्वादि तथा दिवादिगण) तथा निर् + कुष् धातु -

इडागम न होने पर - अक्ष् + तुम् - 'स्कोः संयोगाद्योरन्ते च' सूत्र से संयोग के आदि में स्थित 'क्' का लोप करके - अष् + तुम् / 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से त को ष्टुत्व करके - अष् + टुम् = अष्टुम्।

इडागम होने पर - अक्ष् + इट् + तुम् = अक्षितुम्।

अक्षू	=	अष्टुम्	अष्टव्यम्	अष्टा
		अक्षितुम्	अक्षितव्यम्	अक्षिता
तक्षू	=	तष्टुम्	तष्टव्यम्	तष्टा
		तक्षितुम्	तक्षितव्यम्	तक्षिता
त्वक्षू	=	त्वष्टुम्	त्वष्टव्यम्	त्वष्टा
		त्वक्षितुम्	त्वक्षितव्यम्	त्वक्षिता
इष्	=	एष्टुम्	एष्टव्यम्	एष्टा
		एषितुम्	एषितव्यम्	एषिता
रिष्	=	रेष्टुम्	रेष्टव्यम्	रेष्टा
		रेषितुम्	रेषितव्यम्	रेषिता
रुष्	=	रोष्टुम्	रोष्टव्यम्	रोष्टा
		रोषितुम्	रोषितव्यम्	रोषिता
निर् + कुष्	=	निष्कोष्टुम्	निष्कोष्टव्यम्	निष्कोष्टा
		निष्कोषितुम्	निष्कोषितव्यम्	निष्कोषिता

शेष षकारान्त अनिट् धातु -

उपधा के 'लघु इक्' को **'पुगन्तलघूपधस्य च'** सूत्र से गुण कीजिये। प्रत्यय के 'त' को **'ष्टुना ष्टुः'** सूत्र से 'ट' बनाइये।

त्विष्	=	त्वेष्टुम्	त्वेष्टव्यम्	त्वेष्टा
तुष्	=	तोष्टुम्	तोष्टव्यम्	तोष्टा
द्विष्	=	द्वेष्टुम्	द्वेष्टव्यम्	द्वेष्टा
दुष्	=	दोष्टुम्	दोष्टव्यम्	दोष्टा
पुष्	=	पोष्टुम्	पोष्टव्यम्	पोष्टा
पिष्	=	पेष्टुम्	पेष्टव्यम्	पेष्टा
विष्	=	वेष्टुम्	वेष्टव्यम्	वेष्टा

शिष्	=	शेष्टुम्	शेष्टव्यम्	शेष्टा
शुष्	=	शोष्टुम्	शोष्टव्यम्	शोष्टा
श्लिष्	=	श्लेष्टुम्	श्लेष्टव्यम्	श्लेष्टा

चक्ष् धातु - चक्ष् + तुम् -

चक्षिङ: ख्याञ् (२.४.५४) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर 'चक्ष्' धातु को 'ख्या' आदेश होता है। ख्या + तुम् =

ख्यातुम् ख्यातव्यम् ख्याता।

सकारान्त धातु

अस् (अदादिगण) धातु - अस् + इ + तुम् -

अस्तेर्भूः (२.४.५२) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अस् धातु को भू आदेश होता है। इससे अस् को भू आदेश करके - भू + इ + तुम् =

भवितुम् भवितव्यम् भविता।

अनिट् वस् धातु (भ्वादिगण) - वस् + तुम् = वस्तुम्।

अनिट् घस् धातु (भ्वादिगण) - घस् + तुम् = घस्तुम्।

अन्य सेट् वस् धातु से - वस् + इट् + तुम् = वसितुम् बनेगा।

हकारान्त धातु

१. **नह् धातु** - नह् धातु के ह् को **'नहो धः'** सूत्र से ध् बनाइये।

नह् + तुम् - नध् + तुम् / अब देखिये कि धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर 'ध्' आ गया है, अतः आप ऐसे धातुओं के बाद में आने वाले -

१. प्रत्यय के त, थ को **'झषस्तथोर्धोऽधः'** सूत्र से ध बना दीजिये - नध् + तुम् = नध् + धुम् -

२. और धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर ध् को **'झलां जश् झशि'** सूत्र से जश्त्व करके उसी वर्ग का तृतीयाक्षर द् बनाइये।

नध् + धुम् - नद् + धुम् = नद्धुम्।

नद्धुम् नद्धव्यम् नद्धा

२. **दकारादि हकारान्त धातु, जैसे - दह्, दुह्, दिह्** -

उपधा के 'लघु इक्' को 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण कीजिये। अब इनके 'ह्' को 'दादेर्धातोर्घः' सूत्र से घ् बनाइये - दुह् - दोह् + तुम् - दोघ् + तुम् / प्रत्यय

के 'त' को 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से 'ध' करके - दोघ् + धुम् / अब धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर 'घ्' को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व करके, उसी वर्ग का तृतीयाक्षर 'ग्' बनाइये - दोघ् + धुम् = दोग्धुम्।

इसी प्रकार - दिह् + तुम् - देह् + तुम् = देग्धुम् बनाइये।

३. द्रुह्, मुह्, स्नुह्, स्निह् धातु - ये चारों धातु वेट् हैं।

वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम् (८.२.३३) - द्रुह्, मुह् ,स्नुह्, स्निह् धातुओं के ह् को विकल्प से ढ् तथा 'घ्' होते हैं, झल् परे होने पर।

इडागम न होने पर 'ह्' के स्थान पर 'घ्' होने पर -

द्रुह् + तुम् / उपधा के 'लघु इक्' को 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण करके - द्रोह् + तुम् / **वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम्** सूत्र से पक्ष में ह् के स्थान पर घ् करके - द्रोघ् + तुम् / प्रत्यय के 'त' को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से 'ध' करके - द्रोघ् + धुम् / **'झलां जश् झशि'** सूत्र से 'घ्' को जश्त्व करके, उसी वर्ग का तृतीयाक्षर 'ग्' बनाकर - द्रोग् + धुम् = द्रोग्धुम्। इसी प्रकार -

द्रुह्	द्रोग्धुम्	द्रोग्धव्यम्	द्रोग्धा
मुह्	मोग्धुम्	मोग्धव्यम्	मोग्धा
स्नुह्	स्नोग्धुम्	स्नोग्धव्यम्	स्नोग्धा
स्निह्	स्नेग्धुम्	स्नेग्धव्यम्	स्नेग्धा

इडागम न होने पर 'ह्' के स्थान पर 'ढ्' होने पर -

द्रुह् + तुम् / उपधा के 'लघु इक्' को 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण करके - द्रोह् + तुम् / **वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम्** सूत्र से पक्ष में ह् के स्थान पर ढ् करके - द्रोढ् + तुम् / प्रत्यय के 'त' को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से 'ध' करके - द्रोढ् + धुम् / ष्टुना ष्टुः से प्रत्यय के ध् को ष्टुत्व करके द्रोढ् + ढुम् - ढो ढे लोपः से पूर्व ढकार का लोप करके द्रो + ढुम् = द्रोढुम्। इसी प्रकार -

द्रुह्	द्रोढुम्	द्रोढव्यम्	द्रोढा
मुह्	मोढुम्	मोढव्यम्	मोढा
स्नुह्	स्नोढुम्	स्नोढव्यम्	स्नोढा
स्निह्	स्नेढुम्	स्नेढव्यम्	स्नेढा

इडागम होने पर केवल उपधा को गुण करके -

द्रुह्	+	इ	+	तुम्	=	द्रोहितुम्	द्रोहितव्यम्	द्रोहिता
मुह्	+	इ	+	तुम्	=	मोहितुम्	मोहितव्यम्	मोहिता
स्नुह्	+	इ	+	तुम्	=	स्नोहितुम्	स्नोहितव्यम्	स्नोहिता
स्निह्	+	इ	+	तुम्	=	स्नेहितुम्	स्नेहितव्यम्	स्नेहिता

४. वह् धातु -

वह् + तुम् - हो ढः सूत्र से ह् को ढ् बनाने पर - वढ् + तुम् - प्रत्यय के 'त' को **झषस्तथोर्धोऽधः** सूत्र से 'ध्' करके - वढ् + धुम् - ष्टुना ष्टुः से प्रत्यय के 'ध्' को ष्टुत्व करके - वढ् + ढुम् - 'ढो ढे लोपः' से पूर्व ढकार का लोप करके - व + ढुम् - अब **'सहिवहोरोदवर्णस्य'** सूत्र से लुप्त ढकार के पूर्ववर्ती 'अ' को 'ओ' बनाकर 'वोढुम्' बनाइये।

वह् धातु - वोढुम् वोढव्यम् वोढा

५. सह् धातु - 'सह्' धातु वेट् है।

इडागम न होने पर - सोढुम् सोढव्यम् सोढा

इडागम होने पर - सहितुम् सहितव्यम् सहिता

६. गुहू धातु - 'गुह्' धातु वेट् है।

इडागम न होने पर - गोढुम् गोढव्यम् गोढा

इडागम होने पर -

ऊदुपधाया गोहः (६.४.८९) - गुह् धातु की उपधा के 'उ' को दीर्घ होता है, अजादि प्रत्यय परे होने पर। गुह् + इट् + तुमुन् / गूह् + इ + तुम् -

गूहितुम् गूहितव्यम् गूहिता

७. ग्रह् धातु -

ग्रहोऽलिटि दीर्घः - ग्रह् धातु, से परे आने वाले इट् को नित्य दीर्घ होता है - ग्रह् + इ + तुम् = ग्रहीतुम् ग्रहीतव्यम् ग्रहीता।

८. शेष हकारान्त धातु -

इन धातुओं के अलावा जितने भी हकारान्त धातु बचे, उनके 'ह्' को 'हो ढः' सूत्र से 'ढ्' बनाइये - रुह् - रोह् + तुम् - रोढ् + तुम् / प्रत्यय के त को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से 'ध' करके - रोढ् + धुम् / ष्टुना ष्टुः से प्रत्यय के ध् को ष्टुत्व करके रोढ् + ढुम् / ढो ढे लोपः से पूर्व ढकार का लोप करके रो + ढुम् = रोढुम्।

रुह्	+	तुम्	=	रोढुम्	रोढव्यम्	रोढा
लिह्	+	तुम्	=	लेढुम्	लेढव्यम्	लेढा
मिह्	+	तुम्	=	मेढुम्	मेढव्यम्	मेढा

इसी प्रकार -

तृह्	+	तुम्	=	तर्ढुम्	तर्ढव्यम्	तर्ढा
स्तृह्	+	तुम्	=	स्तर्ढुम्	स्तर्ढव्यम्	स्तर्ढा
बृह्	+	तुम्	=	बर्ढुम्	बर्ढव्यम्	बर्ढा
तृंह्	+	तुम्	=	तृण्ढुम्	तृण्ढव्यम्	तृण्ढा
गुह्	+	तुम्	=	गोढुम्	गोढव्यम्	गोढा
गृह्	+	तुम्	=	गर्ढुम्	गर्ढव्यम्	गर्ढा
गाह्	+	तुम्	=	गाढुम्	गाढव्यम्	गाढा

ये धातु वेट् हैं, अतः इडागम करके -

तृह्	+	इतुम्	-	तर्हितुम्	तर्हितव्यम्	तर्हिता
स्तृह्	+	इतुम्	-	स्तर्हितुम्	स्तर्हितव्यम्	स्तर्हिता
बृह्	+	इतुम्	-	बर्हितुम्	बर्हितव्यम्	बर्हिता
तृंह्	+	इतुम्	-	तृंहितुम्	तृंहितव्यम्	तृंहिता
गृह्	+	इतुम्	-	गर्हितुम्	गर्हितव्यम्	गर्हिता
गाह्	+	इतुम्	-	गाहितुम्	गाहितव्यम्	गाहिता

भ्वादिगण से क्र्यादिगण के शेष हलन्त धातु

ध्यान रहे कि अब जो धातु बचे हैं, वे सब सेट् हैं। अतः इनसे परे आने वाले तुमुन्, तव्य, तृच् प्रत्ययों को इट् का आगम अवश्य कीजिये।

इनके चार वर्ग बनाइये -

१. शेष इदुपध धातु -

पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के लघु 'इ' को गुण करके -

लिख् + इ	+	तुम्	-	लेख्	+ इतुम्	=	लेखितुम्	लेखितव्यम्	लेखिता	
मिद् + इ	+	तुम्	-	मेद्	+ इतुम्	=	मेदितुम्	मेदितव्यम्	मेदिता	
चित् + इ	+	तुम्	-	चेत्	+ इतुम्	=	चेतितुम्	चेतितव्यम्	चेतिता	आदि।

२. शेष उदुपध धातु -

पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के लघु 'उ' को गुण करके -

मुद् + इ + तुम् - मोद् + इतुम् = मोदितुम् मोदितव्यम् मोदिता
रुद् + इ + तुम् - रोद् + इतुम् = रोदितुम् रोदितव्यम् रोदिता
मुह् + इ + तुम् - मोह् + इतुम् = मोहितुम् मोहितव्यम् मोहिता आदि।

३. शेष ऋदुपध धातु -

पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के लघु 'ऋ' को गुण करके -

हृष् + इ + तुम् = हर्षितुम् हर्षितव्यम् हर्षिता
वृष् + इ + तुम् = वर्षितुम् वर्षितव्यम् वर्षिता

शेष हलन्त धातु - इन्हें कुछ मत कीजिये। यथा -

वद् + इ + तुम् = वदितुम् वदितव्यम् वदिता
मील् + इ + तुम् = मीलितुम् मीलितव्यम् मीलिता
मूष् + इ + तुम् = मूषितुम् मूषितव्यम् मूषिता
पठ् + इ + तुम् = पठितुम् पठितव्यम् पठिता आदि।

यह भ्वादि से क्र्यादिगण तक के सेट् धातुओं के रूप बनाने की विधि पूर्ण हुई। अब चुरादिगण के तथा अन्य प्रत्ययान्त धातुओं में तुमुन्, तव्य, तृच् प्रत्यय लगाने की विधि बतला रहे हैं -

वर्ग - ४

चुरादिगण के धातु तथा णिजन्त धातु

चुरादिगण के धातुओं के अन्त में 'णिच्' प्रत्यय लगा होने से वे णिजन्त धातु हैं। जैसे - चुर् + णिच् = चोरि। इसी प्रकार प्रेरणा अर्थ अर्थात् प्रयोजक व्यापार वाच्य होने पर, किसी भी धातु से णिच् प्रत्यय लगता है। जैसे - पठ् + णिच् = पाठि।

ये णिजन्त धातु सदा अनेकाच् होने के कारण सेट् ही होते हैं। अतः इनसे परे आने वाले तुमुन्, तव्य, तृच् प्रत्ययों को इट् का आगम अवश्य कीजिये।

चोरि + इट् + तुमुन् / चोरि + इ + तुम् / सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से गुण करके - चोरे + इ + तुम् / एचोऽयवायावः सूत्र से ए को अयादेश करके - चोरय् + इ + तुम् = चोरयितुम्, चोरयितव्य, चोरयिता।

इसी प्रकार - कथ् + णिच् - कथि से कथयितुम्, कथयितव्यम्, कथयिता।

नट् + णिच् - नाटि से नाटयितुम्, नाटयितव्यम्, नाटयिता, आदि बनाइये।

वर्ग - ५
प्रत्ययान्त धातु

सन्नन्त धातु -

ध्यान रहे कि अनेकाच् होने के कारण सारे सन्नन्त धातु सेट् ही होते हैं। इनके अन्त में सदा 'अ' ही होता है।

अतो लोपः (६.४.४८) - धातुओं के अन्त में आने वाले 'अ' का लोप होता है, कोई भी आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। यथा -

जिगमिष + इ + तुमुन् / 'अ' का लोप करके - जिगमिष् + इ + तुम् = जिगमिषितुम्, जिगमिषितव्यम्, जिगमिषिता। सारे सन्नन्त धातुओं में तुमुन्, तव्य, तृच् प्रत्यय इसी प्रकार लगाइये।

यङन्त धातु -

ध्यान रहे कि अनेकाच् होने के कारण सारे यङन्त धातु सेट् ही होते हैं। इनके अन्त में सदा 'य' ही होता है।

यदि यङन्त धातु के 'य' के ठीक पहिले अच् हो -

तब आप 'य' के अन्त में रहने वाल 'अ' का 'अतो लोपः' सूत्र से लोप करके उसमें इडागम सहित तुमुन्, तव्य, तृच् प्रत्यय लगाइये।

यथा - नेनीय + इ + तुम् / अतो लोपः से धातु के अन्तिम अ का लोप करके - नेनीय् + इ + तुम् - नेनीयितुम्, नेनीयितव्यम्, नेनीयिता / इसी प्रकार -

लोलूय के अ का लोप करके	-	लोलूयितुम्	लोलूयितव्यम्	लोलूयिता
बोभूय के अ का लोप करके	-	बोभूयितुम्	बोभूयितव्यम्	बोभूयिता
चेक्रीय के अ का लोप करके	-	चेक्रीयितुम्	चेक्रीयितव्यम्	चेक्रीयिता

यदि यङन्त धातु के 'य' के ठीक पहिले हल् हो -

तब आप अतो लोपः सूत्र से 'अ' का लोप करके 'यस्य हलः' सूत्र से 'य्' का भी लोप करें। यथा - बाभ्रश्य + इ + तुम् - अतो लोपः सूत्र से 'अ' का लोप करके और 'यस्य हलः' सूत्र से 'य्' का भी लोप करके - बाभ्रश् + इ + तुम् = बाभ्रशितुम्, बाभ्रशितव्य, बाभ्रशिता।

इसी प्रकार -

नेनिज्य से य का लोप करके	-	नेनिजितुम्	नेनिजितव्यम्	नेनिजिता

वेविध्य से य का लोप करके - वेविधितुम् वेविधितव्यम् वेविधिता
मोमुद्य से य का लोप करके - मोमुदितुम् मोमुदितव्यम् मोमुदिता

यङ्लुगन्त धातु -

यङ्लुगन्त धातुओं में प्रत्यय ठीक वैसे ही लगाइये, जैसे कि हमने प्रत्ययरहित धातुओं से लगाये हैं।

क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्ययान्त धातु

क्यस्य विभाषा (६.४.५०) - हल् से उत्तर जो क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्यय, उनका विकल्प से लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

समिध्य + तुमुन् = समिध् + इ + तुम् = समिधितुम् समिधितव्यम् समिधिता
समिध्य + तुमुन् = समिध् + इ + तुम् = समिध्यितुम् समिध्यितव्यम् समिध्यिता

इस प्रकार समस्त धातुओं में तुमुन्, तव्य, तृच् प्रत्यय लगाने की विधि पूर्ण हुई।

धातुओं से कित्, ङित्, गित् प्रत्यय परे होने पर, होने वाले सामान्य कार्य

१. गुणनिषेध -

क्ङिति च (१.२.५) - कित्, ङित्, प्रत्यय परे होने पर, इक् के स्थान पर प्राप्त होने वाले गुण, वृद्धि कार्य नहीं होते।

क्त, क्तवतु, क्त्वा, क्तिन्, क, अङ्, आदि प्रत्यय कित्, ङित् हैं, अतः इनके परे होने पर न तो धातुओं के अन्तिम इक् को गुण होगा, न ही धातुओं की उपधा के लघु इक् को गुण होगा। यथा -

जि	+	क्त	=	जितः	जि	+	क्त्वा	=	जित्वा
भी	+	क्त	=	भीतः	भी	+	क्त्वा	=	भीत्वा
हु	+	क्त	=	हुतः	हु	+	क्त्वा	=	हुत्वा
भू	+	क्त	=	भूतः	भू	+	क्त्वा	=	भूत्वा
कृ	+	क्त	=	कृतः	कृ	+	क्त्वा	=	कृत्वा
वृ	+	क्त	=	वृतः	वृ	+	क्त्वा	=	वृत्वा

गुणनिषेध होने पर होने वाले अङ्गकार्य -

गुणनिषेध होने पर इ, उ के स्थान पर इयङ्, उवङ् आदेश होते हैं -

अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ (६.४.७७) - श्नु प्रत्ययान्त, इवर्णान्त, उवर्णान्त जो धातु और भ्रूरूप जो अङ्ग, उन्हें इयङ्, उवङ् आदेश होते हैं, अजादि प्रत्यय परे होने पर। यथा - प्री + क / प्री + अ / ई को इयङ् आदेश होकर - प्रिय् + अ = प्रियः। लोलू + अ / ऊ को उवङ् आदेश होकर - लोलुव् + अ = लोलुवः। नू + इ + क्त्वा/ ऊ को उवङ् आदेश होकर - नुव् + इत्वा = नुवित्वा। धू + इ + क्त्वा / ऊ को उवङ् आदेश होकर - धुव् + इत्वा = धुवित्वा।

इसके अपवाद -

एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य (६.४.८२) - अनेकाच् इवर्णान्त अङ्ग, को यण् आदेश होता है, अजादि प्रत्यय परे होने पर। यथा - नेनी + अच् = नेन्यः।

'ॠ' के स्थान पर इर्, ईर् / उर्, ऊर् आदेश -

उदोष्ठ्यपूर्वस्य (७.१.१०२) - यदि अङ्ग के अन्तिम 'ॠ' के पूर्व में कोई ओष्ठ से उच्चरित होने वाला व्यञ्जन हो अर्थात् प्, फ्, ब्, भ्, म्, या व् हों तब, ॠ के स्थान पर 'उ' आदेश होता है और 'उरण् रपरः' सूत्र की सहायता से यह 'उ', रपर होकर 'उर्' बन जाता है।

हलि च (८.२.७७) - जब धातु के अन्त में र् या व् हों, तब उस धातु की उपधा के 'इक्' को दीर्घ होता है, हल् परे होने पर।

वृङ् + क्त - वॄ + त / वुर् + त / हलि च से उ को दीर्घ करके - वूर् + त / 'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' सूत्र से र् के बाद आने वाले निष्ठा के 'त' को 'न' करके - वूर् + न / रषाभ्यां नो णः से न को णत्व करके-

वृङ् + क्त - वॄ + त - वुर् + तः - वूर् + क्त = वूर्णः
वृञ् + क्त - वॄ + त - वुर् + तः - वूर् + क्त = वूर्णः

ॠत इद् धातोः (७.१.१००) - यदि ॠ के पूर्व में ओष्ठ्य वर्ण न हो तो धातु के अन्त में आने वाले 'ॠ' को 'इ' आदेश होता है, जो कि 'उरण् रपरः' सूत्र से 'रपर' होकर 'इर्' बन जाता है।

उसके बाद 'हलि च' सूत्र से उपधा के 'इक्' को दीर्घ करके तथा **रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः** सूत्र से र् के बाद आने वाले निष्ठा के 'त' को 'न' करके -

तॄ	+	क्त	-	तिर्	+	तः	-	तीर्	+ क्त	=	तीर्णः
जॄ	+	क्त	-	जिर्	+	तः	-	जीर्	+ क्त	=	जीर्णः
कॄ	+	क्त	-	किर्	+	तः	-	कीर्	+ क्त	=	कीर्णः
तॄ	+	क्त्वा	-	तिर्	+	त्वा	-	तीर्	+ त्वा	=	तीर्णः
जॄ	+	क्त	-	जिर्	+	त्वा	-	जीर्	+ त्वा	=	जीर्णः
कॄ	+	क्त	-	किर्	+	त्वा	-	कीर्	+ त्वा	=	कीर्णः

इस प्रकार हमने जाना कि -

ॠ को कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर इर् होता है, किन्तु 'ॠ' के पूर्व में यदि कोई ओष्ठ से उच्चरित होने वाला व्यञ्जन हो, तब ॠ को, इर् न होकर, उर् होता है। साथ ही यह भी ध्यान रहे कि इर्, उर् होने के बाद यदि उनके बाद हल् दिखें, तभी दीर्घ होता है, अच् दिखने पर नहीं। यथा कॄ + क - किर् + अ = किरः।

२. नलोपी धातुओं के न् का लोप -

अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति (६.४.२४) - कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर, अनिदित् हलन्त धातुओं की उपधा के 'न्' का लोप होता है।

ध्वंस् + क्त - ध्वस् + तः = ध्वस्तः
भ्रंश् + क्त - भ्रश् + तः = भ्रष्टः
अञ्ज् + क्त - अज् + तः = अक्तः
बन्ध् + क्त - बध् + तः = बद्धः
इन्ध् + क्त - इध् + तः = इद्धः, आदि।

नाञ्चेः पूजायाम् (६.४.३०) - पूजा अर्थ में अञ्चु धातु की उपधा के नकार का लोप नहीं होता है।

३. सम्प्रसारणी धातुओं को सम्प्रसारण -

वचिस्वपियजादीनाम् किति (६.१.१५) - वच्, स्वप् तथा यज्, वप्, वह्, वस्, वद्, वेञ्, ह्वेञ्, श्वि, व्येञ्, ११ वच्यादि धातुओं को सम्प्रसारण होता है, कित् प्रत्यय परे होने पर।

ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च (६.१.१६) - ग्रह्, ज्या, वय्, व्यध्, वश्, व्यच्, व्रश्च्, प्रच्छ्, भ्रस्ज् इन ९ ग्रह्यादि धातुओं को सम्प्रसारण होता है कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

इन ११ 'वच्यादि' तथा ९ 'ग्रह्यादि' धातुओं को होने वाला सम्प्रसारण आगे इस प्रकार होता है -

इग्यणः सम्प्रसारणम् (१.१.४५) - य्, व्, र्, ल् को इ, उ, ऋ, लृ हो जाना सम्प्रसारण होना कहलाता है। जैसे -

वच् + क्त - उच् + तः = उक्तः
स्वप् + क्त - सुप् + तः = सुप्तः
यज् + क्त - इज् + तः = इष्टः
वप् + क्त - उप् + तः = उप्तः, आदि।

यहाँ यह जानना चाहिये कि -

न सम्प्रसारणे सम्प्रसारणम् (६.१.३७) - जिन धातुओं में य्, व्, र्, ल् में से दो वर्ण हों, जैसे व्रश्च्, व्यध्, व्यच् आदि में हैं, वहाँ जो बाद में हो, उसको ही सम्प्रसारण करना चाहिये। अर्थात् व्रश्च् में र् को और व्यध् में य् को, व्यच् में य् को सम्प्रसारण

होता है, व् को नहीं।

सम्प्रसारणाच्च (६.१.१०८) - जब भी य्, व्, र्, ल् को इ, उ, ऋ, लृ यह सम्प्रसारण होता है, तब सम्प्रसारण के बाद में स्थित वर्ण को पूर्वरूप हो जाता है।

पूर्वरूप - पूर्वरूप का अर्थ होता है पूर्व के वर्ण में मिल जाना तथा दिखाई न पड़ना। जैसे - वप् में तीन वर्ण हैं व् अ प्। इनमें से व् को सम्प्रसारण करके जब हम 'उ' बनाते हैं तब - उ अ प् यह बनता है। यहाँ सम्प्रसारण 'उ' है, उसके बाद जो 'अ' है, उस 'अ' को इस सूत्र से पूर्वरूप होकर बनता है - उप्।

व्यच् में चार वर्ण हैं व् य् अ च्। इनमें से 'य्' को सम्प्रसारण करके जब हम 'इ' बनाते हैं तब - व् इ अ च् यह बनता है। यहाँ सम्प्रसारण 'इ' है, उसके बाद जो 'अ' है, उस अ को इस सूत्र से पूर्वरूप होकर बनता है - व् इ च् = विच्।

स्वप् में चार वर्ण हैं स् व् अ प्। इनमें से 'व्' को सम्प्रसारण करके जब हम 'उ' बनाते हैं तब स् उ अ प् यह बनता है। यहाँ सम्प्रसारण 'उ' है, उसके बाद जो 'अ' है उस 'अ' को इस सूत्र से पूर्वरूप होकर बनता है - स् उ प् = सुप्।

४. दीर्घ -

हलः - अङ्गावयव हल् से उत्तर जो सम्प्रसारण, तदन्त जो अङ्ग, उसे दीर्घ होता है। यथा - ज्या + क्त / 'ग्रहिज्यावयिव्यधि' सूत्र से सम्प्रसारण होकर - ज् इ आ + त / 'सम्प्रसारणाच्च' सूत्र से आ को पूर्वरूप करके - ज् इ + त / अब अङ्गावयव हल् से उत्तर जो सम्प्रसारण, तदन्त जो अङ्ग को दीर्घ करके - जी + त / 'ल्वादिभ्यः' सूत्र से त को न करके - जीनः।

इसी प्रकार - टुओश्वि + क्त - श्वि + क्त / 'वचिस्वपि'. सूत्र से सम्प्रसारण करके - श् उ इ + त / 'सम्प्रसारणाच्च' सूत्र से इ को पूर्वरूप करके - श् उ + त / अब अङ्गावयव हल् से उत्तर जो सम्प्रसारण, तदन्त जो अङ्ग को दीर्घ करके - शू + त / 'ओदितश्च' सूत्र से त को न करके - शूनः।

इस प्रकार प्रत्यय के कित् ङित् होने पर, मुख्यतः ये कार्य होते हैं -

१. गुणनिषेध।

२. ॠ के स्थान पर इर्, उर्।

३. इ उ के स्थान पर इयङ् अथवा यण्।

४. उ के स्थान पर उवङ्।

५. अनिदित् धातुओं की उपधा के न् का लोप।

६. सम्प्रसारणी धातुओं को सम्प्रसारण।

तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर होने वाले अङ्गकार्य

क्त, क्तवतु, क्त्वा, क्तिन् आदि प्रत्यय तकारादि कित् प्रत्यय हैं। इनके परे होने पर ये कार्य भी प्राप्त होंगे -

द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति (७.४.४०) - दो-दा, षो-सा, मा, स्था धातुरूप अङ्गों को तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर, इकार अन्तादेश होता है।

निर् + दो + क्त / निर् + दि + त = निर्दितः, निर्दितवान्।

शाच्छोरन्यतरस्याम् (७.४.४१) - शो तथा छो अङ्ग को विकल्प से इकारादेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर।

दधातेर्हिः (७.४.४२) - डुधाञ् धातु को हि आदेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। धा + क्त / हि + त = हितः, हितवान्।

जहातेश्च क्त्वि (७.४.४३) - ओहाक् त्यागे धातुरूप अङ्ग को क्त्वा प्रत्यय परे होने पर हि आदेश होता है। हा + क्त्वा / हि + त्वा = हित्वा।

विभाषा छन्दसि (७.४.४४) - ओहाक् त्यागे धातु को वेद में क्त्वा प्रत्यय परे होने पर विकल्प से हि आदेश होता है। हा + क्त्वा = हित्वा शरीरं यातव्यम्। हात्वा।

सुधितवसुधितनेमधितधिष्वधिषीय च (७.४.४५) - यद्यपि धा धातु अनिट् है, किन्तु वेद में इडागम होकर सुधित, वसुधित, नेमधित, धिष्व, धिषीय, ये शब्द निपातित होते हैं।

सु	+	डुधाञ्	+	क्त	=	गर्भं माता सुधितम्।
वसु	+	डुधाञ्	+	क्त	=	वसुधितमग्नौ जुहोति।
नेम	+	डुधाञ्	+	क्त	=	नेमधिता बाधन्ते।

धिष्व तथा धिषीय शब्द, क्रमशः लोट् लकार तथा आशीर्लिङ् लकारों के रूप हैं, अतः यहाँ उनकी व्याख्या अपेक्षित नहीं है।

दो दद् घोः (७.४.४६) - घु संज्ञक दा धातु के स्थान में दथ् आदेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर।

दा + क्त / दथ् + त / खरि च से थ् को त् करके दत् + त = दत्तः, दत्तवान्।

अच उपसर्गात्तः (७.४.४७) - अजन्त उपसर्ग से परे आने वाले देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा, धातुओं को तकार अन्तादेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर।

प्र + दा + क्त / प्र + द् + त् + त / खरि च सूत्र से द् के स्थान पर च् करके - प्र + त् + त् + त / झरो झरि सवर्णे सूत्र से विकल्प से त् का लोप करके - प्रत्तम्, प्रत्त्तम्। इसी प्रकार - अव + दा + क्त से अवत्तम्, बनाइये।

नि + दा + क्त / नि + द् + त् + त -

दस्ति (६.३.१२४) - दा के स्थान पर होने वाला जो त्, उसके परे होने पर जो उपसर्ग का इक्, उसे दीर्घ होता है।

नि + द् + त् + त / दस्ति सूत्र से दीर्घ करके नी + द् + त् + त = नीत्तम्।

इसी प्रकार - परि + दा + क्त - परी + द् + त् + त = परीत्तम् / सु + दा + क्त - सू + द् + त् + त = सूत्तम्।

उपसर्ग यदि अजन्त नहीं होगा तब भी त् आदेश न होकर - निर्दत्तम्, दुर्दत्तम्, आदि प्रयोग ही बनेंगे।

घुसंज्ञक दा धातुओं से आदिकर्म अर्थ में क्त होने पर -

'अच उपसर्गात्तः' सूत्र से त् आदेश नहीं होगा। अतः आदिकर्म (क्रिया का प्रारम्भ) अर्थ में अवदत्तम्, प्रदत्तम्, सुदत्तम्, विदत्तम्, अनुदत्तम्, निदत्तम्, आदि प्रयोग ही बनेंगे।

अवदत्तं विदत्तं च प्रदत्तं चादिकर्मणि।
सुदत्तमनुदत्तं च निदत्तमिति चेष्यते।।

निष्ठा प्रत्यय अर्थात् क्त, क्तवतु प्रत्यय

क्तक्तवतू निष्ठा (१.२.२६) - क्त, तथा क्तवतु प्रत्ययों की निष्ठा संज्ञा होती है। अर्थात् ये दोनों प्रत्यय निष्ठा प्रत्यय कहलाते हैं।

निष्ठा (३.२.१०२) - धातुमात्र से भूतकाल में निष्ठा प्रत्यय होते हैं।

इनके अर्थ 'तयोरेव कृत्यक्तखलर्थाः (३-४-७०)' तथा 'आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च (३-४-७१)' सूत्रों में देखें। धातुओं में निष्ठा प्रत्यय लगने पर बहुत सारे कार्य होते हैं। भगवान् पाणिनि ने इन सबको अष्टाध्यायी में एक एक प्रकरण में अलग अलग स्पष्ट करके रखा है। उसी का आश्रय लेकर हम भी इन्हें अलग अलग करके आपके लिये रख रहे हैं। इन सिद्धान्तों को अलग अलग बुद्धि में स्थिर करके ही सारे धातुओं में निष्ठा प्रत्ययों को लगाया जा सकता है। **ये प्रकरण इस प्रकार हैं -**

१. निष्ठा प्रत्यय परे होने पर होने वाले धात्वादेश

निष्ठा प्रत्यय परे होने पर निम्नलिखित धातुओं की आकृति बदल जाती है -

१. अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति - (२.४.३६) अद् धातु को जग्ध् आदेश होता है ल्यप् तथा तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। अद् + क्त = जग्धः। अद् + क्तवतु = जग्धवान्।

२. अस्तेर्भूः - (२.४.५२) सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अस् धातु (अदादिगण) को भू आदेश होता है। अस् + क्त = भूतः।

३. ब्रुवो वचिः (२.४.५३) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ब्रू धातु को वच् आदेश होता है। ब्रू + क्त = उक्तः।

४. चक्षिङः ख्याञ् (२.४.५४) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर चक्ष् धातु को ख्या आदेश होता है। चक्ष् + क्त = ख्यातः।

५. अजेर्व्यघञपोः (२.४.५६) - घञ्, अप् को छोड़कर शेष सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अज् धातु को वी आदेश होता है। अज् + क्त = वीतः।

६. आदेच उपदेशेऽशिति (६.१.४५) - अशित् प्रत्यय परे होने पर सारे एजन्त धातुओं को 'आ' अन्तादेश होता है। क्त प्रत्यय अशित् प्रत्यय है अतः इसके परे होने पर सारे एजन्त धातुओं को 'आ' अन्तादेश होगा। जैसे -

ग्लै - ग्ला, म्लै - म्ला, ध्यै - ध्या, शो - शा, सो - सा, वे - वा छो - छा आदि।

२. निष्ठा प्रत्ययों की इडागम व्यवस्था

आर्धधातुक प्रत्ययों के लिये सामान्य इडागम व्यवस्था पृष्ठ १६४ - १७२ पर देखिये। उसे बुद्धिस्थ करने के बाद ही निष्ठा प्रत्ययों के लिये इस विशेष इडागम व्यवस्था को देखिये।

निष्ठा प्रत्यय में अजन्त धातुओं की इडागम व्यवस्था

श्र्युकः किति (७.२.११) - श्रि धातु तथा उगन्त अर्थात् उकारान्त, ऊकारान्त, ऋकारान्त और ॠकारान्त धातुओं से परे आने वाले कित् प्रत्ययों को इडागम नहीं होता।

पूङश्च (७.२.५१) - पूङ् धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इट् का आगम होता है।

निष्कर्ष - शीङ् तथा डीङ् (भ्वादिगण), जागृ, दरिद्रा धातुओं से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है - शी - शयितः, शयितवान्। डी - डयितः, डयितवान्। जागृ - जागरितः, जागरितवान्। दरिद्रा - दरिद्रितः, दरिद्रितवान्।

पूङ् धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है -

पूङ् - पूतः, पूतवान् / पवितः, पवितवान्।

शेष सारे अजन्त धातुओं से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता है, जैसे - घ्रा - घ्रातः, घ्रातवान् / जि - जितः, जितवान् / नी - नीतः, नीतवान् / नु - नुतः, नुतवान् / भू - भूतः, भूतवान् / कृ - कृतः, कृतवान् / तॄ - तीर्णः, तीर्णवान् / ध्यै - ध्यातः, ध्यातवान् आदि।

निष्ठा प्रत्यय में हलन्त धातुओं की इडागम व्यवस्था

क्लिशः क्त्वानिष्ठयोः (७.२.५०) - 'क्लिश उपतापे' तथा 'क्लिशू विबाधने' धातुओं से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है। (क्र्यादिगण का **'क्लिश उपतापे'** धातु सेट् है। इसे क्त्वा तथा निष्ठा दोनों में ही नित्य इडागम प्राप्त था। इस सूत्र से यह धातु क्त्वा तथा निष्ठा, दोनों में ही वेट् हो गया। क्लिष्टः, क्लिष्टवान्। क्लिशितः, क्लिशितवान्। क्लिष्ट्वा / क्लिशित्वा।)

दिवादिगण का **'क्लिशू विबाधने'** धातु ऊदित् होने से सर्वत्र वेट् है। अतः इसे **'यस्य विभाषा'** सूत्र से निष्ठा में अनिट्त्व प्राप्त था। इस सूत्र से यह धातु निष्ठा में भी वेट् हो गया - क्लिष्टः, क्लिष्टवान्। क्लिशितः, क्लिशितवान्।

क्त्वा में तो यह वेट् था ही। अतः क्त्वा में तो दो रूप बन ही रहे थे - क्लिष्ट्वा / क्लिशित्वा।

वसतिक्षुधोरिट् (७.२.५२) - वस निवासे (भ्वादिगण) तथा क्षुध् धातुओं से परे आने वाले क्त्वा तथा निष्ठा प्रत्ययों को इडागम होता है।

वस् - उषितः, उषितवान् / क्षुध् - क्षुधितः, क्षुधितवान्।

अञ्चेः पूजायाम् (७.२.५३) - अञ्चु धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है, यदि धातु का अर्थ पूजा हो तो।

अञ्चिता अस्य गुरवः। पूजा अर्थ न होने पर इडागम भी नहीं होता - उदक्तम् उदकम् कूपात्।

लुभो विमोहने (७.२.५४) - लुभ् धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है, जब धातु का अर्थ विमोहन हो तो। यथा - लुभितः, लुभितवान्। विमोहन अर्थ न होने पर इडागम भी नहीं होता - लुब्धो वृषलः।

सौनागाः कर्मणि निष्ठायां शकेरिटमिच्छन्ति विकल्पेन (वार्तिक ७.२.१७) - सौनाग आचार्य के मत में शक् धातु से परे आने वाले कर्मार्थक निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। जैसे - शकितो घटः कर्तुम् / शक्तो घटः कर्तुम्।

शक् धातु से, परे आने वाले, भावार्थक निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता है - शक्तम् अनेन।

अस्यतेर्भावे (वार्तिक ७.२.१७) - दिवादिगण के अस् धातु से परे आने वाले, भावार्थक निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है - जैसे - असितम् अनेन। किन्तु आदिकर्मार्थिक निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता है - जैसे - अस्तः काण्डः।

क्षुब्धस्वान्तध्वान्तलग्नम्लिष्टविरिब्धफाण्टबाढानि मन्थमनस्तमःसक्ता-विस्पष्टस्वरानायासभृशेषु (७.२.१८) - क्षुब्धादि शब्द मन्थादि अर्थों में निपातित होते हैं। इस सूत्र का अर्थ इस प्रकार समझें -

१. क्षुभ् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ मन्थ हो तो। यथा - क्षुब्धो मन्थः। अन्य अर्थ होने पर इडागम होगा - क्षुभितं मन्थेन।

२. स्वन् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ मनस् हो तो। यथा - स्वान्तं मनः। अन्य अर्थ में इडागम होगा - स्वनितो मृदङ्गः।

३. ध्वन् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि शब्द का

अर्थ तमस् हो तो। यथा - ध्वान्तं तमः। अन्य अर्थ में बनेगा - ध्वनितो मृदङ्गः।

४. लगे धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है। यदि शब्द का अर्थ सक्त होना (रत रहना) हो तो। लग्नं सक्तम्। अन्य अर्थ में बनेगा - लगितम्।

५. म्लेच्छ् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ अस्पष्ट बोलना हो तो। म्लिष्टं अविस्पष्टम्। अन्य अर्थ में बनेगा म्लेच्छितम्।

६. वि + रिभ् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ स्वर हो तो यथा - विरिब्धम् इति स्वरश्चेत्। अन्यत्र विरिभितम्।

७. फण् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि अनायास अर्थ हो तो - फाण्टम् । अन्यत्र फणितम्।

८. वाह् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ भृश हो तो। अतः भृश अर्थ में बनेगा बाढम् तथा अन्य अर्थो में बनेगा वाहितम्।

धृषिशसी वैयात्ये (७.२.१९) - ञिधृषा तथा शसु हिंसायाम् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ वैयात्य (धृष्टता) हो तो। यथा - धृष्टः / विशस्तः। अन्य अर्थो में बनेगा धर्षितः / विशसितः।

दृढः स्थूलबलयोः (७.२.२०) - दृहि-दृंह् धातु से निष्ठा प्रत्यय करके दृढ शब्द निपातन होता है, यदि शब्द का अर्थ स्थूल, बलवान् हो तो।

अतः स्थूल और बलवान् अर्थ में दृढः शब्द बनेगा। अन्य अर्थ होने पर दृंहितम् बनेगा। दृह् धातु से निपातन मानने पर अन्यत्र दृहितम् बनेगा।

प्रभौ परिवृढः (७.२.२१) - वृहि-वृंह् धातु से निष्ठा प्रत्यय करके परिवृढ शब्द निपातन होता है, यदि शब्द का अर्थ कुटुम्बी हो तो।

अतः कुटुम्बी अर्थ में परिवृढः शब्द बनेगा। अन्य अर्थ होने पर वृंहितम् बनेगा। वृह् धातु से निपातन मानने पर अन्यत्र वृहितम् बनेगा।

कृच्छ्रगहनयोः कषः (७.२.२२) - कष् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है यदि उसका अर्थ कृच्छ्र तथा गहन हो तो - कष्टं व्याकरणम्, कष्टानि वनानि। कृच्छ्र तथा गहन अर्थ न होने पर इडागम होकर बनेगा - कषितम् सुवर्णम्।

घुषिरविशब्दने (७.२.२३) - घुषिर् अविशब्दने धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है यदि उसका अर्थ विशब्दन (प्रतिज्ञान) न हो तो - घुष्टौ पादौ ।

विशब्दन (प्रतिज्ञान) अर्थ होने पर इडागम होता है - अवघुषितं वाक्यमाह।

विशेष - घुषिर् अविशब्दने धातु भ्वादि गण में है और घुषिर् विशब्दने धातु चुरादिगण में है। चुरादिगण के घुषिर् विशब्दने धातु से ठीक परे निष्ठा प्रत्यय हो ही नहीं सकता क्योंकि बीच में णिच् प्रत्यय का व्यवधान हो जायेगा और णिच् होने पर उपधा को गुण होकर - घोषितं वाक्यमाह, ऐसा प्रयोग बनेगा।

अतः जब भ्वादिगण के घुषिर् अविशब्दने धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को ही इट् का निषेध प्राप्त होता है, तो फिर सूत्र में 'अविशब्दने' कहने की क्या आवश्यकता थी ? अतः यह 'अविशब्दने' शब्द व्यर्थ होकर ज्ञापित करता है कि चुरादिगण के 'घुषिर् विशब्दने' धातु से 'णिच्' प्रत्यय अनित्य होता है। अतः विशब्दन (प्रतिज्ञान) अर्थ होने पर णिच् न करके और इडागम करके - अवघुषितं वाक्यमाह, ऐसा प्रयोग बनता है।

अर्देः सन्निविभ्यः (७.२.२४)- सं, नि, वि उपसर्गयुक्त अर्द् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है - समर्णः, न्यर्णः, व्यर्णः।

उपसर्गरहित धातु होने पर इडागम होकर बनेगा - अर्दितः।

अभेश्चाविदूर्ये (७.२.२५) - अभि उपसर्ग से युक्त अर्द् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है यदि उसका अर्थ आविदूर्य (समीपता) हो तो। अभ्यर्णा शरत्।

अन्य अर्थ होने पर इडागम होकर बनेगा - अभ्यर्दितो वृषलः।

णेरध्ययने वृत्तम् (७.२.२६) - ण्यन्त वृतु धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि उसका अर्थ अध्ययन हो तो। अतः अध्ययन अर्थ में बनेगा - वृत्तं पारायणं देवदत्तेन। अध्ययन अर्थ न होने पर इडागम होकर - वर्तितम् बनेगा।

वा दान्तशान्तपूर्णदस्तस्पष्टच्छन्नज्ञप्ताः (७.२.२७) - ण्यन्त दम् धातु, शम्, पूरी, दस्, स्पश्, छद्, ज्ञप् धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। इनके उदाहरण इस प्रकार हैं - दान्तः, दमितः / शान्तः, शमितः / पूर्णः, पूरितः / दस्तः, दासितः / स्पष्ट, स्पाशितः / छन्नः, छादितः / ज्ञप्तः, ज्ञपितः।

रुष्यमत्वरसंघुषास्वनाम् (७.२.२८) - रुष हिंसायाम्, अम् गत्यादिषु, ञित्वरा सम्भ्रमे, सं + घुषिर्, आ + स्वन्, धातुओं से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है।

इनके उदाहरण इस प्रकार हैं - रुष्टः, रुषितः / अभ्यान्तः, अभ्यमितः / तूर्णः, त्वरितः / संघुष्टौ पादौ, संघुषितौ पादौ / आस्वान्तः, आस्वनितः।

हृषेर्लोमसु (७.२.२९) - लोम अर्थ में वर्तमान हृष् धातु से परे आने वाले निष्ठा

प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। जैसे - हृषितं लोमभिः।

लोम अर्थ न होने पर हृषु अलीके धातु से इडागम न होकर हृष्टो देवदत्तः बनेगा, तथा हृष तुष्टौ धातु से हृषितो देवदत्तः बनेगा।

विस्मितप्रतिघातयोश्च - विस्मय और प्रतिघात अर्थ में वर्तमान हृष् धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को भी विकल्प से इडागम होता है। विस्मय अर्थ में - हृषितो देवदत्तः, हृष्टो देवदत्तः। प्रतिघात अर्थ में - हृषिता दन्ताः, हृष्टा दन्ताः।

अपचितश्च (७.२.३०) - अप उपसर्ग पूर्वक चायृ धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होकर तथा चायृ धातु को विकल्प से चि आदेश होकर 'अपचितः' शब्द विकल्प से निपातन होता है। यथा - अपचितोऽनेन गुरुः।

निपातन न होने पर - अपचायितोऽनेन गुरुः।

हु ह्वरेश्छन्दसि (७.२.३१) - वेद में निष्ठा प्रत्यय परे होने पर ह्वृ धातु को ह्रु आदेश हो जाता है तथा उस ह्रु धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है।

यथा - ह्रुतस्य चाह्रुतस्य च, अह्रुतमसि हविर्द्धानम् ये रूप वेद में बनेंगे। लोक में ह्वृतम् बनेगा।

अपरिह्वृताश्च (७.२.३२) - वेद में नञ् पूर्वक तथा परि उपसर्गपूर्वक ह्वृ धातु से निष्ठा प्रत्यय परे होने पर ह्वृ धातु को ह्रु आदेश नहीं होता है। यथा - अपरिह्वृताः सनुयाम वाजम्।

सोमे ह्वरितः (७.२.३३) - सोम अर्थ होने पर वेद में ह्वृ धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम भी होता है तथा धातु को गुण भी होता है।

यथा - मा नः सोमो ह्वरितः, विह्वरितस्त्वम्।

ग्रसितस्कभितस्तभितोत्तभितचत्तविकस्ताविशस्तृशंस्तृशास्तृतरुतृतरूतृवरुतृवरूतृवरूत्रीरुज्ज्वलितिक्षरितिवमित्यमितीति च (७.२.३४) -

वेद में ग्रसु धातु, स्कम्भु धातु, तथा उत् उपसर्ग पूर्वक स्तम्भु धातु, से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम निपातन होता है।

यथा - वेद मे ग्रसु धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम होकर - ग्रसितं वा एतत् सोमस्य बनेगा, किन्तु लोक में इडागम न होकर ग्रस्तम् ही बनेगा।

वेद में स्कम्भु धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम, निपातन होकर - विष्कभिते अजरे बनेगा किन्तु लोक में इडागम न होकर - विष्कब्धः बनेगा।

वेद में स्तम्भु धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम निपातन होकर - येन स्वः स्तभितम् बनेगा किन्तु लोक में इडागम न होकर - स्तब्धम् बनेगा।

वेद में उत् उपसर्गपूर्वक स्तम्भु धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम निपातन होकर - सत्येनोत्तभिता भूमिः बनेगा किन्तु लोक में उत्तब्धा बनेगा।

उदित् होने के कारण ये सारे धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर अनिट् थे। उनसे वेद में इडागम निपातन हुआ है।

चत् धातु यद्यपि सेट् है, किन्तु वेद में इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता। यथा - चत्ता वर्षेण विद्युत्। लोक में इडागम होकर - चतिता।

कस् धातु यद्यपि सेट् हैं, किन्तु वेद में इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता। यथा - उत्तानाया हृदयं यद् विकस्तम्। लोक में इडागम होकर विकसितम् ही बनेगा। **अपचितः से लेकर यहाँ तक के सारे कार्य निपातन से होते हैं।**

विशेष - विकस्तम् के आगे के प्रयोगों का प्रयोजन निष्ठा प्रत्यय से नहीं है, अतः इनके उदाहरण नहीं दिये हैं।

अनुबन्धों के आधार पर निष्ठा प्रत्ययों में इडागम व्यवस्था

आदितश्च (७.२.१६) - वे धातु, जिनमें 'आ' की इत् संज्ञा होती है उन्हें 'आदित् धातु' कहते हैं। ऐसे आदित् धातुओं से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता है। जैसे - ञिष्विदा - स्विन्नः / स्विन्नवान्।

पाणिनीय धातुपाठ के सारे आदित् धातु इस प्रकार हैं -

ञिष्विदा हुर्छा मुर्छा स्फूर्छा टुओस्फूर्जा ञिफला ञिमिदा श्विता
ञित्वरा ष्विदा ञितृषा ञिमिदा ञिक्ष्विदा ञिधृषा।

विशेष - 'रुष्यमत्वरसंघुषास्वनाम्' सूत्र से ञित्वरा धातु निष्ठा में वेट् है।

विभाषा भावादिकर्मणोः (७.२.१७) - आदित् धातुओं से परे आने वाले, भाव तथा आदिकर्म अर्थ में वर्तमान निष्ठा प्रत्यय को, विकल्प से इडागम होता है।

श्वीदितो निष्ठायाम् (७.२.१४) - जिनमें 'ई' की इत् संज्ञा होती है उन्हें 'ईदित् धातु' कहते हैं। ऐसे ईदित् धातुओं से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता।

ये ईदित् धातु इस प्रकार हैं -

ह्लादी यती चिती भृजी उच्छी कटी कनी जभी ऊयी पूयी
क्नूयी क्ष्मायी उर्वी तुर्वी थुर्वी दुर्वी धुर्वी गुर्वी मुर्वी स्फायी

वृजी पृची ऋषी दृभी चृती कृती ओविजी गुरी धुरी जूरी
शूरी चूरी तूरी धूरी घूरी गूरी नृती त्रसी जनी जुषी
मसी उन्दी कृती पृची वृजी छृदी ओप्यायी दृभी पूरी गदी
मदी दीपी ञिइन्धी ओलजी ओलस्जी ई शुचिर्।

यस्य विभाषा (७.२.१५)

इस सूत्र का अर्थ इस प्रकार समझना चाहिये - इडागम की इस व्यवस्था में, अर्थात् अष्टाध्यायी में ७.२.८ से लेकर ७.२.७८ तक के सूत्रों में, जिस किसी भी धातु से परे आने वाले जिस किसी भी प्रत्यय को विकल्प से इट् होना कहा गया है, उन सारे वेट् धातुओं से परे आने वाले, निष्ठा प्रत्यय को, इडागम नहीं होता है।

इसलिये अब हम, वे सारे सूत्र एक साथ करके बतला रहे हैं, जिन्होंने **'किसी भी धातु से परे आने वाले' 'किसी भी प्रत्यय को'** विकल्प से इडागम होना कहा है।

१. **स्वरतिसूतिसूयतिधूञूदितो वा** (७.२.४४) - भ्वादिगण का स्वृ धातु, अदादिगण का सू धातु, दिवादिगण का सू धातु, स्वादि तथा क्र्यादिगण का धूञ् धातु, तथा सारे ऊदित् धातु, इन धातुओं से परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है। धातुपाठ में पढ़े गये सारे 'ऊदित् धातु' इस प्रकार हैं -

अक्षू तक्षू त्वक्षू गृहू मृजू अशू वृहू तृन्हू क्षमू
क्लिदू अञ्जू क्लिशू षिधू त्रपूष् क्षमूष् गाहू गुहू स्यन्दू
कृपू गुपू ओव्रश्चू तृहू स्तृहू तञ्चू।

चूँकि इन धातुओं से परे आने वाले वलादि आर्धधातुक प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है, अतः इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्ययों को इडागम नहीं होता है।

अक्षू - अष्टः, अष्टवान्। मृजू - मृष्टः, मृष्टवान्। गाहू - गाढः, गाढवान्।

गुपू धातु के लिये विशेष -

निष्ठा प्रत्यय परे होने पर जब गुपू धातु से यह 'आय' प्रत्यय नहीं लगेगा, तब इससे इट् का आगम न होकर 'गुप्तः' 'गुप्तवान्' बनेगा।

निष्ठा प्रत्यय परे होने पर जब गुपू धातु से 'आय' प्रत्यय लगकर 'गोपाय' धातु बन जायेगा, तब अनेकाच् हो जाने के कारण यह सेट् होगा, और तब इससे इट् का आगम होकर 'गोपायितः' 'गोपायितवान्' बनेगा।

२. **रधादिभ्यश्च** (७.२.४५) - रध्, नश्, तृप्, दृप्, द्रुह्, मुह्, स्निह्, स्नुह्, इन आठ धातुओं से परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता

है। अतः इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्ययों को इडागम नहीं होता है।

रध्	-	रद्धः	रद्धवान्	/ नश्	-	नष्टः	नष्टवान्
तृप्	-	तृप्तः,	तृप्तवान्	/ दृप्	-	दृप्तः,	दृप्तवान्
द्रुह्	-	द्रूढः,	द्रूढवान्	/ मुह्	-	मूढः,	मूढवान्
स्निह्	-	स्नीढः,	स्नीढवान्	/ स्नुह्	-	स्नूढः,	स्नूढवान्

३. निरः कुषः (७.२.४६) - निर् उपसर्गपूर्वक कुष् धातु से परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है।

चूँकि यह धातु अन्य सेट् आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर वेट् है अतः इससे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होना चाहिये। किन्तु -

इण्निष्ठायाम् (७.२.४७) - निर् उपसर्गपूर्वक कुष् धातु से निष्ठा प्रत्यय परे होने पर उसे नित्य इडागम होता है।

इडागम होकर इसके रूप बनेंगे - निष्कुषितः / निष्कुषितवान्।

४. तीषसहलुभरुषरिषः (७.२.४८) - तुदादिगण का इष इच्छायाम् धातु तथा सह्, लुभ् और रुष रिष हिंसायाम् धातु, इन ५ धातुओं से परे आने वाले सेट् तकारादि आर्धधातुक प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है।

चूँकि ये सारे धातु तकारादि आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर वेट् हैं, अतः इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता। इष्टः, इष्टवान् / लुब्धः, लुब्धवान् / सोढः, सोढवान् / रुष्टः, रुष्टवान् / रिष्टः, रिष्टवान्।

५. सनीवन्तर्धभ्रस्जदम्भुश्रिस्वृयूर्णुभरज्ञपिसनाम् (७.२.४९) - जिन धातुओं के अन्त में इव् है, जैसे - दिव्, सिव्, स्रिव्, ष्ठिव् आदि धातु, ऐसे इवन्त धातुओं से तथा ऋधु, भ्रस्ज्, दम्भु, श्रि, स्वृ, यु, ऊर्णु, भ्वादिगण का भृ धातु, ज्ञप्, और सन् इन धातुओं से परे आने वाले सन् प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। अतः इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता।

श्रि, स्वृ, यु, तथा भृ धातु तो उगन्त हैं। इसलिये इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को 'श्र्युकः किति' सूत्र से इडागम का निषेध होता है।

भ्रस्ज् धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को 'एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्' सूत्र से इडागम का निषेध हो जाता है। अतः यहाँ 'यस्य विभाषा' सूत्र से दिव्, सिव्, आदि इवन्त धातुओं तथा ऋधु, दम्भु, ज्ञप्, और सन् धातुओं से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम का निषेध होता है। साथ ही ऊर्णु धातु अनेकाच् होने से सेट् है, वह इस

सूत्र से निष्ठा में अनिट् हो जाता है।

दिव् - द्यूनः / द्यूनवान् सिव् - स्यूनः / स्यूनवान्
ऋध् - ऋद्धः / ऋद्धवान् दभ् - दब्धः / दब्धवान्
ज्ञप् - ज्ञप्तः / ज्ञप्तवान् सन् - सातः / सातवान्
ऊर्णु - ऊर्णुतः, आदि।

६. उदितो वा (७.२.५६) - जिन धातुओं में 'उ' की इत् संज्ञा होती है वे धातु 'उदित्' कहलाते हैं। ऐसे उदित् धातुओं से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय को विकल्प से इट् का आगम होता है। अतः इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता।

पाणिनीय धातुपाठ में पठित सारे उदित् धातु इस प्रकार हैं -

श्रम्भु ष्टुभु षृभु षृम्भु षिभु षिम्भु छमु कमु जमु जिमु
झमु क्षिवु क्षेवु ग्रसु ग्लसु जिषु विषु मिषु श्रिषु श्लिषु
प्रुषु प्लुषु पृषु वृषु मृषु शसु शंसु स्यमु अञ्चु खनु
हृषु घृषु शासु चमु दम्भु भ्रंशु यसु शमु तमु दमु
श्रमु भ्रमु क्लमु षिधु ष्णसु क्नसु ष्णुसु असु जसु तसु
दसु वसु भृशु ऋधु गृधु तञ्चु तनु षणु क्षणु क्षिणु
ऋणु तृणु घृणु वनु मनु मृञ्चु मृचु म्लुचु म्लुञ्चु ग्रुचु
ग्लुचु ग्लुञ्चु कुजु खुजु वृतु वृधु शृधु मृधु धावु स्रंसु
ध्वंसु भ्रंसु भ्रंशु स्रंभु रमु क्रमु दिवु वञ्चु चञ्चु तञ्चु
त्वञ्चु षिवु स्त्रिवु ष्ठिवु आङः शासु।

इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता है। यथा -

शमु - शान्तः, शान्तवान् / तमु - तान्तः, तान्तवान् आदि।

७. सेऽसिचि कृतचृतच्छृदतृदनृतः (७.२.५७) - कृत्, चृत्, छृद्, तृद्, नृत् इन ५ धातुओं से परे आने वाले सिज्भिन्न सकारादि प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है।

अतः इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता। कृत्तः, कृत्तवान् / चृत्तः, चृत्तवान् / छृत्तः, छृत्तवान् / तृत्तः, तृत्तवान् / नृत्तः, नृत्तवान् /

८. विभाषा गमहनविदविशाम् (७.२.६८) - गम्, हन्, विद् (तुदादिगण) तथा विश् धातुओं से परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। अतः इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता।

९. तनिपतिदरिद्राणामुपसंख्यानम् (वा.) - तन्, पत्, तथा दरिद्रा धातुओं से परे आने वाले सन् प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। अत: इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता। यथा - **तनु विस्तारे** - तन् - तत:, ततवान्।

'उदित्' होने के कारण तनु धातु क्त्वा प्रत्यय में वेट् था, इस कारण भी तनु धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता।

पत् धातु - तनिपतिदरिद्राणामुपसंख्यानम् में वेट् होने के कारण पत् धातु को निष्ठा में अनिट् होना था किन्तु 'द्वितीया श्रितातीतपतितगतात्यस्तप्राप्तापन्नै:' इस सूत्र में 'पतित' शब्द इडागम के सहित है, अत: इसके निर्देश से पत् धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम होकर पतित:, पतितवान् बनता है।

दरिद्रा धातु - कृती धातु में ईदित्करण के व्यर्थ होने से 'यस्य विभाषा' सूत्र अनित्य है, अत: दरिद्रा धातु से भी इडागम होकर दरिद्रित:, दरिद्रितवान् बनता है।

इन सारे सूत्रों के अनुसार निष्ठा प्रत्ययों की इडागम व्यवस्था इस प्रकार बनती है

अनिट् अजन्त धातु

चार अजन्त धातु सेट् हैं - शीङ्, डीङ्, (भ्वादिगण) जागृ, दरिद्रा। **एक अजन्त धातु वेट् है** - पूङ्। **शेष सारे अजन्त धातु अनिट् हैं।**

अनिट् हलन्त धातु

अनिट् ककारान्त धातु

शक्

अनिट् गकारान्त धातु

लग् धातु सक्त अर्थ में अनिट्, अन्यत्र सेट्।

अनिट् चकारान्त धातु

पच्
मुच्
रिच्
वच्
विच्
सिच्
तञ्चु
म्रुञ्चु
म्रुचु
म्लुचु
म्लुञ्चु
ग्रुचु
ग्लुचु
ग्लुञ्चु
वञ्चु
चञ्चु
तञ्चु
त्वञ्चु
ओव्रश्चू
तञ्चू
पृची
ई शुचिर्

अञ्चु धातु पूजा अर्थ में सेट् अन्यत्र अनिट्।

पच्
मुच्
रिच्
वच्
विच्

सिच्
तञ्चु
म्रुञ्चु
म्रुचु

अनिट् छकारान्त धातु

प्रच्छ्
हुर्छा
मुर्छा
स्फूर्छा
उच्छी

म्लेच्छ् धातु अस्पष्ट उच्चारण अर्थ में अनिट् अन्यत्र सेट्।

अनिट् जकारान्त धातु

त्यज्
निजिर्
भज्
भञ्ज्
भुज् (रुधादि)
भुजो (तुदादि)
भ्रस्ज्
मस्ज्
यज्
युज्
रुज्
रञ्ज्
विजिर्(जुहोत्यादि)
स्वञ्ज्
सञ्ज्
सृज्
कुजु
खुजु
मृजू
अञ्जू
भृजी
ओविजी (तुदादि, रुधादि)
वृजी
टुओस्फूर्जा।
ओलस्जी
ओलजी

अनिट् टकारान्त धातु

कटी

अनिट् णकारान्त धातु

षणु
क्षणु
क्षिणु
ऋणु
तृणु
घृणु

फण् धातु अनायास अर्थ में अनिट्, अन्यत्र सेट्।

अनिट् तकारान्त धातु

वृतु (भ्वादि, दिवादि)
श्विता
यती
चिती
चृती
कृती (रुधादि, तुदादि)
चृत्
नृत्।

अनिट् दकारान्त धातु

अद्
क्षुद्
खिद्
छिद्
तुद्
नुद्
भिद्
हद्
शद्
सद्
स्विद्
स्कन्द्
ञिष्विदा
ञिमिदा
ष्विदा
ञिमिदा
ञिक्ष्विदा
क्लिदू
स्यन्दू
ह्लादी
उन्दी
छृदी
मदी
तृद्
छृद्

उबुन्दिर्

पद् (दिवादि)

विद् (दिवादि, तुदादि, रुधादि)

अर्द् धातु. सम्, नि, वि उपसर्गों के साथ अनिट्, अभि उपसर्ग के साथ आविदूर्य अर्थ होने पर अनिट् अन्यत्र सेट्।

चुरादिगण के छद् धातु से छन्नः, छादितः।

अनिट् धकारान्त धातु

क्रुध्

बुध् (दिवादिगण)

बन्ध्

युध्

रुध्

राध्

व्यध्

साध्

शुध्

षिधू

षिधु

ऋधु

गृधु

वृधु

शृधु

मृधु

ञिइन्धी

रध्

ऋध्।

अनिट् नकारान्त धातु

मन्

हन्

खनु

तनु

वनु

मनु

कनी

सन्

जन्

स्वन् धातु मनस् अर्थ में अनिट् अन्यत्र सेट्।

ध्वन धातु तमस् अर्थ में अनिट् अन्यत्र सेट्।

आ + स्वन् धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर वेट् होता है।

अनिट् पकारान्त धातु

आप्

छुप्

क्षिप्

तप्

तिप्

तृप् (दिवादिगण)

दृप् (दिवादिगण)

लिप्

लुप्

वप्

शप्

स्वप्

सृप्

त्रपूष्

कृपू

गुपू

ज्ञप्

दीप्

चुरादि के ज्ञप् धातु से ज्ञप्तः, ज्ञपितः।

अनिट् भकारान्त धातु

यभ्

रभ्

लभ्

श्रम्भु

ष्टुभु

षृभु

षृम्भु

षिभु

षिम्भु

दम्भु

स्रंभु

जभी

दृभी।

क्षुभ् धातु मन्थ अर्थ में अनिट् अन्यत्र सेट्।

वी + रिभ् धातु स्वर अर्थ में अनिट् अन्यत्र सेट्।

लुभ् धातु विमोहन अर्थ में सेट् है, अन्यत्र अनिट् है।

अनिट् मकारान्त धातु

गम्
नम्
यम्
रम्
छमु
कमु
जमु
जिमु
स्यमु
चमु
शमु
दमु
तमु
श्रमु
भ्रमु
क्लमु
रमु
क्रमु
क्षमू
क्षमूष्

अम गतौ धातु (भ्वादि) निष्ठा प्रत्यय परे होने पर वेट् होता है।

अनिट् यकारान्त धातु -

ऊयी
पूयी
क्नूयी
क्ष्मायी
स्फायी
ओप्यायी

अप उपसर्ग पूर्वक पूजा अर्थ में चायृ धातु वेट् होता है।

अनिट् रेफान्त धातु

गुरी
धुरी
जूरी
शूरी
चूरी
पूरी (दिवादि)

ञित्वरा धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर वेट् होता है।

अनिट् लकारान्त धातु

ञिफला।

अनिट् वकारान्त धातु

क्षिवु
क्षेवु
धावु
दिवु
ष्ठिवु
षिवु
स्रिवु
उर्वी
तुर्वी
थुर्वी
दुर्वी
धुर्वी
गुर्वी
मुर्वी

अनिट् शकारान्त धातु

क्रुश्
दंश्
दिश्
दृश्
मृश्
रिश्
रुश्
लिश्
विश्
स्पृश्
भ्रंशु
भृशु
भ्रंशु
अशू
नश्
विश्

क्लिशू विबाधने तथा, क्लिश उपतापे धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर वेट् होते हैं।

अनिट् षकारान्त धातु

कृष्
त्विष्
तुष्
द्विष्
दुष्
पुष् (दिवादिगण)
पिष्
विष्
शिष्
शुष्
श्लिष् (दिवादिगण)
जिषु
विषु
मिषु
श्रिषु
श्लिषु
प्रुषु
प्लुषु
पृषु
वृषु
घृषु
मृषु
हृषु अलीके
लोम, विस्मित और प्रतिघात अर्थ में वेट् अन्यत्र अनिट्।
हृष तुष्टौ
लोम, विस्मित और प्रतिघात अर्थ में वेट् अन्यत्र सेट्।

ञितृषा (अनिट्) भावादिकर्म अर्थ में वेट्।

ञिधृषा, वैयात्य अर्थ में अनिट् भावादिकर्म अर्थ में वेट्, अन्यत्र सेट्।

ऋषी
अक्षू
तक्षू
त्वक्षू
रुष् (भ्वादि, दिवादि)
रिष् (भ्वादि, दिवादि)
रुष रोषे वेट् (चुरादिगण)
इष् (तुदादिगण)
निरः कुष्।

ञिधृषा धातु धृष्टता अर्थ में अनिट् अन्यत्र सेट्।

कष् धातु कृच्छ्र और गहन अर्थ में अनिट् अन्यत्र सेट्।

घुषिर् धातु विशब्दन अर्थ में सेट् अन्यत्र अनिट्।

सम् + घुष् धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर वेट् होता है।

अनिट् सकारान्त धातु

घस्
ग्रसु
ग्लसु
शसु, वैयात्य अर्थ में अनिट्, अन्यत्र सेट्।

शंसु
शासु
यसु
ष्णसु
क्नसु
ष्णुसु
असु
जसु
तसु
दसु
वसु
स्रंसु
ध्वंसु
भ्रंसु
आङः शासु
मसी।

असु (दिवादिगण) धातु से, परे आने वाले, आदि कर्मार्थक निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता है। जैसे - अस्तः काण्डः।

अनिट् हकारान्त धातु

दह्
दिह्

दुह्	तृन्हू	स्निह्
नह्	गाहू	सह्
मिह्	गुहू	वाह् धातु भृश अर्थ में अनिट्
रुह्	तृहू	अन्यत्र सेट्।
लिह्,	तृहू	दृहि, दृह् धातु बलवान् अर्थ में
वह्	द्रुह्	अनिट् अन्यत्र सेट्
गृहू	मुह्	बृहि, वृह् धातु प्रभु अर्थ में
वृहू	स्नुह्	अनिट् अन्यत्र सेट्

विशेष - इनसे बचे हुए सारे हलन्त धातु निष्ठा परे होने पर सेट् हैं।

३. नत्व प्रकरण

कुछ धातु ऐसे हैं, जिनसे परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकार आदेश होता है। निष्ठा के तकार को नकार आदेश करने वाने सूत्र अष्टाध्यायी में ८.२.४२ से ८.२.६१ तक एक साथ रखे गये हैं। इस प्रकरण को नत्व प्रकरण कहते हैं।

नत्व प्रकरण इस प्रकार है -

रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः (८.२.४२) - रेफ तथा दकार से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है, तथा निष्ठा प्रत्यय के तकार से पूर्व दकार को भी नकार होता है। यथा -

दकार से परे निष्ठा प्रत्यय होने पर - छिद् + क्त = छिन्नः, छिन्नवान्। भिद् + क्त = भिन्नः, भिन्नवान्।

र से परे निष्ठा प्रत्यय होने पर - जॄ + क्त - **'ॠत इद् धातोः (७.१.१००)'** सूत्र से 'ॠ' को 'इ' आदेश करके तथा **'उरण् रपरः'** सूत्र से उस इ को 'रपर' करके - जिर् + त / **'हलि च'** से उपधा के 'इक्' को दीर्घ करके - जीर् + त / **'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः (८.४.१)'** सूत्र से र् के बाद आने वाले निष्ठा के 'त' को 'न' करके - जीर् + न / **'रषाभ्यां नो णः'** सूत्र से न को णत्व करके - जीर्णः, जीर्णवान्।

इसी प्रकार - तॄ - तीर्णः, तीर्णवान्। स्तॄ - स्तीर्णः, स्तीर्णवान्। शॄ - शीर्णः, शीर्णवान्। दॄ - दीर्णः, दीर्णवान्, आदि।

संयोगादेरातो धातोर्यण्वतः (८.२.४३) - संयोग आदि में है जिसके तथा जो यण्वान् है, ऐसे आकारान्त धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता

है। प्रद्राणः, प्रद्राणवान्। ग्लानः ग्लानवान्।

ल्वादिभ्यः (८.२.४४) - लूञ् आदि धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकार होता है। लूनः लूनवान्। धूनः धूनवान्। जीनः जीनवान्।

ओदितश्च (८.२.४५) - जिनमें ओकार की इत् संज्ञा हुई है, ऐसे धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है।

ओलस्जी - लग्नः लग्नवान्। ओविजी - उद्विग्नः, उद्विग्नवान्। ओप्यायी - आपीनः, आपीनवान्।

स्वादय ओदितः - दिवादिगण के भीतर जो स्वादि अन्तर्गण है, उसमें पढे हुए धातुओं में 'ओ' की इत् संज्ञा न होने पर भी वे ओदित् जैसे माने जाते हैं, और उनमें वे सारे कार्य होते हैं, जो कार्य ओदित् धातुओं को होते हैं।

षूङ् - सूनः सूनवान्। दूङ् - दूनः दूनवान्। दीङ् - दीनः दीनवान्। डीङ् - डीनः डीनवान्। धीङ् - धीनः धीनवान्। मीङ् - मीनः मीनवान्। रीङ् - रीणः रीणवान्। लीङ् - लीनः लीनवान्। व्रीङ् - व्रीणः व्रीणवान्।

क्षियो दीर्घात् (८.२.४६) - दीर्घ क्षि धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकार होता है। क्षीणाः केशाः। क्षीणो जाल्मः। क्षीणस्तपस्वी।

श्योऽस्पर्शे (८.२.४७) - श्यैङ् धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है। स्पृश् अर्थ को छोड़कर। शीनं घृतम्। शीनं मेदः। शीना वसा।

अञ्चोऽनपादाने (८.२.४८) - अञ्चु धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है। यदि अञ्चु धातु के विषय में अपादान कारक न रहा हो तो। समक्नौ शकुनेः पादौ। तस्मात् पशवो न्यक्नाः।

दिवोऽविजिगीषायाम् (८.२.४९) - दिव् धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है। यदि दिव् धातु के विषय में अविजिगीषा अर्थ हो तो। विजिगीषा जीतने की इच्छा को कहते हैं, उससे भिन्न अर्थ अविजिगीषा है। आद्यूनः। परिद्यूनः।

निर्वाणोऽवाते: (८.२.५०) - निस् उपसर्गपूर्वक वा धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है। निर्वाण शब्द 'वात' अभिधेय न होने पर निपातित होता है। निर्वाणोऽग्निः। निर्वाणः प्रदीपः। निर्वाणो भिक्षुः।

शुषः कः (८.२.५१) - शुष् धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को ककारादेश होता है। शुष्कः। शुष्कवान्।

पचो वः (८.२.५२) – पच् धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को वकारादेश होता है। पक्वः। पक्ववान्।

क्षायो मः (८.२.५३) – क्षै धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को मकार होता है। क्षामः। क्षामवान्।

प्रस्त्योऽन्यतरस्याम् (८.२.५४) – प्र पूर्वक स्त्यै धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को विकल्प से मकारादेश होता है। प्रस्तीतः, प्रस्तीतवान्। प्रस्तीमः प्रस्तीमवान्।

अनुपसर्गात् फुल्लक्षीबकृशोल्लाघाः (८.२.५५) – उपसर्ग से परे न होने पर फुल्ल, क्षीब, कृश, उल्लाघ शब्द निपातन से बनते हैं। फुल्लः। क्षीबः उल्लाघः।

नुदविदोन्दत्राघ्राह्रीभ्योऽन्यतरस्याम् (८.२.५६) – नुद, विद, उन्दी, त्रै, घ्रा, ह्री इन धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को विकल्प नकारादेश होता है।

नुद् – नुन्नः, नुत्तः। विद् – विन्नः, वित्तः। उन्द् – समुन्नः, समुत्तः। त्रा – त्राणः, त्रातः। घ्रा – घ्राणः, घ्रातः। ह्री – ह्रीणः, ह्रीतः।

न ध्याख्यापॄमूर्च्छिमदाम् (८.२.५७) – ध्या, ख्या, पॄ, मुर्च्छा, मदी इन धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश नहीं होता है। ध्यातः, ध्यातवान्। ख्यातः, ख्यातवान्। पूर्त्तः, पूर्त्तवान्। मूर्त्तः, मूर्त्तवान्। मत्तः, मत्तवान्।

वित्तो भोगप्रत्यययोः (८.२.५८) – विद्लृ लाभे धातु से भोग तथा प्रत्यय अभिधेय होने पर 'वित्तम्' शब्द निपातित होता है। वित्तमस्य बहु।

भित्तं शकलम् (८.२.५९) – भिदिर् धातु से शकल=टुकड़ा कहा जा रहा हो, तो भित्तम् शब्द निपातित होता है। भित्तं तिष्ठति। भित्तं प्रपतति।

ऋणमाधमर्ण्ये (८.२.६०) – ऋ धातु से क्त प्रत्यय करके, ऋणम् शब्द निपातित होता है, आधमर्ण्य विषय में। अधम ऋणे, अधमर्णः। आधमर्ण्य विषय न होने पर – ऋतं वक्ष्यामि नानृतम्।

नसत्तनिषत्तानुत्तप्रतूर्तसूर्तगूर्तानि छन्दसि (८.२.६१) – नसत्त, निषत्त, अनुत्त, प्रतूर्त्त, सूर्त्त, गूर्त, ये शब्द वेद विषय में निपातित किये जाते हैं। नसत्तमञ्जसा। निषत्तः। अनुत्तमा ते मघवन्। प्रतूर्त्तं वाजिनम्। सूर्त्ता गावः। गूर्ता अमृतस्य।

४. अतिदेश

देखिये कि क्त, क्तवतु प्रत्ययों में क् की इत् संज्ञा होती है अतः यह कित् है। क्तवतु में भी क् की इत् संज्ञा होती है अतः यह भी कित् है। अतः इनके लगने पर वे

ही कार्य होना चाहिये जो कार्य कित् प्रत्यय लगने पर धातुओं को होते हैं।

किन्तु चार सूत्र ऐसे हैं जो इन कित् निष्ठा प्रत्ययों को अकित्वत् बना देते हैं। जो धर्म जिसमें नहीं है, उस धर्म को उसमें अतिदिष्ट करने वाले सूत्रों को अतिदेश सूत्र कहते हैं। ये सूत्र इस प्रकार है -

१. **निष्ठा शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृषः** (१.२.१९) - शीङ् स्विद्, मिद्, क्ष्विद्, धृष् इन पाँच धातुओं से परे यदि सेट् निष्ठा प्रत्यय आता है तो वह कित् होते हुए भी अकित् जैसा मान लिया जाता है। शयितः, शयितवान्। प्रस्वेदितः, प्रस्वेदितवान्। प्रमेदितः, प्रमेदितवान्। प्रक्ष्वेदितः, प्रक्ष्वेदितवान्। प्रधर्षितः, प्रधर्षितवान्।

२. **मृषस्तितिक्षायाम्** (१.२.२०) - मृष् धातु का अर्थ जब तितिक्षा होता है, तब इससे परे आने वाला सेट् निष्ठा प्रत्यय अकित् जैसा मान लिया जाता है। मर्षितः, मर्षितवान्।

३. **उदुपधाद्भावादिकर्मणोरन्यतरस्याम्** (१.२.२१) - अन्तिम वर्ण के ठीक पूर्व वाला वर्ण उपधा कहलाता है। जैसे द्युत्, मुद् आदि में 'उ' उपधा है। जिनकी उपधा में 'उ' हो ऐसे धातुओं को उदुपध धातु कहते हैं। ऐसे उदुपध धातुओं से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय यदि सेट् हो और उस प्रत्यय का अर्थ भाव अथवा आदिकर्म हो तब ऐसा निष्ठा प्रत्यय विकल्प से कित्वत् माना जाता है। द्युतितमनेन, द्योतितमनेन। प्रद्योतितः, प्रद्युतितः। मुदितमनेन, मोदितमनेन। प्रमोदितः, प्रमुदितः।

४. **पूङः क्त्वा च** (१.२.२२) - पूङ् धातु से परे आने वाले सेट् निष्ठा तथा सेट् क्त्वा प्रत्यय कित् नहीं होते। पवितः, पवितवान्।

इन चार सूत्रों में कहे गये धातुओं को छोड़कर शेष धातुओं से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय तो सदा कित् ही रहता है। अतः इन चार सूत्रों में कहे हुए धातुओं के रूप बनाते समय हमें सावधानी रखना चाहिये कि इनसे परे आने पर निष्ठा प्रत्यय, कब कित् होता है और कब अकित् होता है, यह जानकर तदनुसार ही अङ्गकार्य करना चाहिये।

अङ्गकार्य पिछले पाठ में दिये जा चुके हैं।

हमने जाना कि - धातु में कोई भी प्रत्यय जोड़ते समय हमारी दृष्टि में तीन बातें एकदम स्पष्ट होना चाहिये -

१. जिस धातु में हम प्रत्यय जोड़ रहे हैं, वह धातु सेट् है या अनिट् या वेट्? कहीं ऐसा तो नहीं है कि **क्त, क्तवतु** प्रत्यय अर्थात् निष्ठा प्रत्यय को देखकर कोई अनिट्

धातु सेट् हो गया हो, या कोई सेट् धातु वेट् हो गया हो। यह स्पष्ट ज्ञान होने पर ही **क्त, क्तवतु प्रत्यय में** इट् का आगम कीजिये। यह इडागम ऊपर बतलाया जा चुका है।

२. क्त, क्तवतु प्रत्यय को देखकर कहीं किसी धातु को धात्वादेश होकर धातु की आकृति तो नहीं बदल रही है ? यह भी ऊपर बतलाया जा चुका है।

३. कहीं किसी अतिदेश सूत्र के प्रभाव से ये क्त, क्तवतु प्रत्यय कहीं अकित् जैसे तो नहीं मान लिये गये हैं ? प्रत्यय की इस पहिचान पर ही हमारे सारे अङ्गकार्य आधारित होंगे।

यह सब जानकर ही अब हम धातुओं में निष्ठा प्रत्यय अर्थात् क्त, क्तवतु प्रत्यय लगायें

ध्यान रहे कि इस ग्रन्थ में धातुओं के रूप उत्सर्गापवाद विधि से ही बनाये गये हैं। अतः इसमें हम सब धातुओं के रूप न बनाकर, केवल उन्हीं धातुओं के रूप बनायेंगे, जिनमें प्रत्यय लगने पर, धातु को, प्रत्यय को, अथवा दोनों को कुछ न कुछ परिवर्तन होता ही है। शेष धातुओं के रूप तो स्वयं ही बन जायेंगे।

दूसरे यह कि इसमें हम धातुओं के रूप, धातुओं के आद्यक्षर के क्रम से न बनाकर, धातुओं के अन्तिम अक्षर को वर्णमाला के क्रम से रखकर बनायेंगे।

यह कार्य हम धातुओं के चार वर्ग बनाकर, इस प्रकार करेंगे -

वर्ग - १ - भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के अजन्त धातु।

वर्ग - २ - भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के हलन्त धातु।

वर्ग - ३ - चुरादिगण के धातु तथा अन्य णिजन्त धातु।

वर्ग - ४ - सन्, यङ्, क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्ययों से बने हुए प्रत्ययान्त धातु।

अब हम धातुओं में क्त, क्तवतु प्रत्यय लगायें -

क्त प्रत्यय में लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की इत्संज्ञा होकर तस्य लोपः सूत्र से उसका लोप होकर 'त' शेष बचता है।

क्तवतु प्रत्यय में लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की तथा उपदेशेऽजनुनासिक इत् सूत्र से उ की इत्संज्ञा होकर तस्य लोपः सूत्र से उनका लोप होकर तवत् शेष बचता है। अतः ये दोनों प्रत्यय कित् आर्धधातुक प्रत्यय हैं।

विशेष - धातुओं में क्त तथा क्तवतु जोड़ने की प्रक्रिया बिल्कुल एक समान है। यथा - शी + इट् + क्त = शयितः यह रूप हम जैसे बनायेंगे, ठीक वैसे ही शी

+ इट् + क्तवतु = शयितवान् भी बनेगा। अत: हम क्त लगाने की प्रक्रिया बतलायेंगे, उसी के बाद उसी में 'वत्' लगाकर क्तवतु प्रत्यय का रूप लिख देंगे।

१. क्त की ही विधि से आप क्तवतु प्रत्यय स्वयं लगा लें।

२. ध्यान रहे कि आगे हम 'सु' विभक्ति लगाकर इन शब्दों का प्रथमा एकवचन का रूप ही देंगे तथा धातु सेट् है, या अनिट्, यह भी बतलाते चलेंगे।

वर्ग - १

भ्वादि से लेकर क्र्यादिगण के अजन्त धातुओं में निष्ठा प्रत्यय लगाना

आकारान्त तथा एजन्त धातु

ध्यान रहे कि निष्ठा प्रत्यय परे होने पर सारे आकारान्त धातु तथा सारे एजन्त धातु अनिट् ही होते हैं।

जिनके अन्त में आ है, वे धातु आकारान्त हैं - जैसे - दा, धा, ला, आदि।

जिनके अन्त में एच् अर्थात् ए, ओ, ऐ, औ हैं उन एजन्त धातुओं के अन्तिम एच् के स्थान पर **'आदेच उपदेशेऽशिति'** सूत्र से 'आ' आदेश होता हैं। अत: आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर एजन्त धातु भी आकारान्त बन जाते हैं। जैसे - दे - दा / धे - धा / ग्लै - ग्ला / म्लै - म्ला / शो - शा / सो - सा आदि।

अब हम इनमें निष्ठा प्रत्यय लगायें -

घुसंज्ञक दा, धा धातु -

दाधाघ्वदाप् (१.१.२०)- ध्यान दें कि दारूप छह धातु हैं - दो - दा / देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा / दैप् - दा / दाप् - दा।

धारूप दो धातु हैं - धेट् - धा / डुधाञ् - धा।

दारूप छह धातुओं में से दाप्, दैप् को छोड़कर - दो - दा / देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा, इन चार धातुओं की तथा धारूप धातुओं में से धेट् - धा / डुधाञ् - धा, इन दोनों की, इस प्रकार कुल ६ धातुओं की घु संज्ञा होती है। अब हम इनमें क्त प्रत्यय लगायें -

दो अवखण्डने धातु -

द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति (७.४.४०) - दो-दा, षो-सा, मा, स्था धातुरूप अङ्गों को तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर, इकार अन्तादेश होता है।

निर् + दो + क्त / निर् + दि + त = निर्दित:, निर्दितवान्।

देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा, धातु -

दा + क्त / 'दो दद् घोः' सूत्र से घु संज्ञक दा धातु के स्थान में दथ् आदेश करके - दथ् + त / खरि च से थ् को त् करके दत् + त = दत्तः, दत्तवान्।

अजन्त उपसर्ग से परे होने पर देङ्, डुदाञ्, दाण् धातु -

अच उपसर्गात्तः (७.४.४७) - अजन्त उपसर्ग से परे आने वाले देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा, धातुओं को तकार अन्तादेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। प्र + दा + क्त / प्र + द् + त् + त / 'खरि च' सूत्र से द् के स्थान पर त् आदेश करके - प्र + त् + त् + त / 'झरो झरि सवर्णे' सूत्र से विकल्प से त् का लोप करके - प्रत्तम्, प्रत्त्तम्। इसी प्रकार - अव + दा + क्त से अवत्तम्, बनाइये।

नि + दा + क्त / नि + द् + त् + त -

दस्ति - दा के स्थान पर होने वाला जो त्, उसके परे होने पर जो उपसर्ग का जो इक्, उसे दीर्घ होता है।

नि + द् + त् + त / दस्ति सूत्र से दीर्घ करके नी + द् + त् + त = नीत्तम्।

इसी प्रकार - परि + दा + क्त - परी + द् + त् + त = परीत्तम् / सु + दा + क्त - सू + द् + त् + त = सूत्तम्।

उपसर्ग यदि अजन्त नहीं होगा तब भी त् आदेश न होकर - निर्दत्तम्, दुर्दत्तम्, आदि प्रयोग ही बनेंगे।

घुसंज्ञक दा धातुओं से आदिकर्म अर्थ में क्त होने पर -

अवदत्तं विदत्तं च प्रदत्तं चादिकर्मणि।
सुदत्तमनुदत्तं च निदत्तमिति चेष्यते।।

आदिकर्म (क्रिया का प्रारम्भ) अर्थ में इनकी उपसर्ग संज्ञा न होने से 'अच उपसर्गात्तः' सूत्र से त् आदेश नहीं होता है। अतः आदिकर्म (क्रिया का प्रारम्भ) अर्थ में - अवदत्तम्, प्रदत्तम्, सुदत्तम्, विदत्तम्, अनुदत्तम्, निदत्तम्, आदि प्रयोग ही बनेंगे। चकारात् अवत्तम्, वित्तम्, प्रत्तम्, आदि भी बन सकते हैं।

दाप्, दैप् धातु -

ध्यान दें कि ये धातु घुसंज्ञक नहीं हैं। अतः इन्हें **'दो दद् घोः'** से दद् आदेश नहीं होगा। अतः - दा + क्त / दा + त = दातम्। इसी प्रकार - दै + क्त / 'आदेच उपदेशेऽशिति' से आत्व होकर - दा + त = दातम्।

डुधाञ् धातु -

दधातेर्हिः (७.४.४२) - डुधाञ् धातु को हि आदेश होता है, तकारादि कित्

प्रत्यय परे होने पर। धा + क्त / हि + त = हितः, हितवान्।

सुधितवसुधितनेमधितधिष्वधिषीय च (७.४.४५) - यद्यपि धा धातु अनिट् है, किन्तु वेद में इडागम होकर सुधित, वसुधित, नेमधित, धिष्व, धिषीय, ये शब्द निपातित होते हैं।

सु	+	डुधाञ्	+	क्त	=	गर्भं माता सुधितम्।
वसु	+	डुधाञ्	+	क्त	=	वसुधितमग्नौ जुहोति।
नेम	+	डुधाञ्	+	क्त	=	नेमधिता बाधन्ते।

धिष्व तथा धिषीय शब्द, क्रमशः लोट् लकार तथा आशीर्लिङ् लकारों के रूप हैं, अतः यहाँ उनकी व्याख्या अपेक्षित नहीं है।

धेट् धातु -

घुमास्थागापाजहातिसां हलि (६.४.६६) - घुसंज्ञक दा, धा धातु, मा, स्था, गा, पा, ओहाक् तथा षो - सा, इन अङ्गों को हलादि कित् ङित् आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ईकारादेश हो जाता है।

धे + क्त / 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से ए के स्थान पर 'आ' आदेश करके - धा + क्त / इस सूत्र से ईत्व करके - धी + त = धीतः, धीतवान्।

षो - सा धातु -

षो - सा + क्त / 'द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति' से इकारादेश करके - सि + त = सितः, सितवान्।

मा, मेङ्, माङ् धातु -

मा + क्त / 'द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति' से इकारादेश करके - मि + त = मितः, मितवान्।

स्था धातु -

स्था + क्त / 'द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति' से इकारादेश करके - स्थि + त = स्थितः, स्थितवान्।

ओहाक् - हा धातु -

हा + क्त / 'ओदितश्च' सूत्र से त को न होकर - हा + न - 'घुमास्थागापाजहातिसां हलि' सूत्र से धातु के आ को ई आदेश होकर - ही + न = हीनः।

ओहाङ् - हा धातु -

हा + क्त / हा + न / 'ओदितश्च' सूत्र से त को न होकर - हानः। हानवान्।

गै - गा / गाङ् / गा धातु -

गै - गा + क्त / 'घुमास्थागापाजहातिसां हलि' से आ को ईकारादेश करके - गी + त = गीतः, गीतवान्। इसी प्रकार गाङ् तथा गा से भी गीतः, गीतवान् बनाइये।

पै शोषणे तथा पा पाने धातु -

पै - पा + क्त / 'घुमास्थागापाजहातिसां हलि' से आ को ईकारादेश करके - पी + त = पीतः, पीतवान्। इसी प्रकार पा पाने धातु से भी पीतः, पीतवान् बनाइये।

श्रै पाके तथा श्रा पाके धातु -

शृतं पाके (६.१.२७) - 'श्रा पाके' धातु चाहे ण्यन्त हो या अण्यन्त, यदि उसका अभिधेय 'हवि या क्षीर' हो, तो उसको क्त प्रत्यय परे रहते 'शृ' आदेश निपातित होता है। श्रा + क्त - शृ + त = शृतम् हविः / शृतं क्षीरम्।

क्षीर और हवि से भिन्न अभिधेय होने पर शृभाव नहीं होता - श्रा + क्त / श्रा + त -

संयोगादेरातो धातोर्यण्वतः (८.२.४३) - संयोग आदि में है जिसके ऐसे आकारान्त यण्वान् धातु से परे आने वाले, निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है।

श्रा + त - श्रा + न / 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' से णत्व होकर - श्राणः। श्राणा यवागूः, आदि।

द्रा / द्रै - द्रा / ध्रै - ध्रा / प्रा धातु -

द्रा + क्त / द्रा + त / 'संयोगादेरातो धातोर्यण्वतः' सूत्र से त को नत्व होकर = द्रा + न / अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि सूत्र से न को णत्व होकर - द्राणः।

इसी प्रकार - ध्रा + क्त = ध्राणः। प्रा + क्त = प्राणः।

घ्रा, त्रा धातु -

घ्रा + क्त / 'नुदविदोन्दत्राघ्राह्रीभ्योऽन्यतरस्याम्' सूत्र से निष्ठा के तकार को विकल्प से नकारादेश करके = घ्रातः, घ्राणः / त्रा + क्त = त्रातः, त्राणः।

स्त्यै - स्त्या तथा ष्ट्यै - ष्ट्या धातु -

स्त्यै - स्त्या + क्त / स्त्या + त / 'संयोगादेरातो धातोर्यण्वतः' सूत्र से नत्व होकर - स्त्या + न = स्त्यानः।

स्त्यः प्रपूर्वस्य - जिस स्त्यै धातु के पूर्व में प्र है, उसको निष्ठा प्रत्यय परे रहते सम्प्रसारण होता है। प्र + स्त्या + त - सम्प्रसारण होकर - प्र + स्ति + त -

हलः - अङ्गावयव जो हल्, उससे उत्तर जो सम्प्रसारण, तदन्त अङ्ग को दीर्घ होता है। इससे सम्प्रसारण को दीर्घ करके - प्रस्ती + त = प्रस्तीतः, प्रस्तीतवान्।

प्रस्त्योऽन्यतरस्याम् (८.२.५४) - प्र पूर्वक स्त्यै धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को विकल्प से मकारादेश होता है। पक्ष में त को मकार आदेश होने पर -

प्रस्तीमः, प्रस्तीमवान्।

श्यै - श्या धातु -

यहाँ ध्यान दें कि तीन स्थितियों में श्या धातु को सम्प्रसारण होता है -

१. **द्रवमूर्तिस्पर्शयोः श्यः (६.१.२४)** - तरल पदार्थ के काठिन्य में वर्तमान, तथा स्पर्श अर्थ में वर्तमान श्यै धातु को निष्ठा प्रत्यय परे रहते सम्प्रसारण होता है।

द्रव वस्तु के कठोर होने पर - श्यै + क्त - 'द्रवमूर्तिस्पर्शयोः श्यः' सूत्र से सम्प्रसारण होकर - शि + त / 'हलः' सूत्र से दीर्घ करके - शी + त -

श्योऽस्पर्शे (८.२.४७) - श्यैङ् धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है। स्पर्श अर्थ को छोड़कर। अतः शी + त - शी + न = शीनं घृतम् (जमा हुआ घी)। यह द्रव वस्तु के कठोर होने का उदाहरण है। इसी प्रकार - शीना वसा। शीनं मेदः।

स्पर्श अर्थ होने पर - 'द्रवमूर्तिस्पर्शयोः श्यः' सूत्र से सम्प्रसारण तो होगा, परन्तु नत्व नहीं होगा, क्योंकि 'श्योऽस्पर्शे' सूत्र स्पर्श अर्थ में नत्व का निषेध करता है - अतः स्पर्श अर्थ में सम्प्रसारण होकर और नत्व न होकर - शीतं जलम्, शीतो वायुः।

जहाँ द्रव वस्तु का कठोर होना भी न हो तथा स्पर्श अर्थ भी न हो -

वहाँ सम्प्रसारण नहीं होगा, केवल नत्व होगा। यथा - संश्यानो वृश्चिकः।

२. **प्रतेश्च (६.१.२५)** - प्रति से उत्तर भी श्यै धातु को निष्ठा प्रत्यय परे रहते सम्प्रसारण हो जाता है। प्रति + श्यै + क्त -

'प्रतेश्च' सूत्र से सम्प्रसारण होकर तथा 'श्योऽस्पर्शे' सूत्र से निष्ठा के त को नत्व होकर - प्रतिशीनः, प्रतिशीनवान्।

३. **विभाषाभ्यवपूर्वस्य (६.१.२६)** - अभि, अव, पूर्वक श्यै धातु को निष्ठा प्रत्यय परे रहते विकल्प से सम्प्रसारण हो जाता है। अभि + श्यै + क्त -

'विभाषाभ्यवपूर्वस्य' सूत्र से विकल्प से सम्प्रसारण होकर तथा **'श्योऽस्पर्शे'** सूत्र से निष्ठा के त को नत्व होकर - अभिशीनं घृतम्, अभिश्यानं घृतम् / इसी प्रकार

- अव उपसर्ग के योग में - अवशीनं मेदः, अवश्यानं मेदः।

शो - शा, छो - छा धातु -

शाच्छोरन्यतरस्याम् (७.४.४१) **(श्यतेरित्वं व्रते नित्यम् - वा.)** - शो तथा छो अङ्ग को विकल्प से इकारादेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर।

व्रत अर्थ में - सम् + शो + क्त / इकारादेश होकर - सम् + शि + त = = संशितो ब्राह्मणः।

व्रत अर्थ न होने पर इकारादेश न होने पर - शो - शा + त = शातः। इसी प्रकार छो धातु से - छितः, छातः, बनाइये।

ग्लै - ग्ला, म्लै - म्ला, द्यै - द्या, ष्ट्यैङ् - स्त्या धातु -

ग्लै - ग्ला + क्त / **संयोगादेरातो.** सूत्र से त को न होकर ग्ला + न = ग्लानः। इसी प्रकार - म्लै - म्ला - म्लानः / द्यै - द्या - द्यानः / ष्ट्यैङ् - स्त्या - स्त्यानः, बनाइये।

ज्या धातु -

ज्या + क्त / **ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च** सूत्र से सम्प्रसारण होकर जि + त / हलः सूत्र से सम्प्रसारण को दीर्घ होकर - जी + त / **ल्वादिभ्यः** सूत्र से निष्ठा के त को न होकर - जी + न = जीनः।

निर् उपसर्गपूर्वक वा धातु -

निर् + वा + क्त -

निर्वाणोऽवाते: (८.२.५०) - निस् उपसर्गपूर्वक वा धातु से परे आने वाले, निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है, यदि शब्द का अभिधेय 'वात' न हो, तो।

निस् + वा + क्त / **ससजुषो रुः** से स् को रुत्व होकर और त को इस सूत्र से न होकर, न को णत्व होकर - निर् + वा + ण = निर्वाणः अग्निः। निर्वाणः प्रदीपः। निर्वाणः भिक्षुः, आदि। किन्तु वात अर्थ होने पर वा + क्त से वातः ही बनेगा।

वेञ् धातु -

वे + क्त / **'वचिस्वपियजादीनाम् किति'** सूत्र से सम्प्रसारण व् को करके - उ ए + त / सम्प्रसारणाच्च से ए को पूर्वरूप करके - उ + त = उतः।

ह्वेञ् धातु -

ह्वेञ् + क्त - ह्वे + क्त / **वचिस्वपियजादीनाम् किति** सूत्र से व् को सम्प्रसारण करके - ह् उ ए + त / **सम्प्रसारणाच्च** से ए को पूर्वरूप करके तथा **'हलः'** सूत्र से

उ को दीर्घ करके - हू + त = हूत: ।

व्येञ् धातु -

व्येञ् + क्त - वे + क्त / **वचिस्वपियजादीनाम् किति** सूत्र से य् को सम्प्रसारण करके - व् इ ए + त / **सम्प्रसारणाच्च** से ए को पूर्वरूप करके तथा **हलि च** से इ को दीर्घ करके - वी + त = वीत: ।

क्षै धातु - क्षै + क्त / क्षा + क्त / क्षा + त -

क्षायो म: (८.२.५३) - क्षै धातु से उत्तर निष्ठा के तकार को मकारादेश होता है। क्षा + म = क्षाम: ।

ओवै धातु - वै + क्त / वा + त -

ओदितश्च (८.२.४५) - ओदित् धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है। वा + त - वा + न = वान: ।

दरिद्रा धातु (सेट्) -

दरिद्रा + क्त / कृती धातु में ईदित्करण के व्यर्थ होने से 'यस्य विभाषा' सूत्र अनित्य है, अत: दरिद्रा धातु से इडागम होकर - दरिद्रा + इट् + त / 'आतो लोप इटि च' सूत्र से 'आ' का लोप करके - दरिद्र् + इ + त = दरिद्रित:, दरिद्रितवान् ।

शेष आकारान्त धातु -

इनके अलावा अब जो भी आकारान्त धातु बचे, उन्हें कुछ मत कीजिये। धातु और प्रत्यय को सीधे जोड़ दीजिये। जैसे -

पा	+	क्त	=	पात:	खा	+	क्त	=	खात:
ध्मा	+	क्त	=	ध्मात:	म्ना	+	क्त	=	म्नात:
या	+	क्त	=	यात:	भा	+	क्त	=	भात:
ष्णा	+	क्त	=	स्नात:	प्सा	+	क्त	=	प्सात:
रा	+	क्त	=	रात:	ला	+	क्त	=	लात:
ज्ञा	+	क्त	=	ज्ञात:	दैप्	+	क्त	=	दात:
दाप्	+	क्त	=	दात:	रा	+	क्त	=	रात:
ष्णै - स्ना	+	क्त	=	स्नात:	जै - जा	+	क्त	=	जात:
षै - सा	+	क्त	=	सात:	कै - का	+	क्त	=	कात:
शै - शा	+	क्त	=	शात:					
ष्टै - स्ता	+	क्त	=	स्तात:					

इकारान्त धातु

श्वि धातु -

श्वि + क्त / श्वि + त - 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' सूत्र से व् को सम्प्रसारण करके - श् + उ + इ + त / 'सम्प्रसारणाच्च' सूत्र से इ को पूर्वरूप करके, 'हलः' से उ को दीर्घ करके - शू + त / 'ओदितश्च' से त को नत्व करके - शूनः।

क्षि क्षये तथा क्षि निवासगत्योः धातु -

निष्ठायामण्यदर्थे (६.४.६०) - ण्यत् प्रत्यय के अर्थ हैं - भाव तथा कर्म।

ण्यत् प्रत्यय के अर्थ से भिन्न अर्थ में अर्थात् कर्ता अर्थ में वर्तमान जो निष्ठा प्रत्यय, उसके परे रहने पर, क्षि धातु को दीर्घ होता है। क्षि + क्त - क्षी + त -

क्षियो दीर्घात् (८.२.४६) - दीर्घ क्षि धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकार होता है। क्षी + त - क्षी + न = क्षीणः।

वाऽऽक्रोशदैन्ययोः (६.४.६१) - कर्ता अर्थ में वर्तमान जो निष्ठा प्रत्यय, उसके परे रहने पर, क्षि धातु को विकल्प से दीर्घ होता है, आक्रोश तथा दैन्य गम्यमान होने पर। (ध्यान दें कि दीर्घ होने पर ही नत्व होगा।)

कर्ता अर्थ में आक्रोश गम्यमान होने पर विकल्प से दीर्घ होकर - क्षीणः, क्षितः बनते हैं। यथा - क्षीणायुरेधि, क्षितायुरेधि।

कर्ता अर्थ में दैन्य गम्यमान होने पर भी विकल्प से क्षीणः, क्षितः बनते हैं। यथा - क्षीणोऽयं तपस्वी, क्षितोऽयं तपस्वी। क्षीणो जाल्मः, क्षितो जाल्मः। क्षीणाः क्लेशाः, क्षिताः क्लेशाः।

कर्म अर्थ में दीर्घ नहीं होगा, दीर्घ न होने से नत्व भी नहीं होगा - क्षि + क्त = क्षितः। क्षितः कामो मया।

षिञ् - सि धातु -

सिनोतेर्ग्रासकर्मकर्तृकस्येति वक्तव्यम् (वार्तिक - ८.२.४४) - जब षिञ् धातु का कर्म ग्रास हो और वह कर्ता के समान प्रयुक्त हो तब षिञ् धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकार हो जाता है।

षिञ् + क्त - सि + न = सिनः। ग्रासकर्मकर्तृक धातु होने पर - सिनो ग्रासः स्वयमेव। (कौर स्वयं ही अन्दर चला गया।)

यदि ग्रास कर्म के रूप में प्रयुक्त हो, कर्मकर्ता के रूप में नहीं, तब नत्व नहीं होता है। यथा - सितो ग्रासः। अन्यत्र किसी भी अर्थ में नत्व नहीं होता। यथा - सिता

पाशेन सूकरी। (शूकरी पाश में बँध गई।)

शेष इकारान्त धातु -

शेष इकारान्त धातुओं को क्ङिति च से केवल गुण निषेध होगा, और कुछ नहीं होगा। जैसे -

जि	-	जि	+	क्त	=	जित:
ष्मिङ्	-	स्मि	+	क्त	=	स्मित:
इण्	-	इ	+	क्त	=	इत:
कि	-	कि	+	क्त	=	कित:
शिञ्	-	शि	+	क्त	=	शित: आदि।

ईकारान्त धातु

शीङ् धातु तथा भ्वादिगण का डीङ् धातु -

अजन्त धातुओं में दो ही धातु निष्ठा परे होने पर सेट् होते हैं। शीङ् धातु और भ्वादिगण का डीङ् धातु।

शी + इट् + क्त / शी + इ + त / कित् होने के कारण क्ङिति च सूत्र से गुण निषेध प्राप्त होने पर -

निष्ठा शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृष: (१.२.१९) - शीङ् स्विद्, मिद्, क्ष्विद्, धृष् इन पाँच धातुओं से परे यदि सेट् निष्ठा प्रत्यय आता है तो वह कित् होते हुए भी अकित् जैसा मान लिया जाता है। अत: इनमें निष्ठा प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

शी + इट् + क्त / शी + इ + त -

सार्वधातुकार्धधातुकयो: (७.३.८४) - धातु के अन्त में आने वाले इक् को गुण होता है, कित्, ङित्, ञित्, णित्, से भिन्न सार्वधातुक अथवा आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। शे + इ + त - शय् + इ + त - शयित - शयित:, शयितवान्।

इसी प्रकार डीङ् धातु (भ्वादिगण) से - डी + क्त = डयित:, डयितवान् बनाइये।

ध्यान रहे कि दिवादिगण का ड़ीङ् धातु निष्ठा प्रत्यय में अनिट् है। उससे डीन:, डीनवान् बनेगा, जो आगे दे रहे हैं।

डीङ्, दीङ्, धीङ्, मीङ्, रीङ्, लीङ्, व्रीङ् धातु -

स्वादय ओदित: - दिवादिगण के भीतर ९ धातु ऐसे हैं, जिनमें ओकार की इत् संज्ञा नहीं होती है, तथापि ये धातु 'स्वादय ओदित:' से ओदित् कहलाते हैं।

ओदितश्च - ओदित् धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को **नकारादेश**

होता है। दिवादिगण के ओदित् इकारान्त धातु इस प्रकार हैं -

डीङ् (दिवादिगण)		डी	+	क्त	=	डीन:
दीङ्	-	दी	+	क्त	=	दीन:
धीङ्	-	धी	+	क्त	=	धीन:
मीङ्	-	मी	+	क्त	=	मीन:
रीङ्	-	री	+	क्त	=	रीण:
लीङ्	-	ली	+	क्त	=	लीन:
व्रीङ्	-	व्री	+	क्त	=	व्रीण:

री, ली, ब्ली, प्ली, धातु -

ल्वादिभ्यः (८.२.४४) - क्र्यादिगण में लूञ् आदि २१ ल्वादि धातु हैं। इन ल्वादि धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है।

इनमें से ईकारान्त ल्वादि धातु इस प्रकार हैं -

री	-	री	+	क्त	=	रीण:
ली	-	ली	+	क्त	=	लीन:
ब्ली	-	ब्ली	+	क्त	=	ब्लीन:
प्ली	-	प्ली	+	क्त	=	प्लीन:

ह्री धातु -

ह्री + क्त / ह्री + त / 'नुदविदोन्दत्राघ्राह्रीभ्योऽन्यतरस्याम्' सूत्र से, निष्ठा के तकार को विकल्प नकारादेश करके दो रूप बने -

ह्री + त = ह्रीण: / ह्री + त = ह्रीत:।

शेष ईकारान्त धातु -

शेष ईकारान्त धातुओं को, क्ङिति च से केवल गुण निषेध होगा -

णीञ्	-	नी	+	क्त	=	नीत:
ञिभी	-	भी	+	क्त	=	भीत:
डुक्रीञ्	-	क्री	+	क्त	=	क्रीत:
क्षीष्	-	क्षी	+	क्त	=	क्षीत:
वी	-	वी	+	क्त	=	वीत:, आदि।

उकारान्त धातु

दु और गु पुरीषोत्सर्गे धातु -

दुग्वोर्दीर्घश्चेति वक्तव्यम् (वार्तिक - ८.२.४४) - दु और गु धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है साथ ही दोनों धातुओं को दीर्घ होता है।

दु गतौ	- दु	+	क्त	=	दूनः
गु पुरीषोत्सर्गे	- गु	+	क्त	=	गूनः

शेष उकारान्त धातु -

शेष उकारान्त धातुओं को, क्ङिति च से केवल गुण निषेध होगा -

गुङ् गतौ	+	क्त	=	गुतः	टुदु उपतापे	+ क्त	=	दुतः
यु	+	क्त	=	युतः	स्नु	+ क्त	=	स्नुतः
रु	+	क्त	=	रुतः	क्षु	+ क्त	=	क्षुतः
नु	+	क्त	=	नुतः	द्रु	+ क्त	=	द्रुतः

ऊकारान्त धातु

ब्रू धातु -

ब्रूञ् + क्त / **ब्रुवो वचिः सूत्र से** आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ब्रू धातु को वच् आदेश करके - वच् + त / वच् को 'वचिस्वपियजादीनां किति' सूत्र से सम्प्रसारण करके - उच् + त / चोः कुः से च् को कुत्व करके - उक् + त = उक्तः, उक्तवान्।

पूङ् धातु -

पूङश्च (७.२.५१) - पूङ् धातु से परे आने वाले क्त्वा तथा निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इट् का आगम होता है।

पूङः क्त्वा च (१.२.२२) - पूङ् धातु से परे आने वाले सेट् क्त्वा तथा निष्ठा प्रत्यय अकित् होते हैं।

अतः इडागम होने पर - पू + इट् + क्त। 'पूङः क्त्वा च' सूत्र से प्रत्यय के अकित् होने के कारण 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण होकर पो + इ + त / 'एचोऽयवायावः' सूत्र से अवादेश होकर - पव् + इ + त = पवितः, पवितवान्।

इडागम नहीं होने पर - क्त्वा प्रत्यय कित् ही रहेगा और प्रत्यय के कित् रहने के कारण 'क्ङिति च' से गुण निषेध होकर - पू + क्त = पूतः, पूतवान्।

पूञ् धातु -

पूञो विनाश इति वक्तव्यम् (वार्तिक - ८.२.४४) - पूञ् धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है। यदि विनाश अर्थ हो तो।

पूञ् - पू + क्त = पूनः। पूना यवाः = विनष्टाः।

विनाश अर्थ न होने पर - पू + क्त = पूतः ।

षूङ्, दूङ् धातु -

ये धातु 'स्वादय ओदितः' से ओदित् कहलाते हैं । अतः 'ओदितश्च' सूत्र से इनसे परे आने वाले निष्ठा के त को न आदेश होगा।

षूङ्	-	सू	+	क्त	=	सूनः
दूङ्	-	दू	+	क्त	=	दूनः

लूञ्, धूञ् धातु -

ये ल्वादि धातु हैं। अतः ल्वादिभ्यश्च सूत्र से इनसे परे आने वाले निष्ठा के त को न आदेश होगा।

लूञ्	-	लू	+	क्त	=	लूनः
धूञ्	-	धू	+	क्त	=	धूनः

शेष ऊकारान्त धातु -

शेष ऊकारान्त धातुओं को, क्ङिति च से केवल गुण निषेध होगा -

भू	-	भू	+	क्त	=	भूतः
मूङ्	-	मू	+	क्त	=	मूतः
षूङ्	-	सू	+	क्त	=	सूतः
षू	-	सू	+	क्त	=	सूतः
क्नूञ्	-	क्नू	+	क्त	=	क्नूतः
द्रूञ्	-	द्रू	+	क्त	=	द्रूतः
धूञ्	-	धू	+	क्त	=	धूतः, आदि।

ॠकारान्त धातु

जागृ धातु (यह अनेकाच् होने से सेट् है) -

जाग्रोऽविचिण्णल्ङित्सु (७.३.८५) - जहाँ वृद्धि प्राप्त हो, अथवा जहाँ गुण, वृद्धि का निषेध प्राप्त हो, वहाँ जागृ धातु को गुण ही होता है, वि, चिण्, णल्, तथा ङित् से भिन्न प्रत्यय परे होने पर। जागृ + इट् + क्त / जागर् + इ + त = जागरितः ।

निष्ठा प्रत्यय परे होने पर शेष सारे ॠकारान्त धातु अनिट् होते हैं।

सृ धातु -

नसत्तनिषत्तानुत्तप्रतूर्त्तसूर्त्तगूर्तानि छन्दसि (८.२.६१) - वेद विषय में नसत्त,

निषत्त, अनुत्त, प्रतूर्त्त, सूर्त्त, गूर्त, ये शब्द निपातित किये जाते हैं। अत: वेद में -

सृ - सृ + क्त = वेद में - सूर्ता: गाव:।

किन्तु लोक में -

सृ - सृ + क्त = सृत: ही बनेगा।

हृ धातु -

ह्रु ह्वरेश्छन्दसि (७.२.३१) - **वेद में निष्ठा प्रत्यय परे होने पर हृ धातु को ह्रु आदेश होता है। यथा** - अह्रुतमसि हविर्द्धानम् / ह्रुतस्य चाह्रुतस्य च।

अपरिह्वृताश्च (७.२.३२) - वेद में नञ् पूर्वक तथा परि उपसर्गपूर्वक हृ धातु को ह्रु आदेश नहीं होता है। अपरिह्वृता: सनुयाम वाजम् /

सोमे ह्वरित: (८.२.३३) - सोम अर्थ होने पर वेद में ह्वृ धातु से गुण होकर ह्वरित: बनता है। मा न: सोमो ह्वरित:, विह्वरितस्त्वम्। किन्तु लोक में - ह्वृ + क्त = ह्वृतम् ही बनेगा।

ऋ धातु -

ऋणमाधमर्ण्ये (८.२.६०) - ऋ धातु से परे आने वाले क्त प्रत्यय के त को आधमर्ण्य विषय में नत्व होता है। आधमर्ण्य अर्थ न होने पर नत्व नहीं होता है।

आधमर्ण्य विषय में - ऋ + क्त / 'ऋणमाधमर्ण्ये' सूत्र से नत्व होकर - ऋ + न / 'ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम्' वार्तिक से णत्व होकर - ऋणम्।

आधमर्ण्य विषय न होने पर - ऋ + क्त / ऋ + त - ऋतम् (सत्यम्)।

ऋतं वक्ष्यामि नानृतम्।

शेष ऋकारान्त धातु -

शेष ऋकारान्त धातुओं को, क्ङिति च से केवल गुण निषेध होगा। जैसे -

वृङ्	-	वृ	+	क्त	=	वृत:
स्मृ	-	स्मृ	+	क्त	=	स्मृत:
धृङ्	-	धृ	+	क्त	=	धृत:
भृञ्	-	भृ	+	क्त	=	भृत:
कृञ्	-	कृ	+	क्त	=	कृत:
डुकृञ्	-	कृ	+	क्त	=	कृत:, आदि।

ॠकारान्त धातु

निष्ठा प्रत्यय परे होने पर सारे ॠकारान्त धातु अनिट् होते हैं।

भॄ, वॄ, धातु -

उदोष्ठ्यपूर्वस्य (७.१.१०२) - यदि दीर्घ ॠ के पूर्व में आने वाला वर्ण ओष्ठ्य हो तो, कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर, ॠ को 'उ' होता है।

उरण् रपरः (१.१.५१)- जब भी किसी सूत्र से ऋ के स्थान पर, अ, इ, या उ होना कहा जाये तब उन्हें अ, इ, या उ न करके अर्, इर्, उर् करना चाहिये।

अतः उदोष्ठ्यपूर्वस्य सूत्र से ॠ के स्थान पर होने वाले ॠ को 'उर्' होता है - वॄ + क्त - वुर् + त -

हलि च (८.२.७७) - हल् परे होने पर रेफान्त तथा वकारान्त धातुओं की उपधा के इक् को दीर्घ होता है। अतः 'उर्' को 'ऊर्' होता है।

वुर् + त - वूर् + त - **रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः** सूत्र से निष्ठा प्रत्यय के तकार को नकारादेश करके - वूर् + न -

रषाभ्यां नो णः समानपदे - र् और ष् के बाद आने वाले न् को ण् होता है, समानपद में। - वूर् + ण = वूर्णः, वूर्णवान्।

वॄञ्	-	वॄ	+	क्त	=	वूर्णः	/ वूर्णवान्
वॄञ्	-	वॄ	+	क्त	=	वूर्णः	/ वूर्णवान्
भॄ	-	भॄ	+	क्त	=	भूर्णः	/ भूर्णवान्
मॄ	-	मॄ	+	क्त	=	मूर्णः	/ मूर्णवान्

पॄ धातु -

न ध्याख्यापॄमूर्च्छिमदाम् (८.२.५७) - ध्या, ख्या, पॄ, मुर्च्छा, मदी इन धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश नहीं होता है। अतः -

पॄ - क्र्यादिगण	-	पॄ	+	क्त	=	पूर्तः / पूर्तवान्
पॄ - जुहोत्यादिगण	-	पॄ	+	क्त	=	पूर्तः / पूर्तवान्

ध्यान दें कि इनमें ॠ के पूर्व में प्, व्, भ् हैं, जो कि ओष्ठ्य वर्ण हैं। अतः ॠ के स्थान पर 'ऊर्' हुआ है।

शेष ॠकारान्त धातु -

ॠत इद् धातोः (७.१.१००) - धातु के अन्त में आने वाले दीर्घ ॠ को इ आदेश होता है कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर।

उरण् रपरः (१.१.५१) - जब भी किसी सूत्र से ऋ के स्थान पर, अ, इ, या

उ होना कहा जाये तब उन्हें अ, इ, या उ न करके अर्, इर्, उर् करना चाहिये।

अत: - तॄ + क्त - तिर् + त -

हलि च (८.२.७७) - हल् परे होने पर रेफान्त तथा वकारान्त धातुओं की उपधा के इक् को दीर्घ होता है। अत: 'इर्' को 'ईर्' होता है। तिर् + त - तीर् + त-

रदाभ्यां निष्ठातो न: पूर्वस्य च द: सूत्र से निष्ठा प्रत्यय के तकार को नकारादेश करके - तीर् + न - तीर् + ण = तीर्ण:, तीर्णवान्।

तॄ	-	तॄ	+	क्त	=	तीर्ण:	/ तीर्णवान्
ॠ	-	ॠ	+	क्त	=	ईर्ण:	/ ईर्णवान्
जॄष्	-	जॄ	+	क्त	=	जीर्ण:	/ जीर्णवान्
झॄष्	-	झॄ	+	क्त	=	झीर्ण:	/ झीर्णवान्
स्तॄञ्	-	स्तॄ	+	क्त	=	स्तीर्ण:	/ स्तीर्णवान्
कॄञ्	-	कॄ	+	क्त	=	कीर्ण:	/ कीर्णवान्
शॄ	-	शॄ	+	क्त	=	शीर्ण:	/ शीर्णवान्
दॄ	-	दॄ	+	क्त	=	दीर्ण:	/ दीर्णवान्
जॄ	-	जॄ	+	क्त	=	जीर्ण:	/ जीर्णवान्
नॄ	-	नॄ	+	क्त	=	नीर्ण:	/ नीर्णवान्
कॄ - तुदादि	-	कॄ	+	क्त	=	कीर्ण:	/ कीर्णवान्
कॄ - क्र्यादि	-	कॄ	+	क्त	=	कीर्ण:	/ कीर्णवान्
गॄ - तुदादि	-	गॄ	+	क्त	=	गीर्ण:	/ गीर्णवान्
गॄ - क्र्यादि	-	गॄ	+	क्त	=	गीर्ण:	/ गीर्णवान्

वर्ग - २

भ्वादि से लेकर क्र्यादिगण के हलन्त धातुओं में निष्ठा प्रत्यय लगाना

ककारान्त धातु

शक् + क्त = शक्त: / शक्तवान्

सौनागा: कर्मणि निष्ठायां शकेरिटमिच्छन्ति विकल्पेन -

सौनाग आचार्य के मत में शक् धातु से परे आने वाले कर्मार्थक निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। जैसे - शकितो घट: कर्तुम् / शक्तो घट: कर्तुम्।

भावार्थक निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता है - शक्तम् अनेन।

गकारान्त धातु

लगि - लङ्ग् धातु -

अनिदितां नलोपे लङ्गिकम्प्योरुपतापशरीरविकारयोरुपसंख्यानं कर्तव्यम् - (वार्तिक ६.४.२४) इस वार्तिक से उपताप अर्थ में नलोप होकर -

वि + लङ्ग् + क्त = विलगित: / विलगितवान्

उपताप अर्थ न होने पर -

वि + लङ्ग् + क्त = विलङ्गित: / विलङ्गितवान्

लगे - लग् धातु -

क्षुब्धस्वान्तध्वान्तलग्नम्लिष्टविरिब्ध. (८.२.१८) सूत्र से 'सक्त होना' अर्थ होने पर निपातन से - लग्नं सक्तम्। 'सक्त होना' अर्थ न होने पर - लगितम्।

घकारान्त अनिट् धातु

लाघ् धातु -

अनुपसर्गात् फुल्लक्षीबकृशोल्लाघा: (८.२.५५) -

उत् उपसर्ग पूर्वक लाघ् धातु से क्त प्रत्यय परे होने पर उल्लाघ शब्द निपातन से बनता है। उत् + लाघ् + क्त = उल्लाघ:। अन्य उपसर्गों के साथ इडागम होकर - प्रोल्लाघित: / उपसर्ग न होने पर भी - लाघित:।

चकारान्त धातु

पच् धातु -

पचो व: (८.२.५२) - पच् धातु से परे निष्ठा के तकार को वकारादेश होता है। पच् + क्त - पच् + व = पक्व:, पक्ववान्।

ओव्रश्चू - व्रश्च् धातु -

यह धातु अनिट् है। अत: क्त को इडागम न करके - व्रश्च् + क्त / ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च सम्प्रसारण करके -

व्रश्च् + क्त - वृश्च् + त / ओदित् होने के कारण 'ओदितश्च' सूत्र से त को नत्व करके - वृश्च् + न / पूर्वत्रासिद्धम् सूत्र से नत्व को असिद्ध करके -

स्को: संयोगाद्योरन्ते च (८.२.२९) - पद के अन्त में तथा झल् परे रहते जो संयोग उसके आदि के सकार तथा ककार को लोप हो जाता है।

इस सूत्र से सकार का लोप करके तथा 'चो: कु:' सूत्र से च् को कुत्व करके - वृक् + न / ऋवर्णान्नस्य णत्वं वाच्यम् से न को णत्व करके - वृक्ण:, वृक्णवान्।

अञ्चु धातु (भ्वादिगण) -

अञ्चेः पूजायाम् (७.२.५३) - अञ्चु धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है, यदि धातु का अर्थ पूजा हो तो।

नाञ्चेः पूजायाम् (८.४.६५) - पूजा अर्थ में अञ्चु धातु के उपधा की नकार का लोप नहीं होता है। अञ्चिता अस्य गुरवः।

पूजा अर्थ न होने पर - इडागम नहीं होता और उपधालोप हो जाता है -

अञ्च् + क्त - **अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति (६.४.२४)** सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - अच् + त - **चोः कुः** सूत्र से च् को कुत्व करके - अक् + त = अक्तः, अक्तवान्।

अञ्चोऽनपादाने (८.२.४८) - अञ्चु धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है, यदि अञ्चु धातु के विषय में अपादान कारक न कहा जा रहा हो, तो। यथा - सम् + अञ्च् + क्त / अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति से उपधा के न् का लोप करके तथा चोः कुः सूत्र से चवर्ग के स्थान पर कवर्ग आदेश करके - सम् + अक् + न = समक्नः। समक्नौ पादौ। इसी प्रकार -

नि + अञ्च् + क्त / नि + अच् + न = न्यक्नः। न्यक्नाः पशवः।

किन्तु अपादान अर्थ होने पर नत्व नहीं होगा - उदक्तम् उदकं कूपात्।

कुञ्च्, क्रुञ्च्, लुञ्च् -

ये धातु सेट् हैं। इडागम करके तथा अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति से उपधा के न् का लोप करके -

कुञ्च् + इ + क्त / कुच् + इ + त / कुचितः, कुचितवान्।
क्रुञ्च् + इ + क्त / क्रुच् + इ + त / क्रुचितः, क्रुचितवान्।
लुञ्च् + इ + क्त / लुच् + इ + त / लुचितः, लुचितवान्।

वञ्चु, चञ्चु, तञ्चु, तञ्चू, त्वञ्चु, म्रुञ्चु, म्लुञ्चु, ग्लुञ्चु -

ये धातु अनिट् हैं। अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति से उपधा के न् का लोप करके तथा चोः कुः (८.२.३०) सूत्र से चवर्ग के स्थान पर कवर्ग आदेश करके -

वञ्च् + त - वच् + त = वक्तः / वक्तवान्
चञ्च् + त - चच् + त = चक्तः / चक्तवान्
तञ्च् + त - तच् + त = तक्तः / तक्तवान्
तञ्च् + त - तच् + त = तक्तः / तक्तवान्

त्वञ्च्	+	त	-	त्वच्	+	त	=	त्वक्तः	/	त्वक्तवान्
म्रुञ्च्	+	त	-	मुच्	+	त	=	म्रुक्तः	/	म्रुक्तवान्
म्लुञ्च्	+	त	-	म्लुच्	+	त	=	म्लुक्तः	/	म्लुक्तवान्
ग्लुञ्च्	+	त	-	ग्लुच्	+	त	=	ग्लुक्तः	/	ग्लुक्तवान्

वच् धातु -

यह अनिट् है। वच् + क्त / वचिस्वपियजादीनाम् किति सूत्र से सम्प्रसारण करके - उच् + त / पूर्ववत् कुत्व करके - उक्तः, उक्तवान्।

व्यच् धातु (सेट्) -

व्यच् + इ + क्त / 'ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च' से सम्प्रसारण करके - विच् + इ + त = विचितः, विचितवान्।

शेष चकारान्त अनिट् धातु -

'च्' को 'चोः कुः' सूत्र से कुत्व करके 'क्' बनाइये -

ग्रुचु	-	ग्रुच्	+	क्त	=	ग्रुक्तः	/	ग्रुक्तवान्
ग्लुचु	-	ग्लुच्	+	क्त	=	ग्लुक्तः	/	ग्लुक्तवान्
पृची	-	पृच्	+	क्त	=	पृक्तः	/	पृक्तवान्
मुच्	-	मुच्	+	क्त	=	मुक्तः	/	मुक्तवान्
म्रुचु	-	म्रुच्	+	क्त	=	म्रुक्तः	/	म्रुक्तवान्
म्लुचु	-	म्लुच्	+	क्त	=	म्लुक्तः	/	म्लुक्तवान्
रिच्	-	रिच्	+	क्त	=	रिक्तः	/	रिक्तवान्
विच्	-	विच्	+	क्त	=	विक्तः	/	विक्तवान्
सिच्	-	सिच्	+	क्त	=	सिक्तः	/	सिक्तवान्
ई शुचिर्	-	शुच्	+	क्त	=	शुक्तः	/	शुक्तवान्

छकारान्त धातु

प्रच्छ् धातु (अनिट्) -

प्रच्छ् + क्त - ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छति- भृज्जतीनां ङिति च सूत्र से सम्प्रसारण करके - पृच्छ् + त -

व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः (८.३.३६) - व्रश्च्, भ्रस्ज्, सृज्, मृज्, यज्, राज्, भ्राज्, धातु तथा छकारान्त और शकारान्त धातुओं के अन्तिम वर्ण के

स्थान पर 'ष्' होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में। पृच्छ् + त - पृष् + त / प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' करके - पृष्टः, पृष्टवान्।

उच्छी - उच्छ् धातु (अनिट्) -

उच्छ् + क्त / व्रश्च. सूत्र से छ् को ष् करके - उष् + त / प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' करके - उष्टः, उष्टवान्।

स्फूर्छा - स्फूर्छ् धातु (अनिट्) -

राल्लोपः (६.४.२१) - रेफ से उत्तर छकार और वकार का लोप हो जाता है, क्वि तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर। स्फूर्छा + क्त / स्फूर्छ् + त / राल्लोपः से छ् का लोप करके - स्फूर् + त / 'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' सूत्र से निष्ठा के तकार को नकार करके - स्फूर्णः / स्फूर्णवान्।

विभाषा भावादिकर्मणोः (७.२.१७) - आदित् धातुओं से परे आने वाले, भाव तथा आदिकर्म अर्थ में वर्तमान निष्ठा प्रत्यय को, विकल्प से इडागम होता है। अतः आदिकर्म अर्थ में विकल्प से इडागम करके - स्फूर्णः, स्फूर्णवान्। स्फूर्छितः, स्फूर्छितवान्।

हुर्च्छा धातु (अनिट्) -

हुर्छा + क्त / उपधायां च से उपधा को दीर्घ करके - हूर्छ् + त / शेष पूर्ववत् - हूर्णः / हूर्णवान्। आदित् होने के कारण आदिकर्म अर्थ में विकल्प से इडागम करके - हूर्णः, हूर्णवान्। हूर्च्छितः, हूर्च्छितवान्।

मुर्च्छा - मूर्छ् धातु (अनिट्) -

मुर्छा + क्त / उपधायां च सूत्र से उपधा को दीर्घ करके - मूर्छ् + त / राल्लोपः से छ् का लोप करके - मूर् + त

न ध्याख्यापॄमूर्च्छिमदाम् - ध्या, ख्या, पॄ, मुर्च्छा, मदी इन धातुओं से उत्तर निष्ठा के तकार को नकारादेश नहीं होता है। अतः यहाँ नत्व न करके - मूर् + त = मूर्तः, मूर्तवान्। आदिकर्म अर्थ में वेट् - मूर्तः, मूर्तवान्। मूर्च्छितः, मूर्च्छितवान्।

म्लेच्छ् धातु (सेट्) --

क्षुब्धस्वान्तध्वान्तलग्नम्लिष्टविरिब्धफाण्टबाढानि मन्थमनस्तमःसक्ताविस्पष्टस्वरानायासभृशेषु (७.२.१८) -

शब्द का अर्थ अस्पष्ट बोलना होने पर - निपातन से - म्लिष्टं अविस्पष्टम्।

अन्यत्र सेट् होने के कारण - म्लेच्छ् - म्लेच्छ् + इट् + क्त = म्लेच्छितम्

/ म्लेच्छितवान्।

जकारान्त धातु

अज् धातु – वी आदेश होने पर यह अनिट् है।

अजेर्व्यघञपो: (२.४.५६) – घञ्, अप् को छोड़कर शेष सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अज् धातु को वी आदेश होता है। अज् + क्त - वी + क्त = वीत:, वीतवान्।

यज् धातु (अनिट्) –

यज् + क्त / वचिस्वपियजादीनां किति से सम्प्रसारण करके - इज् + त / व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां ष: सूत्र से ज् के स्थान पर 'ष्' करके - इष् + त / 'ष्टुना ष्टु:' सूत्र से ष्टुत्व करके - इष्ट:, इष्टवान्।

सृज् तथा मृज् धातु (अनिट्) –

सृज् + क्त / व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां ष: **सूत्र से ज्** के स्थान पर 'ष्' करके - सृष् + त / 'ष्टुना ष्टु:' सूत्र से ष्टुत्व करके - सृष्ट:, सृष्टवान्।

इसी प्रकार - मृज् + क्त से - मृष्ट:, मृष्टवान्।

भ्रस्ज् धातु (अनिट्) –

भ्रस्ज् + क्त / ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च सम्प्रसारण करके - भृस्ज् + त / स्को: संयोगाद्योरन्ते च (८.२.२९) सूत्र से संयोग के आदि के सकार का लोप करके - भृज् + त / व्रश्चभ्रस्ज. सूत्र से ज् के स्थान पर 'ष्' करके - भृष् + त / 'ष्टुना ष्टु:' सूत्र से ष्टुत्व करके - भृष्ट:, भृष्टवान्।

ओलस्जी / ओलजी / ओविजी (तुदादि, रुधादि) **/ रुजो / भुजो (अनिट्)** –

ओलस्जी + क्त - लस्ज् + त - 'स्को: संयोगाद्योरन्ते च' सूत्र से संयोग के आदि के सकार का लोप करके - लज् + त / 'चो: कु:' से कुत्व करके - लग् + त / 'ओदितश्च' सूत्र से त को न करके - लग् + न = लग्न:, लग्नवान्।

ओलस्जी	-	लस्ज्	+	क्त	=	लग्न: /	लग्नवान्
ओलजी	-	लज्	+	क्त	=	लग्न: /	लग्नवान्
ओविजी	-	विज्	+	क्त	=	विग्न: /	विग्नवान्
रुजो	-	रुज्	+	क्त	=	रुग्ण: /	रुग्णवान्
भुजो	-	भुज्	+	क्त	=	भुग्न: /	भुग्नवान्

मस्जो –मज्ज् धातु (अनिट्) –

मस्जिनशोर्झलि (७.१.६०) - मस्ज् और नश् धातुओं को नुम् का आगम होता है, झल् परे होने पर।

मस्जेरन्त्यात् पूर्व नुम् वाच्यः - मस्ज् धातु को होने वाला नुमागम अन्त्य वर्ण के ठीक पूर्व में होता है।

मस्ज् + क्त - अन्त्य वर्ण के पूर्व में नुम् का आगम करके - म स् न् ज् + त / 'स्कोः संयोगाद्योरन्ते च' सूत्र से संयोग के आदि के सकार का लोप करके तथा 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से न् का लोप करके - मज् + त / चोः कुः से कुत्व करके - मग् + त / 'ओदितश्च' सूत्र से त को न करके - मग् + न = मग्नः, मग्नवान्।

रञ्ज्, भञ्ज्, अञ्ज्, स्वञ्ज्, सञ्ज्, धातु (अनिट्) -

'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके, 'चोः कुः' सूत्र से कुत्व करके ज् के स्थान पर ग् कीजिये। उसके बाद उस 'ग्' को 'खरि च' सूत्र से उसी कवर्ग का प्रथमाक्षर 'क्' बनाइये।

भञ्ज्	+	क्त	-	भक्	+	त	=	भक्तः / भक्तवान्।
रञ्ज्	+	क्त	-	रक्	+	त	=	रक्तः / रक्तवान्।
अञ्ज्	+	क्त	-	अक्	+	त	=	अक्तः / अक्तवान्।
सञ्ज्	+	क्त	-	सक्	+	त	=	सक्तः / सक्तवान्।
स्वञ्ज्	+	क्त	-	स्वक्	+	त	=	स्वक्तः / स्वक्तवान्।

टुओस्फूर्जा - स्फूर्ज् धातु (अनिट्) -

स्फूर्जा + क्त / स्फूर्ज् + त / 'ओदितश्च' सूत्र से निष्ठा के तकार को नकार करके - स्फूर्ज् + न / नत्व को असिद्ध करके 'चोः कुः' सूत्र से जकार के स्थान में कुत्व करके - स्फूर्ग् + न / न को णत्व करके - स्फूर्ग्णः। स्फूर्ग्णवान्।

आदिकर्म अर्थ होने पर इडागम करके - स्फूर्जितः, स्फूर्जितवान्।

शेष जकारान्त अनिट् धातु -

'चोः कुः' सूत्र से ज् को कुत्व करके 'ग्' बनाइये। उसके बाद उस 'ग्' को 'खरि च' सूत्र से उसी कवर्ग का प्रथमाक्षर 'क्' बनाइये।

कुजु	-	कुज्	+	क्त	=	कुक्तः	/	कुक्तवान्
खुजु	-	खुज्	+	क्त	=	खुक्तः	/	खुक्तवान्
त्यज्	-	त्यज्	+	क्त	=	त्यक्तः	/	त्यक्तवान्
निजिर्	-	निज्	+	क्त	=	निक्तः	/	निक्तवान्

भृजी	-	भृज्	+	क्त	=	भृक्तः	/	भृक्तवान्
भज्	-	भज्	+	क्त	=	भक्तः	/	भक्तवान्
भुज्	-	भुज्	+	क्त	=	भुक्तः	/	भुक्तवान्
युज्	-	युज्	+	क्त	=	युक्तः	/	युक्तवान्
विजिर्	-	विज्	+	क्त	=	विक्तः	/	विक्तवान्
वृजी	-	वृज्	+	क्त	=	वृक्तः	/	वृक्तवान्

टकारान्त धातु

लुण्ट् धातु (सेट्) -

लुण्ट् + इ + क्त - अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति सूत्र से उपधा के 'न्' का लोप करके - लुट् + इ + त = लुटितः, लुटितवान्।

कटी धातु (अनिट्) - कट् + क्त - कट् + त / 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' करके - कट् + ट = कट्टः, कट्टवान्।

णकारान्त धातु

फण् धातु -

क्षुब्धस्वान्तध्वान्त. (७.२.१८) सूत्र से फण् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय निपातनात् अनिट् होता है, यदि अनायास अर्थ हो तो। फण् + क्त / 'अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति' सूत्र से दीर्घ होकर - फाण्टम् । अन्यत्र इडागम होकर - फणितम्।

शेष णकारान्त अनिट् धातु -

अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति (६.४.३७) - अनुदात्तोपदेश धातु, वन सम्भक्तौ धातु तथा तनादि गण के धातुओं के अनुनासिक का लोप होता है झलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर।

ऋणु	-	ऋण्	+	क्त	=	ऋतः	/	ऋतवान्
क्षणु	-	क्षण्	+	क्त	=	क्षतः	/	क्षतवान्
क्षिणु	-	क्षिण्	+	क्त	=	क्षितः	/	क्षितवान्
घृणु	-	घृण्	+	क्त	=	घृतः	/	घृतवान्
तृणु	-	तृण्	+	क्त	=	तृतः	/	तृतवान्

तकारान्त धातु

चत् धातु -

'ग्रसितस्कभित' (७.२.३४) सूत्र से वेद में इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय

को इडागम नहीं होता। यथा - चत्ता वर्षेण विद्युत्। लोक में इडागम होकर - चतितः, चतितवान्।

शेष तकारान्त अनिट् धातु -

कृती (तुदादि, रुधादि)	-	कृत्	+	क्त	=	कृत्तः	/	कृत्तवान्
चिती	-	चित्	+	क्त	=	चित्तः	/	चित्तवान्
चृती	-	चृत्	+	क्त	=	चृत्तः	/	चृत्तवान्
नृती	-	नृत्	+	क्त	=	नृत्तः	/	नृत्तवान्
यती	-	यत्	+	क्त	=	यत्तः	/	यत्तवान्
वृतु	-	वृत्	+	क्त	=	वृत्तः	/	वृत्तवान्
श्विता	-	श्वित्	+	क्त	=	श्वित्तः	/	श्वित्तवान्

थकारान्त धातु

ग्रन्थ्, श्रन्थ्, मन्थ्, कुन्थ् धातु -

ये धातु सेट् हैं। अतः इडागम करके और 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के 'न्' का लोप करके -

ग्रन्थ्	-	ग्रन्थ्	+	इ	+	क्त	=	ग्रथितः	/	ग्रथितवान्
श्रन्थ्	-	श्रन्थ्	+	इ	+	क्त	=	श्रथितः	/	श्रथितवान्
मन्थ्	-	मन्थ्	+	इ	+	क्त	=	मथितः	/	मथितवान्
कुन्थ्	-	कुन्थ्	+	इ	+	क्त	=	कुथितः	/	कुथितवान्

दकारान्त धातु

वद् धातु (सेट्) -

वद् + इट् + क्त / 'वचिस्वपियजादीनां किति' से सम्प्रसारण करके - उद् + इ + त = उदितः / उदितवान्।

अनिट् दकारान्त धातुओं के रूप इस प्रकार बनाइये -

रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः - रेफ तथा दकार से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय के तकार को नकारादेश होता है, तथा निष्ठा के तकार से पूर्व दकार को भी नकार होता है। **किन्तु इसके अनेक अपवाद हैं। जो कि इस प्रकार हैं -**

नुद् धातु -

नुदविदोन्दत्राघ्राह्रीभ्योऽन्यतरस्याम् (८.२.५६) - नुद्, विद्, उन्दी, त्रै, घ्रा, ह्री इन धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को विकल्प से नकारादेश होता है।

नुद् - नुद् + क्त = नुत्तः, नुत्तवान् / नुन्नः, नुन्नवान्

विद्ऌ लाभे - विद् धातु (तुदादिगण) (अनिट्) -

वित्तो भोगप्रत्ययोः (८.२.५८) - 'विद्ऌ लाभे' इस तुदादिगण के धातु से परे आने वाले क्त प्रत्यय को नत्व नहीं होता, भोग तथा प्रत्यय अभिधेय होने पर।

तात्पर्य यह कि वित्त का अर्थ धन होने पर और वित्त का अर्थ विश्वसनीय होने पर नत्वाभाव होकर 'वित्त' शब्द निपातित होता है।

भोग अर्थ में - वित्तं धनम् / **प्रतीति अर्थ में -** वित्तो मनुष्यः। प्रतीतः, इत्यर्थः।

अन्य अर्थों में 'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' से द् और त, दोनों को नत्व करके - विद् + क्त = विन्नः ही बनता है।

विद विचारणे - विद् धातु (रुधादिगण)(अनिट्) -

'नुदविदोन्दत्राघ्राह्रीभ्योन्यतरस्याम्' सूत्र से रुधादिगण के विद विचारणे धातु को विकल्प से नकारादेश करके - विद विचारणे (रुधादि) - विद् + क्त = वित्तः, वित्तवान् / विन्नः, विन्नवान्।

विद सत्तायाम् - विद् धातु (दिवादिगण)(अनिट्) -

'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' से द् और त, दोनों को नत्व करके -

विद् सत्तायाम् (दिवादि) - विद् + क्त = विन्नः / विन्नवान्।

विद ज्ञाने - विद् धातु (अदादिगण)(सेट्) -

विद ज्ञाने (अदादि) - विद् + इट् + क्त = विदितः / विदितवान्।

इस प्रकार विद् धातु चार हैं। उनमें से अदादिगण का विद् धातु सेट् होता है। शेष अनिट् हैं।

वेत्तेस्तु विदितो निष्ठा विद्यतेर्विन्न इष्यते।
विन्तेर्विन्नश्च वित्तश्च भोगवित्तश्च विन्दतेः।।

मद् धातु (अनिट्) -

न ध्याख्यापृमूर्च्छिमदाम् - ध्या, ख्या, पृ, मुर्च्छा, मदी इन धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश नहीं होता है।

मदी - मद् + क्त = मत्तः / मत्तवान्।

षद्ऌ - सद् धातु (अनिट्) -

वेद में **'नसत्तनिषत्तानुत्तप्रतूर्त्तसूर्त्तगूर्तानि छन्दसि'** सूत्र से नसत्त, निषत्त, अनुत्त, प्रतूर्त्त, सूर्त्त, गूर्त, ये शब्द वेद में निपातित किये जाते हैं।

वेद में - नञ् + सद् = नसत्तः / नि + सद् = निषत्तः।

लोक में - सद् + क्त - 'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' सूत्र से निष्ठा के तकार को नकारादेश करके निष्ठा के तकार से पूर्व दकार को भी नकार कीजिये -

सद्	- सद्	+	क्त	=	सन्नः	/ सन्नवान्
नि+सद्	- नि+सद्	+	क्त	=	निषण्णः	/ निषण्णवान्

भिद् धातु (अनिट्) -

भित्तं शकलम् (८.२.५९) - शकल अर्थात् खण्ड या टुकड़ा, अर्थ अभिधेय होने पर, भिदिर् धातु से परे आने वाले क्त प्रत्यय को नत्व का अभाव निपातन से होता है।

भिद् + क्त = भित्तम् अर्थात् शकल, खण्ड या टुकड़ा। अन्यत्र 'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' से द् और त, दोनों को नत्व करके - भिन्नः, भिन्नवान्।

ह्लादी धातु (अनिट्) -

ह्लादो निष्ठायाम् (६.४.९५) - ह्लाद धातु की उपधा को निष्ठा प्रत्यय परे रहते ह्रस्व हो जाता है। ह्लादी - ह्लाद् + क्त / ह्लद् + त = ह्लन्नः / ह्लन्नवान्

अद् धातु (अनिट्) -

अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति (२.४.३६) - अद् धातु को जग्ध् आदेश होता है ल्यप् तथा तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। अद् + क्त = जग्धः / अद् + क्तवतु = जग्धवान्।

'अदोऽनन्ने (३.२.६८)' सूत्र में चूँकि 'अन्न' शब्द का प्रयोग है, अतः सूत्रनिर्देशात् - अद् + क्त से अन्नम् भी बनेगा।

उन्दी - उन्द् धातु -

'नुदविदोन्दत्राघ्राह्रीभ्योन्यतरस्याम्' सूत्र से विकल्प से नकारादेश करके - उन्दी - उन्द् + क्त = उन्नः, उत्तः / उन्नवान्, उत्तवान्।

नसत्तनिषत्तानुत्तप्रतूर्तसूर्तगूर्तानि छन्दसि (८.२.६१) - नसत्त, निषत्त, अनुत्त, प्रतूर्त, सूर्त, गूर्त, ये शब्द वेद में निपातित किये जाते हैं। वेद में - नञ् + उन्द् = अनुत्तम्।

स्कन्द्, स्यन्द्, बुन्द् धातु -

'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के 'न्' का लोप करके और 'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' से द् और त, दोनों को नत्व करके -

बुन्द्	- बुन्द्	+	क्त	=	बुन्नः	/ बुन्नवान्

स्कन्द्	-	स्कन्द्	+	क्त	=	स्कन्नः	/	स्कन्नवान्
स्यन्द्	-	स्यन्द्	+	क्त	=	स्यन्नः	/	स्यन्नवान्

अर्द् धातु -

अर्देः सन्निविभ्यः (७.२.२४) - सम्, नि, वि उपसर्गयुक्त अर्द् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है - समर्णः, न्यर्णः, व्यर्णः ।

उपसर्गरहित होने पर इडागम होकर बनेगा - अर्दितः ।

अभेश्चाविदूर्ये (७.२.२५) - अभि उपसर्ग से युक्त अर्द् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है यदि उसका अर्थ आविदूर्य हो तो। अतः आविदूर्य अर्थ में इडागम न होकर बनेगा - अभ्यर्णा शरत्। अन्य अर्थ होने पर इडागम होकर बनेगा - अभ्यर्दितो वृषलः ।

ञिमिदा, ञिष्विदा, ष्विदा, ञिक्ष्विदा धातु -

आदितश्च (७.२.१६) - वे धातु, जिनमें 'आ' की इत् संज्ञा होती है उन्हें 'आदित् धातु' कहते हैं। ऐसे आदित् धातुओं से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता है ।

रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः (८.२.४२) - रेफ तथा दकार से उत्तर निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है, तथा निष्ठा के तकार से पूर्व दकार को नकार होता है ।

ञिमिदा	-	मिद्	+	क्त	=	मिन्नः	/	मिन्नवान्
ञिष्विदा	-	स्विद्	+	क्त	=	स्विन्नः	/	स्विन्नवान्
ष्विदा	-	स्विद्	+	क्त	=	स्विन्नः	/	स्विन्नवान्
ञिक्ष्विदा	-	क्ष्विद्	+	क्त	=	क्ष्विण्णः	/	क्ष्विण्णवान्

ञिक्ष्विदा - क्ष्विद् + क्त / रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः सूत्र से प्रत्यय के त को और धातु के द् को नत्व करके - क्ष्विन् + न / रषाभ्यां नो णः समानपदे से पूर्व न् को ण् करके तथा ष्टुना ष्टुः से बाद वाले न को ण करके - क्ष्विण्णः / क्ष्विण्णवान् ।

विभाषा भावादिकर्मणोः (७.२.१७) - भाव तथा आदिकर्म अर्थ में वर्तमान क्त प्रत्यय को, विकल्प से इडागम होता है ।

'नपुंसके भावे क्तः' सूत्र से क्त प्रत्यय भाव अर्थ में होता है। 'आदिकर्मणि क्तः' सूत्र से क्त प्रत्यय आदिकर्म अर्थ में होता है। भाव तथा आदिकर्म अर्थ में वर्तमान क्त प्रत्यय को, विकल्प से इडागम होता है। **विकल्प से इडागम होने पर -**

निष्ठा शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृषः (१.२.१९) - शीङ् स्विद्, मिद्, क्ष्विद्, धृष् इन पाँच धातुओं से परे यदि सेट् निष्ठा प्रत्यय आता है तो वह कित् होते हुए भी अकित् जैसा मान लिया जाता है। अतः गुण करके -

ञिक्ष्विदा	-	क्ष्वेदितः	/	क्ष्वेदितवान् तथा क्ष्विण्णः	/	क्ष्विण्णवान्
ञिमिदा	-	प्रमेदितः	/	प्रमेदितवान् तथा प्रमिन्नः	/	प्रमिन्नवान्
ञिष्विदा	-	प्रस्वेदितः	/	प्रस्वेदितवान् तथा प्रस्विन्नः	/	प्रस्विन्नवान्

शेष दकारान्त अनिट् धातु -

'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' सूत्र से इनसे परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश कीजिये तथा निष्ठा के तकार से पूर्व दकार को भी नकार कीजिये -

हद्	-	हद्	+	क्त	=	हन्नः	/	हन्नवान्
क्लिदू	-	क्लिद्	+	क्त	=	क्लिन्नः	/	क्लिन्नवान्
क्षुद्	-	क्षुद्	+	क्त	=	क्षुण्णः	/	क्षुण्णवान्
छृदी	-	छृद्	+	क्त	=	छृण्णः	/	छृण्णवान्
छृद्	-	छृद्	+	क्त	=	छृण्णः	/	छृण्णवान्
खिद्	-	खिद्	+	क्त	=	खिन्नः	/	खिन्नवान्
छिद्	-	छिद्	+	क्त	=	छिन्नः	/	छिन्नवान्
तुद्	-	तुद्	+	क्त	=	तुन्नः	/	तुन्नवान्
तृद्	-	तृद्	+	क्त	=	तृण्णः	/	तृण्णवान्
शद्	-	शद्	+	क्त	=	शन्नः	/	शन्नवान्
पद्	-	पद्	+	क्त	=	पन्नः	/	पन्नवान्

धकारान्त धातु

व्यध् धातु -

यह धातु अनिट् है। व्यध् + क्त - 'ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चति-पृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च' सूत्र से सम्प्रसारण करके - विध् + त -

धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर होने पर दो कार्य कीजिये -

१.झषस्तथोर्धोऽधः (८.२.४०) - झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षरों के बाद आने वाले प्रत्यय के त, थ को ध होता है।

देखिये कि ध्, झष् है, अर्थात् वर्ग का चतुर्थाक्षर है। अतः उससे परे आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' बनाकर - विध् + त - विध् + ध -

२. **झलां जश् झशि (८.४.५३)** - झल् के स्थान पर जश् अर्थात् वर्ग का तृतीयाक्षर होता है, झश् परे होने पर। विध् + त - विद् + ध = विद्धः / विद्धवान्।

इन्ध्, बन्ध् धातु - ये धातु अनिट् हैं।

इन्ध् + क्त / प्रत्यय के कित् होने के कारण 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - इध् + त / पूर्ववत् 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षर के बाद आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' करके और उसके परे होने पर, धातु के अन्तिम ध् को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व करके अर्थात् वर्ग का तृतीयाक्षर द् बनाकर - इध् + ध - इद् + ध = इद्धः, इद्धवान्। इसी प्रकार -

बन्ध् + क्त / बध् + त = बद्धः, बद्धवान्।

शुन्ध् धातु -

यह नलोपी सेट् धातु है। शुन्ध् + इ + क्त / 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - शुध् + इ + + त = शुधितः, शुधितवान्।

शेष धकारान्त अनिट् धातु -

'क्ङिति च(१.१.५)' से गुण निषेध करके, तथा पूर्ववत् 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षर के बाद आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' करके और धातु के अन्तिम ध् को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व करके अर्थात् वर्ग का तृतीयाक्षर द् बनाकर -

ऋधु	-	ऋध्	+	क्त	=	ऋद्धः	/	ऋद्धवान्
क्रुध्	-	क्रुध्	+	क्त	=	क्रुद्धः	/	क्रुद्धवान्
गृधु	-	गृध्	+	क्त	=	गृद्धः	/	गृद्धवान्
बुध्	-	बुध्	+	क्त	=	बुद्धः	/	बुद्धवान्
मृधु	-	मृध्	+	क्त	=	मृद्धः	/	मृद्धवान्
युध्	-	युध्	+	क्त	=	युद्धः	/	युद्धवान्
रध्	-	रध्	+	क्त	=	रद्धः	/	रद्धवान्
रुध्	-	रुध्	+	क्त	=	रुद्धः	/	रुद्धवान्
राध्	-	राध्	+	क्त	=	राद्धः	/	राद्धवान्
वृधु	-	वृध्	+	क्त	=	वृद्धः	/	वृद्धवान्
साध्	-	साध्	+	क्त	=	साद्धः	/	साद्धवान्

शुध्	-	शुध्	+	क्त	=	शुद्धः	/	शुद्धवान्
शृधु	-	शृध्	+	क्त	=	शृद्धः	/	शृद्धवान्
सिध्	-	सिध्	+	क्त	=	सिद्धः	/	सिद्धवान्
षिधु	-	सिध्	+	क्त	=	सिद्धः	/	सिद्धवान्
षिधू	-	सिध्	+	क्त	=	सिद्धः	/	सिद्धवान्

नकारान्त धातु

जन्, सन्, खन् धातु -

जनसनखनां सञ्झलोः (३.२.६७) - जन्, सन्, खन् धातुओं को आकार अन्तादेश होता है, झलादि सन् तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

खनु	-	खन्	+	क्त	-	खा	+	त	=	खातः	/	खातवान्
जनी	-	जन्	+	क्त	-	जा	+	त	=	जातः	/	जातवान्
षणु	-	सन्	+	क्त	-	सा	+	त	=	सातः	/	सातवान्

स्वन् ध्वन्, धातु -

'क्षुब्धस्वान्तध्वान्त' सूत्र से स्वन् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय निपातनात् अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ मनस् हो तो। मनस् अर्थ में - स्वान्तं मनः। अन्य अर्थ में इडागम होकर बनेगा - स्वनितो मृदङ्गः। आङ् उपसर्ग होने पर 'रुष्यमत्वरसंघुषास्वनाम्' सूत्र से विकल्प से इडागम करके - आस्वान्तः / आस्वनितः।

ध्वन् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय निपातनात् अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ तमस् हो तो। यथा - ध्वान्तं तमः। अन्य अर्थ में बनेगा - ध्वनितो मृदङ्गः।

कन् धातु -

कनी + क्त / कन् + त -

अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति (६.४.१५) - अनुनासिकान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ होता है, क्वि परे होने पर तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

कन् + त - कान् + त / 'नश्चापदान्तस्य झलि' सूत्र से अपदान्त नकार को अनुस्वार करके - कां + त / 'अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः' सूत्र से अनुस्वार को परसवर्ण करके = कान्तः / कान्तवान्।

मनु अवबोधने धातु -

यद्यपि उदित् होने के कारण 'यस्य विभाषा' सूत्र से निष्ठा में अनिट् होकर

मतः, मतवान् ही बनना चाहिये, किन्तु 'कृती छेदने' धातु में ईदित्करण के व्यर्थ होने से 'यस्य विभाषा' सूत्र अनित्य होने से इडागम होकर - मनित्, मनितवान् भी बनते हैं।

शेष नकारान्त अनिट् धातु -

अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति (६.४.३७)-

अनुदात्तोपदेश धातु, वन सम्भक्तौ धातु तथा तनोति इत्यादि धातुओं के अनुनासिक का लोप होता है झलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर।

हन् - हन् + क्त - ह + त = हतः / हतवान्
मन् - मन् + क्त - म + त = मतः / मतवान्
तनु - तन् + क्त - त + त = ततः / ततवान्
वनु - वन् + क्त - व + त = वतः / वतवान्

पकारान्त धातु

त्रुम्प्, तुम्प् धातु (सेट्) -

त्रुम्प् + इ + क्त / 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - त्रुप् + इ + + त = त्रुपितः, त्रुपितवान्।

इसी प्रकार - तुम्प् + क्त = तुपितः, तुपितवान्।

कपि - कम्प् धातु (सेट्) -

अनिदितां नलोपे लङ्गिकम्प्योरुपतापशरीरविकारयोरुपसंख्यानं कर्तव्यम् (वा.) - इस वार्तिक से शरीरविकार अर्थ में नलोप होकर - वि + कम्प् + क्त / वि + कप् + त = विकपितः / विकपितवान्। अन्यत्र -

वि + कपि - विकम्प् + क्त = विकम्पितः, विकम्पितवान्।

स्वप्, वप् धातु (अनिट्) -

स्वप् + क्त / वचिस्वपियजादीनाम् किति सूत्र से सम्प्रसारण करके - सुप् + त = सुप्तः / सुप्तवान्। इसी प्रकार - वप् + क्त / पूर्ववत् उप्तः, उप्तवान्।

कृपू - कृप् धातु (अनिट्) -

कृपू - कृप् + क्त / कृपो रो लः सूत्र से कृप् धातु के र् को ल् बनाकर - क्लृप् + त = क्लृप्तः, क्लृप्तवान्।

शेष पकारान्त अनिट् धातु - इन्हें कुछ मत कीजिये -

आप् - आप् + क्त = आप्तः / आप्तवान्
क्षिप् - क्षिप् + क्त = क्षिप्तः / क्षिप्तवान्

गुपू	-	गुप्	+	क्त	=	गुप्तः	/	गुप्तवान्
छुप्	-	छुप्	+	क्त	=	छुप्तः	/	छुप्तवान्
तप्	-	तप्	+	क्त	=	तप्तः	/	तप्तवान्
तिप्	-	तिप्	+	क्त	=	तिप्तः	/	तिप्तवान्
तृप्	-	तृप्	+	क्त	=	तृप्तः	/	तृप्तवान्
त्रपूष्	-	त्रप्	+	क्त	=	त्रप्तः	/	त्रप्तवान्
दृप्	-	दृप्	+	क्त	=	दृप्तः	/	दृप्तवान्
लिप्	-	लिप्	+	क्त	=	लिप्तः	/	लिप्तवान्
लुप्	-	लुप्	+	क्त	=	लुप्तः	/	लुप्तवान्
शप्	-	शप्	+	क्त	=	शप्तः	/	शप्तवान्
सृप्	-	सृप्	+	क्त	=	सृप्तः	/	सृप्तवान्

फकारान्त धातु

तुम्फ्, त्रुम्फ्, दृम्फ्, तृम्फ्, ऋम्फ, गुम्फ् धातु (सेट्) -

इडागम करके और 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके -

तुम्फ्	+ इट्	+	क्त	-	तुफ्	+	इ	+	त	=	तुफितः /	तुफितवान्
त्रुम्फ्	+ इट्	+	क्त	-	त्रुफ्	+	इ	+	त	=	त्रुफितः /	त्रुफितवान्
दृम्फ्	+ इट्	+	क्त	-	दृफ्	+	इ	+	त	=	दृफितः /	दृफितवान्
तृम्फ्	+ इट्	+	क्त	-	तृफ्	+	इ	+	त	=	तृफितः /	तृफितवान्
ऋम्फ्	+ इट्	+	क्त	-	ऋफ्	+	इ	+	त	=	ऋफितः /	ऋफितवान्
गुम्फ्	+ इट्	+	क्त	-	गुफ्	+	इ	+	त	=	गुफितः /	गुफितवान्

बकारान्त धातु

क्षीब् धातु -

अनुपसर्गात् फुल्लक्षीबकृशोल्लाघाः (८.२.५५) - अनुपसर्ग फुल्ल्, क्षीब्, कृश्, धातुओं से तथा उत् उपसर्गपूर्वक लाघ् धातु से क्त प्रत्यय करने पर फुल्ल, क्षीब, कृश और उल्लाघ शब्द निपातन से बनते हैं। अतः क्षीब् + क्त = क्षीबः।

उपसर्ग होने पर इडागम होकर - प्रक्षीबितः।

शेष सारे बकारान्त धातु सेट् होते हैं - लम्बितः, लम्बितवान्।

भकारान्त धातु

क्षुभ् तथा वि + रिभ् धातु -

क्षुभ् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय 'क्षुब्धस्वान्तध्वान्त'. सूत्र से निपातनात् अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ मन्थ हो तो। क्षुभ् + क्त - क्षुभ् + त -

धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर होने पर दो कार्य कीजिये -

क्षुभ् + त / 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से चतुर्थाक्षरों के बाद आने वाले प्रत्यय के त को ध करके - क्षुभ् + ध / 'झलां जश् झशि' सूत्र से झल् के स्थान पर जश् अर्थात् वर्ग का तृतीयाक्षर करके - क्षुभ् + ध - क्षुब् + ध = क्षुब्धो मन्थः।

अन्य अर्थ में इडागम होकर बनेगा - क्षुभितं मन्थेन।

इसी प्रकार - वि + रिभ् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ स्वर हो तो यथा - विरिब्धम् इति स्वरश्चेत्। अन्यत्र विरिभितम्।

लुभ् धातु -

लुभो विमोहने - लुभ् धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है, यदि धातु का अर्थ विमोहन हो तो। यथा - लुभितः, लुभितवान्।

विमोहन अर्थ न होने पर इडागम भी नहीं होता - लुब्धो वृषलः।

उम्भ्, शुम्भ् धातु (सेट्) -

उम्भ् + इ + क्त / 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - उभ् + इ + त = उभितः, उभितवान्।

इसी प्रकार - शुम्भ् से शुभितः, शुभितवान्।

स्कम्भु, स्तम्भु, उत् + स्तम्भु धातु -

ग्रसितस्कभित. (७.३.३४) सूत्र से वेद मे स्कम्भु, स्तम्भु, तथा उत् उपसर्गपूर्वक स्तम्भु धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम होता है।

अतः वेद में स्तम्भु धातु से 'विष्कभिते अजरे' बनेगा किन्तु लोक में इडागम न होकर - विष्कब्धः, विष्कब्धवान् बनेगा। स्कब्धः, स्कब्धवान् ही बनेगा।

वेद में स्तम्भु धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम होकर - येन स्वः स्तभितम् बनेगा किन्तु लोक में इडागम न होकर - स्तब्धम् बनेगा। उत् उपसर्गपूर्वक स्तम्भु धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम होकर - सत्येनोत्तभिता भूमिः बनेगा किन्तु लोक में उत्तब्धा बनेगा।

उदित् होने के कारण ये सारे धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर अनिट् थे। उनसे वेद में इट् का निपातन हुआ है।

स्रम्भ्, सृम्भ्, दम्भ्, स्कम्भ्, स्तम्भ् (नलोपी अनिट्) धातु -

'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप कीजिये -

स्रंभ्	+	क्त	-	स्रभ्	+	त	=	स्रब्धः	/	स्रब्धवान्
श्रम्भु	+	क्त	-	श्रभ्	+	त	=	श्रब्धः	/	श्रब्धवान्
षृम्भु	+	क्त	-	सृभ्	+	त	=	सृब्धः	/	सृब्धवान्
दम्भु	+	क्त	-	दभ्	+	त	=	दब्धः	/	दब्धवान्

शेष भकारान्त अनिट् धातु -

'क्ङिति च' से गुण निषेध करके, तथा पूर्ववत् 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षर के बाद आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' करके और उसके परे होने पर, धातु के अन्तिम भ् को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व करके अर्थात् ब् बनाकर -

दृभी	-	दृभ्	+	क्त	=	दृब्धः	/	दृब्धवान्
षिभु	-	सिभ्	+	क्त	=	सिब्धः	/	सिब्धवान्
षृभु	-	सृभ्	+	क्त	=	सृब्धः	/	सृब्धवान्
ष्टुभु	-	स्तुभ्	+	क्त	=	स्तुब्धः	/	स्तुब्धवान्
यभ्	-	यभ्	+	क्त	=	यब्धः	/	यब्धवान्
रभ्	-	रभ्	+	क्त	=	रब्धः	/	रब्धवान्
जभी	-	जभ्	+	क्त	=	जब्धः	/	जब्धवान्
लभ्	-	लभ्	+	क्त	=	लब्धः	/	लब्धवान्

मकारान्त धातु

गम्, नम्, यम्, रम् धातु -

'अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीना.' सूत्र से मकार का लोप करके -

गम्	+	क्त	=	गतः	/	गतवान्
नम्	+	क्त	=	नतः	/	नतवान्
यम्	+	क्त	=	यतः	/	यतवान्
रम्	+	क्त	=	रतः	/	रतवान्

हम्म् धातु (सेट्) -

हम्म् + इ + क्त / 'अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - हम् + इ + + त = हमित:, हमितवान्।

शेष मकारान्त धातु -

अनुनासिकस्य क्विझलो: क्ङिति (६.४.१५) - अनुनासिकान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ होता है, क्वि परे होने पर तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

कम् + त - काम् + त / **नश्चापदान्तस्य झलि** (८.३.२४) सूत्र से अपदान्त न्, म्, को अनुस्वार करके - कां + त - **अनुस्वारस्य ययि परसवर्ण:** (८.४.५८) सूत्र से अनुस्वार को परसवर्ण करके - कां + त - कान् + त = कान्त: / कान्तवान्।

कमु	-	कम्	+	क्त	=	कान्त:	/	कान्तवान्
क्रमु	-	क्रम्	+	क्त	=	क्रान्त:	/	क्रान्तवान्
क्षमू	-	क्षम्	+	क्त	=	क्षान्त:	/	क्षान्तवान्
क्षमूष्	-	क्षम्	+	क्त	=	क्षान्त:	/	क्षान्तवान्
क्लमु	-	क्लम्	+	क्त	=	क्लान्त:	/	क्लान्तवान्
आ + चमु	-	आचम्	+	क्त	=	आचान्त:	/	आचान्तवान्
छमु	-	छम्	+	क्त	=	छान्त:	/	छान्तवान्
जमु	-	जम्	+	क्त	=	जान्त:	/	जान्तवान्
झमु	-	झम्	+	क्त	=	झान्त:	/	झान्तवान्
जिमु	-	जिम्	+	क्त	=	जीन्त:	/	जीन्तवान्
तमु	-	तम्	+	क्त	=	तान्त:	/	तान्तवान्
दमु	-	दम्	+	क्त	=	दान्त:	/	दान्तवान्
भ्रमु	-	भ्रम्	+	क्त	=	भ्रान्त:	/	भ्रान्तवान्
शमु	-	शम्	+	क्त	=	शान्त:	/	शान्तवान्
श्रमु	-	श्रम्	+	क्त	=	श्रान्त:	/	श्रान्तवान्
स्यमु	-	स्यम्	+	क्त	=	स्यान्त:	/	स्यान्तवान्
अम्	-	अम्	+	क्त	=	आन्त:, अमित:	/	आन्तवान्, अमितवान्

विशेष - अम् धातु से परे आने वाले निष्ठा को 'रुष्यमत्वरसंघुषस्वनाम्' सूत्र से विकल्प से इडागम हुआ है।

यकारान्त धातु

चायृ - चाय् धातु (सेट्) -

अपचितश्च (७.२.३०) - अप उपसर्ग पूर्वक चायृ धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है तथा इडागम न होने पर चायृ धातु को विकल्प से चि आदेश होता है। यथा -

चि आदेश होने पर इडागम न करके -

अप + चाय् + क्त / अप + चि + त = अपचितः। अपचितोऽनेन गुरुः।

चि आदेश न होने पर इडागम करके - अप + चाय् + इट् + त = अपचायितः। अपचायितोऽनेन गुरुः।

स्फायी - स्फाय् धातु -

स्फायः स्फी निष्ठायाम् (६.१.२२) - स्फायी धातु को निष्ठा प्रत्यय परे रहते स्फी आदेश हो जाता है। स्फायी - स्फाय् + क्त / स्फी + त = स्फीतः / स्फीतवान्।

ओप्यायी धातु (अनिट्) -

ओदितश्च (८.२.४५) - ओदित् धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है। अतः इससे परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश कीजिये-

प्यायः पी (६.१.२८) - अनुपसर्ग ओप्यायी धातु को निष्ठा प्रत्यय परे रहते नित्य पी आदेश होता है, तथा सोपसर्ग को नहीं होता। यह व्यवस्थित विभाषा है, अतः-

१. स्वाङ्ग अर्थ में अनुपसर्ग प्याय् धातु को नित्य सम्प्रसारण होगा - ओप्यायी + क्त / प्याय् + त / पी + न = पीनं मुखम्, पीनौ बाहू, पीनं उरः।

स्वाङ्ग अर्थ न होने पर अनुपसर्ग प्याय् धातु को विकल्प से सम्प्रसारण होगा - प्यानः, पीनः स्वेदः।

२. सोपसर्गस्य न (वा.) - सोपसर्ग ओप्यायी धातु होने पर सम्प्रसारण नहीं होगा - आप्यानश्चन्द्रमाः। प्रप्यानः।

३. आङ्पूर्वस्यान्धूधसोः स्यादेव (वा.) - अन्धु, ऊधस् अर्थ होने पर, आङ् उपसर्ग पूर्वक प्यायी धातु को नित्य सम्प्रसारण होगा - आपीनो अन्धुः, आपीनम् ऊधः।

शेष यकारान्त अनिट् धातु -

लोपो व्योर्वलि (६.१.६६) - वकार और यकार का वल् परे रहते लोप होता है।

ऊयी	-	ऊय्	+	क्त	=	ऊतः	/	ऊतवान्
क्नूयी	-	क्नूय्	+	क्त	=	क्नूतः	/	क्नूतवान्
क्ष्मायी	-	क्ष्माय्	+	क्त	=	क्ष्मातः	/	क्ष्मातवान्
पूयी	-	पूय्	+	क्त	=	पूतः	/	पूतवान्

रेफान्त धातु

गूरी धातु -

नसत्तनिषत्तानुत्तप्रतूर्त्तसूर्त्तगूर्तानि छन्दसि (८.२.६१) - वेद विषय में नसत्त, निषत्त, अनुत्त, प्रतूर्त्त, सूर्त्त, गूर्त, ये शब्द निपातित किये जाते हैं। अतः वेद में -

गूरी + क्त = गूर्ता अमृतस्य। लोक में - गूर्णः।

त्वर् धातु -

ज्वरत्वरस्रिव्यविमवामुपधायाश्च (६.४.२०) - ज्वर, त्वर, स्रिवि, अव, मव इन अङ्गों के वकार तथा उपधा के स्थान में ऊठ् आदेश होता है, क्वि तथा झलादि तथा अनुनासिक प्रत्यय परे होने पर।

त्वर् धातु 'आदितश्च' सूत्र से अनिट् है, किन्तु 'रुष्यमत्वरसंघुषस्वनाम्' सूत्र से इससे निष्ठा प्रत्यय परे होने पर उसे विकल्प से इडागम होता है।

ञित्वरा + क्त - त्वर् + क्त / वकार तथा उपधा के स्थान में ऊठ् आदेश करके - त् ऊ र् + त - तूर् + त - 'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' से निष्ठा के तकार को नकार आदेश करके - तूर् + न / रषाभ्यां नो णः सूत्र से णत्व करके = तूर्णः, तूर्णवान्। इडागम होने पर - त्वरितः, त्वरितवान्।

विभाषा भावादिकर्मणोः (७.२.१७) - भाव तथा आदिकर्म अर्थ में वर्तमान क्त प्रत्यय को, विकल्प से इडागम होता है। त्वरितः, त्वरितवान् / तूर्णः, तूर्णवान्।

वेद में नसत्तनिषत्त. सूत्र से निपातन करके - त्वर् + क्त = प्रतूर्तं वाजिनम्।

शेष रेफान्त अनिट् धातु -

रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः से निष्ठा के तकार को नकार करके तथा रषाभ्यां नो णः सूत्र से न को णत्व करके -

पूरी	-	पूर्	+	क्त	=	पूर्णः	/	पूर्णवान्
चूरी	-	चूर्	+	क्त	=	चूर्णः	/	चूर्णवान्
जूरी	-	जूर्	+	क्त	=	जूर्णः	/	जूर्णवान्

धुरी	-	धुर्	+	क्त	=	धूर्णः	/	धूर्णवान्
धूरी	-	शूर्	+	क्त	=	धूर्णः	/	धूर्णवान्
शूरी	-	शूर्	+	क्त	=	शूर्णः	/	शूर्णवान्
गुरी	-	गुर्	+	क्त	=	गूर्णः	/	गूर्णवान्
गूरी	-	गूर्	+	क्त	=	गूर्णः	/	गूर्णवान्
तूरी	-	तूर्	+	क्त	=	तूर्णः	/	तूर्णवान्

लकारान्त धातु

ञिफला धातु -

अनुपसर्गात् फुल्लक्षीबकृशोल्लाघाः (८.२.५५)

उत्फुल्लसंफुल्लयोरिति वक्तव्यम् (वा.) - उपसर्ग न होने पर अथवा उत्, सम् उपसर्गों के साथ फल् धातु को फुल्ल निपातन होता है, निष्ठा परे होने पर।

उपसर्ग न होने पर - ञिफला + क्त - फल् + क्त = फुल्लः।

उत्, सम् उपसर्गों के साथ - उत्फुल्लः, संफुल्लः।

अन्य उपसर्गों के साथ फुल्ल आदेश नहीं होता - प्र + फल् + क्त /

ति च (७.४.८९) - तकारादि प्रत्यय परे होने पर चर् और फल् धातुओं के अकार को उकार आदेश होता है। प्र + फुल् + त = प्रफुल्तः। आदिकर्म अर्थ में - फलितः।

वकारान्त धातु

तुर्वी धातु -

नसत्तनिषत्तानुत्तप्रतूर्तसूर्तगूर्तानि छन्दसि (८.२.६१) - वेद विषय में नसत्त, निषत्त, अनुत्त, प्रतूर्त, सूर्त, गूर्त, ये शब्द निपातित किये जाते हैं। अतः वेद में -

तुर्वी + क्त - तुर्व् + क्त = प्रतूर्तं वाजिनम्। लोक में तूर्णः।

सिव्, ष्ठिव्, क्षिव्, क्षेव्, धाव् धातु -

च्छ्वोः शूडनुनासिके च (६.४.१९) - क्वि प्रत्यय, झलादि कित् ङित् प्रत्यय, तथा अनुनासिक प्रत्यय परे होने पर, च्छ् को श् तथा व् को ऊठ् आदेश होता है। यथा-

सिव्	+	क्त	-	सि ऊठ्	+ त -	सि ऊ	=	स्यूतः, स्यूतवान्
ष्ठिवं्	+	क्त	-	ष्ठि ऊठ्	+ त -	ष्ठि ऊ	=	ष्ठ्यूतः, ष्ठ्यूतवान्
क्षिवु	+	क्त	-	क्षि ऊठ्	+ त -	क्षि ऊ	=	क्ष्यूतः, क्ष्यूतवान्
क्षेवु	+	क्त	-	क्षे ऊठ्	+ त -	क्षे ऊ	=	क्षयूतः, क्षयूतवान्
धावु	+	क्त	-	धा ऊठ्	+ त -	धा ऊ	=	धौतः, धौतवान्

धा + ऊ + त = धौतः, में एत्येधत्यूठ्सु से वृद्धि हुई है।

स्रिव्, अव्, मव् धातु -

ज्वरत्वरस्रिव्यविमवामुपधायाश्च (६.४.२०) - ज्वर, त्वर, स्रिवि, अव, मव इन अङ्गों के **'वकार तथा उपधा के स्थान में'** ऊठ् = ऊ आदेश होता है, क्वि तथा झलादि अनुनासिक प्रत्यय परे होने पर। यथा -

स्रिव्	+	क्त	-	स्र् ऊठ्	+	त	-	स्र् ऊ	=	स्रूतः, स्रूतवान्
मव्	+	क्त	-	म् ऊठ्	+	त	-	म् ऊ	=	मूतः, मूतवान्
अव्	+	क्त	-	- ऊठ्	+	त	-	- ऊ	=	ऊतः, ऊतवान्

दिवोऽविजिगीषायाम् (८.२.४९) - दिव् धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है। यदि दिव् धातु के विषय में अविजिगीषा अर्थ हो तो। विजिगीषा जीतने की इच्छा को कहते हैं, उससे भिन्न अर्थ अविजिगीषा है।

आ + दिव् + क्त / च्छ्वोः शूडनुनासिके च से ऊठ् आदेश करके - आ + दि ऊ + न = आद्यूनः (औदरिक - पेटू), इसी प्रकार - परिद्यूनः (क्षीण)।

विजिगीषा अर्थ में - द्यूतः, द्यूतवान्

रेफोपध वकारान्त अनिट् धातु -

राल्लोपः (६.४.२१) - रेफ से उत्तर छकार और वकार का लोप हो जाता है, क्वि तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर। इस सूत्र से अन्त्य वकार का लोप करके तथा 'उपधायां च' सूत्र से उपधा के इक् को दीर्घ करके -

उर्वी	-	उर्व्	+	क्त	=	ऊर्णः	/	ऊर्णवान्
गुर्वी	-	गुर्व्	+	क्त	=	गूर्णः	/	गूर्णवान्
थुर्वी	-	थुर्व्	+	क्त	=	थूर्णः	/	थूर्णवान्
दुर्वी	-	दुर्व्	+	क्त	=	दूर्णः	/	दूर्णवान्
धुर्वी	-	धुर्व्	+	क्त	=	धूर्णः	/	धूर्णवान्
मुर्वी	-	मुर्व्	+	क्त	=	मूर्णः	/	मूर्णवान्
तुर्वी	-	तुर्व्	+	क्त	=	तूर्णः	/	तूर्णवान्

शकारान्त धातु

वश् धातु (सेट्) -

वश् + इ + क्त / 'ग्रहिज्यावयि.' सूत्र से सम्प्रसारण करके - उश् + इ + त = उशितः, उशितवान्।

कृश् धातु -

अनुपसर्गात् फुल्लक्षीबकृशोल्लाघाः (८.२.५५) - अनुपसर्ग से उत्तर होने पर फुल्ल, क्षीब, कृश, उल्लाघ शब्द निपातित किये जाते हैं। कृश् + क्त = कृशः।

उपसर्ग होने पर प्रकृशितः।

दंश्, भ्रंश् धातु (अनिट्) -

क्त प्रत्यय परे होने पर 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से इनकी उपधा के न् का लोप कीजिये। 'श्' को व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः' सूत्र से 'ष्' बनाइये। उसके बाद प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाइये।

दंश् + क्त - दंश् + त - दष् + ट = दष्टः / दष्टवान्
भ्रंशु + क्त - भ्रंश् + त - भ्रष् + ट = भ्रष्टः / भ्रष्टवान्

क्लिशू धातु -

क्लिशः क्त्वानिष्ठयोः (७.२.५०) - क्लिश तथा क्लिशू धातु से परे आने वाले क्त्वा तथा निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। क्लिष्टः, क्लिष्टवान् / क्लिशितः, क्लिशितवान्।

शेष शकारान्त अनिट् धातु -

'श्' को व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः' सूत्र से 'ष्' बनाइये। उसके बाद प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाइये।

अशू - अश् + क्त = अष्टः / अष्टवान्
क्रुश् - क्रुश् + क्त = क्रुष्टः / क्रुष्टवान्
दिश् - दिश् + क्त = दिष्टः / दिष्टवान्
दृश् - दृश् + क्त = दृष्टः / दृष्टवान्
नश् - नश् + क्त = नष्टः / नष्टवान्
भृशु - भृश् + क्त = भृष्टः / भृष्टवान्
मृश् - मृश् + क्त = मृष्टः / मृष्टवान्
रिश् - रिश् + क्त = रिष्टः / रिष्टवान्
रुश् - रुश् + क्त = रुष्टः / रुष्टवान्
लिश् - लिश् + क्त = लिष्टः / लिष्टवान्
विश् - विश् + क्त = विष्टः / विष्टवान्

स्पृश् - स्पृश् + क्त = स्पृष्टः / स्पृष्टवान्

षकारान्त धातु

शुष् धातु -

शुषः कः (८.२.५१) - शुष् शोषणे धातु से परे आने वाले निष्ठा के तकार को ककारादेश होता है। शुष + क्त / शुष् + त / शुष् + क = शुष्कः।

चक्ष् धातु -

चक्षिङः ख्याञ् (२.४.५४) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर चक्ष् ध ातु को ख्या आदेश होता है। चक्ष् + क्त / ख्या + त = ख्यातः।

त्वक्ष्, तक्ष् धातु -

स्कोः संयोगाद्योरन्ते च (८.२.२९) - पद के अन्त में तथा झल् परे रहते जो संयोग उसके आदि के सकार तथा ककार का लोप होता है। त्वक्ष् + क्त - त्वष् + त-

ष्टुना ष्टुः (८.४.४१) - सकार तवर्ग के स्थान पर षकार टवर्ग होता है, षकार टवर्ग के योग में। इस सूत्र से प्रत्यय के 'त' को 'ट' बनाकर त्वष् + ट = त्वष्टः, त्वष्टवान्।

इसी प्रकार - तक्षू + क्त - तक्ष् + त - तष् + ट = तष्टः, त्वष्टवान्।

कष् धातु -

कृच्छ्रगहनयोः कषः (७.२.२२) - कष् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है यदि उसका अर्थ कृच्छ्र तथा गहन हो तो।

अतः कृच्छ्र तथा गहन अर्थों में इडागम न होकर - कष्टं व्याकरणम्, कष्टानि वनानि। अन्य अर्थों में इडागम होकर - कषितम् सुवर्णम्।

घुषिर् धातु -

घुषिरविशब्दने (७.२.२३) - घुष् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है यदि उसका अर्थ विशब्दन (प्रतिज्ञान) न हो तो - घुष्टौ पादौ ।

विशब्दन (प्रतिज्ञान) अर्थ होने पर इडागम होता है - अवघुषितं वाक्यमाह।

सम् उपसर्ग होने पर "रुष्यमत्वरसंघुषस्वनाम्' सूत्र से विकल्प से इडागम करके - संघुष्टौ पादौ, संघुषितौ पादौ।

ञितृषा धातु -

यह धातु 'आदितश्च' सूत्र से अनिट् है। विभाषा भावादिकर्मणोः से आदिकर्म अर्थ में वेट् है। अतः आदिकर्म अर्थ में तृष्टः, तृषितः। अन्यत्र तृष्टः, तृष्टवान्

ञिधृषा धातु -

धृषिशसी वैयात्ये (७.२.१९) - ञिधृषा प्रागल्भ्ये तथा शसु हिंसायाम् धातुओं से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि शब्द का अर्थ वैयात्य (धृष्टता) हो तो। यथा - शस् - विशस्तः, धृष् - धृष्टः।

अन्य अर्थों में इडागम होने पर शस् धातु से - विशसितः। धृष् धातु से सेट् निष्ठा परे होने पर - 'निष्ठा शीङ्स्विदिमिदिक्ष्विदिधृषः' सूत्र से निष्ठा प्रत्यय के अकित् होने के कारण गुण करके - धर्षितः।

'विभाषा भावादिकर्मणोः' से भावादिकर्म अर्थ में धर्षितः, धृष्टः। भावादिकर्म में वैयात्य अर्थ में धृष् धातु का प्रयोग लोक में नहीं होता।

हृषु अलीके तथा हृष तुष्टौ धातु -

हृषेर्लोमसु (७.२.२९) - लोम अर्थ में वर्तमान हृष् धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। जैसे - हृषितं लोमभिः।

लोम अर्थ न होने पर हृषु अलीके धातु से इडागम न होकर हृष्टो देवदत्तः बनेगा, तथा हृष तुष्टौ धातु से हृषितो देवदत्तः बनेगा।

विस्मितप्रतिघातयोश्च - विस्मय और प्रतिघात अर्थ में वर्तमान हृष् धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को भी विकल्प से इडागम होता है। विस्मय अर्थ में - हृषितो देवदत्तः, हृष्टो देवदत्तः। प्रतिघात अर्थ में - हृषिता दन्ताः, हृष्टा दन्ताः।

हृष तुष्टौ	-	हृष्	+	क्त	=	हृषितः	/	हृषितवान्
हृषु अलीके	-	हृष्	+	क्त	=	हृष्टः	/	हृष्टवान्

रुष रोषे (चुरादिगण) -

रुष्यमत्वरसंघुषास्वनाम् (७.२.२८) - रुष रोषे, अम्, त्वर्, संघुष्, आ + स्वन्, धातुओं से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। इसी के सामर्थ्य से इसे णिच् भी नहीं होता है। रुष् रोषे - रुष् + क्त = रुष्टः, रुषितः, रुष्टवान्, रुषितवान्।

शेष षकारान्त अनिट् धातु -

क्ङिति च से गुणनिषेध कीजिये, 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाइये।

इष इच्छायाम्	-	इष्	+	क्त	=	इष्टः	/	इष्टवान्
ऋषी	-	ऋष्	+	क्त	=	ऋष्टः	/	ऋष्टवान्
कृष विलेखने	-	कृष्	+	क्त	=	कृष्टः	/	कृष्टवान्
जिषु	-	जिष्	+	क्त	=	जिष्टः	/	जिष्टवान्

त्विष्	-	त्विष्	+	क्त	=	त्विष्टः	/	त्विष्टवान्
तुष्	-	तुष्	+	क्त	=	तुष्टः	/	तुष्टवान्
जुषी	-	जुष्	+	क्त	=	जुष्टः	/	जुष्टवान्
द्विष्	-	द्विष्	+	क्त	=	द्विष्टः	/	द्विष्टवान्
दुष्	-	दुष्	+	क्त	=	दुष्टः	/	दुष्टवान्
पुष्	-	पुष्	+	क्त	=	पुष्टः	/	पुष्टवान्
पिष्	-	पिष्	+	क्त	=	पिष्टः	/	पिष्टवान्
प्रुषु	-	प्रुष्	+	क्त	=	प्रुष्टः	/	प्रुष्टवान्
पृषु	-	पृष्	+	क्त	=	पृष्टः	/	पृष्टवान्
प्लुषु	-	प्लुष्	+	क्त	=	प्लुष्टः	/	प्लुष्टवान्
मिषु	-	मिष्	+	क्त	=	मिष्टः	/	मिष्टवान्
मृषु	-	मृष्	+	क्त	=	मृष्टः	/	मृष्टवान्
रिष्	-	रिष्	+	क्त	=	रिष्टः	/	रिष्टवान्
विष्	-	विष्	+	क्त	=	विष्टः	/	विष्टवान्
विषु	-	विष्	+	क्त	=	विष्टः	/	विष्टवान्
वृषु	-	वृष्	+	क्त	=	वृष्टः	/	वृष्टवान्
घृषु	-	घृष्	+	क्त	=	घृष्टः	/	घृष्टवान्
शिष्	-	शिष्	+	क्त	=	शिष्टः	/	शिष्टवान्
श्रिषु	-	श्रिष्	+	क्त	=	श्रिष्टः	/	श्रिष्टवान्
श्लिष्	-	श्लिष्	+	क्त	=	श्लिष्टः	/	श्लिष्टवान्
श्लिषु	-	श्लिष्	+	क्त	=	श्लिष्टः	/	श्लिष्टवान्

सकारान्त धातु

वस् धातु (सेट्) -

'वसतिक्षुधोरिट्' (७.२.५२) सूत्र से यह धातु निष्ठा में सेट् है। वस् + इट् + क्त - 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' सूत्र से सम्प्रसारण करके - उस् + इ + त -

शासिवसिघसीनाञ्च (८.३.६०) - इण् और कवर्ग से परे आने वाले शास्, वस्, घस् धातुओं के स् को ष् होता है। उष् + इ + त = उषितः, उषितवान्।

शासु अनुशिष्टौ धातु (अनिट्) -

शास इदङ्हलोः (६.४.३४) - शास् अङ्ग की उपधा को इकारादेश होता है,

अङ् तथा हलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर। शास् + क्त - शिस् + त - शासिवसिघसीनाञ्च से स् के स्थान पर ष् आदेश करके - शिष् + त / ष्टुना ष्टुः से त को ष्टुत्व करके - शिष्टः, शिष्टवान्।

अस् (अदादिगण) धातु -

अस्तेर्भूः (२.४.५२) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अस् धातु को भू आदेश होता है। अस् + क्त / भू + त = भूतः, भूतवान्।

अस् (दिवादिगण) धातु -

अस्यतेर्भावे (वा.) - अस् धातु से, परे आने वाले, भावार्थक निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है - जैसे - असितम् अनेन।

अस् धातु से, परे आने वाले, आदिकर्मार्थक निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता है - जैसे - अस्तः काण्डः।

ध्वंसु, स्त्रंसु, भ्रंसु, शंसु, अनिट् धातु -

ये नलोपी अनिट् धातु हैं। अतः क्त प्रत्यय परे होने पर 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से इनकी उपधा के न् का लोप कीजिये।

ध्वंसु	-	ध्वंस्	+	क्त	=	ध्वस्तः	/	ध्वस्तवान्
स्त्रंसु	-	स्त्रंस्	+	क्त	=	स्त्रस्तः	/	स्त्रस्तवान्
भ्रंसु	-	भ्रंस्	+	क्त	=	भ्रस्तः	/	भ्रस्तवान्
शंसु	-	शंस्	+	क्त	=	शस्तः	/	शस्तवान्

कुंस् धातु -

यह नलोपी सेट् धातु है। अतः 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - कुंस् + इ + क्त - कुस् + इ + त = कुसितः / कुसितवान्।

कस् धातु

'ग्रसितस्कभित'. सूत्र से वेद में इनसे परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम नहीं होता। यथा - उत्तानाया हृदयं यद् विकस्तम्। लोक में इडागम होकर विकसितम्।

ग्रस् धातु

'ग्रसितस्कभित'. सूत्र से वेद में ग्रसु धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को इडागम होकर - ग्रसितं वा एतत् सोमस्य बनेगा, किन्तु लोक में इडागम न होकर ग्रस्तम् ही बनेगा।

शेष सकारान्त धातु - क्ङिति च से गुणनिषेध करके -

क्नसु	- क्नस्	+	क्त	=	क्नस्तः	/	क्नस्तवान्
घस्	- घस्	+	क्त	=	घस्तः	/	घस्तवान्
ग्लसु	- ग्लस्	+	क्त	=	ग्लस्तः	/	ग्लस्तवान्
जसु	- जस्	+	क्त	=	जस्तः	/	जस्तवान्
तसु	- तस्	+	क्त	=	तस्तः	/	तस्तवान्
दसु	- दस्	+	क्त	=	दस्तः	/	दस्तवान्
मसी	- मस्	+	क्त	=	मस्तः	/	मस्तवान्
त्रसी	- त्रस्	+	क्त	=	त्रस्तः	/	त्रस्तवान्
यसु	- यस्	+	क्त	=	यस्तः	/	यस्तवान्
वसु	- वस्	+	क्त	=	वस्तः	/	वस्तवान्
आङः शासु	- आशास्	+	क्त	=	आशास्तः	/	आशास्तवान्
ष्णसु	- स्नस्	+	क्त	=	स्नस्तः	/	स्नस्तवान्
ष्णुसु	- स्नुस्	+	क्त	=	स्नुस्तः	/	स्नुस्तवान्
शसु	- शस्	+	क्त	=	विशसितः	/	विशसितवान्

शसु धातु से वैयात्य अर्थ होने पर 'धृषिशसी वैयात्ये' से विशस्तः।

हकारान्त धातु

ग्रह् धातु (सेट्) -

यह धातु सेट् है। ग्रह् + इ + क्त / ग्रह् + इ + त / ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टि-विचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च सूत्र से सम्प्रसारण करके - गृह् + इ + त / ग्रहोऽलिटि दीर्घः से इ को दीर्घ करके - गृहीतः / गृहीतवान्।

नह् धातु (अनिट्) -

नहो धः - नह धातु के हकार के स्थान पर धकार आदेश से होता है झल् परे रहते तथा पदान्त में। नह् + क्त - नध् + त / अब देखिये कि धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर 'ध्' आ गया है।

धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर आने पर -

प्रत्यय के त, थ को 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से ध बनाइये - नध् + त = नध् + ध / अब धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर ध् को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व करके उसी वर्ग का तृतीयाक्षर द् बनाइये। नध् + ध - नद् + ध = नद्धः, नद्धवान्।

दुह्, दह्, दिह् धातु (अनिट्) -

दादेर्धातोः घः (८.२.६८) - दकार आदि में है जिस धातु के उसके हकार के स्थान पर घकार आदेश होता है झल् परे रहते तथा पदान्त में।

इनके 'ह्' को 'दादेर्धातोर्घः' सूत्र से घ् बनाइये - दुह् + क्त / दुघ् + त / प्रत्यय के 'त' को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से 'ध' करके - दुघ् + ध / अब धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर 'घ्' को 'झलां जश् झशि सूत्र से जश्त्व करके, उसी वर्ग का तृतीयाक्षर 'ग्' बनाइये - दुग् + ध = दुग्ध - दुग्धः दुग्धवान्।

इसी प्रकार - दिह् - दिग्धः, दिग्धवान्। दह् - दग्धः, दग्धवान्।

द्रुह्, मुह् ,स्नुह्, स्निह् धातु (अनिट्) -

वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम् (८.२.३३) - द्रुह्, मुह् ,स्नुह्, स्निह् धातुओं के ह् को विकल्प से ढ् तथा 'घ्' होते हैं, झल् परे होने पर।

'ह्' के स्थान पर 'घ्' होने पर -

द्रुह् + क्त - 'वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम्' सूत्र से ह् को घ् करके - द्रुघ् + त / प्रत्यय के 'त' को 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से 'ध' करके - द्रुघ् + ध / 'झलां जश् झशि' सूत्र से 'घ्' को जश्त्व करके, उसी वर्ग का तृतीयाक्षर 'ग्' बनाकर - द्रुग् + ध = द्रुग्धः, द्रुग्धवान्।

इसी प्रकार मुह् से मुग्धः, मुग्धवान् / स्नुह् से स्नुग्धः, स्नुग्धवान् / स्निह् से स्निग्धः, स्निग्धवान्।

'ह्' के स्थान पर 'ढ्' होने पर -

द्रुह् + क्त / द्रुढ् + त / प्रत्यय के त को 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से 'ध' करके - द्रुढ् + ध / 'ष्टुना ष्टुः' से प्रत्यय के ध् को ष्टुत्व करके द्रुढ् + ढ / ढो ढे लोपः से पूर्व ढकार का लोप करके द्रु + ढ / 'ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' (६.३.१११) से उ को दीर्घ करके = द्रूढः, द्रूढवान्। इसी प्रकार - मुह् से मूढः, मूढवान् / स्नुह् से स्नूढः, स्नूढवान् / स्निह् से स्नीढः, स्नीढवान् बनाइये।

वह् धातु -

वह् + क्त / वह् + त / 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' सूत्र से व को सम्प्रसारण करके तथा 'हो ढः' सूत्र से ह् के स्थान पर ढ् आदेश करके - उढ् + त / 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से प्रत्यय के त को धत्व करके - उढ् + ध / 'ष्टुना ष्टुः' से ध् को ष्टुत्व करके

- उढ् + ढ / 'ढो ढे लोपः' सूत्र से पूर्व 'ढ्' का लोप करके - उ + ढ / 'ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' सूत्र से 'उ' को दीर्घ करके = ऊढः, ऊढवान्।

सह् धातु -

सह् + क्त / सह् + त / हो ढः सूत्र से ढत्व करके - सढ् + त / 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से प्रत्यय के त को धत्व करके - सढ् + ध / 'ष्टुना ष्टुः' से ष्टुत्व करके - सढ् + ढ / पूर्व 'ढ्' का 'ढो ढे लोपः' सूत्र से लोप करके - स + ढ / 'अ' के स्थान पर 'सहिवहोरोदवर्णस्य' सूत्र से 'ओ' आदेश करके - सोढः, सोढवान्।

रुह्, लिह्, मिह्, गुह् धातु -

रुह् + क्त / 'हो ढः' सूत्र से ढत्व करके - रुढ् + त / 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से प्रत्यय के त को धत्व करके - रुढ् + ध / 'ष्टुना ष्टुः' से ष्टुत्व करके - रुढ् + ढ / पूर्व 'ढ्' का 'ढो ढे लोपः' सूत्र से लोप करके - रु + ढ / 'ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः' सूत्र से 'उ' को दीर्घ करके - रूढः, रूढवान्। इसी प्रकार -

रुह्	-	रुह्	+	क्त	=	रूढः	/ रूढवान्
लिह्	-	लिह्	+	क्त	=	लीढः	/ लीढवान्
मिह्	-	मिह्	+	क्त	=	मीढः	/ मीढवान्
गुहू	-	गुह्	+	क्त	=	गूढः	/ गूढवान्

तृंहू - तृंह् धातु -

'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से इनकी उपधा के न् का लोप करके - तृह् + त / 'हो ढः' सूत्र से ढत्व करके - तृढ् + त / 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से प्रत्यय के त को ध करके - तृढ् + ध / 'ष्टुना ष्टुः' से ष्टुत्व करके - तृढ् + ढ / पूर्व 'ढ्' का 'ढो ढे लोपः' सूत्र से लोप करके - तृ + ढ = तृढः, तृढवान्।

दृहि - दृंह्, दृह् धातु -

'दृढः स्थूलबलयोः (७.२.२०)' सूत्र से स्थूल तथा बलवान् अर्थ में निपातन करके - दृढः बनाइये। अन्यत्र इडागम करके - दृंह् + इ + क्त = दृंहितम्, दृंहितवान्। दृहितम्, दृहितवान्।

वृहि - वृंह्, वृह् धातु -

'प्रभौ परिवृढः (७.२.२१)' सूत्र से परिवार का प्रमुख कुटुम्बी अर्थ होने पर निपातन से - परिवृढः (कुटुम्बी)। अन्यत्र इडागम करके - परि + वृंह् + इ + क्त

/ परिवृंह् + इ + त = परिवृंहितम्, परिवृंहितवान्। परिवृहितम्, परिवृहितवान्।

वाह् धातु -

'क्षुब्धस्वान्तध्वान्तलग्न' सूत्र से वाह् धातु से परे निष्ठा प्रत्यय आने पर भृश् अर्थ में 'बाढम्' शब्द निपातन से बनता है। अतः भृश अर्थ में बनेगा बाढम् तथा अन्य अर्थों में बनेगा वाहितम्।

शेष हकारान्त धातु -

इन धातुओं के अलावा जितने भी हकारान्त धातु बचे, उनके 'ह्' को 'हो ढः' सूत्र से 'ढ्' बनाइये / प्रत्यय के त को 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से 'ध' करके ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके ढ बनाइये। अब ढो ढे लोपः से पूर्व ढकार का लोप कर दीजिये -

गाहू	-	गाह्	+	क्त	=	गाढः	/	गाढवान्
गृहू	-	गृह्	+	क्त	=	गृढः	/	गृढवान्
तृहू	-	तृह्	+	क्त	=	तृढः	/	तृढवान्
स्तृह्	-	स्तृह्	+	क्त	=	स्तृढः	/	स्तृढवान्
बृहू	-	बृह्	+	क्त	=	बृढः	/	बृढवान्
वृहू	-	वृह्	+	क्त	=	वृढः	/	वृढवान्

भ्वादिगण से क्र्यादिगण तक के बचे हुए हलन्त धातुओं के रूप बनाने की विधि

इनके दो वर्ग बनाइये -

१. भ्वादिगण के वे सेट् धातु जिनकी उपधा में 'उ' है -

उदुपधाद् भावादिकर्मणोरन्यतरस्याम् -

(अन्तिम वर्ण के ठीक पूर्व वाला वर्ण उपधा कहलाता है। जैसे - द्युत्, मुद्, स्फुट्, आदि में 'उ' उपधा है। जिनकी उपधा में 'उ' हो ऐसे धातुओं को उदुपध धातु कहते हैं।)

यदि धातु 'उदुपध' हो और भ्वादिगण का हो, तथा उससे परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय सेट् हो और उस निष्ठा प्रत्यय का अर्थ भाव या आदिकर्म (कार्य करना प्रारम्भ किया) हो, तब ऐसे उदुपध धातुओं से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय विकल्प से कित्वत् माना जाता है। **(आदिकर्म अर्थ को प्रायः प्र उपसर्ग से व्यक्त करते हैं।)**

कित् होने पर क्ङिति च सूत्र से 'उ' को गुण नहीं होगा। कित् न होने पर

'उ' को 'पुगन्तलघूपधस्य च से गुण होकर 'ओ' हो जायेगा। अतः इनसे दो दो रूप बनेंगे।

जैसे - आदिकर्म अर्थ में - मुद् - प्रमुदितः देवदत्तः / प्रमोदितः देवदत्तः।

भाव अर्थ में - मुदितं देवदत्तेन / मोदितं देवदत्तेन आदि।

इसी प्रकार आदिकर्म अर्थ में प्रद्युतितः, प्रद्योतितः। भाव अर्थ में द्युतितमनेन, द्योतितमनेन, आदि बनाइये। भ्वादिगण के ये उदुपध धातु इस प्रकार हैं -

उख्	+	क्त	=	ओखितः	उखितः	/	ओखितवान्	उखितवान्
कुक्	+	क्त	=	कोकितः	कुकितः	/	कोकितवान्	कुकितवान्
कुच्	+	क्त	=	कोचितः	कुचितः	/	कोचितवान्	कुचितवान्
रुच्	+	क्त	=	रोचितः	रुचितः	/	रोचितवान्	रुचितवान्
शुच्	+	क्त	=	शोचितः	शुचितः	/	शोचितवान्	शुचितवान्
तुज्	+	क्त	=	तोजितः	तुजितः	/	तोजितवान्	तुजितवान्
मुज्	+	क्त	=	मोजितः	मुजितः	/	मोजितवान्	मुजितवान्
घुट्	+	क्त	=	घोटितः	घुटितः	/	घोटितवान्	घुटितवान्
रुट्	+	क्त	=	रोटितः	रुटितः	/	रोटितवान्	रुटितवान्
लुट्	+	क्त	=	लोटितः	लुटितः	/	लोटितवान्	लुटितवान्
स्फुट्	+	क्त	=	स्फोटितः	स्फुटितः	/	स्फोटितवान्	स्फुटितवान्
उठ्	+	क्त	=	ओठितः	उठितः	/	ओठितवान्	उठितवान्
रुठ्	+	क्त	=	रोठितः	रुठितः	/	रोठितवान्	रुठितवान्
लुठ्	+	क्त	=	लोठितः	लुठितः	/	लोठितवान्	लुठितवान्
शुठ्	+	क्त	=	शोठितः	शुठितः	/	शोठितवान्	शुठितवान्
तुड्	+	क्त	=	तोडितः	तुडितः	/	तोडितवान्	तुडितवान्
प्रुड्	+	क्त	=	प्रोडितः	प्रुडितः	/	प्रोडितवान्	प्रुडितवान्
मुड्	+	क्त	=	मोडितः	मुडितः	/	मोडितवान्	मुडितवान्
हुड्	+	क्त	=	होडितः	हुडितः	/	होडितवान्	हुडितवान्
घुण्	+	क्त	=	घोणितः	घुणितः	/	घोणितवान्	घुणितवान्
च्युत्	+	क्त	=	च्योतितः	च्युतितः	/	च्योतितवान्	च्युतितवान्
जुत्	+	क्त	=	जोतितः	जुतितः	/	जोतितवान्	जुतितवान्
युत्	+	क्त	=	योतितः	युतितः	/	योतितवान्	युतितवान्

श्चुत् + क्त = श्चोतित: श्चुतित: / श्चोतितवान् श्चुतितवान्
श्च्युत् + क्त = श्च्योतित: श्च्युतित: / श्च्योतितवान् श्च्युतितवान्
स्तुच् + क्त = स्तोचित: स्तुचित: / स्तोचितवान् स्तुचितवान्
द्युत् + क्त = द्योतित: द्युतित: / द्योतितवान् द्युतितवान्
गुद् + क्त = गोदित: गुदित: / गोदितवान् गुदितवान्
मुद् + क्त = मोदित: मुदित: / मोदितवान् मुदितवान्
बुध् + क्त = बोधित: बुधित: / बोधितवान् बुधितवान्
चुप् + क्त = चोपित: चुपित: / चोपितवान् चुपितवान्
तुप् + क्त = तोपित: तुपित: / तोपितवान् तुपितवान्
त्रुप् + क्त = त्रोपित: त्रुपित: / त्रोपितवान् त्रुपितवान्
तुफ् + क्त = तोफित: तुफित: / तोफितवान् तुफितवान्
त्रुफ् + क्त = त्रोफित: त्रुफित: / त्रोफितवान् त्रुफितवान्
क्षुभ् + क्त = क्षोभित: क्षुभित: / क्षोभितवान् क्षुभितवान्
स्तुभ् + क्त = स्तोभित: स्तुभित: / स्तोभितवान् स्तुभितवान्
तुभ् + क्त = तोभित: तुभित: / तोभितवान् तुभितवान्
कुल् + क्त = कोलित: कुलित: / कोलितवान् कुलितवान्
पुल् + क्त = पोलित: पुलित: / पोलितवान् पुलितवान्
हुल् + क्त = होलित: हुलित: / होलितवान् हुलितवान्
शुभ् + क्त = शोभित: शुभित: / शोभितवान् शुभितवान्
क्रुश् + क्त = क्रोशित: क्रुशित: / क्रोशितवान् क्रुशितवान्
घुष् + क्त = घोषित: घुषित: / घोषितवान् घुषितवान्
रुष् + क्त = रोषित: रुषित: / रोषितवान् रुषितवान्
उष् + क्त = ओषित: उषित: / ओषितवान् उषितवान्
पुष् + क्त = पोषित: पुषित: / पोषितवान् पुषितवान्
प्रुष् + क्त = प्रोषित: प्रुषित: / प्रोषितवान् प्रुषितवान्
प्लुष् + क्त = प्लोषित: प्लुषित: / प्लोषितवान् प्लुषितवान्
तुस् + क्त = तोसित: तुसित: / तोसितवान् तुसितवान्
उह् + क्त = ओहित: उहित: / ओहितवान् उहितवान्

तुह्	+	क्त	=	तोहितः	तुहितः	/	तोहितवान्	तुहितवान्
दुह्	+	क्त	=	दोहितः	दुहितः	/	दोहितवान्	दुहितवान्

भ्वादिगण से क्र्यादिगण के शेष हलन्त धातु

अब भ्वादिगण से क्र्यादिगण के जो भी हलन्त धातु, बच गये हैं, वे सब के सब सेट् ही हैं, अतः इनसे लगने वाले क्त प्रत्यय के आदि में इट् = लगेगा ही।

इन बचे हुए धातुओं में 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध होता है और अन्य कोई कार्य नहीं होता। अतः इन शेष धातुओं में बिना किसी परिवर्तन के इस 'इतः' 'इतवान्' प्रत्यय को जोड़ दीजिये, तो निष्ठा प्रत्ययान्त रूप तैयार हो जायेंगे। जैसे -

पठ् + इतः = पठितः, पठितवान् / लिख् + इतः = लिखितः, लिखितवान् / चल् + इतः = चलितः, चलितवान् / निन्द् + इतः = निन्दितः, निन्दितवान् / बाध् + इतः = बाधितः, बाधितवान् / एध् + इतः = एधितः, एधितवान् / गुध् + इतः = गुधितः, गुधितवान् / कुच् + क्त = कुचितः, कुचितवान्, आदि।

वर्ग - ३

चुरादिगण के ण्यन्त धातु तथा अन्य ण्यन्त धातु

णिच् प्रत्यय दो प्रकार का होता है। एक तो चुरादिगण का स्वार्थिक णिच् तथा दूसरा हेतुमति च सूत्र से लगने वाला प्रेरणार्थक णिच् प्रत्यय।

चुरादिगण के तथा प्रेरणार्थक धातुओं के अन्त में 'णिच्' प्रत्यय लगा होने से वे णिजन्त धातु हैं। जैसे - चुर् + णिच् = चोरि। पठ् + णिच् = पाठि। लिख् + णिच् = लेखि आदि। सारे णिजन्त धातुओं के अन्त में 'णिच्' प्रत्यय का 'इ' रहता ही है।

णिच् प्रत्यय लगने से धातु अनेकाच् हो जाते हैं। अनेकाच् हो जाने के कारण सारे णिजन्त धातु सेट् होते हैं। अतः इनसे लगने वाले क्त प्रत्यय के आदि में 'इट् = इ' लगेगा ही।

निष्ठायां सेटि (६.४.५२) - सेट् निष्ठा परे होने पर णिजन्त धातु के 'णि=इ' का लोप हो जाता है। यथा - कथि + इट् + क्त / णिच् का लोप करके - कथ् + इ + त = कथितः, कथितवान्। इसी प्रकार - गणि से गणितः, गणितवान्। नाटि से नाटितः, नाटितवान्।

कुछ विशेष ण्यन्त धातु हैं, इनके दो दो रूप बनते हैं -

वा दान्तशान्तपूर्णदस्तस्पष्टच्छन्नज्ञप्ताः (७.२.२७) - ण्यन्त दम् धातु, शम्, पूरी, दस्, स्पश्, छद्, ज्ञप् धातु से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है। इनके उदाहरण इस प्रकार हैं - दान्तः, दमितः / शान्तः, शमितः / पूर्णः, पूरितः / दस्तः, दासितः / स्पष्ट, स्पाशितः / छन्नः, छादितः / ज्ञप्तः, ज्ञपितः।

णेरध्ययने वृत्तम् (७.२.२६) - ण्यन्त वृत् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है, यदि उसका अर्थ अध्ययन हो तो। अतः अध्ययन अर्थ में बनेगा - वृत्तं पारायणं देवदत्तेन। अध्ययन अर्थ न होने पर इडागम होकर - वर्तितम् बनेगा।

रुष्यमत्वरसंघुषास्वनाम् (७.२.२८) - रुष रोषे (चुरादिगण), अम्, त्वर्, संघुष्, आ + स्वन्, धातुओं से परे आने वाले निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है।

इसी सूत्र के सामर्थ्य से रुष् धातु से निष्ठा परे होने पर णिच् प्रत्यय भी नहीं होता। इडागम न होने पर - रुष् + क्त = रुष्टः, रुष्टवान्। इडागम होने पर - रुषितः, रुषितवान्।

वर्ग - ४

अन्य प्रत्ययान्त धातु

सन्नन्त धातु

सन्नन्त धातुओं के अन्त में सदा ह्रस्व 'अ' होता है। इस 'अ' का 'अतो लोपः' सूत्र से लोप करके जो बचे उसमें 'इत' लगाइये। जैसे -

जिगमिष + इतः / अतो लोपः से अ का लोप करके - जिगमिष् + इतः = जिगमिषितः। इसी प्रकार - पिपठिष + इतः = पिपठिषितः।

यङन्त धातु

यङन्त धातुओं के अन्त में सदा 'य' ही होता है। यदि इस 'य' के पहिले अच् हो तब इस 'य के अ का' अतो लोपः सूत्र से लोप कीजिये। जैसे - लोलूय + इतः = लोलूयितः।

यदि इस 'य' के पहिले हल् हो तब 'अतो लोपः' सूत्र से अ का और 'यस्य हलः' सूत्र से य् का लोप कर दीजिये। जैसे - बेभिद्य + इतः = बेभिदितः।

क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्यय से बने हुए धातु

क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्यय से बने हुए धातुओं के अन्त में भी सदा 'य' ही होता है। इस 'य' के पहिले चाहे 'अच्' हो चाहे हल् हो, इस 'य' का 'यस्य हलः' सूत्र से विकल्प से ही लोप कीजिये। जैसे - समिध्य + इतः = समिधितः, समिध्यितः।

❀ ❀ ❀

क्त्वा प्रत्यय

समानकर्तृकयोः पूर्वकाले (३.४.२१) - समान कर्ता है जिन दो क्रियाओं का, उनमें जो पूर्वकाल में वर्तमान धातु, उससे क्त्वा प्रत्यय होता है।

तात्पर्य यह कि जब कोई एक ही कर्ता, एक क्रिया करके दूसरी क्रिया करता है, तब पहिली क्रिया को बतलाने वाला जो धातु होता है, उससे क्त्वा प्रत्यय लगाया जाता है। जैसे - देवदत्त जाकर पढ़ता है।

यहाँ एक ही कर्ता देवदत्त, जाने की क्रिया करके पढ़ने की क्रिया कर रहा है, अतः पहिली क्रिया को बतलाने वाला जो धातु गम्, उससे क्त्वा प्रत्यय लगाया जाता है।

गम् + क्त्वा = गत्वा। वाक्य बना - देवदत्तः गत्वा पठति।

इसी प्रकार - पठित्वा खादति - पढ़कर खाता है। खादित्वा पिबति - खाकर पीता है। पीत्वा स्वपिति - पीकर सोता है। स्मृत्वा रोदिति - स्मरण करके रोता है। दृष्ट्वा हसति - देखकर हँसता है, आदि वाक्यों में क्त्वा प्रत्यय का प्रयोग करना चाहिये।

अष्टाध्यायी में क्त्वा प्रत्यय लगाने वाले सूत्र आगे 'सूत्रों की यथाक्रम व्याख्या' में व्याख्यात हैं। ये इस प्रकार हैं -

अलंखल्वोः प्रतिषेधयोः प्राचां क्त्वा - ३.४.१८
उदीचां माङो व्यतीहारे - ३.४.१९
परावरयोगे च - ३.४.२०
समानकर्तृकयोः पूर्वकाले - ३.४.२१
आभीक्ष्ण्ये णमुल् च - ३.४.२२
न यद्यनाकाङ्क्षे - ३.४.२३
विभाषाग्रेप्रथमपूर्वेषु - ३.४.२४
अव्ययेऽयथाभिप्रेताख्याने कृञः क्त्वाणमुलौ - ३.४.५९
तिर्यच्यपवर्गे - ३.४.६०
स्वाङ्गे तत्प्रत्यये कृभ्वोः - ३.४.६१
नाधार्थप्रत्यये च्व्यर्थे - ३.४.६२
तूष्णीमि भुवः - ३.४.६३
अन्वच्यानुलोम्ये - ३.४.६४

क्त्वा प्रत्यय में लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की इत्संज्ञा होकर तस्य लोपः सूत्र से उसका लोप होकर 'त्वा' शेष बचता है। अतः क्त प्रत्यय कित् आर्धधातुक प्रत्यय है।

क्त्वातोसुन्कसुनः (१.१.४०) - क्त्वा, तोसुन् और कसुन् प्रत्यय से अन्त होने वाले शब्दों की अव्यय संज्ञा होती है।

अतः क्त्वा प्रत्यय से बने हुए सारे शब्द अव्यय ही होंगे। इसलिये इनसे परे आने वाली स्वादि विभक्तियों का 'अव्ययादाप्सुपः' सूत्र से लोप हो जायेगा।

धातुओं में प्रत्यय प्रत्यय लगाने के पहिले हमें बहुत सारी बातें ज्ञात होना अनिवार्य है। इन सबको भगवान् पाणिनि ने अष्टाध्यायी में एक एक प्रकरण में अलग अलग स्पष्ट करके रखा है।

उसी का आश्रय लेकर इन्हें हम भी अलग अलग करके आपके लिये रख रहे हैं। इन सिद्धान्तों को अलग अलग बुद्धि में स्थिर करके सारे धातुओं में क्त्वा प्रत्यय को लगाया जा सकता है। ये प्रकरण इस प्रकार हैं -

१. धात्वादेश

सबसे पहिले हमें यह जानना चाहिये कि क्त्वा प्रत्यय के लगने पर किस धातु में क्या क्या परिवर्तन होंगे। ये इस प्रकार हैं -

१. अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति (२.४.३६) - अद् धातु को जग्ध् आदेश होता है ल्यप् तथा तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर।

२. **अस्तेर्भूः** (२.४.५२) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अस् धातु को भू आदेश होता है। अस् + क्त्वा = भूत्वा।

३. **ब्रुवो वचिः** (२.४.५३) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ब्रू धातु को वच् आदेश होता है। ब्रू + क्त्वा = उक्त्वा।

४. **चक्षिङः ख्याञ्** (२.४.५४) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर चक्ष् धातु को ख्या आदेश होता है। चक्ष् + क्त्वा = ख्यात्वा।

५. **अजेर्व्यघञपोः** (२.४.५६) - घञ्, अप् को छोड़कर शेष सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अज् धातु को वी आदेश होता है। अज् + क्त्वा = वीत्वा।

६. **आदेच उपदेशेऽशिति** (६.१.४५) - अशित् प्रत्यय परे होने पर सारे एजन्त धातुओं को 'आ' अन्तादेश होता है। जैसे - ग्लै + क्त्वा - ग्ला + त्वा = ग्लात्वा। म्लै + क्त्वा - म्ला + त्वा = म्लात्वा। ध्यै + क्त्वा - ध्या + त्वा = ध्यात्वा।

२. क्त्वा प्रत्यय के लिये विशेष इडागम व्यवस्था

आर्धधातुक प्रत्ययों के लिये सामान्य इडागम व्यवस्था पृष्ठ १६४ - १७२ पर देखिये। उसे बुद्धिस्थ करने के बाद ही क्त्वा प्रत्यय के लिये इस विशेष इडागम व्यवस्था को देखिये।

श्र्युकः किति (७.२.११) - श्रि धातु तथा सारे उगन्त अर्थात् उकारान्त, ऊकारान्त, ऋकारान्त और ॠकारान्त धातुओं से परे आने कित् प्रत्ययों को इडागम नहीं होता।

जॄव्रश्च्योः क्त्वि (७.२.५५) - जॄ धातु तथा व्रश्च् धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय को इट् का आगम होता है।

पूङश्च (७.२.५१) - पूङ् धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इट् का आगम होता है।

इनके अनुसार अजन्त धातुओं से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय की इडागम व्यवस्था इस प्रकार बनती है

अजन्त धातुओं में श्वि, डीङ्, शीङ् तथा जॄ इन चार धातुओं से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है।

श्वि - श्वयित्वा / डीङ् - डयित्वा / शीङ् - शयित्वा / जॄ - जरित्वा।

अजन्त धातुओं में से केवल पूङ् धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय को विकल्प

इन पाँच अजन्त धातुओं को छोड़कर शेष अजन्त धातुओं से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय को इट् का आगम नहीं होता है। जैसे - घ्रा - घ्रात्वा / श्रि - श्रित्वा / नी - नीत्वा / हु - हुत्वा / भू - भूत्वा / कृ - कृत्वा / तॄ - तीर्त्वा, इत्यादि।

हलन्त धातुओं से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय की विशेष इडागम व्यवस्था

क्लिशः क्त्वानिष्ठयोः (७.२.५०) - क्लिशू धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्ययों को विकल्प से इडागम होता है। ध्यान रहे कि क्लिश् धातु दो हैं।

उनमें से क्र्यादिगण का **'क्लिश उपतापे'** धातु सेट् है। इसे क्त्वा तथा निष्ठा दोनों में ही नित्य इडागम प्राप्त था। इस सूत्र से यह धातु क्त्वा तथा निष्ठा, दोनों में ही वेट् हो गया।

क्लिष्टः, क्लिष्टवान्। क्लिशितः, क्लिशितवान्। क्लिष्ट्वा, क्लिशित्वा।

दिवादिगण का **'क्लिशू विबाधने'** धातु ऊदित् होने से सर्वत्र वेट् है। अतः इसे **'यस्य विभाषा'** सूत्र से निष्ठा में अनिट्त्व प्राप्त था। इस सूत्र से यह धातु निष्ठा में भी वेट् हो गया - क्लिष्टः, क्लिष्टवान्। क्लिशितः, क्लिशितवान्।

क्त्वा में तो यह वेट् था ही। अतः क्त्वा में तो दो रूप बन ही रहे थे - क्लिष्ट्वा / क्लिशित्वा।

वसतिक्षुधोरिट् (७.२.५२) - वस् तथा क्षुध् धातु अनिट् हैं किन्तु इससे परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है।

वस् - उषित्वा / क्षुध् - क्षुधित्वा।

अञ्चेः पूजायाम् (७.२.५३) - अञ्चु धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है, यदि धातु का अर्थ पूजा हो तो। यथा - अञ्चित्वा जानु जुहोति।

लुभो विमोहने (७.२.५४) - लुभ् धातु से परे आने वाले, क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है, यदि धातु का अर्थ विमोहन हो तो। यथा - लुभित्वा / लोभित्वा। विमोहन अर्थ न होने पर इडागम नहीं होगा - लुब्ध्वा।

जॄव्रश्च्योः क्त्वि (७.२.५५) - व्रश्चू धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है। यथा - व्रश्चू - व्रश्चित्वा।

उदितो वा (७.२.५६) - जिन धातुओं में 'उ' की इत् संज्ञा होती है वे धातु 'उदित्' कहलाते हैं। इनसे परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय को विकल्प से इट् का आगम होता है। जैसे - शमु - शान्त्वा, शमित्वा / तमु - तान्त्वा, तमित्वा आदि।

पाणिनीय धातुपाठ में पठित सारे उदित् धातु इस प्रकार हैं -

श्रम्भु	ष्टुभु	षृभु	षृम्भु	षिभु	षिम्भु	छमु	कमु	जमु	जिमु
झमु	क्षिवु	क्षेवु	ग्रसु	ग्लसु	जिषु	विषु	मिषु	श्रिषु	श्लिषु
प्रुषु	प्लुषु	पृषु	वृषु	मृषु	शसु	शंसु	स्यमु	अञ्चु	खनु
हृषु	घृषु	शासु	चमु	दम्भु	भ्रंशु	यसु	शमु	तमु	दमु
श्रमु	भ्रमु	क्लमु	षिधु	ष्णसु	क्नसु	ष्णुसु	असु	जसु	तसु
दसु	वसु	भृशु	ऋधु	गृधु	तञ्चु	तनु	षणु	क्षणु	क्षिणु
ऋणु	तृणु	घृणु	वनु	मनु	म्रुञ्चु	म्रुचु	म्लुचु	म्लुञ्चु	ग्रुचु
ग्लुचु	ग्लुञ्चु	कुजु	खुजु	वृतु	वृधु	शृधु	मृधु	धावु	स्रंसु

ध्वंसु भ्रंसु भ्रंशु स्रंभु रमु क्रमु दिवु वञ्चु चञ्चु तञ्चु त्वञ्चु षिवु स्रिवु ष्ठिवु आङः शासु।

इनके अलावा क्त्वा प्रत्यय परे होने पर, शेष धातुओं की इडागम व्यवस्था उनकी औत्सर्गिक व्यवस्था के अनुरूप ही होगी यह जानें।

इन सबको मिलाकर संक्षेप में क्त्वा प्रत्यय की इडागम व्यवस्था इस प्रकार बनी-

क्त्वा प्रत्यय में अजन्त धातुओं की इडागम व्यवस्था

क्त्वा प्रत्यय परे होने पर - श्वि, शीङ्, डीङ् (भ्वादिगण) तथा जॄ धातु सेट् होते हैं / पूङ् धातु वेट् होता है तथा शेष अजन्त धातु अनिट् होते हैं।

क्त्वा प्रत्यय में हलन्त धातुओं की इडागम व्यवस्था

अनिट् ककारान्त धातु
शक्

अनिट् चकारान्त धातु
पच्
मुच्
रिच्
वच्
विच्
सिच्।

वेट् चकारान्त धातु
तञ्चु
चञ्चु
अञ्चु
(पूजा अर्थ में सेट्, अन्यत्र वेट्)
म्रुञ्चु
म्रुचु
म्लुचु
म्लुञ्चु
ग्रुचु
ग्लुचु
ग्लुञ्चु
वञ्चु
तञ्चु
त्वञ्चु
तञ्चू।

अनिट् छकारान्त धातु
प्रच्छ्

अनिट् जकारान्त धातु
त्यज्
निजिर्
भज्
भञ्ज्
भुज्
भ्रस्ज्
मस्ज्
यज्
युज्
रुज्
रञ्ज्
विजिर् (रुधादि)
स्वञ्ज्
सञ्ज्
सृज्।

वेट् जकारान्त धातु
कुजु
खुजु
मृजू
अञ्जू
टुओस्फूर्जा।

वेट् णकारान्त धातु
षणु
क्षणु
क्षिणु
ऋणु
तृणु
घृणु।

वेट् तकारान्त धातु
वृतु (भ्वादिगण)

वृतु (दिवादिगण)

अनिट् दकारान्त धातु

अद्
क्षुद्
खिद्
छिद्
तुद्
नुद्
पद् (दिवादिगण)
भिद्,
विद् (दिवादिगण)
विद् (रुधादिगण)
शद्
सद्
स्विद्
स्कन्द्
हद्।

वेट् दकारान्त धातु

क्लिदू
स्यन्दू

अनिट् धकारान्त धातु

क्रुध्
बुध् (दिवादिगण)
बन्ध्
युध्
रुध्
राध्
व्यध्
साध्
शुध्
सिध्।

वेट् धकारान्त धातु

षिधु
ऋधु
गृधु
वृधु
श्रृधु
मृधु
षिधू
रध्
ऋध्।

अनिट् नकारान्त धातु

मन्
हन्।

वेट् नकारान्त धातु

खनु
तनु
वनु
मनु।

अनिट् पकारान्त धातु

आप्
छुप्
क्षिप्
तप्
तिप्
तृप् (दिवादि)
दृप् (दिवादि)
लिप्
लुप्
वप्
शप्
स्वप्
सृप्।

वेट् पकारान्त धातु

त्रपूष्
कृपू
गुपू।

अनिट् भकारान्त धातु

यभ्
रभ्
लभ्।

वेट् भकारान्त धातु

श्रम्भु
ष्टुभु
षृभु
षृम्भु
षिभु
षिम्भु
दम्भु
स्रंभु।

लुभ धातु विमोहन अर्थ में सेट् अन्यत्र अनिट्।

अनिट् मकारान्त धातु

गम्

नम्
यम्
रम्।

वेट् मकारान्त धातु

छमु
झमु
कमु
जमु
जिमु
स्यमु
चमु
शमु
तमु
दमु
श्रमु
भ्रमु
क्लमु
रमु
क्रमु
क्षमू
क्षमूष्।

वेट् वकारान्त धातु

क्षिवु
क्षेवु
धावु
दिवु
ष्ठिवु
षिवु
स्रिवु

अनिट् शकारान्त धातु

क्रुश्
दंश्
दिश्
दृश्
मृश्
रिश्
रुश्
लिश्
विश्
स्पृश्।

वेट् शकारान्त धातु

भ्रंशु
भृशु
भ्रंशु
अशू
नश्
विश्
क्लिशू धातु क्त्वा प्रत्यय परे होने पर वेट् हो जाता है।

अनिट् षकारान्त धातु

कृष्
त्विष्
तुष्
द्विष्
दुष्
पुष् (दिवादिगण)
पिष्
विष्
शिष्
शुष्
श्लिष् (दिवादि)।

वेट् षकारान्त धातु

जिषु
विषु
मिषु
श्रिषु
श्लिषु
प्रुषु
प्लुषु
पृषु
वृषु
मृषु
हृषु
घृषु
अक्षू
तक्षू
त्वक्षू
रुष्
रिष्
इष् (तुदादिगण)
निरः कुष्।

अनिट् सकारान्त धातु

घस्।

वेट् सकारान्त धातु

ग्रसु	स्रंसु	गृहू
ग्लसु	ध्वंसु	वृहू
शसु	भ्रंसु	तृन्हू
शंसु	आङ्शासु	गाहू
शासु	**अनिट् हकारान्त धातु**	गुहू
यसु	दह्	तृहू
ष्णसु	दिह्	तृंहू
क्नसु	दुह्	द्रुह्
ष्णुसु	नह्	मुह
असु	मिह्	स्नुह्
जसु	रुह्	स्निह्।
तसु	लिह्	सह्
दसु	वह्।	
वसु	**वेट् हकारान्त धातु**	

विशेष - इनसे बचे हुए सारे हलन्त धातु सेट् होते हैं।

क्त्वा प्रत्यय में लशक्वतद्धिते (१.३.८) सूत्र से क् की इत्संज्ञा होकर तस्य लोपः सूत्र से उसका लोप होकर 'त्वा' बचता है। अतः क्त प्रत्यय कित् आर्धधातुक प्रत्यय है।

३. अतिदेश

गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित् (१.२.१) - 'इङ्' धातु के स्थान पर होने वाले 'गाङ्' धातु से, तथा तुदादिगण के अन्तर्गत जो कुट् से लेकर कुङ् तक ३६ धातुओं का कुटादिगण है, उस कुटादिगण में आने वाले धातुओं से परे आने वाले, ञित् णित् से भिन्न, सारे प्रत्यय, ङित्वत् मान लिये जाते हैं। कुटादि धातु इस प्रकार हैं -

कुट्	पुट्	कुच्	गुज्	गुड्	छुर्	स्फुट्	मुट्	त्रुट्
तुट्	चुट्	छुट्	जुट्	लुट्	कुड्	पुड्	घुट्	तुड्
थुड्	स्थुड्	स्फुर्	स्फुल्	स्फुड्	चुड्	व्रुड्	क्रुड्	गुर्
कृड्	मृड्	कड्	डिप्	नू	धू	गु	ध्रु	कु = ३६

'क्त्वा' प्रत्यय भी ञित् णित् से भिन्न प्रत्यय है, अतः यह जब गाङ् या कुटादि धातुओं के बाद आता है, तब इसे ङित् प्रत्यय जैसा मान लिया जाता है।

विज इट् – तुदादि गण के विज् धातु से परे आने वाले सारे सेट् प्रत्यय ङित्वत् माने जाते हैं।

व्यचेः कुटादित्वमनसीति वक्तव्यम् (वार्तिक १.२.१) – व्यच् धातु से परे आने वाले 'अस्' से भिन्न सारे प्रत्यय ङिद्वत् होते हैं।

विभाषोर्णोः (१.२.३) – ऊर्णु धातु से परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्यय विकल्प से ङित्वत् माने जाते हैं।

न क्त्वा सेट् (१.२.१८) – सेट् क्त्वा प्रत्यय कित् नहीं होता है।

मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः क्त्वा (१.२.७) – 'न क्त्वा सेट्' से अकित् कहा गया सेट् क्त्वा प्रत्यय, इन मृडादि धातुओं से परे होने पर कित् ही होता है।

रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च (१.२.८) – रुद्, विद्, मुष्, ग्रह्, स्वप्, प्रच्छ्, इन ५ धातुओं से परे आने वाले सन् और क्त्वा प्रत्यय कित् होते हैं।

पूङः क्त्वा च (१.२.२२) – पूङ् धातु से परे आने वाले सेट् निष्ठा प्रत्यय तथा सेट् क्त्वा प्रत्यय कित् नहीं होते।

नोपधाद् थफान्ताद् वा (१.२.२३) – नकारोपध, थकारान्त तथा फकारान्त धातुओं से परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है।

वञ्चिलुञ्च्यृतश्च (१.२.२४) – वञ्च्, लुञ्च् और ऋत् धातुओं से परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है।

तृषिमृषिकृशेः काश्यपस्य (१.२.२५) – तृष्, मृष्, कृश् धातुओं से परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है।

रलो व्युधाद् हलादेः संश्च (१.२.२६) – ऐसे हलादि धातु, जिनकी उपधा में इ या उ हो, अन्त में रल् हो अर्थात् अन्त में य्, व् को छोड़कर कोई भी व्ययञ्जन हो, तो उनसे परे आने वाला सेट् क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है।

इन सूत्रों में कहे हुए धातुओं के रूप बनाते समय हमें सावधानी रखना चाहिये कि इनसे परे आने पर कब क्त्वा प्रत्यय कित् होता है और कब अकित् होता है।

इन अतिदेश सूत्रों को पढ़कर ही अङ्गकार्य करना प्रारम्भ करें। क्योंकि अङ्गकार्य, प्रत्यय के कित्त्व अथवा अकित्त्व पर ही निर्भर करते हैं।

४. अङ्गकार्य

जब क्त्वा प्रत्यय कित् या ङित् हो, तब इस प्रकार अङ्गकार्य कीजिये –

प्रत्यय के कित् ङित् होने पर, मुख्यत: जो भी कार्य होते हैं, वे संक्षिप्त अङ्गकार्य के प्रकरण में तथा निष्ठा प्रत्यय में बतलाये जा चुके हैं, अत: इन्हें वहीं देखें। ये कार्य मुख्यत: इस प्रकार हैं -

१. गुणनिषेध।
२. इ उ के स्थान पर इयङ् अथवा यण्। उ के स्थान पर उवङ्।
३. ऋ के स्थान पर यण्।
४. ॠकारान्त धातुओं को इर्, ईर, उर्, ऊर् आदेश।
५. अनिदित् धातुओं की उपधा के न् का लोप।
६. सम्प्रसारणी धातुओं को सम्प्रसारण।

जब क्त्वा प्रत्यय 'अकित्' हो, तब इस प्रकार अङ्गकार्य कीजिये

१. धातु के अन्तिम इक् को गुण -

सार्वधातुकार्धधातुकयो: (७.३.८४) - धातु के अन्त में आने वाले इक् को गुण होता है, कित्, ङित्, ञित्, णित्, से भिन्न सार्वधातुक अथवा आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर। गुण का अर्थ है इ, ई के स्थान पर ए / उ, ऊ के स्थान पर ओ / ऋ, ॠ के स्थान पर अर् हो जाना। शी + इ + क्त्वा = शयित्वा। जॄ + इ + क्त्वा = जरित्वा।

२. उपधा के लघु इक् को गुण -

पुगन्तलघूपधस्य च (७.३.८६) - धातु की उपधा में स्थित लघु इक् के स्थान पर गुण होता है, कित्, ङित् से भिन्न सार्वधातुक तथा आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

यथा - लिख् + इ + क्त्वा = लेखित्वा। द्युत् + इ + क्त्वा = द्योतित्वा।

विशेष अङ्गकार्यों को तत् तत् स्थलों पर बतलाते चलेंगे।

धातु में कोई भी प्रत्यय जोड़ते समय हमारी दृष्टि में तीन बातें एकदम स्पष्ट होना चाहिये।

१. इडागम विधि को पढ़कर यह निर्णय कीजिये कि जिस धातु में हम प्रत्यय जोड़ रहे हैं, वह धातु सेट् है या अनिट् या वेट्? कहीं ऐसा तो नहीं है कि क्त्वा प्रत्यय को देखकर कोई अनिट् धातु सेट् हो गया हो, या कोई सेट् धातु वेट् हो गया हो।

२. यह ज्ञान भी होना चाहिये कि क्त्वा प्रत्यय को देखकर कहीं किसी धातु को धात्वादेश होकर धातु की आकृति तो नहीं बदल रही है ?

३. यह ज्ञान भी होना चाहिये कि कहीं किसी अतिदेश सूत्र के प्रभाव से यह

क्त्वा प्रत्यय कित् जैसा अथवा कहीं ङित् जैसा तो नहीं मान लिया गया है?

इन तीन निर्णयों पर ही हमारे सारे अङ्गकार्य आधारित होंगे। ये तीनों कार्य ऊपर बतलाये जा चुके हैं।

यह सब जानकर ही अब हम धातुओं में क्त्वा प्रत्यय लगायें

ध्यान रहे कि इस ग्रन्थ में धातुओं के रूप उत्सर्गापवाद विधि से ही बनाये गये हैं। अतः इसमें हम सब धातुओं के रूप न बनाकर, केवल उन्हीं धातुओं के रूप बनायेंगे, जिनमें प्रत्यय लगने पर, धातु को, प्रत्यय को, अथवा दोनों को कुछ न कुछ परिवर्तन होता ही है।

दूसरे यह कि इसमें हम धातुओं के रूप, धातुओं के आद्यक्षर के क्रम से न बनाकर, धातुओं के अन्तिम अक्षर को वर्णमाला के क्रम से रखकर बनायेंगे। यह कार्य हम धातुओं के वर्ग बनाकर, इस प्रकार करेंगे -

वर्ग - १ - कुटादि धातु।

वर्ग - २ - भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के अजन्त धातु।

वर्ग - ३ - भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के हलन्त धातु।

वर्ग - ४ - चुरादिगण के धातु तथा अन्य णिजन्त धातु।

वर्ग - ५ - सन्, यङ्, क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्ययों से बने हुए प्रत्ययान्त धातु।

अत्यावश्यक - धातुओं में क्त्वा प्रत्यय लगाते समय यह ध्यान रखें कि जब क्त्वा प्रत्यय को इडागम होता है, तब 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से सेट् क्त्वा प्रत्यय अकित् हो जाता है। प्रत्यय के अकित् होने पर आप वे अङ्गकार्य कीजिये जो कि अकित् प्रत्ययों के लिये बतलाये गये हैं।

जब क्त्वा प्रत्यय को इडागम नहीं होता, तब क्त्वा प्रत्यय कित् होता है। प्रत्यय के कित् होने पर आप वे अङ्गकार्य कीजिये जो कि कित् प्रत्ययों के लिये बतलाये गये हैं।

अब हम धातुओं में क्त्वा प्रत्यय लगायें -

वर्ग - १ - कुटादि धातु

गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित् (१.२.१) -

'इङ्' धातु के स्थान पर होने वाले 'गाङ्' धातु से, तथा तुदादिगण के अन्तर्गत जो कुट् से लेकर कुङ् तक ३६ धातुओं का कुटादिगण है, उस कुटादिगण में आने वाले धातुओं से परे आने वाले, ञित् णित् से भिन्न, सारे प्रत्यय, ङित्वत् मान लिये जाते हैं।

अत: कुटादि धातुओं में क्त्वा प्रत्यय इस प्रकार लगायें -

गु धातु / ध्रु धातु / कुङ् धातु -

ये कुटादि धातु अनिट् हैं। अत: इनसे परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय को इडागम मत कीजिये। क्ङिति च से गुणनिषेध कीजिये -

गु + क्त्वा = गुत्वा / ध्रु + क्त्वा = ध्रुत्वा / कु + क्त्वा = कुत्वा।

नू, धू धातु - ये कुटादि धातु सेट् हैं।

न क्त्वा सेट् (१.२.१८) - सेट् क्त्वा प्रत्यय कित् नहीं होता है।

अब ध्यान दें कि सेट् क्त्वा अकित् होता है। अत: इन धातुओं से सेट् क्त्वा परे होने पर धातु को 'सार्वधातुकार्धधातुकयो:' सूत्र से गुण होना चाहिये, किन्तु 'गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित्' सूत्र से कुटादि धातुओं से परे आने वाले ञित् णित् से भिन्न, प्रत्ययों को, ङित्वत् माना जाता है। अत: सेट् क्त्वा परे होने पर भी, 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध ही होगा -

गुणनिषेध होने पर, **अचिश्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ** सूत्र से उवङ् करके -

नू	+	इट्	+	क्त्वा	-	नुव्	+ इ	+	त्वा	= नुवित्वा
धू	+	इट्	+	क्त्वा	-	धुव्	+ इ	+	त्वा	= धुवित्वा

शेष कुटादि धातु - ये कुटादि धातु सेट् हैं।

न क्त्वा सेट् - सेट् क्त्वा प्रत्यय कित् नहीं होता है।

यद्यपि सेट् क्त्वा अकित् होता है। अत: धातु की उपधा को 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण होना चाहिये, किन्तु 'गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित्' सूत्र से कुटादि धातुओं से परे आने वाले ञित् णित् से भिन्न, प्रत्ययों को, ङित्वत् माना जाता है।

अत: सेट् क्त्वा परे होने पर भी, 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध ही होगा -

कुच्	-	कुच्	+	इ	+	क्त्वा	=	कुचित्वा
गुज्	-	गुज्	+	इ	+	क्त्वा	=	गुजित्वा
कुट्	-	कुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	कुटित्वा
घुट्	-	घुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	घुटित्वा
चुट्	-	चुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	चुटित्वा
छुट्	-	छुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	छुटित्वा
जुट्	-	जुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	जुटित्वा
तुट्	-	तुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	तुटित्वा

त्रुट्	-	त्रुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	त्रुटित्वा
पुट्	-	पुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	पुटित्वा
मुट्	-	मुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	मुटित्वा
लुट्	-	लुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	लुटित्वा
(लुठ्	-	लुठ्	+	इ	+	क्त्वा	=	लुठित्वा) इत्येके।
स्फुट्	-	स्फुट्	+	इ	+	क्त्वा	=	स्फुटित्वा
मृड्	-	मृड्	+	इ	+	क्त्वा	=	मृडित्वा
कुड्	-	कुड्	+	इ	+	क्त्वा	=	कुडित्वा
क्रुड्	-	क्रुड्	+	इ	+	क्त्वा	=	क्रुडित्वा
कृड्	-	कृड्	+	इ	+	क्त्वा	=	कृडित्वा
गुड्	-	गुड्	+	इ	+	क्त्वा	=	गुडित्वा
चुड्	-	चुड्	+	इ	+	क्त्वा	=	चुडित्वा
तुड्	-	तुड्	+	इ	+	क्त्वा	=	तुडित्वा
थुड्	-	थुड्	+	इ	+	क्त्वा	=	थुडित्वा
पुड्	-	पुड्	+	इ	+	क्त्वा	=	पुडित्वा
व्रुड्	-	व्रुड्	+	इ	+	क्त्वा	=	व्रुडित्वा
स्थुड्	-	स्थुड्	+	इ	+	क्त्वा	=	स्थुडित्वा
स्फुड्	-	स्फुड्	+	इ	+	क्त्वा	=	स्फुडित्वा
डिप्	-	डिप्	+	इ	+	क्त्वा	=	डिपित्वा
गुर्	-	गुर्	+	इ	+	क्त्वा	=	गुरित्वा
छुर्	-	छुर्	+	इ	+	क्त्वा	=	छुरित्वा
स्फुर्	-	स्फुर्	+	इ	+	क्त्वा	=	स्फुरित्वा
स्फुल्	-	स्फुल्	+	इ	+	क्त्वा	=	स्फुलित्वा
कड्	-	कड्	+	इ	+	क्त्वा	=	कडित्वा

वर्ग - २

भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण के अजन्त धातुओं में क्त्वा प्रत्यय लगाना

अजन्त धातुओं का सेट्, अनिट् विज्ञान - ध्यान रहे कि क्त्वा प्रत्यय परे होने पर एकाच् अजन्त धातुओं में श्वि, शीङ्, डीङ् (भ्वादिगण) तथा जॄ धातु सेट् होते हैं /

पूङ् धातु वेट् होता है तथा शेष अजन्त धातु अनिट् होते हैं।

आकारान्त तथा एजन्त धातु

जिनके अन्त में आ है, वे धातु आकारान्त हैं - जैसे - दा, धा, ला, आदि।

जिनके अन्त में एच् अर्थात् ए, ओ, ऐ, औ हैं उन एजन्त धातुओं के अन्तिम एच् के स्थान पर 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से 'आ' आदेश होता हैं। अत: आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर एजन्त धातु भी आकारान्त बन जाते हैं। जैसे - दे - दा / धे - धा / ग्लै - ग्ला / म्लै - म्ला / शो - शा / सो - सा आदि। **क्त्वा प्रत्यय परे होने पर सारे आकारान्त धातु तथा सारे एजन्त धातु अनिट् होते हैं।**

घुसंज्ञक धातु -

दाधाघ्वदाप् (१.१.२०) -

ध्यान दें कि दारूप छह धातु हैं - दो - दा / देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा / दैप् - दा / दाप् - दा।

दारूप छह धातुओं में से - दो - दा / देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा, इन चार धातुओं की तथा धारूप धातुओं में से धेट् - धा / डुधाञ् - धा / इस प्रकार कुल ६ धातुओं की घु संज्ञा होती है। अब हम इनमें क्त्वा प्रत्यय लगायें -

दो अवखण्डने धातु -

द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति (७.४.४०) - दा, षो-सा, मा, स्था धातुओं को तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर इकारादेश होता है। दो + क्त्वा - दि + त्वा = दित्वा।

देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा, धातु -

दो दद् घो: - घु संज्ञक दा धातु के स्थान में दथ् आदेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। दा + क्त्वा / दथ् + त्वा / खरि च सूत्र से थ् को त् करके - दत् + त्वा = दत्त्वा।

दाप्, दैप् धातु -

दा + क्त्वा / दा + त्वा = दात्वा। इसी प्रकार - दै + क्त्वा / आदेच उपदेशऽशिति से आत्व होकर - दा + त्वा = दात्वा।

षो - सा धातु -

षो - सा + क्त्वा / द्यतिस्यतिमास्था. से इकारादेश करके - सि + त = सित्वा।

मा, मेङ्, माङ् धातु -

मा + क्त्वा / द्यतिस्यतिमास्था. से इकारादेश करके - मि + त्वा = मित्वा।

स्था धातु -

स्था + क्त्वा / द्यतिस्यतिमास्था. से इकारादेश करके - स्थि + त्वा = स्थित्वा।

डुधाञ् धातु -

दधातेर्हिः (७.४.४२) - डुधाञ् अङ्ग को हि आदेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। धा + क्त्वा / हि + त्वा = हित्वा।

धेट् धातु -

धे + क्त्वा / 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से ए के स्थान पर 'आ' आदेश करके - धा + त्वा -

घुमास्थागापाजहातिसां हलि (६.४.६६) - घुसंज्ञक, मा, स्था, गा, पा, ओहाक् तथा सा, इन अङ्गों को हलादि कित् ङित् आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ईकारादेश होता है।

धा + क्त्वा - धी + त्वा = धीत्वा।

ओहाक् - हा धातु -

जहातेश्च क्त्वि (७.४.४३) - ओहाक् त्यागे धातुरूप अङ्ग को क्त्वा प्रत्यय परे होने पर हि आदेश होता है। हा + क्त्वा / हि + त्वा = हित्वा।

विभाषा छन्दसि (७.४.४४) - ओहाक् त्यागे धातु को वेद में क्त्वा प्रत्यय परे होने पर विकल्प से हि आदेश होता है। हा + क्त्वा = हित्वा शरीरं यातव्यम्। हात्वा।

गै - गा / गाङ् / गा धातु -

गै - गा + क्त्वा / घुमास्थागापा. से ईकारादेश होकर - गी + त्वा = गीत्वा।

पा पाने तथा पै - पा धातु -

पूर्ववत् पा + क्त्वा / घुमास्थागापा. से ईकारादेश होकर - पी + त्वा = पीत्वा।

शो - शा, छो - छा धातु -

शाच्छोरन्यतरस्याम् (७.४.४१) - शो तथा छो अङ्ग को विकल्प से इकारादेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। शो + क्त्वा / शि + त्वा = शित्वा।

इकारादेश न होने पर = शात्वा। इसी प्रकार छो से - छित्वा, छात्वा, बनाइये।

ज्या धातु -

ज्या + क्त्वा / ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचति. सूत्र से सम्प्रसारण होकर जि + त्वा / हलः सूत्र से सम्प्रसारण को दीर्घ होकर - जी + त्वा = जीत्वा।

वेञ् धातु -

वे + क्त्वा / वचिस्वपियजादीनाम् किति से सम्प्रसारण करके - उ ए + त्वा / सम्प्रसारणाच्च से ए को पूर्वरूप करके - उ + त्वा = उत्वा।

ह्वेञ् धातु -

ह्वेञ् + क्त्वा / ह्वे + त्वा / वचिस्वपियजादीनाम् किति से सम्प्रसारण करके - ह् उ ए + त्वा / सम्प्रसारणाच्च से ए को पूर्वरूप करके - हु + त्वा / हलि च से उ को दीर्घ करके - हू + त्वा = हूत्वा।

व्येञ् धातु -

व्येञ् + क्त्वा / व्ये + त्वा / वचिस्वपियजादीनाम् किति से य् को सम्प्रसारण करके - व् इ ए + त्वा / सम्प्रसारणाच्च से ए को पूर्वरूप करके - वि + त्वा / हलि च से इ को दीर्घ करके - वी + त्वा = वीत्वा।

शेष आकारान्त धातु -

इनके अलावा अब जो भी आकारान्त धातु बचे, उन्हें कुछ मत कीजिये। धातु और प्रत्यय को सीधे जोड़ दीजिये। जैसे -

पा रक्षणे	-	पा	+	क्त्वा	=	पात्वा
ओहाङ्	-	हा	+	क्त्वा	=	हात्वा
घ्रा	-	घ्रा	+	क्त्वा	=	घ्रात्वा
ध्मा	-	ध्मा	+	क्त्वा	=	ध्मात्वा
म्ना	-	म्ना	+	क्त्वा	=	म्नात्वा
या	-	या	+	क्त्वा	=	यात्वा
क्षै	-	क्षा	+	क्त्वा	=	क्षात्वा
ओवै	-	वा	+	क्त्वा	=	वात्वा
त्रैङ्	-	त्रा	+	क्त्वा	=	त्रात्वा
श्यैङ्	-	श्या	+	क्त्वा	=	श्यात्वा
खै	-	खा	+	क्त्वा	=	खात्वा, आदि।

इकारान्त धातु

श्वि धातु -

श्वि, शीङ्, डीङ् (भ्वादिगण) धातु क्त्वा प्रत्यय में सेट् होते हैं। अतः - श्वि + इट् + क्त्वा / श्वि + इ + त्वा /

ध्यान दें कि क्त्वा प्रत्यय कित् है। अत: इसके परे होने पर क्ङिति च सूत्र से इगन्त अङ्ग को गुण नहीं होना चाहिये। किन्तु -

न क्त्वा सेट् (१.२.१८) - सेट् क्त्वा प्रत्यय कित् नहीं होता है।

इस अतिदेश सूत्र के बल से इडागम होने पर क्त्वा प्रत्यय को अकित् मान लेने से सार्वधातुकार्धधातुकयो: सूत्र से इगन्त अङ्ग को गुण करके - श्वे + इ + त्वा / एचोऽयवायाव: से ए को अयादेश करके - श्वय् + इ + त्वा = श्वयित्वा।

शेष इकारान्त धातु -

इनके अलावा अब जो भी इकारान्त धातु बचे, उन्हें कुछ मत कीजिये। धातु और प्रत्यय को सीधे जोड़ दीजिये। जैसे -

जि	-	जि	+	क्त्वा	=	जित्वा
जि	-	जि	+	क्त्वा	=	जित्वा
ज्रि	-	ज्रि	+	क्त्वा	=	ज्रित्वा
श्रिञ्	-	श्रि	+	क्त्वा	=	श्रित्वा
क्षि	-	क्षि	+	क्त्वा	=	क्षित्वा
ष्मिङ्	-	स्मि	+	क्त्वा	=	स्मित्वा
इण्	-	इ	+	क्त्वा	=	इत्वा
क्षि क्षये	-	क्षि	+	क्त्वा	=	क्षित्वा
क्षि निवासगत्यो:	-	क्षि	+	क्त्वा	=	क्षित्वा
क्षि हिंसायाम्	-	क्षि	+	क्त्वा	=	क्षित्वा
षिञ्	-	सि	+	क्त्वा	=	सित्वा, आदि।

ईकारान्त धातु

शीङ्, डीङ् (भ्वादिगण) धातु -

हम जानते हैं कि श्वि, शीङ्, डीङ् (भ्वादिगण) धातु क्त्वा प्रत्यय में सेट् होते हैं। अत: इडागम करके - शी + इट् + क्त्वा / न क्त्वा सेट् सूत्र से सेट् क्त्वा प्रत्यय को अकित् मान लेने से सार्वधातुकार्धधातुकयो: सूत्र से इगन्त अङ्ग को गुण करके - शे + इ + त्वा / एचोऽयवायाव: से ए को अयादेश करके - शय् + इ + त्वा = शयित्वा।

इसी प्रकार - डी + इट् + क्त्वा = डयित्वा।

शेष ईकारान्त धातु -

इनके अलावा अब जो भी ईकारान्त धातु बचे, उन्हें कुछ मत कीजिये। धातु

और प्रत्यय को सीधे जोड़ दीजिये। जैसे -

णीञ्	-	नी	+	क्त्वा	=	नीत्वा
वी	-	वी	+	क्त्वा	=	वीत्वा
ञिभी	-	भी	+	क्त्वा	=	भीत्वा
ह्री	-	ह्री	+	क्त्वा	=	ह्रीत्वा
धीङ्	-	धी	+	क्त्वा	=	धीत्वा
मीङ्	-	मी	+	क्त्वा	=	मीत्वा
लीङ्	-	ली	+	क्त्वा	=	लीत्वा
व्रीङ्	-	व्री	+	क्त्वा	=	व्रीत्वा
डुक्रीञ्	-	क्री	+	क्त्वा	=	क्रीत्वा, आदि।

उकारान्त धातु

ऊर्णु धातु (क्त्वा प्रत्यय में सेट्) -

विभाषोर्णोः (१.२.३) - ऊर्णु धातु से परे आने वाले सेट् आर्धधातुक प्रत्यय विकल्प से ङित्वत् माने जाते हैं।

प्रत्यय के ङित्वत् होने पर - ऊर्णु + इट् + क्त्वा / क्ङिति च सूत्र से गुणनिषेध करके - ऊर्णु + इ + त्वा / अचि श्नु. सूत्र से उ को उवङ् आदेश करके - ऊर्णुव् + इ + त्वा = ऊर्णुवित्वा।

प्रत्यय के ङित्वत् न होने पर - ऊर्णु + इट् + क्त्वा / सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से उ को गुण करके - ऊर्णो + इ + त्वा / एचोऽयवायावः से ओ को अवादेश करके - ऊर्णव् + इ + त्वा = ऊर्णवित्वा।

शेष उकारान्त धातु

ये अनिट् हैं। गुणनिषेध होने से धातु और प्रत्यय को सीधे जोड़ दीजिये -

यु	-	यु	+	क्त्वा	=	युत्वा
रु	-	रु	+	क्त्वा	=	रुत्वा
णु	-	नु	+	क्त्वा	=	नुत्वा
टुक्षु	-	क्षु	+	क्त्वा	=	क्षुत्वा
क्ष्णु	-	क्ष्णु	+	क्त्वा	=	क्ष्णुत्वा
ष्णु	-	स्नु	+	क्त्वा	=	स्नुत्वा

श्रु	-	श्रु	+	क्त्वा	=	श्रुत्वा, आदि।

ऊकारान्त धातु

ब्रू धातु -

ब्रुवो वचिः (१.४.५३) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ब्रू धातु को वच् आदेश होता है। ब्रूञ् + क्त्वा / वच् + त्वा - वच् को वचिस्वपियजादीनां किति सूत्र से सम्प्रसारण करके उ बनाइये - उच् + त्वा - उच् + त्वा / चोः कुः से च् को क् करके - उक् + त्वा = उक्त्वा।

पूङ् धातु -

पूङश्च (७.२.५१) - पूङ् धातु से परे जब आने वाले क्त्वा तथा निष्ठा प्रत्यय को विकल्प से इट् का आगम होता है।

इडागम होने पर - पू + इट् + क्त्वा / सेट् क्त्वा प्रत्यय के अकित् होने के कारण सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से गुण होकर पो + इ + त्वा / एचोऽयवायावः सूत्र से अवादेश होकर - पव् + इ + त = पवित्वा।

इडागम नहीं होने पर - क्त्वा प्रत्यय कित् ही रहेगा और प्रत्यय के कित् रहने के कारण क्ङिति च से गुण निषेध होकर - पू + क्त्वा = पूत्वा।

शेष ऊकारान्त धातु -

ये अनिट् हैं। गुणनिषेध होने से धातु और प्रत्यय को सीधे जोड़ दीजिये -

भू	-	भू	+	क्त्वा	=	भूत्वा
मूङ्	-	मू	+	क्त्वा	=	मूत्वा
षूङ्	-	सू	+	क्त्वा	=	सूत्वा
पूञ्	-	पू	+	क्त्वा	=	पूत्वा, आदि।

ऋकारान्त धातु

जागृ धातु (क्त्वा प्रत्यय में सेट्) -

जागृ + इट् + क्त्वा / क्ङिति च से गुणनिषेध प्राप्त होने पर -

जाग्रोऽविचिण्णल्ङित्सु (७.३.८५) - जहाँ वृद्धि प्राप्त हो, अथवा जहाँ गुण, वृद्धि का निषेध प्राप्त हो, वहाँ जागृ धातु को गुण ही होता है, वि, चिण्, णल्, तथा ङित् से भिन्न प्रत्यय परे होने पर। जागृ + इ + त्वा - जागर् + क्त्वा = जागरित्वा।

शेष ऋकारान्त धातु (क्त्वा प्रत्यय में अनिट्) -

गुणनिषेध होने से धातु और प्रत्यय को सीधे जोड़ दीजिये -

वृञ्	-	वृ	+	क्त्वा	=	वृत्वा
वृङ्	-	वृ	+	क्त्वा	=	वृत्वा
सृ	-	सृ	+	क्त्वा	=	सृत्वा
स्मृ	-	स्मृ	+	क्त्वा	=	स्मृत्वा
हृ	-	हृ	+	क्त्वा	=	हृत्वा
कृञ्	-	कृ	+	क्त्वा	=	कृत्वा, आदि।

ॠकारान्त धातु

क्त्वा प्रत्यय परे होने पर जॄ धातु जॄव्रश्च्योः क्त्वि सूत्र से सेट् है तथा शेष ॠकारान्त धातु अनिट् हैं।

जॄ धातु (सेट्) -

जॄ + इट् + क्त्वा - न क्त्वा सेट् सूत्र से सेट् क्त्वा प्रत्यय को अकित् मान लेने से सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अङ्ग को गुण करके - जर् + इ + त्वा = जरित्वा।

पॄ, भॄ, वॄ, मॄ, धातु (अनिट्) -

पॄ + क्त्वा - 'उरण् रपरः' सूत्र से उ को रपर करके - पुर् + त्वा - हलि च सूत्र से उपधा के इक् को दीर्घ करके - पूर् + त्वा = पूर्त्वा।

उदोष्ठ्यपूर्वस्य (७.१.१०२) - कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर, ॠ को 'उ' होता है, यदि उस दीर्घ ॠ के पूर्व में आने वाला वर्ण ओष्ठ्य हो तो।

पॄ + क्त्वा - 'उरण् रपरः' सूत्र से उ को रपर करके - पुर् + त्वा - हलि च सूत्र से उपधा के इक् को दीर्घ करके - पूर् + त्वा = पूर्त्वा। इसी प्रकार -

भॄ	-	भॄ	+	क्त्वा	=	भूर्त्वा
मॄ	-	मॄ	+	क्त्वा	=	मूर्त्वा
वॄञ्	-	वॄ	+	क्त्वा	=	वूर्त्वा, आदि।

ध्यान दें कि इनमें ॠ के पूर्व में प्, व्, भ् हैं, जो कि ओष्ठ्य वर्ण हैं।

शेष ॠकारान्त धातु - क्त्वा प्रत्यय परे होने पर अनिट् होते हैं।

ॠत इद् धातोः (७.१.१००) - धातु के अन्त में आने वाले दीर्घ ॠ को इ आदेश

होता है कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर।

तॄ + क्त्वा - 'उरण् रपरः' सूत्र से इ को रपर करके - तिर् + क्त्वा - हलि च सूत्र से उपधा के इक् को दीर्घ करके - तीर् + त्वा - तीर्त्वा। इसी प्रकार -

जॄष्	-	जॄ	+	क्त्वा	=	जीर्त्वा
कॄ	-	कॄ	+	क्त्वा	=	कीर्त्वा
गॄ	-	गॄ	+	क्त्वा	=	गीर्त्वा

वर्ग - ३

भ्वादिगण से क्र्यादिगण तक के हलन्त धातुओं में क्त्वा प्रत्यय लगाना

यदि धातु सेट् होगा तो हम उसके रूप इट् लगाकर बनायेंगे। यदि अनिट् होगा, तो इट् लगाये बिना बनायेंगे।

ध्यान रहे कि इट् लगने पर क्त्वा प्रत्यय 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से अकित् होगा। इट् न लगने पर वह कित् ही रहेगा। तदनुसार ही अङ्गकार्य होंगे।

ककारान्त धातु

शक् + क्त्वा - शक् + त्वा = शक्त्वा

चकारान्त धातु

ओव्रश्चू - व्रश्च् धातु (सेट्) -

'जॄव्रश्च्योः क्त्वि' सूत्र से क्त्वा प्रत्यय में यह धातु सेट् है। अतः क्त्वा को इडागम करके - व्रश्च् + इ + क्त्वा -

न क्त्वा सेट् (१.२.१८) - सेट् क्त्वा कित् नहीं होता है।

अतः ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च सूत्र से प्राप्त होने वाला सम्प्रसारण यहाँ नहीं होगा - व्रश्च् + इ + क्त्वा - व्रश्चित्वा।

अञ्चु धातु -

अञ्चेः पूजायाम् (७.२.५३) - अञ्चु धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है, यदि धातु का अर्थ पूजा हो तो।

पूजा अर्थ होने पर इडागम होगा -

नाञ्चेः पूजायाम् (६.४.३०) - पूजा अर्थ में अञ्चु धातु के उपधा के नकार का लोप नहीं होता है। अञ्च् + इट् + क्त्वा = अञ्चित्वा।

पूजा अर्थ न होने पर विकल्प से इडागम होगा -

अञ्च् + क्त्वा / अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - अच् + त्वा / **'चोः कुः' से कुत्व करके** - अक् + त्वा = अक्त्वा। अञ्चित्वा।

वच् धातु -

वच् + क्त / वचिस्वपियजादीनाम् किति सूत्र से सम्प्रसारण करके - उच् + क्त्वा / च् को कुत्व करके - उक्त्वा।

व्यच् धातु (सेट्) -

यह धातु सेट् है। अतः क्त्वा को इडागम करके - व्यच् + इ + क्त्वा -

व्यचेः कुटादित्वमनसीति वक्तव्यम् - व्यच् धातु को कुटादिवत् मान लेना चाहिये, अस् से भिन्न प्रत्यय परे होने पर।

कुटादि होने के कारण ङित्वत् होने से ग्रहिज्या. सूत्र से सम्प्रसारण करके - विच् + इ + त्वा = विचित्वा।

लुञ्च् धातु (सेट्) -

वञ्चिलुञ्च्यृतश्च (१.२.२४) - वञ्च्, लुञ्च् और ऋत् धातुओं से परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है।

ये धातु सेट् हैं। लुञ्च् + इट् + क्त्वा / **क्त्वा प्रत्यय के कित् होने पर** - 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - लुञ्च् + इट् + क्त्वा - लुच् + इ + क्त्वा = लुचित्वा।

क्त्वा प्रत्यय के कित् न होने पर न् का लोप न करके - लुञ्च् + इट् + क्त्वा = लुञ्चित्वा।

वञ्चु धातु (विट्) -

वञ्चिलुञ्च्यृतश्च (१.२.२४) - वञ्च्, लुञ्च् और ऋत् धातुओं से परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है।

वञ्च् + इट् + क्त्वा / क्त्वा प्रत्यय के कित् होने पर पूर्ववत् = वचित्वा।

क्त्वा प्रत्यय के कित् न होने पर न् का लोप न करके - वञ्च् + इट् + क्त्वा = वञ्चित्वा। इडागम न होने पर 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - वञ्च् + क्त्वा = वक्त्वा।

चञ्चु, तञ्चु, तञ्चू, त्वञ्चु, म्रुञ्चु, म्लुञ्चु, ग्लुञ्चु -

उदितो वा सूत्र से 'उदित् धातु' तथा स्वरतिसूतिसूयतिधूञूदितो वा सूत्र से 'ऊदित् धातु' वेट् होते हैं। अत: इन्हें विकल्प से इडागम कीजिये।

ध्यान रहे कि अनिट् होने पर क्त्वा प्रत्यय कित् होगा और कित् होने पर 'अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति' से उपधा के न् का लोप होगा।

सेट् होने पर क्त्वा प्रत्यय अकित् होगा और अकित् होने पर न् का लोप नहीं होगा। तो दो दो रूप बनेंगे -

म्रुञ्चु	-	म्रुञ्च्	+	क्त्वा	=	म्रुक्त्वा	/	म्रुञ्चित्वा
म्लुञ्चु	-	म्लुञ्च्	+	क्त्वा	=	म्लुक्त्वा	/	म्लुञ्चित्वा
तञ्चू	-	तञ्च्	+	क्त्वा	=	तक्त्वा	/	तञ्चित्वा
ग्लुञ्चु	-	ग्लुञ्च्	+	क्त्वा	=	ग्लुक्त्वा	/	ग्लुञ्चित्वा
चञ्चु	-	चञ्च्	+	क्त्वा	=	चक्त्वा	/	चञ्चित्वा
तञ्चु	-	तञ्च्	+	क्त्वा	=	तक्त्वा	/	तञ्चित्वा
त्वञ्चु	-	त्वञ्च्	+	क्त्वा	=	त्वक्त्वा	/	त्वञ्चित्वा

शेष चकारान्त वेट् धातु -

'उदितो वा' सूत्र से ये उदित् धातु वेट् होते हैं।

इडागम न होने पर गुण इन्हें नहीं होगा। इडागम होने पर **'रलो व्युपधाद् हलादे: संश्च'** सूत्र से प्रत्यय के विकल्प से कित् होने के कारण विकल्प से गुण होगा -

ग्रुचु	-	ग्रुच्	+	क्त्वा	=	ग्रुक्त्वा	/	ग्रुचित्वा	/	ग्रोचित्वा
ग्लुचु	-	ग्लुच्	+	क्त्वा	=	ग्लुक्त्वा	/	ग्लुचित्वा	/	ग्लोचित्वा
म्रुचु	-	म्रुच्	+	क्त्वा	=	म्रुक्त्वा	/	मुचित्वा	/	मोचित्वा
म्लुचु	-	म्लुच्	+	क्त्वा	=	म्लुक्त्वा	/	म्लुचित्वा	/	म्लोचित्वा

शेष चकारान्त अनिट् धातु -

चो: कु: (८.२.३०) - चवर्ग के स्थान पर कवर्ग आदेश होता है झल् परे रहते तथा पदान्त में। अत: धातु के अन्त में आने वाले च् को क् और ज् को ग् बनाइये।

पच्	-	पच्	+	क्त्वा	=	पक्त्वा
मुच्	-	मुच्	+	क्त्वा	=	मुक्त्वा
रिच्	-	रिच्	+	क्त्वा	=	रिक्त्वा
विच्	-	विच्	+	क्त्वा	=	विक्त्वा
सिच्	-	सिच्	+	क्त्वा	=	सिक्त्वा

छकारान्त धातु

प्रच्छ् धातु -

प्रच्छ् + क्त्वा / 'ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च' **सूत्र से सम्प्रसारण करके - पृच्छ् + त्वा -**

व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः (८.२.३६) -

व्रश्च्, भ्रस्ज्, सृज्, मृज्, यज्, राज्, भ्राज्, धातु तथा छकारान्त और शकारान्त धातुओं के अन्त्य वर्ण के स्थान पर 'ष्' होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में।

पृच्छ् + त्वा - पृष् + त्वा / प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ष्टुत्व' करके - पृष्ट्वा।

जकारान्त धातु

ओविजी भयचलनयोः - विज् धातु -

विज इट् (१.१.२) - तुदादिगण तथा रुधादिगण के 'ओविजी भयचलनयोः' धातु से परे आने वाले सारे सेट् प्रत्यय ङित्वत् माने जाते हैं। अतः **'क्ङिति च'** सूत्र से गुणनिषेध करके - विज् + इ + क्त्वा = विजित्वा।

विजिर् पृथग्भावे - विज् धातु -

जुहोत्यादिगण का यह धातु अनिट् है। विज् + क्त्वा - विक्त्वा।

अज् धातु -

अजेर्व्यघञपोः (२.४.५६) - घञ्, अप् को छोड़कर शेष सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अज् धातु को वी आदेश होता है। अज् + क्त्वा - वी + क्त्वा = वीत्वा।

यज् धातु -

यज् + क्त / **वचिस्वपि.** सूत्र से सम्प्रसारण करके - इज् + त्वा - **'व्रश्चभ्रस्ज-सृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः'** **सूत्र से** ज् के स्थान पर 'ष्' करके - इष् + त्वा / 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से त् को ष्टुत्व करके - इष्ट्वा।

भ्रस्ज् धातु -

भ्रस्ज् + क्त्वा / **'ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च'** सूत्र से सम्प्रसारण करके - भृज्ज् + त्वा / व्रश्चभ्रस्ज. सूत्र से ज् के स्थान पर 'ष्' करके - भृष् + त्वा / 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से त् को ष्टुत्व करके - भृष् + ट्वा = भृष्ट्वा।

सृज् धातु -

सृज् + क्त्वा / **व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः सूत्र से ज्** के स्थान पर 'ष्' करके - सृष् + त्वा / 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से त् को ष्टुत्व करके - सृष्ट्वा।

मस्ज् धातु -

मस्जिनशोर्झलि (७.१.६०) - मस्ज् और नश् धातुओं को नुम् का आगम होता है, झल् परे होने पर।

मस्जेरन्त्यात् पूर्वं नुम् वाच्यः (वार्तिक ७.१.६०) - मस्ज् धातु को होने वाला नुमागम अन्त्य वर्ण के ठीक पूर्व में होता है।

जान्तनशां विभाषा (६.४.३२) - जकारान्त धातुओं तथा नश् धातु के न् का विकल्प से लोप होता है, क्त्वा प्रत्यय परे होने पर।

स्कोः संयोगाद्योरन्ते च (८.२.२९) - पद के अन्त में तथा झल् परे रहते जो संयोग उसके आदि के सकार तथा ककार का लोप हो जाता है।

मस्ज् + क्त्वा - **मस्जेरन्त्यात् पूर्वं नुम् वाच्यः** से अन्तिम वर्ण के पूर्व में नुमागम करके - मस्न्ज् + त्वा

स्कोः संयोगाद्योरन्ते च सूत्र से संयोग के आदि के सकार का लोप करके - मन्ज् + त्वा / चोः कुः से कुत्व करके - मन्ग् + त्वा / नश्चापदान्तस्य झलि से न् को अनुस्वार करके - मंग् + त्वा / खरि च से ग् को चर्त्व करके - मंक् + त्वा / अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः से परसवर्ण करके - मङ्क् + त्वा = मङ्क्त्वा।

जान्तनशां विभाषा (६.४.३२) सूत्र से न् का विकल्प से लोप करके - मक्त्वा।

जकारान्त अनिदित् अनिट् धातु -

'जान्तनशां विभाषा' सूत्र से इनके न् का विकल्प से लोप करके दो दो रूप बनाइये -

भञ्ज्	-	भञ्ज्	+	क्त्वा	=	भक्त्वा / भङ्क्त्वा
रञ्ज्	-	रञ्ज्	+	क्त्वा	=	रक्त्वा / रङ्क्त्वा
षञ्ज्	-	सञ्ज्	+	क्त्वा	=	सक्त्वा / सङ्क्त्वा
ष्वञ्ज्	-	स्वञ्ज्	+	क्त्वा	=	स्वक्त्वा / स्वङ्क्त्वा
अञ्जू (वेट्)	-	अञ्ज्	+	क्त्वा	=	अक्त्वा / अङ्क्त्वा / अञ्जित्वा।

मृजू - मृज् धातु -

इडागम न होने पर व्रश्चभ्रस्ज. सूत्र से ज् के स्थान पर 'ष्' करके - मृष् + त्वा / 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से ष्टुत्व करके मृष्ट्वा।

इडागम होने पर मृजेर्वृद्धिः से वृद्धि करके - मार्जित्वा

कुजु, खुजु धातु -

ये धातु 'उदितो वा' से वेट् हैं।

रलो व्युधाद् हलादेः संश्च (१.२.२६) -

ऐसे हलादि धातु, जिनकी उपधा में इ या उ हो, अन्त में रल् हो अर्थात् अन्त में य्, व् को छोड़कर कोई भी व्ययञ्जन हो, और उनसे परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय सेट् हो, तो ऐसा क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है।

क्त्वा प्रत्यय के कित् होने पर - 'पुगन्तलघूपधस्य च' से उपधा के 'इ' 'उ' को गुण नहीं होगा।

क्त्वा प्रत्यय के कित् न होने पर - 'इ' 'उ' को गुण होकर क्रमशः 'इ' को 'ए' और 'उ' को 'ओ' हो जायेंगे।

इट् न होने पर यह कित् ही होगा। कित् होने पर 'क्ङिति च' सूत्र से गुण का निषेध होगा। इस प्रकार तीन रूप बनेंगे -

कुजु	-	कुज्	+	क्त्वा	=	कुक्त्वा / कुजित्वा / कोजित्वा
खुजु	-	खुज्	+	क्त्वा	=	खुक्त्वा / खुजित्वा / खोजित्वा

शेष जकारान्त धातु -

'चोः कुः' सूत्र से ज् को कुत्व करके 'ग्' बनाइये। उसके बाद उस 'ग्' को 'खरि च' सूत्र से उसी कवर्ग का प्रथमाक्षर 'क्' बनाइये।

त्यज्	-	त्यज्	+	क्त्वा	=	त्यक्त्वा
निजिर्	-	निज्	+	क्त्वा	=	निक्त्वा
भज्	-	भज्	+	क्त्वा	=	भक्त्वा
भुज्	-	भुज्	+	क्त्वा	=	भुक्त्वा
युज्	-	युज्	+	क्त्वा	=	युक्त्वा
रुज्	-	रुज्	+	क्त्वा	=	रुक्त्वा
विजिर्	-	विज्	+	क्त्वा	=	विक्त्वा

णकारान्त धातु

शेष णकारान्त धातु -

अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति (६.४.३७)-

अनुदात्तोपदेश, वनति तथा तनोति इत्यादि धातुओं के अनुनासिक का लोप होता है झलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर। इससे अनुनासिक ण् का लोप करके -

ऋणु	-	ऋण्	+	क्त्वा	=	ऋत्वा
क्षणु	-	क्षण्	+	क्त्वा	=	क्षत्वा
क्षिणु	-	क्षिण्	+	क्त्वा	=	क्षित्वा
घृणु	-	घृण्	+	क्त्वा	=	घृत्वा
तृणु	-	तृण्	+	क्त्वा	=	तृत्वा

तकारान्त धातु

ऋत् धातु (सेट्) -

वञ्चिलुञ्च्यृतश्च (१.२.२४) - वञ्च्, लुञ्च् और ऋत् धातुओं से परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है। ऋत् धातु सौत्र है।

ऋत् + इ + क्त्वा / क्त्वा प्रत्यय के कित् होने पर कारण क्ङिति च सूत्र से गुण न होकर- ऋत् + इ + क्त्वा = ऋतित्वा।

क्त्वा प्रत्यय के अकित् होने पर 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से उपधा के लघु इक् को गुण होकर - ऋत् + इ + क्त्वा - अर्त् + इ + क्त्वा = अर्तित्वा।

वृतु धातु (भ्वादि तथा तुदादिगण) -

उदितो वा सूत्र से 'उदित् धातु' तथा वेट् होते हैं। अत: इन्हें विकल्प से इडागम कीजिये। सेट् होने पर क्त्वा प्रत्यय अकित् होगा और अकित् होने से उपधा को गुण होगा, तो दो दो रूप बनेंगे -

वृतु	-	वृत्	+	क्त्वा	=	वृत्वा / वर्तित्वा

थकारान्त धातु

अनिदित् थकारान्त धातु (सारे सेट्) -

नोपधाद् थफान्ताद् वा (१.२.२३) - नकारोपध थकारान्त तथा नकारोपध फकारान्त धातुओं से परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है।

प्रत्यय के कित् होने पर 'अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप होगा। कित् न होने पर 'अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप नहीं होगा -

ग्रन्थ्	-	ग्रथ्	+	क्त्वा	=	ग्रथित्वा / ग्रन्थित्वा
श्रन्थ्	-	श्रथ्	+	क्त्वा	=	श्रथित्वा / श्रन्थित्वा

मन्थ् - मथ् + क्त्वा = मथित्वा / मन्थित्वा
कुन्थ् - कुथ् + क्त्वा = कुथित्वा / कुन्थित्वा

दकारान्त धातु

वद् धातु (सेट्) -

मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवस: क्त्वा (१.२.७) - सेट् क्त्वा प्रत्यय भी इन मृडादि धातुओं से परे होने पर कित् ही होता है। अत: -

वद् + इट् + क्त्वा / प्रत्यय के कित् होने के कारण - वचिस्वपियजादीनां किति सूत्र से सम्प्रसारण करके - उद् + इ + त = उदित्वा।

रुद् धातु / अदादि, तुदादि गण के विद् धातु (सेट्) -

ये धातु सेट् हैं। अत: 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से इनसे परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय अकित् होना चाहिये। किन्तु -

रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छ: संश्च (१.२.८) - रुद्, विद्, मुष्, ग्रह्, स्वप्, प्रच्छ्, इन ५ धातुओं से परे आने वाले सन् और क्त्वा प्रत्यय कित् होते हैं।

इसलिये क्ङिति च सूत्र से गुणनिषेध करके - रुद् + इट् + क्त्वा = रुदित्वा। विद् + इट् + क्त्वा = विदित्वा। विद् + इट् + क्त्वा = विदित्वा।

विशेष - ध्यान रहे कि रुधादि तथा दिवादिगण के विद् धातु अनिट् हैं। अत: उनसे वित्त्वा ही बनेगा।

अद् धातु -

अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति (२.४.३६)- अद् धातु को जग्ध् आदेश होता है ल्यप् तथा त्कारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। अद् + क्त्वा - जग्ध् + त्वा = जग्ध्वा।

स्कन्द् धातु (अनिट्) -

'अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति' सूत्र से उपधा के नकार का लोप प्राप्त होने पर -

क्त्वि स्कन्दिस्यन्दो: (६.४.३१) - क्त्वा प्रत्यय परे होने पर, स्कन्द् और स्यन्द् धातुओं की उपधा के 'न्' का लोप नहीं होता।

स्कन्द् - स्कन्द् + क्त्वा = स्कन्त्त्वा

स्यन्द् धातु (विट्) -

क्त्वि स्कन्दिस्यन्दो: (६.४.३१) सूत्र से इसकी उपधा के 'न्' का लोप न होने से इसके दो रूप बनाइये -

स्यन्दू	-	स्यन्द्	+	क्त्वा	=	स्यन्त्वा / स्यन्दित्वा

मृद् धातु -

मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवस: क्त्वा सूत्र से क्त्वा के कित् होने के कारण क्ङिति च से गुणनिषेध करके - मृद् + इट् + क्त्वा = मृदित्वा।

क्लिदू - क्लिद् धातु (विट्) -

इडागम न होने पर - क्लित्त्वा। इडागम होने पर क्लेदित्वा।

शेष अनिट् दकारान्त धातु -'खरि च' सूत्र से द् को 'त्' करके -

पद्	-	पद्	+	क्त्वा	=	पत्त्वा
भिद्	-	भिद्	+	क्त्वा	=	भित्त्वा
विद् (दिवादि)	-	विद्	+	क्त्वा	=	वित्त्वा
विद् (रुधादि)	-	विद्	+	क्त्वा	=	वित्त्वा
शद्	-	शद्	+	क्त्वा	=	शत्त्वा
ष्विदा (दिवादि)	-	स्विद्	+	क्त्वा	=	स्वित्त्वा
सद्	-	सद्	+	क्त्वा	=	सत्त्वा
हद्	-	हद्	+	क्त्वा	=	हत्त्वा
क्षुद्	-	क्षुद्	+	क्त्वा	=	क्षुत्त्वा
खिद्	-	खिद्	+	क्त्वा	=	खित्त्वा
छिद्	-	छिद्	+	क्त्वा	=	छित्त्वा
तुद्	-	तुद्	+	क्त्वा	=	तुत्त्वा
नुद्	-	नुद्	+	क्त्वा	=	नुत्त्वा, आदि।

धकारान्त अनिट् धातु

व्यध् धातु -

व्यध् + क्त्वा - **ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च** सूत्र से सम्प्रसारण करके - विध् + त्वा -

धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर होने पर -

१. **झषस्तथोर्धोऽध:** (८.२.४०) - झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षरों के बाद आने वाले प्रत्यय के त, थ को ध होता है।

देखिये कि ध्, झष् है, अर्थात् वर्ग का चतुर्थाक्षर है। अत: उससे परे आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' बनाकर - विध् + त्वा - विध् + ध्वा -

२. **झलां जश् झशि** (८.४.५३) - झल् के स्थान पर जश् अर्थात् वर्ग का तृतीयाक्षर होता है, झश् परे होने पर। विध् + त्वा - विद् + ध्वा = विद्ध्वा।

बन्ध् धातु -

ये धातु अनिट् हैं। बन्ध् + क्त्वा / प्रत्यय के कित् होने के कारण 'अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - बध् + त्वा /

झषस्तथोर्धोऽध: सूत्र से झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षर के बाद आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' करके और उसके परे होने पर, धातु के अन्तिम ध् को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व करके अर्थात् वर्ग का तृतीयाक्षर द् बनाकर - बध् + ध्वा - बद् + ध्वा = बद्ध्वा।

गुध् धातु -

मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवस: क्त्वा सूत्र से क्त्वा के कित् होने के कारण क्ङिति च से गुणनिषेध करके - गुध् + इट् + क्त्वा = गुधित्वा।

शेष धकारान्त वेट् धातु -

'क्ङिति च' से गुण निषेध करके, तथा पूर्ववत् 'झषस्तथोर्धोऽध:' सूत्र से झष् के बाद आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' करके और 'झलां जश् झशि' सूत्र से धातु के अन्तिम ध् को जश्त्व करके वर्ग का तृतीयाक्षर द् बनाइये।

जो वेट् धातु हैं, उन्हें विकल्प से इट् कीजिये। इट् होने पर प्रत्यय के अकित् होने के कारण गुण पुगन्तलघूपधस्य च से गुण कीजिये।

शेष धकारान्त वेट् धातु -

षिधु	-	सिध्	+	क्त्वा	=	सिद्ध्वा	/	सेधित्वा	/	सिधित्वा
षिधू	-	सिध्	+	क्त्वा	=	सिद्ध्वा	/	सेधित्वा	/	सिधित्वा
ऋधु	-	ऋध्	+	क्त्वा	=	ऋद्ध्वा	/	अर्धित्वा		
गृधु	-	गृध्	+	क्त्वा	=	गृद्ध्वा	/	गर्धित्वा		
मृधु	-	मृध्	+	क्त्वा	=	मृद्ध्वा	/	मर्धित्वा		
रध्	-	रध्	+	क्त्वा	=	रद्ध्वा	/	रधित्वा		
वृधु	-	वृध्	+	क्त्वा	=	वृद्ध्वा	/	वर्धित्वा		
शृधु	-	शृध्	+	क्त्वा	=	शृद्ध्वा	/	शर्धित्वा		

शेष धकारान्त अनिट् धातु -

क्रुध् - क्रुध् + क्त्वा = क्रुद्ध्वा

बुध् (दिवादि)	-	बुध्	+	क्त्वा	=	बुद्ध्वा
युध्	-	युध्	+	क्त्वा	=	युद्ध्वा
रुध्	-	रुध्	+	क्त्वा	=	रुद्ध्वा
शुध्	-	शुध्	+	क्त्वा	=	शुद्ध्वा
राध्	-	राध्	+	क्त्वा	=	राद्ध्वा
साध्	-	साध्	+	क्त्वा	=	साद्ध्वा
व्यध्	-	व्यध्	+	क्त्वा	=	विद्ध्वा
सिध्	-	सिध्	+	क्त्वा	=	सिद्ध्वा
क्षुध्	-	क्षुध्	+	क्त्वा	=	क्षुद्ध्वा

ध्यातव्य - भ्वादिगण के बुध अवगमने और बुधिर् बोधने धातु सेट् ही हैं।

नकारान्त धातु

षणु-सन्, खनु-खन् धातु - ये धातु 'उदितो वा' सूत्र से वेट् हैं।

जनसनखनां सञ्झलोः (६.४.४२) - जन्, सन्, खन् धातुओं को आकार अन्तादेश होता है, झलादि सन् तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

षणु	-	सन्	+	क्त्वा	=	सात्वा / सनित्वा
खनु	-	खन्	+	क्त्वा	=	खात्वा / खनित्वा

(जन् धातु केवल सेट् है, अतः जनित्वा ही बनेगा।)

मन्, हन् धातु -

अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति (६.४.३७)-

अनुदातोपदेश वनति तथा तनोति इत्यादि धातुओं के अनुनासिक का लोप होता है झलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर।

मन्	-	मन्	+	क्त्वा	-	मन्	+	त्वा	=	मत्वा
हन्	-	हन्	+	क्त्वा	-	हन्	+	त्वा	=	हत्वा

शेष नकारान्त वेट् धातु -

ये धातु 'उदितो वा' सूत्र से वेट् हैं।

इडागम न होने पर 'अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति' सूत्र से अनुनासिक का लोप कीजिये। इडागम होने पर कुछ मत कीजिये।

तनु	-	तन् +	क्त्वा =	तत्वा /	तनित्वा
मनु	-	मन् +	क्त्वा =	मत्वा /	मनित्वा

वनु (भ्वादि, तनादि) - वन् + क्त्वा = वत्वा / वनित्वा

(वन शब्दे, वन सम्भक्तौ, वन हिंसायाम् धातु उदित् नहीं हैं, अतः सेट् हैं, यह जानना चाहिये।)

पकारान्त धातु

स्वप्, वप् धातु -

स्वप् + क्त्वा / वचिस्वपियजादीनाम् किति सूत्र से सम्प्रसारण करके - सुप् + त्वा = सुप्त्वा।

वप्	-	वप्	+	क्त्वा	=	उप्त्वा
स्वप्	-	स्वप्	+	क्त्वा	=	सुप्त्वा

कृपू धातु (विट्) -

इडागम न होने पर - कृपू + क्त्वा / कृपो रो लः सूत्र से र् को ल् करके - क्लृप् + त्वा - क्लृप्त्वा।

इडागम होने पर - कृपू + इट् + क्त्वा / कृपो रो लः सूत्र से र् को ल् करके - क्लृप् + इ + त्वा - सार्वधातुका. सूत्र से उपधा को गुण करके - कल्पित्वा।

गुपू धातु (विट्) -

इडागम् होने पर तथा आय प्रत्यय होने पर - गुपू + क्त्वा / आयादय आर्धधातुके वा सूत्र से विकल्प से आय प्रत्यय करके - गुप् + आय + इट् + त्वा - पुगन्त. सूत्र से उपधा को गुण करके - गोपायित्वा।

इडागम होने पर तथा आय प्रत्यय न होने पर - गुपू + इट् + क्त्वा / पुगन्त. सूत्र से उपधा को गुण करके - गोपित्वा।

दोनों न होने पर - गुपू + क्त्वा = गुप्त्वा।

दिवादिगण के तृप्, दृप् धातु, भ्वादिगण का त्रप् धातु (विट्) -

तृप्	-	तृप्	+	क्त्वा	=	तृप्त्वा / तर्पित्वा
दृप्	-	दृप्	+	क्त्वा	=	दृप्त्वा / दर्पित्वा
त्रपूष्	-	त्रप्	+	क्त्वा	=	त्रप्त्वा / त्रपित्वा

शेष पकारान्त अनिट् धातु - इन्हें कुछ मत कीजिये -

आप्	+	क्त्वा	=	आप्त्वा	लिप्	+	क्त्वा	=	लिप्त्वा
लुप्	+	क्त्वा	=	लुप्त्वा	शप्	+	क्त्वा	=	शप्त्वा
सृप्	+	क्त्वा	=	सृप्त्वा	छुप्	+	क्त्वा	=	छुप्त्वा

क्षिप्	+	क्त्वा	=	क्षिप्त्वा	तप्	+	क्त्वा	=	तप्त्वा
तिप्	+	क्त्वा	=	तिप्त्वा					

फकारान्त धातु

अनिदित् फकारान्त वेट् धातु -

ये धातु सेट् हैं। प्रत्यय के कित् होने पर 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप होगा। कित् न होने पर 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप नहीं होगा -

गुम्फ्	-	गुम्फ्	+	क्त्वा	=	गुफित्वा	/ गुम्फित्वा
तुम्फ्	-	तुम्फ्	+	क्त्वा	=	तुफित्वा	/ तुम्फित्वा
त्रुम्फ्	-	त्रुम्फ्	+	क्त्वा	=	त्रुफित्वा	/ त्रुम्फित्वा
दृम्फ्	-	दृम्फ्	+	क्त्वा	=	दृफित्वा	/ दृम्फित्वा
तृम्फ्	-	तृम्फ्	+	क्त्वा	=	तृफित्वा	/ तृम्फित्वा
ऋम्फ	-	ऋम्फ्	+	क्त्वा	=.	ऋफित्वा	/ ऋम्फित्वा

भकारान्त धातु

धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर होने पर दो कार्य होते हैं -

१. **झषस्तथोर्धोऽधः** (८.२.४०) - झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षरों के बाद आने वाले प्रत्यय के त, थ को ध होता है।

देखिये कि भ्, झष् है, अर्थात् वर्ग का चतुर्थाक्षर है। अतः उससे परे आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' बनाकर - क्षुभ् + क्त्वा - क्षुभ् + ध्वा -

२. **झलां जश् झशि** (८.४.४३) - झल् के स्थान पर जश् अर्थात् वर्ग का तृतीयाक्षर होता है, झश् परे होने पर। इस सूत्र से धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर को इस सूत्र से जश्त्व करके उसी वर्ग का तृतीयाक्षर बनाइये। क्षुभ् + ध्वा - क्षुब् + ध्वा = क्षुब्ध्वा।

स्रम्भ्, सृम्भ्, दम्भ्, स्कम्भ्, स्तम्भ्, (नलोपी वेट्) धातु -

इडागम न होने पर 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से इनकी उपधा के न् का लोप कीजिये। इडागम होने पर उपधा के न् का लोप मत कीजिये -

स्रंभ्	+	क्त्वा	-	स्रभ्	+	त्वा	=	स्रब्ध्वा / स्रम्भित्वा
षृम्भु	+	क्त्वा	-	सृभ्	+	त्वा	=	सृब्ध्वा / सृम्भित्वा
दम्भु	+	क्त्वा	-	दभ्	+	त्वा	=	दब्ध्वा / दम्भित्वा

स्कम्भु + क्त्वा - स्कभ् + त्वा = स्कब्ध्वा / स्कम्भित्वा
स्तम्भु + क्त्वा - स्तभ् + त्वा = स्तब्ध्वा / स्तम्भित्वा

लुभ गार्ध्ये वेट् धातु -

'तीषसहलुभरुषरिषः' सूत्र से लुभ धातु तकारादि प्रत्यय परे होने पर वेट् है। इडागम होने पर **'रलो व्युपधाद् हलादेः संश्च'** सूत्र से प्रत्यय के विकल्प से कित् होने के कारण विकल्प से गुण होगा - लुभ् + इट् + क्त्वा = लोभित्वा / लुभित्वा। अनिट् होने पर गुण नहीं होगा। लुभ् + क्त्वा = लुब्ध्वा।

लुभ विमोहने सेट् धातु -

'तीषसहलुभरुषरिषः' सूत्र से दोनों लुभ धातु तकारादि प्रत्यय परे होने पर वेट् कहे गये हैं, किन्तु इनमें से 'लुभो विमोहने' सूत्र से 'विमोहन = आकुल करना' अर्थ में 'तुदादिगण' का 'लुभ' धातु सेट् कहा गया है।

इडागम होने पर **'रलो व्युपधाद् हलादेः संश्च'** सूत्र से प्रत्यय के विकल्प से कित् होने के कारण विकल्प से गुण होगा - लुभ् + इट् + क्त्वा = लोभित्वा। लुभित्वा।

अनिट् होने पर गुण नहीं होगा। लुभ् + क्त्वा = लुब्ध्वा।

शेष भकारान्त वेट् धातु -

'क्ङिति च' से गुण निषेध करके, तथा पूर्ववत् 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षर के बाद आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' करके और उसके परे होने पर, धातु के अन्तिम भ् को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व करके अर्थात् ब् बनाकर -

षिभु - सिभ् + क्त्वा = सिब्ध्वा / सिभित्वा / सेभित्वा
षृभु - सृभ् + क्त्वा = सृब्ध्वा / सर्भित्वा
ष्टुभु - स्तुभ् + क्त्वा = स्तुब्ध्वा / स्तोभित्वा

शेष भकारान्त अनिट् धातु -

यभ् - यभ् + क्त्वा = यब्ध्वा
रभ् - रभ् + क्त्वा = रब्ध्वा
लभ् - लभ् + क्त्वा = लब्ध्वा

मकारान्त धातु

गम्, नम्, यम्, अनिट् धातु -

अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति (६.४.३७)-

अनुदात्तोपदेश वनति तथा तनोति इत्यादि धातुओं के अनुनासिक का लोप होता है झलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर।

यम्	-	यम्	+	क्त्वा	=	यत्वा
नम्	-	नम्	+	क्त्वा	=	नत्वा
गम्	-	गम्	+	क्त्वा	=	गत्वा

रमु वेट् धातु -

रम् + इट् + क्त्वा = रमित्वा / रम् + क्त्वा = रन्त्वा

क्रमु धातु (विट्) -

क्रमश्च क्त्वि (६.४.१८) - क्रम् धातु की उपधा को विकल्प से दीर्घ होता है, अनिट् क्त्वा प्रत्यय परे होने पर। क्रम् + क्त्वा = क्रन्त्वा, क्रान्त्वा, क्रमित्वा।

कमु धातु (विट्) -

कम् धातु को **'कमेर्णिङ्'** सूत्र से विकल्प से णिङ् प्रत्यय करके - कम् + णिङ् - **'अत उपधाया:'** सूत्र से उपधा को वृद्धि करके - काम् + इ = कामि।

कामि + इट् + क्त्वा / **'सार्वधातुकार्धधातुकयो:'** सूत्र से गुण करके - कामे + इ + त्वा / **'एचोऽयवायाव:'** सूत्र से अयादेश करके - कामयित्वा

णिङ् प्रत्यय न होकर इडागम होने पर - कम् + इट् + क्त्वा = कमित्वा।

णिङ् प्रत्यय न होकर इडागम न होने पर - **'अनुनासिकस्य क्विझलो: क्ङिति'** सूत्र से उपधा को दीर्घ करके - कम् + क्त्वा = कान्त्वा।

शेष मकारान्त धातु -

अनुनासिकस्य क्विझलो: क्ङिति से उपधा को दीर्घ करके -

क्षमू	-	क्षम्	+	क्त्वा	= क्षान्त्वा	/ क्षमित्वा
क्षमूष्	-	क्षम्	+	क्त्वा	= क्षान्त्वा	/ क्षमित्वा
क्लमु	-	क्लम्	+	क्त्वा	= क्लान्त्वा	/ क्लमित्वा
चमु	-	चम्	+	क्त्वा	= चान्त्वा	/ चमित्वा
छमु	-	छम्	+	क्त्वा	= छान्त्वा	/ छमित्वा
जमु	-	जम्	+	क्त्वा	= जान्त्वा	/ जमित्वा
झमु	-	झम्	+	क्त्वा	= झन्त्वा	/ झमित्वा
जिमु	-	जिम्	+	क्त्वा	= जीन्त्वा	/ जेमित्वा, आदि।

वकारान्त धातु

दिवु, सिवु, ष्ठिवु, क्षिवु, क्षेवु, धावु धातु -

ये धातु 'उदितो वा' सूत्र से वेट् हैं।

च्छ्वोः शूडनुनासिके च (६.४.१९) - क्वि प्रत्यय, झलादि कित् ङित् प्रत्यय, तथा अनुनासिक प्रत्यय परे होने पर, च्छ् को श् तथा व् को ऊठ् आदेश होते हैं।

इडागम न होने पर ऊठ् कीजिये। इडागम होने पर गुण कीजिये। यथा-

दिव् + क्त्वा - दि ऊठ् + त्वा - दि ऊ त्वा = द्यूत्वा / देवित्वा
सिव् + क्त्वा - सि ऊठ् + त्वा - सि ऊ त्वा = स्यूत्वा / सेवित्वा
ष्ठिव् + क्त्वा - ष्ठि ऊठ् + त्वा - ष्ठि ऊ त्वा = ष्ठ्यूत्वा / ष्ठेवित्वा
क्षिवु + क्त्वा - क्षि ऊठ् + त्वा - क्षि ऊ त्वा = क्ष्यूत्वा / क्षेवित्वा
क्षेवु + क्त्वा - क्षे ऊठ् + त्वा - क्षे ऊ त्वा = क्षयूत्वा / क्षेवित्वा
धावु + क्त्वा - धा ऊठ् + त्वा - धा ऊ त्वा = धौत्वा / धावित्वा

धा + ऊ + त्वा = धौत्वा, में एत्येधत्यूठ्सु से वृद्धि हुई है।

स्रिवु धातु (वेट्) -

'यह धातु 'उदितो वा' से वेट् है। इडागम न होने पर - स्रिव् + क्त्वा -

ज्वरत्वरस्रिव्यविमवामुपधायाश्च (६.४.२०) - ज्वर, त्वर, स्रिवि, अव, मव इन अङ्गों के वकार तथा उपधा के स्थान में ऊठ् आदेश होता है, क्वि तथा झलादि अनुनासिक प्रत्यय परे होने पर।

इस सूत्र से वकार तथा उपधा के स्थान में ऊठ् = ऊ आदेश करके -

स्रिव् + क्त्वा - स्र् ऊठ् + त्वा - स्र् ऊ + त्वा = स्रूत्वा

इडागम होने पर - इडागम होने पर **'रलो व्युपधाद् हलादेः संश्च'** सूत्र से प्रत्यय के विकल्प से कित् होने के कारण विकल्प से गुण होगा। गुण होने पर - स्रिव् + इट् + क्त्वा = स्रिवित्वा। गुण होने पर - स्रेवित्वा।

अव्, मव् धातु (सेट्) -

मव् + इट् + क्त्वा / 'ज्वरत्वरस्रिव्यविमवामुपधायाश्च' सूत्र से वकार तथा उपधा के स्थान में ऊठ् आदेश करके - म् + ऊठ् + इ + त्वा / सम्प्रसारणाच्च से इ को पूर्वरूप करके - म् + ऊ + त्वा = मूत्वा। इसी प्रकार -

अव् + इट् + क्त्वा / ऊठ् + इ + त्वा / ऊ + त्वा = ऊत्वा।

शकारान्त धातु

दंश् (अनिट्) धातु -

दंश् + क्त्वा - 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से इसकी उपधा के न् का लोप कीजिये - दश् + त्वा / व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयज. सूत्र से 'श्' को 'ष्' बनाइये। उसके बाद प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाइये - दष् + ट्वा = दष्ट्वा।

भ्रंशु (वेट्) धातु - यह नलोपी वेट् धातु है।

इडागम न होने पर पूर्ववत् - भ्रंश् + क्त्वा / भ्रश् + त्वा / भ्रष् + त्वा = भ्रष्ट्वा बनाइये।

इडागम होने पर - भ्रंशु + इट् + क्त्वा / भ्रश् + इ + त्वा / भ्रंशित्वा।

क्लिशू विबाधने धातु - यह धातु ऊदित् होने से 'स्वरतिसूति.' सूत्र से वेट् है।

इडागम न होने पर - क्लिश् + क्त्वा - पूर्ववत् - क्लिष्ट्वा।

इडागम होने पर - क्लिश् + इट् + क्त्वा / 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से प्रत्यय के अकित् होने से गुण प्राप्त होने पर -

मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः क्त्वा (१.२.७) - 'न क्त्वा सेट्' से अकित् कहा गया सेट् क्त्वा प्रत्यय, इन मृडादि धातुओं से परे होने पर कित् ही होता है।

अतः क्ङिति च सूत्र से गुणनिषेध होकर - क्लिश् + इट् + क्त्वा = क्लिशित्वा।

क्लिश उपतापे धातु -

यह धातु नित्य सेट् है। अतः इसको क्त्वा तथा निष्ठा दोनों में ही नित्य इडागम प्राप्त था। अब 'क्लिशः क्त्वानिष्ठयोः' सूत्र से यह धातु क्त्वा तथा निष्ठा, दोनों में ही वेट् हो गया। इडागम न होने पर - क्लिष्ट्वा। इडागम न होने पर - क्लिशित्वा।

कृश् धातु (सेट्) -

यह सेट् है। अतः इससे परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से अकित् होना चाहिये। किन्तु -

तृषिमृषिकृशेः काश्यपस्य (१.२.२५) - तृष्, मृष्, कृश् धातुओं से परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है। कित् होने पर 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध कीजिये - कृशित्वा। अकित् होने पर पुगन्तलघूपधस्य च से गुण कीजिये - कर्शित्वा।

नश् धातु (वेट्) -

'रधादिभ्यश्च' सूत्र से यह धातु वेट् है। इट् होने पर - नश् + इ + क्त्वा = नशित्वा। इट् न होने पर - नश् + त्वा -

मस्जिनशोर्झलि (७.१.६०) - मस्ज् और नश् धातुओं को नुम् का आगम होता है, झल् परे होने पर। मिदचोऽन्त्यात्परः से अन्त्य अच् के बाद नुमागम करके -

न नुम् श् + क्त्वा / न न् श् + त्वा / नश्चापदान्तस्य झलि सूत्र से न् को अनुस्वार करके - नंश् + त्वा / व्रश्चभ्रस्ज. सूत्र से श् के स्थान पर 'ष्' करके - नंष् + त्वा / 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से ष्टुत्व करके - नंष् + ट्वा = नंष्ट्वा।

जान्तनशां विभाषा (६.४.३२) - जकारान्त धातुओं को तथा नश् धातु के न् का विकल्प से लोप होता है, क्त्वा परे होने पर।

इस प्रकार तीन रूप बने - नष्ट्वा, नंष्ट्वा, नशित्वा।

शेष शकारान्त वेट् धातु -

इडागम न होने पर केवल सन्धि कीजिये। इडागम होने पर 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से क्त्वा प्रत्यय के अकित् होने के कारण 'पुगन्तलघूपधस्य च' से गुण कीजिये -

अशू	-	अश्	+	क्त्वा	=	अष्ट्वा / अशित्वा
भृशु	-	भृश्	+	क्त्वा	=	भृष्ट्वा / भर्शित्वा

शेष शकारान्त अनिट् धातु -

'श्' को व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः' सूत्र से 'ष्' बनाइये। उसके बाद प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाइये।

क्रुश्	-	क्रुश्	+	क्त्वा	=	क्रुष्ट्वा
दिश्	-	दिश्	+	क्त्वा	=	दिष्ट्वा
दृश्	-	दृश्	+	क्त्वा	=	दृष्ट्वा
मृश्	-	मृश्	+	क्त्वा	=	मृष्ट्वा
रिश्	-	रिश्	+	क्त्वा	=	रिष्ट्वा
रुश्	-	रुश्	+	क्त्वा	=	रुष्ट्वा
लिश्	-	लिश्	+	क्त्वा	=	लिष्ट्वा
विश्	-	विश्	+	क्त्वा	=	विष्ट्वा
स्पृश्	-	स्पृश्	+	क्त्वा	=	स्पृष्ट्वा

षकारान्त धातु

कुष् धातु -

मृडमृदगुधकुषक्लिशवदवसः क्त्वा (१.२.७) - न क्त्वा सेट् सूत्र से सेट् क्त्वा अकित् है। किन्तु वह सेट् क्त्वा भी इन धातुओं से परे आने पर कित् ही होता है।

अत: क्ङिति च से गुणनिषेध करके - कुष् + इट् + क्त्वा = कुषित्वा।

चक्ष् धातु -

चक्षिङः ख्याञ् (२.४.५४) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर चक्ष् धातु को ख्या आदेश होता है। चक्ष् + क्त्वा / ख्या + त्वा = ख्यात्वा।

त्वक्षू, तक्षू धातु - ऊदित् होने से ये वेट् हैं।

स्कोः संयोगाद्योरन्ते च (८.२.२९) - पद के अन्त में तथा झल् परे रहते जो संयोग उसके आदि के सकार तथा ककार का लोप होता है।

त्वक्ष् + क्त्वा - त्वष् + त्वा - **ष्टुना ष्टुः** से प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुत्व' करके - त्वष् + त्वा = त्वष्ट्वा। इडागम होने पर - त्वक्षित्वा।

इसी प्रकार - तक्षू + क्त्वा / तक्ष् + त्वा / तष् + त्वा = तष्ट्वा, तक्षित्वा।

मुष् धातु (सेट्) -

यद्यपि 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से सेट् क्त्वा प्रत्यय अकित् होता है, किन्तु -

रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च (१.२.८) - रुद्, विद्, मुष्, ग्रह्, स्वप्, प्रच्छ्, इन धातुओं से परे आने वाले सन् और क्त्वा प्रत्यय कित् होते हैं।

इसलिये क्ङिति च सूत्र से गुणनिषेध करके - मुष् + इट् + क्त्वा = मुषित्वा।

इष इच्छायाम् धातु (विट्) -

'तीषसह.' सूत्र से यह धातु क्त्वा प्रत्यय में वेट् है। इडागम न होने पर पूर्ववत् - इष्ट्वा। इडागम होने पर 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से सेट् क्त्वा प्रत्यय के अकित् होने के कारण गुण होकर - एषित्वा।

मृष तितिक्षायाम् धातु (सेट्) -

तृषिमृषिकृशेः काश्यपस्य (१.२.२५) - ञितृषा पिपासायाम्, मृष तितिक्षायाम् तथा कृश् तनूकरणे धातुओं से परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है। कित् होने पर 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध कीजिये - मृषित्वा। अकित् होने पर 'पुगन्तलघू-' से गुण कीजिये - मर्षित्वा।

तृष् धातु (सेट्) -

यद्यपि 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से सेट् क्त्वा प्रत्यय अकित् होता है, किन्तु - पूर्वोक्त 'तृषिमृषिकृशेः काश्यपस्य' सूत्र से तृष्, मृष्, कृश् धातुओं से परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है। कित् होने पर 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध कीजिये - तृषित्वा। अकित् होने पर 'पुगन्तलघू.' से गुण कीजिये - तर्षित्वा।

षकारान्त इदुपध, उदुपध वेट् धातु -

इडागम न होने पर क्ङिति च से गुणनिषेध कीजिये, 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाइये। इडागम होने पर 'रलो व्युपधाद् हलादेः संश्च' सूत्र से क्त्वा के विकल्प से अकित् होने के कारण यथाप्राप्त गुण कीजिये। पक्ष में गुणनिषेध कीजिये।

श्लिषु-भ्वादि	-	श्लिष्	+	क्त्वा	=	श्लिष्ट्वा	/	श्लेषित्वा	/	श्लिषित्वा
श्रिषु	-	श्रिष्	+	क्त्वा	=	श्रिष्ट्वा	/	श्रेषित्वा	/	श्रिषित्वा
विषु	-	विष्	+	क्त्वा	=	विष्ट्वा	/	वेषित्वा	/	विषित्वा
प्रुषु	-	प्रुष्	+	क्त्वा	=	प्रुष्ट्वा	/	प्रोषित्वा	/	प्रुषित्वा
प्लुषु	-	प्लुष्	+	क्त्वा	=	प्लुष्ट्वा	/	प्लोषित्वा	/	प्लुषित्वा
मिषु	-	मिष्	+	क्त्वा	=	मिष्ट्वा	/	मेषित्वा	/	प्लुषित्वा
जिषु	-	जिष्	+	क्त्वा	=	जिष्ट्वा	/	जेषित्वा	/	मिषित्वा
रिष्	-	रिष्	+	क्त्वा	=	रिष्ट्वा	/	रेषित्वा	/	रिषित्वा
रुष्	-	रुष्	+	क्त्वा	=	रुष्ट्वा	/	रोषित्वा	/	रुषित्वा

शेष षकारान्त वेट् धातु -

हृषु	-	हृष्	+	क्त्वा	=	हृष्ट्वा	/	हर्षित्वा
मृषु	-	मृष्	+	क्त्वा	=	मृष्ट्वा	/	मर्षित्वा
पृषु	-	पृष्	+	क्त्वा	=	पृष्ट्वा	/	पर्षित्वा
वृषु	-	वृष्	+	क्त्वा	=	वृष्ट्वा	/	वर्षित्वा
घृषु	-	घृष्	+	क्त्वा	=	घृष्ट्वा	/	घर्षित्वा
इष इच्छायाम्	-	इष्	+	क्त्वा	=	इष्ट्वा	/	एषित्वा

शेष षकारान्त अनिट् धातु -

क्ङिति च से गुणनिषेध कीजिये, 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाइये।

श्लिष-दिवादि	-	श्लिष्	+	क्त्वा	=	श्लिष्ट्वा
कृष्	-	कृष्	+	क्त्वा	=	कृष्ट्वा
त्विष्	-	त्विष्	+	क्त्वा	=	त्विष्ट्वा
तुष्	-	तुष्	+	क्त्वा	=	तुष्ट्वा
द्विष्	-	द्विष्	+	क्त्वा	=	द्विष्ट्वा
दुष्	-	दुष्	+	क्त्वा	=	दुष्ट्वा

पुष्	-	पुष्	+	क्त्वा	=	पुष्ट्वा
पिष्	-	पिष्	+	क्त्वा	=	पिष्ट्वा
विष्	-	विष्	+	क्त्वा	=	विष्ट्वा
शिष्	-	शिष्	+	क्त्वा	=	शिष्ट्वा
शुष्	-	शुष्	+	क्त्वा	=	शुष्ट्वा

सकारान्त धातु

वस् धातु (भ्वादि) -

'वसतिक्षुधोरिट्' सूत्र से वस् धातु क्त्वा प्रत्यय में सेट् है। वस् + इ + क्त्वा- यद्यपि 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से सेट् क्त्वा प्रत्यय अकित् होता है, किन्तु 'मृडमृदगुध- कुषक्लिशवदवस: क्त्वा' सूत्र से वस् धातु से परे आने पर वह कित् ही होता है। अत: 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' सूत्र से सम्प्रसारण करके - उस् + इ + त्वा -

शासिवसिघसीनाञ्च (८.३.६०) - इण् और कवर्ग से परे आने वाले शास्, वस्, घस् धातुओं के स् को ष् होता है। उष् + इ + त्वा = उषित्वा।

विशेष - अदादिगण का वस आच्छादने धातु सेट् है। वस् - वसित्वा।

शासु धातु (विट्) -

शास इदङ्हलो: (६.४.३४) - शास् अङ्ग की उपधा को इकारादेश होता है, अङ् तथा हलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर।

शास् + क्त्वा - शिस् + त्वा - शासिवसिघसीनाञ्च से स् के स्थान पर ष् आदेश करके - शिष् + त्वा / ष्टुना ष्टु: से त को ष्टुत्व करके - शिष्ट्वा। इडागम होने पर - शासित्वा।

अस् (अदादिगण) धातु, अदादिगण -

अस्तेर्भू: (२.४.५२) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अस् धातु को भू आदेश होता है। अस् + क्त्वा / भू + त्वा = भूत्वा।

घस् धातु -

यह अनिट् है। घस् + क्त्वा - घस् + त्वा = घस्त्वा।

ध्वंसु, स्रंसु, भ्रंसु, शंसु, (विट्) धातु -

ये नलोपी वेट् धातु हैं। अत: इडागम न होने पर 'अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति' सूत्र से इनकी उपधा के न् का लोप कीजिये। इडागम होने पर 'न क्त्वा सेट्'

सूत्र से क्त्वा के अकित् होने के कारण यथाप्राप्त उपधागुण कीजिये -

ध्वंसु	-	ध्वंस्	+	क्त्वा	=	ध्वस्त्वा	/ ध्वंसित्वा
भ्रंसु	-	भ्रंस्	+	क्त्वा	=	भ्रस्त्वा	/ भ्रंसित्वा
शंसु	-	शंस्	+	क्त्वा	=	शस्त्वा	/ शंसित्वा
स्रंसु	-	स्रंस्	+	क्त्वा	=	स्रस्त्वा	/ स्रंसित्वा

शेष सकारान्त वेट् धातु -

क्नसु	-	क्नस्	+	क्त्वा	=	क्नस्त्वा	/ क्नसित्वा
ग्रसु	-	ग्रस्	+	क्त्वा	=	ग्रस्त्वा	/ ग्रसित्वा
ग्लसु	-	ग्लस्	+	क्त्वा	=	ग्लस्त्वा	/ ग्लसित्वा
जसु	-	जस्	+	क्त्वा	=	जस्त्वा	/ जसित्वा
वसु (दिवादि)	-	वस्	+	क्त्वा	=	वस्त्वा	/ वसित्वा
तसु	-	तस्	+	क्त्वा	=	तस्त्वा	/ तसित्वा
दसु	-	दस्	+	क्त्वा	=	दस्त्वा	/ दसित्वा
यसु	-	यस्	+	क्त्वा	=	यस्त्वा	/ यसित्वा
शसु	-	शस्	+	क्त्वा	=	शस्त्वा	/ शसित्वा
ष्णसु	-	स्नस्	+	क्त्वा	=	स्नस्त्वा	/ स्नसित्वा
ष्णुसु	-	स्नुस्	+	क्त्वा	=	स्नुस्त्वा	/ स्नोसित्वा
असु (दिवादि)	-	अस्	+	क्त्वा	=	अस्त्वा	/ असित्वा

ध्यातव्य - भ्वादिगण का अस् धातु सेट् है। अतः इससे नित्य इडागम होकर - अस् + इ + क्त्वा = असित्वा।

हकारान्त धातु

ग्रह् धातु -

ग्रह् धातु सेट् है। सेट् होने के कारण इससे परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से अकित् है। अतः धातु को सम्प्रसारण प्राप्त नहीं है। किन्तु -

रुदविदमुषग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च - रुद्, विद्, मुष्, ग्रह्, स्वप्, प्रच्छ्, इन ५ धातुओं से परे आने वाले सन् और क्त्वा प्रत्यय कित् होते हैं। इसलिये -

ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च सूत्र से सम्प्रसारण करके - ग्रह् + इ + क्त्वा / गृह् + इ + क्त्वा / ग्रहोऽलिटि दीर्घः से इ को दीर्घ करके - गृहीत्वा।

नह् धातु -

नहो धः (८.२.३४) - नह धातु के हकार के स्थान पर धकार आदेश से होता है झल् परे रहते या पदान्त में। नह् + क्त्वा - नध् + त्वा / अब देखिये कि धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर 'ध्' आ गया है।

धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर आने पर -

प्रत्यय के त को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से ध बनाइये -

नध् + त्वा = नध् + ध्वा - अब धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर ध् को झलां जश् झशि सूत्र से जश्त्व करके उसी वर्ग का तृतीयाक्षर द् बनाइये -

नध् + ध्वा - नद् + ध्वा = नद्ध्वा।

दुह्, दह्, दिह् धातु -

दादेर्धातोः घः (८.२.३२) - दकार आदि में है जिस धातु के उसके हकार के स्थान पर घकार आदेश होता है झल् परे रहते या पदान्त में।

इस सूत्र से इनके 'ह्' को घ् बनाइये - दुह् + क्त्वा / दुघ् + त्वा -

प्रत्यय के 'त' को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से 'ध' करके - दुघ् + ध्वा / अब धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर 'घ्' को झलां जश् झशि सूत्र से जश्त्व करके, उसी वर्ग का तृतीयाक्षर 'ग्' बनाइये - दुग् + ध्वा = दुग्ध्वा।

इसी प्रकार - दिह् + त्वा - दिग्ध्वा / दह् + त्वा - दग्ध्वा।

द्रुह्, मुह् ,स्नुह्, स्निह् धातु (विट्) -

वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम् (८.२.३३) - द्रुह्, मुह् ,स्नुह्, स्निह् धातुओं के ह् को विकल्प से ढ् तथा 'घ्' होते हैं, झल् परे होने पर।

'ह्' के स्थान पर 'घ्' होने पर -

द्रुह् + क्त्वा - 'वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम्' सूत्र से ह् को घ् करके - द्रुघ् + त्वा- प्रत्यय के 'त' को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से 'ध' करके - द्रुघ् + ध्वा / झलां जश् झशि सूत्र से 'घ्' को जश्त्व करके, उसी वर्ग का तृतीयाक्षर 'ग्' बनाकर - द्रुग् + ध्वा = द्रुग्ध्वा।

इसी प्रकार मुह् से मुग्ध्वा / स्नुह् से स्नुग्ध्वा / स्निह् से स्निग्ध्वा।

'ह्' के स्थान पर 'ढ्' होने पर -

द्रुह् + क्त्वा / द्रुढ् + त्वा / प्रत्यय के त को **झषस्तथोर्धोऽधः** सूत्र से 'ध'

करके - द्रुढ् + ध्वा / ष्टुना ष्टुः से प्रत्यय के ध् को ष्टुत्व करके द्रुढ् + ढ्वा / ढो ढे लोपः से पूर्व ढकार का लोप करके द्रु + ढ्वा / ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः से उ को दीर्घ करके = द्रूढ्वा।

इसी प्रकार - मुह् से मूढ्वा / स्नुह् से स्नूढ्वा / स्निह् से स्नीढ्वा बनाइये।

इडागम होने पर - न क्त्वा सेट् से सेट् क्त्वा के अकित् होने से पुगन्त सूत्र से उपधा को गुण करके - द्रुह् + क्त्वा = द्रोहित्वा / मुह् + क्त्वा = मोहित्वा / स्निह् + क्त्वा = स्नेहित्वा / स्नुह् + क्त्वा = स्नोहित्वा, बनाइये।

वह् धातु (अनिट्) -

वह् + क्त्वा - वह् + त्वा / वचिस्वपियजादीनाम् किति सूत्र से सम्प्रसारण करके - उह् + त्वा / हो ढः सूत्र से ह् को ढत्व करके - उढ् + त्वा / झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से प्रत्यय के त को धत्व करके - उढ् + ध्वा / ष्टुना ष्टुः से ध् को ष्टुत्व करके - उढ् + ढ्वा / पूर्व 'ढ्' का 'ढो ढे लोपः' सूत्र से लोप करके - उ + ढ्वा / ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः सूत्र से 'उ' को दीर्घ करके = ऊढ्वा।

सह् धातु भ्वादिगण (वेट्) -

इडागम न होने पर - सह् + क्त्वा / सह् + त्वा / हो ढः सूत्र से ढत्व करके - सढ् + त्वा / झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से प्रत्यय के त को धत्व करके - सढ् + ध्वा / ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके - सढ् + ढ्वा / पूर्व 'ढ्' का 'ढो ढे लोपः' सूत्र से लोप करके - स + ढ्वा / 'सहिवहोरोदवर्णस्य' सूत्र से 'अ' के स्थान पर 'ओ' आदेश करके - सोढ्वा।

इडागम होने पर - सह् + इ + क्त्वा = सहित्वा

रुह्, लिह्, मिह्, गुह् धातु -

इनमें रुह्, मुह्, मिह्, अनिट् हैं तथा गुह् वेट् है।

रुह् + क्त्वा / हो ढः सूत्र से ढत्व करके - रुढ् + त्वा / झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से प्रत्यय के त को धत्व करके - रुढ् + ध्वा / ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके - रुढ् + ढ्वा / पूर्व 'ढ्' का 'ढो ढे लोपः' सूत्र से लोप करके - रु + ढ्वा / ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः सूत्र से 'उ' को दीर्घ करके - रूढ्वा।

रुह्	-	रुह्	+	क्त्वा	=	रूढ्वा
मिह्	-	मिह्	+	क्त्वा	=	मीढ्वा
लिह्	-	लिह्	+	क्त्वा	=	लीढ्वा

गुहू (वेट्) - गुह् + क्त्वा = गूढ्वा / गूहित्वा

तृंहू धातु (वेट्) -

इडागम न होने पर - 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - तृह् + क्त्वा / हो ढः सूत्र से ढत्व करके - तृढ् + त्वा / झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से प्रत्यय के त को धत्व करके - तृढ् + ध्वा / ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके - तृढ् + ढ्वा / पूर्व 'ढ्' का 'ढो ढे लोपः' सूत्र से लोप करके - तृ + ढ्वा = तृढ्वा।

इडागम होने पर - तृंह् + इट् + क्त्वा = तृंहित्वा।

शेष हकारान्त वेट् धातु -

इडागम न होने पर - इन धातुओं के अलावा जितने भी हकारान्त धातु बचे, उनके 'ह्' को 'हो ढः' सूत्र से 'ढ्' बनाइये / प्रत्यय के त को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से 'ध' करके ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके ढ बनाइये। अब ढो ढे लोपः से पूर्व ढकार का लोप कर दीजिये।

इडागम होने पर - 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से क्त्वा प्रत्यय के अकित् होने के कारण धातु की उपधा में स्थित लघु इक् को 'पुगन्तलघूपधस्य च' से गुण कीजिये।

गृहू	-	गृह्	+	क्त्वा	=	गृढ्वा	/	गर्हित्वा
तृहू	-	तृह्	+	क्त्वा	=	तृढ्वा	/	तर्हित्वा
स्तृहू	-	स्तृह्	+	क्त्वा	=	स्तृढ्वा	/	स्तर्हित्वा
वृहू	-	वृह्	+	क्त्वा	=	वृढ्वा	/	वर्हित्वा
गाहू	-	गाह्	+	क्त्वा	=	गाढ्वा	/	गाहित्वा

इदुपध, उदुपध हलादि रलन्त सेट् धातुओं में क्त्वा प्रत्यय लगाने की विधि

रलो व्युधाद् हलादेः संश्च (१.२.२६) -

ऐसे हलादि धातु, जिनकी उपधा में इ या उ हो, अन्त में रल् हो अर्थात् अन्त में य्, व् को छोड़कर कोई भी व्यय्ञ्जन हो, और उनसे परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय सेट् हो, तो ऐसा क्त्वा प्रत्यय विकल्प से कित् होता है।

क्त्वा प्रत्यय के कित् होने पर - 'पुगन्तलघूपधस्य च' से उपधा के 'इ' 'उ' को गुण नहीं होगा। यथा - लिख - लिखित्वा, द्युत् - द्युतित्वा आदि।

क्त्वा प्रत्यय के कित् न होने पर - 'इ' 'उ' को गुण होकर क्रमशः 'इ' को

'ए' और 'उ' को 'ओ' हो जायेंगे। यथा - लेखित्वा, द्योतित्वा।

भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के बचे हुए हलन्त

धातुओं में क्त्वा प्रत्यय लगाने की विधि

अब जो धातु बच गये हैं, वे सेट् ही हैं। इनसे परे आने वाला क्त्वा प्रत्यय 'न क्त्वा सेट्' सूत्र से अकित् ही होगा।

अतः उनकी उपधा में यदि लघु इ, लघु उ, लघु ऋ हों, तो उन्हें 'पुगन्तलघूपधस्य च' सूत्र से गुण करके उपधा के लघु इ को ए, लघु उ को ओ और लघु ऋ को अर् बनाइये और उनमें सेट् क्त्वा प्रत्यय अर्थात् 'इत्वा' जोड़िये। यथा -

दिव् - देव् - देवित्वा। वृष् - वर्ष - वर्षित्वा / हृष - हर्षित्वा, आदि।

यदि लघु इ, लघु उ, लघु ऋ न हों, तो बिना कुछ किये सेट् क्त्वा प्रत्यय अर्थात् 'इत्वा' जोड़ दीजिये, बस।

यथा - पठ् - पठित्वा / राज् - राजित्वा / भ्राज् - भ्राजित्वा / आदि।

यह भ्वाादि से क्र्यादिगण तक के सेट् धातुओं के रूप बनाने की विधि पूर्ण हुई।

वर्ग - ४

चुरादिगण के धातु तथा अन्य णिजन्त धातु

अब चुरादिगण के तथा अन्य प्रत्ययान्त धातुओं में क्त्वा प्रत्यय लगाने की विधि बतला रहे हैं -

चुरादिगण के तथा प्रेरणार्थक धातुओं के अन्त में 'णिच्' प्रत्यय लगा होने से वे णिजन्त धातु हैं। जैसे - चुर् + णिच् = चोरि। पठ् + णिच् = पाठि। लिख् + णिच् = लेखि आदि। इस अन्तिम 'इ' को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण करके 'ए' बनाइये और उस 'ए' को 'एचोऽयवायावः' सूत्र से 'अय्' बनाइये और उनमें सेट् क्त्वा अर्थात् 'इत्वा' जोड़ दीजिये। जैसे - चोरि - चोरे - चोरय् में इत्वा लगाकर - चोरयित्वा।

इसी प्रकार - कथि - कथयित्वा। नाटि - नाटयित्वा आदि बनाइये।

अथवा णिजन्त धातुओं से क्त्वा प्रत्यय इस प्रकार लगा लीजिये -

चुरादिगण के धातु का लट् लकार प्रथमपुरुष एकवचन का रूप लीजिये। जैसे - कथयति, चोरयति, मन्त्रयति, गणयति, चेतयते आदि।

इस बने हुए रूप में जो अति या अते है, उसे हटा दीजिये और 'इत्वा' जोड़ दीजिये। जैसे - कथयति में से अति हटाया तो बचा कथय्। इसमें इत्वा जोड़कर बना कथयित्वा। इसी प्रकार - चोरयति से चोरयित्वा, मन्त्रयति से मन्त्रयित्वा, गणयति से

गणयित्वा, चेतयते से चेतयित्वा आदि बना लीजिये।

वर्ग - ५

शेष प्रत्ययान्त धातु

सन्नन्त धातु

सन्नन्त धातुओं के अन्त में सदा ह्रस्व 'अ' होता है। इस 'अ' का 'अतो लोपः' सूत्र से लोप करके जो बचे उसमें 'इत्वा' लगाइये। जैसे - जिगमिष + इत्वा / अतो लोपः से अ का लोप करके - जिगमिष् + इत्वा = जिगमिषित्वा। पिपठिष + इत्वा / अतो लोपः से अ का लोप करके - पिपठिष् + इत्वा = पिपठिषित्वा।

यङन्त धातु

यङन्त धातुओं के अन्त में सदा 'य' ही होता है। यदि इस 'य' के पहिले अच् हो तब इस 'य के अ का' अतो लोपः सूत्र से लोप कर दीजिये। जैसे - लोलूय + इतः = लोलूयितः।

यदि इस 'य' के पहिले हल् हो तब इस 'पूरे य का' यस्य हलः सूत्र से लोप कर दीजिये। जैसे - बेभिद्य + इत्वा = बेभिदित्वा।

क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्यय से बने हुए धातु

क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्यय से बने हुए धातुओं के अन्त में भी सदा 'य' ही होता है। इस 'य' के पहिले चाहे 'अच्' हो चाहे हल् हो, इस 'य' का 'यस्य हलः' सूत्र से विकल्प से ही लोप कीजिये। जैसे - समिध्य + इत्वा = समिधित्वा, समिध्यित्वा।

ल्यप् प्रत्यय

समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप् (७.१.३७) -

हम जानते हैं कि जब कोई एक ही कर्ता, एक क्रिया करके दूसरी क्रिया करता है, तब पहिली क्रिया को बतलाने वाला जो धातु, उससे क्त्वा प्रत्यय लगाया जाता है।

किन्तु यदि अनञ्पूर्वक समास हो अर्थात् धातु के पूर्व में कोई उपसर्ग हो, तब धातुओं से लगने वाले उस क्त्वा प्रत्यय के स्थान पर, ल्यप् (य) आदेश हो जाता है। यथा - आगत्य / प्रपठ्य / उल्लङ्घ्य।

पर ध्यान रहे कि धातु के पूर्व में यदि निषेधवाचक नञ् (अ, अन्) हो, तब धातुओं से क्त्वा प्रत्यय ही लगता है, उसके स्थान पर ल्यप् आदेश नहीं होता। यथा - कृत्वा - अकृत्वा / पठित्वा - अपठित्वा / अशित्वा - अनशित्वा आदि।

वेद के लिये विशेष -

क्त्वापिच्छन्दसि (७.२.३८) - वेद में, अनञ्पूर्ववाले समास में, क्त्वा के स्थान में विकल्प से क्त्वा तथा ल्यप् आदेश होते हैं।

उपसर्ग के योग में क्त्वा - कृष्णं वासो यजमानं परिधापयित्वा। प्रत्यञ्च्यमर्कं प्रत्यर्थयित्वा।

उपसर्ग के योग में ल्यप् - उद्धृत्य जुहोति।

वेद में समास न होने पर भी ल्यप् हो जाता है - अर्च्य तान् देवान् गतः।

अत्यावश्यक -

धातुओं में आर्धधातुक प्रत्यय लगाने के पूर्व धात्वादेश तथा इडागम का विचार आवश्यक होता है। हमें जानना चाहिये कि ल्यप् प्रत्यय आर्धधातुक तो है, पर वलादि नहीं है, अतः इसे इडागम हो ही नहीं सकता।

अब हम धातुओं से ल्यप् प्रत्यय लगायें

ल्यप् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से ल् की तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से प् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' सूत्र से दोनों का लोप करके 'य' ही शेष बचता है।

क्त्वा प्रत्यय कित् है। उसी के स्थान पर होने के कारण ल्यप् प्रत्यय को भी कित् जैसा मान लिया जाता है। अतः इसके लगने पर वे सारे कार्य होते हैं, जो धातुओं

से कित् प्रत्यय लगने पर होते हैं।

प्रत्यय के कित् ङित् होने पर, मुख्यत: ये तीन कार्य होते हैं -

१. गुणनिषेध -

क्ङिति च - कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर धातु के इक् को कोई भी गुण, वृद्धि कार्य नहीं होते। वि + नी + ल्यप् / क्ङिति च सूत्र से गुणनिषेध होकर - विनीय।

२. अनिदित् धातुओं की उपधा के न् का लोप -

अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति - अनिदित् हलन्त धातुओं की उपधा के 'न्' का लोप होता है, कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

वि	+	ध्वंस्	+	ल्यप्	-	वि	+	ध्वस्	+ य	=	विध्वस्य
नि	+	बन्ध्	+	ल्यप्	-	नि	+	बध्	+ य	=	निबध्य
निर्	+	मन्थ्	+	ल्यप्	-	निर्	+	मन्थ्	+ य	=	निर्मथ्य, आदि।

आगे सारे अनिदित् धातु आगे एक साथ बतला रहे हैं।

३. सम्प्रसारणी धातुओं को सम्प्रसारण। इसे पृष्ठ २०८ - २०९ पर देखिये।

अब हम धातुओं के वर्ग इस प्रकार बनाकर, उनमें ल्यप् (य) प्रत्यय लगायें-

वर्ग - १ - भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के अजन्त धातु।

वर्ग - २ - भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के हलन्त धातु।

वर्ग - ३ - चुरादिगण के धातु तथा अन्य णिजन्त धातु।

वर्ग - ४ - सन्, यङ्, क्यच्, क्यङ्, क्यष् प्रत्ययों से बने हुए प्रत्ययान्त धातु।

ध्यान रहे कि केवल धातु से कभी ल्यप् प्रत्यय नहीं लगता है। अत: धातु के पूर्व नञ् के अलावा कुछ होने पर ही आप धातुओं से ल्यप् प्रत्यय लगायें।

वर्ग - १

भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के अजन्त धातुओं में ल्यप् प्रत्यय लगाना

आकारान्त तथा एजन्त धातु -

आदेच उपदेशेऽशिति (६.१.४५) - अशित् प्रत्यय परे होने पर सारे एजन्त धातुओं को 'आ' अन्तादेश होता है। यथा - ध्यै -ध्या। म्लै - म्ला आदि। अत: आर्धधातुक प्रत्ययों में आकारान्त तथा एजन्त धातुओं का विचार एक साथ करना चाहिये।

वेञ् धातु - यह धातु सम्प्रसारणी है।

'ल्यप्' चूँकि कित् प्रत्यय है, अत: इसके परे होने पर 'वचिस्वपियजादीनाम् किति'

सूत्र से वेञ् धातु को सम्प्रसारण होना चाहिये, किन्तु -

ल्यपि च (६.१.४१) - ल्यप् परे रहते वेञ् धातु को सम्प्रसारण नहीं होता है।

प्र + वेञ् + ल्यप् / आदेच उपदेशेऽशिति सूत्र से आत्व होकर - प्र + वा + य / ल्यपि च सूत्र से सम्प्रसारण का निषेध होकर = प्रवाय।

इसी प्रकार - उप + वेञ् + ल्यप् = उपवाय।

व्येञ् **धातु** - यह धातु सम्प्रसारणी है।

व्यश्च - ल्यप् परे रहते व्येञ् धातु को सम्प्रसारण नहीं होता है।

प्र + व्येञ् + ल्यप् / पूर्ववत् - प्र + व्या + य = प्रव्याय।

विभाषा परेः (६.१.४४) - परि उपसर्ग से उत्तर व्येञ् धातु को विकल्प से सम्प्रसारण नहीं होता है। परि + व्येञ् + ल्यप् / व् को सम्प्रसारण होने पर - परि + व् इ ए + य / सम्प्रसारणाच्च सूत्र से 'ए' को पूर्वरूप होकर - परि वि + य / हलः सूत्र से इ को दीर्घ करके = परिवीय यूपम्। सम्प्रसारण न होने पर - परि + व्ये + ल्यप् / परिव्या + य = परिव्याय।

ह्वेञ् धातु - यह धातु सम्प्रसारणी है।

आ + ह्वेञ् + ल्यप् / वचिस्वपियजा. से व् को सम्प्रसारण होकर - आ + ह् ऊ ए + य / सम्प्रसारणाच्च सूत्र से 'ए' को पूर्वरूप होकर - आ हू + य = आहूय।

मेङ् धातु -

मयतेदिरन्यतरस्याम् (६.४.७०) - मेङ् प्राणिदाने धातु को विकल्प से इकारादेश होता है ल्यप् प्रत्यय परे होने पर।

अप + मेङ् + ल्यप् / इकारादेश होने पर - अप + मि + य -

ह्रस्वस्य पिति कृति तुक् (६.१.७१) - ह्रस्व इकारान्त, ह्रस्व उकारान्त तथा ह्रस्व ऋकारान्त धातुओं को तुक् = त् का आगम होता है, पित् कृत् प्रत्यय परे होने पर।

अप + मि + तुक् + य / अप + मि + त् + य = अपमित्य।

इकारादेश न होने पर - अप + मा + य = अपमाय।

ज्या धातु - यह धातु सम्प्रसारणी है।

'ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च' सूत्र से कित् होने के कारण 'ल्यप्' परे होने पर, ज्या धातु को सम्प्रसारण होना चाहिये। किन्तु-

ज्यश्च (६.१.४२) - ल्यप् परे रहते ज्या धातु को सम्प्रसारण नहीं होता है।

प्र + ज्या + ल्यप् = प्रज्याय / उप + ज्या + ल्यप् = उपज्याय।

घुसंज्ञक दा, धा धातु, मा, स्था गा, पा ओहाक्-हा और षो-सा धातु -

घुमास्थागापाजहातिसां हलि (६.४.६६) - घुसंज्ञक धातु, मा, स्था गा, पा हा और सा धातुओं को ईकार होता है, कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

इस सूत्र से इन आकारान्त धातुओं के 'आ' को ईकारादेश प्राप्त होने पर -

न ल्यपि (६.४.६९) - घु, मा, स्था आदि धातुओं को ल्यप् परे रहते जो कुछ भी कहा है वह नहीं होता है। प्रदाय, प्रधाय, प्रमाय, प्रस्थाय, प्रगाय, प्रमाय, प्रहाय, अवसाय।

शेष आकारान्त तथा एजन्त धातु -

शेष किसी भी आकारान्त तथा एजन्त धातु को कुछ मत कीजिये -

जैसे - प्र + दा + ल्यप् = प्रदाय / नि + धा + ल्यप् = निधाय / वि + धे - धा + ल्यप् = विधाय / वि + मा + ल्यप् = विमाय / वि + ग्लै - ग्ला + ल्यप् = विग्लाय। वि + म्लै + ल्यप् - विम्ला + य = विम्लाय। अभि + ध्यै + ल्यप् - अभि + ध्या + ल्यप् = अभिध्याय, आदि।

इकारान्त धातु -

श्वि धातु - यह धातु सम्प्रसारणी है।

उत् + श्वि + ल्यप् / 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' सूत्र से सम्प्रसारण करके - उत् + श् उ इ + य / सम्प्रसारणाच्च सूत्र से 'इ' को पूर्वरूप होकर - उत् श् उ + य / हलः सूत्र से उ को दीर्घ करके - उत् + शू + य / अब स्तोः श्चुना श्चुः सूत्र से त् को श्चुत्व करके - उच् + शूय / 'छत्वममीति वाच्यम्' इस वार्तिक से श् को छत्व करके = उच्छूय।

डुमिञ् धातु - प्र + मि + ल्यप्

मीनातिमिनोतिदीङां ल्यपि च (६.१.५०) - मीञ्, डुमिञ् तथा दीङ् धातुओं को ल्यप् परे रहते तथा एच् के विषय में उपदेश की अवस्था में ही आत्व हो जाता है।

प्र + मि + ल्यप् / प्र + मा + य = प्रमाय। इसी प्रकार - निमाय।

क्षि धातु -

क्षियः (६.४.५९) - क्षि क्षये तथा क्षि निवासगत्योः धातु को दीर्घ होता है, ल्यप् परे होने पर। प्र + क्षि + ल्यप् / प्र + क्षी + य = प्रक्षीय।

शेष ह्रस्व इकारान्त धातु -

ह्रस्वस्य पिति कृति तुक् (६.१.७१) - ह्रस्व इकारान्त, ह्रस्व उकारान्त तथा ह्रस्व ऋकारान्त धातुओं को तुक् = त् का आगम होता है, पित् कृत् परे होने पर। जैसे-

वि + जि + तुक् + ल्यप् = विजित्य / वि + चि + तुक् + ल्यप् = विचित्य।

ईकारान्त धातु -

लीङ् श्लेषणे तथा ली श्लेषणे धातु -

विभाषा लीयतेः (६.१.५१) - लीङ् श्लेषणे तथा ली श्लेषणे इन दोनों हीं धातुओं को ल्यप् परे रहते तथा एच् के विषय में उपदेश की अवस्था में ही विकल्प से आत्व हो जाता है। आत्व होने पर - वि + लीङ् + ल्यप् / वि + ला + य = विलाय।

इसी प्रकार ली से विलाय। आत्व न होने पर - वि + ली + ल्यप् = विलीय।

दीङ्, मीञ्, धातु -

मीनातिमिनोतिदीङां ल्यपि च (६.१.५०) - मीञ्, डुमिञ् तथा दीङ् धातुओं को ल्यप् परे रहते तथा एच् के विषय में उपदेश की अवस्था में ही आत्व हो जाता है।

उप + दीङ् + ल्यप् = उपदाय। प्र + मीञ् + ल्यप् = प्रमाय।

शेष ईकारान्त धातु - इन्हें कुछ मत कीजिये -

वि + नी + ल्यप् = विनीय / वि + भी + ल्यप् = विभीय, आदि।

ह्रस्व उकारान्त धातु -

आ + हु + तुक् + ल्यप् / 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' सूत्र से तुगागम करके = आहुत्य। प्र + द्रु + तुक् + ल्यप् = प्रद्रुत्य।

युप्लुवोदीर्घश्छन्दसि (६.४.५८) - वेद विषय में यु मिश्रणे तथा प्लुङ् गतौ धातु को दीर्घ होता है ल्यप् परे होने पर। दान्त्यनुपूर्वं वियूय। यत्रा नो दक्षिणा परिप्लूय।

ऊकारान्त धातु -

ब्रू धातु -

ब्रुवो वचिः (२.४.५३) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ब्रू धातु को वच् आदेश होता है। प्र + ब्रू + ल्यप् / प्र + वच् + य / वचिस्वपियजादीनां किति सूत्र से सम्प्रसारण होकर - प्र + उच् + य = प्रोच्य।

शेष ऊकारान्त धातु - इन्हें कुछ मत कीजिये। जैसे -

वि + धू + ल्यप् = विधूय / सम् + भू + ल्यप् = संभूय, आदि।

ऋकारान्त धातु -

वि + हृ + तुक् + ल्यप् / ह्रस्वस्य पिति कृति तुक् सूत्र से तुगागम करके = विहृत्य / प्र + हृ + तुक् + ल्यप् = प्रहृत्य / उप + कृ + तुक् + ल्यप् = उपकृत्य / आ + वृ + ल्यप् = आवृत्य, आदि।

दीर्घ ॠकारान्त धातु -

पॄ, भॄ, वॄ, मॄ, धातु -

उदोष्ठ्यपूर्वस्य (७.१.१०२) - कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर, ॠ को 'उ' होता है, यदि उस दीर्घ ॠ के पूर्व में आने वाला वर्ण ओष्ठ्य हो तो। प्र + पॄ + ल्यप्-

उरण् रपरः (१.१.५१) - जब भी किसी सूत्र से ऋ के स्थान पर, अ, इ, या उ होना कहा जाये तब उन्हें अर्, इर्, उर् करना चाहिये। अतः उदोष्ठ्यपूर्वस्य से ॠ के स्थान पर होने वाले ॠ को 'उर्' होता है। प्र + पॄ + ल्यप् - प्र + पुर् + ल्यप्-

हलि च (८.२.७७) - हल् परे होने पर रेफान्त तथा वकारान्त धातुओं की उपधा के इक् को दीर्घ होता है। अतः 'उर्' को 'ऊर्' कीजिये - प्र + पुर् + ल्यप् - प्र + पूर् + य = प्रपूर्य।

प्र	+	पॄ	-	प्रपॄ	+	ल्यप्	=	प्रपूर्य
प्र	+	भॄ	-	प्रभॄ	+	ल्यप्	=	प्रभूर्य
सम्	+	मॄ	-	संमॄ	+	ल्यप्	=	संमूर्य
आ	+	वॄञ्	-	आवॄ	+	ल्यप्	=	आवूर्य
आ	+	वॄञ्	-	आवॄ	+	ल्यप्	=	आवूर्य

ध्यान दें कि इनमें ॠ के पूर्व में प्, व्, भ् हैं, जो कि ओष्ठ्य वर्ण हैं, अतः ॠ को ऊर् हुआ है।

शेष ॠकारान्त धातु -

ॠत इद् धातोः (७.१.१००) - धातु के अन्त में आने वाले दीर्घ ॠ को इ आदेश होता है कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर।

उरण् रपरः (१.१.५१) - जब भी किसी सूत्र से ऋ के स्थान पर, अ, इ, या उ होना कहा जाये तब उन्हें अ, इ, या उ न करके अर्, इर्, उर् करना चाहिये।

अतः - तॄ + क्त्वा - तिर् + क्त्वा -

हलि च (८.२.७७) - हल् परे होने पर रेफान्त तथा वकारान्त धातुओं की

उपधा के इक् को दीर्घ होता है। अतः 'इर्' को 'ईर्' होता है। तिर् + त्वा - तीर् + त्वा - तीर्त्वा।

उत्	+	तॄ	-	उत्तॄ	+	ल्यप्	=	उत्तीर्य
वि	+	जॄष्	-	जॄ	+	ल्यप्	=	विजीर्य
वि	+	झॄष्	-	झॄ	+	ल्यप्	=	विझीर्य
वि	+	कॄ	-	कॄ	+	ल्यप्	=	विकीर्य
वि	+	कॄञ्	-	कॄ	+	ल्यप्	=	विकीर्य
वि	+	कॄ	-	कॄ	+	ल्यप्	=	विकीर्य
सम्	+	गॄ	-	गॄ	+	ल्यप्	=	संगीर्य
सम्	+	गॄ	-	गॄ	+	ल्यप्	=	संगीर्य
आ	+	स्तॄञ्	-	स्तॄ	+	ल्यप्	=	आस्तीर्य
वि	+	शॄ	-	शॄ	+	ल्यप्	=	विशीर्य
वि	+	दॄ	-	दॄ	+	ल्यप्	=	विदीर्य
वि	+	जॄ	-	जॄ	+	ल्यप्	=	विजीर्य
वि	+	नॄ	-	नॄ	+	ल्यप्	=	विनीर्य
सम्	+	ॠ	-	ॠ	+	ल्यप्	=	समीर्य

वर्ग - २

भ्वादिगण से लेकर क्र्यादिगण तक के हलन्त धातुओं में ल्यप् प्रत्यय लगाना

अस् धातु -

अस्तेर्भूः (२.४.५२) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अस् धातु को भू आदेश होता है। सम् + अस् + ल्यप् = संभूय।

चक्ष् धातु -

चक्षिङः ख्याञ् (२.४.५४) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर चक्ष् धातु को ख्या आदेश होता है। वि + चक्ष् + ल्यप् = विख्याय।

अज् धातु -

अजेर्व्यघञपोः (२.४.५६) - घञ्, अप् को छोड़कर शेष सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अज् धातु को वी आदेश होता है। सम् + अज् + ल्यप् = संवीय।

जन्, षणु दाने, खन् धातु -

ये विभाषा (६.४.४३) – यकारादि कित् ङित् प्रत्ययों के परे रहते जन्, सन्, खन् अङ्गों को विकल्प से आकारादेश हो जाता है।

प्र + जन् + ल्यप् = प्रजन्य / प्रजाय।
प्र + सन् + ल्यप् = प्रसन्य / प्रसाय।
प्र + खन् + ल्यप् = प्रखन्य / प्रखाय।

गम्, रम्, नम्, यम् –

वा ल्यपि (६.४.३८) – नकारान्त तथा मकारान्त अनुदात्तोपदेश धातु, वन सम्भक्तौ धातु तथा तनोत्यादि धातुओं के अनुनासिक का विकल्प से लोप होता है।

यह व्यवस्थित विभाषा है। अत: इन धातुओं में से मकारान्त धातुओं के म् का विकल्प से लोप होता है और शेष धातुओं के अनुनासिक का नित्य लोप होता है।

अनुदात्तोपदेश (अनिट्) मकारान्त धातु –

प्र + यम् - प्र + यम् + ल्यप् = प्रयत्य / प्रयम्य
प्र + रम् - प्र + रम् + ल्यप् = प्ररत्य / प्ररम्य
प्र + नम् - प्र + नम् + ल्यप् = प्रणत्य / प्रणम्य
आ + गम् - प्र + गम् + ल्यप् = आगत्य / आगम्य

बचे हुए मन्, हन्, तन्, मन्, वन्, ऋण्, क्षण्, क्षिण्, घृण्, तृण्, धातु –

प्र + तनु - प्र + तन् + ल्यप् = प्रतत्य
प्र + मनु - प्र + मन् + ल्यप् = प्रमत्य
प्र + वनु - प्र + वन् + ल्यप् = प्रवत्य
प्र + वन् - प्र + वन् + ल्यप् = प्रवत्य
सम् + ऋणु - सम् + ऋण् + ल्यप् = समृत्य
प्र + क्षणु - प्र + क्षण् + ल्यप् = प्रक्षत्य
प्र + क्षिणु - प्र + क्षिण् + ल्यप् = प्रक्षित्य
प्र + घृणु - प्र + घृण् + ल्यप् = प्रघृत्य
प्र + तृणु - प्र + तृण् + ल्यप् = प्रतृत्य
प्र + मन् - प्र + मन् + ल्यप् = प्रमत्य
प्र + हन् - प्र + हन् + ल्यप् = प्रहत्य

वच्, स्वप्, यज्, वप्, वह्, वस्, वद्, धातु –

वचिस्वपियजादीनाम् किति (६.१.१५) – वेञ्, ह्वेञ्, श्वि, व्येञ्, ये ११ धातु

'वच्यादि धातु' कहलाते हैं। इन वच्यादि धातुओं को सम्प्रसारण होता है, कित् प्रत्यय परे होने पर।

ग्रह्, व्यध्, वश्, व्यच्, व्रश्च्, प्रच्छ्, भ्रस्ज्, धातु -

ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च (६.१.१६) - ग्रह्, ज्या, वय्, व्यध्, वश्, व्यच्, व्रश्च्, प्रच्छ्, भ्रस्ज्, इन धातुओं को सम्प्रसारण होता है कित् तथा ङित् प्रत्यय परे होने पर।

इन सम्प्रसारणी धातुओं को इस प्रकार सम्प्रसारण कीजिये -

प्र	+	वच्	+	ल्यप्	-	प्र	+	उच्	+	य	=	प्रोच्य
प्र	+	स्वप्	+	ल्यप्	-	प्र	+	सुप्	+	य	=	प्रसुप्य
प्र	+	यज्	+	ल्यप्	-	प्र	+	इज्	+	य	=	प्रेज्य
प्र	+	वप्	+	ल्यप्	-	प्र	+	उप्	+	य	=	प्रोप्य
प्र	+	वह्	+	ल्यप्	-	प्र	+	उह्	+	य	=	प्रोह्य
प्र	+	वस्	+	ल्यप्	-	प्र	+	उस्	+	य	=	प्रोष्य
प्र	+	वद्	+	ल्यप्	-	प्र	+	उद्	+	य	=	प्रोद्य
प्र	+	ग्रह्	+	ल्यप्	-	प्र	+	गृह्	+	य	=	प्रगृह्य
प्र	+	व्यध्	+	ल्यप्	-	प्र	+	विध्	+	य	=	प्रविद्ध्य
प्र	+	वश्	+	ल्यप्	-	प्र	+	उश्	+	य	=	प्रोश्य
प्र	+	व्यच्	+	ल्यप्	-	प्र	+	विच्	+	य	=	प्रविच्य
प्र	+	व्रश्च्	+	ल्यप्	-	प्र	+	वृश्च्	+	य	=	प्रवृश्च्य
प्र	+	प्रच्छ्	+	ल्यप्	-	प्र	+	पृच्छ्	+	य	=	प्रपृच्छ्य
प्र	+	भ्रस्ज्	+	ल्यप्	-	प्र	+	भृज्ज्	+	य	=	प्रभृज्य

अनिदित् धातु -

अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति - अनिदित् हलन्त धातुओं की उपधा के 'न्' का लोप होता है, कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

प्र	+	स्कन्द्	+	ल्यप्	-	प्र	+	स्कद्	+	य	=	प्रस्कद्य
प्र	+	स्रंस्	+	ल्यप्	-	प्र	+	स्रस्	+	य	=	प्रस्रस्य
प्र	+	ध्वंस्	+	ल्यप्	-	प्र	+	ध्वस्	+	य	=	प्रध्वस्य
प्र	+	भ्रंस्	+	ल्यप्	-	प्र	+	भ्रस्	+	य	=	प्रभ्रस्य
प्र	+	भ्रंश्	+	ल्यप्	-	प्र	+	भ्रश्	+	य	=	प्रभ्रश्य

प्र + स्तंभ् + ल्यप् - प्र + स्तभ् + य = प्रस्तभ्य
प्र + मन्थ् + ल्यप् - प्र + मथ् + य = प्रमथ्य
प्र + ग्रन्थ् + ल्यप् - प्र + ग्रथ् + य = प्रग्रथ्य
प्र + श्रन्थ् + ल्यप् - प्र + श्रथ् + य = प्रश्रथ्य
प्र + कुन्थ् + ल्यप् - प्र + कुथ् + य = प्रकुथ्य
प्र + शुन्ध् + ल्यप् - प्र + शुध् + य = प्रशुध्य
प्र + कुञ्च् + ल्यप् - प्र + कुच् + य = प्रकुच्य
प्र + क्रुञ्च् + ल्यप् - प्र + क्रुच् + य = प्रक्रुच्य
प्र + लुञ्च् + ल्यप् - प्र + लुच् + य = प्रलुच्य
प्र + म्रुञ्च् + ल्यप् - प्र + म्रुच् + य = प्रम्रुच्य
प्र + म्लुञ्च् + ल्यप् - प्र + म्लुच् + य = प्रम्लुच्य
प्र + ग्लुञ्च् + ल्यप् - प्र + ग्लुच् + य = प्रग्लुच्य
प्र + वञ्च् + ल्यप् - प्र + वच् + य = प्रवच्य
प्र + चञ्च् + ल्यप् - प्र + चच् + य = प्रचच्य
प्र + त्वञ्च् + ल्यप् - प्र + त्वच् + य = प्रत्वच्य
प्र + तञ्च् + ल्यप् - प्र + तच् + य = प्रतच्य
प्र + श्रम्भ् + ल्यप् - प्र + श्रभ् + य = प्रश्रभ्य
प्र + दम्भ् + ल्यप् - प्र + दभ् + य = प्रदभ्य
प्र + षृम्भ् + ल्यप् - प्र + सृभ् + य = प्रसृभ्य
प्र + हम्म् + ल्यप् - प्र + हम् + य = प्रहम्य
प्र + शंस् + ल्यप् - प्र + शस् + य = प्रशस्य
प्र + कुंस् + ल्यप् - प्र + कुस् + य = प्रकुस्य
प्र + रञ्ज् + ल्यप् - प्र + रज् + य = प्ररज्य
प्र + स्यन्द् + ल्यप् - प्र + स्यद् + य = प्रस्यद्य
प्र + भञ्ज् + ल्यप् - प्र + भज् + य = प्रभज्य
प्र + बन्ध् + ल्यप् - प्र + बध् + य = प्रबध्य
सम् + अञ्च् + ल्यप् - सम् + अच् + य = समच्य
सम् + अञ्ज् + ल्यप् - सम् + अज् + य = समज्य
सम् + उन्द् + ल्यप् - सम् + उद् + य = समुद्य

सम्	+	इन्ध्	+	ल्यप्	-	सम्	+	इध्	+	य	=	समिध्य
प्र	+	त्रुम्प्	+	ल्यप्	-	प्र	+	त्रुप्	+	य	=	प्रत्रुप्य
प्र	+	त्रुम्फ्	+	ल्यप्	-	प्र	+	त्रुफ्	+	य	=	प्रत्रुफ्य
प्र	+	तृम्फ्	+	ल्यप्	-	प्र	+	तृफ्	+	य	=	प्रतृफ्य
प्र	+	तुम्फ्	+	ल्यप्	-	प्र	+	तुफ्	+	य	=	प्रतुफ्य
प्र	+	दृम्फ्	+	ल्यप्	-	प्र	+	दृफ्	+	य	=	प्रदृफ्य
सम्	+	ऋम्फ्	+	ल्यप्	-	सम्	+	ऋफ्	+	य	=	समृफ्य
प्र	+	गुम्फ्	+	ल्यप्	-	प्र	+	गुफ्	+	य	=	प्रगुफ्य
सम्	+	उम्भ्	+	ल्यप्	-	सम्	+	उभ्	+	य	=	समुभ्य
प्र	+	शुम्भ्	+	ल्यप्	-	प्र	+	शुभ्	+	य	=	प्रशुभ्य
प्र	+	तुम्प्	+	ल्यप्	-	प्र	+	तुप्	+	य	=	प्रतुप्य
प्र	+	तृन्ह्	+	ल्यप्	-	प्र	+	तृह्	+	य	=	प्रतृह्य
प्र	+	बुन्द्	+	ल्यप्	-	प्र	+	बुद्	+	य	=	प्रबुद्य
प्र	+	षञ्ज्	+	ल्यप्	-	प्र	+	सज्	+	य	=	प्रसज्य
प्र	+	ष्वञ्ज्	+	ल्यप्	-	प्र	+	स्वज्	+	य	=	प्रस्वज्य
प्र	+	दंश्	+	ल्यप्	-	प्र	+	दश्	+	य	=	प्रदश्य
प्र	+	स्यन्दू	+	ल्यप्	-	प्र	+	स्यद्	+	य	=	प्रस्यद्य

शेष हलन्त धातु - इन्हें कुछ मत कीजिये -

प्र + पठ् + ल्यप् = प्रपठ्य / वि + भिद् + ल्यप् = विभिद्य / वि + लिख् + ल्यप् = विलिख्य आदि।

वर्ग - ३

चुरादिगण के धातु तथा अन्य णिजन्त धातु

णिच् प्रत्यय दो प्रकार का होता है। एक तो चुरादिगण का स्वार्थिक णिच् तथा दूसरा हेतुमति च सूत्र से लगने वाला प्रेरणार्थक णिच् प्रत्यय।

चुरादिगण के तथा प्रेरणार्थक धातुओं के अन्त में 'णिच्' प्रत्यय लगा होने से वे णिजन्त धातु हैं। जैसे - चुर् + णिच् = चोरि। पठ् + णिच् = पाठि। लिख् + णिच् = लेखि / शम् + णिच् = शमि / कथ् + णिच् = कथि / गण् + णिच् = गणि, आदि।

चुरादिगण के धातुओं में णिच् लगाने की विधि 'अष्टाध्यायी सहज बोध' के द्वितीय

खण्ड में सविस्तर दी हुई है।

हमने देखा कि सारे णिजन्त धातुओं के अन्त में 'णिच्' प्रत्यय का 'इ' रहता ही है।

ल्यपि लघुपूर्वात् (६.४.५६) - लघु है पूर्व में जिससे ऐसे वर्ण से उत्तर णि के स्थान में ल्यप् परे रहते अयादेश हो जाता है।

णिच् लगा लेने के बाद णिजन्त धातु को देखिये कि यदि णिच् (इ) के पहिलें हल् हो, और उसके भी ठीक पहिले 'लघु स्वर' हो, तब 'णि' के स्थान पर 'अय्' आदेश कीजिये -

प्र + शमि + ल्यप् - प्र + शम् + अय् + य = प्रशमय्य गतः।
सम् + दमि + ल्यप् - सं + दम् + अय् + य = संदमय्य गतः।
प्र + कथि + ल्यप् - प्र + कथ् + अय् + य = प्रकथय्य।
वि + गणि + ल्यप् - वि + गण् + अय् + य = विगणय्य।

इसी प्रकार - प्रबेभिदि - प्रबेभिदय्य गतः।

आप् धातु -

विभाषाऽऽपः (६.४.५७) - आप् धातु से उत्तर ल्यप् परे रहते णि के स्थान में विकल्प से अयादेश होता है। प्रापय्य गतः। प्राप्य गतः।

शेष णिजन्त धातु -

शेष णिजन्त धातुओं में अन्तिम 'इ' का 'णेरनिटि' सूत्र से लोप कीजिये।

जैसे - प्र + चोरि - प्र + चोर् + य = प्रचोर्य। इसी प्रकार - उप + नि + मन्त्र् + णिच् = उपनिमन्त्रि / उपनिमन्त्रि + ल्यप् / उपनिमन्त्र् + य = उपनिमन्त्र्य आदि।

वर्ग - ४

प्रत्ययान्त धातु

सन्नन्त धातु

सन्नन्त धातुओं के अन्त में सदा ह्रस्व 'अ' होता है। इस 'अ' का 'अतो लोपः' सूत्र से लोप कीजिये - आ + जिगमिष + ल्यप् / अतो लोपः से अ का लोप करके - = आजिगमिष्य। प्रपिपठिष + ल्यप् / अतो लोपः से अ का लोप करके - प्रपिपठिष् + ल्यप् = प्रपिपठिष्य।

क्तिन् प्रत्यय तथा स्त्रीलिङ्ग में होने वाले अन्य प्रत्यय

अवश्यध्यातव्य - ध्यान रहे कि अष्टाध्यायी में ३.३.९४ से ३.३.११२ तक 'स्त्रियां क्तिन्' का अधिकार है। इस अधिकार में क्तिन्, नि, क्विप्, क्यप्, श, अ, अङ्, युच्, ण्वुल्, इक्, इञ्, इण्, तिप्, ण्वुच्, और इनि, ये पन्द्रह प्रत्यय कहे गये हैं।

इस 'स्त्रियां क्तिन्' के अधिकार में जो भी प्रत्यय कहे गये हैं, वे सब स्त्रीलिङ्ग में ही होते हैं। अतः उनके लगने के बाद उनमें स्त्रीत्व बोधक टाप् आदि प्रत्यय लगाकर ही स्त्रीत्व का बोध कराया जाता है। यथा -

भिद् + अङ् + टाप् = भिदा। कृ + क्यप् + टाप् = कृत्या। कृ + श + टाप् = क्रिया। चिकीर्ष + अ + टाप् = चिकीर्षा। पुत्रीय + अ + टाप् = पुत्रीया। पुत्रकाम्य + अ + टाप् = पुत्रकाम्या। लोलूय + अ + टाप् = लोलूया। कण्डूय + अ + टाप् = कण्डूया। आस् + युच् + टाप् = आसना, आदि।

किन्तु कुछ प्रत्यय ऐसे हैं, जिनसे बने हुए शब्दों से स्त्रीप्रत्यय लगाये बिना ही स्त्रीत्व का बोध हो जाता है। अतः कहाँ स्त्री प्रत्यय लगायें और कहाँ न लगायें, और कहाँ विकल्प से लगायें, इसके लिये हमें जानना चाहिये कि -

कृदिकारादक्तिनः (गणसूत्र) -

क्तिन् से भिन्न जो इकारान्त कृत् प्रत्ययान्त शब्द, उनसे स्त्रीत्व विवक्षा में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है। रात्रिः, रात्री। शकटिः, शकटी, आदि।

क्तिन् प्रत्ययान्त शब्दों से बिना स्त्रीप्रत्यय के ही स्त्रीत्व का बोध होता है - मतिः, गतिः, बुद्धिः, कृतिः, दृतिः, आदि।

शक्तिः शस्त्रे - शस्त्र अर्थ में शक्तिः, शक्ती। सामर्थ्य अर्थ में शक्तिः।

इतः प्राण्यङ्गात् - इकारान्त प्राण्यङ्गवाची वाचक शब्दों से भी स्त्रीत्व विवक्षा में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है। धमनिः, धमनी।

सर्वतोऽक्तिन्नर्थात् (गणसूत्र) - क्तिन् प्रत्यय का अर्थ 'भाव' है। अतः क्तिन्नर्थ प्रत्यय = भावार्थक प्रत्यय।

इकारान्त कृत् हो, अथवा इकारान्त अकृत् हो, यदि उसका अर्थ भाव न हो, तो उससे स्त्रीत्व विवक्षा में ङीष् प्रत्यय होता है।

अर्थात् भाव अर्थ होने पर इकारान्त शब्दों से ङीष् प्रत्यय नहीं होता। ऐसी स्थिति में बिना स्त्रीप्रत्यय के ही इनसे स्त्रीत्व का बोध होता है। यथा -

भिद्	+	इक्	=	भिदि:	छिद्	+	इक्	=	छिदि:।
पच्	+	इक्	=	पचि:	अत्	+	इण्	=	आति:
अज्	+	इण्	=	आजि:	अद्	+	इण्	=	आदि:
वप्	+	इञ्	=	वापि:	वस्	+	इञ्	=	वासि:
कृष्	+	इक्	=	कृषि:	कॄ	+	इक्	=	किरि:
गॄ	+	इक्	=	गिरि:	हा	+	नि	=	हानि:
अकृ	+	अनि	=	अकरणि:	अजीव्	+	अनि	=	अजीवनि:

स्त्र्यधिकार के प्रत्यय

ध्यान रहे कि यहाँ केवल क्तिन् प्रत्यय को लगाने की विधि बतलाई जा रही है। क्तिन् के अलावा जो चौदह प्रत्यय हैं, उन्हें लगाने की विधि तो यथास्थान कही जा चुकी है। अत: यहाँ उनका केवल संग्रह किया जा रहा है -

स्त्रियां क्तिन् (३.३.९४) - धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में 'क्तिन्' प्रत्यय होता है।

ध्यान रहे कि - जैसे क्त, क्तवतु, क्त्वा, तुमुन्, तव्य, तृच्, आदि प्रत्यय सभी धातुओं से लगते हैं, वैसे यह क्तिन् प्रत्यय सारे धातुओं से नहीं लगता, क्योंकि इस क्तिन् प्रत्यय के अनेक अपवाद हैं। अत: पहिले उन धातुओं का विचार कर लेना चाहिये, जिन धातुओं से क्तिन् प्रत्यय न होकर अन्य प्रत्यय होते हैं। ये इस प्रकार हैं -

वे धातु, जिनसे क्तिन् प्रत्यय न होकर अन्य प्रत्यय होते हैं -

नि प्रत्यय

ज्याम्लाग्लाहाभ्यो नि: (**वार्तिक ३.३.९४**) - ज्या, म्लै, ग्लै, ओहाक्, ओहाङ्, इन धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में नि प्रत्यय होता है।

ज्या	+	नि	=	ज्यानि:	हा	+	नि	=	हानि:
ग्लै-ग्ला	+	नि	=	ग्लानि:	म्लै-म्ला	+	नि	=	म्लानि:

क्विप् प्रत्यय

संपदादिभ्य: क्विप् (**वार्तिक ३.३.९४**) - सम् आदिपूर्वक पद् धातु से स्त्रीलिङ्ग

में, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में क्विप् प्रत्यय होता है।

क्तिन्नपीष्यते (वार्तिक ३.३.९४) - सम् उपपदपूर्वक पद् धातु से क्तिन् प्रत्यय भी होता है। सम्पदादिगण पठित शब्द इस प्रकार हैं -

सम् + पद् + क्विप् = सम्पद् | सम् + पद् + क्तिन् = सम्पत्तिः
वि + पद् + क्विप् = विपद् | वि + पद् + क्तिन् = विपत्तिः
आ + पद् + क्विप् = आपद् | आ + पद् + क्तिन् = आपत्तिः
प्रति + पद् + क्विप् = प्रतिपद् | प्रति + पद् + क्तिन् = प्रतिपत्तिः
परि + सद् + क्विप् = परिषद् | परि + सद् + क्तिन् = परिषत्तिः

क्यप् प्रत्यय

व्रजयजोर्भावे क्यप् (३-३-९८) - व्रज तथा यज धातुओं से स्त्रीलिङ्ग भाव में क्यप् प्रत्यय होता है, और वह उदात्त होता है।

व्रज् + क्यप् + टाप् = व्रज्या
इज् + क्यप् + टाप् = इज्या

संज्ञायां समजनिषदनिपतमनविदषुञ्शीङ्भृञिणः (३-३-९९) -

संज्ञाविषय में सम् पूर्वक अज् गतिक्षेपणयोः, नि पूर्वक षद्लृ, पत्लृ गतौ, मन् ज्ञाने, विद ज्ञाने, शीङ् स्वप्ने, षुञ् अभिषवे, भृञ् भरणे, इण् गतौ धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में क्यप् प्रत्यय होता है, और वह उदात्त होता है। उदाहरण -

समजन्त्यस्याम् = समज्या। सम् + अज् + टाप् / 'अजेर्व्यघञपोः' (२.४.५६) सूत्र से अज् धातु को वीभाव प्राप्त होने पर -

अजेः क्यपि वीभावो नेति वाच्यम् (२.४.५६) - क्यप् प्रत्यय परे होने पर अज् धातु को वी आदेश नहीं होता, क्योंकि संज्ञा का बोध विशेष क्रम में स्थित आनुपूर्वी से ही होता है। सम् + अज् + क्यप् + टाप् = समज्या।

निषीदन्त्यस्याम् = निषद्या (नि + सद् + क्यप्)। इसी प्रकार - निपतन्त्यस्याम् = निपत्या (नि + पत् + क्यप् + टाप्)। मन्यते तया मन्या (मन् + क्यप् + टाप्)। विदन्ति तया = विद्या (विद् + क्यप् + टाप्)।

सुन्वन्ति तस्यां सुत्या। सु + क्यप् + टाप् / 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' सूत्र से ह्रस्व को तुक् का आगम करके - सु + तुक् + य + आ = सुत्या।

इसी प्रकार - भरणं = भृत्या (जीविका)। (भृ + तुक् + क्यप् + टाप्)

ईयते गम्यते यया इत्या (शिबिका)। (इ + तुक् + क्यप् + टाप्)

शेरते तस्यां शय्या। शी + क्यप् + टाप् / 'अयङ् यि क्ङिति' सूत्र से ई को अयङ् आदेश करके - शय् + य + आ = शय्या।

विशेष - ध्यान दें कि यह क्यप् प्रत्यय संज्ञा अर्थ में होता है, अतः भाव अर्थ में क्तिन् आदि अन्य प्रत्यय भी हो सकते हैं। मतिः, भृतिः, आसुतिः, आदि।

श प्रत्यय

कृञः शः च (३-३-१००) - कृञ् धातु से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में श प्रत्यय होता है तथा चकार से क्यप् भी होता है।

भाष्य में 'वा वचनं क्तिन्नर्थम्' कहकर क्तिन् का भी विधान होने से कृ धातु से तीन प्रत्यय हुए। क्तिन्, क्यप् और श।

कृ + क्तिन् + टाप् / 'क्ङिति च' से गुणनिषेध करके - कृतिः।

कृ + क्यप् + टाप् / 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' सूत्र से ह्रस्व को तुक् का आगम करके - कृ + तुक् + क्यप् + टाप् = कृत्या।

भाव अर्थ में श प्रत्यय होने पर - कृ + श + टाप् / श प्रत्यय सार्वधातुक है, अतः 'सार्वधातुके यक्' सूत्र से यक् करके - कृ + यक् + श + टाप् / 'रिङ्शयग्लिङ्क्षु' सूत्र से ऋ को रिङ् आदेश करके - क्रि + य + अ + आ = क्रिया।

श प्रत्यय भाव अर्थ में न होने पर - 'अचि श्नु धातु.' सूत्र से इयङ् आदेश करके - क्रिय् + अ + आ = क्रिया।

इच्छा (३-३-१०१) - भाव स्त्रीलिङ्ग में तुदादिगण के 'इष इच्छायाम्' धातु से श प्रत्ययान्त इच्छा शब्द निपातन किया जाता है। भावार्थक प्रत्यय होने के कारण श परे होने पर 'सार्वधातुके यक्' सूत्र से यक् भी प्राप्त था। उसका अभाव भी निपातन से होता है। इष् + श = इच्छा।

परिचर्यापरिसर्यामृगयाऽटाट्यानामुपसंख्यानम् (वार्तिक) - श प्रत्ययान्त परिचर्या, परिसर्या, मृगया, अटाट्या शब्दों को भी निपातन किया जाता है।

श प्रत्यय लगाकर निपातन से बनने वाले शब्द -

परि + सृ + श = परिसर्या   मृग् + श = मृगया

परि + चर् + श = परिचर्या   अट् + श = अटाट्या।

(अट् धातु से श, यक् परे होने पर, टकार को द्वित्व, पूर्वभाग में यकार की निवृत्ति, और दीर्घ, ये सारे कार्य निपातन से होते हैं।)

जागर्तेरकारो वा - जागृ धातु से विकल्प से अ प्रत्यय तथा श प्रत्यय होते हैं।

जागृ + अ / 'जाग्रोऽविचिण्णल्ङित्सु' सूत्र से गुण करके - जागर् + अ + आ = जागरा।

जागृ + श + टाप् / श प्रत्यय सार्वधातुक है, अतः 'सार्वधातुके यक्' सूत्र से यक् करके - जागृ + यक् + श + टाप् / रिङ् आदेश को बाधकर - 'जाग्रोऽविचिण्णल्ङित्सु' सूत्र से गुण करके - जागर् + य + अ + आ = जागर्या।

अ प्रत्यय

अ प्रत्ययात् (३-३-१०२) - प्रत्ययान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अ प्रत्यय होता है।

चिकीर्ष + अ + टाप् = चिकीर्षा। इसी प्रकार - जिहीर्ष् + अ + टाप् = जिहीर्षा। पुत्रीय + अ + टाप् = पुत्रीया। पुत्रकाम्य + अ + टाप् = पुत्रकाम्या। लोलूय + अ + टाप् = लोलूया। कण्डूय + अ + टाप् = कण्डूया।

गुरोश्च हलः (३-३-१०३) - हलन्त जो गुरुमान् धातु उनसे भी स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अ प्रत्यय होता है। कुण्ड् + अ + टाप् = कुण्डा। इसी प्रकार - हुण्डा, ईहा, ऊहा।

निष्ठायां सेट इति वक्तव्यम् (वा.) - जो धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर सेट् हों, ऐसे जो हलन्त गुरुमान् धातु, उनसे ही स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अ प्रत्यय होता है।

अतः हमें निष्ठा प्रत्यय में जाकर, निष्ठा प्रत्ययों की इडागम व्यवस्था देखकर, निष्ठा प्रत्यय परे होने पर सेट् हलन्त गुरुमान् धातुओं का निर्णय करना चाहिये और उनसे ही 'अ' प्रत्यय लगाना चाहिये। यथा -

अर्द् धातु हलन्त गुरुमान् है, किन्तु यह निष्ठा प्रत्यय परे होने पर, 'अर्देः संनिविभ्यः' सूत्र से सम्, नि, वि, उपसर्गों के साथ अनिट् होता है तथा 'अभेश्चाविदूर्ये' सूत्र से अभि उपसर्ग के साथ आविदूर्य अर्थ में भी अनिट् होता है। अन्यत्र यह सेट् होता है। अतः सम्, नि, वि, अभि उपसर्गों के साथ होने पर इससे क्तिन् प्रत्यय होना चाहिये और अन्यत्र 'अ' प्रत्यय होना चाहिये।

अञ्च् धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर, 'अञ्चेः पूजायाम्' सूत्र से पूजा अर्थ में सेट् होता है, अन्यत्र अनिट् होता है। अतः पूजा अर्थ होने पर इससे 'अ' प्रत्यय होना चाहिये और अन्यत्र 'क्तिन्' प्रत्यय होना चाहिये।

निष्ठा प्रत्यय में सेट् सारे हलन्त गुरुमान् धातु इस प्रकार हैं -

तङ्क्	तङ्का	शिक्ष्	शिक्षा	लङ्ग्	लङ्गा
शङ्क्	शङ्का	भिक्ष्	भिक्षा	अङ्ग्	अङ्गा
अङ्क्	अङ्का	दक्ष्	दक्षा	वङ्ग्	वङ्गा
वङ्क्	वङ्का	दीक्ष्	दीक्षा	इङ्ग्	इङ्गा
मङ्क्	मङ्का	रक्ष्	रक्षा	मङ्ग्	मङ्गा
कङ्क्	कङ्का	निक्ष्	निक्षा	तङ्ग्	तङ्गा
वङ्क्	वङ्का	नक्ष्	नक्षा	रिङ्ग्	रिङ्गा
ढौक्	ढौका	वक्ष्	वक्षा	लिङ्ग्	लिङ्गा
शीक्	शीका	मृक्ष्	मृक्षा	युङ्ग्	युङ्गा
लोक्	लोका	तक्ष्	तक्षा	जुङ्ग्	जुङ्गा
रेक्	रेका	सूर्क्ष्	सूर्क्षा	बुङ्ग्	बुङ्गा
सेक्	सेका	चक्ष्	चक्षा	वल्ग्	वल्गा
टीक्	टीका	दक्ष्	दक्षा	दङ्घ्	दङ्घा
तीक्	तीका	ओख्	ओखा	लङ्घ्	लङ्घा
वष्क्	वष्का	उङ्ख्	उङ्खा	मङ्घ्	मङ्घा
मस्क्	मस्का	वङ्ख्	वङ्खा	शिङ्घ्	शिङ्घा
फक्क्	फक्का	मङ्ख्	मङ्खा	रङ्घ्	रङ्घा
बुक्क्	बुक्का	रङ्ख्	रङ्खा	लङ्घ्	लङ्घा
हिक्क्	हिक्का	नङ्ख्	नङ्खा	अङ्घ्	अङ्घा
उक्ष्	उक्षा	लङ्ख्	लङ्खा	वङ्घ्	वङ्घा
ईक्ष्	ईक्षा	उङ्ख्	उङ्खा	मङ्घ्	मङ्घा
काङ्क्ष्	काङ्क्षा	इङ्ख्	इङ्खा	लाघ्	लाघा
वाङ्क्ष्	वाङ्क्षा	ईङ्ख्	ईङ्खा	राघ्	राघा
माङ्क्ष्	माङ्क्षा	शाख्	शाखा	कुञ्च्	कुञ्चा
धुक्ष्	धुक्षा	राख्	राखा	लुञ्च्	लुञ्चा
धिक्ष्	धिक्षा	लाख्	लाखा	श्वञ्च्	श्वञ्चा
वृक्ष्	वृक्षा	रङ्ग्	रङ्गा	कञ्च्	कङ्चा

काञ्च्	काञ्चा	लञ्ज्	लञ्जा	ईट्	ईटा
मुञ्च्	मुञ्चा	लाञ्ज्	लाञ्जा	रुण्ट्	रुण्टा
मञ्च्	मञ्चा	जञ्ज्	जञ्जा	लुण्ट्	लुण्टा
पञ्च्	पञ्चा	तुञ्ज्	तुञ्जा	शौट्	शौटा
लोच्	लोचा	गञ्ज्	गञ्जा	यौट्	यौटा
याच्	याचा	गृञ्ज्	गृञ्जा	अट्ट्	अट्टा
अर्च्	अर्चा	मुञ्ज्	मुञ्जा	वेष्ट्	वेष्टा
चर्च्	चर्चा	निञ्ज्	निञ्जा	चेष्ट्	चेष्टा
वर्च्	वर्चा	शिञ्ज्	शिञ्जा	गोष्ट्	गोष्टा
चर्च्	चर्चा	पिञ्ज्	पिञ्जा	लोष्ट्	लोष्टा
लाञ्छ्	लाञ्छा	कूज्	कूजा	रेट्	रेटा
वाञ्छ्	वाञ्छा	अर्ज्	अर्जा	एठ्	एठा
आञ्छ्	आञ्छा	सर्ज्	सर्जा	कुण्ठ्	कुण्ठा
उञ्छ्	उञ्छा	गर्ज्	गर्जा	लुण्ठ्	लुण्ठा
उञ्छ्	उञ्छा	तर्ज्	तर्जा	शुण्ठ्	शुण्ठा
लछ्	लच्छा	कर्ज्	कर्जा	रुण्ठ्	रुण्ठा
युच्छ्	युच्छा	खर्ज्	खर्जा	लुण्ठ्	लुण्ठा
विच्छ्	विच्छा	तेज्	तेजा	अण्ठ्	अण्ठा
उञ्छ्	उञ्छा	लाज्	लाजा	वण्ठ्	वण्ठा
ऋच्छ्	ऋच्छा	जर्ज्	जर्जा	मण्ठ्	मण्ठा
मिच्छ्	मिच्छा	लज्ज्	लज्जा	कण्ठ्	कण्ठा
एज्	एजा	सज्ज्	सज्जा	मण्ठ्	मण्ठा
एज्	एजा	जर्ज्	जर्जा	हेठ्	हेठा
ईज्	ईजा	उब्ज्	उब्जा	मण्ड्	मण्डा
गुञ्ज्	गुञ्जा	राज्	राजा	कुण्ड्	कुण्डा
ऋञ्ज्	ऋञ्जा	उज्झ्	उज्झा	चुण्ड्	चुण्डा
धृञ्ज्	धृञ्जा	झर्झ्	झर्झा	गण्ड्	गण्डा
खञ्ज्	खञ्जा	झर्झ्	झर्झा	गण्ड्	गण्डा

हिण्ड्	हिण्डा	कड्ड्	कड्डा	अन्द्	अन्दा
हुण्ड्	हुण्डा	ईड्	ईडा	इन्द्	इन्दा
कुण्ड्	कुण्डा	हेड्	हेडा	बिन्द्	बिन्दा
वण्ड्	वण्डा	ओण्	ओणा	भिन्द्	भिन्दा
मण्ड्	मण्डा	घिण्ण्	घिण्णा	निन्द्	निन्दा
भण्ड्	भण्डा	घुण्ण्	घुण्णा	नन्द्	नन्दा
पिण्ड्	पिण्डा	घृण्ण्	घृण्णा	चन्द्	चन्दा
मुण्ड्	मुण्डा	घूर्ण्	घूर्णा	कन्द्	कन्दा
तुण्ड्	तुण्डा	शोण्	शोणा	भन्द्	भन्दा
हुण्ड्	हुण्डा	पैण्	पैणा	मन्द्	मन्दा
मुण्ड्	मुण्डा	वेण्	वेणा	खाद्	खादा
चण्ड्	चण्डा	घूर्ण्	घूर्णा	णेद्	नेदा
शण्ड्	शण्डा	अन्त्	अन्ता	मेद्	मेदा
तण्ड्	तण्डा	संस्त्	संस्ता	षूद्	सूदा
पण्ड्	पण्डा	मन्थ्	मन्था	पर्द्	पर्दा
कण्ड्	कण्डा	मन्थ्	मन्था	गर्द्	गर्दा
खण्ड्	खण्डा	कुन्थ्	कुन्था	तर्द्	तर्दा
हूड्	हूडा	कुन्थ्	कुन्था	कर्द्	कर्दा
होड्	होडा	पुन्थ्	पुन्था	खर्द्	खर्दा
रौड्	रौडा	लुन्थ्	लुन्था	कन्द्	कन्दा
रोड्	रोडा	मन्थ्	मन्था	शुन्ध्	शुन्धा
लोड्	लोडा	नाथ्	नाथा	एध्	एधा
हेड्	हेडा	कत्थ्	कत्था	गाध्	गाधा
होड्	होडा	वेथ्	वेथा	बाध्	बाधा
बाड्	बाडा	ऊर्द्	ऊर्दा	नाध्	नाधा
शाड्	शाडा	कूर्द्	कूर्दा	मेध्	मेधा
चुड्ड्	चुड्डा	खूर्द्	खूर्दा	कम्प्	कम्पा
अड्ड्	अड्डा	गूर्द्	गूर्दा	तेप्	तेपा

वेप्	वेपा	अर्ब्	अर्बा	ईर्क्ष्य्	ईर्क्ष्या
केप्	केपा	पर्ब्	पर्बा	हर्य्	हर्या
गेप्	गेपा	लर्ब्	लर्बा	ताय्	ताया
मेप्	मेपा	बर्ब्	बर्बा	मव्य्	मव्या
रेप्	रेपा	भर्ब्	भर्बा	सूर्क्ष्य्	सूर्क्ष्या
कृप्-कल्प्	कल्पा	कर्ब्	कर्बा	शुच्य्	शुच्या
लेप्	लेपा	खर्ब्	खर्बा	खोर्	खोरा
जल्प्	जल्पा	गर्ब्	गर्बा	धोर्	धोरा
पुष्प्	पुष्पा	शर्ब्	शर्बा	ईर्	ईरा
धूप्	धूपा	सर्ब्	सर्बा	वेल्	वेला
पर्प्	पर्पा	चर्ब्	चर्बा	चेल्	चेला
तुम्प्	तुम्पा	शुम्भ्	शुम्भा	केल्	केला
त्रुम्प्	त्रुम्पा	उम्भ्	उम्भा	खेल्	खेला
तुम्फ्	तुम्फा	शुम्भ्	शुम्भा	पेल्	पेला
त्रुम्फ्	त्रुम्फा	जृम्भ्	जृम्भा	फेल्	फेला
तृम्फ्	तृम्फा	अभ्र्	अभ्रा	शेल्	शेला
दृम्फ्	दृम्फा	वभ्र्	वभ्रा	खोल्	खोला
ऋम्फ्	ऋम्फा	शीभ्	शीभा	वल्ल्	वल्ला
गुम्फ्	गुम्फा	चीभ्	चीभा	मल्ल्	मल्ला
रम्फ्	रम्फा	रेभ्	रेभा	भल्ल्	भल्ला
कुम्ब्	कुम्बा	शल्भ्	शल्भा	वल्ल्	वल्ला
लुम्ब्	लुम्बा	वल्भ्	वल्भा	मील्	मीला
तुम्ब्	तुम्बा	गल्भ्	गल्भा	पील्	पीला
चुम्ब्	चुम्बा	मभ्र्	मभ्रा	नील्	नीला
रम्ब्	रम्बा	हम्म्	हम्मा	शील्	शीला
लम्ब्	लम्बा	मीम्	मीमा	कील्	कीला
अम्ब्	अम्बा	भाम्	भामा	कूल्	कूला
लम्ब्	लम्बा	ईर्ष्य्	ईर्ष्या	शूल्	शूला

तूल्	तूला	जीव्	जीवा	यूष्	यूषा
पूल्	पूला	पीव्	पीवा	जूष्	जूषा
मूल्	मूला	मीव्	मीवा	भूष्	भूषा
चुल्ल्	चुल्ला	तीव्	तीवा	ईष्	ईषा
फुल्ल्	फुल्ला	नीव्	नीवा	ऊष्	ऊषा
चिल्ल्	चिल्ला	पूर्व्	पूर्वा	ईष्	ईषा
वेल्ल्	वेल्ला	पर्व्	पर्वा	एष्	एषा
खल्ल्	खल्ला	मर्व्	मर्वा	गेष्	गेषा
इन्व्	इन्वा	चर्व्	चर्वा	पेष्	पेषा
पिन्व्	पिन्वा	भर्व्	भर्वा	जेष्	जेषा
मिंन्व्	मिन्वा	कर्व्	कर्वा	नेष्	नेषा
निन्व्	निन्वा	खर्व्	खर्वा	रेष्	रेषा
हिन्व्	हिन्वा	गर्व्	गर्वा	हेष्	हेषा
दिन्व्	दिन्वा	अर्व्	अर्वा	भेष्	भेषा
जिन्व्	जिन्वा	शर्व्	शर्वा	भाष्	भाषा
रिन्व्	रिन्वा	षर्व्	सर्वा	कुंस्	कुंसा
रन्व्	रन्वा	धाव्	धावा	कंस्	कंसा
धन्व्	धन्वा	काश्	काशा	निंस्	निंसा
धिन्व्	धिन्वा	दाश्	दाशा	हिंस्	हिंसा
कृन्व्	कृण्वा	ईश्	ईशा	पेस्	पेसा
तेव्	तेवा	चूष्	चूषा	कास्	कासा
देव्	देवा	तूष्	तूषा	भास्	भासा
षेव्	सेवा	पूष्	पूषा	नास्	नासा
गेव्	गेवा	मूष्	मूषा	रास्	रासा
पेव्	पेवा	लूष्	लूषा	दास्	दासा
मेव्	मेवा	वर्ष्	वर्षा	ईह्	ईहा
रेव्	रेवा	रूष्	रूषा	दृंह्	दृंहा
चीव्	चीवा	शूष्	शूषा		

बृंह्	बृंहा	जेह्	जेहा	बर्ह्	बर्हा
वंह्	वंहा	वाह्	वाहा	बल्ह्	बल्हा
मंह्	मंहा	माह्	माहा	वर्ह्	वर्हा
अंह्	अंहा	गर्ह्	गर्हा	वल्ह्	वल्हा
वेह्	वेहा	गल्ह्	गल्हा	अर्ह्	अर्हा

अङ् प्रत्यय

षिद्भिदादिभ्योऽङ् (३-३-१०४) - षकार इत्संज्ञक है जिनका, ऐसे धातुओं से तथा भिदादिगण पठित धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में अङ् प्रत्यय होता है कर्त्तृ भिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में।

षित् धातु -

डुलभष् + अङ् + टाप् = लभा ('प्रतिवर्णमनुपलब्धेः', इस भाष्यप्रमाण से इससे क्तिन् भी हो सकता है - लब्धिः।)

जॄष् + अङ् + टाप् = जरा (ऋदृशोऽङि गुणः से गुण हुआ है।)

झॄष् + अङ् + टाप् = झरा (ऋदृशोऽङि गुणः से गुण हुआ है।)

त्रपूष् + अङ् + टाप् = त्रपा

क्षमूष् + अङ् + टाप् = क्षमा

भिदादिगण के धातु -

भिदा - भिद् + अङ् / 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध करके - भिदा। ध्यान दें कि विदारण अर्थ में अङ् प्रत्यय होकर भिदा बनता है, अन्यत्र क्तिन् होकर भित्तिः।

छिदा - छिद् + अङ् / 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध करके - छिदा। ध्यान दें कि द्वैधीकरण अर्थ में अङ् प्रत्यय होकर छिदा बनता है, अन्यत्र क्तिन् होकर छित्तिः।

विदा - विद ज्ञाने धातु से - विद् + अङ् / 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध करके - विदा।

गुहा - गुह् + अङ् + टाप् = गुहा
(गिरि, ओषधि अर्थ में गुहा, अन्यत्र गूढिः)

क्षिया - क्षि क्षये तथा क्षि निवासगत्योः धातुओं से अङ् होता है। क्षि हिंसायाम् से नहीं होता। क्षि + अङ् + टाप् - 'अचि श्नु.' से इयङ् आदेश करके = क्षिया।

आरा - ऋ + अङ् + टाप् / ऋदृशोऽङि गुणः से गुण करके निपातन

से दीर्घ करके = आरा। (शस्त्री अर्थ में आरा, अन्यत्र आर्तिः। इसी प्रकार -

हारा, तारा, धारा - हृ + अङ् + टाप् = हारा। धृ + अङ् + टाप् = धारा। तॄ + अङ् + टाप् = तारा। कॄ विक्षेपे + अङ् + टाप् = कारा।

श्रद्धा - श्रद् + धा = श्रद्धा (आतो लोप इटि च' सूत्र से आ का लोप)
लेखा - लिख् + अङ् = लेखा (निपातन से गुण।)
रेखा - लिख् + अङ् = रेखा (निपातन से गुण तथा रेफादेश।)
मेधा - मिध् + अङ् = मेधा (निपातन से गुण।)
चूडा - चुद् + अङ् = चूडा (सारे कार्य निपातन से)
पीडा - पीड् + अङ् = पीडा
वपा - वप् + अङ् = वपा
वसा - वस् + अङ् = वसा

वस निवासे धातु से अङ् होता है। वस आच्छादने से नहीं होता।

मृजा - सृज् + अङ् = मृजा
कृपा - क्रप् + अङ् = कृपा

(क्रपेः सम्प्रसारणं च, इस वार्तिक से सम्प्रसारण।)

चिन्तिपूजिकथिकुम्बिचर्चश्च - (३.३.१०५) यद्यपि चिन्ति, पूजि, कथि, कुम्बि, चर्च्, इन चुरादि धातुओं से ण्यन्त होने के कारण युच् प्रत्यय प्राप्त है किन्तु इस सूत्र से इन धातुओं से अङ् प्रत्यय होता है।

चिन्त् + अङ् = चिन्ता पूज् + अङ् = पूजा
कथ् + अङ् = कथा कुम्ब् + अङ् = कुम्बा
चर्च् + अङ् = चर्चा (सर्वत्र 'णेरनिटि' सूत्र से णिच् का लोप हुआ है।)

आतश्चोपसर्गे (३-३-१०६) - उपसर्ग उपपद में रहते आकारान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में अङ् प्रत्यय होता है कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में।

किन्तु ध्यान रहे कि 'स्थागापापचो भावे' सूत्र से स्था, गा, पा धातुओं से स्त्रीलिङ्ग भाव अर्थ में क्तिन् ही होता है। प्रस्थितिः, संगीतिः, उद्गीतिः, प्रपीतिः।

प्र + दा + अङ् - प्रद् + अ + टाप् = प्रदा
उप + दा + अङ् - उपद् + अ + टाप् = उपदा
प्र + धा + अङ् - प्रध् + अ + टाप् = प्रधा
उप + धा + अङ् - उपध् + अ + टाप् = उपधा

श्रद् + धा + अङ् - श्रद्ध् + अ + टाप् = श्रद्धा
अन्तर् + धा + अङ् - अन्तर्ध् + अ + टाप् = अन्तर्धा
सम् + ज्ञा + अङ् - संज्ञ + अ + टाप् = संज्ञा
(सर्वत्र 'आतो लोप इटि च' सूत्र से आ का लोप हुआ है।)

श्रदन्तरोरुपसर्गवद्वृत्तिः (वा.) - अङ्विधि में श्रत् तथा अन्तर् शब्दों को उपसर्गवत् माना जाता है। अतः श्रत् तथा अन्तर् शब्द उपपद में होने पर भी आकारान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में अङ् प्रत्यय होता है कर्त्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में। श्रद्धा। अन्तर्द्धा। अचोरहाभ्यां द्वे से द्वित्व करके -अन्तर्द्धा ।

युच् प्रत्यय

ण्यासश्रन्थो युच् (३-३-१०७) - ण्यन्त धातु, आस उपवेशने, श्रन्थ विमोचनप्रतिहर्षयोः (क्रयादिगण), इन धातुओं से युच् प्रत्यय होता है, कर्त्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में।

हलन्त गुरुमान् तथा निष्ठा में सेट् होने के कारण आस उपवेशने, श्रन्थ विमोचनप्रतिहर्षयोः (क्रयादिगण), इन धातुओं से 'गुरोश्च हलः' सूत्र से 'अ' प्रत्यय प्राप्त था, उसे बाधकर इन दो धातुओं से भी युच् प्रत्यय ही होता है, कर्त्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में। कृ + णिच् - कारि / कारि + युच् = कारणा। इसी प्रकार - हृ + णिच् - हारि / हारि + युच् = हारणा, आदि। आस् + युच् = आसना। श्रन्थ् + युच् - श्रन्थना।

घट्टिवन्दिविदिभ्य उपसंख्यानम् (वा. ३.३.१०७) - घट्ट्, वन्द् तथा तुदादिगण के लाभार्थक विद् धातु से स्त्रीलिङ्ग में युच् प्रत्यय होता है।

घट्ट् + युच् - घट्ट् + अन = घट्टना
वन्द् + युच् - वन्द् + अन = वन्दना
विद् + युच् - वेद् + अन = वेदना

इषेरनिच्छार्थस्य उपसंख्यानम् (वा. वही) - अनिच्छार्थक इष् धातु अर्थात् इष आभीक्ष्ण्ये (क्रयादिगण) तथा इष गतौ (दिवादिगण) धातुओं से भी युच् प्रत्यय होता है। अधि + इष् + युच् + टाप् / अधि + एष् + अन + आ = अध्येषणा। इसी प्रकार - अन्वेषणा।

परेर्वा (वा. वही) - परिपूर्वक इष् धातु से विकल्प से युच् प्रत्यय होता है। पर्येषणा, परीष्टिः।

ण्वुल् प्रत्यय

रोगाख्यायां ण्वुल्बहुलम् (३-३-१०८) - रोगविशेष की संज्ञा होने पर, धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में भाव अर्थ में ण्वुल् प्रत्यय बहुल करके होता है। यथा -

प्र + छर्दि + ण्वुल् (अक) = प्रच्छर्दिका।
प्र + वह् + ण्वुल् (अक) = प्रवाहिका।
वि + चर्च् + ण्वुल् (अक) = विचर्चिका।

धात्वर्थनिर्देशे ण्वुल् वक्तव्यः (वा.) - धात्वर्थ के निर्देश के लिये धातु से ण्वुल् प्रत्यय होता है। आस् + ण्वुल् (अक) = आसिका। शी + ण्वुल् (अक) = शायिका।

संज्ञायाम् - (३.३.१०९) - संज्ञा विषय में धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में भाव अर्थ में ण्वुल् प्रत्यय होता है। उद्दालकपुष्पभञ्जिका, वारणपुष्पप्रचायिका, अभ्यूषखादिका, आचोषखादिका, शालभञ्जिका, तालभञ्जिका। (ये सब खेलों के नाम हैं।)

विभाषाख्यानपरिप्रश्नयोरिञ्च - (३.३.११०) - उत्तर तथा प्रश्न गम्यमान होने पर, धातु से स्त्रीलिङ्ग में, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में, तथा भाव अर्थ में विकल्प से ण्वुल् तथा इञ् प्रत्यय होते हैं। पक्ष में अन्य भाववाची प्रत्यय भी हो सकते हैं।

परिप्रश्न अर्थ में इञ् प्रत्यय - त्वं कां कारिम् अकार्षीः ? (तुमने क्या काम किया?)

परिप्रश्न अर्थ में ण्वुल् प्रत्यय - त्वं कां कारिकाम् अकार्षीः? (तुमने क्या काम किया ?)

परिप्रश्न अर्थ में श प्रत्यय - त्वं कां क्रियाम् अकार्षीः? (तुमने क्या काम किया?)

परिप्रश्न अर्थ में क्तिन् प्रत्यय - त्वं कां कृतिम् अकार्षीः ? (तुमने क्या काम किया ?)

परिप्रश्न अर्थ में क्यप् प्रत्यय - त्वं कां कृत्याम् अकार्षीः ? (तुमने क्या काम किया ?)।

आख्यान अर्थ में पाँचों प्रत्यय - अहं सर्वां कारिं, कारिकां, क्रियां, कृतिं, कृत्यां वा अकार्षम्। (मैंने सब काम कर लिया।)

इसी प्रकार - कां गणिम्, गणिकाम्, गणनाम्, वा त्वम् अजीगणः ? (तुमने क्या गिनती की ?) अहं सर्वां गणिम्, गणिकाम्, गणनाम्, वा अजीगणम् ? (मैंने सब गिनती कर ली।)

कां पाठिम्, पाठिकां, पठितिम्, वा त्वम् अपठीः? (तुमने क्या पाठ पढ़ा ?) अहं

सर्वां पाठिम्, पाठिकां, पठितिम्, वा अपठिषम् ? (मैंने सब पाठ पढ़ लिया।)

कां याजिम्, याजिकां, यष्टिम्, वा त्वम् अयक्षीः ? अहं सर्वां याजिम्, याजिकां, यष्टिम्, वा अयक्षम्।

इक्, इञ्, इण्, तिप्, प्रत्यय

इक्श्तिपौ धातुनिर्देशे इति वक्तव्यम् (वा. ३.३.०८) - धातुमात्र के निर्देश के लिये धातु से इक् तथा तिप् प्रत्यय होते हैं।

इक् प्रत्यय - भिदिः। छिदिः। तिप् प्रत्यय - पचतिः। पठतिः।

इणजादिभ्यः (वार्तिक) - अज् आदि धातुओं से इण् प्रत्यय होता है।

अज् + इण् = आजिः
अत् + इण् = आतिः
अद् + इण् = आदिः

इञ्वपादिभ्यः (वार्तिक) -

वप् + इञ् = वापिः
वस् + इञ् = वासिः

इक् कृष्यादिभ्यः (वार्तिक) - कृष् आदि धातुओं से इक् प्रत्यय होता है।

कृष् + इक् = कृषिः
गॄ + इक् = गिरिः
कृ + इक् = करिः

ण्वुच् प्रत्यय

पर्यायार्हर्णोत्पत्तिषु ण्वुच् (३-३-१११) - पर्याय, अर्ह, ऋण, उत्पत्ति, इन अर्थों में धातु से स्त्रीलिङ्ग में, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में, तथा भाव अर्थ में विकल्प से ण्वुच् प्रत्यय होता है। यथा -

पर्याये - भवतः शायिका (आपके सोने की बारी)। भवतः अग्रग्रासिका (आपके प्रथम भोजन की बारी)। भवतः जागरिका (आपके जागने की बारी)।

अर्हे - भवान् इक्षुभक्षिकाम् अर्हति (आप गन्ना खाने के योग्य हैं।)। भवान् पयःपायिकाम् अर्हति (आप दूध पीने के योग्य हैं।)।

ऋणे - भवान् इक्षुभक्षिकां मे धारयति (मुझे गन्ना खिलाने का ऋण आपके ऊपर है।) भवान् ओदनभोजिकां मे धारयति (मुझे भात खिलाने का ऋण आपके ऊपर है।)।

उत्पत्तौ - इक्षुभक्षिका मे उदपादि। ओदनभोजिका मे उदपादि। पय:पायिका मे उदपादि। पक्षे - तव चिकीर्षा। मम चिकीर्षा।

अनि प्रत्यय

आक्रोशे नञ्यनि: (३-३-११२) - आक्रोश = क्रोधपूर्वक चिल्लाना गम्यमान हो, तो नञ् उपपद में रहते धातु से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में, तथा भाव अर्थ में विकल्प से अनि प्रत्यय होता है।

अकरिणस्ते वृषल ! भूयात्। अजीवनिस्ते शठ भूयात्। अप्रयाणिस्ते भूयात्।

क्तिन् प्रत्यय

स्त्रियां क्तिन् (३.३.९४) - धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में 'क्तिन्' प्रत्यय होता है।

ध्यान रहे कि क्त्वा आदि प्रत्ययों के समान क्तिन् प्रत्यय सारे धातुओं से नहीं लगता। अपितु ऊपर जिन भी धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में क्तिन् से भिन्न जो भी प्रत्यय कहा गया है, उनसे तो वही प्रत्यय होता है, तथा उनके अतिरिक्त अब जो धातु बच रहे हैं, उन धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में क्तिन् प्रत्यय होता है।

अत: धातुओं में क्तिन् प्रत्यय लगाने के पहिले यह विचार अवश्य कर लेना चाहिये कि उनसे क्तिन् प्रत्यय प्राप्त भी है, अथवा नहीं।

इडागम का विचार

तितुत्रतथसिसुसरकसेषु च (७.२.९) - ति, तु, त्र, त, थ, सि, सु, सर, क, स , इन दस प्रत्ययों को इडागम नहीं होता। अत: क्तिन् प्रत्यय अनिट् प्रत्यय है।

इसके अपवाद - तितुत्रेष्वग्रहादीनामिति वक्तव्यम् - क्तिन् को इडागम करके केवल चार शब्द बनते हैं। निगृहीतिः, निकुचितिः, उपस्निहितिः, निपठितिः।

अत: इन चार प्रयोगों को छोड़कर किसी भी धातु से होने वाले क्तिन् प्रत्यय को इडागम मत कीजिये।

क्तिन् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से न् की तथा लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोप:' से दोनों का लोप करके 'ति' शेष बचता है। यह तकारादि कित् आर्धधातुक प्रत्यय है। अत: इसके परे होने पर वे सारे कार्य होंगे, जो तकारादि कित् आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर कहे गये हैं।

हम जानते हैं कि प्रत्यय के कित् ङित् होने पर, मुख्यतः ये कार्य होते हैं-

१. गुणनिषेध।

२. ॠ के स्थान पर इर्, उर्। दीर्घ होकर ईर्, ऊर्।

३. अनिदित् धातुओं की उपधा के न् का लोप।

४. सम्प्रसारणी धातुओं को सम्प्रसारण।

ध्यान रहे कि इस ग्रन्थ में धातुओं के रूप उत्सर्गापवाद विधि से ही बनाये गये हैं। अतः इसमें हम सब धातुओं के रूप न बनाकर, केवल उन्हीं धातुओं के रूप बनायेंगे, जिनमें प्रत्यय लगने पर, धातु को, प्रत्यय को, अथवा दोनों को कुछ न कुछ परिवर्तन होता ही है। दूसरे यह कि इसमें हम धातुओं के रूप, धातुओं के आद्यक्षर के क्रम से न बनाकर, धातुओं के अन्तिम अक्षर को वर्णमाला के क्रम से रखकर बनायेंगे।

अब हम धातुओं में क्तिन् प्रत्यय लगायें -

आकारान्त तथा एजन्त धातु

जिनके अन्त में आ है, वे धातु आकारान्त हैं - जैसे - दा, धा, ला, आदि।

जिनके अन्त में एच् अर्थात् ए, ओ, ऐ, औ हैं उन एजन्त धातुओं के अन्तिम एच् के स्थान पर 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से 'आ' आदेश होता हैं। अतः आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर एजन्त धातु भी आकारान्त बन जाते हैं। जैसे - दे - दा / धे - धा / ग्लै - ग्ला / म्लै - म्ला / शो - शा / सो - सा आदि।

घुसंज्ञक धातु -

दाधाघ्वदाप् (१.१.२०)- ध्यान दें कि दारूप छह धातु हैं - दो - दा / देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा / दैप् - दा / दाप् - दा।

दारूप छह धातुओं में से - दो - दा / देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा, इन चार धातुओं की तथा धारूप धातुओं में से धेट् - धा / डुधाञ् - धा / इस प्रकार कुल ६ धातुओं की घु संज्ञा होती है। अब हम इनमें क्तिन् प्रत्यय लगायें -

दो अवखण्डने धातु -

द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति (७.४.४०) - दो-दा, षो-सा, मा, स्था धातुरूप अङ्गों को तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर, इकार अन्तादेश होता है।

निर् + दो + क्तिन् / निर् + दि + ति = निर्दितिः।

देङ् - दा / डुदाञ् - दा / दाण् - दा, धातु -

दो दद् घोः (७.४.४६) - घु संज्ञक दा धातु के स्थान में दथ् आदेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। दा + क्तिन् / दथ् + ति / खरि च से थ् को त् करके दत् + ति = दत्तिः।

दाप्, दैप् धातु -

ध्यान दें कि ये धातु घुसंज्ञक नहीं हैं। अतः इन्हें **'दो दद् घोः'** से दथ् आदेश नहीं होगा। अतः - दा + क्तिन् / दा + ति = दातिः। इसी प्रकार - दै + क्त / आदेच उपदेशऽशिति से आत्व होकर - दा + त = दातिः।

डुधाञ् धातु -

दधातेर्हिः (७.४.४२) - डुधाञ् धातु को हि आदेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। धा + क्तिन् / हि + ति = हितिः।

धेट् धातु -

घुमास्थागापाजहातिसां हलि (६.४.६६) - घुसंज्ञक दा, धा धातु, मा, स्था, गा, पा, ओहाक् तथा षो - सा, इन अङ्गों को हलादि कित् ङित् आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ईकारादेश हो जाता है।

धे + क्तिन् / 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्र से ए के स्थान पर 'आ' आदेश करके - धा + क्तिन् / इस सूत्र से ईत्व करके - धी + ति = धीतिः।

षो - सा धातु -

षो - सा + क्तिन् / द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति से इकारादेश प्राप्त होने पर - **'ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च'** सूत्र से निपातन से - सातिः, बनाइये।

मा, मेङ्, माङ् धातु -

मा + क्तिन् / द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति से इकारादेश करके - मि + ति = मितिः।

स्था धातु -

स्था + क्तिन् / द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति से इकारादेश करके - स्थि + ति = स्थितिः।

गै - गा / गाङ् / गा धातु -

गै - गा + क्तिन् / घुमास्थागापाजहातिसां हलि से आ को ईकारादेश करके - गी + ति = गीतिः। इसी प्रकार गाङ् तथा गा से भी गीतिः।

पै शोषणे तथा पा पाने धातु -

पै - पा + क्तिन् / घुमास्थागापाजहातिसां हलि से आ को ईकारादेश करके - पी + ति = पीतिः । इसी प्रकार पा पाने धातु से भी पीतिः बनाइये ।

शो - शा, छो - छा धातु -

शाच्छोरन्यतरस्याम् (७.४.४१) - शो तथा छो अङ्ग को विकल्प से इकारादेश होता है, तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर ।

शो + क्तिन् / इकारादेश होकर - शि + ति = शितिः ।

इकारादेश न होने पर - शो - शा + ति = शातिः । इसी प्रकार छो धातु से - छितिः, छातिः, बनाइये ।

वेञ् धातु -

वे + क्तिन् / 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' से सम्प्रसारण करके - उ ए + ति / सम्प्रसारणाच्च से ए को पूर्वरूप करके - उ + ति = उतिः ।

ह्वेञ् धातु -

ह्वेञ् - वे + क्तिन् / 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' से सम्प्रसारण करके - ह् उ ए + ति / सम्प्रसारणाच्च से ए को पूर्वरूप करके तथा **'हलः'** सूत्र से उ को दीर्घ करके - हू + ति = हूतिः ।

व्येञ् धातु -

व्येञ् - वे + क्तिन् / 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' से य् को सम्प्रसारण करके - व् इ ए + त / सम्प्रसारणाच्च से ए को पूर्वरूप करके तथा 'हलः' से इ को दीर्घ करके - वी + ति = वीतिः ।

शेष आकारान्त धातु -

इनके अलावा अब जो भी आकारान्त धातु बचे, उन्हें कुछ मत कीजिये । धातु और प्रत्यय को सीधे जोड़ दीजिये । जैसे -

वा	-	वा	+	क्तिन्	=	वातिः
श्रै	-	श्रा	+	क्तिन्	=	श्रातिः
श्रा	-	श्रा	+	क्तिन्	=	श्रातिः
घ्रा	-	घ्रा	+	क्तिन्	=	घ्रातिः
त्रैङ्	-	त्रा	+	क्तिन्	=	त्रातिः

क्षै	-	क्षा	+	क्तिन्	=	क्षातिः
भा	-	भा	+	क्तिन्	=	भातिः, आदि।

विशेष - ध्यान रहे कि सोपसर्ग आकारान्त धातुओं से 'आतश्चोपसर्गे' सूत्र से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अङ् प्रत्यय होता है, क्तिन् नहीं।

प्र	+	दा	+	अङ्	-	प्रद्	+	अ	+	टाप्	=	प्रदा
उप	+	दा	+	अङ्	-	उपद्	+	अ	+	टाप्	=	उपदा
प्र	+	धा	+	अङ्	-	प्रध्	+	अ	+	टाप्	=	प्रधा
उप	+	धा	+	अङ्	-	उपध्	+	अ	+	टाप्	=	उपधा
श्रद्	+	धा	+	अङ्	-	श्रद्ध्	+	अ	+	टाप्	=	श्रद्धा
अन्तर्	+	धा	+	अङ्	-	अन्तर्ध्	+	अ	+	टाप्	=	अन्तर्धा

स्थागापापचो भावे (३.३.९५) - स्था, गा, पा, पच्, इन धातुओं से उपसर्ग होने पर भी क्तिन् प्रत्यय ही होता है।

प्र	+	स्था	+	क्तिन्	=	प्रस्थितिः	(द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति से इकारादेश)
उप	+	स्था	+	क्तिन्	=	उपस्थितिः	(द्यतिस्यतिमास्थामित्ति किति से इकारादेश)
सम्	+	गा	+	क्तिन्	=	संगीतिः	(घुमास्थागापाजहातिसां हलि से ईकारादेश)
प्र	+	पा	+	क्तिन्	=	प्रपीतिः	(घुमास्थागापाजहातिसां हलि से ईकारादेश)

(डुपचष् पाके धातु से षिद्भिदादिभ्योऽङ् सूत्र से अङ् प्राप्त था, उसे बाधकर इससे क्तिन् होता है। इसे चकारान्त धातुओं में देखें।)

इकारान्त धातु

श्वि धातु -

श्वि + क्तिन् / श्वि + ति - 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' सूत्र से व् को सम्प्रसारण करके - श् + उ + इ + ति / 'सम्प्रसारणाच्च' सूत्र से इ को पूर्वरूप करके, 'हलः' सूत्र से उ को दीर्घ करके - शू + ति - शूतिः।

शेष इकारान्त धातु -

शेष इकारान्त धातुओं को क्ङिति च से केवल गुण निषेध होगा -

क्षि	-	क्षि	+	क्तिन्	=	क्षितिः
षिञ्	-	सि	+	क्तिन्	=	सितिः
श्रि	-	श्रि	+	क्तिन्	=	श्रितिः

जि	-	जि	+	क्तिन्	=	जितिः
स्मि	-	स्मि	+	क्तिन्	=	स्मितिः
इण्	-	इ	+	क्तिन्	=	इतिः
मि	-	मि	+	क्तिन्	=	मितिः
क्षि	-	क्षि	+	क्तिन्	=	क्षितिः, आदि।

ईकारान्त धातु

री, ली, ब्ली, प्ली, धातु -

ॠल्वादिभ्यो क्तिन् निष्ठावद् वाच्यः (वा.) - ॠकारान्त धातुओं से तथा २१ ल्वादि धातुओं से परे आने वाला क्तिन् प्रत्यय निष्ठा प्रत्यय जैसा माना जाता है।

ल्वादिभ्यः (८.२.४४) - क्र्यादिगण के २१ ल्वादि धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश होता है।

इनमें से ईकारान्त ल्वादि धातु इस प्रकार हैं -

री	+	क्तिन्	=	रीणिः	ली	+	क्तिन्	=	लीनिः
ब्ली	+	क्तिन्	=	ब्लीनिः	प्ली	+	क्तिन्	=	प्लीनिः

शेष ईकारान्त धातु -

शेष ईकारान्त धातुओं को, क्ङिति च से केवल गुण निषेध होगा -

डी	+	क्तिन्	=	डीतिः	शी	+	क्तिन्	=	शीतिः
दी	+	क्तिन्	=	दीतिः	मी	+	क्तिन्	=	मीतिः

उकारान्त धातु

यु धातु तथा सौत्र धातु जु -

यु धातु से जब 'युतिः' शब्द उक्त प्रक्रिया से बनता है, तब वह 'आद्युदात्तश्च' सूत्र से आद्युदात्त होता है। किन्तु जब **'ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च'** सूत्र से निपातन से दीर्घ होकर 'यूतिः' शब्द बनता है, तब वह अन्तोदात्त होता है।

जु + क्तिन् / 'ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च' सूत्र से निपातनाद् दीर्घ होकर = जूतिः। यह भी अन्तोदात्त होता है।

शेष उकारान्त धातुओं को, क्ङिति च से केवल गुण निषेध होगा -

दु	-	दु	+	क्तिन्	=	दुतिः
गु पुरीषोत्सर्गे	-	गु	+	क्तिन्	=	गुतिः

गुङ्	-	गु	+	क्तिन्	=	गुतिः
रु अदादि	-	रु	+	क्तिन्	=	रुतिः
रु भ्वादि	-	रु	+	क्तिन्	=	रुतिः
नु	-	नु	+	क्तिन्	=	नुतिः
क्षु	-	क्षु	+	क्तिन्	=	क्षुतिः
यु	-	यु	+	क्तिन्	=	युतिः
श्रु	-	श्रु	+	क्तिन्	=	श्रुतिः, आदि।

ऊकारान्त धातु

ब्रू धातु -

ब्रूञ् + क्तिन् / **ब्रुवो वचिः सूत्र से** आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर ब्रू धातु को वच् आदेश करके - वच् + ति / वच् को वचिस्वपियजादीनां किति सूत्र से सम्प्रसारण करके - उच् + ति / चोः कुः से च् को कुत्व करके - उक् + ति = उक्तिः।

लूञ्, धूञ् धातु -

ये ल्वादि धातु हैं। अतः 'ल्वादिभ्यश्च' सूत्र से इनसे परे आने वाले निष्ठा के त को न आदेश होगा।

लूञ्	-	लू	+	क्तिन्	=	लूनिः
धूञ्	-	धू	+	क्तिन्	=	धूनिः

शेष ऊकारान्त धातु -

शेष ऊकारान्त धातुओं को, क्ङिति च से केवल गुण निषेध होगा -

पूङ्	-	पू	+	क्तिन्	=	पूतिः
पूञ्	-	पू	+	क्तिन्	=	पूतिः
षूङ्	-	षू	+	क्तिन्	=	सूतिः
दूङ्	-	दू	+	क्तिन्	=	दूतिः
भू	-	भू	+	क्तिन्	=	भूतिः, आदि।

ऋकारान्त धातु

सारे ऋकारान्त धातुओं को, 'क्ङिति च' से केवल गुण निषेध होगा -

सृ	-	सृ	+	क्तिन्	=	सृतिः
ऋ (भ्वादि)	-	ऋ	+	क्तिन्	=	ऋतिः

ऋ (जुहो.)	-	ऋ	+	क्तिन्	=	ऋति:
हृ	-	हृ	+	क्तिन्	=	हृति:
वृङ्	-	वृ	+	क्तिन्	=	वृति:
वृञ्	-	वृ	+	क्तिन्	=	वृति:
स्मृ	-	स्मृ	+	क्तिन्	=	स्मृति:
गृ	-	गृ	+	क्तिन्	=	गृति:
घृ	-	घृ	+	क्तिन्	=	घृति:
ध्वृ	-	ध्वृ	+	क्तिन्	=	ध्वृति:
धृङ्	-	धृ	+	क्तिन्	=	धृति:
डुभृञ्	-	भृ	+	क्तिन्	=	भृति:
कृ (तनादि)	-	कृ	+	क्तिन्	=	कृति:
कृ (स्वादि)	-	कृ	+	क्तिन्	=	कृति:, आदि।

ॠकारान्त धातु

भॄङ्, वॄ, वॄञ्, मॄङ् धातु -

उदोष्ठ्यपूर्वस्य (७.१.१०२) - यदि अङ्ग के अन्तिम 'ॠ' के पूर्व में कोई ओष्ठ से उच्चरित होने वाला व्यञ्जन हो अर्थात् प्, फ्, ब्, भ्, म्, या व् हों तब, ॠ के स्थान पर 'उ' आदेश होता है और 'उरण् रपर:' सूत्र की सहायता से यह 'उ', उर् बनता है।

हलि च (८.२.७७) - जब धातु के अन्त में र् या व् हों, तब उस धातु की उपधा के 'इक्' को दीर्घ होता है, हल् परे होने पर।

भॄ + क्तिन् - भुर् + ति / हलि च से उ को दीर्घ करके - भूर् + ति /

ॠल्वादिभ्यो क्तिन् निष्ठावद् वाच्य: (८.२.४२ - वा.) - ॠकारान्त धातुओं से तथा २१ ल्वादि धातुओं से परे आने वाला क्तिन् प्रत्यय निष्ठा प्रत्यय जैसा माना जाता है।

रदाभ्यां निष्ठातो न: पूर्वस्य च द: (८.२.४२) - रेफ और दकार से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकार आदेश होता है तथा निष्ठा से पूर्व दकार को भी नकार आदेश होता है। इस सूत्र से र् के बाद आने वाले निष्ठा के 'त' को 'न' करके - भूर् + नि / रषाभ्यां नो ण: से न को ण करके -

भॄङ् + क्तिन् - भुर् + ति - भूर् + नि = भूर्णि:

वृङ् + क्तिन् - वुर् + ति - वूर् + नि = वूर्णि:
वृञ् + क्तिन् - वुर् + ति - वूर् + नि = वूर्णि:
मृङ् + क्तिन् - मुर् + ति - मूर् + नि = मूर्णि:

पॄ, पृ, धातु -

न ध्याख्यापॄमूर्च्छिमदाम् (८.२.५७) - ध्या, ख्या, पॄ, मुर्च्छा, मदी इन धातुओं से परे आने वाले निष्ठा के तकार को नकारादेश नहीं होता है। अत: -

पॄ - क्र्यादिगण - पॄ + क्तिन् = पूर्ति:
पृ - जुहोत्यादिगण - पृ + क्तिन् = पूर्ति:

शेष ॠकारान्त धातु -

ॠत इद् धातो: (७.१.१००)- यदि ॠ के पूर्व में ओष्ठ्य वर्ण न हो तो धातु के अन्त में आने वाले 'ॠ' को 'इ' आदेश होता है, जो कि 'उरण् रपर:' सूत्र से 'रपर' होकर 'इर्' बन जाता है।

उसके बाद हलि च **से** उपधा के 'इक्' को दीर्घ करके तथा **रदाभ्यां निष्ठातो न: पूर्वस्य च द:** सूत्र से र् के बाद आने वाले निष्ठा के 'त' को 'न' करके -

तॄ + क्तिन् - तिर् + ति - तीर् + नि = तीर्णि:
जॄ + क्तिन् - जिर् + ति - जीर् + नि = जीर्णि:
कॄ (क्र्यादि) + क्तिन् - किर् + ति - कीर् + नि = कीर्णि:
कॄ (तुदादि) + क्तिन् - किर् + ति - कीर् + नि = कीर्णि:
गॄ (क्र्यादि) + क्तिन् - गिर् + ति - गीर् + नि = गीर्णि:
गॄ (तुदादि) + क्तिन् - गिर् + ति - गीर् + नि = गीर्णि:, आदि।

ककारान्त धातु

शक् - शक् + क्तिन् = शक्ति:

खकारान्त धातु

खरि च सूत्र से ख् को चर्त्व करके क् बनाइये -

वख् - वख् + क्तिन् = वक्ति:

गकारान्त धातु

खरि च सूत्र से ग् को चर्त्व करके क् बनाइये -

लग् - लग् + क्तिन् = लक्ति:

घकारान्त धातु

घघ् + ति / धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर होने पर दो कार्य कीजिये-

१. झषस्तथोर्धोऽधः (८.२.४०) - झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षरों के बाद आने वाले प्रत्यय के त, थ को ध होता है। देखिये कि घ्, झष् है, अर्थात् वर्ग का चतुर्थाक्षर है। अतः उससे परे आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' बनाकर - घघ् + ति - घघ् + धि -

२. झलां जश् झशि (८.४.५३) - झल् के स्थान पर जश् अर्थात् वर्ग का तृतीयाक्षर होता है, झश् परे होने पर। घघ् + धि - घग् + धि = घग्धिः।

चकारान्त धातु

कुच् धातु -

तितुत्रेष्वग्रहादीनामिति वक्तव्यम् (वार्तिक ७.२.९) - ग्रह्, कुच्, स्निह्, पठ्, केवल इन चार धातुओं से परे आने वाले क्तिन् को इडागम होता है।

नि + कुच् + इट् + क्तिन् - निकुचितिः।

ओव्रश्चू - व्रश्च् धातु -

व्रश्च् + क्तिन् / ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च सम्प्रसारण करके - वृश्च् + ति / '**स्कोः संयोगाद्योरन्ते च**' सूत्र से संयोग के आदि के सकार का लोप करके - वृच् + ति / '**व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः**' सूत्र से च् को ष् करके - वृष् + ति / ष्टुना ष्टुः सूत्र से ष्टुत्व करके - वृष्टिः।

अञ्चु धातु -

'**अञ्चेः पूजायाम्** (७.२.५३)' सूत्र से अञ्चु धातु से परे आने वाले क्त्वा प्रत्यय तथा निष्ठा प्रत्यय को नित्य इडागम होता है, यदि धातु का अर्थ पूजा हो तो। अन्य अर्थ में इडागम नहीं होता।

जिस अर्थ में इडागम नहीं होता, उसी अर्थ में क्तिन् प्रत्यय हो सकता है, यह ध्यान रखें। अञ्च् + क्तिन् / 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - अच् + ति / चोः कुः सूत्र से च् को कुत्व करके - अक् + ति = अक्तिः।

(जिस अर्थ में इडागम होता है, उस अर्थ में क्तिन् प्रत्यय न होकर अङ् प्रत्यय होता है, यह ध्यान रखें।)

वञ्चु, चञ्चु, तञ्चु, तञ्चू, त्वञ्चु, म्रुञ्चु, म्लुञ्चु, ग्लुञ्चु, क्रुञ्च्, कुञ्च्, लुञ्च्-

अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति से उपधा के न् का लोप करके तथा चोः कुः सूत्र से चवर्ग के स्थान पर कवर्ग आदेश करके -

वञ्च्	+	क्तिन्	-	वच्	+	ति	=	वक्तिः
चञ्च्	+	क्तिन्	-	चच्	+	ति	=	चक्तिः
तञ्च्	+	क्तिन्	-	तच्	+	ति	=	तक्तिः
तञ्च्	+	क्तिन्	-	तच्	+	ति	=	तक्तिः
त्वञ्च्	+	क्तिन्	-	त्वच्	+	ति	=	त्वक्तिः
म्रुञ्च्	+	क्तिन्	-	मुच्	+	ति	=	म्रुक्तिः
म्लुञ्च्	+	क्तिन्	-	म्लुच्	+	ति	=	म्लुक्तिः
ग्लुञ्च्	+	क्तिन्	-	ग्लुच्	+	ति	=	ग्लुक्तिः
क्रुञ्च्	+	क्तिन्	-	क्रुच्	+	ति	=	क्रुक्तिः
कुञ्च्	+	क्तिन्	-	कुच्	+	ति	=	कुक्तिः
लुञ्च्	+	क्तिन्	-	लुच्	+	ति	=	लुक्तिः

वच् धातु -

वच् + क्तिन् / वचिस्वपियजादीनाम् किति सूत्र से सम्प्रसारण करके - उच् + ति / पूर्ववत् कुत्व करके - उक्तिः ।

व्यच् धातु -

व्यच् + क्तिन् / ग्रहिज्या. से सूत्र से सम्प्रसारण करके - विच् + ति / पूर्ववत् कुत्व करके - विक्तिः ।

शेष चकारान्त अनिट् धातु -

'च्' को 'चोः कुः' सूत्र से कुत्व करके 'क्' बनाइये -

पच्	+	क्तिन्	=	पक्तिः	मुच्	+	क्तिन्	=	मुक्तिः
रिच्	+	क्तिन्	=	रिक्तिः	विच्	+	क्तिन्	=	विक्तिः
सिच्	+	क्तिन्	=	सिक्तिः	ग्रुच्	+	क्तिन्	=	ग्रुक्तिः
ग्लुच्	+	क्तिन्	=	ग्लुक्तिः	मुच्	+	क्तिन्	=	मुक्तिः, आदि ।

छकारान्त धातु

प्रच्छ् धातु -

प्रच्छ् + क्तिन् - ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च

सूत्र से सम्प्रसारण करके - पृच्छ् + ति - व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः सूत्र से छ् स्थान पर 'ष्' करके - पृष् + ति / प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ष्टुत्व' करके - पृष्टिः।

उच्छी - उच्छ् धातु -

उच्छ् + क्तिन् / व्रश्च. सूत्र से छ् को ष् करके - उष् + ति / प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' करके - उष्टिः।

स्फूर्छा, हुर्छा, मुर्छा धातु

राल्लोपः (६.४.२१) - रेफ से उत्तर छकार और वकार का लोप हो जाता है, क्वि तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

यह अनिट् आदित् धातु है। स्फूर्छा + क्तिन् / स्फूर्छ् + ति / राल्लोपः से छ् का लोप करके - स्फूर् + ति = स्फूर्तिः।

हुर्छा + क्तिन् / उपधायां च से उपधा को दीर्घ करके - हूर्छ् + ति / शेष पूर्ववत् - हूर्तिः। इसी प्रकार - मुर्छा + क्तिन् = मूर्तिः।

शेष छकारान्त अनिट् धातु - म्लेच्छ् + ति - व्रश्चभ्रस्ज. सूत्र से छ् स्थान पर 'ष्' करके - म्लेष् + ति / प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ष्टुत्व' करके - म्लेष्टिः।

जकारान्त धातु

अज् धातु -

अज् + क्तिन् / अजेर्व्यघञपोः सूत्र से वी आदेश करके - वी + ति = वीतिः।

यज् धातु -

यज् + क्तिन्/ वचिस्वपियजादीनां किति से सम्प्रसारण करके - इज् + ति / **'व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः'** सूत्र से ज् के स्थान पर 'ष्' करके - इष् + ति / 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से ष्टुत्व करके - इष्टिः।

सृज् तथा मृज् धातु -

सृज् + क्तिन् / **व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः सूत्र** से ज् के स्थान पर 'ष्' करके - सृष् + ति / 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से ष्टुत्व करके - सृष्टिः।

इसी प्रकार - मृज् + क्तिन् से - मृष्टिः।

भ्रस्ज् धातु -

भ्रस्ज् + क्तिन् / ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च सम्प्रसारण करके - भृस्ज् + ति / स्कोः संयोगाद्योरन्ते च सूत्र से संयोग के आदि के सकार का लोप करके - भृज् + ति / व्रश्चभ्रस्ज. सूत्र से ज् के स्थान पर 'ष्' करके - भृष् + ति / 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से ष्टुत्व करके - भृष्टिः ।

ओलस्जी-लज्ज् / ओविजी-विज् / रुजो-रुज् धातु -

ओलस्जी + क्तिन् - लस्ज् + ति - स्कोः संयोगाद्योरन्ते च सूत्र से संयोग के आदि के सकार का लोप करके - लज् + ति / चोः कुः से कुत्व करके - लग् + ति / ग् को खरि च से चर्त्व करके - लक् + ति = लक्तिः ।

ओविजी + क्तिन् / विज् + ति / शेष पूर्ववत् - विक्तिः । इसी प्रकार - रुज् + क्तिन् = रुक्तिः ।

मस्जो -मज्ज् धातु -

मस्जिनशोर्झलि (७.१.६०) - मस्ज् और नश् धातुओं को नुम् का आगम होता है, झल् परे होने पर।

मस्जेरन्त्यात् पूर्व नुम् वाच्यः - मस्ज् धातु को होने वाला नुमागम अन्त्य वर्ण के ठीक पूर्व में होता है।

अतः मस्ज् + क्तिन् - इस वार्तिक से अन्त्य वर्ण के पूर्व में नुम् का आगम करके - म स् न् ज् + ति / स्कोः संयोगाद्योरन्ते च सूत्र से संयोग के आदि के सकार का लोप करके तथा अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति सूत्र से न् का लोप करके - मज् + ति / चोः कुः से कुत्व करके - मग् + ति / खरि च से चर्त्व करके - मक् + ति = मक्तिः ।

रञ्ज्, भञ्ज्, अञ्ज्, स्वञ्ज्, सञ्ज्, धातु -

अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति सूत्र से उपधा के न् का लोप करके, चोः कुः सूत्र से कुत्व करके ज् के स्थान पर ग् कीजिये। उसके बाद उस 'ग्' को 'खरि च' सूत्र से उसी कवर्ग का प्रथमाक्षर 'क्' बनाइये।

भञ्ज् + क्तिन् - भज् + ति = भक्तिः
रञ्ज् + क्तिन् - रज् + ति = रक्तिः
अञ्ज् + क्तिन् - अज् + ति = अक्तिः
सञ्ज् + क्तिन् - सज् + ति = सक्तिः

स्वञ्ज् + क्तिन् - स्वज् + ति = स्वक्तिः

टुओस्फूर्जा - स्फूर्ज् धातु -

स्फूर्जा + क्तिन् / स्फूर्ज् + ति / चोः कुः सूत्र से जकार के स्थान में कुत्व करके - स्फूर्ग् + ति / ग् को खरि च से चर्त्व करके - स्फूर्क् + ति = स्फूर्क्तिः।

शेष जकारान्त धातु -

'चोः कुः' सूत्र से इनके ज् को कुत्व करके 'ग्' बनाइये। उसके बाद उस 'ग्' को 'खरि च' सूत्र से उसी कवर्ग का प्रथमाक्षर 'क्' बनाइये।

कुजु	-	कुज्	+	क्तिन्	=	कुक्तिः
त्यज्	-	त्यज्	+	क्तिन्	=	त्यक्तिः
निजिर्	-	निज्	+	क्तिन्	=	निक्तिः
भज्	-	भज्	+	क्तिन्	=	भक्तिः
भुज्	-	भुज्	+	क्तिन्	=	भुक्तिः
युज्	-	युज्	+	क्तिन्	=	युक्तिः
विजिर्	-	विज्	+	क्तिन्	=	विक्तिः
रुज्	-	रुज्	+	क्तिन्	=	रुक्तिः

झकारान्त धातु

झषस्तथोर्धोऽधः (८.२.४०) - झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षरों के बाद आने वाले प्रत्यय के त, थ को ध होता है।

झर्झ् + क्तिन् / देखिये कि झ्, झष् है, अर्थात् वर्ग का चतुर्थाक्षर है। अतः उससे परे आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' बनाकर - झर्झ् + ति - झर्झ् + धि / चोः कुः से च् को कुत्व करके उसे कवर्ग का चतुर्थाक्षर बनाकर - झर्घ् + धि - 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व करके - झर्घ् + धि - झर्ग् + धि = झर्ग्धिः।

टकारान्त धातु

कट् + क्तिन् / कट् + ति / ष्टुना ष्टुः सूत्र से त को ष्टुत्व करके - कट् + टि = कट्टिः।

ठकारान्त धातु

पठ् धातु -

तितुत्रेष्वग्रहादीनामिति वक्तव्यम् (वार्तिक ७.२.९) - ग्रह्, कुच्, स्निह्, पठ्,

केवल इन चार धातुओं से परे आने वाले क्तिन् को इडागम होता है।

नि+ पठ् + इट् + क्तिन् - निपठितिः।

शेष ठकारान्त धातु -

लुठ् + क्तिन् / लुठ् + ति / ष्टुना ष्टुः सूत्र से त को ष्टुत्व करके - लुठ् + टि / खरि च सूत्र से ठ् को चर्त्व करके - लुट् + टि = लुट्टिः।

डकारान्त धातु

स्फुड् + क्तिन् / स्फुड् + ति / ष्टुना ष्टुः सूत्र से त को ष्टुत्व करके - स्फुड् + टि / खरि च सूत्र से ड् को चर्त्व करके - स्फुट् + टि = स्फुट्टिः।

णकारान्त धातु

अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति (६.४.३७) - अनुदात्तोपदेश धातु, वन सम्भक्तौ धातु तथा तनोति इत्यादि धातुओं के अनुनासिक का लोप होता है झलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर।

ऋणु	-	ऋण्	+	क्तिन्	=	ऋतिः
क्षणु	-	क्षण्	+	क्तिन्	=	क्षतिः
क्षिणु	-	क्षिण्	+	क्तिन्	=	क्षितिः
घृणु	-	घृण्	+	क्तिन्	=	घृतिः
तृणु	-	तृण्	+	क्तिन्	=	तृतिः

शेष णकारान्त धातु -

अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति (६.४.१५) - अनुनासिकान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ होता है, क्वि परे होने पर तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

रण् + क्तिन् - राण् + ति / ष्टुना ष्टुः सूत्र से त को ष्टुत्व करके - राण् + टि = राण्टिः। इसी प्रकार - कण् + ति - काण्टिः।

तकारान्त धातु

कृत् धातु -

कृत् + णिच् + क्तिन् / यह धातु णिजन्त है, अतः इससे 'ण्यासश्रन्थो युच्' सूत्र से युच् प्रत्यय होना था, क्तिन् नहीं, किन्तु **'ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च'** सूत्र से निपातन से इससे क्तिन् प्रत्यय होकर **कीर्तिः** शब्द बनता है।

शेष तकारान्त धातु -

कृत्	+	क्तिन्	=	कृत्तिः	चित्	+	क्तिन्	=	चित्तिः

चृत्	+	क्तिन्	=	चृत्तिः	नृत्	+	क्तिन्	=	नृत्तिः
यत्	+	क्तिन्	=	यत्तिः	वृत्	+	क्तिन्	=	वृत्तिः

थकारान्त धातु

कुथ् + क्तिन् / कुथ् + ति / खरि च सूत्र से थ् को चर्त्व करके - कुत् + ति = कुत्तिः। इसी प्रकार - पुथ् = पुत्तिः।

दकारान्त धातु

अद् धातु -

अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति (२.४.३६) - अद् धातु को जग्ध् आदेश होता है ल्यप् तथा तकारादि कित् प्रत्यय परे होने पर। अद् + क्तिन् = जग्धिः।

ह्लादी धातु -

प्र + ह्लद् + क्तिन् / **'ह्लादो निष्ठायाम् (६.४.९५)'** सूत्र का योग विभाग करके क्तिन् प्रत्यय में भी ह्रस्व करके - प्रह्लद् + क्तिन् = प्रह्लत्तिः

उन्दी, स्कन्द्, स्यन्द्, बुन्द् धातु -

अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति सूत्र से उपधा के न् का लोप करके, द् को खरि च से चर्त्व करके -

उन्द्	+	क्तिन्	=	उत्तिः	बुन्द्	+	क्तिन्	=	बुत्तिः
स्कन्द्	+	क्तिन्	=	स्कत्तिः	स्यन्द्	+	क्तिन्	=	स्यत्तिः

विद् धातु -

विद् धातु पाँच हैं। विद ज्ञाने (अदादि), विद सत्तायाम् (दिवादि), विद्लृ लाभे (तुदादि), विद विचारणे (रुधादिगण) विद चेतनाख्याननिवासेषु (चुरादि)।

इनमें से विद चेतनाख्याननिवासेषु (चुरादि) धातु से 'ण्यासश्रन्थो युच्' सूत्र से युच् प्रत्यय होकर 'वेदना' बनता है। तुदादिगण के लाभार्थक विद्लृ धातु से 'घट्टिवन्दिविदिभ्य उपसंख्यानम्' वार्तिक से युच् प्रत्यय होकर 'वेदना' बनता है। शेष तीन विद् धातुओं से क्तिन् प्रत्यय करके - विद् + क्तिन् = वित्तिः बनाइये।

भिदादिगण में 'विदा' शब्द का पाठ होने के कारण 'विद ज्ञाने' धातु से 'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' सूत्र से अङ् प्रत्यय होकर विदा भी बनता है।

अर्द् धातु -

अर्दे: सन्निविभ्यः (७.२.२४) - सं, नि, वि उपसर्गयुक्त अर्द् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है।

अभेश्चाविदूर्ये (७.२.२५) - अभि उपसर्ग से युक्त अर्द् धातु से परे आने वाला निष्ठा प्रत्यय अनिट् होता है यदि उसका अर्थ आविदूर्य हो तो।

अतः इन उपसर्गों के साथ होने पर ही अर्द् धातु से क्तिन् प्रत्यय होगा।

समर्त्तिः, न्यर्त्तिः, व्यर्त्तिः। अभ्यर्त्तिः।

शेष दकारान्त धातु -

शेष दकारान्त धातुओं में ध्यान रहे कि भिद् धातु से विदारण अर्थ में अङ् प्रत्यय होता है। अन्य अर्थ में क्तिन् होता है।

इसी प्रकार छिद् धातु से द्वैधीकरण अर्थ में अङ् प्रत्यय होता है। अन्य अर्थ में क्तिन् होता है। इन धातुओं के द् को खरि च से चर्त्व करके -

हद्	-	हद्	+	क्तिन्	=	हत्तिः
क्लिदू	-	क्लिद्	+	क्तिन्	=	क्लित्तिः
क्षुद्	-	क्षुद्	+	क्तिन्	=	क्षुत्तिः
सद्	-	सद्	+	क्तिन्	=	सत्तिः
नि+सद्	-	नि+सद्	+	क्तिन्	=	निषत्तिः
छृदी	-	छृद्	+	क्तिन्	=	छृत्तिः
खिद्	-	खिद्	+	क्तिन्	=	खित्तिः
छिद्	-	छिद्	+	क्तिन्	=	छित्तिः (द्वैधीकरण से भिन्न अर्थ में)
भिद्	-	भिद्	+	क्तिन्	=	भित्तिः (विदारण से भिन्न अर्थ में)
तुद्	-	तुद्	+	क्तिन्	=	तुत्तिः
शद्	-	शद्	+	क्तिन्	=	शत्तिः
पद्	-	पद्	+	क्तिन्	=	पत्तिः
ञिमिदा	-	मिद्	+	क्तिन्	=	मित्तिः
ञिष्विदा	-	स्विद्	+	क्तिन्	=	स्वित्तिः
नुद्	-	नुद्	+	क्तिन्	=	नुत्तिः
मदी	-	मद्	+	क्तिन्	=	मत्तिः
ञिक्ष्विदा	-	क्ष्विद्	+	क्तिन्	=	क्ष्वित्तिः, आदि।

धकारान्त धातु

व्यध् धातु -

व्यध् + क्तिन् - ग्रहिज्यावयिव्यधि. सूत्र से सम्प्रसारण करके - विध् + ति -

झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से प्रत्यय के त को ध आदेश करके - विध् + धि - झलां जश् झशि सूत्र से झल् के स्थान पर जश् आदेश करके - विद् + धि = विद्धिः ।

इन्ध्, बन्ध्, शुन्ध् धातु -

इन्ध् + क्तिन् / प्रत्यय के कित् होने के कारण 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - इध् + ति / पूर्ववत् = इद्धिः ।

इसी प्रकार - बन्ध् + क्तिन् / बध् + ति - बध् + धि = बद्धिः ।

शुन्ध् + क्तिन् / शुध् + ति - शुध् + धि = शुद्धिः ।

शेष धकारान्त धातु -

'क्ङिति च' से गुण निषेध करके, तथा पूर्ववत् 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से झष् अर्थात् वर्ग के चतुर्थाक्षर के बाद आने वाले प्रत्यय के 'त' को 'ध' करके और धातु के अन्तिम ध् को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व करके अर्थात् वर्ग का तृतीयाक्षर द् बनाकर -

ऋधु	-	ऋध्	+	क्तिन्	=	ऋद्धिः
क्रुध्	-	क्रुध्	+	क्तिन्	=	क्रुद्धिः
गृधु	-	गृध्	+	क्तिन्	=	गृद्धिः
बुध्	-	बुध्	+	क्तिन्	=	बुद्धिः
मृधु	-	मृध्	+	क्तिन्	=	मृद्धिः
युध्	-	युध्	+	क्तिन्	=	युद्धिः
रध्	-	रध्	+	क्तिन्	=	रद्धिः
रुध्	-	रुध्	+	क्तिन्	=	रुद्धिः
राध्	-	राध्	+	क्तिन्	=	राद्धिः
वृधु	-	वृध्	+	क्तिन्	=	वृद्धिः
साध्	-	साध्	+	क्तिन्	=	साद्धिः
शुध्	-	शुध्	+	क्तिन्	=	शुद्धिः
शृधु	-	शृध्	+	क्तिन्	=	शृद्धिः
सिध्	-	सिध्	+	क्तिन्	=	सिद्धिः
षिधु	-	सिध्	+	क्तिन्	=	सिद्धिः
षिधू	-	सिध्	+	क्तिन्	=	सिद्धिः

नकारान्त धातु

जन्, सन्, खन् धातु -

जनसनखनां सञ्झलोः (६.४.४२) - जन्, सन्, खन् धातुओं को आकार अन्तादेश होता है, झलादि सन् तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

खनु - खन् + क्तिन् - खा + ति = खातिः
जनी - जन् + क्तिन् - जा + ति = जातिः
षणु - सन् + क्तिन् - सा + ति = सातिः

हन्, मन्, तनु, मनु, वनु तथा वन सम्भक्तौ धातु -

'अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनु.' सूत्र से अनुनासिक का लोप करके -

हन् - हन् + क्तिन् - ह + ति = हतिः
मन् - मन् + क्तिन् - म + ति = मतिः
तनु - तन् + क्तिन् - त + ति = ततिः
मनु - मन् + क्तिन् - म + ति = मतिः
वनु - वन् + क्तिन् - व + ति = वतिः
वन - वन् + क्तिन् - व + ति = वतिः

विशेष - हन् धातु से जब 'हतिः' शब्द उक्त प्रक्रिया से बनता है, तब वह 'आद्युदात्तश्च' सूत्र से आद्युदात्त होता है। किन्तु जब **'ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च'** सूत्र से निपातन से हेतिः' शब्द बनता है, तब वह अन्तोदात्त होता है।

शेष नकारान्त धातु -

कनी + क्तिन् / कन् + ति -

अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति (६.४.१५) - अनुनासिकान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ होता है, क्वि परे होने पर तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

कन् + ति - कान् + ति -

नश्चापदान्तस्य झलि (८.३.२४) - अपदान्त न्, म्, को अनुस्वार होता है, झल् परे होने पर। कान् + ति - कां + ति -

अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः (८.४.५८) - अनुस्वार को परसवर्ण होता है, यय् परे होने पर। कां + ति - कान् + त = कान्तिः।

पकारान्त धातु

स्वप्, वप् धातु -

स्वप् + क्तिन् / वचिस्वपियजादीनाम् किति सूत्र से सम्प्रसारण करके - सुप्

+ ति = सुप्तिः । इसी प्रकार - वप् + क्त - पूर्ववत् उप्तिः ।

कृपू धातु -

कृप् + क्तिन् / कृपो रो लः सूत्र से कृप् धातु के र् को ल् बनाकर - क्लृप् + ति = क्लृप्तिः ।

शेष पकारान्त धातु - इन्हें कुछ मत कीजिये -

आप्	+	क्तिन्	=	आप्तिः	क्षिप्	+	क्तिन्	=	क्षिप्तिः
गुप्	+	क्तिन्	=	गुप्तिः	छुप्	+	क्तिन्	=	छुप्तिः
तप्	+	क्तिन्	=	तप्तिः	तिप्	+	क्तिन्	=	तिप्तिः
तृप्	+	क्तिन्	=	तृप्तिः	त्रप्	+	क्तिन्	=	त्रप्तिः
दृप्	+	क्तिन्	=	दृप्तिः	लिप्	+	क्तिन्	=	लिप्तिः
शप्	+	क्तिन्	=	शप्तिः	ज्ञप्	+	क्तिन्	=	ज्ञप्तिः

फकारान्त धातु

रफ् + क्तिन् / खरि च से चर्त्व करके - रप् + ति = रप्तिः ।

बकारान्त धातु

कब् + क्तिन् / खरि च से चर्त्व करके - कप् + ति = कप्तिः ।

भकारान्त धातु

स्रम्भु, सृम्भु, दम्भु, स्कम्भु, स्तम्भु, श्रम्भु (नलोपी अनिदित्) धातु -

'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से इनकी उपधा के न् का लोप करके पूर्ववत् 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से प्रत्यय के 'त' को 'ध' करके और धातु के अन्तिम भ् को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व ब् करके -

स्रंभ्	+	क्तिन्	-	स्रभ्	+	ति	=	स्रब्धिः
श्रम्भु	+	क्तिन्	-	श्रभ्	+	ति	=	श्रब्धिः
षृम्भु	+	क्तिन्	-	सृभ्	+	ति	=	सृब्धिः
दम्भु	+	क्तिन्	-	दभ्	+	ति	=	दब्धिः
स्कम्भु	+	क्तिन्	-	स्कभ्	+	ति	=	स्कब्धिः
स्तम्भ्	+	क्त	-	स्तब्ध्	+	ति	=	स्तब्धिः

शेष भकारान्त धातु -

'क्ङिति च' से गुण निषेध करके, पूर्ववत् 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से प्रत्यय के

'त' को 'ध' करके और धातु के भ् को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व ब् करके -

दृभी	-	दृभ्	+	क्तिन्	=	दृब्धिः
ष्टुभु	-	स्तुभ्	+	क्तिन्	=	स्तुब्धिः
यभ्	-	यभ्	+	क्तिन्	=	यब्धिः
रभ्	-	रभ्	+	क्तिन्	=	रब्धिः
लभ्	-	लभ्	+	क्तिन्	=	लब्धिः
जभी	-	जभ्	+	क्तिन्	=	जब्धिः
क्षुभ्	-	क्षुभ्	+	क्तिन्	=	क्षुब्धिः
लुभ्	-	लुभ्	+	क्तिन्	=	लुब्धिः, आदि।

विशेष - डुलभष् धातु - यह धातु षित् है। अतः इससे षिद्भिदादिभ्योऽङ् सूत्र से केवल अङ् प्रत्यय होना चाहिये था, किन्तु बाहुलकाद् इससे क्तिन् भी होकर - लभ् + क्तिन् होकर - लब्धिः भी बनता है। इसमें 'अनर्थकास्तु प्रतिवर्णमनुपलब्धेः' यह भाष्यवचन प्रमाण है।

मकारान्त धातु

अनुदात्तोपदेश मकारान्त गम्, नम्, यम्, रम् धातु -

'अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनु.' सूत्र से अनुनासिक का लोप करके -

गम्	+	क्तिन्	=	गतिः			नम्	+	क्तिन्	=	नतिः
यम्	+	क्तिन्	=	यतिः			रम्	+	क्तिन्	=	रतिः

शेष मकारान्त धातु -

अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति - अनुनासिकान्त अङ्ग की उपधा को दीर्घ होता है, क्वि परे होने पर तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

कम् + क्तिन् - काम् + ति / **नश्चापदान्तस्य झलि** सूत्र से अपदान्त न्, म्, को अनुस्वार करके - कां + ति - **अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः** सूत्र से अनुस्वार को परसवर्ण करके - कां + ति - कान् + ति = कान्तिः।

कम्	+	क्तिन्	=	कान्तिः	क्रम्	+	क्तिन्	=	क्रान्तिः
क्षमू (दिवादि)	+	क्तिन्	=	क्षान्तिः	क्लम्	+	क्तिन्	=	क्लान्तिः
आचम्	+	क्तिन्	=	आचान्तिः	छम्	+	क्तिन्	=	छान्तिः
जम्	+	क्तिन्	=	जान्तिः	जिम्	+	क्तिन्	=	जीन्तिः

तम्	+ क्तिन्	= तान्तिः		दम्	+	क्तिन्	= दान्तिः
भ्रम्	+ क्तिन्	= भ्रान्तिः		शम्	+	क्तिन्	= शान्तिः
श्रम्	+ क्तिन्	= श्रान्तिः		स्यम्	+	क्तिन्	= स्यान्तिः
अम्	+ क्तिन्	= आन्तिः					

यकारान्त धातु

चाय् धातु -

चायतेः क्तिनि चिभावो निपात्यते (वार्तिक ७.२.३०) - चाय् धातु को क्तिन् प्रत्यय परे होने पर 'चि' आदेश होता है। अप + चाय् + क्तिन् / अप + चि + ति = अपचितिः।

शेष यकारान्त धातु -

लोपो व्योर्वलि (६.१.६६) - वकार और यकार का वल् परे रहते लोप होता है।

ऊयी	-	ऊय्	+	क्तिन्	=	ऊतिः
क्नूयी	-	क्नूय्	+	क्तिन्	=	क्नूतिः
क्ष्मायी	-	क्ष्माय्	+	क्तिन्	=	क्ष्मातिः
पूयी	-	पूय्	+	क्तिन्	=	पूतिः
स्फायी	-	स्फाय्	+	क्तिन्	=	स्फातिः
ओप्यायी	-	प्याय्	+	क्तिन्	=	प्यातिः

रेफान्त धातु

ञित्वरा धातु -

ञित्वरा - त्वर् + क्तिन् -

ज्वरत्वरस्रिव्यविमवामुपधायाश्च (६.४.२०) - ज्वर, त्वर, स्रिवि, अव, मव इन अङ्गों के वकार तथा उपधा के स्थान में ऊठ् आदेश होता है, क्वि, झलादि तथा अनुनासिक प्रत्यय परे होने पर। इससे वकार तथा उपधा के स्थान में ऊठ् आदेश करके-

त् ऊ र् + ति - तूर् + ति = तूर्तिः।

चर् धातु -

चर् + क्तिन् / चर् + ति -

ति च - चर् और फल् धातुओं के अकार को उकार आदेश होता है, तकारादि प्रत्यय परे होने पर। चर् + ति - चुर् + ति / 'हलि च' सूत्र से दीर्घ होकर = चूर्तिः।

शेष रेफान्त धातु -

पूरी	-	पूर्	+	क्तिन्	=	पूर्तिः
चूरी	-	चूर्	+	क्तिन्	=	चूर्तिः
तूरी	-	चूर्	+	क्तिन्	=	तूर्तिः
जूरी	-	जूर्	+	क्तिन्	=	जूर्तिः
धूरी	-	धुर्	+	क्तिन्	=	धूर्तिः
शूरी	-	शूर्	+	क्तिन्	=	शूर्तिः
गुरी	-	गुर्	+	क्तिन्	=	गूर्तिः

लकारान्त धातु

ञिफला धातु - प्र + फल् + क्तिन् -

ति च (७.४.८९) - तकारादि प्रत्यय परे होने पर चर् और फल् धातुओं के अकार को उकार आदेश होता है। प्र + फुल् + ति = प्रफुल्तिः।

शेष लकारान्त धातु -

चल् + क्तिन् = चल्तिः   गल् + क्तिन् = गल्तिः।

वकारान्त धातु

स्रिव्, अव्, मव् धातु -

'ज्वरत्वरस्रिव्यविमवामुपधायाश्च' सूत्र से वकार तथा उपधा के स्थान में ऊठ् आदेश करके -

स्रिव्	+	क्तिन्	-	स्र् ऊठ्	+	ति	-	स्र् ऊ	=	स्रूतिः
मव्	+	क्तिन्	-	म् ऊठ्	+	ति	-	म् ऊ	=	मूतिः
अव्	+	क्तिन्	-	- ऊठ्	+	ति	-	- ऊ	=	ऊतिः

विशेष - 'ऊतिः' शब्द जब उक्त प्रक्रिया से बनता है, तब वह 'आद्युदात्तश्च' सूत्र से आद्युदात्तश्च होता है। किन्तु जब वह 'ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च' सूत्र से निपातन से बनता है, तब वह अन्तोदात्त होता है।

रेफोपध वकारान्त धातु -

राल्लोपः (६.४.२१) - रेफ से उत्तर छकार और वकार का लोप हो जाता है, क्वि तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर। इस सूत्र से अन्त्य वकार का लोप

करके तथा हलि च से उपधा के इक् को दीर्घ करके -

उर्व्	+	क्तिन्	=	ऊर्तिः	गुर्व्	+	क्तिन्	=	गूर्तिः
थुर्व्	+	क्तिन्	=	थूर्तिः	दुर्व्	+	क्तिन्	=	दूर्तिः
धुर्व्	+	क्तिन्	=	धूर्तिः	मुर्व्	+	क्तिन्	=	मूर्तिः
तुर्व्	+	क्तिन्	=	तूर्तिः					

शेष वकारान्त धातु -

च्छ्वोः शूडनुनासिके च (६.४.१९) - क्वि प्रत्यय, झलादि कित् ङित् प्रत्यय तथा अनुनासिक प्रत्यय परे होने पर, च्छ् को श् तथा व् को ऊठ् आदेश होता है -

दिव्	+	क्तिन्	-	दि ऊठ्	+	ति	-	दि ऊ	= द्यूतिः
सिव्	+	क्तिन्	-	सि ऊठ्	+	ति	-	सि ऊ	= स्यूतिः
ष्ठिव्	+	क्तिन्	-	ष्ठि ऊठ्	+	ति	-	ष्ठि ऊ	= ष्ठ्यूतिः
क्षिवु	+	क्तिन्	-	क्षि ऊठ्	+	ति	-	क्षि ऊ	= क्ष्यूतिः
क्षेवु	+	क्तिन्	-	क्षे ऊठ्	+	ति	-	क्षे ऊ	= क्षयूतिः
धावु	+	क्तिन्	-	धा ऊठ्	+	ति	-	धा ऊ	= धौतिः

धा + ऊ + ति = धौतिः, में 'एत्येधत्यूठ्सु' सूत्र से वृद्धि हुई है।

शकारान्त धातु

दंश्, भ्रंश् धातु -

क्त प्रत्यय परे होने पर 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से इनकी उपधा के न् का लोप कीजिये। 'श्' को व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः' सूत्र से 'ष्' बनाइये। उसके बाद प्रत्यय के 'ति' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'टि' बनाइये।

दंश्	+	क्तिन्	-	दंश्	+	ति	-	दष्	+ टि	= दष्टिः
भ्रंशु	+	क्तिन्	-	भ्रंश्	+	ति	-	भ्रष्	+ टि	= भ्रष्टिः

नश् धातु -

'मस्जिनशोर्झलि' सूत्र से नुम् का आगम करके - नश् + क्तिन् - नंश् + ति / व्रश्चभ्रस्ज. से श् को ष् करके - नंष् + ति / 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से नलोप करके - नष् + ति / ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके = नष्टिः।

वश् धातु -

'ग्रहिज्या'. सूत्र से सम्प्रसारण करके - उश् + ति / 'व्रश्चभ्रस्ज.' से श् को

ष् करके - उष् + ति / ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके = उष्टिः।

शेष शकारान्त धातु -

'श्' को व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः' सूत्र से 'ष्' बनाइये। उसके बाद प्रत्यय के 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाइये।

अश्	+	क्तिन्	=	अष्टिः	क्रुश्	+	क्तिन्	=	क्रुष्टिः
दिश्	+	क्तिन्	=	दिष्टिः	दृश्	+	क्तिन्	=	दृष्टिः
भृश्	+	क्तिन्	=	भृष्टिः	मृश्	+	क्तिन्	=	मृष्टिः
रिश्	+	क्तिन्	=	रिष्टिः	रुश्	+	क्तिन्	=	रुष्टिः
लिश्	+	क्तिन्	=	लिष्टिः	विश्	+	क्तिन्	=	विष्टिः
स्पृश्	+	क्तिन्	=	स्पृष्टिः	क्लिश्	+	क्तिन्	=	क्लिष्टिः

षकारान्त धातु

चक्ष् धातु -

चक्षिङः ख्याञ् (२.४.५४) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर चक्ष् धातु को ख्या आदेश होता है। चक्ष् + क्तिन् / ख्या + ति = ख्यातिः।

त्वक्ष्, तक्ष्, अक्ष् धातु -

'स्कोः संयोगाद्योरन्ते च' सूत्र से संयोग के आदि के ककार का लोप करके - त्वक्ष् + क्तिन् - त्वष् + ति - 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से ष्टुत्व करके - त्वष् + टि = त्वष्टिः।

इसी प्रकार - तक्षू + क्तिन् - तक्ष् + ति - तष् + ति = तष्टिः।

अक्षू + क्तिन् - अक्ष् + ति - अष् + ति = अष्टिः।

शेष षकारान्त धातु -

क्ङिति च से गुणनिषेध कीजिये, 'त' को 'ष्टुना ष्टुः' सूत्र से 'ट' बनाइये।

धृष्	+	क्तिन्	=	धृष्टिः	घुष्	+	क्तिन्	=	घुष्टिः
कष्	+	क्तिन्	=	कष्टिः	शुष्	+	क्तिन्	=	शुष्टिः
हृष्	+	क्तिन्	=	हृष्टिः	रुष्	+	क्तिन्	=	रुष्टिः
कृष्	+	क्तिन्	=	कृष्टिः	जिष्	+	क्तिन्	=	जिष्टिः
त्विष्	+	क्तिन्	=	त्विष्टिः	तुष्	+	क्तिन्	=	तुष्टिः
द्विष्	+	क्तिन्	=	द्विष्टिः	दुष्	+	क्तिन्	=	दुष्टिः
पुष्	+	क्तिन्	=	पुष्टिः	पिष्	+	क्तिन्	=	पिष्टिः

रिष्	+	क्तिन्	=	रिष्टिः	विष्	+	क्तिन्	=	विष्टिः
वृष्	+	क्तिन्	=	वृष्टिः	शिष्	+	क्तिन्	=	शिष्टिः
श्लिष्	+	क्तिन्	=	श्लिष्टिः	श्रिष्	+	क्तिन्	=	श्रिष्टिः
तृष्	+	क्तिन्	=	तृष्टिः	ऋष्	+	क्तिन्	=	ऋष्टिः

सकारान्त धातु

शास् धातु -

शास इदङ्हलोः (६.४.३४) - शास् अङ्ग की उपधा को इकारादेश होता है, अङ् तथा हलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर।

शास् + क्तिन् - शिस् + ति - शासिवसिघसीनाञ्च से स् के स्थान पर ष् आदेश करके - शिष् + ति / ष्टुना ष्टुः से त को ष्टुत्व करके - शिष्टिः।

अस् (अदादिगण) धातु -

अस्तेर्भूः (२.४.५२) - सारे आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर अस् धातु को भू आदेश होता है। अस् + क्तिन् / भू + ति = भूतिः।

वस् (भ्वादि) धातु -

'वचिस्वपि'. सूत्र से सम्प्रसारण करके - उस् + ति / 'शासिवसिघसीनां च' सूत्र से स् को श् करके - उष् + ति / 'ष्टुना ष्टुः' से ष्टुत्व करके = उष्टिः।

ध्वंसु, स्रंसु, भ्रंसु, शंसु, धातु -

'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से इनकी उपधा के न् का लोप कीजिये।

ध्वंस्	+	क्तिन्	=	ध्वस्तिः	स्रंस्	+	क्तिन्	=	स्रस्तिः
भ्रंस्	+	क्तिन्	=	भ्रस्तिः	शंस्	+	क्तिन्	=	शस्तिः

शेष सकारान्त धातु - क्ङिति च से गुणनिषेध करके -

क्नस्	+	क्तिन्	=	क्नस्तिः	घस्	+	क्तिन्	=	घस्तिः
ग्लस्	+	क्तिन्	=	ग्लस्तिः	जस्	+	क्तिन्	=	जस्तिः
तस्	+	क्तिन्	=	तस्तिः	दस्	+	क्तिन्	=	दस्तिः
मस्	+	क्तिन्	=	मस्तिः	यस्	+	क्तिन्	=	यस्तिः
वस्	+	क्तिन्	=	वस्तिः	आशास्	+	क्तिन्	=	आशास्तिः
स्नस्	+	क्तिन्	=	स्नस्तिः	स्नुस्	+	क्तिन्	=	स्नुस्तिः
वि+शस्	+	क्तिन्	=	विशस्तिः	ग्रस्	+	क्तिन्	=	ग्रस्तिः

कस्	+ क्तिन्	=	कस्ति:		अस्	+ क्तिन्	=	अस्ति:
शस्	+ क्तिन्	=	शस्ति:					

विशेष - आस् धातु - यह धातु हलन्त गुरुमान् है। अत: इससे गुरोश्च हल: सूत्र से केवल अ प्रत्यय होना चाहिये था, किन्तु बाहुलकाद् इससे क्तिन् भी होकर - आस्ति:, उपास्ति:, आदि बनते हैं।

हकारान्त धातु

ग्रह् तथा स्निह् धातु -

तितुत्रेष्वग्रहादीनामिति वक्तव्यम् (वार्तिक ७.२.९) - ग्रह्, कुच्, स्निह्, पठ्, केवल इन चार धातुओं से परे आने वाले क्तिन् को इडागम होता है।

नि + ग्रह् + इट् + क्तिन् / 'ग्रहोऽलिटि दीर्घ:' सूत्र से इट् को दीर्घ करके - निगृहीति:। उपस्निह् + इट् + क्तिन् - उपस्निहिति:।

नह् धातु -

नहो ध: (८.२.३४) - नह धातु के हकार के स्थान पर धकार आदेश से होता है झल् परे रहते तथा पदान्त में। नह् + क्तिन् - नध् + ति / अब देखिये कि धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर 'ध्' आ गया है।

धातु के अन्त में वर्ग का चतुर्थाक्षर आने पर आप -

प्रत्यय के त, थ को 'झषस्तथोर्धोऽध:' सूत्र से ध बनाइये - नध् + ति = नध् + धि / अब धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर ध् को 'झलां जश् झशि' सूत्र से जश्त्व करके उसी वर्ग का तृतीयाक्षर द् बनाइये - नध् + धि - नद् + धि = नद्धि:।

दुह्, दह्, दिह् धातु -

दादेर्धातो: घ: (८.२.३२) - दकार आदि में है जिस धातु के, उसके हकार के स्थान पर घकार आदेश होता है झल् परे रहते तथा पदान्त में।

इनके 'ह्' को 'दादेर्धातोर्घ:' सूत्र से घ् बनाइये - दुह् + क्तिन् / दुघ् + ति / प्रत्यय के 'त' को झषस्तथोर्धोऽध: सूत्र से 'धि' करके - दुघ् + धि / अब धातु के अन्त में बैठे हुए वर्ग के चतुर्थाक्षर 'घ्' को झलां जश् झशि सूत्र से जश्त्व करके, उसी वर्ग का तृतीयाक्षर 'ग्' बनाइये - दुग् + धि = दुग्धि:।

इसी प्रकार - दिह् - दिग्धि:। दह् - दग्धि:।

द्रुह्, मुह् ,स्नुह्, स्निह् धातु -

वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम् (८.२.३३) - द्रुह्, मुह् ,स्नुह्, स्निह् धातुओं के ह् को विकल्प से ढ् तथा 'घ्' होते हैं, झल् परे होने पर।

'ह्' के स्थान पर 'घ्' होने पर -

द्रुह् + क्तिन् - 'वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम्' सूत्र से ह् को घ् करके - द्रुघ् + ति / प्रत्यय के 'त' को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से 'ध' करके - द्रुघ् + धि / झलां जश् झशि सूत्र से 'घ्' को जश्त्व करके, उसी वर्ग का तृतीयाक्षर 'ग्' बनाकर - द्रुग् + धि = द्रुग्धिः।

इसी प्रकार मुह् से मुग्धिः / स्नुह् से स्नुग्धिः / स्निह् से स्निग्धिः।

'ह्' के स्थान पर 'ढ्' होने पर -

द्रुह् + क्तिन् / द्रुढ् + ति / प्रत्यय के त को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से 'ध' करके - द्रुढ् + धि / ष्टुना ष्टुः से प्रत्यय के ध् को ष्टुत्व करके द्रुढ् + ढि / ढो ढे लोपः से पूर्व ढकार का लोप करके द्रु + ढि / ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः से उ को दीर्घ करके = द्रूढिः। इसी प्रकार - मुह् से मूढिः / स्नुह् से स्नूढिः / स्निह् से स्नीढिः, बनाइये।

वह् धातु -

वह् + क्तिन् / वह् + ति / वचिस्वपियजादीनाम् किति सूत्र से सम्प्रसारण करके - उढ् + ति / हो ढः सूत्र से ढत्व करके - उढ् + ति / झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से प्रत्यय के त को धत्व करके - उढ् + धि / ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके - उढ् + ढि / 'ढो ढे लोपः' सूत्र से पूर्व 'ढ्' का लोप करके - उ + ढि / ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः सूत्र से 'उ' को दीर्घ करके = ऊढिः।

सह् धातु -

सह् + क्तिन् / सह् + ति / हो ढः सूत्र से ढत्व करके - सढ् + ति / झषस्तथोर्घोऽघः सूत्र से प्रत्यय के त को धत्व करके - सढ् + धि / ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके - सढ् + ढि / पूर्व 'ढ्' का 'ढो ढे लोपः' सूत्र से लोप करके - स + ढि / 'अ' के स्थान पर 'सहिवहोरोदवर्णस्य' सूत्र से 'ओ' आदेश करके - सोढिः।

रुह्, लिह्, मिह्, गुह् धातु -

रुह् + क्तिन् / हो ढः सूत्र से ढत्व करके - रुढ् + ति / झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से प्रत्यय के त को धत्व करके - रुढ् + धि / ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके - रुढ् +

ढि / पूर्व 'ढ्' का 'ढो ढे लोपः' सूत्र से लोप करके - रु + ढि / ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः सूत्र से 'उ' को दीर्घ करके - रूढिः ।

रुह्	-	रुह्	+	क्तिन्	=	रूढिः
लिह्	-	लिह्	+	क्तिन्	=	लीढिः
मिह्	-	मिह्	+	क्तिन्	=	मीढिः
गुहू	-	गुह्	+	क्तिन्	=	गूढिः

तृंह् धातु -

तृंह् + क्तिन् / 'अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति' सूत्र से इनकी उपधा के न् का लोप करके - तृह् + ति / 'हो ढः' सूत्र से ढत्व करके - तृढ् + ति / 'झषस्तथोर्धोऽधः' सूत्र से प्रत्यय के त को ध करके - तृढ् + धि / ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके - तृढ् + ढि / पूर्व 'ढ्' का 'ढो ढे लोपः' सूत्र से लोप करके - तृ + ढि = तृढिः ।

शेष हकारान्त धातु -

इन धातुओं के अलावा जितने भी हकारान्त धातु बचे, उनके 'ह्' को 'हो ढः' सूत्र से 'ढ्' बनाइये / प्रत्यय के त को झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र से 'ध' करके ष्टुना ष्टुः से ष्टुत्व करके ढ बनाइये। अब ढो ढे लोपः से पूर्व ढकार का लोप कर दीजिये -

गाहू	-	गाह्	+	क्तिन्	=	गाढिः
गृहू	-	गृह्	+	क्तिन्	=	गृढिः
तृहू	-	तृह्	+	क्तिन्	=	तृढिः
स्तृह्	-	स्तृह्	+	क्तिन्	=	स्तृढिः
बृहू	-	बृह्	+	क्तिन्	=	बृढिः
वृहू	-	वृह्	+	क्तिन्	=	वृढिः

❀ ❀ ❀

क्वसु प्रत्यय

क्वसुश्च - (३.२.१०७) - वेदविषय में लिट् के स्थान में क्वसु आदेश विकल्प से होता है। **क्वसु आदेश होने पर** - जक्षिवान्, पपिवान्, आदि बनेंगे।

क्वसु आदेश न होने पर लिट् ही होगा - अहं सूर्यमुभयतो ददर्श।

भाषायां सदवसश्रुवः - (३.२.१०८) - लौकिक प्रयोग विषय में सद्, वस्, श्रु इन धातुओं से परे भूतकाल में विकल्प से लिट् प्रत्यय होता है और लिट् के स्थान में विकल्प से क्वसु आदेश भी होता है। सेदिवान्, ऊषिवान्, शुश्रुवान्।

चूँकि क्वसु प्रत्यय लिट् लकार के स्थान पर होता है, और यह कित् प्रत्यय है। अतः लिट् लकार के कित् प्रत्यय परे होने पर जिन जिन धातुओं को जो जो कार्य होते हैं, उन उन धातुओं को वे ही कार्य 'क्वसु प्रत्यय' परे होने कीजिये।

(लिट् लकार की पूरी द्वित्वादि प्रक्रिया हमने 'अष्टाध्यायी सहज बोध के द्वितीय खण्ड में दी है, अतः यहाँ उसकी पुनरुक्ति नहीं करेंगे। उस प्रक्रिया के बिना क्वसु प्रत्यय लगाया ही नहीं जा सकता अतः उन द्वित्वादि विधियों को विस्तार से वहीं देखें। यहाँ केवल क्वसु सम्बन्धी इडागम ही बतलायेंगे।)

क्वसु प्रत्यय में लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की तथा उपदेशेऽजनुनासिक इत् सूत्र से उ की इत् संज्ञा होकर तस्य लोपः सूत्र से दोनों का लोप होकर 'वस्' ही शेष बचता है। शित् न होने के कारण 'आर्धधातुकं शेषः' सूत्र से इसकी आर्धधातुक संज्ञा है। प्रथमा एकवचन में इसके रूप होते हैं - चकृवान् चकृवांसौ चकृवांसः।

इसके लिये कुछ बातें ध्यातव्य हैं -

क्वसु प्रत्यय के लिये कुछ बातें ध्यातव्य हैं -

१. चूँकि यह प्रत्यय लिट् के स्थान पर होने के कारण लादेश है, अतः 'लः परस्मैपदम्' सूत्र से इसकी परस्मैपद संज्ञा होती है और यह केवल परस्मैपदी धातुओं से ही लगता है, आत्मनेपदी धातुओं से नहीं।

२. यद्यपि क्वसु प्रत्यय का विधान केवल वेद के लिये है, किन्तु कालिदासप्रभृति कवियों ने भी इसका प्रयोग किया है, अतः हम भी इसे सारे परस्मैपदी धातुओं में लगायें।

३. कुछ धातु ऐसे हैं, जिनसे लिट् अथवा क्वसु प्रत्यय परे होने पर आम् प्रत्यय

होता है। ऐसे धातु इस प्रकार हैं -

१. अनेकाच् धातु -

कास्यनेकाच आम्वक्तव्यः (वा. ३.१.३५) - कास् धातु तथा अनेकाच् धातुओं से आम् प्रत्यय होता है, लिट् परे होने पर।

आमः (२.४.८१) - आमन्त से परे आने वाले लिट् का लुक् हो जाता है।

कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि (३.१.४०) - आमन्त से परे लिट्परक कृ, भू या अस् धातु का अनुप्रयोग होता है। इस प्रकार अनेकाच् धातुओं में आम् लगाइये, उसके बाद कृ, भू या अस् धातु लगाइये, उसके बाद लिट् लगाइये और लिट् के स्थान में क्वसु आदेश कर दीजिये। कृ, भू, अस् में क्वसु प्रत्यय लगाकर चकृवान्, बभूवान्, आसिवान् रूप बनते हैं। इन्हें बनाने की प्रक्रिया 'अष्टाध्यायी सहज बोध भाग - दो में विस्तार से देखें।

अनेकाच् धातुओं से आम् + क्वसु प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

चुलुम्प् + आम् - चुलुम्पाम् = चुलुम्पाञ्चकृवान्।
चुलुम्प् + आम् - चुलुम्पाम् = चुलुम्पाम्बभूवान्।
चुलुम्प् + आम् - चुलुम्पाम् = चुलुम्पामासिवान्।

इसके अपवाद - ऊर्णु तथा दरिद्रा धातु

ऊर्णु तथा दरिद्रा धातु भी अनेकाच् हैं, किन्तु इनसे आम् न लगाकर सीधे ही क्वसु प्रत्यय लगाया जाता है, और वह अनिट् होता है। जैसे - ऊर्णु + क्वसु - ऊर्णुनुवान् / दरिद्रा + क्वसु - ददरिद्रवान्।

प्रत्ययान्त धातु भी अनेकाच् होते हैं। इनसे भी पूर्ववत् कार्य कीजिये -

सन्, क्यच्, काम्यच्, क्यष्, क्यङ्, क्विप्, णिङ्, ईयङ्, णिच्, यक्, आय, यङ्, इन बारह प्रत्ययों में से किसी भी प्रत्यय को लगाने से एकाच् धातु भी अनेकाच् हो जाते हैं।

अनेकाच् होने के कारण इनसे भी 'कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि' सूत्र से कृ, भू या अस् धातु लगाये जाते हैं और इस बाद में लगे हुए कृ, भू, अस् धातु से ही लिडादेश क्वसु प्रत्यय लगाया जाता है, सीधे नहीं लगाया जाता।

जैसे - चुर् + णिच् = चोरि, इसे देखिये। अब यह 'चोरि' अनेकाच् धातु है। अतः क्वसु प्रत्यय लगाने के लिये इससे आम् लगाइये, उसके बाद कृ, भू या अस् धातु लगाइये, उसके बाद लिट् लगाइये और लिट् के स्थान में क्वसु आदेश कर दीजिये। जैसे -

चोरि	+	आम्	-	चोरयाम्	=	चोरयाञ्चकृवान्
चोरि	+	आम्	-	चोरयाम्	=	चोरयाम्बभूवान्
चोरि	+	आम्	-	चोरयाम्	=	चोरयामासिवान्
जिगमिष	+	आम्	-	जिगमिषाम्	=	जिगमिषाञ्चकृवान्
जिगमिष	+	आम्	-	जिगमिषाम्	=	जिगमिषाम्बभूवान्
जिगमिष	+	आम्	-	जिगमिषाम्	=	जिगमिषामासिवान्

सारे प्रत्ययान्त धातुओं से क्वसु प्रत्यय लगने पर, इसी प्रकार कार्य कीजिये।

इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः (३.१.३६) - जिन धातुओं के आदि में 'आ' के अलावा कोई भी 'गुरु स्वर' हो, ऐसे धातु 'इजादि गुरुमान्' कहलाते हैं। इनसे भी आम् लगाइये, उसके बाद कृ, भू या अस् धातु लगाइये, उसके बाद लिट् लगाइये और लिट् के स्थान में क्वसु आदेश कर दीज़िये। **सारे इजादि गुरुमान् धातु इस प्रकार हैं -**

एध् ओख् एज् ईज् एठ् ईट् ऊठ् ओण् ईक्ष्य् ईर्ष्य्
इन्व् ईक्ष् ईष् उच्छ् उञ्छ् ईष् ईह् ऊह् उक्ष् ऊष्
एष् ऊर्व् ऊय् इन्द् इन्ख् ईन्ख् इङ्ग् ऋज्ज् उङ्ख् ईर्
ईड् ईश् ईङ् ऋम्फ् उम्भ् उब्ज् उन्द्।

ऐसे इजादि गुरुमान् धातुओं से पहिले आम् प्रत्यय लगाकर उसके बाद उनमें **'कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि'** सूत्र से कृ, भू या अस् धातु लगाये जाते हैं और उसके बाद, इन बाद में लगे हुए कृ, भू अस् धातु से ही क्वसु प्रत्यय लगाया जाता है। जैसे -

उख् - ओखाञ्चकृवान् / ओखाम्बभूवान् / ओखामासिवान् आदि।

इसके अपवाद - ऋच्छ् धातु - ऋच्छ् धातु भी इजादि गुरुमान् है, किन्तु इससे आम् न लगाकर सीधे ही क्वसु प्रत्यय लगाया जाता है, और वह अनिट् होता है। जैसे - ऋच्छ् + क्वसु - आनर्छ्वान्।

उषविदजागृभ्योऽन्यतरस्याम् (३.१.३८) - उष्, विद्, जागृ, धातुओं से आम् प्रत्यय विकल्प से होता है। ओषाञ्चकृवान् - ऊषिवान्। विदाञ्चकृवान् - विविद्वान्। जागराञ्चकृवान् - जजागृवान्।

भीह्रीभृहुवां श्लुवच्च (३.१.३९) - भी, ह्री, भृ, हु, धातुओं से आम् प्रत्यय विकल्प से होता है, और इन्हें श्लुवत् कार्य भी होता है। बिभयाञ्चकृवान् - बिभीवान्। जिह्रयाञ्चकृवान् - जिह्रीवान्। बिभराञ्चकृवान् - बभृवान्।

ऊपर कहे हुए धातुओं के अलावा शेष सारे धातुओं से क्वसु प्रत्यय सीधे लग जाता है। इनमें हम विचार करें कि किस धातु से परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को इडागम होता है, और किस धातु से परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को इडागम नहीं होता।

वे धातु जिनसे परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को नित्य इडागम होता है

वस्वेकाजाद्घसाम् (७.२.६७) - आकारान्त धातुओं से, घस् धातु से तथा जो धातु द्वित्व तथा अभ्यासादिकार्य करने पर एकाच् दिखे, ऐसे धातुओं से, परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को इडागम होता है। उदाहरण -

१. आकारान्त तथा एजन्त धातुओं से परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को नित्य इडागम होता है -

आकारान्त तथा एजन्त धातु यद्यपि क्वसु प्रत्यय परे होने पर, द्वित्व तथा अभ्यासकार्य करने के बाद अनेकाच् ही रहते हैं, तथापि इनसे परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को 'वस्वेकाजाद्घसाम्' सूत्र से इडागम होता है।

यथा - यया + इट् + क्वसु / आतो लोप इटि च से आ का लोप करके - यय् + इ + वस् - ययिवस् / प्रथमा एकवचन में - ययिवान् / इसी प्रकार - पा - पपा - पपिवान् / ग्लै - जग्ला - जग्लिवान्।

इसके अपवाद - दरिद्रा धातु - अनेकाच् धातुओं में दरिद्रा धातु से परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को इट् का आगम नहीं होता। दरिद्रा - ददरिद्रवान्।

२. घस् धातु से परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को नित्य इडागम होता है - घस् - जक्षिवान्।

३. जो धातु द्वित्व तथा अभ्यासादिकार्य करने पर एकाच् दिखें, उन्हें नित्य इडागम होता है। ऐसे धातु इस प्रकार हैं -

अत् अज् अट् अड् अष् अम् अव् अस् अद्
इख् उख् उह् उष् अक् अग् ऋ उच् ऋध्
इल् उभ् ऋष् ऋच् अन् अण् आप् अश् (क्र्यादि)
अह् ऋफ् ऋण् ॠ ऋ इण् (इ) इक् (इ) इष् (दिवादि)
इष् (तुदादि) इष् (क्र्यादि) अस् (भ्वादि) अस् (अदादि) अस् (दिवादि) = ३९

इनके अलावा ये धातु भी क्वसु प्रत्यय परे होने पर एकाच् रहते हैं -

तन्　यत्　जम्　चत्　चद्　दध्　नद्　नद्　चक्　तक्　मख्
नख्　रख्　लख्　षच्　शच्　मच्　लज्　जज्　पट्　रट्　लट्
शट्　जट्　तट्　नट्　षट्　पठ्　मठ्　रट्　शठ्　लड्　जप्
चप्　षप्　रप्　लप्　रफ्　रण्　मण्　सण्　पय्　मय्　चय्
तय्　नय्　रय्　शल्　वल्　मल्　सल्　दल्　चर्　मव्　नस्
जष्　शष्　मष्　रस्　लस्　शश्　चह्　मह्　रह्　मश्　षव्
षम्　लष्　चष्　नम्　षच्　णभ्　लष्　चल्　जल्　टल्　नल्
पल्　बल्　षल्　षह्　पत्　पथ्　मथ्　षस्　सस्　जन्　षह्
षघ्　दघ्　चम्　चल्　रद्　सन्　नभ्　शप्　पच्　सद्　तप्
शक्　यभ्　नम्　यम्　नश्　दह्　नह्　यज्　वप्　वह्　वस्
वच्　वद्　वश्　तॄ　भज्　फल्　राध्　वे (वय्) = ११८

इनसे परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को नित्य इडागम कीजिये। यथा -

अद् - आदिवान्। अश् - आशिवान्। अस् - आसिवान्। इष् - ईषिवान्। उख् - ऊखिवान्। ऋ - आरिवान्।

तन् - तेनिवान्। यत् - येतिवान्। चल् - चेलिवान्। तप् - तेपिवान्। दम् - देमिवान्। यम् - येमिवान्। रट् - रेटिवान्। लख् - लेखिवान्। शक् - शेकिवान्। सद् - सेदिवान्। वस् - ऊषिवान्। वच् - ऊचिवान्। वप् - ऊपिवान्। वह् - ऊहिवान्। तॄ - तेरिवान्। राध् - रेधिवान्। फल् - फेलिवान्। भज् - भेजिवान्। दम्भ् - देभिवान्।

ऐसे धातुओं को जानने के लिये पाणिनीय अष्टाध्यायी में ६.४.१२० से ६.४.१२६ तक सूत्र देखें अथवा 'अष्टाध्यायी सहज बोध - द्वितीय भाग' में पृष्ठ ३५७ - ३६९ तक देखें। ये सूत्र इस प्रकार हैं -

अत एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि ६.४.१२०

थलि च सेटि ६.४.१२१

तॄफलभजत्रपश्च ६.४.१२२

राधो हिंसायाम् ६.४.१२३

वा जॄभ्रमुत्रसाम् ६.४.१२४

फणां च सप्तानाम् ६.४.१२५

न शसददवादिगुणानाम् ६.४.१२६

श्रन्थग्रन्थोः एत्वाभ्यासलोपौ वक्तव्यौ (सिद्धान्तकौमुदी)।

वे धातु जिनसे परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है

१. **विभाषा गमहनविदविशाम्** (७.२.६८) - गम्, हन्, विद्, विश्, धातुओं से परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को विकल्प से इडागम होता है।

गम्	-	जग्मिवान्	जगन्वान्	हन्	-	जघ्निवान्	जघन्वान्
विद्	-	विविदिवान्	विविद्वान्	विश्	-	विविशिवान्	विविश्वान्

२. इनके अलावा जॄ, भ्रम्, त्रस्, फण्, राज्, स्यम्, स्वन्, दृश्, श्रन्थ्, ग्रन्थ्, दम्भ्, ध्वन् इनसे परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को भी विकल्प से इडागम होता है -

जॄ	-	जेरिवान्	जजॄवान्	भ्रम्	-	भ्रेमिवान्	बभ्रन्वान्
त्रस्	-	त्रेसिवान्	तत्रस्वान्	फण्	-	फेणिवान्	पफण्वान्
राज्	-	रेजिवान्	रराज्वान्	स्यम्	-	स्येमिवान्	सस्यन्वान्
स्वन्	-	स्वेनिवान्	सस्वन्वान्	दृश्	-	ददृशिवान्	ददृश्वान्
श्रन्थ्	-	श्रेथिवान्	शश्रन्थ्वान्	ग्रन्थ्	-	ग्रेथिवान्	जग्रन्थवान्
दम्भ्	-	देभिवान्	ददेम्भ्वान्	ध्वन्	-	ध्वेनिवान्	दध्वन्वान्

वे धातु जिनसे परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को इडागम नहीं होता है

इनके अलावा क्वसु प्रत्यय परे होने पर, द्वित्व तथा अभ्यासकार्य करने के बाद जो भी धातु अनेकाच् दिखें, उन धातुओं से परे आने वाले क्वसु प्रत्यय को इडागम नहीं होता है। जैसे -

भू	-	बभू	-	बभूवान्	श्रि	-	शिश्रि	-	शिश्रिवान्
छिद्	-	चिच्छिद्	-	चिच्छिद्वान्	भिद्	-	बिभिद्	-	बिभिद्वान्
कृ	-	चकृ	-	चकृवान्	जागृ	-	जजागृ	-	जजागृवान्
वस्	-	उवस्	-	ऊषिवान्	श्रु	-	शुश्रु	-	शुश्रुवान्

निपातन से बनने वाले क्वसु प्रत्ययान्त शब्द

उपेयिवाननाश्वाननूचानश्च - (३.२.१०९) - उपेयिवान्, अनाश्वान्, अनूचान ये शब्द क्वसुप्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं।

सनिंससनिवांसम् - वेद में सन् धातु से क्वसु प्रत्यय परे होने पर निपातन

से **सनिंससनिवांसम्** बनता है। लोक में सेनिवांसम् ही बनता है।

कानच् प्रत्यय

छन्दसि लिट् (३.२.१०५) - वेदविषय में भूतकाल सामान्य में धातुमात्र से लिट् प्रत्यय होता है। अहं सूर्यमुभयतो ददर्श। यो भानुना पृथिवीं द्यामुतेमामाततान।

ध्यान दें कि लोक में परोक्षभूत में लिट् होता है और वेद में 'छन्दसि लिट्' सूत्र से सामान्यभूत में भी लिट् हो जाता है।

लिटः कानज्वा (३.२.१०६) - वेदविषय में भूतकाल में विहित जो लिट् उसके स्थान में कानच् आदेश विकल्प से होता है।

ध्यान दें कि कानच् प्रत्यय केवल वेद में प्रयुक्त होता है, लोक में नहीं।

कानच् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की इत् संज्ञा होकर 'तस्य लोपः' सूत्र से दोनों का लोप होकर 'आन' ही शेष बचता है। शित् न होने के कारण 'आर्धधातुकं शेषः' सूत्र से इसकी आर्धधातुक संज्ञा है।

किन धातुओं से कानच् प्रत्यय लगायें ?

तङानावात्मनेपदम् (१.४.१००) - तङ् और आन प्रत्यय आत्मनेपदसंज्ञक होते हैं। तङ् का अर्थ है - त, आताम्, झ। थास्, आथाम्, ध्वम्। इड्, वहि, महिङ्। आन का अर्थ है - शानच् और कानच् प्रत्यय।

अनुदात्तङित् आत्मनेपदम् (१.३.१२) - जिन धातुओं में अनुदात्त स्वर की इत् संज्ञा हुई हो, उन धातुओं को अनुदात्तेत् धातु कहते हैं। जिन धातुओं में ङ् की इत् संज्ञा हुई हो, उन धातुओं को ङित् धातु कहते हैं।

अनुदात्तेत् और ङित्, इन धातुओं से आत्मनेपदसंज्ञक प्रत्यय होते हैं।

हम जानते हैं कि शानच् और कानच् की आत्मनेपद संज्ञा है। अतः अनुदात्तेत् और ङित्, इन धातुओं से ही शानच्, कानच् प्रत्यय होते हैं।

स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले (१.३.७२) -

जिन धातुओं में स्वरित स्वर की इत् संज्ञा हुई हो, उन धातुओं को स्वरितेत् धातु कहते हैं। जिन धातुओं में ञ् की इत् संज्ञा हुई हो, उन धातुओं को ञित् धातु कहते हैं। ऐसे स्वरितेत् तथा ञित् धातुओं की क्रिया का फल जब कर्ता को मिलता हो, तब इन धातुओं से आत्मनेपद होता है।

यदि इन स्वरितेत् तथा ञित् धातुओं की क्रिया का फल कर्ता को न मिलता हो,

तब उस स्वरितेत् तथा ञित् धातु से परस्मैपद होता है।

धातुओं से कानच् प्रत्यय लगाने की विधि - लिट् के स्थान पर होने के कारण यह कानच् प्रत्यय लिडादेश है। अतः इसके लगने पर धातुओं को वे सारे द्वित्वादि कार्य होंगे, जो कार्य लिट् परे होने पर धातुओं को होते हैं।

लिट् लकार की पूरी प्रक्रिया हमने 'अष्टाध्यायी सहज बोध के द्वितीय खण्ड में दी है। अतः यहाँ उसकी पुनरुक्ति नहीं करेंगे। उन द्वित्वादि विधियों को विस्तार से वहीं देखें। यहाँ केवल अङ्ग में कानच् प्रत्यय लगाना बतलायेंगे।

अग्निं चिक्यानः -

चि + कानच् / चि + आन / 'लिटि धातोरनभ्यासस्य' ये द्वित्व होकर - चि चि + आन / विभाषा चेः से च को कुत्व होकर - चि कि + आन / 'एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य' से यण् होकर - चिक्यान / चिक्यान + सु = चिक्यानः।

सुषुवाणः -

सु + कानच् / सु + आन / 'लिटि धातोरनभ्यासस्य' ये द्वित्व होकर - सु सु + आन / 'अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ' सूत्र से उ के स्थान पर उवङ् आदेश होकर - सु सुव् + आन /'आदेशप्रत्यययोः' से स को षत्व होकर - सु षुव् + आन / 'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से न को णत्व होकर - सुषुवाण / सुषुवाण + सु = सुषुवाणः।

कानच् प्रत्यय विकल्प से होता है, अतः कानच् न होने पर लिट् का प्रयोग भी कर सकते हैं - अहं सूर्यमुभयतो ददर्श।

शेष कित्, ङित् प्रत्यय

अब हम बचे हुए कित्, ङित् प्रत्यय लगायें -

हम जानते हैं कि प्रत्यय के कित् ङित् होने पर, मुख्यत: तीन कार्य होते हैं

१. गुणनिषेध

२. अनिदित् धातुओं की उपधा के न् का लोप।

३. सम्प्रसारणी धातुओं को सम्प्रसारण।

क्तिच् प्रत्यय

जन्, सन्, खन् धातुओं को 'जनसनखनां सञ्झलो:' सूत्र से आकार अन्तादेश होगा। सन् + क्तिच् - सा + ति = साति:।

न क्तिचि दीर्घश्च - 'अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति' सूत्र के द्वारा मन्, हन्, गम्, रम्, नम्, यम् धातु, भ्वादिगण का वन् धातु, तथा तनादिगण के तन्, सन्, क्षण्, क्षिण्, ऋण्, तृण्, घृण्, वन्, मन् धातु, इन १६ धातुओं के अन्तिम अनुनासिक वर्णों का जो लोप कहा गया है, वह लोप क्तिच् प्रत्यय परे होने पर नहीं होता है तथा 'अनुनासिकस्य क्विझलो: क्ङिति' सूत्र के द्वारा जो अनुनासिकान्त धातुओं को दीर्घ कहा गया है, वह कार्य वह भी इन १६ धातुओं को नहीं होता है। यथा - तन् + क्तिच् - तन् + ति = तन्ति:। मन् - मन्ति:। वन् - वन्ति:, आदि।

इन १६ के अलावा जो सेट् अनुनासिकान्त धातु बचते हैं, उन्हें 'अनुनासिकस्य क्विझलो: क्ङिति' सूत्र से दीर्घ होता है। यथा - शम् + ति: = शान्ति:। कम् + ति: = कान्ति:, आदि। अन्यत्र क्तिन् के समान ही गुणनिषेध होगा - भू + क्तिच् = भूति:।

कमुल् प्रत्यय

शकि णमुल्कमुलौ (३-४-१२) - शक् धातु उपपद में हो तो वेद के विषय में तुमर्थ में धातु से णमुल् और कमुल् प्रत्यय होते हैं। अग्निं वै देवा विभाजम् नाशक्नुवन् (विभाजन नहीं कर सके।)। अपलुपं नाशक्नुवन्, (अपलोप नहीं कर सके।) हलन्त्यम् से ल् की, 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से उ की तथा लशक्वतद्धिते से क् की इत्संज्ञा होकर अम् शेष बचता है। अप + लुप् + कमुल् - अप + लुप् + अम्। 'क्ङिति च' से गुण का निषेध होकर अपलुपम्। **कृन्मेजन्त:** (१.१.३९) से अव्यय संज्ञा होने से इनसे परे आने

वाली स्वादि विभक्तियों का 'अव्ययादाप्सुपः' सूत्र से लुक् करके - अपलुपम्।

क्यप् प्रत्यय

क्यप् प्रत्यय सब धातुओं से नहीं लगता।

क्यप् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से प् की तथा लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की इत्संज्ञा होकर य शेष बचता है। यह प्रत्यय कित् है। इसके लगने पर कित् होने के कारण 'क्ङिति च' सूत्र से गुण का निषेध होगा।

इसके लिये धातुओं के चार वर्ग बनाइये -

१. क्यप् प्रत्यय लगाकर निपातन से बनने वाले शब्द -

ये शब्द क्यप् प्रत्यय लगाकर निपातन से बनते हैं -

राजसूय सूर्य मृषोद्य रुच्य कुप्य कृष्टपच्य अव्यथ्य
भिद्य उद्ध्य पुष्य सिद्ध्य विपूय विनीय जित्य
युग्यं अमावस्यद् अमावस्या चित्य अग्निचित्या।

२. ह्रस्व अजन्त धातु -

इनमें क्यप् प्रत्यय इस प्रकार लगाइये -

इण् + क्यप्, क्ङिति च सूत्र से गुणनिषेध करके - इ + य। **'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्'** सूत्र से ह्रस्व इ को तुक् का आगम करके - इ + तुक् + य / उ, क् की इत् संज्ञा करके - इ + त् + य - इत्य = **इत्यः।**

इसी प्रकार स्तु + क्यप् से **स्तुत्यः** / वृ + क्यप् से **वृत्यः** / आ + दृ + क्यप् से **आदृत्यः** / भृ + क्यप् से **भृत्यः** / कृ + क्यप् से **कृत्यम्।**

जो क्यप् प्रत्यय 'स्त्रियाम्' सूत्र के अधिकार में आता है, उससे बने हुए शब्दों से स्त्रीत्व की विवक्षा में क्यप् लगने के बाद स्त्रीलिङ्ग में 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् प्रत्यय करके - कृ + क्यप् / कृ + तुक् + क्यप् - कृत्य / कृत्य + टाप् = **कृत्या।**

इसी प्रकार - सु + क्यप् से **सुत्या।** भृञ् + क्यप् से **भृत्या।** इ + क्यप् से **इत्या,** आदि बनाइये।

३. दीर्घ अजन्त धातु -

शी धातु -

शय्या - शीङ् + क्यप् -

अयङ् यि क्ङिति (७.४.२२) - शी धातु के ई के स्थान पर अयङ् आदेश

आदेश करके - श् + अयङ् + य / अयङ् में अ, ङ् अनुबन्धों की इत् संज्ञा करके - शय् + य - स्त्रीत्व की विवक्षा में 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् करके - शय्या।

शेष दीर्घ अजन्त धातुओं को कुछ मत कीजिये -

ब्रह्मभूयम् - ब्रह्म + ङस् + भू + क्यप् / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - ब्रह्म + भू + य / कित् होने के कारण 'क्ङिति च' सूत्र से गुणनिषेध करके - ब्रह्मभूयम्। इसी प्रकार - देवभूयम् आदि।

४. हलन्त धातु -

वद्, ग्रह्, यज् धातु - ये सम्प्रसारणी धातु हैं।

ब्रह्मोद्यम् - ब्रह्म + ङस् + वद् + क्यप् / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से ङस् का लोप करके - ब्रह्म + वद् + य / कित् होने के कारण 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' सूत्र से सम्प्रसारण करके - ब्रह्म + उद् + य / 'आद्गुणः' से गुण सन्धि करके - ब्रह्मोद्यम्। इसी प्रकार सत्योद्यम्।

गृह्यम् - ग्रह् + क्यप् / कित् होने के कारण 'ग्रहिज्या'. सूत्र से सम्प्रसारण करके गृह् + य = गृह्यम्। इसी प्रकार - अपिगृह्यम्, प्रगृह्यम्, अवगृह्यम्, ग्रामगृह्या सेना, वासुदेवगृह्याः, अर्जुनगृह्याः आदि शब्द बनाइये।

इज्या - यज् + क्यप् / 'वचिस्वपियजादीनां किति' सूत्र से सम्प्रसारण करके इज् + य - इज्य / स्त्रीत्वविवक्षा में 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् करके = इज्या।

हन् धातु -

ब्रह्महत्या - ब्रह्म + ङस् + हन् + क्यप् / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से ङस् का लोप करके - ब्रह्म + हन् + य -

हनस्त च - सुबन्त उपपद में होने पर हन् धातु से क्यप् प्रत्यय होता है तथा हन् को तकार अन्तादेश होता है।

इस सूत्र से हन् के न् को त् आदेश करके - ब्रह्म + हत् + य / स्त्रीत्व की विवक्षा में टाप् प्रत्यय करके - ब्रह्महत्या।

शास् धातु - शिष्यः - शास् + क्यप् / शास् + य् -

शास इदङ्हलोः (६.४.३४) - शासु धातु की उपधा को इ आदेश होता है, अङ् परे होने पर तथा हलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर। शास् + य - शिस् + य -

शासिवसिघसीनां च (८.३.६०) - शास्, वस् और घस् धातुओं के स् को

मूर्धन्यादेश होता है। शिस् + य - शिष् + य = शिष्यः।

खन् धातु -

खेयम् - खन् + क्यप् -

ई च खनः (३.१.१११) - खन् धातु से क्यप् होता है तथा उसके अन्त्य अल् को ई आदेश होता है। खन् + क्यप् - ख + ई + य / 'आद्गुणः' से गुण करके - खेयम्।

शेष हलन्त धातुओं को कुछ मत कीजिये -

वृष्	+ क्यप्	- वृष्यम्	/	वृत्	+ क्यप्	- वृत्यम्
वृध्	+ क्यप्	- वृध्यम्	/	व्रज्	+ क्यप्	- व्रज्या
परि + वृज्	+ क्यप्	- परिवृज्यः	/	निषद्	+ क्यप्	- निषद्या
सम् + अज्	+ क्यप्	- समज्या	/	निपत्	+ क्यप्	- निपत्या
मन्	+ क्यप्	- मन्या	/	विद्	+ क्यप्	- विद्या
जुष्	+ क्यप्	- जुष्यः	/	दृश्	+ क्यप्	= दृश्यम्

क्विप् प्रत्यय

क्विप् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से प् की, 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इ की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके व् शेष बचता है। वेरपृक्तस्य' सूत्र से उस व् का भी लोप हो जाता है। जब पूरे प्रत्यय का लोप हो जाता है तब कहते हैं कि प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हो गया।

प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् (१.१.६२) - प्रत्यय का लोप होने के बाद भी तदाश्रित कार्य होते हैं। अतः क्विप् प्रत्यय का लोप होने के बाद भी तदाश्रित कार्य होंगे।

क्विप् प्रत्यय कित् तथा पित् है। अतः सर्वापहारी लोप हो जाने के बाद भी इसके लगने पर वे सारे कार्य होंगे, जो कि कित् तथा पित् परे होने पर होते हैं। अर्थात् जो कार्य क्यप् प्रत्यय में हुए हैं, वे सब कार्य यहाँ भी जानना चाहिये।

आकारान्त तथा एजन्त धातुओं से क्विप् प्रत्यय -

यद्यपि 'धातोः' का सामान्य अधिकार होने से क्विप् प्रत्यय धातुमात्र से होना चाहिये, किन्तु लोक में 'अनभिधान' होने के कारण यह प्रत्यय भाष्य में अदृष्ट आकारान्त

ध्यान दें कि जिन आकारान्त धातुओं को 'घुमास्थागापाजहातिसां हलि ६.४.६६' इस सूत्र से ईत्व प्राप्त है, उन आकारान्त धातुओं से क्विप् प्रत्यय नहीं होता। शेष से होता है। क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करें और धातु को कुछ न करें। जिघ्रति इति घ्राः - घ्रा + क्विप्। वाति इति वाः। भाति इति भाः

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - घ्राः घ्रौ घ्राः।

जो ध्यै धातु से क्विप् प्रत्यय करके - ध्यायति इति धीः बनता है यहाँ 'ध्यायतेः सम्प्रसारणं च' वार्तिक से यकार को सम्प्रसारण होता है। ध्यै-ध्या + क्विप्। यकार को सम्प्रसारण करके - ध् इ आ। 'सम्प्रसारणाच्च' सूत्र से इकार + आकार के स्थान में पूर्वरूप एकादेश करके - धि। हलः सूत्र से दीर्घ करके धीः बनता है।

श्रि धातु से क्विप् प्रत्यय -

क्विब्वचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसम्प्रसारणं च (वा.) -

इन धातुओं से क्विप् होता है, इन्हें दीर्घ होता है तथा सम्प्रसारण नहीं होता।

श्रि + क्विप् / क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके, तथा 'इ' को इस वार्तिक से दीर्घ करके - **श्रीः।**

स्तु, जु, प्रु धातुओं से क्विप् प्रत्यय -

आयत + ङस् + स्तु + क्विप् / क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके, 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके तथा 'उ' को इसी वार्तिक से दीर्घ करके - **आयतस्तूः**। जु + क्विप् = **जूः**। इसी प्रकार कट + प्रु + क्विप् = **कटप्रूः**।

शेष ह्रस्व इकारान्त, ह्रस्व उकारान्त, ह्रस्व ऋकारान्त धातुओं से क्विप् प्रत्यय - ऊपर के वार्तिक ने आयतपूर्वक स्तु धातु को, कटपूर्वक प्रु धातु को तथा निरुपपद जु, श्रि धातुओं को दीर्घ किया है। अतः इनके अलावा जो ह्रस्व अजन्त धातु बचे, उन्हें 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' से तुक् का आगम कीजिये -

शत्रु + ङस् + जि + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा सुपो धातुप्रातिपदिकयोः सूत्र से विभक्ति का लोप करके - शत्रु + जि / तुगागम करके = **शत्रुजित्**। शत्रुजित् + सु -

हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल् (६.१.६८) - हलन्त से परे और दीर्घ ङ्यन्त, आबन्त से परे आने वाले सु, ति, सि सम्बन्धी अपृक्त हल् का लोप होता है।

इस सूत्र से सु का लोप करके = शत्रुजित्।

इसी प्रकार - **सुकृत्, कर्मकृत्, पापकृत्, मन्त्रकृत्, पुण्यकृत्, शास्त्रकृत्, भाष्यकृत्, अग्निचित्, श्येनचित्, कङ्कचित्, सोमसुत्, ग्रावस्तुत्** आदि बनाइये।

२. दीर्घ अजन्त धातुओं से क्विप् प्रत्यय -

आकारान्त धातु - इन्हें कुछ नहीं होता।

विश्व + ङस् + पा + क्विप् - क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - विश्वपा - विश्वपाः।

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - विश्वपाः विश्वपौ विश्वपाः।

ईकारान्त धातु - इन्हें कुछ नहीं होता।

सेना + ङस् + नी + क्विप् / पूर्ववत् क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके सेना + नी = **सेनानीः**।

इसी प्रकार - ग्राम + नी = **ग्रामणीः**।

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - ग्रामणीः ग्रामण्यौ ग्रामण्यः।

'स एषां ग्रामणीः' सूत्र में णत्व को देखकर उसके निर्देश से यहाँ भी णत्व हुआ है। इसी प्रकार **अग्रणीः, प्रणीः** आदि।

ऊकारान्त धातु - इन्हें भी कुछ नहीं होता।

वत्स + ङस् + सू + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - **वत्ससूः**।

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - वत्ससूः वत्ससुवौ वत्ससुवः।

इसी प्रकार - **अण्डसूः, शतसूः, प्रसूः, आदि।**

प्रति + भू - प्रतिभूः / वि + भू - विभूः, आदि।

दीर्घ ॠकारान्त धातु -

धातु के अन्त में दीर्घ ॠ आने पर उसे 'ॠत इद् धातोः' सूत्र से इर् बनाइये-

कॄ + क्विप् - किर्। प्रथमा विभक्ति में सु आने पर 'हलि च' से दीर्घ कीजिये। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - कीः किरौ किरः।

ॠ के पूर्व में ओष्ठ्य व्यञ्जन होने पर ॠ को उदोष्ठ्यपूर्वस्य सूत्र से उर् बनाइये-

पॄ + क्विप् - पुर्। पूर्ववत् प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - **पूः पुरौ पुरः।**

३. हलन्त धातुओं से क्विप् प्रत्यय -

ध्यान दें कि धातु में कृत् प्रत्यय लगाकर कृत्प्रत्ययान्त शब्द निष्पन्न करना, यही इस खण्ड का कार्य है। कृत् प्रत्ययान्त शब्द में विभक्ति लगाकर उसे पद बनाना सुबन्तखण्ड का कार्य है। तथापि शब्दसाधुत्व के लिये प्रथमा एकवचन का रूप दे रहे हैं। सुबन्तरचना के लिये सुबन्त में देखना अपेक्षित है।

चकारान्त धातु -वच् + क्विप् - 'क्विब्वचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसम्प्रसारणं च', इस वार्तिक से वच् धातु को दीर्घ करके - वाच् / वाच् + सु / 'हल्ङ्याब्भ्यो' सूत्र से सु का लोप करके - वाच् / चो: कु: से कुत्व करके - वाक्।

वाऽवसाने (८.४.५६) - अवसान (अन्त) में आने वाले झल् के स्थान पर विकल्प से जश् (तृतीयाक्षर) तथा चर् (प्रथमाक्षर) होते हैं।

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - **वाक् वाग्   वाचौ   वाच:।**

छकारान्त धातु -

शब्दप्राट् - शब्द + ङस् + प्रच्छ् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा सुपो धातुप्रातिपदिकयो: सूत्र से विभक्ति का लोप करके शब्दप्रच्छ् / 'क्विब्वचिप्रच्छ्यायतस्तु'. वार्तिक से दीर्घ हाकर - शब्दप्राच्छ् / शब्दप्राच्छ + सु / हल्ङ्याब्भ्यो. सूत्र से सु का लोप करके -

शब्दप्राच्छ् / 'व्रश्चभ्रस्ज' सूत्र से छ् के स्थान पर ष् करके - शब्दप्राष् - **वाऽवसाने** सूत्र से अवसान (अन्त) में आने वाले झल् के स्थान पर विकल्प से जश् तथा चर् आदेश करके - **शब्दप्राट्, शब्दप्राड्।**

मू: - मूर्च्छ् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा सुपो धातुप्रातिपदिकयो: सूत्र से विभक्ति का लोप करके मूर्च्छ् -

राल्लोप: (६.४.२१) - रेफ से परे आने वाले छकार, वकार का लोप होता है, क्वि प्रत्यय परे होने पर तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

इस सूत्र से रेफ से परे आने वाले छकार का लोप करके - मूर् / 'खरवसानयोर्विसर्जनीय:' सूत्र से र् को विसर्ग करके = मू:   मूरौ   मूर:।

जकारान्त धातु -

विभ्राट् - वि + भ्राज् + क्विप् - विभ्राज् / विभ्राज् + सु / पूर्ववत् 'व्रश्चभ्रस्ज'. सूत्र से ज् के स्थान पर ष् करके - विभ्राष् - 'वाऽवसाने' सूत्र से अवसान (अन्त) में आने वाले झल् के स्थान पर विकल्प से जश् तथा चर् आदेश करके - प्रथमा में -

विभ्राट्, विभ्राड्, विभ्राजौ, विभ्राज:। इसी प्रकार -

राट् –राज् + क्विप् - राज् - पूर्ववत् - राट्   राजौ   राजः।

राज् धातु के पूर्व में सम् उपसर्ग होने पर -

सम्राट् –सम् + राज् + क्विप् - सम् + राज् -

मो राजि समः क्वौ - सम् के मकार को मकार ही रहता है (मोऽनुस्वारः से अनुस्वार नहीं होता) राज् धातु परे होने पर - सम्राज्। पूर्ववत् - सम्राट् सम्राजौ, सम्राजः।

ऊर्क् - उर्ज् + क्विप् - उर्ज् / 'उपधायां च' सूत्र से दीर्घ करके - ऊर्ज् / ऊर्ज् + सु - 'हल्ङ्याब्भ्यो'. सूत्र से सु का लोप करके - ऊर्ज् / 'संयोगान्तस्य लोपः' सूत्र से जकार का लोप प्राप्त होने पर 'रात्सस्य' सूत्र का नियम होने के कारण जकार का लोप न करके - ज् चोः कुः सूत्र से कुत्व करके - ऊर्क् -

वाऽवसाने सूत्र से अवसान (अन्त) में आने वाले झल् के स्थान पर विकल्प से जश् तथा चर् आदेश करके - ऊर्क् ऊर्ग्,   ऊर्जौ   ऊर्जः।

युक् - युज् + क्विप् - युज् - पूर्ववत् - युक्, युग्,   युजौ   युजः।

तकारान्त धातु - विद्युत् + क्विप् - **विद्युत्**। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - विद्युद्, विद्युत्, विद्युतौ विद्युतः।

दकारान्त धातु - वेदि + सद् + क्विप् / क्विप् का सर्वापहारी लोप होकर - वेदि + सद् - स को 'आदेशप्रत्यययोः' सूत्र से षत्व होकर - **वेदिषद्, वेदिषत्।**

इसी प्रकार शुचिषत्, अन्तरिक्षषत्, प्रसत् आदि।

वेद + ङस् + विद् + क्विप् - वेदवित्, वेदविद्, वेदविदौ, वेदविदः।

इसी प्रकार प्रवित्, ब्रह्मवित् आदि।

छिद् + क्विप् - छिद्, छित्, छिदौ, छिदः।

इसी प्रकार - काष्ठभिद्, प्रभिद् आदि।

रज्जु + ङस् + छिद् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - रज्जु + छिद् -

'छे च' सूत्र से तुक् का आगम करके - रज्जु त् छिद् / स्तोः श्चुना श्चुः से त् को श्चुत्व करके - रज्जुच्छिद्। इसी प्रकार - प्रच्छिद्, प्रच्छित्, प्रच्छिदौ प्रच्छिदः।

तनुच्छद्, तनुच्छत्, तनुच्छदौ तनुच्छदः, आदि।

सम् + पद् + क्विप् = सम्पद्   वि + पद् + क्विप् = विपद्

आ + पद् + क्विप् = आपद्   प्रति + पद् + क्विप् = प्रतिपद्

परि + सद् + क्विप् = परिषद्

अनुनासिकान्त णकारान्त, नकारान्त तथा मकारान्त धातु -

अनुनासिकान्त धातुओं के तीन वर्ग बनाइये।

१. ब्रह्म + ङस् + हन् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - ब्रह्महन्।

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - ब्रह्महा ब्रह्महणौ ब्रह्महणः।

२. **गमः क्वौ (६.४.४०)** - अङ्गान् गच्छति इति अङ्गगत्। अङ्ग + गम् + क्विप् - **गमादीनामिति वक्तव्यम् (वा. ६.४.४०)** - गमादि धातुओं के अनुनासिक का लोप होता है, क्वि प्रत्यय परे होने पर।

इस सूत्र से अनुनासिक का लोप करके - अङ्गग / 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' सूत्र से तुक् का आगम करके - अङ्गगत्। इसी प्रकार - अध्वगत्, कलिङ्गगत्। सु + नम् + क्विप् = सुनत्। सम् + यम् + क्विप् = संयत्।

पुरीतत् - पुरि + तन् + क्विप् / पूर्ववत् - पुरि + तत् / 'नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ (६.३.११६)' सूत्र से दीर्घ करके - परीतत्।

ऊङ् च गमादीनामिति वक्तव्यं लोपश्च (वा. ६.४.४०) - गमादि धातुओं के अनुनासिक का लोप करने के बाद उस अनुनासिक से पूर्व में जो 'अ' है, उसे 'ऊ' आदेश होता है।

अग्र + ङि + गम् + क्विप् / क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'तत्पुरुषे कृति बहुलम्' सूत्र से ङि विभक्ति का अलुक् करके - अग्र + ङि + गम् / इस वार्तिक से अनुनासिक का लोप करने के बाद उस अनुनासिक से पूर्व जो 'अ' है, उसे 'ऊ' आदेश करके - अग्र + इ + गूः = अग्रेगूः।

इसी प्रकार - अग्रे + भ्रम् + क्विप् से अग्रेभूः।

प्रतान् - प्र + तम् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा सुपो धातुप्रातिपदिकयोः सूत्र से विभक्ति का लोप करके - प्रतम् -

३. अब जो अनुनासिकान्त धातु बचे, उनकी उपधा को दीर्घ करें। सूत्र हैं-

अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति (६.४.१५) - अनुनासिकान्त की उपधा को दीर्घ होता है, क्विप् परे होने पर तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर। स्वन् + क्विप् = स्वान्। अण् + क्विप् = आण्। रण् + क्विप् = राण्। कम् = काम्।

प्रतम् - प्रताम् / **मो नो धातोः** से नत्व करके - प्रतान् + सु - प्रतान्।

प्रशान् - प्र + शम् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - प्रशम् -

'अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति' सूत्र से अनुनासिकान्त की उपधा को दीर्घ करके - प्रशाम् / प्रशाम् + सु / सु का लोप करके - प्रशाम् -

मो नो धातोः (८.२.६४) - धातु के पदान्त मकार के स्थान पर नकार आदेश होता है। प्रशाम् - प्रशान्।

प्राण् - प्र + अन् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - प्रान् -

अन्तः (८.४.२०) - उपसर्गस्थ निमित्त से परे आने वाले पदान्त अन् धातु के न् को ण् आदेश होता है। प्रान् = प्राण्।

वकारान्त तथा रेफान्त धातु -

च्छ्वोः शूडनुनासिके च (६.४.१९) - छकार, वकार के स्थान पर क्रमशः श्, ऊठ् आदेश होते हैं, क्वि, झलादि कित्, ङित् और अनुनासिकादि प्रत्यय परे होने पर।

दिव् + क्विप् - क्विप् का सर्वापहारी लोप करके - दिव् / वकार के स्थान पर ऊठ् आदेश करके - दि ऊठ् - दि ऊ / इको यणचि से इ के स्थान पर यण् आदेश करके - द्यू / द्यू + सु / द्यू + स् / 'ससजुषो रुः' सूत्र से स् को रुत्व करके - द्यूरु - 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' सूत्र से र् को विसर्ग करके = द्यूः। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - द्यूः द्य्वौ द्य्वः।

ज्वर् + क्विप् - क्विप् का सर्वापहारी लोप करके - ज्वर् -

ज्वरत्वरस्रिव्यविमवामुपधायाश्च (६.४.२०) - ज्वर्, त्वर्, स्रिव्, अव्, मव्, इन धातुओं के वकार तथा उपधा के स्थान पर ऊठ् आदेश होता है, क्वि, झलादि और अनुनासिकादि प्रत्यय परे होने पर।

ज्वर् + क्विप् / ज् ऊठ् र् - जूर् / 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' सूत्र से र् को विसर्ग करके = जूः। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - जूः जूरौ जूरः।

त्वर् + क्विप् / वकार तथा उपधा के स्थान पर ऊठ् आदेश करके - तूः तूरौ तूरः। स्रिव् + क्विप् / वकार तथा उपधा के स्थान पर ऊठ् आदेश करके = स्रूः। अव् + क्विप् / वकार तथा उपधा के स्थान पर ऊठ् आदेश करके - ऊः।

मव् + क्विप् / वकार तथा उपधा के स्थान पर ऊठ् आदेश करके - मूः।

धूः - धुर्व् + क्विप् -

राल्लोपः (६.४.२१) - रेफ से परे आने वाले छकार, वकार का लोप होता है, क्विप् प्रत्यय परे होने पर तथा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर।

धुर्व् + क्विप् - राल्लोपः सूत्र से व् का लोप करके - धुर्। प्रथमा विभक्ति में सु आने पर 'हलि च' से दीर्घ करके - प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - धूः धुरौ, धुरः।

शकारान्त धातु - वाह + ङसि + भ्रंश् + क्विप्। प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - वाहभ्रंश्।

वाहभ्रंश् + सु / 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से सु का लोप करके - वाहभ्रंश्। 'व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्रजच्छशां षः' सूत्र से श् को ष् करके - वाहभ्रष् / 'वाऽवसाने' सूत्र से ष् को विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके - वाहभ्रट्, वाहभ्रड्।

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - वाहभ्रट्, वाहभ्रड्, वाहभ्रशौ वाहभ्रशः।

सकारान्त धातु -

उखास्रद् - उखा + ङसि + स्रंस् + क्विप्। प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - उखास्रस्।

'वसुस्रंसुध्वंस्वनडुहां दः' सूत्र से स् को द् करके - उखास्रद्।

उखास्रद् + सु / 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से सु का लोप करके - उखास्रद्। 'वाऽवसाने' सूत्र से द् को विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके - उखास्रद्, उखास्रत्। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - उखास्रद्, उखास्रत् उखास्रसौ उखास्रसः।

पर्णध्वत् - इसी प्रकार - पर्ण + ङसि + ध्वंस् + क्विप्। प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - पर्णध्वस्।

'वसुस्रंसुध्वंस्वनडुहां दः' सूत्र से स् को द् करके - पर्णध्वद्, पर्णध्वत् आदि।

भाः - भास् + क्विप् - भास्। भास् + सु / 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से सु का लोप करके - भास् / 'ससजुषो रुः' सूत्र से स् को रुत्व करके - भारु - 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' सूत्र से र् को विसर्ग करके = भाः।

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - भाः भासौ भासः।

मित्रशीः - मित्र + ङस् + शास् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - मित्रशास् -

शास इदङ्हलोः (६.४.३४) - परस्मैपदी शासु धातु की उपधा को इ आदेश होता है, अङ् तथा हलादि कित् ङित् प्रत्यय परे होने पर।

मित्रशास् - मित्रशिस्। मित्रशिस् + सु / सु का लोप करके तथा 'ससजुषो रुः' सूत्र से स् को रुत्व करके - मित्रशिरु / 'हलि च' सूत्र से इक् को दीर्घ करके - मित्रशीरु / 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' सूत्र से र् को विसर्ग करके = मित्रशीः।

आशीः - आ + शास् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - आशास् -

आशासः क्वौ उपधाया इत्वं वाच्यम् - आत्मनेपदी आङ् + शास् धातु की उपधा को इ आदेश होता है, क्विप् परे होने पर।

आ + शास् - आ + शिस्। आशिस् + सु / सु का लोप करके तथा 'ससजुषो रुः' सूत्र से स् को रुत्व करके - आशिरु / 'हलि च' सूत्र से इक् को दीर्घ करके - आशीरु / 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' सूत्र से र् को विसर्ग करके = आशीः, आशिषौ आशिषः।

षकारान्त धातु - मित्र + ङस् + द्विष् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - मित्रद्विष्।

'वाऽवसाने' सूत्र से ष् को विकल्प से जश्त्व करके - मित्रद्विड्, तथा चर्त्व करके - मित्रद्विट्। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - मित्रद्विट्, मित्रद्विड् मित्रद्विषौ मित्रद्विषः।

इसी प्रकार - प्रद्विट्, प्रद्विड् प्रद्विषौ प्रद्विषः आदि।

हकारान्त धातु -

मधुलिट् - मधु + ङस् + लिह् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - मधुलिह्।

हो ढः - हकारान्त धातुओं के ह् के स्थान पर ढ् आदेश होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में। मधुलिह् - मधुलिढ् / मधुलिढ् + सु / सु का लोप करके - मधुलिढ्-

'वाऽवसाने' सूत्र से ढ् को विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - मधुलिट्, मधुलिट् मधुलिहौ मधुलिहः।

गोधुक् - गो + ङस् + दुह् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - गोदुह्।

दादेर्धातोर्घः (८.२.३२) - दकारादि हकारान्त धातुओं के ह् के स्थान पर घ् आदेश होता है, झल् परे होने पर और पदान्त में। गोदुह् - गोदुघ् / गोदुघ् + सु / सु का लोप करके - गोदुघ् -

एकाचो बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः (८.२.३७) - धातु का अवयव जो एकाच्

झषन्त, तदवयव जो बश्, उसके स्थान पर भष् आदेश होता है, पदान्त में तथा सकार, ध्व परे होने पर। इस सूत्र से बश् 'द' के स्थान पर भष् 'ध' आदेश करके - गोधुघ् / 'वाऽवसाने' सूत्र से घ् को विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके -

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - गोधुक्, गोधुग् गोदुहौ, गोदुहः।

इसी प्रकार - प्र + दुह् + क्विप् - प्रदुह्।

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - प्रधुक्, प्रधुग् प्रदुहौ प्रदुहः।

मित्रधुट् - मित्र + ङस् + द्रुह् + क्विप् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - मित्रद्रुह्।

मित्रद्रुह् + सु / सु का लोप करके - मित्रद्रुह् -

वा द्रुहमुहष्णुहष्णिहाम् (८.२.३३) - द्रुह्, मुह्, ष्णुह्, स्निह्, धातुओं के ह् के स्थान पर विकल्प से घ् और ढ् आदेश होते हैं, झल् परे होने पर और पदान्त में।

ह् के स्थान पर घ् आदेश होने पर - मित्रद्रुह् - मित्रद्रुघ् -

'एकाचो बशो भष् झषन्तस्य स्ध्वोः' सूत्र से बश् 'द' के स्थान पर भष् 'ध्' आदेश करके - मित्रद्रुघ् - मित्रधुघ्।

'वाऽवसाने' सूत्र से विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - मित्रधुक्, मित्रघ्रुग्, मित्रद्रुहौ मित्रद्रुहः।

ह् के स्थान पर ढ् आदेश होने पर - मित्रद्रुह् - मित्रद्रुढ् -

पूर्ववत् भष्भाव करके - मित्रध्रुढ्। 'वाऽवसाने' सूत्र से विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - मित्रध्रुड्, मित्रध्रुट्, मित्रद्रुहौ मित्रद्रुहः।

चर्मनत् - चर्म + टा + नह् + क्विप् / पूर्ववत् - चर्मनह् -

नहो धः - नह् धातु के ह् के स्थान पर ध् आदेश होता है, झल् परे होने पर तथा पदान्त में। चर्मनह् - चर्मनध् -

'वाऽवसाने' सूत्र से विकल्प से जश्त्व तथा चर्त्व करके प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - चर्मनत्, चर्मनद्, चर्मनहौ चर्मनहः।

क्विन् प्रत्यय

क्विन् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की, 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इ की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके व् शेष बचता है। 'वेरपृक्तस्य' सूत्र से उस व् का भी लोप हो जाता है। जब पूरे प्रत्यय

का लोप हो जाता है तब कहते हैं कि प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हो गया।

ध्यान दें कि क्विप् और क्विन्, ये दोनों प्रत्यय कित् हैं। दोनों का सर्वापहारी लोप होता है, तब भी क्विप् और क्विन् प्रत्ययों में यह भेद है कि क्विप् प्रत्यय पित् है और क्विन् प्रत्यय पित् नहीं है। अत: क्विप् प्रत्यय लगने पर 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' सूत्र से ह्रस्व को तुक् का आगम होता है और क्विन् प्रत्यय लगने पर तुगागम नहीं होता।

दूसरी बात यह कि क्विप् प्रत्यय 'क्विप् च' सूत्र से सभी धातुओं से लग सकता है किन्तु क्विन् प्रत्यय सभी धातुओं से नहीं लगता।

तीसरी बात यह कि क्विन् प्रत्यय लगने पर 'क्विन्प्रत्ययस्य कु:' सूत्र से कुत्वादि कार्य विशेष होते हैं, जो कि क्विप् प्रत्यय में नहीं होते।

यह सब पाणिनीय व्याकरण के अनुबन्धों का चमत्कार है।

क्विन्प्रत्ययस्य कु: - क्विन्प्रत्ययान्त को कुत्व होता है, पदान्त में।

अब हम धातुओं में क्विन् प्रत्यय लगायें। पर ध्यान दें कि सारे क्विन् प्रत्ययान्तों को, 'क्विन्प्रत्ययस्य कु:' सूत्र से प्रथमा एकवचन में कुत्व करते चलें -

क्विन् प्रत्यय लगाकर निपातन से बनने वाले शब्द -

ऋत्विग्दधृक्स्रग्दिगुष्णिगञ्चुयुजिक्रुञ्चां च (३.२.५९) -

ये शब्द क्विन्प्रत्ययान्त निपातित होते हैं।

ऋतु पूर्वक यज् धातु से क्विन् प्रत्यय करके - ऋत्विक्, ऋत्विग्।

धृष् धातु से क्विन् प्रत्यय करके - दधृक्, दधृग्।

स्रज् धातु से क्विन् प्रत्यय करके - स्रक्, स्रग्।

दिश् धातु से क्विन् प्रत्यय करके - दिक्, दिग्।

उत् पूर्वक स्निह् धातु से क्विन् प्रत्यय करके - उष्णिक्, उष्णिग्।

अञ्च् धातु से कोई भी सुबन्त उपपद में होने पर क्विन् प्रत्यय लगता है-

प्र + अञ्च् + क्विन् - प्रत्यय का सर्वापहारी लोप होकर = प्राञ्च् / प्रत्यय के कित् होने के कारण 'अनिदितां हल उपधाया: क्ङिति' सूत्र से उपधा के न् का लोप करके - प्राच्। प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति लगाने पर 'उगिदचां सर्वनामस्थोऽधातो:' सूत्र से नुम् का आगम करके प्राङ्। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - प्राङ्, प्राञ्चौ, प्राञ्च:।

इसी प्रकार - प्रति पूर्वक अञ्च् धातु से प्रत्यञ्च्। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - प्रत्यङ् प्रत्यञ्चौ, प्रत्यञ्च:।

उद् पूर्वक अञ्च् धातु से उदञ्च्। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - उदङ् उदञ्चौ, उदञ्चः।

युज् + क्विन् - प्रत्यय का सर्वापहारी लोप होकर - युज्। प्रथमा में सु विभक्ति लगाने पर - 'युजेरसमासे' सूत्र से नुम् का आगम करके - यु नुम् ज् + सु। 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से सु का लोप करके तथा 'संयोगान्तस्य लोपः' सूत्र से ज् का लोप करके - युन्। क्विन्प्रत्ययस्य कुः से न् को कुत्व करके - युङ्। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - युङ्, युञ्जौ, युञ्जः।

क्रुञ्च् + क्विन् = क्रुञ्च्। निपातनों के साथ पाठ होने के कारण इसकी उपधा के न् का लोप नहीं होता। अतः क्रुञ्च् + क्विन् = क्रुञ्च्। यही बना। अब प्रथमा में सु विभक्ति लगाने पर - क्रुञ्च् + सु। 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुतिस्यपृक्तं हल्' सूत्र से सु का लोप करके तथा 'संयोगान्तस्य लोपः' सूत्र से ज् का लोप करके - क्रुञ्। क्विन्प्रत्ययस्य कुः से ञ् को कुत्व करके, क्रुङ्। प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - क्रुङ् क्रुञ्चौ, क्रुञ्चः।

ध्यान दें कि सारे क्विन् प्रत्ययान्तों को, 'क्विन्प्रत्ययस्य कुः' सूत्र से प्रथमा एकवचन में कुत्व हुआ है।

शकारान्त धातु - घृत + ङस् + स्पृश् + क्विन् / प्रत्यय का सर्वापहारी लोप करके तथा सुपो धातुप्रातिपदिकयोः सूत्र से विभक्ति का लोप करके - घृतस्पृश्।

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - घृतस्पृक्, घृतस्पृग्, घृतस्पृशौ घृतस्पृशः।

इसी प्रकार- मन्त्रस्पृश् - मन्त्रस्पृक्, मन्त्रस्पृग्, मन्त्रस्पृशौ मन्त्रस्पृशः।

जलस्पृश् - जलस्पृक्, जलस्पृग्, जलस्पृशौ, जलस्पृशः आदि।

त्यद् + दृश् + क्विन् / **'आ सर्वनाम्नः'** से त्यद् को आत्व होकर - त्यादृश् - त्यादृक्, त्यादृग्, त्यादृशौ, त्यादृशः। इसी प्रकार -

तद् से - तादृक्, तादृग्, तादृशौ, तादृशः।

यद् से - यादृक्, यादृग्, यादृशौ यादृशः।

समान से - सदृक्, सदृग् सदृशौ सदृशः। यहाँ 'दृग्दृशवतुषु' सूत्र से समान को 'स' आदेश हुआ है। **अन्य से** - अन्यदृक्, अन्यदृग्, अन्यदृशौ अन्यदृशः, आदि बनाइये।

धातुओं में कञ् प्रत्यय लगाने की विधि

कञ् प्रत्यय में हलन्त्यम् सूत्र से ञ् की, तथा लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इनका लोप करके अ शेष बचता है। यह प्रत्यय भी कित् है।

त्यद् + दृश् + कञ् / त्यद् + दृश् + अ / 'आ सर्वनाम्न:' से त्यद् को आत्व होकर - त्यादृश् + अ = त्यादृश। अब यह अकारान्त शब्द है।

प्रथमा विभक्ति के पूरे रूप - त्यादृश: त्यादृशौ, त्यादृशा:। इसी प्रकार -

तद् से - तादृश - प्रथमा विभक्ति में - तादृश: तादृशौ, तादृशा:।
यद् से - यादृश - प्रथमा विभक्ति में - यादृश: यादृशौ, यादृशा:।
समान से - सदृश - प्रथमा विभक्ति में - सदृश: सदृशौ, सदृशा:।
अन्य से - अन्यदृश - प्रथमा विभक्ति में - अन्यदृश: अन्यदृशौ, अन्यदृशा:, आदि।

धातुओं में क्स प्रत्यय लगाने की विधि

क्स प्रत्यय में लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोप:' से इसका लोप करके स शेष बचता है। यह प्रत्यय भी कित् है।

त्यद् + दृश् + क्स / त्यद् + दृश् + स / 'आ सर्वनाम्न:' से त्यद् को आत्व होकर - त्या + दृश् + स - **व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां ष:** सूत्र ये श् को ष् करके - त्या + दृष् + स / **'षढो: क: सि'** सूत्र से ष् को क् करके - त्या + दृक् + स / **'आदेशप्रत्यययो:'** सूत्र से प्रत्यय के स को मूर्धन्यादेश करके - त्या + दृक् + ष / क्ष्संयोगे क्ष: करके - त्यादृक्ष:। यह भी अकारान्त शब्द है।

त्यादृक्ष: त्यादृक्षौ, त्यादृक्षा:। इसी प्रकार - तद् से - तादृक्ष: तादृक्षौ, तादृक्षा:। यद् से - यादृक्ष: यादृक्षौ, यादृक्षा:। समान से - सदृक्ष: सदृक्षौ, सदृक्षा:। अन्य से - अन्यदृक्ष: अन्यदृक्षौ, अन्यदृक्षा:, आदि बनाइये।

धातुओं में कप् प्रत्यय लगाने की विधि

कप् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की इत्संज्ञा होकर तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से प् की इत्संज्ञा करके करके 'तस्य लोप:' करके अ बचाइये।

दुह: कब्घश्च (३.२.७०) - सुप् उपपद में होने पर दुह् धातु से कप् प्रत्यय होता है और दुह् धातु को घ अन्तादेश होता है।

काम + ङस् + दुह् + कप् / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयो:' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - काम + दुह् + अ / काम + दुघ् + अ - कामदुघ - स्त्रीत्व विवक्षा में 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् करके - कामदुघा।

धातुओं में क प्रत्यय लगाने की विधि

क प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोप:' से इसका

लोप करके अ शेष बचता है। यह प्रत्यय कित् है। प्रत्यय कित् होने के कारण वे कार्य कीजिये, जो कार्य कित्, ङित् प्रत्ययों के लिये बतलाये गये हैं।

आकारान्त धातु - ज्ञा + क / 'आतो लोप इटि च' से आकार का लोप करके - ज्ञ् + अ = ज्ञः। इसी प्रकार - प्र + स्था + क = प्रस्थः / सु + ग्लै-ग्ला + क = सुग्लः / सु म्लै-म्ला + क = सुम्लः। सु + स्था + क = सुस्थः।

उपपद होने पर, उसकी विभक्ति का 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से लोप करके पूर्ववत् आ का लोप करके -

सम	+	ङि	+	स्था	+	क	=	समस्थः
विषम	+	ङि	+	स्था	+	क	=	विषमस्थः
शम्	+	ङि	+	स्था	+	क	=	शंस्थः
गो	+	ङस्	+	सम् + ख्या	+	क	=	गोसंख्यः
गो	+	ङस्	+	दा	+	क	=	गोदः
कम्बल	+	ङस्	+	दा	+	क	=	कम्बलदः
सर्व	+	ङस्	+	प्र + दा	+	क	=	सर्वप्रदः
पथिन्	+	ङि	+	प्र + ज्ञा	+	क	=	पथिप्रज्ञः

इकारान्त तथा उकारान्त धातु - इन्हें अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर 'अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ (६.४.७७)' सूत्र से इयङ्, उवङ् आदेश कीजिये। यथा-

प्री + क / प्री + अ / ई को इयङ् आदेश होकर - प्रिय् + अ = प्रियः।

ॠकारान्त धातु -

इन्हें 'ॠत इद् धातोः' सूत्र से इ आदेश करके, उसे 'उरण रपरः' की सहायता से रपर करके 'इर्' कीजिये - कॄ + क / किर् + अ - किरः।

हलन्त उच् धातु -

ओक उचः के (७.३.६४) - उच् धातु को कुत्व और गुण निपातन होता है, क प्रत्यय परे होने पर। उच् + क = ओकः। न्योकः शकुन्तः। न्योको वृक्षः। इस शब्द को घञ् करके इसलिये नहीं बनाया, कि घञ् करने से यह आद्युदात्त हो जाता। क करके अन्तोदात्त रूप बनाना ही यहाँ इष्ट है।

शेष हलन्त धातुओं में क्ङिति च से गुण निषेध करके -

विलिख् + क = विलिखः

विक्षिप्	+	क	=	विक्षिपः
बुध्	+	क	=	बुधः
कृश्	+	क	=	कृशः

ग्रह् + क / ग्रह् + अ / 'ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च' सूत्र से सम्प्रसारण करके - गृह् + अ = गृहं, गृहाः।

तुन्द् + ङस् + परि + मृज् + क / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - तुन्द् + परि + मृज् + अ = तुन्दपरिमृजः।

इसी प्रकार - शोक + ङस् + अप + नुद् + क = शोकापनुदः।

धातुओं में कसुन् प्रत्यय लगाने की विधि

कसुन् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की तथा 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इनका लोप करके अस् शेष बचता है। यह प्रत्यय वैदिक है तथा कित् है।

कित् होने के कारण 'क्ङिति च' से गुणनिषेध करके - वि + लिख् + कसुन् / वि + लिख् + अस् - विलिखस् = विलिखः - ईश्वरो विलिखः। इसी प्रकार ईश्वरो विकृडः / पुरा क्रूरस्य विसृपो विरप्शिन् / पुरा जतृभ्य आतृदः।

केलिमर् प्रत्यय

पच् + केलिमर् - 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से र् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके एलिम शेष बचता है।

पच् + एलिम - पचेलिम - पचेलिमाः माषाः।

क्नु प्रत्यय

त्रस् + क्नु - 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके - त्रस् + नु - त्रस्नुः।

इसी प्रकार गृध्नुः, धृष्णुः, क्षिप्नुः आदि।

क्वनिप् प्रत्यय

क्वनिप् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की, 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इ की तथा हलन्त्यम् सूत्र से प् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इनका लोप करके वन् शेष बचता है। यह कित् है।

सु + धा + क्वनिप् - सु + धा + वन् / 'घुमास्थागापाजहातिसां हलि' से आ को 'ई' होकर - सुधीवन् - सुधीवा, सुधीवानौ, सुधीवानः । इसी प्रकार -

सु + पा + क्वनिप् से सुपीवन् - सुपीवा, सुपीवानौ, सुपीवानः ।

पार + दृश् + क्वनिप् / पारदृश्वन् - पारदृश्वा, पारदृश्वानौ, पारदृश्वानः ।

राजन् + युध् + क्वनिप् - राजन् + युध् + वन् / 'नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य' सूत्र से नकार का लोप करके - राजयुध्वन् - राजयुध्वा, राजयुध्वानौ, राजयुध्वानः ।

सह + कृ + क्वनिप् - सह + कृ + वन् - ह्रस्वस्य पिति कृति तुक् से तुक् का आगम करके - सहकृत्वन् - सहकृत्वा, सहकृत्वानौ, सहकृत्वानः ।

ङ्वनिप् प्रत्यय

ङ्वनिप् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की, 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इ की तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से प् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके वन् शेष बचता है। यह ङित् है।

सु + ङ्वनिप् - सु + वन् - तुगागम करके - सुत्वन् । सुत्वा, सुत्वानौ, सुत्वानः ।

यज् + ङ्वनिप् - यज् + वन् - यज्वन् । यज्वा, यज्वानौ, यज्वानः ।

क्वरप् प्रत्यय

क्वरप् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की, तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से प् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके वर शेष बचता है। यह कित् प्रत्यय है।

इ + क्वरप् - इ + वर - 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' से तुक् का आगम करके - इ + तुक् + वर = इत्वरः, स्त्रीलिङ्ग में इत्वरी।

नश् धातु से - नश्वरः नश्वरी / जि धातु से - जित्वरः जित्वरी / सृ धातु से सृत्वरः, सृत्वरी / गम् धातु से निपातन से गत्वरः, गत्वरी।

क्मरच् प्रत्यय

क्मरच् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की, तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इनका लोप करके मर शेष बचता है। यह प्रत्यय कित् है, अतः क्ङिति च से गुण निषेध कीजिये -

सृ + क्मरच् - सृ + मर = सृमरः ।
घस् + क्मरच् - घस् + मर = घस्मरः ।
अद् + क्मरच् - अद् + मर = अद्मरः ।

कुरच् प्रत्यय

कुरच् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की, तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इनका लोप करके उर शेष बचता है।

भिद् + कुरच् - भिद् + उर, क्ङिति च से गुण निषेध करके = भिदुरः / इसी प्रकार - विद् + कुरच् - विद् + उर = विदुरः / छिद् + कुरच् - छिद् + उर = छिदुरः।

कै प्रत्यय

यह प्रत्यय छान्दस अथवा वैदिक है। इसमें लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके ऐ शेष बचता है। प्र + या + कै / प्र + या + ऐ - आतो लोप इटि च से आ का लोप करके - प्र + य् + ऐ = प्रयै। यह प्रत्यय छान्दस अथवा वैदिक है। इससे वेद में - प्रयै देवेभ्यः, यह प्रयोग निपातन से बनता है।

के प्रत्यय

यह प्रत्यय छान्दस अथवा वैदिक है। इसमें 'लशक्वतद्धिते सूत्र से क् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके ए शेष बचता है।

वि + ख्या + के - वि + ख्या + ए - आतो लोप इटि च से आ का लोप होकर - वि + ख्य् + ए = विख्ये त्वा हरामि। दृश् + के - दृशे विश्वाय सूर्यम्।

ये प्रयोग निपातन से बनते हैं।

केन, केन्य प्रत्यय

ये प्रत्यय भी छान्दस हैं। केन् प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की, तथा 'हलन्त्यम्' से च् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके ए शेष बचता है।

केन्य प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' से क् की, तथा 'हलन्त्यम्' सूत्र से च् की इत्संज्ञा होकर एन्य शेष बचता है। ये कित् प्रत्यय हैं।

न + अव + गाह् + केन् / नावगाह् + ए = नावगाहे।

दिदृक्ष + केन्य / दिदृक्ष + एन्य / अतो लोपः से अ का लोप होकर - दिदृक्ष् + एन्य / णत्व होकर = दिदृक्षेण्यः। इसी प्रकार - शुश्रूष से शुश्रूषेण्यः।

कि, किन् प्रत्यय (ये प्रत्यय लिड्वत् होते हैं।)

ये प्रत्यय भी छान्दस हैं। कि प्रत्यय में 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की, तथा किन्

प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की भी इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इनका लोप करके इ शेष बचता है। ये कित् प्रत्यय हैं।

इन दोनों प्रत्ययों में केवल नकार अनुबन्ध का भेद है, जिसका प्रभाव स्वर पर होगा, प्रक्रिया दोनों की एक ही होगी। अतः जो रूप कि प्रत्यय लगाकर बनेगा, वही रूप 'किन्' प्रत्यय लगने पर भी बनेगा।

ये दोनों प्रत्यय लिट् प्रत्यय के समान होते हैं। अतः 'लिटि धातोरनभ्यासस्य' सूत्र से जो द्वित्वादि कार्य लिट् परे होने पर होते हैं, वे ही कार्य, कि, किन् प्रत्यय परे होने पर भी धातुओं को होंगे।

(लिट् लकार की पूरी द्वित्वादि प्रक्रिया हमने 'अष्टाध्यायी सहज बोध के द्वितीय खण्ड में दी है। अतः यहाँ उसकी पुनरुक्ति नहीं करेंगे। उन द्वित्वादि विधियों को विस्तार से वहीं देखें। यहाँ केवल क्वसु सम्बन्धी इडागम ही बतलायेंगे।)

वेद में इनका प्रयोग इस प्रकार होगा -

आकारान्त धातुओं से कि, किन् प्रत्यय - पा + किन् / पा + इ -

'लिटि धातोरनभ्यासस्य' से द्वित्व होकर - पा पा + इ / 'पूर्वोऽभ्यासः' सूत्र से पूर्व की अभ्यास संज्ञा होकर तथा ह्रस्वः सूत्र से अभ्यास को ह्रस्व होकर - पपा + इ / 'आतो लोप इटि च' से आ का लोप होकर - पप् + इ = पपिः सोमम्। इसी प्रकार - दा से ददिर्गाः।

ऋकारान्त धातुओं से कि, किन् प्रत्यय - तॄ + किन् / तॄ + इ / द्वित्व तथा अभ्यासकार्य होकर - ततॄ + इ / 'बहुलं छन्दसि' से ॠ को उर् होकर - ततुर् + इ = मित्रावरुणौ ततुरिः। इसी प्रकार - गॄ से दूरे ह्यध्वा जगुरिः।

गम् धातु - गम् + कि - द्वित्व तथा अभ्यासकार्य होकर - जगम् + इ /

गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि (६.४.९८) - गम्, हन्, जन्, खन्, घस्, धातुओं की उपधा का लोप होता है, अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर, अङ् को छोड़कर। इस सूत्र से उपधा का लोप होकर - जग्म् + इ = जग्मिर्युवा।

हन् धातु - हन् + कि - द्वित्वादि होकर - जहन् + इ - गमहन. सूत्र से उपधा के अ का लोप होकर - जह्न् + इ -

हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु (७.३.५४) - हन् धातु के ह् को कुत्व होता है, ञित्, णित् प्रत्यय परे होने पर तथा नकार परे होने पर। जघ्न् + इ = जघ्निर्वृत्रम्।

जन् धातु - जन् + कि - द्वित्वादि होकर - जजन् + इ - गमहन. सूत्र से उपधा के अ का लोप होकर - जज्न् + इ - 'स्तोः श्चुना श्चुः' से न् को श्चुत्व होकर - ज्ज्ञ् + इ / ज्ञ्संयोगे ज्ञः = जज्ञिर्बीजम्।

सद्, नम् धातु - सद् + इ / द्वित्व तथा अभ्यासलोप होकर - ससद् - सेद् - सेदिः। इसी प्रकार - नम् से नेमिः।

लोक में इनका प्रयोग इस प्रकार होगा -

पपिः के समान ही - धा + कि / दधा + इ = दधिः। कृ + कि / चकृ = चक्रिः। सृ से ससृ - सस्रिः। जन् से पूर्ववत् जज्ञिः। गम् से पूर्ववत् - जग्मिः।

यङन्त धातुओं से कि किन् प्रत्यय - सासह् + कि - सासहिः। इसी प्रकार - वावह् से वावहिः। चाचल् से चाचलिः। पापत् से पापतिः।

कि प्रत्यय

(ध्यान रहे कि यह 'कि' प्रत्यय वैदिक नहीं है और लिड्वत् भी नहीं है)

प्र + दा - 'आतो लोप इटि च' से आ का लोप होकर - प्र + द् + इ = प्रदिः। प्र + धा + कि = प्रधिः। इसी प्रकार - अन्तर्द्धिः, शरधिः, जलधिः।

क्रु प्रत्यय

इसमें 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके ए शेष बचता है। भी + क्रु - भी + रु = भीरुः।

क्लुकन् प्रत्यय

इसमें 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की इत्संज्ञा करके, 'हलन्त्यम्' से न् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इनका लोप करके ए शेष बचता है।

भी + क्लुकन् / क् और न् की इत् संज्ञा करके - भी + लुक / क्ङिति च से गुण निषेध होकर - भी + लुक = भीलुकः।

ग्स्नु प्रत्यय

ग्ला + ग्स्नु - 'लशक्वतद्धित' सूत्र से क् की इत्संज्ञा होकर - ग्ला + स्नु - ग्लास्नु।

जि + ग्स्नु - जि + स्नु / जि + स्नु 'क्ङिति च' से गुणनिषेध करके - जि + स्नु / 'आदेशप्रत्यययोः' सूत्र से स् को मूर्धन्यादेश होकर - जिष्णुः।

स्था + ग्स्नु - स्थास्नुः ।

टक् प्रत्यय

टक् प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से क् की, तथा 'चुटू' सूत्र से ट् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इनका लोप करके अ शेष बचता है। यह प्रत्यय भी कित् है।

शक्र + ङस् + गै + टक् / 'आदेच उपदेशेऽशिति' से गै को आत्व करके - शक्र + ङस् + गा + अ / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके -

शक्र + गा + अ -

आतो लोप इटि च - अङ्ग के अन्तिम आकार का लोप होता है, अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर और इट् परे होने पर।

इस सूत्र से आ का लोप होकर - शक्र + ग् + अ = शक्रगः। टित् होने के कारण स्त्रीलिङ्ग में ङीप् करके - शक्रग + ङीप् / 'यस्येति च' सूत्र से अ का लोप करके - शक्रग् + ई = शक्रगी। इसी प्रकार -

सामगः, सामगी / सुरा + पा + क = सुरापः, सुरापी / शीधुपः, शीधुपी।

जाया + ङस् + हन् + टक् / 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप करके - जाया + हन् + अ -

गमहनजनखनघसां विङत्यनङि (६.४.९८) - गम्, हन्, जन्, खन्, घस् धातुओं की उपधा का लोप होता है, अजादि कित्, ङित् प्रत्यय परे होने पर, अङ् को छोड़कर।

जाया + हन् + अ / उपधा के अ का लोप होकर - जाया + ह्न् + अ /

हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु (७.३.५४) - हन् धातु के ह् को कुत्व होता है, ञित्, णित् प्रत्यय परे होने पर तथा नकार परे होने पर। जाया + ह्न् + अ - जाया + घ्न् + अ = जायाघ्न - जायाघ्नः। इसी प्रकार - पतिघ्नी, श्लेष्मघ्नम्, पित्तघ्नम्, हस्तिघ्नः, कपाटघ्नः, गोघ्नः।

नजिङ् प्रत्यय

इसमें 'हलन्त्यम्' सूत्र से ङ् की तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' से इ की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इनका लोप करके नज् शेष बचता है। यह ङित् है।

स्वप् + नजिङ् / स्वप् + नज् = स्वप्नज् / प्रथमा एकवचन में 'चोः कुः' से कुत्व होकर - स्वप्नक्।

तृष् + **नजिङ्** / तृष् + नज् - णत्व करके = तृष्णज् / प्रथमा एकवचन

में चो: कु: से कुत्व होकर - तृष्णक्।

धृष् + नजिङ् / धृष् + नज् - णत्व करके = धृष्णज् / प्रथमा एकवचन में चो: कु: से कुत्व होकर - तृष्णक्।

नङ् प्रत्यय

यज् + नङ् / 'हलन्त्यम्' से ङ् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोप:' से इसका लोप करके - यज् + न / स्तो: श्चुना श्चु: से न् को श्चुत्व होकर - यज् + ञ = यज्ञ:।

याच् + नङ् / याच् + न / 'स्तो: श्चुना श्चु:' से न् को श्चुत्व होकर - याच् + ञ = याच्ञ - स्त्रीत्व विवक्षा में टाप् होकर - याच्ञा।

विच्छ् + नङ् / विच्छ् + न / 'च्छ्वो शूडनुनासिके च' से च्छ् को श् होकर - विश् + न = विश्न:। इसी प्रकार - प्रच्छ् से प्रश्न:।

यत् + नङ् / यत् + न = यत्न:। इसी प्रकार - रक्ष् से रक्ष्ण:।

क्त्रि प्रत्यय

वप् + क्त्रि / 'लशक्वतद्धिते' से क् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोप:' से इसका लोप करके - वप् + त्रि / 'वचिस्वपियजादीनाम् किति' से सम्प्रसारण होकर - उप् + त्रि = उप्त्रि -

क्त्रेर्मम् नित्यम् सूत्र से क्त्रिप्रत्ययान्त शब्द को मप् प्रत्यय करके - उप्त्रि + मप् - प् की इत्संज्ञा करके - उप्त्रिम - उप्त्रिमम्।

पच् + क्त्रि / पच् + त्रि / चो: कु: से कुत्व होकर - पच् + त्रि - पक्त्रि = पक्त्रिमम्। इसी प्रकार - कृ + क्त्रि / कृ + त्रि / कृत्रि = कृत्रिमम्।

अङ् प्रत्यय

आकारान्त धातु - प्र + दा + अङ् / 'हलन्त्यम्' सूत्र से ङ् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोप:' से इसका लोप करके - प्रदा + अ / 'आतो लोप इटि च' सूत्र से आ का लोप करके - प्रद् + अ - प्रद / स्त्रीत्व विवक्षा में टाप् करके - प्रदा। इसी प्रकार धा धातु से उपधा, प्रधा, अन्तर्द्धा आदि।

इकारान्त धातु - क्षि + अङ् / 'क्ङिति च' से गुण निषेध होने के कारण 'अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ' सूत्र से इयङ् आदेश करके -

क्षिय् + अ - क्षिय + टाप् = क्षिया

ऋकारान्त धातु -

ऋदृशोऽङि गुणः (७.४.१६) - ऋकारान्त धातु और दृश् धातु को गुण होता है, अङ् परे होने पर। जॄ + अङ् - जर् + अ / स्त्रीत्व विवक्षा में टाप् होकर - जरा।

ॠ, हृ, कॄ, तॄ, धॄ धातु - इन धातुओं को 'ऋदृशोऽङि गुणः' से गुण करके, इनकी उपधा को निपातन से दीर्घ भी होता है। यथा -

ॠ + अङ् = आरा ¼vkjk 'kL=्यामिति वक्तव्यम्।)
हृ + अङ् = हारा
तॄ + अङ् = तारा
धॄ + अङ् = धारा (धारा प्रपात इति वक्तव्यम्।)
कॄ + अङ् = कारा

लिख् धातु - इससे अङ् प्रत्यय होने पर निपातन से लिख् को गुण होता है तथा लकार को रेफ आदेश भी होता है - लिख् + अङ् = लेखा / रेखा।

चुद् धातु - चुद् + अङ् / निपातन से चूडा शब्द बनता है।

क्रप् धातु - क्रप् + अङ् / 'क्रपेः संप्रसारणं च' इस वार्तिक से सम्प्रसारण होकर = कृपा।

अनिदित् धातु -

अनिदितां हल उपधायाः क्ङिति (६.४.२४) - कित् या ङित् प्रत्यय परे होने पर, अनिदित् हलन्त धातुओं की उपधा के 'न्' का लोप होता है।

मन्थ् + अङ् - मथ् + अ = मथा
लुञ्च् + अङ् - लुच् + अ = लुचा
शुन्ध् + अङ् - शुध् + अ = शुधा

नाञ्चेः पूजायाम् (६.४.३०) - पूजा अर्थ में अञ्चु धातु के उपधा के नकार का लोप नहीं होता है। अञ्च् + अङ् = अञ्चा।

शेष धातु - शेष धातुओं में 'क्ङिति च सूत्र से गुण निषेध कीजिये -

भिद् + अङ् = भिदा   छिद् + अङ् = छिदा
विद् + अङ् = विदा   क्षिप् + अङ् = क्षिपा
गुह् + अङ् = गुहा   मृज् + अङ् = मृजा

णिजन्त धातु -

णेरनिटि (६.४.५१) – णिच् का लोप होता है, अनिडादि आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

चिन्त् + णिच् - चिन्ति / चिन्ति + अङ् / 'णेरनिटि' सूत्र से णिच् का लोप करके - चिन्त् + अ / स्त्रीत्व विवक्षा में टाप् करके - चिन्ता।

इसी प्रकार – पूजि से पूजा, कुम्बि से कुम्बा, चर्च से चर्चा, कथि से कथा बनाइये।

शेष धातुओं से कुछ मत कीजिये –

त्रप् + अङ् - हलन्त्यम् सूत्र से ङ् की इत्संज्ञा होकर - त्रप् + अ - स्त्रीत्व विवक्षा में टाप् होकर - त्रपा / इसी प्रकार - भिद् से भिदा / छिद् से छिदा।

क्से, कसेन्, कध्यै, कध्यैन् प्रत्यय

ये सारे प्रत्यय छान्दस हैं।

क्से प्रत्यय – प्र + इ + क्से / 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की इत् संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इसका लोप करके – प्र + इ + से / स को मूर्धन्यादेश होकर – प्रेषे भगाय।

कसेन् प्रत्यय – श्रि + कसेन् / 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की इत् संज्ञा करके 'हलन्त्यम्' सूत्र से न् की इत्संज्ञा करके 'तस्य लोपः' से इनका लोप करके – श्रि + असे / 'अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ' से इ को इयङ् आदेश करके – श्रिय् + असे = श्रियसे।

कध्यै प्रत्यय – आ + हु + कध्यै / 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से क् की इत् संज्ञा होकर – आ + हु + अध्यै / 'अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ' से उ को उवङ् आदेश करके – आ + हुव् + अध्यै = इन्द्राग्नी आहुवध्यै।

कध्यैन् प्रत्यय – श्रि + कध्यैन् / श्रि + अध्यै / 'अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ' से इ को इयङ् आदेश करके – श्रिय् + अध्यै = श्रियध्यै।

तवेङ् प्रत्यय

यह प्रत्यय भी छान्दस है तथा यह ङित् है।

सू + तवेङ् / 'हलन्त्यम्' सूत्र से ङ् की इत्संज्ञा करके तथा क्ङिति च सूत्र से गुणनिषेध करके – दशमे मासि सूतवे।

अष्टाध्यायी की संरचना

अब तृतीय अध्याय के सूत्रों की यथाक्रम व्याख्या दे रहे हैं। किन्तु इसमें प्रवेश करने के पहिले पाणिनीय अष्टाध्यायी के सूत्रों के अर्थों को समझने की विधि हमें जान लेना चाहिये। पाणिनीय अष्टाध्यायी का प्रथम विज्ञान यह है कि इसकी रचना इतने लाघव से की गई है कि यदि बात एक अक्षर में पूरी हो जाती है, तो वे डेढ़ अक्षर नहीं कहते और यदि बात दो अक्षर में पूरी हो जाती है, तो वे ढाई अक्षर नहीं कहते।

इसके लिये उन्होंने जिन दो विधियों का आश्रय लिया है, वे हैं - अधिकार और अनुवृत्ति। ये अधिकार और अनुवृत्ति ही वस्तुतः पाणिनीय अष्टाध्यायी के प्राण हैं।

अनुवृत्ति - अष्टाध्यायी में सूत्रों को ऐसी व्यवस्था से बैठाया गया है, कि यदि ऊपर के सूत्रों के पदों की आवश्यकता नीचे के सूत्रों को है, तो उन्हें दोबारा कहने की आवश्यकता नहीं है। वे नीचे के सूत्र ऊपर के सूत्रों के पदों को खींचकर ले सकते हैं और अपना अर्थ पूर्ण कर सकते हैं। जैसे -

'उपदेशेजनुनासिक इत्' यह सूत्र है। इसमें इत् पद है। सात सूत्र और ऐसे हैं, जिन्हें इत् पद की आवश्यकता है। तो आचार्य आठ बार इत्, इत् न कहकर एक ही सूत्र में 'इत्' कहते हैं, और उसी के ठीक बाद में हलन्त्यम्, न विभक्तौ तुस्माः, षः प्रत्ययस्य, आदिर्ञिटुडवः, चुटू, लशक्वतद्धिते, तस्य लोपः, इन ७ सूत्रों को बैठा देते हैं। अतः ये सातों सूत्र 'उपदेशेजनुनासिक इत्' सूत्र से 'इत्' पद को खींच लेते हैं और अपने अर्थ को पूरा कर लेते हैं। इसी 'ऊपर से खींचने' को हम कहते हैं कि 'उपदेशेजनुनासिक इत्' सूत्र की 'अनुवृत्ति' 'हलन्त्यम्', आदि सूत्रों में जाती है।

इस अनुवृत्ति से लाभ यह होता है कि एक ही शब्द को बार बार नहीं कहना पड़ता है और सूत्रों के अर्थ भी नहीं रटना पड़ते हैं।

अधिकार

जब एक ही शब्द की या अनेक शब्दों की अनुवृत्ति बहुत दूर तक पचासों सूत्रों में ले जाना आवश्यक होता है, तब आचार्य उस शब्द का एक अलग 'अधिकार सूत्र' बना देते हैं और उसके अधिकार की आगे पीछे की उन दो सीमाएँ निर्धारित कर देते हैं, जहाँ से जहाँ तक, उसका अधिकार होता है। इन दो सीमाओं के भीतर के प्रत्येक सूत्र में जाकर

वह 'अधिकार सूत्र' पूरा का पूरा जुड़ जाता है, जिसके मिल जाने से उन सारे सूत्रों का अर्थ पूर्ण हो जाता है। जैसे -

अष्टाध्यायी में १६८१ सूत्र ऐसे हैं, जो 'प्रत्यय' लगाते हैं। तो आचार्य १६८१ बार प्रत्येक सूत्र में 'प्रत्यय होता है', 'प्रत्यय होता है', ऐसा न कहकर सबसे प्रारम्भ में, एक बार 'प्रत्ययः - ३.१.१' कह देते हैं और उसकी अन्तिम सीमा निष्प्रवाणिश्च - ५. ४.१६०, निर्धारित कर देते हैं, कि 'प्रत्ययः' का अधिकारक्षेत्र ३.१.१ से ५.४.१६० के बीच निश्चित हो जाता है। इन दो सीमाओं के बीच में वे उन सारे सूत्रों को रख देते हैं, जो सूत्र प्रत्यय लगा रहे हैं। ऐसा करने से लाभ यह होता है कि १६८१ बार प्रत्ययः, प्रत्ययः, न कहकर केवल एक बार 'प्रत्ययः' कहना पड़ता है, और वह 'प्रत्ययः' शब्द अपने अधिकार के सूत्रों में जा जाकर स्वयं अन्वित होता जाता है।

इसी प्रकार - अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय में ६३१ सूत्र हैं। जिनमें से ५४१ सूत्र क्रमशः ऐसे हैं, जो 'धातु से' प्रत्यय लगाते हैं।

अतः ५४१ बार 'धातु से' प्रत्यय होता है, 'धातु से' प्रत्यय होता है, ऐसा न कहकर वे एक सूत्र बना देते हैं - धातोः (३.१.९१)।

इसका अर्थ है - धातु से। बस यहाँ से वे सारे प्रत्यय कहना प्रारम्भ कर देते हैं, जो प्रत्यय धातुओं से लगाये जाते हैं। अब बार बार धातोः, धातोः कहने की आवश्यकता नहीं है। **यह 'धातोः' का अधिकार ३.१.९१ से ३.४.११७ तक चलता है** और यह 'धातोः' सूत्र इन सारे सूत्रों में जाकर लगता रहता है अर्थात् अनुवृत्त होता है। इस अधिकार से पहिले और इस अधिकार के बाद न तो 'धातोः सूत्र जाता है, न ही इस अधिकार के बाहर किसी भी प्रत्यय का विधान 'धातुओं से' अष्टाध्यायी होता है।

सूत्र में क्रिया न होने पर कृ, भू या अस्, धातुओं का अध्याहार अर्थात् कल्पना कर ली जाती है।

जैसे - ण्वुल्तृचौ ३.१.१३३ सूत्र में 'धातोः', 'प्रत्ययः', 'परश्च' 'आद्युदात्तश्च' ये चार अधिकारसूत्र जाकर मिल जाते हैं। इनके अर्थ को बतलाने वाला 'कर्तरि कृत्' सूत्र भी जाकर इससे मिलता है, तो इन पाँचों को 'ण्वुल्तृचौ' से मिलाकर तथा 'भवतः' इस क्रियापद की कल्पना करके सूत्र का अर्थ बनता है - 'धातुओं से परे कर्ता अर्थ में ण्वुल् और तृच् प्रत्यय होते हैं और वे आद्युदात्त होते हैं'।

ये अधिकार सूत्र वस्तुतः जहाँ पढ़े जाते हैं वहाँ उनका कोई अर्थ नहीं होता है

किन्तु अपने आगे के जिन सूत्रों में जाकर वे अन्वित होते हैं, उन सूत्रों को वाक्यार्थ प्रदान djrsgA **इसीलिये अधिकार का लक्षण है - स्वदेशे फलशून्यत्वे सति परदेशे वाक्यार्थबोधजनकत्वम् अधिकारत्वम् ।**

सर्वत्र पाणिनीय अष्टाध्यायी के सूत्रों के अर्थ, अधिकार और अनुवृत्ति को मिलाकर ही बनते हैं। इससे अतिलाघव होता है और सूत्रों में एक ही शब्द को बार बार नहीं कहना पड़ता। इस प्रकार बड़ी से बड़ी बात भी छोटे से छोटे में कह दी जाती है, तो वह सूत्र बन जाती है।

हम आगे सूत्रों के अर्थ बतलायेंगे तो अधिकार और अनुवृत्ति तथा उनकी सीमाएँ बतलाते चलेंगे। **अतः हमें कृत् प्रत्यय विधायक सूत्रों के अर्थ जानने के लिये, उन अधिकार सूत्रों का अर्थ भी जान लेना चाहिये, जिनका अधिकार, इन कृत् प्रत्यय विधायक सूत्रों में जाता है और जिन्हें मिलाकर ही कृत् प्रत्यय विधायक सूत्रों के अर्थ पूर्ण होते हैं।**

ये सूत्र इस प्रकार हैं -

प्रत्ययाधिकार

प्रत्ययः (३.१.१) - यह अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय का प्रथम सूत्र है। इसका अधिकार ३.१.१ से प्रारम्भ होकर ५.४.१६० (निष्प्रवाणिश्च) तक चलता है।

इस प्रकार अष्टाध्यायी के तृतीय, चतुर्थ तथा पञ्चम अध्यायों में 'प्रत्ययः' का अधिकार है। इसीलिये अष्टाध्यायी के ये तीन अध्याय प्रत्ययाध्याय कहलाते हैं। तीन अध्यायों के इन सारे सूत्रों में सारे प्रत्यय कह दिये गये हैं।

प्रत्यय का अर्थ है, जो धातुओं अथवा प्रातिपदिकों से लगें, और लगकर उनके अर्थों में कुछ न कुछ वृद्धि कर दें, उन्हें प्रत्यय कहते हैं। जैसे - कृ धातु का अर्थ है 'करना', किन्तु कृ में तृच् लगाने पर जो कृ + तृ = कर्ता, शब्द बनता है, उसका अर्थ होता है 'करने वाला'। इसी प्रकार - कृ + क्त्वा = का अर्थ होता है 'करके'। कृ + तव्य का अर्थ होता है 'करने के योग्य', आदि।

दशरथ का अर्थ है अयोध्या के राजा। पर जब दशरथ शब्द से इञ् प्रत्यय लगाकर 'दाशरथि' शब्द बनता है, तो इसका अर्थ हो जाता है 'दशरथ का अपत्य' (सन्तान) अर्थात् राम, लक्ष्मण, भरत आदि। कौसल्या का अर्थ है दशरथ की पत्नी। पर जब कौसल्या शब्द से ढक् प्रत्यय लगाकर 'कौसल्येय' शब्द बनता है, तो इसका अर्थ हो जाता है 'कौसल्या का अपत्य' (सन्तान) अर्थात् राम।

इस प्रत्ययाधिकार में कहे जाने वाले प्रत्यय दो प्रकार के हैं। धातुओं से लगने वाले प्रत्यय तथा प्रातिपदिकों (किसी भी अर्थवान् शब्द) से लगने वाले प्रत्यय।

धातुओं से लगने वाले प्रत्यय - धातुओं से लगने वाले प्रत्यय, अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय में हैं। ये चार प्रकार के हैं।

१. धातुप्रत्यय - सन्, क्यच् ,काम्यच्, क्यष्, क्यङ्, क्विप्, णिङ्, ईयङ्, णिच्, यक्, आय, यङ्, ये १२ प्रत्यय धातुप्रत्यय कहलाते हैं। ये प्रत्यय जिस भी धातु अथवा प्रातिपदिक से लगते हैं, उसे धातु बना देते हैं, अर्थात् उनकी 'सनाद्यन्ता धातवः' सूत्र से धातु संज्ञा कर देते हैं। ये प्रत्यय अष्टाध्यायी में ३.१.५ से ३.१.३२ तक के सूत्रों में हैं।

२. विकरण प्रत्यय - धातु और प्रत्यय के बीच में आकर बैठने वाले प्रत्यय को विकरण कहते हैं। विकरण का ही दूसरा नाम गणचिह्न भी है। ये प्रत्यय अष्टाध्यायी में ३.१.३३ से ३.१.९० तक के सूत्रों में हैं।

३. तिङ् प्रत्यय - लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट्, लङ्, लिङ्, लुङ् तथा लृङ्। इन दस लकारों के स्थान पर होने वाले जो प्रत्यय हैं, उन्हें ही तिङ् प्रत्यय कहते हैं। ये प्रत्यय अष्टाध्यायी में 'लस्य' सूत्र के अधिकार में अर्थात् ३.४.७७ से ३.४.११७ तक के सूत्रों के बीच हैं।

४. कृत् प्रत्यय -

इन्हें जानने के लिये हमें सावधानी से यह समझना चाहिये कि -

अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय में दो धात्वधिकार हैं -

धात्वधिकार

प्रथम धात्वधिकार - प्रथम धात्वधिकार 'धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ् (३.१.२२)' इस सूत्र के धातोः पद से प्रारम्भ होता है और 'कुषिरजोः प्राचाम् श्यन् परस्मैपदं च (३.१.९०)' सूत्र तक चलता है। इस प्रथम धात्वधिकार में धातुप्रत्यय तथा विकरण प्रत्यय कहे गये हैं। **अतः इस अधिकार में कहा गया कोई भी प्रत्यय, कृत् प्रत्यय नहीं है।** इनकी व्याख्या 'अष्टाध्यायी सहज बोध' के प्रथम तथा द्वितीय खण्डों में की जा चुकी है। अतः यहाँ द्वितीय धात्वधिकार के सूत्रों की व्याख्या ही देंगे।

द्वितीय धात्वधिकार - द्वितीय धात्वधिकार 'धातोः (३.१.९१)' इस सूत्र से लेकर 'छन्दस्युभयथा (३.४.११७)' सूत्र तक चलता है। इसमें दो प्रकार के प्रत्यय हैं। तिङ् प्रत्यय और कृत् प्रत्यय।

कृदतिङ् - (३.१.९३) - इस द्वितीय धात्वधिकार में कहे गये प्रत्ययों में जो प्रत्यय तिङ् नहीं हैं, उनका नाम ही कृत् प्रत्यय है। यथा - ण्वुल्, तृच्, क्तिन्, तव्य, अनीयर्, क्त्वा आदि। ये कृत् प्रत्यय १२४ हैं।

ध्यान रहे कि प्रथम धात्वधिकार के किसी भी प्रत्यय का नाम कृत् नहीं हैं।

परश्च (३.१.२) - परश्च का अर्थ यह है कि इन तीन अध्यायों में धातुओं तथा प्रातिपदिकों से जो प्रत्यय कहे जाते हैं, वे धातुओं तथा प्रातिपदिकों के बाद ही लगते हैं।

आद्युदात्तश्च (३.१.३) - इन तीनों अध्यायों में जो प्रत्यय कहे गये हैं वे आद्युदात्त होते हैं।

अनुदात्तौ सुप्पितौ (३.१.४) - यह सूत्र पूर्वसूत्र का अपवाद है। इसके अनुसार इन तीनों अध्यायों में कहे गये प्रत्ययों में से, जो सुप् तथा पित् प्रत्यय हैं वे अनुदात्त होते हैं। (अर्थात् जो प्रत्यय सुप् तथा पित् नहीं होते हैं, वे आद्युदात्त होते हैं।)

निपातन

जब आचार्य 'ण्वुल्तृचौ' सूत्र बनाकर कहते हैं कि संसार के जितने भी धातु हैं, उनसे कर्ता अर्थ में ण्वुल् और तृच् प्रत्यय होते हैं, तब वे वस्तुत: संसार के अनन्त धातुओं से ण्वुल् और तृच् प्रत्यय लगाकर इस एक सूत्र से अनन्त शब्द बना डालते हैं।

किन्तु कभी कभी ऐसा भी हो जाता है कि एक ही शब्द बनाने के लिये अनेक सूत्रों की आवश्यकता पड़ जाती है। जैसे - 'सु' धातु से 'करण अर्थ में' 'क्यप् प्रत्यय' लगाकर राजसूय शब्द बनाना है।

अब देखिये कि क्यप् प्रत्यय तो भावकर्म अर्थों में होता है। किन्तु 'राजसूय' शब्द में करण अर्थ में क्यप् प्रत्यय करना है। तो 'सु' धातु से करण अर्थ में क्यप् प्रत्यय के लिये एक सूत्र चाहिये। क्यप् लगने पर ह्रस्वान्त धातुओं को तुक् का आगम होता है। यहाँ वह भी नहीं करना है, अत: तुक् के आगम का निषेध करने वाला भी एक सूत्र चाहिये। सु धातु यहाँ दीर्घ हो गया है, अत: उसे दीर्घ करने वाला भी एक सूत्र चाहिये। इतने सारे सूत्र बनाकर भी शब्द केवल एक ही बनेगा - 'राजसूय'। अत: ऐसी स्थिति में आचार्य यही उचित समझते हैं कि ऐसे अपवादभूत शब्दों को सूत्रों से बनाने के बजाय इन्हें बना बनाया ही स्वीकार कर लिया जाये।

लाघव ही पाणिनीय व्याकरण का मूलाधार है। अत: आचार्य देखते हैं यदि एक सूत्र बनाकर कम से कम दो और अधिक से अधिक अनन्त शब्द सिद्ध हो रहे हैं तब

तो सूत्र बनाने में लाघव हैं, ऐसे स्थलों पर वे सूत्र बनाते हैं और जब दो चार दस सूत्रों के बनाने पर एक शब्द की सिद्धि होते हुए वे देखते हैं, तो वहाँ वे यह मानकर सूत्र नहीं बनाते कि दस सूत्रों के द्वारा एक शब्द को सिद्ध करने से अधिक अच्छा यही है कि "इस शब्द को ऐसा ही स्वीकार कर लिया जाये''।

शब्द को ऐसा ही स्वीकार कर लेने का नाम ही व्याकरणशास्त्र में 'निपातन' है। ऐसे शब्दों में हमें ध्यान से देखना चाहिये कि उनमें कितना कार्य उपलब्ध सूत्रों से हो रहा है और कितना कार्य बिना सूत्रों के स्वीकार कर लिया गया है। किसी शब्द में जितना कार्य बिना सूत्रों के स्वीकार कर लिया गया है, उतने ही हिस्से को व्याकरण में निपातन कहा जाता है, बाकी कार्य तत् तत् सूत्रों से ही होता है।

इस निपातन को यहीं बुद्धिस्थ कर लें और आगे जो भी शब्द निपातन से बनें, उनमें यह दृष्टि रखें कि उन निपातित शब्दों में कौन कौन सा कार्य बिना सूत्रों के निपातन से हुआ है। अत: उतने ही हिस्से में निपातन मानें, बाकी कार्य तत् तत् सूत्रों से ही करें।

सूत्रों में बाध्यबाधकभाव

आगे सूत्रों के अर्थ देंगे। उनमें प्रवेश करने के पहिले हमें यह समझ लेना चाहिये कि सूत्र किस प्रकार कार्य करते हैं। पाणिनीय अष्टाध्यायी वस्तुत: उत्सर्गापवाद विधि से बनी है।

इसमें आचार्य किसी भी कार्य को करने के लिये, पहिले उत्सर्ग सूत्र अर्थात् सामान्य सूत्र कहते हैं। जैसे 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से वे कहते हैं कि ऋकारान्त और हलन्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय होता है। यह सारे ऋकारान्त और सारे हलन्त धातुओं के लिये सामान्य विधि है। किन्तु 'अवद्यपण्यवर्या गर्ह्यपणितव्यानिरोधेषु' सूत्र से वे ऋकारान्त वृ धातु से अनिरोध अर्थ में यत् प्रत्यय का विधान कर देते हैं।

अब ऋकारान्त वृ धातु के लिये प्रश्न उठता है कि ऋकारान्त वृ धातु से हम 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से ण्यत् प्रत्यय करें या 'अवद्यपण्यवर्या गर्ह्यपणितव्यानिरोधेषु' सूत्र से यत् प्रत्यय करें ?

स्पष्ट है कि 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से होने वाला ण्यत् प्रत्यय सारे ऋकारान्त धातुओं के लिये है, अत: सामान्य है और 'अवद्यपण्यवर्या गर्ह्यपणितव्यानिरोधेषु' सूत्र से होने वाला यत् प्रत्यय केवल वृ धातु के लिये है, अत: विशेष है।

इस शास्त्र में जो विशेष सूत्र होता है, वह सामान्य सूत्र का बाधक होता है।

बाधक होने का अर्थ है कि विशेष सूत्र के द्वारा कहा हुआ कार्य होता ही है और उसके कर लेने के बाद जो जगह बच जाती है, उसमें ही सामान्य सूत्र लगता है। अतः वृ धातु से तो यत् प्रत्यय ही लगेगा और बचे हुए ऋकारान्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय लगेगा।

यहाँ वृ धातु से कहा हुआ यत् प्रत्यय, वृ धातु में ण्यत् प्रत्यय को लगने से रोक रहा है, अतः यत् प्रत्यय बाधक (बाधित करने वाला) है, और ण्यत् प्रत्यय रोका जा रहा है, अतः बाध्य (बाधित होने वाला) है।

इसी प्रकार 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र कहता है कि हलन्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय हो, और 'पोरदुपधात्' सूत्र कहता है कि पवर्गान्त अदुपध हलन्त धातुओं से यत् प्रत्यय हो। अतः पवर्गान्त अदुपध हलन्त धातुओं के लिये प्रश्न उठता है कि इनसे हम 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से ण्यत् प्रत्यय करें या 'पोरदुपधात्' सूत्र से यत् प्रत्यय करें ?

स्पष्ट है कि 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से होने वाला ण्यत् प्रत्यय सारे हलन्त धातुओं के लिये है, अतः सामान्य है और 'पोरदुपधात्' सूत्र से होने वाला यत् प्रत्यय केवल पवर्गान्त अदुपध हलन्त धातुओं के लिये है, अतः विशेष है।

अतः पवर्गान्त अदुपध हलन्त धातुओं से यत् प्रत्यय होगा और उनसे बचे हुए हलन्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय होगा। इसलिये 'पोरदुपधात्' सूत्र बाधक है, और 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र उससे बाध्य है।

हमने देखा कि उत्सर्ग सूत्र या सामान्य सूत्र को जहाँ तक कार्य करने का अधिकार प्राप्त है, उसी के एक छोटे से स्थान में अपवाद सूत्र या विशेष सूत्र काम करना चाह रहा है। यदि उत्सर्ग सूत्र, उसे अपने में से स्थान न दे, तो उसी के एक छोटे से स्थान में काम करना चाहने वाले इस विशेष सूत्र को कहीं काम करने को स्थान ही नहीं बचेगा, अर्थात् वह निरवकाश हो जायेगा, और आचार्य का सूत्र बनाना ही व्यर्थ हो जायेगा।

ऐसे निरवकाश सूत्रों को अपवादसूत्र कहा जाता है - **निरवकाशो विधिरपवादः।**

ये निरवकाश सूत्र व्यर्थ न होने पायें, इन्हें भी काम करने का अवसर मिले, इसके लिये पूरे पाणिनीय शास्त्र की व्यवस्था ऐसी है कि हम बाधक, अपवाद या विशेष सूत्रों के द्वारा चाहा हुआ स्थान उन्हें काम करने के लिये पहिले दे दें। उसके बाद उससे बचे हुए स्थान में बाध्य, उत्सर्ग या सामान्य सूत्र को काम करने दें।

इसलिये किसी भी उत्सर्ग सूत्र को लगाने के पहिले उसके अपवादों का विचार अवश्य कर लेना चाहिये। **'प्रकल्प्य चापवादविषयं तत उत्सर्गोऽभिनिविशते'।**

अनभिधान

व्याकरणशास्त्र बना ही इसलिये है कि इससे हम उन सारे शब्दों की सिद्धि कर लें, जो लोक में अभिहित होते हैं, या बोले जाते हैं। अतः हम सूत्रों को लगा लगाकर शब्द बनाते जाते हैं और उन सारे शब्दों को बना लेते हैं, जो शब्द लोक में बोले जाते हैं।

किन्तु कुछ शब्द ऐसे भी हैं, जो सूत्रों के द्वारा तो बन सकते हैं, तो भी हम उन्हें इसलिये नहीं बनाते कि वे शब्द लोक में बोले ही नहीं जाते हैं अर्थात् लोक में उनका अभिधान नहीं होता। लोक में न बोले जाने को ही 'अनभिधान' होना कहते हैं।

जैसे - **'हनस्त च ३.१.१०८'** सूत्र से सुबन्त उपपद में होने पर भाव अर्थ में हन् धातु से क्यप् प्रत्यय करके ब्रह्मणो हननं 'ब्रह्महत्या' आदि शब्द बनाने का विधान है। अर्थात् सुबन्त उपपद में न होने पर हन् धातु से औत्सर्गिक ण्यत् प्रत्यय हो जाना चाहिये। तो भी हम हन् धातु से ण्यत् प्रत्यय लगाकर भाव अर्थ में 'घात्यम्' शब्द इसलिये नहीं बना सकते कि हन् धातु से भाव अर्थ में ण्यत् प्रत्यय लगाकर बना हुआ 'घात्यम्' प्रयोग लोक में बोलने का प्रचलन नहीं है अर्थात् लोक में उसका 'अभिधान' नहीं है।

अतः क्यप् के अभाव में भी भाव अर्थ में हन् धातु से ण्यत् प्रत्यय न होकर घञ् प्रत्यय ही होगा और भाव अर्थ में 'घातः' शब्द ही बनेगा।

इसी प्रकार **'कर्मण्यण् ३.२.१'** सूत्र से सुबन्त उपपद में होने पर कर्ता अर्थ में धातुमात्र से अण् प्रत्यय का विधान है। यथा - कुम्भं करोति इति कुम्भकारः, आदि।

किन्तु सुबन्त उपपद में होने पर भी सारे धातुओं से अण् प्रत्यय लगाकर हम - आदित्यं पश्यति इति आदित्यदर्शः, हिमवन्तं शृणोति इति हिमवच्छ्रावः, ग्रामं गच्छति इति ग्रामगामः, आदि शब्द इसलिये नहीं बना सकते कि इन शब्दों को लोक में बोलने का प्रचलन नहीं है अर्थात् लोक में उसका 'अभिधान' नहीं है।

अतः सुबन्त उपपद में होने पर कर्ता अर्थ में धातुमात्र से अण् प्रत्यय का विधान होने के बाद भी हमें सारे धातुओं से अण् प्रत्यय लगाकर शब्द नहीं बनाना चाहिये, क्योंकि लोक में बोले जाने वाले शब्दों की सिद्धि के लिये ही व्याकरण है, अनावश्यक शब्द बनाने के लिये नहीं।

इस प्रकार लोक में अभिधान होना (बोला जाना) और लोक में अभिधान न होना (न बोला जाना), ये भी, किसी शब्द के बनने और न बनने के हेतु हैं।

प्रातिपदिकसंज्ञा -

कृत्तद्धितसमासाश्च (१.२.४६) - कृदन्त और तद्धितान्त तथा समास की प्रातिपदिक संज्ञा होती है। अतः कृत् प्रत्यय लगते ही कृत् प्रत्ययान्त शब्द की, इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा कीजिये।

सुबुत्पत्ति

जब कृत् प्रत्यय लगाकर पूरा शब्द बन जाये, तब आप देखें कि कृदन्त होने के कारण अब यह 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक है। प्रातिपदिक होने के कारण उसमें सारी सुप् विभक्तियाँ आ सकती हैं। अतः प्रथमा एकवचन में 'सु' विभक्ति लगाकर उसका प्रथमा एकवचन का रूप ही आप दें। यथा - कुम्भ + कृ + अण् = कुम्भकार, इस प्रातिपदिक को, कुम्भकार + सु = कुम्भकारः, ऐसा पद बनाकर ही आप दें।

(शब्दों में सुप् विभक्तियाँ लगाना सुबन्त-प्रक्रिया का विषय है, अतः यह कार्यसुबन्त में ही सिद्ध करना चाहिये।)

इन सब को जानकर ही आगे शास्त्र में प्रवृत्त होना चाहिये।

हमें जानना है कि -

१. किस धातु से,
२. किस अर्थ में
३. किस सूत्र से
४. कौन सा प्रत्यय
५. किस प्रकार लग रहा है ?

इनमें से पाँचवीं बात अर्थात् 'किस धातु से कौन सा प्रत्यय किस प्रकार लगता है' अर्थात् शब्दों की सिद्धि करने की प्रक्रिया, पूर्वार्ध में बतलाई जा चुकी है। उसे पढ़कर ही इसमें प्रवेश करें। ताकि सूत्रार्थ के साथ ही उदाहरण में दिये हुए शब्दों की प्रक्रिया का भी झटिति बोध होता जाये। इस उत्तरार्ध में अब शेष चारों बातें, पाणिनीय अष्टाध्यायी के सूत्रक्रम से ही बतलाई जा रही हैं।

धातोः - (३.१.९१) - 'धातोः' यह पञ्चमी है, जिसका अर्थ है धातु से। अन्य शब्दों के अभाव में यह 'धातोः' शब्द यहाँ कोई भी अर्थ दे सकने में असमर्थ है। अतः यह अधिकार सूत्र है।

ऐसे सूत्र जो अपने स्थान में फलशून्य होते हुए अगले सूत्रों के साथ मिलकर अपना अर्थ स्पष्ट कर देते है और उनका भी अर्थ स्पष्ट कर देते हैं, जिनके साथ वे

मिले हैं, ऐसे सूत्र अधिकार सूत्र कहलाते हैं। (स्वदेशे फलशून्यत्वे सति परदेशे वाक्यार्थबोधजनकत्वं अधिकारत्वम्)।

प्रश्न उठता है कि यह सूत्र, आगे के कितने सूत्रों के साथ जाकर मिल सकता है ? तो इसका उत्तर है कि जहाँ तक इसका अधिकार है, उतने ही सूत्रों के साथ जाकर यह मिल सकता है। अतः यहाँ से यह 'धातोः' शब्द उन सारे सूत्रों में जाकर बैठता जायेगा और उन सारे सूत्रों के अर्थों को बनाता जायेगा, 'जहाँ तक इसका अधिकार है'। जहाँ जाकर इसका अधिकार समाप्त हो जायेगा उसके आगे के सूत्रों में यह नहीं मिलेगा। अतः हमें अधिकर सूत्रों की दोनों सीमाएँ ज्ञात होना चाहिये।

इस सूत्र का अधिकार ३.१.९१ से लेकर छन्दस्युभयथा ३.४.११७ सूत्र तक है। अतः ३.१.९१ से लेकर छन्दस्युभयथा ३.४.११७ सूत्रों में 'धातोः अर्थात् धातु से' यह शब्द जाकर मिल जायेगा, तो इन सूत्रों के द्वारा जो भी प्रत्यय लगाने को कहे जा रहे हैं, वे सारे प्रत्यय धातु से ही लगेंगे, प्रातिपदिक इत्यादि से नहीं लगेंगे।

तत्रोपपदं सप्तमीस्थम् - (३.१.९२) -

'धातोः' सूत्र से कहे जाने वाले इस द्वितीय धात्वधिकार में जो सूत्र हैं उन सूत्रों में जो पद सप्तमी विभक्ति में निर्दिष्ट हैं, उनकी उपपद संज्ञा होती है।

जैसे - 'कर्मण्यण्' इस सूत्र में 'कर्मणि' यह पद सप्तमी विभक्ति में है, अतः इसका नाम उपपद है। इसलिये इस सूत्र का अर्थ होगा - कर्म उपपद में होने पर धातुओं से अण् प्रत्यय होता है। यथा - कुम्भकारः, नगरकारः, इनमें कुम्भ और नगर, ये कर्म शब्द उपपद में रहते हुए कृ धातु से अण् प्रत्यय हुआ है।

इसी प्रकार द्विषत्परयोस्तापेः सूत्र में 'द्विषत्परयोः' यह पद सप्तमी विभक्ति में है अतः इसका नाम उपपद है, इसलिये इसका अर्थ होगा - द्विषत् और पर उपपद में होने पर तापि धातु से खच् प्रत्यय होता है। यथा - द्विषन्तपः, परन्तपः।

इस पूरे धात्वधिकार में सप्तमी विभक्ति निर्दिष्ट पदों वाले सूत्रों के अर्थ इसी प्रकार करना चाहिये।

ध्यान दें कि सूत्रों में कभी कभी अर्थ बतलाने के लिये भी सप्तमी विभक्ति आती है। जैसे - आक्रोशेऽवन्योर्ग्रहः, कर्मव्यतिहारे णच्स्त्रियाम्, वृणोतेराच्छादने, ये भी सप्तमी हैं, किन्तु ये सप्तमी विभक्तियाँ अर्थवाचक हैं। इनका अर्थ है आक्रोश, कर्मव्यतिहार तथा आच्छादन अर्थ गम्यमान होने पर। इसी प्रकार 'सप्तम्यां जनेर्डः' सूत्र है। इसका अर्थ भी उपपद नहीं है। अतः इन दोनों प्रकार की सप्तमी को तथा उपपद संज्ञा को, तत् तत्

स्थानों पर, व्याख्यान से जानना चाहिये।

उपपद होने पर किस प्रकार कार्य करें -

कर्मण्यण् सूत्र से हम कर्म उपपद में रहते हुए धातुओं से अण् प्रत्यय लगाते हैं। जैसे - कुम्भं करोति इति कुम्भकारः, यह शब्द बनाने के लिये हम 'कुम्भं' इस उपपद के रहते हुए कृ धातु से अण् प्रत्यय लगाते हैं। कुम्भम् + कृ + अण्। इस स्थिति में आप अलौकिक विग्रह करके प्रकृति प्रत्यय को अलग अलग लिख लीजिये।

कर्तृकर्मणोः कृति (२.४.६५) - कृत् प्रत्यय के योग में अनुक्त कर्ता और अनुक्त कर्म में षष्ठी विभक्ति होती है।

अतः ध्यान रहे कि हमें 'कुम्भम्' में जो द्वितीया दिख रही है, उसके स्थान पर अण् के लगते ही 'कर्तृकर्मणोः कृति' सूत्र से षष्ठी आ जायेगी। तो जो 'कुम्भम् + कृ + अण्' दिख रहा है, वह अलौकिक विग्रह में कुम्भ + ङस् + कृ + अण्, हो जायेगा।

इस प्रकार विग्रह करने के बाद ही आप **'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः'** सूत्र से प्रातिपदिक के अवयव सुप् का लुक् कीजिये।

न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम् - (२.४.६९) लकारों के स्थान पर होने वाले शतृ, शानच्, क्वसु, कानच् आदि प्रत्यय, उ, उक प्रत्यय, क्त्वा, तुमुन् आदि अव्यय कृदन्त, निष्ठा प्रत्यय, खलर्थ प्रत्यय और तृन् प्रत्याहार में आने वाले प्रत्यय, इतने कृत् प्रत्ययों के योग में कर्म में षष्ठी न होकर द्वितीया ही होती है।

अतः इन प्रत्ययों के लगने पर आप विग्रह में द्वितीया ही लिखें। इन प्रत्ययों के अलावा कोई प्रत्यय हो, तो कर्म में षष्ठी लिखें।

इसके अतिरिक्त जहाँ अन्य कारकों का निर्देश किया हो, वहाँ तत्, तत् विभक्तियाँ लिखें। यथा - अग्निष्टोमेन इष्टवान् इति अग्निष्टोमयाजी में अग्निष्टोम + टा + यज् + णिनि। गर्ते शेते इति गर्तशयः में - गर्त + ङि + शी + अच्।

कृदतिङ् - (३.१.९३) - इस द्वितीय धात्वधिकार में अर्थात् ३.१.९१ से लेकर छन्दस्युभयथा ३.४.११७ सूत्र तक के सूत्रों में जो प्रत्यय कहे गये हैं उन प्रत्ययों में १८ तिङ् प्रत्ययों को छोड़कर शेष प्रत्ययों का नाम कृत् प्रत्यय होता है।

कृत् संज्ञा होने का फल यह होता है, कि धातुओं से कृत् प्रत्यय लगाकर बने हुए कृदन्त शब्दों की 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा हो जाती है, और प्रातिपदिक संज्ञा हो जाने से उनसे प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि सभी सुप् विभक्तियाँ लगने लगती हैं। अतः आगे कृत् प्रत्यय लगाकर जो भी शब्द उदाहरणों में दिये जायेंगे, वे 'सु'

विभक्ति लगाकर प्रथमा एकवचन में ही दिये जायेंगे।

वाऽसरूपोऽस्त्रियाम् (३.१.९४) -

जो विधिसूत्र सामान्य होते हैं, अर्थात् सभी के लिये होते हैं, उन्हें उत्सर्गसूत्र समझना चाहिये। जैसे - 'तव्यत्तव्यानीयरः' यह सूत्र धातुमात्र से तव्यत्, तव्य तथा अनीयर् प्रत्ययों का विधान करता है किन्तु 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र सारे धातुओं में से, केवल ऋकारान्त और हलन्त धातुओं से ही ण्यत् प्रत्यय का विधान करता है, अतः तव्यत्, तव्य तथा अनीयर् प्रत्यय उत्सर्ग प्रत्यय हैं और ण्यत् प्रत्यय उनका अपवाद प्रत्यय है।

इसी प्रकार 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र सारे हलन्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय का विधान करता है, और 'पोरदुपधात्' सूत्र उन्हीं हलन्त धातुओं में से केवल अदुपध पवर्गान्त धातुओं से यत् प्रत्यय का विधान करता है। इसलिये ण्यत् प्रत्यय उत्सर्ग प्रत्यय है और यत् प्रत्यय, ण्यत् प्रत्यय का अपवाद प्रत्यय है।

इस प्रकार उत्सर्ग का कार्यक्षेत्र बड़ा या व्यापक होता है और अपवाद का कार्य उसी बड़े क्षेत्र का एक छोटा सा हिस्सा होता है। अतः एक ही स्थान में दोनों के एक साथ उपस्थित होने पर व्यवस्था यह होती है कि - अपवादशास्त्र के स्थल पर तो अपवादशास्त्र ही कार्य करता है और उसके कर चुकने के बाद जितना स्थान बच जाता है, उसमें उत्सर्ग शास्त्र काम करता है। इस प्रकार उत्सर्गशास्त्र बाध्य होता है और अपवादशास्त्र बाधक होता है।

पूरी अष्टाध्यायी की यह व्यवस्था है कि जहाँ अपवाद सूत्र प्राप्त है, वहाँ उत्सर्ग सूत्र कार्य नहीं कर सकता। अतः अपवाद सूत्र उत्सर्ग सूत्रों के नित्य बाधक होते हैं।

किन्तु कृत् प्रत्ययों के लिये व्यवस्था यह है, कि अनुबन्धों को हटाने के बाद यदि उत्सर्ग और अपवाद प्रत्ययों का स्वरूप अलग अलग प्रकार का है, तब तो अपवाद प्रत्यय, उत्सर्ग प्रत्यय को विकल्य से बाधता है। अर्थात् हम चाहें तो उत्सर्ग प्रत्यय भी लगा सकते हैं, और चाहें तो अपवाद प्रत्यय भी लगा सकते है।

जैसे - तव्यत्, अनीयर् प्रत्यय और उनके अपवाद ण्यत् प्रत्यय में, अनुबन्धों को हटाने के बाद 'तव्य', 'अनीय' और 'य' बचते हैं। इन तीनों की आकृति सर्वथा भिन्न भिन्न है। अतः हम चाहें तो इन तीनों में से कोई भी प्रत्यय लगा सकते हैं।

अर्थात् चाहें तो उत्सर्ग प्रत्यय लगा सकते हैं, और चाहें तो अपवाद प्रत्यय भी लगा सकते है। यथा - पठितव्यम्, पठनीयम् और पाठ्यम्।

किन्तु यदि अनुबन्धों को हटाने के बाद उत्सर्ग और अपवाद प्रत्ययों का स्वरूप

बिल्कुल एक सा है, तब तो अपवाद प्रत्यय, उत्सर्ग प्रत्यय को नित्य ही बाधता है। अर्थात् तब हम केवल अपवाद प्रत्यय ही लगा सकते हैं, उत्सर्गप्रत्यय नहीं लगा सकते।

जैसे - ण्यत्, क्यप् और यत् प्रत्ययों के अनुबन्धों को हटाने के बाद तीनों में 'य' ही शेष बचता है। अतः किसी भी धातु से ये तीनों प्रत्यय कभी नहीं हो सकते।

अतः जब ऋहलोर्ण्यत् से होने वाले ण्यत् प्रत्यय का अपवाद बनकर पोरदुपधात् से होने वाला यत् प्रत्यय आता है, तब यत् प्रत्यय, ण्यत् प्रत्यय का नित्य बाधक बनता है। अर्थात् अब हम अदुपध पवर्गान्त धातुओं से केवल अपवाद प्रत्यय 'यत्' ही लगा सकते हैं, उत्सर्गप्रत्यय 'ण्यत्' नहीं लगा सकते।

इसी प्रकार, कर्मण्यण् और आतोऽनुपसर्गे कः सूत्रों से कहे जाने वाले अण् और क प्रत्ययों में अनुबन्धों को हटाने के बाद 'अ' ही शेष बचता है। अतः अपवाद प्रत्यय 'क', उत्सर्ग प्रत्यय 'अण्' को नित्य ही बाधता है। अर्थात् अब हम अनुपसर्ग आकारान्त धातुओं से केवल अपवाद प्रत्यय 'क' ही लगा सकते हैं, उत्सर्गप्रत्यय 'अण्' नहीं लगा सकते।

नानुबन्धकृतमसारूप्यम् (परिभाषा) - अनुबन्धों को लेकर प्रत्ययों के सरूप असरूप का निर्धारण नहीं किया जाता। अतः उत्सर्ग और अपवाद प्रत्ययों के अनुबन्धों को हटाने के बाद ही उनकी सरूपता और असरूपता की पहिचान करना चाहिये।

अस्त्रियाम् - सूत्र में दिये हुये 'अस्त्रियाम्' शब्द का अर्थ है कि यदि कृत् प्रत्यय स्त्रीलिङ्ग में हुए हैं, तब तो अपवाद प्रत्यय असरूप होने के बाद भी उत्सर्ग प्रत्यय का नित्य बाधक होगा। जैसे 'स्त्रियां क्तिन्' सूत्र से धातुमात्र से स्त्रीलिङ्ग में क्तिन् प्रत्यय होता है। धातुमात्र से होने के कारण यह उत्सर्ग प्रत्यय है। उसके बाद 'अ प्रत्ययात्' सूत्र आता है। यह प्रत्ययान्त धातुओं से 'अ' प्रत्यय का विधान करता है। देखिये कि अनुबन्धों को हटाने के बाद इनमें 'ति' तथा 'अ' शेष बचते हैं। इनकी आकृति सर्वथा भिन्न भिन्न है, तब भी स्त्रीप्रत्यय होने के कारण यह 'अ' प्रत्यय 'क्तिन्' प्रत्यय का नित्य ही बाधक होता है। इसलिये प्रत्ययान्त धातुओं से 'अ' ही होगा और शेष धातुओं से 'क्तिन्' ही होगा।

इसी प्रकार जागृ धातु से 'जागर्तेरकारो वा', इस वार्तिक से स्त्रीलिङ्ग में श (अ) प्रत्यय तथा 'अ' प्रत्यय विकल्प से विहित हैं। इनकी आकृति क्तिन् से सर्वथा भिन्न है, तब भी स्त्रीप्रत्यय होने के कारण ये 'श' और 'अ' प्रत्यय 'क्तिन्' प्रत्यय के नित्य ही बाधक होंगे, तो श लगाकर जागर्या और अ लगाकर जागरा प्रयोग बनेंगे, क्तिन् बिल्कुल नहीं लगेगा।

कृत्याः प्राङ् ण्वुलः - (३.१.९५) - देखिये कि ३.१.९१ से लेकर 'छन्दस्युभयथा

३.४.११७' सूत्र तक के सूत्रों में से १८ तिङ् प्रत्ययों का छोड़कर शेष प्रत्ययों का नाम केवल कृत् है किन्तु तव्यत्तव्यानीयर: ३.१.९६ से लेकर चित्याग्निचित्ये ३.१.१३२ तक के सूत्रों में जो तव्यत्, तव्य, अनीयर्, यत्, क्यप् और ण्यत् प्रत्यय कहे गये हैं, **उनका नाम कृत् प्रत्यय भी है और कृत्य प्रत्यय भी है।**

कृत् और कृत्य प्रत्ययों के अर्थ –

१. तीसरे अध्याय के अन्त में ३.४.६७ से लेकर ३.४.७६ तक के सूत्र कृत् और कृत्य प्रत्ययों के अर्थ का इस प्रकार विचार करते हैं –

कर्तरि कृत् (३.४.६७) – सारे कृत् प्रत्यय कर्ता (करने वाला) अर्थ में होते हैं। अत: कृत्प्रत्ययान्त शब्द का अर्थ होगा 'करने वाला'।

साथ ही इनकी कृत् संज्ञा भी होने का फल यह होता है, कि धातुओं से कृत् प्रत्यय लगाकर बने हुए कृदन्त शब्दों की **'कृत्तद्धितसमासाश्च'** सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होती है, और प्रातिपदिक संज्ञा हो जाने से उनसे प्रथमा, द्वितीया, तृतीया आदि सभी सुप् विभक्तियाँ लगने लगती हैं। यदि इनकी केवल कृत्य संज्ञा होती, तो इनकी प्रातिपदिक संज्ञा न होती और इनसे सुबादि विभक्तियाँ भी न हो पातीं।

तयोरेव कृत्यक्तखलर्था: (३.४.७०) – जो कृत्य नामक तव्यत्, तव्य, अनीयर्, यत्, क्यप् और ण्यत् प्रत्यय हैं तथा क्त और खलर्थ प्रत्यय हैं, वे भाव तथा कर्म में होते हैं। अत: कृत्यप्रत्ययान्त शब्द का अर्थ होगा 'किया जाने वाला'।

कृत्यप्रत्ययों का विधान करने वाले सूत्रों में 'भाव और कर्म अर्थ में' यही अर्थ करना चाहिये। जब प्रत्यय भाव और कर्म अर्थ में कहे जायें तो समझना चाहिये कि सकर्मक धातुओं से प्रत्यय कर्म अर्थ में होते हैं, और अकर्मक धातुओं से भाव अर्थ में होते हैं।

बाहुलक

बहुलस्य भाव: बाहुलकम् में मनोज्ञादित्वात् वुञ् प्रत्यय हुआ है। बाहुलक का अर्थ है – बहून् अर्थान् लाति इति बाहुलकम्। बहुल अर्थ इस प्रकार हैं –

क्वचिद् प्रवृत्ति: क्वचिदप्रवृत्ति:, क्वचिद् विभाषा क्वचिदन्यदेव।
विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य चतुर्विधं बाहुलकं वदन्ति।।

बाहुलक का उपयोग यही है कि सारे वैदिक और लौकिक शब्दों का व्युत्पादन होकर उनके प्रकृति और प्रत्यय अलग अलग दिखने लगे। अनेक आचार्यों ने वैदिक रूढ़ शब्दों का व्युत्पादन किया है। जैसे कि यास्क ने निरुक्त में सारे शब्दों को धातुज अर्थात्

धातुजन्य लिखा है। शाकटायनाचार्य ने भी इसी का अनुगमन करके सारे शब्दों को व्युत्पन्न करने का यह विधान पाँच पादों में उणादि प्रत्ययों द्वारा बतलाया है, किन्तु उणादि पञ्चपादी से भी सारे शब्द व्युत्पन्न नहीं हो जाते हैं। अत: उणादि के द्वारा होने वाली व्युत्पत्ति भी सशेष है नि:शेष नहीं। इसीलिये बहुलम् कहकर उन्होंने यह विधि बतलायी कि 'यन्न पदार्थविशेषसमुत्थं प्रत्ययत: प्रकृतेश्च तदूह्यम्'। जहाँ शब्द में परभाग अर्थात् प्रत्यय भाग प्रसिद्ध प्रत्ययों के रूप में दिखलायी दे वहाँ केवल प्रकृति की कल्पना करना चाहिये। जैसे 'हृषेरुलच्' सूत्र से हर्षुल: शब्द तो सिद्ध हो जाता है किन्तु शङ्कुल: शब्द नहीं बन पाता है। अत: हमें चाहिये कि उक्त उलच् प्रत्यय को तो जो का त्यों ले लें तथा 'शङ्कि' प्रकृति की कल्पना कर लें, इससे शङ्कुल: बन जायेगा। जहाँ पूर्वभाग प्रकृति के रूप में स्पष्टत: दिखे और प्रत्यय पहिचान में नहीं आये, वहाँ प्रत्यय भाग की कल्पना कर लें। यथा ऋफिड:, ऋफिड्ड: ये वैदिक शब्द हैं, ऋ धातु तो प्रसिद्ध है इससे फिड् और फिड्ड प्रत्यय कल्पित कर लेना चाहिये। इसी प्रकार गुण, वृद्धि, गुणवृद्धि निषेध, सम्प्रसारण, नलोप आदि कार्यों को देखकर तत् तत् अनुबन्धों की कल्पना कर लें। यथा - ऋफिड: आदि शब्दों में गुण नहीं हुआ है अत: यह ऊह करें कि प्रत्यय कित् है। इस प्रकार सारा उणादिशास्त्र ऊहात्मक है परन्तु ध्यान रखें कि यह सारा ऊह अनादिप्रयुक्त संज्ञाओं को सिद्ध करने के लिये ही है, सार्वत्रिक नहीं। अर्थात् जो संज्ञायें किसी के द्वारा सिद्ध नहीं की जा रही हैं, उन्हें सिद्ध करने के लिये है, नये नये शब्द रचने के लिये नहीं।

संज्ञासु धातुरूपाणि प्रत्ययाश्च तत: परे।
कार्याद् विद्यादनूबन्धमेतच्छास्त्रमुणादिषु।।

बाहुलक को आगे 'उणादयो बहुलम् ३.३.१' सूत्र में देखें।

कृत्यल्युटो बहुलम् (३.३.११३) - कृत्य प्रत्यय और ल्युट् प्रत्यय जिन प्रकृतियों से जिन अर्थों में विहित हैं, उनसे भिन्न अर्थों में भी बहुल करके हो जाते हैं। यथा - स्नान्ति अनेन स्नानीयं चूर्णम्। यहाँ ल्युट् प्रत्यय करण अर्थ में हुआ है। दीयते अस्मै दानीयो विप्र:। यहाँ ल्युट् प्रत्यय सम्प्रदान अर्थ में हुआ है। कृत्य प्रत्ययों के अलावा, शेष प्रत्यय जिस जिस अर्थ में होंगे, वे अर्थ उनके साथ वहीं बतलाये जायेंगे।

अब प्रत्यय लगाने वाले सूत्र कहते हैं। इनमें अष्टाध्यायी क्रम से सूत्र, सूत्रार्थ और उदाहरण हैं, प्रक्रिया नहीं। प्रत्ययों को धातुओं में लगाने की प्रक्रिया को प्रक्रिया खण्ड में देखें -

अष्टाध्यायी सहजबोध, तृतीयखण्ड

कृदन्तप्रकरण - उत्तरार्ध

अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय के सूत्रों की यथाक्रम व्याख्या

तृतीयाध्याये प्रथमः पादः

विशेष -

सूत्र ३.१.९६ से लेकर ३.१.१३२ तक के सूत्रों के द्वारा तव्यत्, तव्य, अनीयर्, यत्, ण्यत्, क्यप् प्रत्यय कहे जा रहे हैं। इन ६ प्रत्ययों की कृत्य संज्ञा भी है और कृत् संज्ञा भी है।

तव्यत्, तव्य, अनीयर् प्रत्यय

तव्यत्तव्यानीयरः - (३.१.९६) - धातुओं से भाव और कर्म अर्थ में तव्यत्, तव्य, तथा अनीयर्, प्रत्यय होते हैं। जैसे -

कर्म अर्थ में - कर्तुं योग्यं कर्तव्यम् (कृ + तव्यत् = कर्तव्यम् = करने योग्य)। कर्तुं योग्यं कर्तव्यम् (कृ + तव्य = कर्तव्यम् = करने योग्य)। कर्तुं योग्यं करणीयम् - (कृ + अनीयर् = करणीयम् = करने योग्य)।

इसी प्रकार - चेतुं योग्यः चेतव्यः (धर्मस्त्वया)। चेतुं योग्यः चयनीयः (धर्मस्त्वया)

जब प्रत्यय कर्म अर्थ में होता है, तब लिङ्ग वचन कर्मानुसारी होते हैं।

भाव अर्थ में - एधितुं योग्यं एधितव्यम् त्वया, एधनीयं त्वया।

जब प्रत्यय भाव अर्थ में होते हैं, तब केवल कर्म के अभाव में नपुंसकलिङ्ग, एकवचन ही होता है।

प्रत्यय जब तित् होता है तब 'तित् स्वरितम् ६.१.१८५' सूत्र से वह स्वरित होता है। प्रत्यय जब रित् होता है, तब 'उपोत्तमं रिति ६.१.२१७' सूत्र से रित् प्रत्यय से बने हुए शब्द का उपोत्तम स्वर उदात्त होता है। प्रत्यय में किसी अन्य स्वर का विधान न होने पर 'आद्युदात्तश्च ३.१.३' सूत्र से उसका आदि स्वर उदात्त होता है।

वसेस्तव्यत् कर्तरि णिच्च (वार्तिक) - वस निवासे धातु से कर्ता अर्थ में तव्य प्रत्यय होता है और वह णिद्वद् होता है।

वसति इति वास्तव्यः इस कर्ता अर्थ में - वस् + तव्य = वास्तव्यः। ध्यान रहे कि प्रत्यय के णिद्वत् होने कारण यहाँ 'अत उपधायाः' सूत्र से उपधा को वृद्धि हुई है।

विशेष - अदादिगण के वस आच्छादने धातु से यह प्रत्यय नहीं होगा।

केलिमर् उपसंख्यानम् (वार्तिक) - धातुओं से भाव, कर्म अर्थ में केलिमर् प्रत्यय

भी होता है। पचेलिमा: माषा:, पक्तव्या इत्यर्थ:। भिदेलिमानि काष्ठानि भेत्तव्यानि। भिदेलिमा: सरला: भेत्तव्या:।

यत् प्रत्यय

(औत्सर्गिकी व्यवस्था यह है कि ॠकारान्त से भिन्न अजन्त धातुओं से यत् प्रत्यय होता है, ऋदुपध हलन्त धातुओं से क्यप् प्रत्यय होता है तथा ॠकारान्त धातुओं से और ऋदुपध से बचे हुए हलन्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय होता है। किन्तु कभी कभी इससे भिन्न भी हो जाता है। अत: इनके सूत्र पृथक् पृथक् करके बतलाये जा रहे हैं।)

अचो यत् - (३.१.९७) - अजन्त धातुओं से भाव तथा कर्म अर्थ में यत् प्रत्यय होता है। जैसे - गातुं योग्यं गेयम्, इस अर्थ में गै - गा + यत् = गेयम् (गाने योग्य)। इसी प्रकार - पातुं योग्यं पेयम् - पीने योग्य, (पा + यत्) / चेतुं योग्यं चेयम् (चुनने योग्य), (चि + यत्)। जेतुम् योग्यं जेयम् (जीतने योग्य)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'अच्' की अनुवृत्ति ३.१.१०५ तक जायेगी।

बाध्यबाधकभाव - यत्, क्यप् और ण्यत्, ये तीनों ही प्रत्यय भाव, कर्म अर्थ में हो रहे हैं, और इनका स्वरूप भी समान ही है। क्योंकि अनुबन्धों के हटने के बाद तीनों में 'य' ही शेष बचता है। अत: सरूपप्रत्यय होने के कारण इनमें बाध्यबाधकभाव है। इसलिये भाव, कर्म अर्थ में जिस धातु से यत् होगा, उससे क्यप् और ण्यत् नहीं होंगे। जिस धातु से क्यप् होगा, उससे यत् और ण्यत् नहीं होंगे। जिस धातु से ण्यत् होगा, उससे क्यप् और यत् नहीं होंगे, यह समझना चाहिये। किन्तु तव्यत्, तव्य, अनीयर्, इन प्रत्ययों का स्वरूप इनसे भिन्न है, अत: इनके न होने पर वे तो हो ही सकते हैं।

अजन्तभूतपूर्वादपि - (वा.) - जो धातु मूल धातुपाठ में अजन्त हों तथा वर्तमान में अन्य प्रत्ययों के साथ मिल जाने से उनका अजन्तत्व नष्ट हो गया हो, ऐसे भूतपूर्व अजन्त धातुओं से भी यत् प्रत्यय होता है। जैसे - दा, धा, आदि धातु आकारान्त हैं, जो कि इच्छार्थक सन् प्रत्यय लग जाने से दित्स, धित्स बन गये हैं, तथा अतो लोप: सूत्र से अ का लोप होकर दित्स्, धित्स्, ऐसे हलन्त हो गये हैं, इनसे भी यत् प्रत्यय ही होगा, क्योंकि ये धातु वर्तमान में हलन्त दिखने पर भी भूतपूर्व अजन्त हैं। दित्स् + यत् = दित्स्यम्। इसी प्रकार - धित्स् + यत् = धित्स्यम्।

बाध्यबाधकभाव - अब आगे ॠकारान्त तथा हलन्त धातुओं से यत् प्रत्यय कह रहे है। ॠकारान्त तथा हलन्त धातुओं से होने वाला यत् प्रत्यय, ण्यत् प्रत्यय का अपवाद है, यह जानना चाहिये।

तकिशसिचतियतिजनीनामुपसंख्यानम् - (वा.) - तक हसने, शसु हिंसायाम्, चते याचने, यती प्रयत्ने, जनी प्रादुर्भावे, इन हलन्त धातुओं से भी भाव तथा कर्म अर्थ में यत् प्रत्यय होता है। तकितुं योग्यं तक्यम् (तक् + यत्)। इसी प्रकार शस् + यत् - शस्यम् / चत् + यत् - चत्यम् / यत् + यत् - यत्यम् / जन् + यत् - जन्यम्।

हनो वा वध च - (वा.) - हन् धातु से विकल्प से यत् और ण्यत् प्रत्यय होते हैं। जब यत् प्रत्यय होता है तब हन् धातु को वध आदेश होता है। हन्तुं योग्यः वध्यः इस अर्थ में हन् + यत् - वध् + यत् = वध्यः / हन् + ण्यत् = घात्यम्।

पोरदुपधात् - (३.१.९८) - जिनकी उपधा में ह्रस्व अकार है, ऐसे पवर्गान्त धातुओं से भाव तथा कर्म अर्थ में यत् प्रत्यय होता है। यद्यपि यहाँ हलन्त होने के कारण ण्यत् प्राप्त था उसे बाधकर यत् का विधान है।

उदाहरण - शप् + यत् - शप्यम् (शाप के योग्य) / जप् + यत् - जप्यम् (जपने योग्य) / लभ् + यत् - लभ्यम् (प्राप्त करने योग्य)। रभ् + यत् - रभ्यम् (आरम्भ करने योग्य) / गम् + यत् - गम्यम् (जाने योग्य)।

शकिसहोश्च - (३.१.९९) - शक्लृ शक्तौ और षह मर्षणे धातुओं से भाव तथा कर्म अर्थ में यत् प्रत्यय होता है। जैसे - शक्तुं योग्यं शक्यम् - शक् + यत् - शक्यम् (हो सकने योग्य) / सोढुं योग्यं सह्यम् - सह् + यत् - सह्यम् (सहने योग्य)।

गदमदचरयमश्चानुपसर्गे - (३.१.१००) - अनुपसर्ग गद व्यक्तायां वाचि, मदी हर्षे, चर गतिभक्षणयोः, यम उपरमे, धातुओं से भी भाव तथा कर्म अर्थ में यत् प्रत्यय होता है। जैसे - गदितुं योग्यं गद्यम् - गद् + यत् - गद्यम् (बोलने योग्य) / मद् + यत् - मद्यम् (हर्ष करने योग्य) / चर् + यत् - चर्यम् (खाने योग्य) / यम् + यत् - यम्यम् (नियमन करने योग्य)।

ध्यान रहे कि इन धातुओं में उपसर्ग होने पर ण्यत् प्रत्यय ही होगा - प्र + गद् + ण्यत् - प्रगाद्यम्। प्र + मद् + ण्यत् - प्रमाद्यम्। प्र + चर् + ण्यत् - प्रचार्यम्।

चरेराङि चागुरौ - (वा.) - आङ् उपसर्गपूर्वक 'चर गतिभक्षणयोः' धातु से यत् प्रत्यय होता है, यदि शब्द का अर्थ गुरु न हो तो। आ + चर् + यत् - आचर्यः। आचरितुं योग्यः आचर्यः देशः (आचरण करने के योग्य देश) गुरु अर्थ होने पर ण्यत् ही होगा - आ + चर् + ण्यत् - आचार्यः (उपनयन करने वाला गुरु)।

नियम सूत्र - पवर्गान्त होने के कारण यम् धातु से यत् प्रत्यय 'पोरदुपधात्' सूत्र से ही सिद्ध था, फिर भी यह 'गदमदचरयमश्चानुपसर्गे' सूत्र यम् धातु से पुनः यत्

प्रत्यय कर रहा है। जो कार्य किसी अन्य सूत्र से पहिले से ही सिद्ध हो, उसी को पुनः करने वाले सूत्र नियम सूत्र कहलाते हैं। 'सिद्धे सत्यारभ्यमाणो विधिर्नियमाय कल्पते'।

अतः यह 'गदमदचरयमश्चानुपसर्गे' सूत्र नियम सूत्र है। यह नियम करता है कि अनुपसर्ग होने पर अथवा नि उपसर्ग से युक्त होने पर ही यम् धातु से यत् प्रत्यय होता है। अनुपसर्ग होने पर - यम् + यत् - यम्यम् (नियमन करने योग्य)। नि उपसर्ग होने पर - नि + यम् + यत् - नियम्यम् (नियमन करने योग्य)। विनियम्यम्।

अन्य उपसर्ग होने पर ण्यत् प्रत्यय ही होगा - विनियाम्यम्।

अवद्यपण्यवर्या गर्ह्यपणितव्यानिरोधेषु - (३.१.१०१) - अवद्य, पण्य और वर्या ये शब्द 'वद व्यक्तायां वाचि', 'पण व्यवहारे स्तुतौ च' और 'वृङ् सम्भक्तौ' धातुओं से क्रमशः गर्ह्य, पणितव्य, और अनिरोध अर्थों में निपातन करके बनाये जाते हैं। जैसे -

अवद्यम् - वदितुं न योग्यं अवद्यं पापम् (निन्दनीय अर्थात् न करने योग्य)। यहाँ 'वदः सुपि क्यप् च' से क्यप् प्रत्यय प्राप्त था अतः निपातन से गर्हा अर्थात् निन्दा अर्थ होने कारण यत् प्रत्यय का विधान किया गया है। गर्हा अर्थ न होने पर क्यप् प्रत्यय करके - वदितुं न योग्यं अनूद्यम् (गुरु का नाम नहीं बोलना चाहिये)।

पण्यम् - पणितुं योग्यं पण्यम् - पण् - पण्या गौः (खरीदने योग्य गौ)। यहाँ ऋहलोर्ण्यत् सूत्र से ण्यत् प्रत्यय प्राप्त था। अतः यहाँ यत् प्रत्यय का निपातन कहा गया है। पणितव्य अर्थ न होने पर ण्यत् होकर - पाण्यम्।

वर्या - शतेन वर्या कन्या (सौ लोगों से वरण करने योग्य कन्या), सहस्रेण वर्या कन्या (सहस्र लोगों से वरण करने योग्य कन्या)। वृ + यत् + टाप् - वर्या।

यहाँ ऋकारान्त होने के कारण 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से ण्यत् प्रत्यय प्राप्त था। अतः यहाँ यत् प्रत्यय का निपातन कहा गया है तथा अनिरोध अर्थ न होने पर ण्यत् प्रत्यय लगाकर वार्याः ऋत्विजः ही बनेगा।

वह्यं करणम् - (३.१.१०२) - वह् धातु से करण अर्थ में यत् प्रत्यय करके 'वह्यं' यह शब्द निपातन किया जाता है - वहति अनेन इति वह्यं शकटम्। करण अर्थ न होने पर ऋहलोर्ण्यत् सूत्र से ण्यत् प्रत्यय ही होगा - वोढुं योग्यं वाह्यम्।

अर्यः स्वामिवैश्ययोः - (३.१.१०३) - स्वामी और वैश्य अर्थ अभिधेय होने पर 'ऋ गतौ' धातु से यत् प्रत्यय करके 'अर्य' शब्द निपातन किया जाता है। ऋ + यत् = अर्यः (स्वामी, वैश्य)। स्वामी तथा वैश्य अर्थ न होने के पर 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से ण्यत् प्रत्यय ही होगा - आर्यो ब्राह्मणः।

उपसर्या काले प्रजने - (३.१.१०४) - उपपूर्वक 'सृ गतौ', (भ्वा., जुहो.) धातु से यत् प्रत्यय करके उपसर्या शब्द निपातन किया जाता है, प्रजन अर्थात् प्रथम गर्भग्रहण का समय जिसका हो गया हो इस अर्थ में। यहाँ भी ण्यत् को बाधकर ण्यत् हुआ है।

उपसर्या गौः (ऐसी गौ, जिसका गर्भाधान का काल प्राप्त हो गया है, और जो वृषभ से योग के योग्य है।) इसी प्रकार - उपसर्या वड़वा, आदि जानना चाहिये।

'काल्या प्रजने' अर्थ न होने पर ऋहलोर्ण्यत् सूत्र से ण्यत् प्रत्यय ही होगा - उपसार्या शरदि मधुरा।

अजर्यं संगतम् - (३.१.१०५) - नञ्पूर्वक 'जॄष् वयोहानौ' धातु से संगत अर्थ अभिधेय होने पर कर्तृवाच्य में यत् प्रत्यय निपातन किया जाता है। अजर्यमार्यसंगतम् (कभी न टूटने वाली आर्यों की मैत्री) (नञ् + जॄ + यत्)। अजर्यं नोऽस्तु सङ्गतम्। तेनासङ्गतमार्येण रामाजर्यं कुरु द्रुतम् (भट्टिकाव्य) आदि।

सङ्गत अर्थ न होने पर कर्ता अर्थ में तृच् ही होगा - अजरिता कम्बलः।

अब क्यप् प्रत्यय कह रहे हैं -

क्यप् प्रत्यय

वदः सुपि क्यप् च - (३.१.१०६) - अनुपसर्ग वद धातु से सुबन्त उपपद में होने पर भाव अर्थ में क्यप् प्रत्यय होता है तथा चकार से यत् प्रत्यय भी होता है। ब्रह्मणः वदनम् ब्रह्मोद्यम् (ब्रह्म अर्थात् वेद का कथन), ब्रह्मवद्यम्। ब्रह्म + यत् - ब्रह्मवद्यम्।

इसी प्रकार - सत्योद्यम्, सत्यवद्यम् (सत्य कथन)।

सुप् उपपद में न होने पर तथा उपसर्ग न होने पर 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से ण्यत् प्रत्यय होकर प्र + वद् + ण्यत् - प्रवाद्यम् ही बनेगा।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'सुपि' की अनुवृत्ति ३.१.१०८ तक जायेगी और अनुपसर्गे की अनुवृत्ति ३.१.१२१ तक जायेगी।

भुवो भावे - (३.१.१०७) - अनुपसर्ग भू धातु से सुबन्त उपपद में होने पर भाव अर्थ में क्यप् प्रत्यय होता है। ब्रह्मभूयं गतः (ब्रह्मत्व को प्राप्त हो गया)। ब्रह्म + भू + क्यप्। इसी प्रकार - देवभूयं गतः। सुबन्त उपपद में न होने पर यत् होकर भव्यम् तथा उपसर्ग होने पर भी यत् होकर प्रभव्यम्।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'भावे' की अनुवृत्ति ३.१.१०८ तक जायेगी।

हनस्त च - (३.१.१०८) - अनुपसर्ग हन् धातु से सुबन्त उपपद में होने पर

भाव अर्थ में क्यप् प्रत्यय होता है तथा हन् धातु को तकार अन्तादेश भी होता है। ब्रह्मणो हननं ब्रह्महत्या। ब्रह्म + हन् + क्यप्। इसी प्रकार - दस्युहत्या।

स्पष्ट है कि यदि सुबन्त उपपद में नहीं होगा, तो केवल हन् धातु से क्यप् प्रत्यय लगाकर 'हत्या' शब्द नहीं बनाया जा सकता। भाव अर्थ में हन् धातु से ण्यत् प्रत्यय भी नहीं हो सकता, 'अनभिधानात्'। अतः भाव अर्थ में हन् धातु से घञ् प्रत्यय होकर घातः बनेगा। कर्म अर्थ में हन् धातु से ण्यत् प्रत्यय होकर 'घात्यः' बन सकता है।

एतिस्तुशास्वृदृजुषः क्यप् - (३.१.१०९) - 'इण् गतौ', 'ष्टुञ् स्तुतौ', 'शासु अनुशिष्टौ', 'वृञ् वरणे', 'दृङ् आदरे', 'जुषी प्रीतिसेवनयोः' इन धातुओं से क्यप् प्रत्यय होता है। यहाँ पर सुपि, अनुपसर्गे और भावे इन तीनों की निवृत्ति हो गयी है। अतः इसका विधान सामान्यतः भावकर्म अर्थ में ही होगा।

इ + क्यप् - इत्यः। इसी प्रकार क्यप् प्रत्यय करके - स्तुत्यः, शिष्यः, वृत्यः, आदृत्यः, जुष्यः। (ध्यान दें कि इस सूत्र में वृ शब्द से वृञ् धातु ही लिया गया है,, वृङ् नहीं। अतः वृङ् धातु से यथाविहित ण्यत् प्रत्यय ही होगा। वार्या ऋत्विजः, आदि।)

ध्यातव्य - अवश्य शब्द उपपद में होने पर भी क्यप् ही होगा - अवश्यस्तुत्यः।

शंसिदुहिगुहिभ्यो वेति वक्तव्यम् - (वा.) - शंसु, गुहू और दुह् इन धातुओं से विकल्प से क्यप् और ण्यत् प्रत्यय होते हैं। क्यप् होने पर - शंस् + यत् - शस्यम्। इसी प्रकार - दुह्यम् और गुह्यम्। ण्यत् होने पर - शंस् + ण्यत् - शंस्यम्। इस प्रकार - दोह्यम् और गोह्यम् रूप बनेंगे।

आङ्पूर्वादञ्जेः संज्ञायामुपसंख्यानम् - (वा.) - आङ्पूर्वक अञ्जू धातु से संज्ञा अर्थ में क्यप् प्रत्यय होता है। आ + अञ्ज् + क्यप् = आज्यम्।

ऋदुपधाच्चाक्लृपिचृतेः - (३.१.११०) - 'कृपू सामर्थ्ये' 'चृती हिंसाग्रन्थनयोः' धातुओं को छोड़कर ऋकार उपधावाले धातुओं से भी क्यप् प्रत्यय होता है।

वृत् + क्यप् - वृत्यम्। वृध् + क्यप् - वृध्यम्।

पाणौसृजेर्ण्यद्वक्तव्यः -(वा.) - पाणि उपपद में होने पर 'सृज विसर्गे' धातु से ण्यत् प्रत्यय होता है। पाणिभ्यां सृज्यते इति पाणिसर्ग्या रज्जुः। (सृज् + ण्यत् + टाप्।)

समवपूर्वाच्च - (वा.)- सम्, अव उपसर्गपूर्वक सृज् धातु से ण्यत् प्रत्यय होता है। समवसृज्यते इति समवसर्ग्या। (सम् + अव + सृज् + ण्यत् + टाप्।)

ई च खनः - (३.१.१११) - खनु अवदारणे धातु से भी क्यप् प्रत्यय होता है तथा अन्त्य अल् को ईकारादेश भी हो जाता है। खन् + क्यप् = खेयम्।

भृञोऽसंज्ञायाम् - (३.१.११२) - 'भृञ् भरणे' धातु से असंज्ञाविषय में क्यप् प्रत्यय होता है। भृ + क्यप् = भृत्याः कर्मकराः।

संज्ञा अर्थ होने पर पुंल्लिङ्ग में ण्यत् होकर - भार्यो नाम क्षत्रियः।

विशेष - आगे 'संज्ञायां समजनिषद' सूत्र से संज्ञा अर्थ में क्यप् का विधान है। अतः यह क्यप् तो स्वतः असंज्ञा अर्थ में ही प्राप्त हो रहा था, तो फिर यहाँ 'असंज्ञायाम्' क्यों कहा है ? इसलिये कि 'संज्ञायां समजनिषद' से संज्ञा अर्थ में होने वाला क्यप् स्त्रीलिङ्ग में होता है, अतः पुंल्लिङ्ग में संज्ञा अर्थ में क्यप् प्रत्यय न हो जाये, उसे रोकने के लिये यहाँ 'असंज्ञायाम्' कहा है। इसलिये पुंल्लिङ्ग में संज्ञा अर्थ में क्यप् नहीं होगा और स्त्रीलिङ्ग में संज्ञा अर्थ में क्यप् हो जायेगा। जो वधू अर्थ में 'भार्या' यह संज्ञा शब्द मिलता है, वह 'डुभृञ् धारणपोषणयोः' अथवा 'भृ भर्त्सने, भरणेऽपि' धातु से कर्म अर्थ में 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से ण्यत् प्रत्यय करके बनता है।)

संपूर्वाद्विभाषा -वा.) - सम्पूर्वक भृ धातु से विकल्प से क्यप् और ण्यत् प्रत्यय होते हैं। सम्भृत्याः / सम्भार्याः।

मृजेर्विभाषा - (३.१.११३) - 'मृजूष् शुद्धौ' धातु से विकल्प से क्यप् और ण्यत् प्रत्यय होते हैं। परिमृज्यः परिमार्ग्यः। यह धातु पाठान्तर से 'मृजू' भी पढ़ा गया है।

राजसूयसूर्यमृषोद्यरुच्यकुप्यकृष्टपच्याव्यथ्याः - (३.१.११४) - राजसूय, सूर्य, मृषोद्य, रुच्य, कुप्य, कृष्टपच्य, अव्यथ्य ये शब्द क्यप् प्रत्ययान्त निपातन होते हैं।

राज्ञा सोतव्यो राजसूयः अथवा राजा (सोमो) सूयते अत्र राजसूयः (षुञ् अभिषवे + क्यप्)। सुवति लोकं कर्मणि प्रेरयति सूर्यः (षू प्रेरणे + क्यप्।) अथवा सरति आकाशे सूर्यः (सृ + क्यप्।) मृषा + वद् + क्यप् = मृषोद्यम्। गुप गोपने, गुपू रक्षणे धातुओं से सुवर्णरजतभिन्न धन अर्थ में क्यप् प्रत्यय करके = कुप्यम्। कृष्टपच्यः = कृष्ट भूमि में जो स्वयं फल जाये। यहाँ कर्मकर्ता अर्थ में पच् धातु से क्यप्। मुख्य कर्म अर्थ होने पर ण्यत् होकर कृष्टपाक्यः। व्यथ् धातु से कर्ता अर्थ में क्यप् प्रत्यय करके = न व्यथते अव्यथ्यः।

भिद्योद्ध्यौ नदे - (३.१.११५) - 'भिदिर् विदारणे' तथा 'उज्झ उत्सर्गे' धातुओं से क्यप् प्रत्ययान्त भिद्य तथा उद्ध्य शब्द कर्ता अर्थ में निपातन होते हैं, नद अभिधेय होने पर। भिनत्ति कूलं भिद्यः (नदः)। उज्झति उदकं उद्ध्यः (नदः)।

पुष्यसिद्ध्यौ नक्षत्रे - (३.१.११६) - नक्षत्र अभिधेय हो तो अधिकरण कारक में 'पुष पुष्टौ', तथा 'षिधु संराद्धौ' धातुओं से क्यप् प्रत्ययान्त पुष्य और सिद्ध्य शब्द निपातन

किये जाते हैं। पुष्यन्त्यस्मिन् कार्याणि स पुष्यः। सिद्ध्यन्त्यस्मिन् कार्याणि स सिद्ध्यः।

विपूयविनीयजित्या मुञ्जकल्कहलिषु - (३.१.११७) - विपूर्वक 'पूङ् पवने' धातु (भ्वादिगण) से मुञ्ज अर्थ में विपूय, विपूर्वक नी धातु से कल्क अर्थ में विनीय तथा जि धातु से हलि अर्थ में जित्य ये क्यप् प्रत्ययान्त शब्द निपातन किये जाते हैं। विपूयो मुञ्जः, विनीयः कल्कः, जित्यो हलिः।

प्रत्यपिभ्यां ग्रहेश्छन्दसि - (३.१.११८) - प्रति, अपि पूर्वक ग्रह् धातु से क्यप् प्रत्यय होता है, वेद विषय में। मत्तस्य न प्रतिगृह्यम् (प्रति + ग्रह् + क्यप्)। तस्मान्नापिगृह्यम्। (अपि + ग्रह् + क्यप्)। वेद विषय न होने पर ण्यत् होकर प्रतिग्राह्यम्, अपिग्राह्यम्।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ग्रहेः' की अनुवृत्ति ३.१.११९ तक जायेगी।

पदास्वैरिबाह्यापक्षेषु च - (३.१.११९) - पद, अस्वैरी, बाह्या, पक्ष्य इन अर्थों में भी ग्रह् धातु से क्यप् प्रत्यय होता है। पद अर्थ में - प्रगृह्यं पदम् (प्रगृह्यसंज्ञक पद) (प्र + ग्रह् + क्यप्)। अस्वैरी अर्थ में - गृह्यका इमे (ये पराधीन हैं) (ग्रह् + क्यप्)। बाह्या अर्थ में - ग्रामगृह्या सेना (गाँव से बाहर की सेना) (ग्राम + ङस् + ग्रह् + क्यप्)। पक्ष्य अर्थ में - वासुदेवगृह्याः (वासुदेव के पक्ष वाले) (वासुदेव + ङस् + ग्रह् + क्यप्)।

विभाषा कृवृषोः - (३.१.१२०) - 'डुकृञ् करणे' तथा 'वृषु सेचने' धातुओं से विकल्प से क्यप् प्रत्यय होता है तथा पक्ष में ण्यत् प्रत्यय होता है। क्यप् होने पर - कृ + क्यप् = कृत्यम्। वृष् + क्यप् = वृष्यम् / ण्यत् होने पर - कृ + ण्यत् = कार्यम्। वृष् + ण्यत् = वर्ष्यम्।

युग्यं च पत्रे - (३.१.१२१) - पत्र अर्थात् वाहन अभिधेय होने पर 'युजिर् योगे' धातु से भी क्यप् प्रत्यय होता तथा जकार को कुत्व होकर युग्य शब्द निपातन किया जाता है। योक्तुमर्हः युग्यो गौः (जोतने योग्य बैल), युग्योऽश्वः (जोतने योग्य घोड़ा)। वाहन अर्थ न होने पर ण्यत् होकर योग्यम् ही बनेगा।

अमावस्यदन्यतरस्याम् - (३.१.१२२) - अमापूर्वक 'वस निवासे' धातु से काल अधिकरण में वर्तमान होने पर ण्यत् प्रत्यय होता है तथा अत उपधाया से होने वाली वृद्धि का विकल्प से निपातन किया जाता है। सह वसतोऽस्मिन् काले सूर्यचन्द्रमसौ अमावास्या / अमावस्या।

छन्दसि निष्टर्क्यदेवहूयप्रणीयोन्नीयोच्छिष्यमर्यस्तर्याध्वर्यखन्यखान्यदेव-यज्यापृच्छ्यप्रतिषीव्यब्रह्मवाद्यभाव्यस्ताव्योपचाय्यपृडानि - (३.१.१२३) -

निस् + कृत् + ण्यत् = निष्टक्र्यम् / देव + ह्वे + क्यप् = देवहूयः / प्र + नी + क्यप् = प्रणीयः / उत् + नी + क्यप् = उन्नीयः / उत् + शिष् + क्यप् = उच्छिष्यम् / मृङ् + यत् = मर्यः / स्तृञ् + यत् = स्तर्या / ध्वृ + यत् = ध्वर्यः / खन् + यत् = खन्यः / खन् + ण्यत् = खान्यः / देव + यज् + ण्यत् = देवयज्या / आङ् + प्रच्छ् + यत् = आपृच्छ्यः / प्रति + सिवु + क्यप् = प्रतिषीव्यः / ब्रह्म + वद् + ण्यत् = ब्रह्मवाद्यः / भू + ण्यत् = भाव्यः / स्तु + ण्यत् = स्ताव्यः / उप + चि + ण्यत् + पृड = उपचाय्यपृडम्।

वेद में ये शब्द निपातन से बनते हैं।

हिरण्य इति वक्तव्यम् (वार्तिक) - उपचाय्यपृडम् शब्द हिरण्य अर्थ में ही होता है और हिरण्य अर्थ न होने पर उपचेयपृडम् बनता है।

ण्यत् प्रत्यय

ऋहलोर्ण्यत् - (३.१.१२४) - ऋवर्णान्त तथा हलन्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय होता है। कृ + ण्यत् = कार्यम्, हृ + ण्यत् = हार्यम्, धृ + ण्यत् = धार्यम्, पठ् + ण्यत् = पाठ्यम्, पच् + ण्यत् = पाक्यम्, वच् + ण्यत् = वाक्यम्।

ओरावश्यके - (३.१.१२५) - उवर्णान्त धातुओं से आवश्यक अर्थ द्योतित होने पर ण्यत् प्रत्यय होता है। यह यत् का अपवाद है।

अतः आवश्यक अर्थ द्योतित होने पर उवर्णान्त धातुओं से ण्यत् प्रत्यय लगाइये लू + ण्यत् = लाव्यम्, पू + ण्यत् = पाव्यम्। आवश्यक अर्थ द्योतित न होने पर इनसे यत् प्रत्यय लगाइये। लू + यत् = लव्यम्, पू + यत् = पव्यम्।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ण्यत्' की अनुवृत्ति ३.१.१३१ तक जायेगी।

आसुयुवपिरपिलपित्रपिचमश्च - (३.१.१२६) - आङ् पूर्वक 'षुञ् अभिषवे', 'यु मिश्रणे', डुवप बीजसन्ताने', 'रप, लप व्यक्तायां वाचि', 'त्रपूष् लज्जायाम्' और 'आ चमु अदने' इन धातुओं से भी ण्यत् प्रत्यय होता है। यह भी यत् का अपवाद है।

आङ् + सु + ण्यत् - आसाव्यम् / यु + ण्यत् - याव्यम् / वप् + ण्यत् - वाप्यम् / रप् + ण्यत् = राप्यम् / लप् + ण्यत् = लाप्यम् / त्रप् + ण्य = त्राप्यम् / आङ् + चम् + ण्यत् = आचाम्यम्।

आनाय्योऽनित्ये - (३.१.१२७) - आङ्पूर्वक नी धातु से ण्यत् प्रत्यय तथा आय् आदेश होकर आनाय्य शब्द निपातन किया जाता है। आङ् + नी + ण्यत् - आनाय्यो दक्षिणाग्निः।

प्रणाय्योऽसंमतौ - (३.१.१२८) - असम्मति अर्थ अभिधेय होने पर प्र उपसर्गपूर्वक नी धातु से ण्यत् प्रत्यय तथा आय् आदेश निपातित होते हैं।

प्र + नी + ण्यत् = प्रणाय्यः चौरः। असम्मति का अर्थ है पूजा का अभाव, चोर निन्दित है इसीलिये असम्मति अर्थ में ण्यत् निपातन किया गया है।

सम्मति अर्थ होने पर 'अचो यत्' सूत्र से यत् प्रत्यय होकर प्र + नी + यत् = प्रणेयः बनेगा। यहाँ 'उपसर्गादसमासेऽपि णोपदेशस्य ८.४.१४' सूत्र से णत्व हुआ है।

पाय्यसांनाय्यनिकाय्यधाय्या मानहविर्निवाससामिधेनीषु -(३.१.१२९) -

पाय्य, सान्नाय्य, निकाय्य और धाय्य शब्द, मान, हवि, निवास और सामिधेनी अर्थ अभिधेय होने पर निपातन किये जाते हैं।

मीयतेऽनेन इति पाय्यम् मानम् - तौलने के बाँट। (माङ् + ण्यत् = पाय्यम्।) सम्यङ् नीयते होमार्थम् अग्निं प्रति इति सांनाय्यं हविः - (सम् + नी + ण्यत्) सांन्नाय्य नामक हवि। निचीयतेऽस्मिन् धान्यादिकं निकाय्यः - निवासः। (नि + चि + ण्यत्) धीयतेऽनया समिद् इति धाय्या - सामिधेनी नामक ऋचा का नाम। (डुधाञ् + ण्यत्)।

क्रतौ कुण्डपाय्यसंचाय्यौ - (३.१.१३०) - क्रतु अभिधेय होने पर, तृतीयान्त कुण्ड शब्द उपपद में होने पर पा धातु से अधिकरण अर्थ में ण्यत् प्रत्यय करके कुण्डपाय्य शब्द निपातन से बनता है और सम् उपसर्गपूर्वक चिञ् धातु से ण्यत् प्रत्यय करके आयादेश निपातन करके संचाय्य शब्द निपातन से बनता है।

कुण्डेन पीयतेऽस्मिन् सोम इति कुण्डपाय्यः क्रतुः = वह यज्ञ जिसमें कुण्ड के द्वारा सोम पिया जाता है। (कुण्ड + पा + ण्यत्)।

सञ्चीयतेऽस्मिन् सोम इति संचाय्यः क्रतुः = वह यज्ञ जिसमें सोम का संचय किया जाता है। (सम् + चि + ण्यत्)।

अग्नौ परिचाय्योपचाय्यसमूह्याः - (३.१.१३१) - अग्नि धारण करने वाला स्थलविशेष अभिधेय होने पर परि उपसर्गपूर्वक चि धातु से ण्यत् प्रत्यय तथा आयादेश निपातन करके परिचाय्य शब्द बनता है। परिचीयतेऽस्मिन् परिचाय्यः = वह स्थान, जहाँ यज्ञ की अग्नि स्थापित की जाती है। इसी प्रकार उप उपसर्गपूर्वक चि धातु से ण्यत् प्रत्यय तथा आयादेश निपातन करके उपचाय्य शब्द बनता है। उपचीयतेऽसौ इति उपचाय्यः = यज्ञ में संस्कार की गई आग।

सम् उपसर्गपूर्वक वह् धातु से ण्यत् प्रत्यय करके तथा सम्प्रसारण और दीर्घ निपातन करके समूह्यं शब्द बनता है। समूह्यं चिन्वीत पशुकामः = पशु की कामना करने

वाला समूह्य = यज्ञ की अग्नि का चयन करे।

चित्याग्निचित्येषु - (३.१.१३२) - अग्नि अभिधेय होने पर चिञ् धातु से कर्म अर्थ में क्यप् प्रत्यय निपातन करके तथा 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' सूत्र तुक् का आगम करके चित्य तथा अग्निचित्या शब्द निपातन करके बनते हैं।

यह क्यप् प्रत्यय यत् का अपवाद है।

ण्वुल् तथा तृच् प्रत्यय

विशेष - अब सूत्र ३.१.१३३ से लेकर ३.४.११७ तक के सूत्रों के द्वारा जो प्रत्यय कहे जा रहे हैं, उनमें से तिङ्भिन्न प्रत्ययों की केवल कृत् संज्ञा है।

कर्तृकर्मणोः कृति (२.३.६५) - कृत् प्रत्ययों के योग में अनुक्त कर्ता और अनुक्त कर्म में षष्ठी होती है। ग्रन्थस्य पाठकः। ग्रन्थस्य पठिता। कटस्य कर्ता। जगतः कर्ता। (इसके आधार पर ही कृदन्तों के योग में आगे विभक्तियों का निर्णय करें।)

ण्वुल्तृचौ - (३.१.१३३) - समस्त धातुओं से कर्ता अर्थ में ण्वुल् तथा तृच् प्रत्यय होते हैं। करोति इति कारकः (कृ + ण्वुल्), पठति इति पाठकः (पठ् + ण्वुल्) / करोति इति कर्ता (कृ + तृच्), पठति इति पठिता (पठ् + तृच्)।

ल्यु, णिनि, अच् प्रत्यय

नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः - (३.१.१३४) - नन्द्यादि, ग्रह्यादि, पचादि धातुओं से यथासङ्ख्य करके ल्यु, णिनि तथा अच् प्रत्यय होते हैं।

विशेष - यहाँ ध्यातव्य है कि नन्द्यादि, ग्रह्यादि, पचादि, इन गणों में धातु नहीं हैं, अपितु धातुओं से प्रत्यय लगाकर बने हुए शब्द हैं। अतः नन्द्यादि, ग्रह्यादि, पचादिगण पठित शब्दों से प्रत्ययों को हटाने के बाद जो धातु बच रहे हैं, उन्हीं धातुओं से क्रमशः ये ल्यु, णिनि तथा अच् प्रत्यय होते हैं, यह जानना चाहिये।

नन्द्यादिगण पठित शब्दों से ल्यु प्रत्यय -

(नन्दिवाशिमदिदूषिसाधिवर्धिशोभिरोचिभ्यो ण्यन्तेभ्यः संज्ञायाम् - वा.) -

नन्द्, वाश्, मद्, दूष्, साध्, वृध्, शुभ्, रुच्, इन ण्यन्त धातुओं से संज्ञा अर्थ में ल्यु प्रत्यय होता है। नन्दयति इति नन्दनः। वाशयति इति वाशनः। इसी प्रकार - मदनः। दूषणः। साधनः। वर्धनः। शोभनः। रोचनः।

(सहितपिदमेः संज्ञायाम् - वा.) - सह्, तप्, दम् इन धातुओं से संज्ञा अर्थ में ल्यु प्रत्यय होता है। सहनः। तपनः। दमनः।

शेष नन्द्यादि धातुओं से कर्ता अर्थ में ल्यु होता है। विशेषेण भीषयति इति

विभीषण:। लुनाति इति लवण: (लवण: में निपातनात् णत्व हुआ है।)। जल्पयति इति जल्पन:। इसी प्रकार - रमण:। दर्पण:। संक्रन्दन:। संकर्षण:। संहर्षण:। यवन:।

जिन शब्दों में कर्म उपपद है, उनमें कर्म उपपद में रहते हुए 'कर्मण्यण्' सूत्र से अण् प्राप्त था किन्तु उसे बाधकर इनसे ल्यु ही हो, इसलिये इन्हें पचादिगण में पढ़ा गण है - जनमर्दयति इति जनार्दन:। इसी प्रकार - मधुसूदन:। वित्तविनाशन:। कुलदमन:। शत्रुदमन:।

ग्रह्यादिगण पठित शब्दों से णिनि प्रत्यय -

ग्रह्यादिगण इस प्रकार है -

गृह्णातीति ग्राही (ग्रहण करनेवाला) (ग्रह् + णिनि) / इसी प्रकार - उत्साही (उत्साह करनेवाला) / उद्वासी। उद्भासी। स्थायी। मन्त्री। सम्मर्दी। अपराध्यति इति अपराधी, उपरोधी। परिभावी, परिभवी (यहाँ वृद्धि का अभाव निपातन से होता है।)।

रक्षश्रुवसवपशां नौ - (वा.) - नि शब्द उपपद में होने पर रक्ष्, श्रु, वस्, वप्, शो धातु से कर्ता अर्थ में णिनि प्रत्यय होता है। निरक्षी, निश्रावी, निवासी, निवापी, निशायी।

याचिव्याहृसंव्याहृव्रजवदवसां प्रतिषिद्धानाम् - (वा.) - नञ्पूर्वक इन धातुओं से कर्ता अर्थ में णिनि प्रत्यय होता है। अयाची, अव्याहारी, असंव्याहारी, अव्राजी, अवादी, अवासी।

अचामचित्तकर्तृकाणाम् - (वा.) - अचित्तकर्तृक अजन्त धातुओं से प्रतिषिद्ध अर्थ में णिनि प्रत्यय होता है। 'न विद्यते चित्तं अस्य इति अचित्त:, स कर्ता येषां ते तथोक्ता: अजन्ता: धातव:'। बिना चित्तवाला है कर्ता जिसका, ऐसे 'अजन्त' धातुओं से कर्ता अर्थ में णिनि प्रत्यय होता है।

न करोति इति अकारी। इसी प्रकार - अहारी, अविनायी, अविनाशी, अविशायी।

विशयी विषयी देशे - (वा.) - देश अभिधेय होने पर शीङ् स्वप्ने धातु से विशयी और षिञ् बन्धने धातु से देश अर्थ में विषयी शब्द निपातन से बनते हैं। यहाँ वृद्धि का अभाव निपातन से होता है।

अभिभावी भूते - (वा.) - अभि उपसर्गपूर्वक भू धातु से कर्ता अर्थ होने पर भूतकाल में णिनि प्रत्यय होता है। अभिभूतवान् इति अभिभावी।

पचादिगण पठित शब्दों से अच् प्रत्यय -

यह पचादिगण में पढ़े हुए शब्दों की प्रकृति से होता है। देखिये कि पचादिगण

में धातु नहीं पढ़े गये हैं, अपितु धातुओं से अच् प्रत्यय लगाकर बने हुए शब्द पढ़े गये हैं। अतः इन शब्दों के भीतर जो धातु हैं, उनसे अच् प्रत्यय होता है, यह जानना चाहिये।

पचादिगण पठित शब्द इस प्रकार हैं -

पचादि - वच। वद। चल। शल। तप। पत। वस। क्षर। जर। मर। क्षम। सेव। मेष। कोप। मेधा। नर्त्त। व्रण। दर्श। दंश। दम्भ। जारभरा। श्वपचा। नदट्। भषट्। गरट्। प्लवट्। चरट्। तरट्। चोरट्। ग्राहट्। सूदट्। देवट्। मोदट्।

पचादि आकृतिगण है, आकृतिगण का तात्पर्य यह है कि अन्य धातुओं से भी कर्ता अर्थ में अच् प्रत्यय हो सकता है।

पचादिगण पठित शब्दों से अच् प्रत्यय इस प्रकार होता है -

पचति	इति	पचः	(पच् + अच्)	वपति	इति	वपः	(वप् + अच्)
वक्ति	इति	वचः	(वच् + अच्)	वदति	इति	वदः	(वद् + अच्)
चलति	इति	चलः	(चल् + अच्)	शलति	इति	शलः	(शल् + अच्)
तपति	इति	तपः	(तप् + अच्)	पतति	इति	पतः	(पत् + अच्)
वसति	इति	वसः	(वच् + अच्)	क्षरति	इति	क्षरः	(क्षर् + अच्)

इसी प्रकार - जरः। मरः। क्षमः। सेवः। मेषः। कोपः। मेधा। नर्त्तः। व्रणः। दर्शः। दंशः। दम्भः। आदि बनाइये।

'शिवशमरिष्टस्य करे (४.४.१४३)' सूत्र में 'कर' शब्द कृ धातु से अच् प्रत्यय लगाकर बना है और इसी प्रकार **कर्मणि घटोऽठच्** सूत्र में 'घट' शब्द घट धातु से अच् प्रत्यय लगकार बना है इससे यह ज्ञापित होता है कि पचादिगण पठित धातुओं के अलावा अन्य धातुओं से भी अच् प्रत्यय देखा जाता है।

'यङोऽचि च (२.४.७४)' सूत्र में अच् परे होने पर यङ् के लुक् का विधान है। अतः यङन्त धातुओं से भी अच् प्रत्यय होता है। यथा - चेक्रीय + अच् - चेक्रियः / लोलूय + अच् - लोलुवः / पोपूय + अच् - पोपुवः। इनमें यङ् का लुक् होकर, न धातुलोप आर्धधातुके सूत्र से गुण का निषेध होकर **'अचिश्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ'** सूत्र से इयङ् तथा उवङ् होते हैं।

चरिचलिपतिवदीनां वा द्वित्वमच्याक् चाभ्यासस्येति वक्तव्यम् (वा.) -

अच् परे होने पर इन धातुओं को द्वित्व होकर अभ्यास को आकच् का आगम होता है - चराचरः / चलाचलः / पतापतः / वदावदः।

हन्तेर्घत्वं च (वा.) - अच् परे होने पर हन् धातु के अभ्यास को कुत्व होकर तथा अभ्यास के उत्तर को अभ्यासाच्च से कुत्व होकर घनाघन: बनता है।

पाटेर्णिलुक्चोक्च दीर्घश्चाभ्यासस्य - (वा.) - अच् परे होने पर णिजन्त पट् धातु को द्वित्वादि होकर - पाटूपट:। द्वित्व न होने पर अच् प्रत्यय लगाकर - चर:, चल:, पत:, वद:, हल:, पाट: भी बन सकते हैं।

अच् परे होने पर रात्रि उपपद में होने पर 'रात्रे: कृति विभाषा' सूत्र से विकल्प से मुम् का आगम करके रात्रिंचर:, रात्रिचर: शब्द बनते हैं।

जारं बिभर्ति इति जारभरा और श्वानं पचति इति श्वपचा इत्यादि में कर्म उपपद होने के कारण कर्मण्यण् से अण् प्राप्त था उसे बाधने के लिये पचादिगण में उसका पाठ किया गया।

ध्यान रहे कि इस गण में कुछ शब्द टित् इसलिये पढ़े गये हैं, कि उनसे 'टिड्ढाणञ्. सूत्र से स्त्रीलिङ्ग में ङीप् हो। अत: जो टित् नहीं हैं, उनसे 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् ही होता है।

नदट् - नदति इति नद: (नदी) (नद् + अच्) / देवट् - दीव्यति इति देव: (देवी) (दिव् + अच्) / प्लवट् - प्लवते इति प्लव: (प्लु + अच्)।

इसी प्रकार - भषट् (भष् + अच्) / गरट् (गॄ + अच्) / चरट् (चर् + अच्) / तरट् (तॄ + अच्) / चोरट् (चुर् + अच्) / ग्राहट् (ग्रह् + अच्) / सूदट् (सूद् + अच्) / मोदट् (मुद् + अच्)।

पचादि आकृतिगण है, आकृतिगण का तात्पर्य यह है कि इन शब्दों के अलावा भी इस प्रकार का कोई शब्द दिखे तो उसे इन्हीं में सम्मिलित कर देना चाहिये।

तात्पर्य यह है कि अच् प्रत्यय सभी धातुओं से होता है।

तो फिर प्रश्न होता है कि गणपाठ क्यों किया ?

पचादिगण का पाठ इसलिये किया कि श्वपचा, जारभरा इत्यादि में कर्मण्यण् से अण् प्राप्त था, वह न हो। अत: अण् को बाधने लिये इनका पचादिगण में पाठ हुआ है।

सेव, मेष, कोप आदि में अगले सूत्र 'इगुपधज्ञाप्रीकिर: क:' से क प्रत्यय प्राप्त था, उसे बाधने लिये इनका पचादिगण में पाठ हुआ है। नदट्, गरट्, चरट्, ग्राहट्, इत्यादि का पचादिगण में पाठ टित्वात् स्त्रीलिङ्ग में ङीप् करने के लिये हुआ है। देवट् का पचादिगण में पाठ इन दोनों हेतुओं से हुआ है। अन्य का पाठ प्रपञ्चार्थ है।

अज्विधिः सर्वधातुभ्यः पठ्यन्ते च पचादयः ।
अण्बाधनार्थमेव स्यात्सिध्यन्ति श्वपचादयः ।।

क प्रत्यय

इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः - (३.१.१३५) - जिनकी उपधा में इक् प्रत्याहार है उन धातुओं से तथा ज्ञा, प्रीञ्, कॄ धातुओं से कर्ता अर्थ में क प्रत्यय होता है।

विक्षिपति इति विक्षिपः (विघ्न डालने वाला) (वि + क्षिप् + क) / विलिखिति इति विलिखः (कुरेदने वाला) / (वि + लिख् + क) / जानाति इति ज्ञः (जानने वाला) (ज्ञा + क) / प्रीणाति इति (प्रिय) (प्री + क) / किरति इति किरः (सुअर) (कॄ + क)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क' की अनुवृत्ति ३.१.१३६ तक जायेगी।

आतश्चोपसर्गे - (३.१.१३६) - उपसर्ग उपपद होने पर आकारान्त धातुओं से क प्रत्यय होता है। प्रतिष्ठते इति प्रस्थः (प्रस्थान करने वाला) (प्र + स्था + क) / सुष्ठु ग्लायति इति सुग्लः (ज्यादा ग्लानि करने वाला) (सु + ग्ला + क) / सुष्ठु म्लायति इति सुम्लः (सु + म्लै + क)।

श प्रत्यय

पाघ्राध्माधेट्दृशः शः - (३.१.१३७) - पा पाने, घ्रा, ध्मा, धेट्, दृश् धातुओं से कर्ता अर्थ में श प्रत्यय होता है।

सोपसर्ग पा, घ्रा, ध्मा, धेट् धातुओं से पूर्वसूत्र से क प्रत्यय प्राप्त था और अनुपसर्ग इन धातुओं से 'श्याद्व्यधासु-' सूत्र से ण प्रत्यय प्राप्त था तथा दृश् धातु से उपर्युक्त सूत्र से क प्रत्यय प्राप्त था इन सबका यह अपवाद है।

श प्रत्यय सार्वधातुक है, अतः इन सारे धातुओं से विकरण लगेगा ही।

उत्पिबति इति उत्पिबः (उत् + पा + श) / इसी प्रकार - उत्पश्यति इति उत्पश्यः। विपश्यति इति विपश्यः, आदि।

विजिघ्रति इति विजिघ्रः (वि + घ्रा + श)।

उद्धमति इति उद्धमः, (उत् + ध्मा + श) / इसी प्रकार - विधमति इति विधमः

उद्धयति इति उद्धयः (उत् + धे + श) / इसी प्रकार - विधयति इति विधयः।

उपसर्ग न होने पर भी इन धातुओं से श प्रत्यय ही होगा -

जिघ्रति इति जिघ्रः। धयति इति धयः। पश्यति इति पश्यः, आदि।

जिघ्रते: संज्ञायां प्रतिषेधो वाच्य: - (वा.) - सोपसर्ग घ्रा धातु से संज्ञा अर्थ में श प्रत्यय का प्रतिषेध होता है। अत: 'आतश्चोपसर्गे' सूत्र से क प्रत्यय होकर व्याजिघ्रति इति व्याघ्र: बनता है।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'श' की अनुवृत्ति ३.१.१३९ तक जायेगी।

अनुपसर्गाल्लिम्पविन्दधारिपारिवेद्युदेजिचेतिसातिसाहिभ्यश्च - (३.१.१३८)- उपसर्गरहित लिप उपदेहे, विद्लृ लाभे तथा णिच्प्रत्ययान्त धृञ् धारणे, पृ पालनपूरणयो:, विद चेतनाख्याननिवासेषु, उद्पूर्वक एजृ कम्पने, चिती संज्ञाने, साति, षह मर्षणे इन धातुओं से भी श प्रत्यय होता है।

लिम्पतीति लिम्प: (लिप् + श)। इसी प्रकार -

विन्दतीति विन्द:। धारयतीति धारय:। पारयतीति पारय:। वेदयतीति वेदय:। उदेजयतीति उदेजय:। चेतयतीति चेतय:। सातयतीति सातय:। साहयतीति साहय:।

उपसर्ग होने पर अच् प्रत्यय ही होगा।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'अनुपसर्गात्' की अनुवृत्ति ३.१.१४० तक जायेगी।

नौ लिम्पेरिति वक्तव्यम् - (वा.) - नी उपपद में होने पर तुदादिगण के लिप् धातु से श प्रत्यय होता है। निलिम्पा नाम देवा:। (नि + लिप् + श)

गवादिषु विन्दे: संज्ञायाम् - (वा.) - गो आदि उपपद में होने पर तुदादिगण के विद् धातु से भी श प्रत्यय होता है। गोविन्द:। (गो + ङस् + विद् + श)।

इसी प्रकार - अरविन्द:।

ददातिदधात्योर्विभाषा - (३.१.१३९) - अनुपसर्ग डुदाञ् और डुधाञ् धातुओं से विकल्प से श प्रत्यय होता है। पक्ष में 'श्याद्व्यधा'. (३.१.१४१) से ण भी हो सकता है।

दा + श = दद: / दा + ण = दाय:।

धा + श = दध: / धा + ण = धाय:।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'विभाषा' की अनुवृत्ति ३.१.१४० तक जायेगी।

ण प्रत्यय

ज्वलतिकसन्तेभ्यो ण: - (३.१.१४०) - अनुपसर्ग ज्वलादि धातुओं से कर्ता अर्थ में विकल्प से ण प्रत्यय होता है। पक्ष में अच् भी हो सकता है।

ज्वलतीति ज्वाल:, ज्वल:। चलति इति चाल:, चल:।

भ्वादिगण का ज्वलादि अन्तर्गण -

ज्वल्	चल्	जल्	टल्	ट्वल्	स्थल्	हल्	नल्	पल्
बल्	पुल्	कुल्	शल्	हुल्	पत्	क्वथ्	पथ्	मथ्
वम्	भ्रम्	क्षर्	सह्	रम्	सद्	शद्	क्रुश्	कुच्
बुध्	रुह्	कस्।						

तनोतेर्णस्योपसंख्यानम् - (वा.) - तन् धातु से भी कर्ता अर्थ में ण प्रत्यय होता है। अवतनोतीत्यवतानः। (इसमें विभाषा तथा अनुपसर्ग का सम्बन्ध नहीं है।)

उपसर्ग होने पर अच् प्रत्यय ही होगा।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ण' की अनुवृत्ति ३.१.१४३ तक जायेगी।

श्याद्व्यधास्रुसंस्र्वतीणवसावहृलिहश्लिषश्वसश्च - (३.१.१४१) -

श्यैङ् धातु, आकारान्त धातु, व्यध् धातु, आङ्पूर्वक और संपूर्वक स्रु, अतिपूर्वक इण्, अवपूर्वक षो, अवपूर्व हृ, लिह्, श्लिष्, श्वस् इन धातुओं से कर्ता अर्थ में ण प्रत्यय होता है। अव + श्यै + ण = अवश्यायः, प्रति + श्यै + ण = प्रतिश्यायः।

आकारान्त धातुओं से - दा + ण = दायः, धा + ण = धायः।

व्यध् + ण = व्याधः / आ + स्रु + ण = आस्रावः / सं + स्रु + ण = संस्रावः / अति + इ + ण = अत्यायः / अव + सो + ण = अवसायः / अव + हृ + ण = अवहारः / लिह् + ण = लेहः / श्लिष् + ण = श्लेषः / श्वस् + ण = श्वासः।

श्यैङ् धातु से आकारान्त होने के कारण 'श्याद्व्यधा-' (३.१.१४१) सूत्र से ही ण प्रत्यय प्राप्त था, तब भी उसे इसमें इसलिये रखा है कि आतोऽनुपसर्गे कः से होने वाला क प्रत्यय भी उसे न हो और क को बाध करके ण प्रत्यय ही हो।

दुन्योरनुपसर्गे - (३.१.१४२) - उपसर्गरहित टुदु उपतापे तथा णीञ् प्रापणे धातुओं से ण प्रत्यय होता है। दुनोतीति दावः (दु + ण), नयतीति नायः (नी + ण)।

उपसर्ग होने पर अच् ही होगा - प्रदवः (दु + अच्), प्रणयः (प्र + नी + ण)।

विभाषा ग्रहः - (३.१.१४३) - ग्रह् धातु से विकल्प से ण और अच् प्रत्यय होते हैं। गृह्णाति इति ग्राहः (ग्रह् + ण), ग्रहः (ग्रह् + अच्)।

यह व्यवस्थित विभाषा है इसीलिये जलचर (मगर) अर्थ में ण प्रत्यय ही होकर ग्राहः बनेगा और नक्षत्र अर्थ में अच् प्रत्यय होकर ग्रहः ही बनेगा।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ग्रहः' की अनुवृत्ति ३.१.१४४ तक जायेगी।

भवतेश्चेति वक्तव्यम् - (वा.) - भू धातु से भी विकल्प से ण और अच् प्रत्यय होते है। भवतीति भाव: (भू + ण), भव: (भू + अच्)।

गेहे क: - (३.१.१४४) - ग्रह् धातु से गेह = गृह कर्ता वाच्य होने पर क प्रत्यय होता है। गृह्णातीति गृहम् वेश्म (घर) (ग्रह् + क)। गृह्णन्ति इति गृहा: दारा: (स्त्रियाँ) (ग्रह् + क)।

ष्वुन् प्रत्यय

शिल्पिनि ष्वुन् - (३.१.१४५) - नृतिखनिरञ्जिभ्य: परिगणनं कर्तव्यम् -

नृत्, खन्, रञ्ज् धातुओं से शिल्प कर्ता अभिधेय हो तो ष्वुन् प्रत्यय होता है।

ध्यान रहे कि ष्वुन् प्रत्यय षित् है। अत: ष्वुन् प्रत्यय से बने हुए शब्दों से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'षिद्गौरादिभ्यश्च'** सूत्र से ङीष् प्रत्यय ही होगा।

नृत् + ष्वुन् = नर्तक:, नर्तकी। खन् + ष्वुन् = खनक:, खनकी। रञ्ज् + ष्वुन् = रजक:, रजकी।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'शिल्पिनि' की अनुवृत्ति ३.१.१४७ तक जायेगी।

गस्थकन् - (३.१.१४६) - गै धातु से शिल्प कर्ता अभिधेय हो तो थकन् प्रत्यय होता है। गाथक:, गाथिका।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ग:' की अनुवृत्ति ३.१.१४७ तक जायेगी।

ण्युट् च - (३.१.१४७) - गा धातु से शिल्प कर्ता अभिधेय हो तो ण्युट् प्रत्यय होता है। गायन:।

ध्यान रहे कि ण्युट् प्रत्यय टित् है। अत: ण्युट् प्रत्यय से बने हुए शब्दों से स्त्रीत्व की विवक्षा में **'टिड्ढाणञ्.'** सूत्र से ङीप् प्रत्यय ही होगा - गायनी।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ण्युट्' की अनुवृत्ति ३.१.१४८ तक जायेगी।

हश्च व्रीहिकालयो: - (३.१.१४८) - व्रीहि और काल अभिधेय हो तो ओहाक् तथा ओहाङ् इन दोनों धातुओं से कर्ता अर्थ में ण्युट् प्रत्यय होता है।

जहति उदकं इति हायना नाम व्रीहय: (हायना नाम का धान्य विशेष)। जिहीते भावान् इति हायन: संवत्सर: (जो सारे भावों को छोड़ता जाये ऐसा संवत्सर अर्थात् वर्ष)।

प्रुसृल्व: समभिहारे वुन् - (३.१.१४९) - प्रु, सृ, लू, इन धातुओं से समभिहार अर्थ में वुन् प्रत्यय होता है। समभिहार का अर्थ यहाँ साधुकारित्व है। अत: जो काम को

एक बार ही करे और अच्छे से करे, उससे वुन् प्रत्यय होगा।

साधु प्रवते इति प्रवकः / इसी प्रकार सरति इति सरकः / लुनाति इति लवकः।

अतः जो बार बार भी करे और ठीक से न करे वहाँ वुन् प्रत्यय नहीं होगा।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'वुन्' की अनुवृत्ति ३.१.१५० तक जायेगी।

आशिषि च - (३.१.१५०) - आशीः अर्थ गम्यमान होने पर धातुमात्र से वुन् प्रत्यय होता है। जीवताद् इति जीवकः (तुम बहुत जियो और आनन्द में रहो।)

इसका प्रयोग लोट् लकार के जीवतात् के स्थान पर किया जाता है। इसी प्रकार नन्दतात् के स्थान पर नन्दकः आदि बनाइये।

आशीः का अर्थ है 'अप्राप्त अभीष्ट वस्तु की प्रार्थना अर्थात् इच्छा'। यह प्रयोक्ता का धर्म है। आशासिता पिता आदि की ये उक्तियाँ हैं।

तृतीयाध्याये द्वितीयः पादः

(ध्यान रहे कि भगवान् पाणिनि का पूरा शास्त्र उत्सर्गापवाद विधि से बना है। अतः केवल प्रत्ययों को विधान करने वाले सूत्र, उनके अर्थ और प्रक्रिया जान लेने से काम नहीं चल पाता। हमें यह अवश्य ज्ञात होना चाहिये कि किस धातु से किस अर्थ में होने वाला कौन सा प्रत्यय किस प्रत्यय को बाध रहा है। इसके लिये हमने बाध्यबाधक को जानने की विधि बतलाई है। उसे जानकर ही आगे बढ़ें।

दूसरी बात यह कि अधिकार और अनुवृत्ति ही पाणिनीय अष्टाध्यायी सूत्रक्रम के प्राण हैं। अतः हमें पता होना चाहिये कि किस अधिकार और किस अनुवृत्ति की गति कहाँ से कहाँ तक है। इन्हें हमने पद पद पर स्पष्ट किया है।)

अण् प्रत्यय

कर्मण्यण् - (३.२.१) - कर्म उपपद में रहते धातुमात्र से कर्ता (करने वाला) अर्थ में अण् प्रत्यय होता है।

कुम्भं करोतीति कुम्भकारः - (कुम्भ + ङस् + कृ + अण्)। नगरं करोतीति नगरकारः - (नगर + ङस् + कृ + अण्) / काण्डं लुनातीति काण्डलावः - (काण्ड + ङस् + लू + अण्) / शरलावः - (शर + ङस् + लू + अण्) / वेदमधीते वेदाध्यायः - (वेद + ङस् + अधि + इङ् + अण्) / चर्चां पठतीति चर्चापाठः - (चर्चा + ङस् + पठ् + अण्)।

विशेष - यद्यपि कर्ममात्र के उपपद में रहते धातुमात्र से कर्ता (करने वाला) अर्थ में अण् प्रत्यय का विधान है, तथापि आदित्यं पश्यति इति आदित्यदर्शः, हिमवन्तं शृणोति इति हिमवच्छ्रावः, ग्रामं गच्छति इति ग्रामगमी, आदि प्रयोग इसलिये नहीं बनाये जा सकते, कि इनका लोक में अभिधान नहीं है।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'कर्मणि' की अनुवृत्ति ३.२.५८ तक जायेगी तथा अण् की ३.२.२ तक जायेगी।

शीलिकामिभक्ष्याचरिभ्यो णः (वा.) -

शीलि, कामि, भक्षि तथा आङ्पूर्वक चर् धातुओं से कर्मोपपद में रहते ण प्रत्यय होता है। मांसशीलः, मांसशीला - (मांस + ङस् + शील् + ण) / मांसकामः, मांसकामा

- (मांस + ङस् + कम् + णिङ् + ण) / मांसभक्षः, मांसभक्षा - (मांस + ङस् + भक्ष् + णिच् + ण) / कल्याणाचारः, कल्याणाचारा - (कल्याण + आ + चर् + ण)।

बाध्यबाधकभाव - यह ण प्रत्यय अण् प्रत्यय का अपवाद है।

(ध्यान रहे कि अण् प्रत्ययान्त से स्त्रीलिङ्ग में 'टिड्ढाणञ्. सूत्र से ङीप् होता है और णप्रत्ययान्त से 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् होता है। इसलिये उदाहरणों में टाप् प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिङ्ग बनाकर दिखाया है।)

ईक्षिक्षमिभ्यां चेति वक्तव्यम् (वा.) - ईक्ष् तथा क्षम् धातुओं से कर्मोपपद में ण प्रत्यय होता है तथा पूर्वपद को प्रकृति स्वर भी होता है। सुखप्रतीक्षः, सुखप्रतीक्षा (सुख + ङस् + प्रति + ईक्ष् + ण) / बहुक्षमः, बहुक्षमा (बहु + क्षम् + ण)।

ह्वावामश्च - (३.२.२) - ह्वेञ्, वेञ्, माङ् इन धातुओं से भी कर्म उपपद में रहते अण् प्रत्यय होता है। पुत्रं ह्वयतीति पुत्रह्वायः - (पुत्र + ङस् + ह्वे + अण्) / तन्तुवायः - (तन्तु + ङस् + वेञ् + अण्) / धान्यमायः - (धान्य + ङस् + मा + अण्)।

बाध्यबाधकभाव -

अभी हमने जाना कि 'कर्मण्यण्' सूत्र कर्म उपपद में होने पर धातुमात्र से 'अण्' प्रत्यय का विधान करता है। किन्तु आगे ३.२.५८ तक जो सूत्र आ रहे हैं, वे कर्म उपपद में होने पर धातुओं से अन्य अन्य प्रत्ययों का विधान कर रहे हैं। अतः उन्हें अण् प्रत्यय का अपवाद समझना चाहिये। ऐसी स्थिति में प्रश्न होता है कि हम किस धातु से किस कर्म के उपपद में होने पर कौन सा प्रत्यय लगायें ?

इसे इस प्रकार समझना चाहिये -

सामान्य रूप से तो पूरे व्याकरणशास्त्र में उत्सर्ग की प्रवृत्ति इस प्रकार होती है कि जहाँ जहाँ अपवाद शास्त्र की प्रवृत्ति हो रही है, वहाँ तो अपवाद शास्त्र ही लगता है और जहाँ अपवाद शास्त्र की प्रवृत्ति नहीं हो रही है, वहाँ ही उत्सर्ग शास्त्र लगता है।

किन्तु कृत् प्रत्ययों के लिये 'वाऽसरूपोऽस्त्रियाम्' सूत्र कहता है कि असरूप अपवादप्रत्यय उत्सर्ग का विकल्प से बाधक होता है। और सरूप अपवाद प्रत्यय उत्सर्ग का नित्य बाधक होता है।

अतः कृत् प्रत्ययों में अनुबन्धों को हटाने के बाद उत्सर्ग और अपवाद प्रत्ययों की आकृति देखना चाहिये। यदि वे एक ही समान हैं, तब तो अपवाद प्रत्यय उत्सर्ग प्रत्यय को सर्वथा बाध लेगा और अपने स्थल पर उत्सर्ग को लगने ही नहीं देगा।

जैसे - अण्=अ और क=अ, ये दोनों प्रत्यय सरूप हैं, क्योंकि अनुबन्धकार्य करने

के बाद दोनों ही 'अ' हैं। सरूप अपवादप्रत्यय होने के कारण क प्रत्यय, उत्सर्ग प्रत्यय अण् का नित्य बाधक होगा। अत: जिस स्थल के लिये 'क' कहा जा रहा है, वहाँ 'अण्' बिल्कुल नहीं होगा।

किन्तु यदि कृत् प्रत्ययों में अनुबन्धों को हटाने के बाद उत्सर्ग और अपवाद प्रत्ययों की आकृति अलग अलग है, तब तो अपवाद प्रत्यय और उत्सर्ग प्रत्यय दोनों ही विकल्प से लग सकते हैं।

अण् प्रत्यय के अपवाद प्रत्यय

क प्रत्यय

आतोऽनुपसर्गे क: - (३.२.३) - अनुपसर्ग आकारान्त धातुओं से कर्म उपपद में रहते क प्रत्यय होता है। गां ददातीति गोद: (गो + ङस् + दा + क) / इसी प्रकार - कम्बलद:। पार्ष्णित्रम् (पार्ष्णि + ङस् + त्रा + क) / इसी प्रकार - अङ्गुलित्रम्।

उपसर्ग होने पर अण् होकर - गोसंदाय:, वडवासंदाय:।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क' की अनुवृत्ति ३.२.७ तक जायेगी।

बाध्यबाधकभाव - यह क प्रत्यय अण् प्रत्यय का अपवाद है।

सुपि स्थ: - (३.२.४) -

इस सूत्र का योग विभाग करके इसके दो सूत्र बना लेते हैं। पहिला है -

सुपि - इसमें ऊपर के सूत्र से 'आत:' की अनुवृत्ति लेकर अर्थ हुआ - सुबन्त उपपद होने पर आकारान्त धातुओं से कर्ता अर्थ में क प्रत्यय होता है। यथा - द्वाभ्यां पिबति इति द्विप: - (द्वि + भ्याम् + पा + क) / इसी प्रकार कच्छेन पिबति इति कच्छप:। समे तिष्ठतीति समस्थ: (सम + ङि + स्था + क) / इसी प्रकार - विषमस्थ:।

दूसरा योग बना -

स्थ: - इसमें ऊपर के सूत्र से सुपि की अनुवृत्ति लेकर अर्थ हुआ - सुबन्त उपपद में रहते स्था धातु से क प्रत्यय होता है। यह प्रत्यय योगविभागारम्भसामर्थ्यात् भाव अर्थ में भी हो सकता है। अत: आखूनाम् उत्थानम् आखूत्थ:, चूहों की बढ़त (आखु + ङस् + उत् + स्था + क) / इसी प्रकार - शलभानाम् उत्थानम् शलभोत्थ:।

प्रतिष्ठते इति प्रष्ठो गौ:। द्वयो: तिष्ठति इति द्विष्ठ:। त्रिषु तिष्ठति इति त्रिष्ठ:।

आवश्यक - यहाँ से आगे 'सुपि' तथा 'कर्मणि' दोनों पदों की अनुवृत्ति चलती है। जिन सूत्रों में सकर्मक धातुओं का सम्बन्ध होगा, वहाँ कर्मणि की अनुवृत्ति लगाइये

तथा जहाँ अकर्मक धातुओं का सम्बन्ध होगा, वहाँ सुपि की अनुवृत्ति लगाइये। ऐसा ही आगे सर्वत्र समझें।

अत: जहाँ जहाँ 'कर्मणि' की अनुवृत्ति जायेगी, उन उन प्रत्ययों को 'अण्' का अपवाद समझना चाहिये। जहाँ केवल 'सुपि' की अनुवृत्ति जायेगी, उन उन प्रत्ययों को 'अण्' का अपवाद नहीं समझना चाहिये।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'सुपि' की अनुवृत्ति ३.२.८३ तक जायेगी।

तुन्दशोकयो: परिमृजापनुदो: - (३.२.५) - तुन्द तथा शोक कर्म उपपद में रहते यथासङ्ख्य करके परिपूर्वक मृज् तथा अपपूर्वक नुद् धातु से क प्रत्यय होता है। तुन्दं परिमार्ष्टि तुन्दपरिमृज आस्ते - (तुन्द + ङस् + परिमृज् + क) / शोकम् अपनुदति शोकापनुद: पुत्रो जात: - (शोक + ङस् + अपनुद् + क)।

बाध्यबाधकभाव - यह क प्रत्यय अण् प्रत्यय का अपवाद है।

आलस्यसुखाहरणयोरिति वक्तव्यम् (वा.) - आलस्य तथा सुखाहरण अर्थ में परिपूर्वक मृज् धातु से तथा अपपूर्वक नुद धातु से भी क प्रत्यय होता है। अलसस्तुन्द परिमृज उच्यते। अन्य अर्थ होने पर अण् प्रत्यय होकर तुन्दपरिमार्ज: बनता है।

इसी प्रकार - सुखस्याहर्ता शोकापनुद:। अन्य अर्थ होने पर अण् प्रत्यय होकर शोकापनोद: ही बनता है।

कप्रकरणे मूलविभुजादिभ्य उपसंख्यानम् (वा.) - मूलविभुजादि शब्द भी क प्रत्यय के द्वारा ही समझना चाहिये। मूलानि विभुजतीति मूलविभुजो रथ: - (मूल + ङस् + वि + भुज् + क) / नखमुचानि धनूंषि - (नख + आम् + मुच् + क) / काकगुहास्तिला:। कौ मोदते कुमुदम् - (कु + ङि + मुद् + क) / महीं धरति इति महीध्र: - (मही + ङस् + धृ + क)। काकगुहास्तिला:। गिलति इति गिल:।

मूलविभुज। नखमुच। काकगुह। कुमुद। महीध्र। कुध्र। गिध्र। **आकृतिगणोऽयम्।। इति मूलविभुजादय:।।**

विशेष - आकृतिगण होने का तात्पर्य यह है कि ये शब्द इतने ही नहीं हैं, अपितु इसी प्रकार के जो भी शब्द दिखें, उन्हें इसी गण का समझ लेना चाहिये।

बाध्यबाधकभाव - यह क प्रत्यय अण् प्रत्यय का अपवाद है।

प्रे दाज्ञ: - (३.२.६) - प्रपूर्वक दा रूप धातुओं से तथा ज्ञा धातु से कर्म उपपद में रहते क प्रत्यय होता है। विद्यां प्रददाति विद्याप्रद: - (विद्या + ङस् + प्र + दा +

क) / शास्त्राणि प्रकर्षेण जानातीति शास्त्रप्रज्ञः - (शास्त्र + ङस् + प्र + ज्ञा + क) / इसी प्रकार पन्थानं प्रकर्षेण जानाति इति पथिप्रज्ञः ।

इसमें 'अनुपसर्गे' की अनुवृत्ति है। अतः प्र के अतिरिक्त किसी अन्य उपसर्ग के उपपद में होने पर क न होकर अण् ही होगा - गोसम्प्रदायः ।

बाध्यबाधकभाव - यह क प्रत्यय अण् प्रत्यय का अपवाद है।

समि ख्यः - (३.२.७) - कर्म उपपद में रहते सम्पूर्वक ख्याञ् धातु से क प्रत्यय होता है। गां सञ्चष्टे गो संख्यः (गो + ङस् + सम् + ख्या + क), इसी प्रकार - अविसंख्यः ।

टक् प्रत्यय

गापोष्टक् - (३.२.८) - कर्म उपपद में रहते गा तथा पा धातुओं से टक् प्रत्यय होता है। शक्रं गायति शक्रगः - (शक्र + ङस् + गै + टक्) / इसी प्रकार साम गायति सामगः ।

बाध्यबाधकभाव - यह टक् प्रत्यय अण् प्रत्यय का अपवाद है।

सुराशीध्वोः पिबतेरिति वक्तव्यम् (वा.) - सुरा तथा शीधु शब्द उपपद में होने पर भी पा धातु से टक् प्रत्यय होता है। सुरां पिबति सुरापः - (सुरा + ङस् + पा + क) / इसी प्रकार - शीधुपः (शीधु + ङस् + पा + क)।

(ध्यान रहे कि टित् होने के कारण स्त्रीलिङ्ग में 'टिड्ढाणञ्-' सूत्र से ङीप् होता है - सामगी, शक्रगी, सुरापी, शीधुपी)

बाध्यबाधकभाव - यह टक् प्रत्यय अण् प्रत्यय का अपवाद है।

बहुलं छन्दसीति वक्तव्यम् (वा.) - वेद में टक् प्रत्यय बहुल करके होता है। या ब्राह्मणी सुरापी भवति नैनां देवाः पतिलोकं नयन्ति।

अच् प्रत्यय

हरतेरनुद्यमनेऽच् - (३.२.९) - उद्यमन का अर्थ है - उत्क्षेपण अर्थात् उठाना। यह उद्यमन अर्थ न होने पर हृञ् धातु से कर्म उपपद में रहते अच् प्रत्यय होता है।

भागं हरति भागहरः - (भाग + ङस् + हृ + अच्) / इसी प्रकार - रिक्थहरः । अंशहरः । उद्यमन अर्थ होने पर अण् होकर - भारहारः ।

बाध्यबाधकभाव - यह अच् प्रत्यय अण् प्रत्यय का अपवाद है।

अनुवृत्ति - यहाँ से हरतेः की अनुवृत्ति ३.२.११ तक तथा अच् की अनुवृत्ति ३.२.१५ तक जायेगी।

अच्प्रकरणे शक्तिलाङ्गलाङ्कुशयष्टितोमरघटघटीधनुःषु ग्रहेरुपसंख्यानम् (वा.) - शक्ति, लाङ्गल, अङ्कुश, यष्टि, तोमर, घट, घटी तथा धनुः शब्द उपपद में होने पर ग्रह् धातु से अच् प्रत्यय होता है। शक्तिं गृह्णाति इति शक्तिग्रहः (शक्ति + ङस् + ग्रह् + अच्) / इसी प्रकार - लाङ्गलग्रहः, अङ्कुशग्रहः, यष्टिग्रहः, तोमरग्रहः, घटग्रहः, घटीग्रहः, धनुर्ग्रहः।

सूत्रे च धार्यर्थे - सूत्र उपपद में होने पर 'धारण करने वाला' अर्थ होने पर ग्रह् धातु से अच् प्रत्यय होता है। सूत्रं धारयति इति सूत्रग्रहः।

जो केवल सूत्र को केवल पकड़े, धारण न करे, वहाँ अण् होकर - सूत्रग्राहः।

वयसि च - (३.२.१०) - वयस् = अवस्था = आयु गम्यमान हो तो भी कर्म उपपद में रहते हृञ् धातु से अच् प्रत्यय होता है।

अस्थिहरः श्वा - इतना बडा कुत्ता, जो कि हड्डी ले जा सकता है। कवचहरः क्षत्रियकुमारः - इतना बड़ा क्षत्रियकुमार, जो कि कवच धारण कर सकता है।।

आङि ताच्छील्ये - (३.२.११) - आङ्पूर्वक हृञ् धातु से कर्म उपपद में रहते ताच्छील्य (तत्स्वभावता) गम्यमान हो, तो अच् प्रत्यय होता है। फलानि आहरति फलाहरः, (फल + आम् + आङ् + हृ + अच्) / इसी प्रकार - पुष्पाहरः।

ताच्छील्य (तत्स्वभावता) गम्यमान न होने पर अण् होकर - भाराहारः।

अर्हः - (३.२.१२) - अर्ह पूजायाम् धातु से कर्म उपपद में रहते अच् प्रत्यय होता है। पूजां अर्हति पूजार्हा (पूजा + ङस् + अर्ह + अच्) इसी प्रकार -

गन्धार्हा, मालार्हा, आदरार्हा।

यह अच् प्रत्यय अण् प्रत्यय का अपवाद है। यद्यपि अण् और अच् प्रत्यय लगने पर रूप समान ही बनता है, तो भी अच् इसलिये किया है कि अण् लगने पर स्त्रीलिङ्ग में टिड्ढाणञ्. सूत्र से ङीप् होता, अब अच् कर देने से 'अजाद्यतष्टाप्' से टाप् हुआ है।

स्तम्बकर्णयो रमिजपोः - ३.२.१३ - स्तम्ब तथा कर्ण उपपद में होने पर रम् तथा जप् धातुओं से अच् प्रत्यय होता है। स्तम्बे रमते स्तम्बेरमः - (स्तम्ब + ङि + रम् + अच्)। ध्यान रहे कि यहाँ 'तत्पुरुषे कृति बहुलम्' (६.३.१४) से विभक्ति का अलुक् होता है। इसी प्रकार - कर्णे जपति कर्णेजपः।

हस्तिसूचकयोरिति वक्तव्यम् (वा.) - रम् तथा जप् धातु से क्रमशः हस्ति तथा सूचक अर्थों में ही अच् प्रत्यय होता है। स्तम्बे रमते स्तम्बेरमः हस्ती। कर्णे जपतीति कर्णेजपः सूचकः।

शमि धातोः संज्ञायाम् - ३.२.१४ - शम् अव्यय के उपपद में रहते धातुमात्र से संज्ञाविषय में अच् प्रत्यय होता है। शम् करोति इति शङ्करः(शम् + कृ + अच्)। सम्भवः(सम् + भू + अच्) / शम्वदः (शम् + वद् + अच्)।

बाध्यबाधकभाव - यह अच् प्रत्यय आगे कहे जाने वाले ट प्रत्यय का अपवाद है।

ध्यातव्य - प्रश्न होता है कि जब 'धातोः' का अधिकार चल ही रहा था, तब इस सूत्र में पुनः 'धातोः' क्यों कहा ?

इसका समाधान यह है कि आगे 'कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु' सूत्र कृ धातु से हेतु, ताच्छील्य और आनुलोम्य अर्थों में ट प्रत्यय कह रहा है, किन्तु शम् उपपद में होने पर इन अर्थों में प्रत्यय करके भी यदि समुदाय का अर्थ संज्ञा ही हो, तब कृ धातु से ट प्रत्यय न होकर अच् ही हो। शंकरा नाम परिव्राजिका (शम् करना जिसका शील-स्वभाव है, ऐसी शंकरा नाम की परिव्राजिका)। इसी प्रकार - शंकरा नाम शकुनिका।

फल यह है कि यदि ट प्रत्यय होता तो टित् होने के कारण स्त्रीलिङ्ग में 'टिड्ढाणञ्-' सूत्र से ङीप् होकर शंकरी बनता। उसे बाधकर संज्ञा अर्थ में अच् कर दिया है अतः स्त्रीलिङ्ग में अजाद्यतष्टाप् से टाप् होकर शंकरा बना है।

अधिकरणे शेते - (३.२.१५) - अधिकरण सुबन्त उपपद में रहते शीङ् धातु से अच् प्रत्यय होता है। खे शेते खशयः। (ख + ङि + शी + अच्) इसी प्रकार - गर्त्ते शेते गर्त्तशयः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'अधिकरणे' की अनुवृत्ति ३.२.१६ तक जायेगी।

पार्श्वादिषूपसंख्यानम् (वा.) - पार्श्व आदि शब्दों के उपपद में होने पर भी शीङ् धातु से अच् प्रत्यय होता है। पार्श्वाभ्यां शेते पार्श्वशयः। उदरशयः। पृष्ठशयः।

पार्श्व। उदर। पृष्ठ। उत्तान। अवमूर्धन् **।। इति पार्श्वादि।।**

दिग्धसहपूर्वाच्च (वा.) - दिग्धसह शब्द उपपद में होने पर भी शीङ् धातु से अच् प्रत्यय होता है। दिग्धेन सह शेते दिग्धसहशयः।

उत्तानादिषु कर्तृषु (वा.) - कर्तृवाचक उत्तान आदि शब्दों के उपपद में होने पर अच् प्रत्यय होता है। उत्तानः शेते उत्तानशयः (सीधा सोने वाला)। अवमूर्द्धा शेते अवमूर्द्धशयः (सिर के बल सोने वाला)।

गिरौ डश्छन्दसि (वा.) - वेद में गिरि पूर्वक शीङ् धातु से ड प्रत्यय होता है। गिरौ शेते गिरिशः। (गिरि + ङि + शी + ड)। डित् होने के कारण टेः सूत्र से टि का लोप हुआ है। लोक में अच् प्रत्यय हाकर गिरिशयः ही बनता है।

(ध्यान रहे कि 'गिरिशमुपचचार प्रत्यहं सा सुकेशी' इस वाक्य में गिरिः अस्य अस्ति इति इस अर्थ में गिरि शब्द से लोमादित्वात् श, यह तद्धित प्रत्यय हुआ है।)

ट प्रत्यय

चरेष्टः - (३.२.१६) - अधिकरण सुबन्त उपपद में होने पर चर् धातु से ट प्रत्यय होता है। कुरुषु चरति कुरुचरः (कुरु + सुप् + चर् + ट)। इसी प्रकार - मद्रचरः। टित् होने के कारण स्त्रीलिङ्ग में 'टिड्ढाणञ्-' सूत्र से ङीप् होकर - कुरुचरी, मद्रचरी।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ट' की अनुवृत्ति ३.२.२३ तक जायेगी तथा 'चरे' की अनुवृत्ति ३.२.१७ तक जायेगी।

भिक्षासेनादायेषु च - (३.२.१७) - भिक्षा, सेना, आदाय शब्द उपपद रहते भी चर् धातु से ट प्रत्यय होता है। भिक्षां चरति भिक्षाचरः (भिक्षा + ङस् + चर् + ट)। सेनां चरति सेनाचरः (सेना + ङस् + चर् + ट)। आदाय चरति आदायचरः (आदाय + चर् + ट)।

पुरोग्रतोऽग्रेषु सर्तेः - (३.२.१८) - पुरस्, अग्रतस्, अग्रे, ये अव्यय उपपद रहते सृ धातु से ट प्रत्यय होता है। पुरः सरति = पुरस्सरः। अग्रतः सरति = अग्रतस्सरः। अग्रेसरः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'सर्तेः' की अनुवृत्ति ३.२.१९ तक जायेगी।

पूर्वे कर्तरि - (३.२.१९) - कर्तृवाची पूर्व शब्द उपपद हो तो सृ धातु से ट प्रत्यय होता है। पूर्वः सरति = पूर्वसरः (पूर्व + सु + सृ + ट)।

कर्ता अर्थ न होने पर अण् होकर - पूर्व + ङस् + सृ + अण् होकर पूर्वसारः ही बनेगा।

कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु - (३.२.२०) - कर्म उपपद में रहते कृञ् धातु से हेतु, ताच्छील्य, आनुलोम्य अर्थ गम्यमान हों, तो ट प्रत्यय होता है।

हेतौ - शोककरी अविद्या (शोक + ङस् + कृ + ट), इसी प्रकार - यशस्करी विद्या। ताच्छील्ये - धर्मं करोति = धर्मकरः, अर्थकरः।

आनुलोम्ये - वचनं करोति = वचनकरः पुत्रः। इसी प्रकार - आज्ञाकरः शिष्यः, प्रैषकरः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'कृञ्' की अनुवृत्ति ३.२.२४ तक जायेगी।

दिवाविभानिशाप्रभाभास्कारान्तानन्तादिबहुनान्दीकिंलिपिलिबिबलिभक्तिकर्तृचित्रक्षेत्रसंख्याजङ्घाबाह्वहर्यत्तद्धनुररुःषु - (३.२.२१) -

अनुवृत्ति - इसमें सुपि और कर्मणि दोनों की अनुवृत्ति है।

दिवा, विभा, निशा, इत्यादि सुबन्त कर्म उपपद में रहते कृञ् धातु से ट प्रत्यय होता है। दिवा करोति प्राणिनश्चेष्टायुक्तान् इति दिवाकरः (दिवा + कृ + ट)।

विभां करोति इति विभाकरः (विभा + ङस् + कृ + ट)।

प्रभां करोति इति प्रभाकरः। भासं करोति इति भास्करः।

इसी प्रकार - कारकरः (कर एव कारः)। अन्तकरः। अनन्तकरः। आदिकरः। बहुकरः। नान्दीकरः। किङ्करः। लिपिकरः। लिबिकरः। बलिकरः। भक्तिकरः। कर्तृकरः। चित्रकरः। क्षेत्रकरः। सङ्ख्या उपपद में होने पर - एककरः, द्विकरः, त्रिकरः। जङ्घाकरः। बाहुकरः। अहस्करः। यत्करः। धनुष्करः। अरुष्करः।

किंयत्तद्बहुषु कृञोऽज्विधानम् (वार्तिक) - किम्, यत्, तद् तथा बहु शब्द उपपद में होने पर कृञ् धातु से अच् प्रत्यय होता है। किंकरा (किम् + कृ + अच्)। इसी प्रकार - यत्करा। तत्करा। बहुकरा। पुयोग में ङीष् करके - किंकरी।

विशेष - यह अच् प्रत्यय ट प्रत्यय का अपवाद है। ट लगने पर स्त्रीलिङ्ग में टिड्ढाणञ्. सूत्र से ङीप् होता है, और अच् लगने से अजाद्यतष्टाप् से टाप् हुआ है।

कर्मणि भृतौ - (३.२.२२) - कर्मवाची कर्म शब्द उपपद रहते कृञ् धातु से ट प्रत्यय होता है, भृति=वेतन गम्यमान हो तो। कर्म करोतीति कर्मकरः।

न शब्दश्लोककलहगाथावैरचाटुसूत्रमन्त्रपदेषु - (३.२.२३) - शब्द श्लोक आदि कर्म उपपद में रहते कृञ् धातु से ट प्रत्यय नहीं होता है।

ध्यान दें कि कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु ३.२.२० सूत्र से हेतु, ताच्छील्य, आनुलोम्य अर्थ में कृ धातु से जो ट प्रत्यय कहा गया है, उसका यह सूत्र प्रतिषेध कर रहा है। अतः ट प्रत्यय का प्रतिषेध होने से कर्मण्यण् से यथाप्राप्त अण् हो जाता है।

शब्दं करोति = शब्दकारः (शब्द + ङस् + कृ + अण्)।

इसी प्रकार - श्लोकं करोति = श्लोककारः। कलहं करोति = कलहकारः। गाथां करोति = गाथाकारः। वैरं करोति = वैरकारः। चाटु करोति = चाटुकारः। सूत्रं करोति

= सूत्रकारः। मन्त्रं करोति = मन्त्रकारः। पदं करोति = पदकारः।

इन् प्रत्यय

स्तम्बशकृतोरिन् - (३.२.२४) - स्तम्ब और शकृत् कर्म उपपद में हो तो कृञ् धातु से इन् प्रत्यय होता है।

व्रीहिवत्सयोरिति वक्तव्यम् (वा.) - स्तम्ब और शकृत् उपपद में होने पर कृ धातु से इन् प्रत्यय होता है, क्रमशः व्रीहि और वत्स अभिधेय होने पर।

स्तम्बं करोति इति स्तम्बकरिः व्रीहिः। (स्तम्ब + ङस् + कृ + इन्)।

शकृत् करोति इति शकृत्करिः वत्सः। (शकृत् + ङस् + कृ + इन्)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'इन्' की अनुवृत्ति ३.२.२७ तक जायेगी।

हरतेर्दृतिनाथयोः पशौ - (३.२.२५) - दृति तथा नाथ, ये कर्म उपपद में रहते हृञ् धातु से पशु कर्ता होने पर इन् प्रत्यय होता है। दृतिं हरति इति दृतिहरिः पशुः। (दृति + ङस् + हृ + इन्)। इसी प्रकार - नाथहरिः पशुः।

फलेग्रहिरात्मंभरिश्च - (३.२.२६) - फलेग्रहि और आत्मम्भरि शब्द इन् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं। फलानि गृह्णाति = फलेग्रहिर्वृक्षः। आत्मानं बिभर्ति आत्मम्भरिः।

छन्दसि वनसनरक्षिमथाम् - (३.२.२७) - वेद विषय में वन, सन, रक्ष तथा मथ धातुओं से कर्म उपपद में होने पर इन् प्रत्यय होता है। ब्रह्मवनिं त्वां ब्रह्मवनिं। (ब्रह्म + ङस् + वन् + इन्)। इसी प्रकार - गोसनिः। यौ पथिरक्षी श्वानौ। हविर्मथीनाम्।

खश् प्रत्यय

ध्यान रहे कि खश् प्रत्यय शित् है। शित् होने के कारण धातुओं को शित् परे होने वाले सारे कार्य होंगे। यथा - पा को पिब्, घ्रा को जिघ्र, दृश् को पश्य्, हा को जहा आदि।

शित् होने से खश् प्रत्यय सार्वधातुक है। सार्वधातुक होने के कारण खश् परे होने पर धातुओं से उस गण का विकरण होगा, जिस गण का वह धातु है।

एजेः खश् - (३.२.२८) - एजृ कम्पने इस ण्यन्त धातु से कर्म उपपद में रहते खश् प्रत्यय होता है। जनान् एजयति = जनमेजयः - (जन + ङस् + एज् + णिच् + शप् + खश्)। इसी प्रकार - अङ्गमेजयति इति अङ्गमेजयः। वृक्षमेजयः।

बाध्यबाधकभाव - यह खश् प्रत्यय अण् प्रत्यय का अपवाद है।

खश्प्रत्यये वातशुनीतिलशर्द्धेष्वजधेट्तुदजहातीनामुपसंख्यानम् (वा.) - वात, शुनी, तिल तथा शर्द्ध उपपद में होने पर अज्, धेट्, तुद् तथा ओहाक् धातुओं से खश् प्रत्यय होता है।

वातं अजन्ति इति वातमजा मृगाः - (वात + ङस् + अज् + शप् + खश्)। तिलं तुदति इति तिलन्तुदः (तिल + ङस् + तुद् + श + खश्)। शर्धं जहति इति शर्द्धञ्जहा माषाः (शर्ध + ङस् + हा + शप्श्लु + खश्)। शुनीं धयति इति शुनिन्धयः - (शुनी + ङस् + धे + शप् + खश्)।

(खिदन्त परे होने पर 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' से मुम् का आगम होता है, तथा 'खित्यनव्ययस्य' से ह्रस्व होता है।)

अनुवृत्ति - यहाँ से 'खश्' की अनुवृत्ति ३.२.३७ तक जायेगी।

नासिकास्तनयोर्ध्माधेटोः - (३.२.२९) - नासिका और स्तन कर्म उपपद में रहते ध्मा और धेट् धातुओं से खश् प्रत्यय होता है। नासिकां धमति इति नासिकन्धमः - (नासिका + ङस् + धे + शप् + खश्) नासिकन्धयः।

स्तने धेटः (वा.) - स्तन उपपद में होने पर धेट् धातु से ही खश् प्रत्यय होता है। स्तनं धयति इति स्तनन्धयः।

नासिकायां तु ध्मश्च धेटश्च (वा.) - नासिका शब्द उपपद में होने पर ध्मा तथा धेट् दोनों ही धातुओं से खश् प्रत्यय होता है। नासिकन्धमः। नासिकंधयः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ध्माधेटोः' की अनुवृत्ति ३.२.३० तक जायेगी।

नाडीमुष्ट्योश्च - (३.२.३०) - नाडी और मुष्टि कर्म उपपद रहते भी ध्मा तथा धेट् धातुओं से खश् प्रत्यय होता है। नाडिन्धमः। नाडिन्धयः। मुष्टिन्धमः। मुष्टिन्धयः।

उदि कूले रुजिवहोः - (३.२.३१) - उत् पूर्वक रुज् तथा वह् धातुओं से 'कूल' कर्म उपपद में रहते खश् प्रत्यय होता है। कूलमुद्रुजति = कूलमुद्रुजो रथः (कूल + ङस् + रुज् + श + खश्)। कुलमुद्वहति = कूलमुद्वहः (कूल + ङस् + उद् + वह् + शप् + खश्)।

वहाभ्रे लिहः - (३.२.३२) - वह तथा अभ्र कर्म उपपद में रहते लिह् धातु से खश् प्रत्यय होता है। वहं लेढि = वहंलिहो गौः (वह + ङस् + लिह् + शब्लुक् + खश्)। इसी प्रकार - अभ्रंलिहो वायुः।

परिमाणे पचः - (३.२.३३) - परिमाणवाची कर्म उपपद हो तो पच् धातु से खश् प्रत्यय होता है।

प्रस्थं पचति प्रस्थंपचा स्थाली। (प्रस्थ + ङस् + पच् + शप् + खश्)।

इसी प्रकार - द्रोणम्पचः, खारिम्पचः कटाहः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'पचः' की अनुवृत्ति ३.२.३४ तक जायेगी।

मितनखे च - (३.२.३४) - मित और नख कर्म उपपद में हों, तो भी पच् धातु से खश् प्रत्यय होता है। मितं पचति मितम्पचा ब्राह्मणी। नखम्पचा यवागूः।

विध्वरुषोस्तुदः - (३.२.३५) - विधु और अरुस् कर्म उपपद में हो तो तुद धातु से खश् प्रत्यय होता है। विधुन्तुदः। अरुन्तुदः।

असूर्यललाटयोर्दृशितपोः - (३.२.३६) - असूर्य और ललाट कर्म उपपद में हो तो दृश् तथा तप् धातु से खश् प्रत्यय होता है।

असूर्यम्पश्या राजदाराः। (असूर्य + ङस् + दृश् + शप् + खश्)।

इसी प्रकार - ललाटन्तपः आदित्यः।

उग्रंपश्येरंमदपाणिंधमाश्च - (३.२.३७) - उग्रम्पश्य, इरम्मद तथा पाणिन्धम ये शब्द भी खश् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं। उग्रं पश्यतीति उग्रम्पश्यः। (उग्र + ङस् + दृश् + शप् + खश्)।

इरया माद्यति इति इरम्मदः। (इरा + ङस् + मद् + शप् + खश्)।

(खिदन्त परे होने पर 'अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम्' से मुम् का आगम हुआ है, तथा खित्यनव्ययस्य से ह्रस्व हुआ है।)। पाणयो ध्मायन्ते एष्विति पाणिन्धमाः पन्थानः।

(पाणि + ङस् + ध्मा + शप् + खश्)।

खच् प्रत्यय

ध्यान रहे कि खच् प्रत्यय शित् नहीं है। अतः यह सार्वधातुक भी नहीं है। अतः इसके लगने पर विकरणादि नहीं होंगे। किन्तु खित् होने के कारण मुम् का आगम होगा।

प्रियवशे वदः खच् - (३.२.३८) - प्रिय तथा वश कर्म उपपद में हों, तो वद् धातु से खच् प्रत्यय होता है। प्रियं वदति प्रियंवदः। खशंवदः।

खच्प्रकरणे गमेः सुप्युपसंख्यानम् (वा.) - सुबन्त उपपद में होने पर गम् धातु से भी खच् प्रत्यय होता है। मितं गच्छति इति मितंगमो हस्ती। मितंगमा हस्तिनी।

विहायसो विह च (वा.) - विहायस् उपपद में होने पर गम् धातु से खच् प्रत्यय

होता है तथा विहायस् को विह् आदेश भी होता है। विहायसा गच्छति इति विहंगमः।

खच्च डिद्वा वक्तव्यः (वा.) - विहायस् उपपद में परे होने पर गम् धातु से प्राप्त खच् प्रत्यय विकल्प से डितवत् होता है। डित् होने पर टेः सूत्र से टि का लोप होगा - विहंगः - (विहायस् + ङस् + गम् + शप् + खच्)।

डित् न होने पर टि का लोप नहीं होगा - विहंगमः।

डे च विहायसो विहादेशो वक्तव्यः - विहायस् उपपद में परे होने पर गम् धातु से ड प्रत्यय तथा विहायस् को विह् आदेश होता है। विहायस् + गम् + ड / विह + गम् + अ / टि का लोप होकर - विह + ग् + अ = विहगः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'खच्' की अनुवृत्ति ३.२.४७ तक जायेगी।

द्विषत्परयोस्तापेः - (३.२.३९) - द्विषत् तथा पर शब्द उपपद में हो तो ण्यन्त तप धातु से खच् प्रत्यय होता है। द्विषन्तं तापयति = द्विषन्तपः। परन्तपः।

वाचि यमो व्रते - (३.२.४०) - 'वाच्' कर्म उपपद हो तो यम् धातु से व्रत गम्यमान होने पर खच् प्रत्यय होता है। वाचं यच्छति इति वाचंयमः। वाचंयम आस्ते।

पूःसर्वयोर्दारिसहोः - (३.२.४१) - पुर्, सर्व ये कर्म उपपद हो तो ण्यन्त दृ विदारणे धातु से तथा सह् धातु से यथासङ्ख्य करके खच् प्रत्यय होता है। पुरं दारयति इति पुरन्दरः। (पुर् + ङस् + दृ + णिच् + खच्)। सर्वं सहते इति सर्वंसहः।

(ध्यान दें कि वाच् और पुर् शब्द अजन्त नहीं हैं, अतः इन्हें अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् से मुम् का आगम नहीं हो सकता था, अतः वाचंयमपुरन्दरौ (६.३.६८) सूत्र से इन्हें अमन्तत्व निपातन हुआ है।)

भगे च दारेरिति वक्तव्यम् (वा.) - 'भग' यह कर्म उपपद में हो तो ण्यन्त दारि धातु से भी खच् प्रत्यय होता है। भगं दारयति इति भगन्दरः। (भग + ङस् + दृ + णिच् + खच्)।

सर्वकूलाभ्रकरीषेषु कषः - (३.२.४२) - सर्व, कूल, अभ्र, करीष ये कर्म उपपद रहते कष् धातु से खच् प्रत्यय होता है। सर्वं कषति इति सर्वकषःखलः। कूलंकषा नदी। अभ्रंकषो गिरिः। करीषंकषा वात्या।

मेघर्तिभयेषु कृञः - (३.२.४३) - मेघ, ऋति, भय ये कर्म उपपद हो तो कृञ् धातु से खच् प्रत्यय होता है। मेघं करोति मेघंकरः। ऋतिंकरः। भयंकरः।

उपपदविधौ भयादिग्रहणं तदन्तविधिं प्रयोजयति (वा.) - भयान्त शब्द

उपपद में होने पर भी कृञ् धातु से खच् प्रत्यय होता है। अभयंकरः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'कृञः' की अनुवृत्ति ३.२.४४ तक जायेगी।

क्षेमप्रियमद्रेऽण्च - (३.२.४४) - क्षेम, प्रिय, मद्र ये कर्म उपपद रहते कृञ् धातु से अण् प्रत्यय होता है तथा चकार से खच् प्रत्यय भी होता है। अण् होने पर - क्षेमं करोति = क्षेमकारः। खच् होने पर - क्षेमं करोति - क्षेमंकरः। इसी प्रकार - प्रियकारः, प्रियंकरः। मद्रकारः, मद्रंकरः।

आशिते भुवः करणभावयोः - (३.२.४५) - आशित सुबन्त उपपद में हो तो भू धातु से करण और भाव में खच् प्रत्यय होता है।

करण अर्थ में - आशितः = तृप्तो भवत्यनेन आशितंभवः ओदनः। (ऐसा चावल, जिसके द्वारा तृप्त हुआ जाता है।) भाव अर्थ में = आशितस्य भवनम् इति आशितंभवं वर्त्तते। (तृप्त होना हो रहा है)

संज्ञायां भृतृवृजिधारिसहितपिदमः - (३.२.४६) - संज्ञा गम्यमान हो तो कर्म अथवा सुबन्त उपपद में रहते भृ, तृ, वृ, जि, धारि, सह, तप, दम, इन धातुओं से खच् प्रत्यय होता है। विश्वं बिभर्ति इति विश्वम्भरः परमेश्वरः। रथेन तरति इति रथन्तरं साम। पतिं वृणुते इति पतिंवरा कन्या। शत्रुं जयति इति शत्रुञ्जयः हस्ती। युगं धारयति इति युगन्धरः पर्वतः। शत्रुं सहते इति शत्रुंसहः। शत्रुं तपति इति शत्रुंतपः। अरिं दाम्यति अरिंदमः।

ध्यान रहे कि संज्ञा अर्थ न होने पर अण् ही होगा। कुटुम्बं बिभर्ति इति कुटुम्बभारः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'संज्ञायाम्' की अनुवृत्ति ३.२.४७ तक जायेगी।

गमश्च - (३.२.४७) - संज्ञा गम्यमान होने पर, कर्म उपपद में रहते गम् धातु से भी खच् प्रत्यय होता है। सुतं गच्छति सुतङ्गमः। (किसी व्यक्ति का नाम)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'गम' की अनुवृत्ति ३.२.४८ तक जायेगी।

ड प्रत्यय

अन्तात्यन्ताध्वदूरपारसर्वानन्तेषु डः - (३.२.४८) - अन्त, अत्यन्त, अध्व, दूर, पार, सर्व, अनन्त, कर्म उपपद में रहते ड प्रत्यय होता है। डित् होने पर 'टेः' सूत्र से टि का लोप होता है - अन्तं गच्छति इति अन्तगः। (अन्त + ङस् + गम् + ड)।

इसी प्रकार - अत्यन्तगः। अध्वगः। दूरगः। पारगः। सर्वगः। अनन्तगः।

डप्रकरणे सर्वत्रपन्नयोरुपसंख्यानम् (वा.) - सर्वत्र तथा पन्न शब्दों के उपपद

में रहने पर भी ड प्रत्यय होता है। सर्वत्रगः। पन्नगः।

उरसो लोपश्च (वा.) - उरस् शब्द उपपद में होने पर गम् धातु से ड प्रत्यय होता है तथा उरस् के सकार का लोप हो जाता है।

उरसा गच्छतीत्युरगः - (उरस् + टा + गम् + ड)।

सुदुरोरधिकरणे (वा.) - सु तथा दुर् उपपद में होने पर गम् धातु से अधिकरण गम्यमान होने पर ड प्रत्यय होता है। सुखेन गच्छत्यस्मिन् इति सुगः। दुर्गः।

निरो देशे (वा.) - निर् शब्द उपपद में होने पर भी गम् धातु से देश अर्थ में ड प्रत्यय होता है। निर्गः देशः।

डप्रकरणेऽन्येष्वपि दृश्यते (वा.) - अन्य कई शब्दों के उपपद में रहने पर भी ड प्रत्यय होता है। स्त्र्यगारगः। ग्रामगः। गुरुतल्पगः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ड' की अनुवृत्ति ३.२.५० तक जायेगी।

आशिषि हनः - (३.२.४९) - आशीर्वचन गम्यमान होने पर हन् धातु से कर्म उपपद में रहते ड प्रत्यय होता है। 'शत्रून् वध्यात्' इस अर्थ में हन् धातु से ड प्रत्यय होकर - शत्रुहस्ते पुत्रो भूयात्। (शत्रु + ङस् + हन् + ड = शत्रुहः)। (तुम्हारा ऐसा पुत्र हो, जो शत्रु को मारे।) दुःखहस्त्वं भूयाः। (तुम दुःख को दूर करने वाले बनो।)

दारावाहनोऽणन्तस्य च टः संज्ञायाम् (वा.) - दारु शब्द के उपपद में होने पर आङ्पूर्वक हन् धातु से अण् प्रत्यय होता है तथा अन्त को ट आदेश भी हो जाता है।

दारु आहन्ति दार्वाघाटः। (दारु + ङस् + आ + हन् + ड)।

चारौ वा (वा.) - चारु शब्द के उपपद में होने पर आङ्पूर्वक हन् धातु से अण् प्रत्यय होता है तथा अन्त को ट आदेश भी हो जाता है।

चारु आहन्ति चार्वाघाटः, चार्वाघातः।

समि कर्मणि च (वा.) - कर्म उपपद में होने पर सम्पूर्वक हन् धातु से अण् प्रत्यय होता है तथा विकल्प से टकारान्तादेश भी होता है।

वर्णान् संहन्ति वर्णसंघाटः, वर्णसंघातः। पदानि संहन्ति पदसंघाटः, पदसंघातः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'हन' की अनुवृत्ति ३.२.५५ तक जायेगी।

अपे क्लेशतमसोः - (३.२.५०) - क्लेश तथा तमस् कर्म उपपद रहते अपपूर्वक हन् धातु से ड प्रत्यय होता है। क्लेशापहः पुत्रः (क्लेश + ङस् + अप + हन् + ड)। इसी प्रकार - तमोपहः सूर्यः। (तमस् + ङस् + अप + हन् + ड)।

णिनि प्रत्यय

कुमारशीर्षयोर्णिनिः - (३.२.५१) - कुमार तथा शीर्ष कर्म उपपद में हो तो हन् धातु से णिनि प्रत्यय होता है। कुमारघाती। (कुमार + ङस् + हन् + णिनि)।

शीर्षघाती। (शिरस् + ङस् + हन् + णिनि)।

यहाँ शिरस् को निपातन से शीर्ष आदेश हुआ है।

लक्षणे जायापत्योष्टक् - (३.२.५२) - जाया तथा पति कर्म उपपद हो तो लक्षणवान् कर्ता अभिधेय हो तो हन् धातु से टक् प्रत्यय होता है। जायाघ्नो वृषलः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'टक्' की अनुवृत्ति ३.२.५४ तक जायेगी।

अमनुष्यकर्तृके च - (३.२.५३) - मनुष्य से भिन्न कर्ता है जिसका उस हन् धातु से भी कर्म उपपद में रहते टक् प्रत्यय होता है। श्लेष्मघ्नं मधु।

शक्तौ हस्तिकपाटयोः - (३.२.५४) - हस्तिन् तथा कपाट कर्म उपपद में रहते शक्ति गम्यमान हो तो हन् धातु से टक् प्रत्यय होता है। हस्तिनं हन्तुं शक्नोति हस्तिघ्नो मनुष्यः। कपाटं हन्तुं शक्नोति कपाटघ्नश्चौरः।

पाणिघताडघौ शिल्पिनि - (३.२.५५) - शिल्पी कर्ता वाच्य हो तो पाणि तथा ताड शब्द उपपद में होने पर हन् धातु से क प्रत्यय तथा हन् धातु की टि का लोप तथा ह् को घ् निपातन किया जाता है। पाणिघः। (पाणि + ङस् + हन् + क)।

इसी प्रकार - ताडघः।

राजघ उपसंख्यानम् (वा.) - राजघ शब्द भी निपातन किया जाता है। राजानं हन्ति राजघः।

ख्युन् प्रत्यय

आढ्यसुभगस्थूलपलितनग्नान्धप्रियेषु च्व्यर्थेष्वच्वौ कृञः करणे ख्युन् - (३.२.५६) - आढ्य, सुभग, स्थूल, पलित, नग्न, अन्ध और प्रिय शब्द, च्व्यर्थ में वर्तमान हों किन्तु च्विप्रत्ययान्त न हों, ऐसे कर्म उपपद रहते कृञ् धातु से करण कारक में ख्युन् प्रत्यय होता है।

अनाढ्यम् आढ्यं कुर्वन्त्यनेन आढ्यंकरणम् - आढ्य + ङस् + कृ + ख्युन्, (जो धनाढ्य नहीं है, उसे धनाढ्य बनाया जाता है, जिसके द्वारा)। सुभगंकरणम् (जो कल्याणयुक्त नहीं है, उसे कल्याणयुक्त बनाया जाता है, जिसके द्वारा)। स्थूलंकरणम् (जो स्थूल नहीं है, उसे स्थूल बनाया जाता है, जिसके द्वारा)। पलितंकरणम् (जो वृद्ध नहीं

है, उसे वृद्ध बनाया जाता है, जिसके द्वारा)। इसी प्रकार - नग्नंकरणम्। अन्धंकरणम्। प्रियंकरणम्, आदि।

विशेष - च्व्यर्थ न होने पर 'करणाधिकरणयोः' सूत्र से करण अर्थ में ल्युट् होगा - आढ्यीकुर्वन्त्यनेन।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'आढ्यसुभगस्थूलपलितनग्नान्धप्रियेषु च्व्यर्थेष्वच्वौ' की अनुवृत्ति ३.२.५७ तक जायेगी।

खिष्णुच्, खुकञ् प्रत्यय

कर्तरि भुवः खिष्णुच्खुकञौ - (३.२.५७) - च्व्यर्थ में वर्तमान अच्व्यन्त आढ्यादि सुबन्त उपपद में होने पर, कर्ताकारक में भू धातु से खिष्णुच् तथा खुकञ् प्रत्यय होते हैं।

अनाढ्य आढ्य भवति आढ्यंभविष्णुः, आढ्यंभावुकः। इसी प्रकार - पलितंभविष्णुः पलितंभावुकः। नग्नं भविष्णुः नग्नंभावुकः।

क्विन् प्रत्यय

स्पृशोऽनुदके क्विन् - (३.२.५८) - उदक भिन्न सुबन्त उपपद में हो तो स्पृश् धातु से क्विन् प्रत्यय होता है। मन्त्रेण स्पृशति मन्त्रस्पृक्। (मन्त्र + टा + स्पृश् + क्विन्)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क्विन्' की अनुवृत्ति ३.२.६० तक जायेगी।

ऋत्विग्दधृक्स्रग्दिगुष्णिगञ्चुयुजिक्रुञ्चां च - (३.२.५९) - ऋत्विक्, दधृक्, स्रक्, दिक्, उष्णिक् ये पाँच शब्द क्विन् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं तथा अञ्चु, युजि, क्रुञ्च् धातुओं से भी क्विन् प्रत्यय होता है।

ऋतुं यजति अथवा ऋतुप्रयुक्तो यजति इति ऋत्विक्। धृष्णोति इति दधृक्। सृजन्ति तां सा स्रक्। दिशन्ति तां सा दिक्। उष्णिक्। प्राङ्, प्रत्यङ्, उदङ्। युङ्, युञ्जौ, युञ्जः। क्रुङ्, क्रुञ्चौ, क्रुञ्चः।

कञ्, क्विन्, क्स प्रत्यय

त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ्च - (३.२.६०) - त्यदादि शब्द उपपद में रहने पर, अनालोचन अर्थ में वर्तमान दृश् धातु से कञ् प्रत्यय होता है तथा चकार से क्विन् प्रत्यय भी होता है। त्यादृक्, त्यादृशः। तादृक्, तादृशः। यादृक्, यादृशः।

समानान्ययोश्चेति वक्तव्यम् (वा.) - समान तथा अन्य शब्दों के उपपद में होने पर भी उपर्युक्त दोनों प्रत्यय होते हैं। सदृक्, सदृशः। अन्यादृक्, अन्यादृशः।

दृशेः क्सश्च वक्तव्यम् - त्यादादि उपपद में होने पर दृश् धातु से क्स प्रत्यय होता है। यादृक्षः, तादृक्षः, अन्यादृक्षः, कीदृक्षः।

क्विप् प्रत्यय

सत्सूद्विषद्रुहदुहयुजविदभिदच्छिदजिनीराजामुपसर्गेऽपि क्विप् - (३.२.६१) - सुबन्त उपपद में होने पर सोपसर्ग अथवा निरुपसर्ग सद्, सू, द्विष् आदि सूत्रपठित धातुओं से क्विप् प्रत्यय होता है।

सद् - वेद्यां सीदति वेदिषत्। शुचिषत्। अन्तरिक्षे सीदति अन्तरिक्षसत्। प्रसत्। सू - वत्सं सूते वत्ससूः गौः। अण्डसूः। शतसूः। प्रसूः। द्विष् - मित्रं द्वेष्टि मित्रद्विट्, प्रद्विट्। द्रुह् - मित्रध्रुक्, प्रध्रुक्। दुह् - गोधुक्, प्रधुक्। युज् - अश्वयुक्, प्रयुक्। विद् - वेदवित्, ब्रह्मवित्। भिद् - काष्ठभित्, प्रभित्। छिद् - रज्जुच्छित्, प्रच्छित्। जि - शत्रुजित्, प्रचित्। नी - सेनां नयति सेनानीः, अग्रणीः, ग्रामणीः। (यहाँ 'पूर्वपदात् संज्ञायामगः' सूत्र से णत्व हुआ है।) राज् - विश्वं राजयति विश्वराट्, विराट्, सम्राट्।

(सम्राट् में 'मो राजि समः क्वौ' सूत्र से सम् के मकार को मकार हुआ है।)

अनुवृत्ति - यहाँ से 'उपसर्गेऽपि' की अनुवृत्ति ३.२.७७ तक जायेगी।

ण्वि प्रत्यय

भजो ण्विः - (३.२.६२) - सोपसर्ग अथवा निरुपसर्ग भज् धातु से ण्वि प्रत्यय होता है। अर्द्धं भजते अर्धभाक्। (अर्ध + ङस् + भज् + ण्वि) इसी प्रकार - प्रभाक्।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ण्विः' की अनुवृत्ति ३.२.६४ तक जायेगी।

छन्दसि सहः - (३.२.६३) - सह् धातु से वेदविषय में सुबन्त उपपद में रहते ण्वि प्रत्यय होता है। तुराषाट्। (तुरा + ङस् + सह् + ण्वि)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'छन्दसि' की अनुवृत्ति ३.२.६७ तक जायेगी।

वहश्च - (३.२.६४) - वह् धातु से वेदविषय में सुबन्त उपपद में रहते ण्वि प्रत्यय होता है। प्रष्ठं वहति प्रष्ठवाट्। इसी प्रकार दित्यवाट्।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'वहः' की अनुवृत्ति ३.२.६६ तक जायेगी।

ञ्युट् प्रत्यय

कव्यपुरीषपुरीष्येषु ञ्युट् - (३.२.६५) - कव्य, पुरीष तथा पुरीष्य सुबन्त उपपद में रहते वह् धातु से ञ्युट् प्रत्यय होता है। कव्यं वहति इति कव्यवाहनः। (कव्य + ङस् + वह् + ञ्युट्)। इसी प्रकार - पुरीषवाहनः। पुरीष्यवाहनः आदि।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ञ्युट्' की अनुवृत्ति ३.२.६६ तक जायेगी।

हव्येऽनन्तःपादम् - (३.२.६६) - वेदविषय में हव्य सुबन्त उपपद में रहते वह् धातु से ञ्युट् प्रत्यय होता है, यदि वह् धातु पाद के अन्तर अर्थात् मध्य में विद्यमान न हो तो। दूतश्च हव्यवाहनः।

विट् प्रत्यय

जनसनखनक्रमगमो विट् - (३.२.६७) - जन, सन, खन, क्रम, गम इन धातुओं से सुबन्त उपपद में रहते विट् प्रत्यय होता है। अप्सु जायते अब्जाः। गोषु जायते गोजाः। गाः सनोति गोषाः। नॄन् सनोति इति नृषाः। विसं खनति इति विसखाः, कूपं खनति इति कूपखाः। दधि क्रामति इति दधिक्राः। अग्रे गच्छति इति अग्रेगाः उन्नेतॄणाम्।

इन सबमें 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' से आकार अन्तादेश हुआ है।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'विट्' की अनुवृत्ति ३.२.६९ तक जायेगी।

अदोऽनन्ने - (३.२.६८) - अन्न सुबन्त उपपद में रहते अद् धातु से विट् प्रत्यय होता है। आमम् अत्ति इति आमात्। (आम + अद् + विट्)। इसी प्रकार - सस्यम् अत्ति इति सस्यात्।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'अदः' की अनुवृत्ति ३.२.६९ तक जायेगी।

क्रव्ये च - (३.२.६९) - क्रव्य सुबन्त उपपद में रहते भी अद् धातु से विट् प्रत्यय होता है। क्रव्यं अत्ति इति क्रव्यात्।

कप् प्रत्यय

दुहः कब्घश्च - (३.२.७०) - दुह् धातु से सुबन्त उपपद रहते कप् प्रत्यय होता है तथा धातु के हकार को घकारादेश भी होता है। कामान् दोग्धि - कामदुघा धेनुः। धर्मदुघा।

ण्विन् प्रत्यय

मन्त्रे श्वेतवहोक्थशस्पुरोडाशो ण्विन् - (३.२.७१) - वेदविषय में श्वेतवह्, उक्थशस् तथा पुरोडाश् ये शब्द ण्विन् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं। श्वेता एनं वहन्ति श्वेतवा इन्द्रः। उक्थानि, उक्थैर्वा शंसति - उक्थशाः यजमानः। पुरो दाशन्त एनम् पुरोडाः।

श्वेतवहादीनां डस् पदस्येति वक्तव्यम् - श्वेतवह् आदि शब्दों से पदसंज्ञा होने पर ण्विन् प्रत्यय के स्थान पर डस् प्रत्यय होता है।

हलादि विभक्ति परे होने पर पूर्व की पद संज्ञा होती है। पद संज्ञा होने पर डस् प्रत्यय होता है। डस् प्रत्यय होने पर टे: सूत्र से टि का लोप होता है।

श्वेतवह् + भ्याम् / डस् प्रत्यय होकर - श्वेतवह् + डस् + भ्याम् / टि का लोप होकर - श्वेतव् + अस् + भ्याम् / श्वेतवस् + भ्याम् / स् को रुत्व, उत्व होकर - श्वेतवोभ्याम्। श्वेतवोभि:।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'मन्त्रे ण्विन्' की अनुवृत्ति ३.२.७२ तक जायेगी।

अवे यज: - (३.२.७२) - वेदविषय में अव उपपद रहते यज् धातु से ण्विन् प्रत्यय होता है। त्वं यज्ञे वरुणस्यावया असि। अवयजते इति अवया: (अव + यज् + ण्विन् = अवया:।)

अनुवृत्ति - यहाँ से 'यज' की अनुवृत्ति ३.२.७३ तक जायेगी।

विच् प्रत्यय

विजुपे छन्दसि - (३.२.७३) - उप उपपद रहते यज् धातु से वेद विषय में विच् प्रत्यय होता है। उपयड्भीरूर्ध्वं वहन्ति। उपयजते इति उपयड् (उप + यज् + ण्विन् = उपयड्।)

अनुवृत्ति - यहाँ से 'छन्दसि' की अनुवृत्ति ३.२.७४ तक जायेगी तथा 'विच्' की ३.२.७५ तक जायेगी।

मनिन्, क्वनिप्, वनिप्, विच् प्रत्यय

आतो मनिन्क्वनिब्वनिपश्च - (३.२.७४) - आकारान्त धातुओं से सुबन्त उपपद में रहते वेद विषय में मनिन्, क्वनिप्, वनिप्, विच् प्रत्यय होते हैं।

शोभनं ददातीति - सुदामा (सु + दा + मनिन्)। शोभनं दधातीति - सुधामा।

शोभनं दधाति इति सुधीवा (सु + धा + क्वनिप्)। शोभनं पातीति - सुपीवा।

भूरि ददाति इति भूरिदावा (भूरि + दा + वनिप्)। घृतं पातीति - घृतपावा।

कीलालं पिबति कीलालपा: (कीलाल + पा + विच्)। शुभं यातीति - शुभंया:।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'मनिन्क्वनिब्वनिप:' की अनुवृत्ति ३.२.७५ तक जायेगी।

अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते - (३.२.७५) - आकारान्त धातुओं से जो अन्य धातु, उनसे भी मनिन्, क्वनिप्, वनिप्, विच्, प्रत्यय देखे जाते हैं।

विशेष - यद्यपि 'धातो:' का अधिकार होने से ये प्रत्यय धातुमात्र से होना चाहिये, किन्तु सूत्र में 'दृश्यन्ते' कहा है, अत: इन प्रत्ययों से बने हुए जो शब्द लोक में देखे जाते

हैं, उन्हीं से ये प्रत्यय होंगे। यथा - सुष्ठु शृणातीति सुशर्मा (सु + शॄ + मनिन्)। प्रातः एतीति प्रातरित्वा (प्रातर् + इ + क्वनिप्)। विजायत इति विजावा (वि + जन् + वनिप्)। इसी प्रकार - प्रजावा, अग्रेगावा। रेडसि पर्णं नयेः। (रिष् + + विच्), आदि।

क्विप्च - (३.२.७६) - सब सोपपद तथा निरुपपद धातुओं से क्विप् प्रत्यय होता है। उखायाः स्रंसते = उखास्रत्। (उखा + ङस् + स्रंस् + क्विप्)। पर्णध्वत् (पर्ण + ङस् + ध्वंस् + क्विप्)।

अत्यावश्यक - यद्यपि 'धातोः' का सामान्य अधिकार होने से क्विप् प्रत्यय धातुमात्र से होना चाहिये, किन्तु जिन आकारान्त धातुओं को 'घुमास्थागापाजहातिसां हलि ६.४.६६' इस सूत्र से ईत्व प्राप्त है, उन आकारान्त धातुओं से क्विप् प्रत्यय नहीं होता है। ध्यै धातु से क्विप् प्रत्यय करके - ध्यायति इति धीः बनता है तथा प्यै धातु से क्विप् प्रत्यय करके प्यायते इति पीः बनता है, यहाँ 'ध्याप्योः सम्प्रसारणं च' वार्तिक से यकार को सम्प्रसारण होता है।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क्विप्' की अनुवृत्ति ३.२.७७ तक जायेगी।

स्थः क च - (३.२.७७) - सुबन्त उपपद में रहते सोपपद तथा निरुपपद स्था धातु से क तथा क्विप् प्रत्यय होते हैं।

विशेष - जब सुपि स्थः से ही क प्रत्यय सिद्ध था और 'अन्येभ्योऽभ्योऽपि दृश्यन्ते' सूत्र से क्विप् प्रत्यय सिद्ध था, तब इस सूत्र की क्या आवश्यकता थी ?

यह कि 'शमि धातोः संज्ञायाम्' सूत्र शम् उपपद में रहने पर धातुमात्र से संज्ञा अर्थ में अच् प्रत्यय कर रहा है। उस अच् को बाधकर यह स्था धातु से क और क्विप् कर रहा है। शंस्थः (शम् + स्था + क)। शंस्थाः (शम् + स्था + क्विप्)।

जहाँ 'घुमास्थागापाजहातिसां हलि ६.४.६६' इस सूत्र से ईत्व प्राप्त है, उनसे यदि क्विप् प्रत्यय कहा भी जाये, तो उसे 'क्विबिवाचरति इति क्विप्' ऐसा आचारे क्विप् करके उस क्विप् प्रत्यय को विच् मान लेना चाहिये। यथा - 'स्थः क च' सूत्र आकारान्त स्था धातु से क्विप् प्रत्यय कह रहा है, अतः यहाँ उस क्विप् प्रत्यय को विच् मानकर स्था धातु से विच् ही होगा - शम् + स्था + विच् = शंस्थाः।

णिनि प्रत्यय

सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये - (३.२.७८) - अजातिवाची सुबन्त उपपद हो तो ताच्छील्य 'ऐसा स्वभाव उसका है', यह अर्थ गम्यमान होने पर सब धातुओं से णिनि प्रत्यय होता है। उष्णं भोक्तुं शीलमस्य उष्णभोजी (उष्ण + ङस् + भुज् + णिनि)। इसी

प्रकार - शीतं भोक्तुं शीलमस्य शीतभोजी। प्रियं वक्तुं शीलमस्य प्रियवादी। धर्मम् उपदेष्टुं शीलमस्य धर्मोपदेशी।

उत्प्रतिभ्यामाङि सर्त्तेरुपसंख्यानम् (वा.) - उत् तथा प्रति उपपद में होने पर आङ्पूर्वक सृ धातु से भी णिनि प्रत्यय होता है। उदासारिण्यः (उद् + आ + सृ + णिनि)। इसी प्रकार - प्रत्यासारिण्यः।

साधुकारिणि च (वा.) - साधुपूर्वक कृ धातु से अताच्छील्यादि अर्थों में णिनि प्रत्यय होता है। साधु करोतीति साधुकारी (साधु + कृ + णिनि)। इसी प्रकार - साधुदायी।

ब्रह्मणि वदः (वा.) - ब्रह्मन् शब्द उपपद में होने पर भी वद धातु से णिनि प्रत्यय होता है। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। (ब्रह्म + ङस् + वद् + णिनि)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'णिनि' की अनुवृत्ति ३.२.८६ तक जायेगी।

कर्तर्युपमाने - (३.२.७९) - उपमानवाची कर्ता उपपद हो तो धातुमात्र से णिनि प्रत्यय होता है। उष्ट्र इव क्रोशति उष्ट्रक्रोशी / (उष्ट्र + सु + क्रुश् + णिनि)। इसी प्रकार - ध्वाङ्क्षरावी।

व्रते - (३.२.८०) - व्रत गम्यमान हो तो सुबन्त उपपद रहते धातु से णिनि प्रत्यय होता है। स्थण्डिले शेते इति स्थण्डिलशायी (स्थण्डिल + ङि + शी + णिनि)।

बहुलमाभीक्ष्ण्ये - (३.२.८१) - आभीक्ष्ण्य अर्थात् पौनः पुन्य गम्यमान हो तो धातु से बहुल करके णिनि प्रत्यय होता है। कषायपायिणो गान्धाराः (कषाय + ङस् + पा + णिनि)। इसी प्रकार - क्षीरपायिण उशीनराः।

मनः - (३.२.८२) - सुबन्त उपपद रहते मन् धातु से णिनि प्रत्यय होता है। दर्शनीयं मन्यते दर्शनीयमानी (दर्शनीय + ङस् + मन् + णिनि)। इसी प्रकार - शोभनमानी। सुरूपमानी।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'मनः' की अनुवृत्ति ३.२.८३ तक जायेगी।

आत्ममाने खश्च - (३.२.८३) - 'अपने आप को मानना' इस अर्थ में वर्तमान मन् धातु से खश् प्रत्यय होता है तथा चकार से णिनि प्रत्यय होता है।

खश् प्रत्यय शित् है। अतः इसके लगने पर विकरण अवश्य होगा। खित् होने से अरुर्द्विषदजन्तस्य मुम् से अजन्त अङ्ग को मुम् का आगम भी होगा।

आत्मानं पण्डितं मन्यते = पण्डितम्मन्यः (पण्डित + ङस् + मुम् + मन् + श्यन् + खश्)। दर्शनीयम्मन्यः। (दर्शनीय + ङस् + मुम् + मन् + श्यन् + खश्)।

णिनि प्रत्यय होने पर - पण्डितमानी। दर्शनीयमानी।

भूते - (३.२.८४) - यह अधिकार सूत्र है। यहाँ से आगे ३.२.१२३ तक भूते का अधिकार जाता है अर्थात् वहाँ तक जितने प्रत्यय विधान करेंगे वे सब कर्ता अर्थ में भूतकाल में होंगे।

करणे यजः - (३.२.८५) - करण कारक उपपद होने पर यज् धातु से णिनि प्रत्यय भूतकाल में होता है। अग्निष्टोमेन इष्टवान् अग्निष्टोमयाजी। (अग्निष्टोम + टा + यज् + णिनि)।

कर्मणि हनः - (३.२.८६) - कर्म उपपद रहते हन् धातु से णिनि प्रत्यय भूतकाल में होता है। पितृव्यं हतवान् पितृव्यघाती। (पितृ + ङस् + हन् + णिनि)। इसी प्रकार - मातुलं हतवान् मातुलघाती।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'कर्मणि' की अनुवृत्ति ३.२.८८ तक जायेगी तथा 'हन' की ३.२.९५ तक जायेगी।

क्विप् प्रत्यय

ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु क्विप् - (३.२.८७) - ब्रह्म, भ्रूण, वृत्र ये कर्म उपपद रहते हन् धातु से भूतकाल में क्विप् प्रत्यय होता है। ब्रह्माणं हतवान् ब्रह्महा (ब्रह्म + ङस् + हन् + क्विप्)। इसी प्रकार - वृत्रं हतवान् वृत्रहा। भ्रूणं हतवान् भ्रूणहा।

जब 'क्विप् च' सूत्र से सभी धातुओं से क्विप् सिद्ध है, तब इस सूत्र से अलग क्विप् का विधान क्यों किया ? इसलिये कि इससे चार प्रकार के नियम सिद्ध होते हैं। धातु, काल, उपपद और विषय। ये क्रमशः इस प्रकार हैं।

१. ब्रह्मादि उपपद में होने पर ही हन् धातु से क्विप् होता है, अन्य उपपद होने पर नहीं। अतः पुरुषं हतवान् में नहीं होगा।

२. ब्रह्मादि उपपद में होने पर हन् धातु से ही क्विप् होता है, अन्य धातुओं से नहीं। अतः ब्रह्म अधीतवान् में नहीं होगा।

३. ब्रह्मादि उपपद में होने पर हन् धातु से भूतकाल में ही क्विप् होता है, अन्य कालों में नहीं। अतः ब्रह्माणं हन्ति, हनिष्यति में वर्तमान और भूतकाल में क्विप् नहीं होगा।

४. ब्रह्मादि उपपद में होने पर हन् धातु से भविष्यत्काल में क्विप् प्रत्यय ही होता है, अन्य प्रत्यय नहीं।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क्विप्' की अनुवृत्ति ३.२.९२ तक जायेगी।

बहुलं छन्दसि - (३.२.८८) - वेद विषय में कर्म उपपद में रहते हन् धातु

से बहुल करके क्विप् प्रत्यय होता है। क्विप् प्रत्यय होने पर - मातृहा सप्तमं नरकं प्रविशेत्, पितृहा। बहुल करके क्विप् प्रत्यय न होने पर अण् ही होगा - मातृघातः। पितृघातः।

सुकर्मपापमन्त्रपुण्येषु कृञः - (३.२.८९) - सु, कर्म, पाप, मन्त्र, पुण्य ये कर्म उपपद में हों, तो कृञ् धातु से भूतकाल में क्विप् प्रत्यय होता है।

सुष्ठु कृतवान् सुकृत् (सु + कृ + क्विप्)। इसी प्रकार - कर्मकृत्। पापकृत्। मन्त्रकृत्। पुण्यकृत्। यहाँ उपपद के अलावा तीन नियम समझना चाहिये।

अर्थात् इनसे भिन्न उपपद होने पर भी कृ धातु से भूतकाल में क्विप् होता है। अतः शास्त्रकृत्, मन्त्रकृत् आदि भी बनेंगे। शेष तीन नियम पूर्ववत् जानना चाहिये -

१. सुकर्मादि उपपद में होने पर कृ धातु से ही क्विप् होता है, अन्य धातुओं से नहीं। अतः मन्त्रम् अधीतवान् में क्विप् नहीं होगा। मन्त्रम् अधीतवान् मन्त्राध्यायः।

२. सुकर्मादि उपपद में होने पर कृ धातु से भूतकाल में ही क्विप् होता है, अन्य कालों में नहीं। अतः मन्त्रं करोति, करिष्यति में वर्तमान और भविष्यत्काल में क्विप् नहीं होगा।

३. सुकर्मादि उपपद में होने पर कृ धातु से भूतकाल में क्विप् प्रत्यय ही होता है, अन्य प्रत्यय नहीं।

सोमे सुञः - (३.२.९०) - सोम कर्म उपपद में रहते षुञ् धातु से भूतकाल में क्विप् प्रत्यय होता है। सोमं सुतवान् - सोमसुत्, सोमसुतौ।

यहाँ भी पूर्ववत् चार प्रकार के नियम सिद्ध होते हैं। धातु, काल, उपपद और विषय।

अग्नौ चेः - (३.२.९१) - अग्नि कर्म उपपद में रहते चिञ् धातु से भूतकाल में क्विप् प्रत्यय होता है। अग्निं चितवान् - अग्निचित्, अग्निचितौ। (अग्नि + चि + क्विप्)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'चेः' की अनुवृत्ति ३.२.९२ तक जायेगी।

कर्मण्यग्न्याख्यायाम् - (३.२.९२) - कर्म उपपद में रहते, कर्म कारक में चिञ् धातु से भूतकाल में क्विप् प्रत्यय होता है। श्येन इव चीयते अग्निः श्येनचित्, कङ्कचित्।

इनि प्रत्यय

कर्मणीनिर्विक्रियः - (३.२.९३)

कुत्सितग्रहणं कर्तव्यम् -(वा.) - कर्म उपपद में रहते वि पूर्वक क्रीञ् धातु

से भूतकाल में कुत्सा (निन्दा) अर्थ में इनि प्रत्यय होता है।

सोमं विक्रीतवान् सोमविक्रयी। (सोम + वि + क्री + इनि)। इसी प्रकार - घृतं विक्रीतवान् घृतविक्रयी। रसविक्रयी, आदि। (धर्मशास्त्रानुसार रसविक्रय निन्दनीय है।)

दृशेः क्वनिप् - (३.२.९४) - कर्म उपपद में रहते दृश् धातु से भूतकाल में क्वनिप् प्रत्यय होता है। परलोकं दृष्टवान् परलोकदृश्वा (परलोक + ङस् + दृश् + क्वनिप्)। इसी प्रकार - पाटलिपुत्रदृश्वा।

'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' से क्वनिप् प्रत्यय सिद्ध था, पुनः क्वनिप् ग्रहण के कारण इससे अन्य मनिन्, वनिप्, अण् आदि प्रत्यय नहीं होंगे। ध्यान रहे कि यहाँ सोपपद धातु से नियम हो रहा है, अतः सोपपद धातुओं से विहित अण् आदि प्रत्यय यहाँ नहीं होंगे, किन्तु निरुपपद से विहित निष्ठा प्रत्यय तो होंगे ही। पारं दृष्टवान्।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क्वनिप्' की अनुवृत्ति ३.२.९६ तक जायेगी।

राजनि युधि कृञः - (३.२.९५) - राजन् कर्म उपपद में रहते अन्तर्भावित ण्यर्थ युध् धातु से तथा कृञ् धातु से भूतकाल में क्वनिप् प्रत्यय होता है। राजानं योधितवान् राजयुध्वा (राजन् + युध् + णिच् + क्वनिप्)। राजानं कृतवान् राजकृत्वा (राजन् + ङस् + कृ + क्वनिप्)।

यहाँ भी 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' से क्वनिप् प्रत्यय सिद्ध था, पुनः क्वनिप् ग्रहण नियमार्थ है।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'युधि कृञः' की अनुवृत्ति ३.२.९६ तक जायेगी।

सहे च - (३.२.९६) - सह उपपद में रहते अन्तर्भावित ण्यर्थ युध् धातु से तथा कृञ् धातु से भूतकाल में क्वनिप् प्रत्यय होता है। सह योधितवान् सहयुध्वा, सहकृत्वा।

यहाँ भी 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' से क्वनिप् प्रत्यय सिद्ध था, पुनः क्वनिप् ग्रहण नियमार्थ है। ऐसा ही आगे भी विवेक करते चलना चाहिये।

ड प्रत्यय

सप्तम्यां जनेर्डः - (३.२.९७) - सप्तम्यन्त उपपद हो तो जन् धातु से ड प्रत्यय होता है। उपसरे जातः उपसरजः (उपसर + ङि + जन् + ड)। मन्दुरायां जातः मन्दुरजः (मन्दुरा + ङि + जन् + ड)। कटजः। वारिणि जातः वारिजः। सरसि जातं सरसिजम्।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'जनेर्डः' की अनुवृत्ति ३.२.१०१ तक जायेगी।

पञ्चम्यामजातौ - (३.२.९८) - अजातिवाची पञ्चम्यन्त उपपद हो तो भूतकाल

में जन् धातु से ड प्रत्यय होता है। शोकात् जातः शोकजो रोगः (शोक + ङसि + जन् + ड)। संस्कारजः। दुःखजः। बुद्धेः जातः बुद्धिजः।

उपसर्गे च संज्ञायाम् - (३.२.९९) - उपसर्ग उपपद रहते भी संज्ञाविषय में जन् धातु से भूतकाल में ड प्रत्यय होता है। अथेमा मानवीः प्रजाः (प्र + जन् + ड)। वयं प्रजापतेः प्रजा अभूम। प्रजाता इति प्रजाः।

अनौ कर्मणि - (३.२.१००) - कर्म उपपद रहते अनुपूर्वक जन् धातु से ड प्रत्यय होता है। पुमांसमनुजातः पुमनुजः (पुम् + अनु + जन् + ड)।

अन्येष्वपि दृश्यते - (३.२.१०१) - सूत्र में अपि शब्द का तात्पर्य यह है कि पूर्वसूत्रों से जिन जिन स्थितियों के होने पर ड प्रत्यय कहा गया है, उन सबके अभाव में भी ड प्रत्यय हो जाता है। यथा -

'पञ्चम्यामजातौ' से अजाति अर्थ में ड कहा गया है, वह जाति अर्थ में भी हो जाता है। ब्राह्मणजो धर्मः (ब्राह्मण + ङि + जन् + ड)। इसी प्रकार - क्षत्रियजं युद्धम्।

'सप्तम्यां जनेर्डः' सूत्र से जन् धातु से ड कहा गया है, वह अन्य धातुओं से भी हो जाता है। परितः खाता परिखा। (परि + खन् + ड)। सप्तमी न होने पर भी हो जाता है।

'भूते' से भूतकाल अर्थ में ड कहा गया है, वह भूतकाल न होने पर भी हो जाता है। यथा - न जायते इति अजः। द्विर्जातो द्विजः।

'अनौ कर्मणि' सूत्र से कर्म उपपद रहते धातु से ड कहा गया है, वह अन्य उपपदों के रहते भी हो जाता है। अनु जातः अनुजः।

'उपसर्गे च संज्ञायाम्' सूत्र से संज्ञा अर्थ में ड कहा गया है, वह असंज्ञा अर्थ में भी हो जाता है। अभितो जाताः अभिजाः केशाः। परितो जाताः परिजाः केशाः, आदि।

निष्ठा अर्थात् क्त, क्तवत् प्रत्यय

निष्ठा - (३.२.१०२) - धातुमात्र से भूतकाल में निष्ठासंज्ञक प्रत्यय होते हैं।

अभेदि इति भिन्नः (तोड़ा गया) (भिद् + क्त)। अभैत्सीत् इति भिन्नवान् (टूटा) (भिद् + क्तवतु)। अकृत इति कृतः, अकार्षीत् इति कृतवान्। इसी प्रकार - भुक्तः, भुक्तवान्।

सामान्यतः क्त का अर्थ है 'किया गया' और क्तवतु का अर्थ है 'किया'। अतः अर्थ को देखिये और कर्म अर्थ होने पर लुङ् लकार कर्मवाच्य से इसे बतलाइये। कर्ता अर्थ होने पर लुङ् लकार कर्तृवाच्य से इसे बतलाइये।

यह जो 'निष्ठा' (३.२.१०२) सूत्र है, वह भूतकालिक क्रिया को बतलाने के लिये धातुमात्र से निष्ठा का विधान करता है, क्योंकि वह 'भूते' सूत्र के अधिकार में आता है। अतः जब सारी क्रिया भूत हो जाये, तभी उससे निष्ठा का विधान होता है।

किन्तु यदि क्रिया प्रारम्भ हो गई है, और पूरी नहीं हुई है, अर्थात् उस क्रिया के केवल आदिक्षण भूत हो गये हैं, तब ऐसी स्थिति में सारी क्रिया को भूत नहीं कहा जा सकता, क्योंकि क्रिया एकफलोद्देशसमूहरूपा होती है। अतः क्रिया के सम्पूर्ण समूह के व्यवपृक्त होने पर ही उसमें भूतत्व का व्यवहार संभव है।

अतः ऐसी क्रिया, जो अभी चल रही है, उस क्रिया को कहने के लिये भी निष्ठा प्रत्यय हों, इसके लिये वार्तिक है -

आदिकर्मणि निष्ठा वक्तव्या (वार्तिक - ३.२.१०२) - धातुओं से आदिकर्म अर्थ में निष्ठा प्रत्यय होते हैं। आदिकर्म का अर्थ होता है - 'काम करना आरम्भ कर दिया है और काम अभी पूरा नहीं हुआ है। आदिकर्म के उदाहरणों को 'प्र' उपसर्ग के साथ बतलाइये सूत्र में कर्म का अर्थ क्रिया ही है।

आदिकर्म अर्थ में क्त प्रत्यय होने पर वाक्य इस प्रकार बनते हैं -

देवदत्तः कटं प्रकृतः = देवदत्त ने चटाई बनाना आरम्भ कर दिया है।

देवदत्तः ओदनं प्रभुक्तः = देवदत्त ने भात खाना प्रारम्भ कर दिया है।

इसका वर्तमान से भेद यह है कि वर्तमानकाल में केवल क्रिया के चलते रहने का बोध होता है। उसमें भूतत्व का लेश भी नहीं होता किन्तु आदिकर्म में क्रिया के कुछ क्षण भूत हो चुके होते है। कुछ चल रहे हैं और यह भी बोध होता है कि क्रिया आगे भी चलेगी।

ङ्वनिप् प्रत्यय

सुयजोर्ङ्वनिप् - (३.२.१०३) - षुञ् तथा यज् धातु से भूतकाल में ङ्वनिप् प्रत्यय होता है। सुतवान् इति सुत्वा (सु + ङ्वनिप्)। इष्टवान् इति यज्वा (यज् + ङ्वनिप्)।

अतृन् प्रत्यय

जीर्यतेरतृन् - (३.२.१०४) - जॄष् वयोहानौ धातु से भूतकाल में अतृन् प्रत्यय होता है। जीर्णवान् इति जरन्, जरन्तौ। (जॄ + अतृन्)।

अत्यावश्यक - जिन अर्थों में लकार प्रत्यय होते हैं, उन्हीं अर्थों में कृत् प्रत्यय

भी हो जाते हैं। अत: अर्थ को दो बार न कहना पड़े, इस लाघव के लिये अष्टाध्यायी के तृतीय अध्याय में कृत् प्रत्यय तथा लकार प्रत्यय एक साथ कह दिये गये हैं। लकार प्रत्ययों की सिद्धि अष्टाध्यायी सहजबोध के प्रथम और द्वितीय खण्डों में की जा चुकी है। अत: हम लकार प्रत्यय विधायक सूत्रों को छोड़ते हुए केवल कृत् प्रत्यय विधायक सूत्रों को कहेंगे।

कानच् प्रत्यय

लिट: कानज्वा - (३.२.१०६) - वेदविषय में भूतकाल में विहित जो लिट् उसके स्थान में कानच् आदेश विकल्प से होता है। अग्निं चिक्यान:। सुषुवे इति सुषुवाण: (सु + कानच्)। न च भवति - अहं सूर्यमुभयतो ददर्श।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'लिट्, वा ' की अनुवृत्ति ३.२.१०९ तक जायेगी।

क्वसु प्रत्यय

क्वसुश्च - (३.२.१०७) - वेदविषय में लिट् के स्थान में क्वसु आदेश भी विकल्प से होता है। जघास इति जक्षिवान् (अद् + क्वसु)। पपौ इति पपिवान् (पा + क्वसु)। पक्षे न च भवति - अहं सूर्यमुभयतो ददर्श।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क्वसु' की अनुवृत्ति ३.२.१०८ तक जायेगी।

भाषायां सदवसश्रुव: - (३.२.१०८) - लौकिक प्रयोग विषय में सद, वस, श्रु इन धातुओं से परे भूतकाल में विकल्प से लिट् प्रत्यय होता है और लिट् के स्थान में विकल्प से क्वसु आदेश भी होता है। सेदिवान् (सद् + क्वसु)। ऊषिवान् (वस् + क्वसु)। शुश्रुवान् (श्रु + क्वसु)।

उपेयिवाननाश्वाननूचानश्च - (३.२.१०९) - उपेयिवान्, अनाश्वान्, अनूचान ये शब्द भी क्वसुप्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं।

३.२.११० से ३.२.१२३ तक के सूत्रों में लकार प्रत्यय हैं, जिनका कृदन्त से प्रयोजन न होने से उन्हें छोड़कर आगे के सूत्र दे रहे हैं -

शतृ, शानच् प्रत्यय

'वर्तमाने लट् ३.२.१२३' सूत्र से 'वर्तमाने' पद की अनुवृत्ति ३.३.१ तक चलती है। अत: यहाँ से लेकर उणादयो बहुलम् ३.३.१ तक के सूत्रों से होने वाले प्रत्यय वर्तमानकाल अर्थ में होते हैं, यह जानना चाहिये। अत: शतृ, शानच् प्रत्यय का अर्थ भी वर्तमान है।

लट: शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे -(३.२.१२४) - धातु से लट् के स्थान में शतृ तथा शानच् आदेश होते हैं यदि अप्रथमान्त के साथ उस लट् का सामानाधिकरण्य हो तो। पचन्तं देवदत्तं पश्य। (पच् + शतृ) पचमानं देवदत्तं पश्य (पच् + शानच्)।

लट् के स्थान पर होने के कारण ये आदेश हैं, प्रत्यय नहीं।

माङ्याक्रोशे इति वाच्यम् (वा.) - आक्रोश गम्यमान होने पर माङ् के उपपद रहने पर धातुविहित लट् के स्थान पर शतृ तथा शानच् आदेश होते हैं। मा पचन्। मा पचमान:। मा जीवन् य: परावज्ञादु:खदग्धोऽपि जीवति।

अनुवृत्ति - इस सूत्र में इसके पूर्व सूत्र 'वर्तमाने लट् ३.२.१२३' से 'वर्तमाने' की अनुवृत्ति आ रही है जो कि ३.३.१ तक जायेगी तथा इस सूत्र से 'लट: शतृशानचौ' की अनुवृत्ति ३.२.१२६ तक जायेगी।

सम्बोधने च - (३.२.१२५) - सम्बोधन विषय में भी धातु से लट् के स्थान में शतृ, शानच् आदेश होते हैं। हे पचन् ! हे पचमान !

लक्षणहेत्वो: क्रियाया: - (३.२.१२६) - क्रिया के लक्षण तथा हेतु अर्थों में वर्तमान धातु से लट् के स्थान में शतृ शानच् आदेश होते हैं। शयानो भुङ्क्ते बाल:। तिष्ठन् मूत्रयति पाश्चात्य:।

तौ सत् - (३.२.१२७) - वे शतृ तथा शानच् प्रत्यय सत् संज्ञक होते हैं। ब्राह्मणस्य कुर्वन्। ब्राह्मणस्य कुर्वाण:।

पीछे के सूत्र में लट् के रहते हुए भी यहाँ जो दुबारा लट् कहा, इससे अप्रथमा समानाधिकरण में भी शतृ शानच् प्रत्यय होते हैं।

शानन् प्रत्यय

पूङ्यजो: शानन् - (३.२.१२८) - पूङ् तथा यज् धातुओं से वर्तमान काल में शानन् प्रत्यय होता है।

यहाँ दो बातें ध्यातव्य हैं -

१. शानच् और शानन् में अन्तर यह है कि शानन् प्रत्यय लट् लकार के स्थान पर होने वाला आदेश नहीं है। यह ण्वुल्, तृच् आदि के समान स्वतन्त्र प्रत्यय है। अत: इसका धातु के पद से कोई प्रयोजन नहीं है। पू + शानन् - पवमान:। यज् + शानन् - यजमान:।

२. दूसरी बात यह कि शानच् प्रत्यय चित् है। शानन् प्रत्यय नित् है।

चितः (६.१.१६३) - चित् प्रत्यय से बने हुए शब्द अन्तोदात्त होते हैं। अतः शानजन्त शब्द अन्तोदात्त होंगे।

ञ्नित्यादिर्नित्यम् (६.१.१९७) - ञित् और नित् प्रत्यय परे रहते आदि को उदात्त होता है। अतः शानन्नन्त शब्द आद्युदात्त होंगे।

(न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम् - लादेश कृत् प्रत्यय, उ, उक प्रत्यय, निष्ठा प्रत्यय, खलर्थ कृत् प्रत्यय, और तृन् प्रत्याहार में आने वाले प्रत्ययों के योग में अनुक्त कर्म में षष्ठी न होकर द्वितीया ही होती है। ध्यान दें कि लटः शतृशानचा. (३.२.१२४) सूत्र के 'तृ' से लेकर तृन् (३.२.१३५) सूत्र के नकार को मिलाकर 'तृन्' प्रत्याहार बनता है। इसमें शतृ, शानच्, शानन्, चानश्, तृन् प्रत्यय आते हैं। इन प्रत्ययों से बने हुए शब्दों के कर्म में द्वितीया ही होगी, षष्ठी नहीं। सोमं पवमानः। नडं आघ्नानः।)

चानश् प्रत्यय

ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश् - (३.२.१२९) - ताच्छील्य, वयोवचन, शक्ति इन अर्थों में द्योतित होने पर धातु से वर्तमान काल में चानश् प्रत्यय होता है।

तच्छील का अर्थ है - सः धात्वर्थः शीलं यस्य सः तच्छीलः। तस्य भावः ताच्छील्यम्। (धातु का जो अर्थ है, वह करने का स्वभाव।)

ध्यान देना चाहिये कि तङ् और आन की आत्मनेपद संज्ञा करने वाले सूत्र 'तङानावात्मनेपदम् १.४.१००' में 'लः परस्मैपदम् १.४.९९' सूत्र से 'लः' की अनुवृत्ति आती है। अतः लादेश जो 'आन' हैं, उनकी ही आत्मनेपद संज्ञा होती है। शानच् प्रत्यय लट् के स्थान पर होने वाला लादेश है और कानच् प्रत्यय लिट् के स्थान पर होने वाला लादेश है। अतः इनकी आत्मनेपद संज्ञा होती है।

किन्तु चानश् प्रत्यय किसी लकार के स्थान पर होने वाला आदेश नहीं है, अतः इसकी आत्मनेपद संज्ञा नहीं होती है। यह ण्वुल्, तृच् आदि के समान स्वतन्त्र प्रत्यय है। इसका धातु के पद से कोई प्रयोजन नहीं है। यह परस्मैपदी धातुओं से भी हो सकता है और आत्मनेपदी धातुओं से भी हो सकता है।

ताच्छील्य अर्थ में चानश् प्रत्यय - भोगं भुञ्जानः (भोग भोगना जिसका स्वभाव है।) कतीह मुण्डयमानाः (कितने यहाँ मुण्डन किये हुए हैं)। कतीह भूषयमाणाः (कितने यहाँ सजे हुए हैं)। शिवाग्नौ जुह्वानाः (सौन्दर्यलहरी।)

वयोवचन अर्थ में चानश् प्रत्यय - कवचं बिभ्राण: (कवच धारण करने योग्य जिसकी वय हो गई है।) कवच धारण करने से शरीर की अवस्था यौवन का पता चलता है, क्योंकि बच्चे तथा बूढ़े कवच धारण नहीं कर सकते हैं)। कतीह कवचं पर्यस्यमाना: (कितने यहाँ कवच धारण कर सकते हैं ?)। कतीह शिखण्डं वहमाना: (कितने ही यहाँ शिखा धारण करने वाले हैं)।

शक्ति अर्थ में चानश् प्रत्यय - शत्रून् निघ्नान: (शत्रु को मारने की शक्ति वाला)। कतीह निघ्नाना: (कितने ही यहाँ मार सकने वाले हैं)। कतीह पचमाना: (कितने ही यहाँ पका सकने वाले हैं)। **यदि अनादेश होने के बाद भी चानश् प्रत्यय की आत्मनेपद संज्ञा होती, तो वह हु, हन् आदि परस्मैपदी धातुओं से न होता।**

इङ्धार्यो: शत्रकृच्छ्रिणि - (३.२.१३०) - इङ् तथा ण्यन्त धारि धातु से वर्तमान- काल में शतृ प्रत्यय होता है, यदि जिसके लिये क्रिया कष्टसाध्य न हो ऐसा कर्ता वाच्य हो तो। अकृच्छ्रेण अधीते परायणम् - अधीयन् परायणम् (अधि + इ + शतृ)।

इसी प्रकार - धारयन् उपनिषदम् (धृ + णिच् + शतृ)।

ध्यान दें कि इङ् धातु आत्मनेपदी है तथा णिजन्त होने से धारि उभयपदी है। उनसे शतृ ही हो, इसलिये यह अलग सूत्र बनाया है।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'इङ्' की अनुवृत्ति ३.२.१३३ तक जायेगी।

द्विषोऽमित्रे - (३.२.१३१) - द्विष् धातु से अमित्र शत्रु कर्ता वाच्य हो तो शतृ प्रत्यय वर्तमानकाल में होता है। द्विषन्, द्विषन्तौ।

(**द्विष: शतुर्वा वचनम् - वा.** - द्विषोऽमित्रे सूत्र से होने वाले लादेश शतृ प्रत्यय, के योग में कर्म में विकल्प से षष्ठी और द्वितीया होती हैं। चोरस्य द्विषन्, चोरं द्विषन्। पतिं द्विषन्ती, पत्यु: द्विषन्ती।)

सुञो यज्ञसंयोगे: - (३.२.१३२) - यज्ञ से संयुक्त अभिषव में वर्तमान षुञ् धातु से वर्तमान काल में शतृ प्रत्यय होता है। यजमाना: सुन्वन्त:।

अर्ह: प्रशंसायाम् - (३.२.१३३) - अर्ह् धातु से प्रशंसा गम्यमान हो तो वर्तमानकाल में शतृ प्रत्यय होता है। अर्हन् इह भवान् विद्याम्। अर्हन् इह भवान् पूजाम्।

अर्थविशेष में तथा प्रथमासामानाधिकरण्य अर्थ में शतृ हो, इसलिये ये तीनों सूत्र बनाये हैं।

आ क्वेस्तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु - (३.२.१३४) - 'भ्राजभास-' इस सूत्र

से विहित क्विप् पर्यन्त जितने प्रत्यय कहे हैं, वे सब तच्छीलादि कर्ता अर्थ में जानने चाहिये।

अधिकार - यह अधिकारसूत्र है। यहाँ से लेकर 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' ३.२.१७८ सूत्र तक तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु का अधिकार जायेगा।

तच्छील - सः धात्वर्थः शीलं यस्य सः तच्छीलः। (धातु का जो अर्थ है, वह करना स्वभाव है जिसका।)

तद्धर्म - स एव धर्मो यस्य सः तद्धर्मा। (धातु का जो अर्थ है, वह करना धर्म है जिसका।)

तत्साधुकारी - साधु करोति इति साधुकारी। तस्य धात्वर्थस्य साधुकारी। (धातु का जो अर्थ है, वह करने में जो साधु है।)

तृन् प्रत्यय

तृन् - (३.२.१३५) - तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमान काल में धातुमात्र से तृन् प्रत्यय होता है।

('न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्' सूत्र (पृष्ठ ४८१) से लादेश कृत् प्रत्ययों के योग में अनुक्त कर्म में षष्ठी न होकर द्वितीया कही गई है। अतः तृन् प्रत्ययान्तों के अनुक्त कर्म में द्वितीया ही होगी।)

तच्छील अर्थ में - कटान् कर्तुं शीलम् अस्य इति कर्ता कटान् (कृ + तृन्)। जनापवादान् वदितुम् शीलम् अस्य इति वदिता जनापवादान् (वद् + इट् + तृन्)। इसी प्रकार - मृदु वक्ता। धर्मम् उपदेष्टा।

तद्धर्म अर्थ में - मुण्डयितारः श्राविष्ठायना भवन्ति वधूमूढाम्। श्राविष्ठायन गोत्र के लोग नवोढा वधू का मुण्डन करने वाले होते हैं। यह उनका कुलधर्म है। (मुण्ड् + णिच् + इट् + तृन्)।

अन्नमपहर्तारः आह्वरका भवन्ति श्राद्धे सिद्धे। (अप + हृ + तृन्)।

उन्नेतारः तौल्वलायना भवन्ति पुत्रे जाते। (उत् + नी + तृन्)।

तत्साधुकारी अर्थ में - कटं साधु करोति इति कर्ता कटम्। (कृ + तृन्)।

आवश्यक - ध्यान दें कि तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमान काल में धातुमात्र से तृन् प्रत्यय का विधान है। अतः आगे तच्छीलादि कर्ता होने पर, वर्तमान काल में जो प्रत्यय कहे जा रहे हैं, वे इस तृन् के अपवाद हैं, यह जानना चाहिये।

तृन्विधावृत्विक्षु चानुपसर्गस्य (वा.) - ऋत्विगर्थ में अनुपसर्गक धातु से तृन्

प्रत्यय होता है। हु + तृन् = होता। इसी प्रकार - पोता।

नयतेः षुक् च (वा.) - नी धातु से तृन् प्रत्यय होता है तथा उसे षुक् का आगम भी होता है। नी + तृन् / ने + षुक् + तृन् = नेष्टा।

त्विषेर्देवतानामकारश्चोपधाया अनिट्त्वं च (वा.) - त्विष् धातु के देवता के अभिधेय होने पर तृन् प्रत्यय होता है, उपधा को अकारादेश होता है तथा प्रत्यय को इडागम नहीं होता। त्विष् + तृन् / उपधा को अकार होकर - त्वष्टृ = त्वष्टा।

क्षदेश्च नियुक्ते (वा.) - क्षद् धातु से अधिकृत अर्थ में तृन् प्रत्यय होता है। क्षत्ता।

छन्दसि तृच्च (वा.) - क्षद् धातु से अधिकृत अर्थ में तृन् प्रत्यय भी होता है। क्षत्तृभ्यः संग्रहीतृभ्यः।

आवश्यक - यहाँ यह ध्यातव्य है कि शानन् और शानच् तो लादेश नहीं हैं। अतः इनके प्रयोग में षष्ठी हो जाना चाहिये। यह क्यों नहीं होती ?

इसका उत्तर यह है कि 'न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्' सूत्र में तृन् के प्रयोग में भी षष्ठी का निषेध किया गया है। यह तृन् प्रत्यय न होकर प्रत्याहार है जो कि 'लटः शतृशानचौ-' सूत्र के तृ से प्रारम्भ होकर 'तृन्' सूत्र के न् को मिलाकर बनता है। शानन् और चानश् प्रत्यय भी इसी प्रत्याहार के भीतर आते हैं। अतः इनके योग में षष्ठी न होकर द्वितीया होती है।

इष्णुच् प्रत्यय

अलंकृञ्निराकृञ्प्रजनोत्पचोत्पतोन्मदरुच्यपत्रपवृतुवृधुसहचर इष्णुच् - (३.२.१३६) - अलंपूर्वक कृञ्, निर् आङ् पूर्वक कृञ्, प्र पूर्वक जन्, उत् पूर्वक पच्, उत् पूर्वक मद्, रुच्, अप पूर्वक त्रप्, वृतु, वृधु, सह्, चर् इन धातुओं से वर्तमान काल में तच्छीलादि कर्ता हो तो इष्णुच् प्रत्यय होता है। अलंकरिष्णुः (अलं + कृ + इष्णुच्)।

इसी प्रकार - निराकरिष्णुः, प्रजनिष्णुः, उत्पचिष्णुः, उत्पतिष्णुः, उन्मदिष्णुः, रोचिष्णुः, अपत्रपिष्णुः, वर्तिष्णुः, वर्धिष्णुः, सहिष्णुः, चरिष्णुः।

अलंकृञो मण्डनार्थाद्युचः पूर्वविप्रतिषेधेनेष्णुज्वक्तव्यः (वा.) - मण्डनार्थक अलं + कृञ् धातु से युच् के स्थान पर पूर्वविप्रतिषेध से इष्णुच् प्रत्यय होता है।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'इष्णुच्' की अनुवृत्ति ३.२.१३८ तक जायेगी।

णेश्छन्दसि - (३.२.१३७) - ण्यन्त धातुओं से वेदविषय में तच्छीलादि कर्ता

हो तो वर्तमानकाल में इष्णुच् प्रत्यय होता है। दृषदं धारयिष्णवः (धृ + णिच् + इष्णुच्)। इसी प्रकार - वीरुधः पारयिष्णवः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'छन्दसि' की अनुवृत्ति ३.२.१३८ तक जायेगी।

भुवश्च - (३.२.१३८) - भू धातु से वेदविषय में तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में इष्णुच् प्रत्यय होता है। भविष्णुः। (भू + इट् + इष्णुच्)

अनुवृत्ति - यहाँ से 'भुवः' की अनुवृत्ति ३.२.१३९ तक जायेगी।

ग्स्नु प्रत्यय

ग्लाजिस्थश्च ग्स्नुः - (३.२.१३९) - ग्ला, जि, स्थ तथा चकार से भू धातु से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में ग्स्नु प्रत्यय होता है। ग्लास्नुः (ग्लै +ग्स्नु)। इसी प्रकार - जिष्णुः। स्थास्नु। भूष्णुः।

दंशेश्छन्दस्युपसंख्यानम् (वा.) - दंश् धातु से वेद में ग्स्नु प्रत्यय होता है। दंक्ष्णवः पशवः। (दंश् + ग्स्नु)

क्नु प्रत्यय

त्रसिगृधिधृषिक्षिपेः क्नु - (३.२.१४०) - त्रसि, गृधि, धृषि तथा क्षिप धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में क्नु प्रत्यय होता है। त्रस्नुः (त्रस् + नु)। गृध्नुः। धृष्णुः। क्षिप्नुः।

घिनुण् प्रत्यय

शमित्यष्टाभ्यो घिनुण् - (३.२.१४१) - शमादि आठ धातुओं से घिनुण् प्रत्यय तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में होता है। शमी (शम् +घिनुण्)। इसी प्रकार - तमी। दमी। श्रमी। भ्रमी। क्षमी। क्लमी। प्रमादी, उन्मादी।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'घिनुण्' की अनुवृत्ति ३.२.१४५ तक जायेगी।

संपृचानुरुध्याङ्यमाङ्यसपरिसृसंसृजपरिदेविसंज्वरपरिक्षिपपरिरट-परिवदपरिदहपरिमुहदुषद्विषद्रुहदुहयुजाक्रीडविविचत्यजरजभजातिचरापचरा - मुषाभ्याहनश्च - (३.२.१४२) - इन धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में घिनुण् प्रत्यय होता है।

सम्पर्की (सम् + पृच् + घिनुण्)। अनुरोधी (अनु + रुध् + घिनुण्)। इसी प्रकार - आयामी। आयासी। परिसारी। संसर्गी। परिदेवी। संज्वारी। परिक्षेपी। परिराटी। परिवादी। परिदाही। परिमोही। दोषी। द्वेषी। द्रोही। दोही। योगी। आक्रीडी। विवेकी।

त्यागी। रागी। भागी। अतिचारी। अपचारी। आमोषी। अभ्याघाती।

वौ कषलसकत्थस्रम्भः - (३.२.१४३) - वि पूर्वक कष्, लस्, कत्थ्, स्रम्भ् इन धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमानकाल में घिनुण् प्रत्यय होता है। विकाषी। विलासी। विकत्थी। विस्रम्भी।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'वौ' की अनुवृत्ति ३.२.१४४ तक जायेगी।

अपे च लषः - (३.२.१४४) - अप पूर्वक तथा वि पूर्वक लष् धातु से भी घिनुण् प्रत्यय होता है। अपलाषी (अप + लष् + घिनुण्) इसी प्रकार - विलाषी।

प्रे लपसृद्रुमथवदवसः - (३.२.१४५) - प्र पूर्वक लप्, सृ, द्रु, मथ, वद, वस इन धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में घिनुण् प्रत्यय होता है। प्रलापी (प्र + लप् + घिनुण्)। प्रसारी (प्र + सृ + घिनुण्)। प्रद्रावी (प्र + द्रु + घिनुण्)। प्रमाथी (प्र + मथ् + घिनुण्)। इसी प्रकार - प्रवादी। प्रवासी।

वुञ् प्रत्यय

निन्दहिंसक्लिशखादविनाशपरिक्षिपपरिरटपरिवादिभ्याभाषासूञो वुञ् -

(३.२.१४६) - निन्द्, हिंस् इत्यादि धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो, तो वर्तमान काल में वुञ् प्रत्यय होता है। निन्दकः (निन्द् + वुञ् - निन्द् + अक) । इसी प्रकार - हिंसकः। क्लेशकः। खादकः। विनाशकः। परिक्षेपकः। परिराटकः। परिवादकः। व्याभाषकः। असूयकः।

विशेष - शङ्का होती है कि जो रूप वुञ् प्रत्यय से बन रहे हैं, वे तो ण्वुल् प्रत्यय से भी बन सकते थे। फिर वुञ् क्यों कहा। यह इस बात का ज्ञापक है कि 'तच्छीलिकेषु वासरूपविधिर्नास्ति।' ताच्छीलिक प्रत्ययों में प्रायः वाऽसरूपन्याय नहीं लगता है। अतः तच्छील अर्थ में होने वाले असरूप तृन् प्रत्यय को बाधकर वुञ् प्रत्यय होता है।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'वुञ्' की अनुवृत्ति ३.२.१४८ तक जायेगी।

देविक्रुशोश्चोपसर्गे - (३.२.१४७) - सोपसर्ग दिव् तथा क्रुश् धातुओं से भी ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में वुञ् प्रत्यय होता है। आदेवकः (आ + दिव् + वुञ्)। इसी प्रकार - परिदेवकः। आक्रोशकः। परिक्रोशकः।

युच् प्रत्यय

चलनशब्दार्थादकर्मकाद्युच् - (३.२.१४८) - अकर्मक, चलनार्थक और शब्दार्थक धातुओं से वर्तमान काल में युच् प्रत्यय होता है, ताच्छीलादि कर्ता हो तो। चलनः

(चल् + युच्)। इसी प्रकार - चोपनः। शब्दनः। रवणः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'अकर्मकात्' की अनुवृत्ति ३.२.१४९ तक तथा 'युच्' की अनुवृत्ति ३.२.१५३ तक जायेगी।

अनुदात्तेश्च हलादेः - (३.२.१४९) - अनुदात्तेत् जो हल् आदिवाले अकर्मक धातु, उनसे भी तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में युच् प्रत्यय होता है। वर्तनः (वृत् + युच्) । वर्द्धनः। स्पर्द्धनः।

जुचङ्क्रम्यदन्द्रम्यसृगृधिज्वलशुचलषपतपदः - (३.२.१५०) -

जु यह सौत्र धातु है। चङ्क्रम्य, दन्द्रम्य ये यङन्त धातुयें हैं। जु, चङ्क्रम्य, दन्द्रम्य, सृ, गृधु, ज्वल, शुच, लष, पत, पद इन धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में युच् प्रत्यय होता है। जवनः (जु + युच्)। इसी प्रकार - चङ्क्रमणः। दन्द्रमणः। सरणः। गर्द्धनः। ज्वलनः। शोचनः। लषणः। पतनः। पदनः।

विशेष - इन धातुओं से युच् प्रत्यय पूर्व सूत्र से ही सिद्ध था, किन्तु दोबारा इसलिये कहा कि 'लषपतपद-' ३.२.१५४ सूत्र से प्राप्त होने वाला उकञ् भी इनसे न हो।

क्रुधमण्डार्थेभ्यश्च - (३.२.१५१) - क्रुधार्थक तथा मण्डार्थक धातुओं से भी ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में युच् प्रत्यय होता है। क्रोधनः। मण्डनः। रोषणः। भूषणः।

न यः - (३.२.१५२) - यकारान्त धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में युच् प्रत्यय नहीं होता है। क्नूयिता। क्ष्मायिता।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'न' की अनुवृत्ति ३.२.१५३ तक जायेगी।

सूददीपदीक्षश्च - (३.२.१५३) - षूद, दीपी, दीक्ष् इन धातुओं से भी ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में युच् प्रत्यय नहीं होता है। अतः तृन् होता है।

सूदिता। दीपिता। दीक्षता।

विशेष - १. दीप् धातु से युच् प्रत्यय का निषेध तो आगे आने वाले 'नमिकम्पि- ३.२.१४७ सूत्र से ही सिद्ध था, किन्तु दोबारा निषेध इसलिये किया कि 'तच्छीलिकेषु वासरूपविधिर्नास्ति।' यह निषेध प्रायिक है। अतः कमना, कम्रा युवतिः, बन सकते हैं।

२. सूद धातु से युच् का निषेध है अतः मधुसूदनः शब्द नन्द्यादि गण से ल्यु प्रत्यय करके बनाना चाहिये।

उकञ् प्रत्यय

लषपतपदस्थाभूवृषहनकमगमशृभ्य उकञ् - (३.२.१५४) - लष्, पत्, पद्,

स्था, भू, वृष्, हन्, कम्, गम्, शॄ धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में उकञ् प्रत्यय होता है।

अपलाषुकं वृषलसङ्गतम् (अप + लष् + उकञ्)। इसी प्रकार - प्रपातुका गर्भा भवन्ति। उपपादुकं सत्त्वम्। उपस्थायुका एनं पशवो भवन्ति। प्रभावुकमन्नं भवति। प्रवर्षुकाः पर्जन्याः। आघातुकः। कामुकः। आगामुकं वाराणसीं रक्ष आहुः। किंशारुकं तीक्ष्णमाहुः।

षाकन् प्रत्यय

जल्पभिक्षकुट्टलुण्टवृङः षाकन् - (३.२.१५५) - जल्पादि धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में षाकन् प्रत्यय होता है। जल्पाकः (जल्प् + षाकन्)।

इसी प्रकार - भिक्षाकः। कुट्टाकः। लुण्टाकः। वराकः।

इनि प्रत्यय

प्रजोरिनिः - (३.२.१५६) - प्र पूर्वक जु धातु से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में इनि प्रत्यय होता है। प्रजवी (प्र + जु + इनि) प्रजविनौ आदि।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'इनि' की अनुवृत्ति ३.२.१५७ तक जायेगी।

जिदृक्षिविश्रीण्वमाव्यथाभ्यमपरिभूप्रसूभ्यश्च - (३.२.१५७) - जि, दृ, क्षि आदि धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में इनि प्रत्यय होता है।

जयी (जि + इनि)। इसी प्रकार - दरी, क्षयी, विश्रयी, अत्ययी, वमी, अव्यथी, अभ्यमी, परिभवी, प्रसवी।

आलुच् प्रत्यय

स्पृहिगृहिपतिदयिनिद्रातन्द्राश्रद्धाभ्य आलुच् - (३.२.१५८) - स्पृह्, गृह, पत, दय्, नि + द्रा, तत् + द्रा, श्रद् + धा, इन धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में आलुच् प्रत्यय होता है।

स्पृहयालुः (स्पृह् + णिच् + आलुच्)। इसी प्रकार - गृहयालुः, पतयालुः। ये तीनों धातु चुरादिगण के अदन्त धातु हैं।

दयालुः (दय् + आलुच्)। निद्रालुः (नि + द्रा + आलुच्)। तन्द्रालुः (तत् + द्रा + आलुच्)। तद् के द् को निपातन से नत्व हुआ है। श्रद्धालुः (श्रद् + धा + आलुच्)।

आलुचि शीङो ग्रहणम् कर्तव्यम् (वा.) - शीङ् धातु से भी आलुच् प्रत्यय होता है। शयालुः (शी + आलुच्)।

रु प्रत्यय

दाधेट्सिशदसदो रुः - (३.२.१५९) - दा, धेट्, सि, शद्, सद् इन धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में रु प्रत्यय होता है। दारुः। धारुः। सेरुः। शद्रुः। सद्रुः।

क्मरच् प्रत्यय

सृघस्यदः क्मरच् - (३.२.१६०) - सृ, घसि, अद् इन धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में क्मरच् प्रत्यय होता है। सृमरः, घस्मरः, अद्मरः।

भञ्जभासमिदो घुरच् - (३.२.१६१) - भञ्ज्, भास्, मिद् इन धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में घुरच् प्रत्यय होता है। भङ्गुरं काष्ठम् (भञ्ज् + घुरच्)। भासुरं ज्योतिः। मेदुरः पशुः।

कुरच् प्रत्यय

विदिभिदिच्छिदेः कुरच् - (३.२.१६२) - विद्, भिदिर्, छिदिर् इन धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में कुरच् प्रत्यय होता है। विदुरः, भिदुरः काष्ठम्, छिदुरा रज्जुः।

व्यधेः सम्प्रसारणं कुरच्च वक्तव्यम् (वा.) - व्यध् धातु से कुरच् प्रत्यय होता है तथा धातु को सम्प्रसारण भी होता है। विधुरः।

क्वरप् प्रत्यय

इण्नशजिसर्तिभ्यः क्वरप् - (३.२.१६३) - इण्, नश्, जि, सृ इन धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में क्वरप् प्रत्यय होता है। इत्वरः (इ + क्वरप्)। इसी प्रकार - नश्वरः, जित्वरः, सृत्वरः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क्वरप्' की अनुवृत्ति ३.२.१६४ तक जायेगी।

गत्वरश्च - (३.२.१६४) - 'गत्वरः' यह शब्द क्वरप् प्रत्ययान्त निपातन किया जाता है। इसमें तच्छीलादि अर्थों में वर्तमान काल में, गम्लृ धातु से क्वरप् प्रत्यय तथा अनुनासिक का लोप निपातन है।

ऊक प्रत्यय

जागरूकः - (३.२.१६५) - जागृ धातु से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में ऊक प्रत्यय होता है। जागरूकः (जागृ + ऊक)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ऊकः' की अनुवृत्ति ३.२.१६६ तक जायेगी।

यजजपदशां यङः - (३.२.१६६) - यज, जप, दश इन यङन्त धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में ऊक प्रत्यय होता है। यायजूकः (यायज् + ऊक), जञ्जपूकः (जञ्जप् + ऊक), दन्दशूकः (दन्दश् + ऊक) ।

र प्रत्यय

नमिकम्पिस्म्यजसकमहिंसदीपो रः - (३.२.१६७) - नमि, कम्पि, स्मि, नञ् पूर्वक जसु मोक्षणे धातु, कमु कान्तौ, हिंसि, दीपी, इन धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में र प्रत्यय होता है। नम्रं काष्ठम् (नम् + र)। इसी प्रकार - कम्प्रा शाखा। स्मेरं मुखम्। अजस्रं जुहोति। कम्रा युवतिः। हिंस्रो दस्युः। हिंस्रं रक्षः। दीप्रं काष्ठम्।

उ प्रत्यय

सनाशंसभिक्ष उः - (३.२.१६८) - सन्नन्त धातुओं से तथा आङ्पूर्वक शसि एवं भिक्ष धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में उ प्रत्यय होता है। चिकीर्षुः कटम् (चिकीर्ष् + उ)। वेदं जिज्ञासुः। व्याकरणं पिपठिषुः। आशंसुः। भिक्षुः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'उः' की अनुवृत्ति ३.२.१७० तक जायेगी।

विन्दुरिच्छुः - (३.२.१६९) - 'विन्दुः' यहाँ विद् धातु से तच्छीलादि अर्थों में वर्तमान काल में उ प्रत्यय तथा विद को नुम् का आगम निपातन किया जाता है। इसी प्रकार इच्छु, यहाँ भी इषु धातु से उ प्रत्यय तथा इष् के ष् को छ् निपातन होता है।

वेत्ति तच्छीलो विन्दुः। इच्छति तच्छीलो इच्छुः।

क्याच्छन्दसि - (३.२.१७०) - क्य प्रत्ययान्त धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमानकाल में वेदविषय में उ प्रत्यय होता है। देवयुः, सुम्नयुः, अघायवः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'छन्दसि' की अनुवृत्ति ३.२.१७१ तक जायेगी।

कि, किन् प्रत्यय

आदृगमहनजनः किकिनौ लिट् च - (३.२.१७१) - आत् = आकारान्त, ॠ = ॠकारान्त, गम्, हन् तथा जन् धातुओं से ताच्छीलादि कर्ता हो तो वेदविषय में वर्तमानकाल में कि तथा किन् प्रत्यय होते हैं तथा उन कि तथा किन् प्रत्यय को लिट्वत् कार्य होते हैं।

पपिः सोमं ददिर्गाः (पा + कि) (दा + कि)। मित्रावरुणौ ततुरिः (तॄ + कि)। दूरे ह्यध्वा जगुरिः (गॄ + कि)। जग्मिर्युवा (गम् + कि)। जघ्निर्वृत्रम् (हन् + कि)। जघ्निर्बीजम् (हन् + कि)। बभ्रिर्वज्रम् (भृ + कि)।

किकिनावुत्सर्गः छन्दसि सदादिभ्यो दर्शनात् (वा.) - सेदिः। नेमिः।

भाषायां धाञ्कृञ्सृजनिगमिभ्यः किकिनौ वक्तव्यौ (वा.) - भाषा में धा, कृ आदि धातुओं से कि, किन् प्रत्यय होते हैं। दधिः। चक्रिः। सस्रिः। जज्ञिः। जग्मिः। नेमिः।

सहिवहिचलिपलिपतिभ्यो यङन्तेभ्यः किकिनौ वक्तव्यौ (वा.) -

सह, वह, चल, पल, पत इन धातुओं से यङ् प्रत्यय परे होने पर कि तथा किन् प्रत्यय होते हैं। सासहिः। वावहिः। चाचलिः। पापतिः।

नजिङ् प्रत्यय

स्वपितृषोर्नजिङ् - (३.२.१७२) - स्वप् तथा तृष् धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में नजिङ् प्रत्यय होता है। स्वप्नक् स्वप्नजौ स्वप्नजः (स्वप् + नजिङ्)। तृष्णक् तृष्णजौ तृष्णजः (तृष् + नजिङ्)।

धृषेश्चेति वक्तव्यम् (वा.) - धृष् धातु से भी नजिङ् प्रत्यय होता है। धृष्णक्।

आरु प्रत्यय

शॄवन्द्योरारुः - (३.२.१७३) - शॄ तथा वन्द् धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में आरु प्रत्यय होता है। शरारुः। वन्दारुः। (शॄ + आरु) (वन्द् + आरु)।

क्रु, क्लुकन्, क्रुकन् प्रत्यय

भियः क्रुक्लुकनौ - (३.२.१७४) - भी धातु से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में क्रु तथा क्लुकन् प्रत्यय होते है। भीरुः (भी + क्रु)। भीलुकः (भी + क्लुकन्)।

क्रुकन्नपि वक्तव्यः - भी धातु से क्रुकन् प्रत्यय भी होता है। भीरुकः।

वरच् प्रत्यय

स्थेशभासपिसकसो वरच् - (३.२.१७५) - स्था, ईश आदि धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में वरच् प्रत्यय होता है। स्थावरः। ईश्वरः। भास्वरः। पेस्वरः। कस्वरः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'वरच्' की अनुवृत्ति ३.२.१७६ तक जायेगी।

यश्च यङः - (३.२.१७६) - यङन्त या प्रापणे धातु से भी तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में वरच् प्रत्यय होता है। यायावरः।

क्विप् प्रत्यय

भ्राजभासधुर्विद्युतोर्जिपॄजुग्रावस्तुवः क्विप् - (३.२.१७७) - भ्राज, भास आदि धातुओं से तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में क्विप् प्रत्यय होता है। विभ्राट् (वि

+ भ्राज्), विभ्राजौ। भाः (भा + क्विप्) भासौ। धूः (धुर्व् + क्विप्), धुरौ। इसी प्रकार - विद्युत्। ऊर्क्, ऊर्जौ। पूः पुरौ। जूः जुवौ। ग्रावस्तुत्, ग्रावस्तुतौ।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क्विप्' की अनुवृत्ति ३.२.१७९ तक जायेगी।

अन्येभ्योऽपि दृश्यते - (३.२.१७८) - अन्य धातुओं से भी तच्छीलादि कर्ता हो तो वर्तमान काल में क्विप् प्रत्यय होता है। पचतीति पक् (पच् + क्विप्)। भिनत्तीति भित् (भिद् + क्विप्)। युक् (यु + क्विप्)।

क्विब्वचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसंप्रसारणं च (वा.) - वच्, प्रच्छ, आयत उपपद पूर्वक स्तु, कटोपपदक प्रु, जु तथा श्रि धातुओं से भी क्विप् प्रत्यय, दीर्घ तथा सम्प्रसारण का अभाव भी होता है। वाक् (वच् + क्विप्)। शब्दप्राट् (शब्द + ङस् + प्रच्छ् + क्विप्)। इसी प्रकार - आयतस्तूः। कटप्रूः। जूः (जु + क्विप्)। श्रीः (श्रि + क्विप्)।

द्युतिगमिजुहोतीनां द्वे च (वा.) - द्युत्, गम् तथा हु धातु को द्वित्व भी होता है। दिद्युत्। जगत् (द्युत् - दिद्युत् + क्विप्)।

जुहोतेर्दीर्घश्च (वा.) - हु धातु को दीर्घ भी होता है। जुहूः।

दृ भय इत्यस्य ह्रस्वश्च द्वे च (वा.) - भयार्थक दृ धातु को ह्रस्व भी होता है तथा द्वित्व भी होता है। ददृत्।

ध्यायतेः संप्रसारणं च (वा.) - ध्यै धातु को सम्प्रसारण भी होता है। धीः (ध्यै + क्विप्)।

भुवः संज्ञान्यतरयोः - (३.२.१७९) - भू धातु से संज्ञा तथा अन्तर गम्यमान हो तो क्विप् प्रत्यय होता है। विभूः (वि + भू)। इसी प्रकार - स्वयम्भूः। अन्तरे - प्रतिभूः (ऋणदाता और ऋणकर्ता का बिचवानी)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'भुवः' की अनुवृत्ति ३.२.१८० तक जायेगी।

डु प्रत्यय

विप्रसंभ्यो ड्वसंज्ञायाम् - (३.२.१८०) - संज्ञा गम्यमान न हो तो वि, प्र तथा सम् पूर्वक भू धातु से डु प्रत्यय होता है वर्तमानकाल में। विभुः (वि + भू + डु)। इसी प्रकार - प्रभुः सम्भुः।

डुप्रकरणे मितद्र्वादिभ्य उपसंख्यानम् (वा.) - मित उपपद में होने पर द्रु धातु से भी डु प्रत्यय होता है।

मितं द्रवति मितद्रुः (मित + द्रु)। शंभुः (शम् + भू + डु)।

ष्ट्रन् प्रत्यय

धः कर्मणि ष्ट्रन् - (३.२.१८१) - धा धातु से कर्मकारक में ष्ट्रन् प्रत्यय होता है, वर्तमान काल में। धीयते असौ धात्री। (धात्री जनन्यामलकीवसुमत्युपमातृषु।)

अनुवृत्ति - यहाँ से 'ष्ट्रन्' की अनुवृत्ति ३.२.१८३ तक जायेगी।

दाम्नीशसयुयुजस्तुतुदसिसिचमिहपतदशनहः करणे - (३.२.१८२) - दाप्, नी, शसु आदि धातुओं से करण कारक में ष्ट्रन् प्रत्यय होता है।

दान्त्यनेनेति दात्रम् (दा + ष्ट्रन्)। नयन्ति प्राप्नुवन्त्यनेनेति नेत्रम् (नी + ष्ट्रन्)। शस्त्रम् (शस् + ष्ट्रन्)। योत्रम् (यु + ष्ट्रन्)। योक्त्रम् (यु + ष्ट्रन्)। स्तोत्रम् (स्तु + ष्ट्रन्)। तोत्त्रम् (तुद् + ष्ट्रन्)। सेत्रम् (सि + ष्ट्रन्)। सेक्त्रम् (सिच् + ष्ट्रन्)। मेढ्रम् (मिह् + ष्ट्रन्)। पतन्त्यनेन पत्रम् (पत् + ष्ट्रन्)। दंष्ट्रा (दंश् + ष्ट्रन्)। नद्ध्रम् (नह् + ष्ट्रन्)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'करणे' की अनुवृत्ति ३.२.१८६ तक जायेगी।

हलसूकरयोः पुवः - (३.२.१८३) - पू धातु से करणकारक अर्थ में ष्ट्रन् प्रत्यय होता है, यदि वह करण कारक हल तथा सूकर का अवयव हो तो। हलस्य पोत्रम् (पू + ष्ट्रन्)। सूकरस्य पोत्रम्।

इत्र प्रत्यय

अर्तिलूधूसूखनसहचर इत्रः - (३.२.१८४) - ऋ, लू, धू आदि धातुओं से करण कारक में इत्र प्रत्यय वर्तमान काल में होता है। इयर्त्यनेन - अरित्रम् (ऋ + इत्र)। लवित्रम् (लू + इत्र)। धवित्रम् (धू + इत्र)। सवित्रम् (सू + इत्र)। खनित्रम् (खन् + इत्र)। सहित्रम् (सह् + इत्र)। चरित्रम् (चर् + इत्र)।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'इत्र' की अनुवृत्ति ३.२.१८६ तक जायेगी।

पुवः संज्ञायाम् - (३.२.१८५) - पू धातु से संज्ञा गम्यमान हो तो करण कारक में इत्र प्रत्यय होता है। पवित्रं दर्भः। पवित्रं प्राणापानौ।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'पुवः' की अनुवृत्ति ३.२.१८६ तक जायेगी।

कर्तरि चर्षिदेवतयोः - (३.२.१८६) - पू धातु से ऋषि को कहना हो तो करण कारक में तथा देवता को कहना हो तो कर्ता अर्थ में इत्र प्रत्यय होता है। ऋषि का अर्थ यहाँ वेदमन्त्र है। पूयतेऽनेन आज्यम् इति पवित्रोऽयम् ऋषिः (जिसके द्वारा पवित्र किया

जाये, वह ऋषि)। देवतायाम् - अग्निः पवित्रं स मां पुनातु (अग्नि पवित्र है, वह मुझे पवित्र करे।) वायुः, सूर्यः, सोमः, इन्द्रः पवित्रं ते मां पुनन्तु (अग्नि पवित्र है, वह मुझे पवित्र करे।)।

वर्तमानकाल में क्त प्रत्यय

निष्ठा सूत्र ३.२.१०२, से जो क्त प्रत्यय होता है, वह भूतकाल अर्थ में होता है। अब आगे के दो सूत्रों से जो क्त प्रत्यय हो रहा है, वह वर्तमानकाल अर्थ में हो रहा है, इसलिये पृथक् सूत्र बनाया।

ञीतः क्तः - (३.२.१८७) - 'ञि' जिसका इत् संज्ञक हो ऐसे धातु से वर्तमानकाल में क्त प्रत्यय होता है। ञिमिदा - मिन्नः। क्ष्विण्णः। धृष्टः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क्त' की अनुवृत्ति ३.२.१८८ तक जायेगी।

मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च - (३.२.१८८) - मत्यर्थक, बुद्ध्यर्थक तथा पूजार्थक धातुओं से भी वर्तमान काल में क्त प्रत्यय होता है। मत्यर्थेभ्यः - राज्ञां मतः (मन् + क्त)। राज्ञाम् इष्टः (इष् + क्त)। बुद्ध्यर्थेभ्यः - राज्ञां बुद्धः (बुध् + क्त)। राज्ञां ज्ञातः (ज्ञा + क्त)। पूजार्थेभ्यः - राज्ञां पूजितः (पूज् + णिच् + इट् + क्त)।

इन सबका अर्थ वर्तमानकाल है। धृष्टः का अर्थ है 'जो धृष्ट है'। राज्ञां मतः का अर्थ है, ऐसा मनुष्य, जो राजाओं के द्वारा सम्मानित है। राज्ञां पूजितः का अर्थ है, ऐसा मनुष्य, जो वर्तमान में राजाओं के द्वारा पूजित है (न कि पहिले पूजित था)।

सूत्र में चकार अनुक्तसमुच्चय के लिये है। अतः जो धातु तथा जो अर्थ सूत्र में नहीं हैं, उनमें भी क्त प्रत्यय हो जाता है। यथा -

शीलितो रक्षितः क्षान्त आक्रुष्टो जुष्ट इत्यपि।
रुष्टश्च रुषितश्चोभावभिव्याहृत इत्यपि।।
हृष्टतुष्टौ तथा कान्तस्तथोभौ संयतोद्यतौ।
कष्टं भविष्यतीत्याहुरमृतः पूर्ववत्स्मृतः।।

इनमें कष्टः में कष् धातु से क्त प्रत्यय भविष्यत् काल अर्थ में हुआ है। शेष शीलितः, रक्षितः, क्षान्तः आदि सभी में क्त प्रत्यय पूर्ववत् वर्तमानकाल में ही हुआ है।

❀❀❀

तृतीयाध्याये तृतीयः पादः

ध्यान दें कि 'कर्तरि कृत्' सूत्र सारे कृत् प्रत्ययों को कर्ता अर्थ में ही कहता है। अतः जब तक कोई अन्य वचन उन प्रत्ययों को अन्य किसी अर्थ में न कहे, तब तक कृत् प्रत्यय कर्ता अर्थ में ही होते हैं।

उणादि प्रत्यय

उणादयो बहुलम् (३.३.१) - धातुओं से उणादि प्रत्यय वर्तमान काल में संज्ञा अर्थ में बहुल करके होते हैं।

विशेष - बाहुलक को पीछे ४३३ - ४३४ पृष्ठों पर देखें।

अनुवृत्ति - इस सूत्र में पिछले पाद के सूत्र वर्तमाने लट् ३.२.१२३ से वर्तमाने की अनुवृत्ति आ रही है। और 'पुवः संज्ञायाम् सूत्र ३.२.१८५' से संज्ञायाम् की अनुवृत्ति आ रही है।

सिद्धान्तकौमुदी आदि में ये उणादिसूत्र सोदाहरण व्याख्यात हैं। महाभाष्यकार ने इस सूत्र की व्याख्या करते हुए तथा 'नाम च धातुजमाह निरुक्ते व्याकरणे शकटस्य च तोकम्' इस वार्तिक की व्याख्या करते समय कहा है कि ये सूत्र शाकटायनमुनिप्रणीत हैं, पाणिनिप्रणीत नहीं। जो शब्द इन उणादिप्रत्ययों के द्वारा बनते है।, वे शब्द पाणिनि के मत में अव्युत्पन्न हैं। अतः भाष्य में कहा है - 'उणादयोऽव्युत्पन्नानि प्रातिपदिकानि'।

यदि ये अव्युत्पन्न हैं, तो फिर सर्पिषा, यजुषा, इत्यादि में जो **'इदुदुपधस्य चाप्रत्ययस्य'** सूत्र के द्वारा इनमें प्रत्यय का 'स्' मानकर षत्व किया है, वह कैसे ? वह इसलिये कि बहुलग्रहणात् इनके स् की प्रत्यय संज्ञा हो जाती है, तथापि ये अव्युत्पन्न प्रातिपदिक ही रहते हैं।

रूढ़ और वैदिक शब्दों को उणादि प्रतिपदिक मान लेने के लिये इस सूत्र में संज्ञा शब्द की अनुवृत्ति की है। इसीलिये भाष्यकार कहते हैं - 'वैदिका रूढशब्दाश्चौणादिकाः'। वार्तिक भी है - नैगमरूढिभवं हि सुसाधु।

रूढ शब्दों में यद्यपि प्रत्यय का पृथक् अवयवार्थ नहीं होता है, तथापि कर्ता अर्थ में इनकी व्युत्पत्ति होती है और ये प्रकृतिगत अर्थ को ही प्रकट करते हैं। इस प्रकार ये सारे उणादिप्रत्यय धातुओं से परे 'कर्तरि कृत्' से कर्ता अर्थ में वर्तमानकाल में होते हैं।

उदाहरण - करोतीति कारुः (कृ + उण्)। वाति गच्छति जानाति वेति वायुः (वा + उण्)। पाति रक्षतीति पायुः (पा + उण्)। इसी प्रकार - जायुः। मायुः। स्वादुः। साधुः। आशुः।

उणादिप्रत्यय केवल उतने ही नहीं हैं, जितने सिद्धान्तकौमुदी आदि में व्याख्यात हैं, अपितु शब्दों को देखकर वे कल्पित भी किये जा सकते हैं। यह कल्पना इस प्रकार हा सकती है -

संज्ञासु धातुरूपाणि प्रत्ययाश्च ततः परे।
कार्याद् विद्यादनूबन्धमेतच्छास्त्रमुणादिषु।।

डित्थ, डवित्थ आदि संज्ञाओं को देखकर उनमें यथासम्भव धातुओं का ऊह (कल्पना) कीजिये। उसके बाद उनमें प्रत्ययों की कल्पना कीजिये। गुण, वृद्धि या गुणवृद्धिनिषेध आदि कार्यों को देखकर अनुबन्धों की कल्पना कीजिये।

यथा - हृषेरुलच् इस उणादिसूत्र से हृष् धातु से उलच् प्रत्यय का विधान है, किन्तु शङ्कुला शब्द भी लोक में मिलता है, तो शङ्क धातु से भी उलच् प्रत्यय कर लीजिये। यह प्रकृति का ऊह (कल्पना) है। फिड और फिड्ड प्रत्यय कहीं भी नहीं कहे गये हैं, किन्तु ऋफिड और ऋफिड्ड शब्दों को देखकर ऋ धातु से इन प्रत्ययों की कल्पना कर लीजिये। साथ ही प्रकृति 'ऋ' को गुण नहीं हुआ है, अतः इन प्रत्ययों के कित्व की भी कल्पना कीजिये। इसी प्रकार षण्डः आदि में सत्वाभाव की कल्पना कीजिये।

भूतेऽपि दृश्यन्ते (३.३.२) - धातुओं से उणादि प्रत्यय भूतकाल में भी देखे जाते हैं। वृत्तमिदं वर्त्म। चरितं तच्चर्म। भसितं तदिति भस्म।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'उणादयः' की अनुवृत्ति ३.३.३ तक जायेगी।

भविष्यति गम्यादयः (३.३.३) - उणादि प्रत्ययों से निष्पन्न जो गम्यादि शब्द हैं, वे भविष्यत्काल में साधु होते हैं।

गमिष्यति इति गमी ग्रामम्। आगमिष्यति इति आगामी ग्रामम् (आङ् पूर्वक गम् धातु से गमेरिनिः से इनि प्रत्यय करके 'आङि णित्' से णिद्वद्भाव करके उपधावृद्धि की है।) भविष्यति इति भावी। प्रस्थास्यति इति प्रस्थायी। इसी प्रकार - गमी। आगमी। भावी। प्रस्थायी। प्रतिरोधी। प्रतियोधी। प्रतिबोधी। प्रतियायी। प्रतियोगी **।। एते गम्यादयः।।**

(उणादिप्रत्यय बाहुल्य से वर्तमानकाल में ही होते हैं, क्वचित् भूत, भविष्य में भी हो जाते हैं, यह जानना चाहिये।)

ध्यान दें कि इन शब्दों में जो प्रत्यय हैं, वे ही प्रकृत्यर्थगत भविष्यत्कालता को बतलाते है। इन प्रयोगों में से कुछ तो उणादि प्रत्ययों से बने हैं और कुछ अष्टाध्यायीगत प्रत्ययों से बने हैं। ये इस प्रकार हैं -

ग्रामम् गमी। इसमें गम् धातु से वर्तमानकाल अर्थ में 'गमेरिनिः' इस उणादि सूत्र से इनि प्रत्यय हुआ है। आगामी। इसमें भी आ + गम् धातु से 'गमेरिनिः' इस उणादि सूत्र से इनि प्रत्यय होकर उसे 'आङि णित्' से णिद्वद्भाव हुआ है।

'प्रात्स्थः' इस उणादि सूत्र से वर्तमानकाल अर्थ में स्था धातु से इनि प्रत्यय होकर 'प्रस्थायी' बना है और भू धातु से भुवश्च सूत्र से इनि प्रत्यय होकर आङि णित् से णिद्वद्भाव होकर भावी बना है। ये चारों वर्तमान अर्थ में हैं।

प्रतिरोधी में रुध् धातु से, प्रतिबोधी में बुध् धातु से, प्रतियोधी में युध् धातु से, प्रतियोगी में युज् धातु से, प्रतियायी, आयायी में या धातु से, सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये सूत्र से णिनि प्रत्यय हुआ है। ये भविष्यत् अर्थ में हैं।

अनद्यतन उपसंख्यानम् (वा.) - अनद्यतन भविष्यत् काल में भी गमी आदि शब्द बनाये जाते हैं। श्वो गमी ग्रामम्।

सारे उणादिसूत्र सिद्धान्तकौमुदी आदि में ये सोदाहरण व्याख्यात हैं। उन्हें वहीं देख लेना चाहिये।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'भविष्यति' की अनुवृत्ति ३.३.१५ तक जायेगी।

३.३.४ से ३.३.९ तक के सूत्रों में लकार प्रत्यय हैं, जिनका कृदन्त से प्रयोजन न होने से उन्हें छोड़कर आगे के सूत्र दे रहे हैं -

तुमुन्, ण्वुल् प्रत्यय

तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् - ३.३.१० - क्रियार्था क्रिया उपपद में हो तो धातु से तुमुन् तथा ण्वुल् प्रत्यय भविष्यत् काल में होते हैं।

क्रियार्था क्रिया का अर्थ है - क्रिया अर्थः प्रयोजनं यस्याः क्रियायाः सा क्रियार्था क्रिया। अर्थात् ऐसी क्रिया, जिसका प्रयोजन कोई दूसरी क्रिया हो।

'भोक्तुं व्रजति', इस वाक्य को देखिये। यहाँ जाने की क्रिया, खाने की क्रिया के लिये हो रही है, अतः जाने की क्रिया, क्रियार्था क्रिया है। क्रियार्था क्रिया उपपद में हो, तो उस धातु से तुमुन् और ण्वुल् प्रत्यय होते हैं, जिसके लिये यह क्रियार्था क्रिया की जा रही है। 'व्रजति' क्रियार्था क्रिया है। अतः इसके उपपद में रहने पर 'भुज्' धातु से तुमुन्

अथवा ण्वुल् प्रत्यय कर्ता अर्थ में होते हैं, यह तात्पर्य है।

तुमुन् प्रत्यय के अर्थ का विचार -

कृन्मेजन्तः - मकारान्त और एजन्त कृदन्तों की अव्यय संज्ञा होती है। अतः तुमुन् प्रत्यय से बने हुए सारे शब्द अव्यय ही होंगे। इसलिये इनसे परे आने वाली स्वादि विभक्तियों का 'अव्ययादाप्सुपः' सूत्र से लोप हो जायेगा।

अव्ययकृतो भावे - जिन कृदन्तों की अव्ययसंज्ञा होती है, वे कर्ता अर्थ में न होकर भाव अर्थ में होते हैं।

इस प्रकार हमें जानना चाहिये कि **'तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्'** से होने वाले तुमुन् और ण्वुल् प्रत्ययों में से तुमुन् प्रत्यय तो **'अव्ययकृतो भावे'** से भाव अर्थ में होता है और ण्वुल् प्रत्यय **कर्तरि कृत्** से कर्ता अर्थ में ही होता है।

कृष्णं द्रष्टुं याति (कृष्ण को देखने के लिये जाता है।) कृष्णं दर्शको याति (कृष्ण को देखने के लिये जाता है।)

इसी प्रकार - अन्नं भोक्तुं व्रजति (अन्न खाने के लिये जाता है।)। अन्नं भोजको व्रजति (अन्न खाने के लिये जाता है।)।

ण्वुल् प्रत्यय के अर्थ का विचार -

ण्वुल्तृचौ सूत्र से होने वाला ण्वुल् प्रत्यय तथा **तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्** से होने वाला ण्वुल् प्रत्यय, ये दोनों ही कर्ता अर्थ में होते हैं -

किन्तु दोनों का अन्तर यह होता है कि **'ण्वुल्तृचौ'** सूत्र से होने वाले ण्वुल् प्रत्यय के योग में **'कर्तृकर्मणोः कृति'** सूत्र से कर्म में षष्ठी विभक्ति होती है। ओदनस्य पाचकः, जगतः कारकः, आदि, और **'तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्'** से भविष्यत् अर्थ में होने वाले ण्वुल् प्रत्यय के योग में **'अकेनोर्भविष्यदाधमर्ण्ययोः'** सूत्र से षष्ठी का निषेध हो जाने से **'कर्मणि द्वितीया'** सूत्र से कर्म में द्वितीया ही होती है। यथा - कृष्णं दर्शको याति।

भाववचनाश्च - (३.३.११) -

(आगे 'भावे' का अधिकार आ रहा है। यह 'भावे' का अधिकार ३.३.१८ से लेकर 'आक्रोशे नञ्यनिः' ३.३.११२' सूत्र तक जाता है। अतः इस अधिकार में आने वाले सारे प्रत्यय 'भाववचन' कहलाते हैं।)

ये भाववचनप्रत्यय अर्थात् ३.३.१८ से लेकर ३.३.११२' तक के सूत्रों से विहित भाववाचक प्रत्यय भी, क्रियार्था क्रिया उपपद में हो, तो भविष्यत्काल में, धातु से होते हैं।

यथा - पाकाय व्रजति (भोजन पकाने के लिये जाता है)। भूतये व्रजति (सम्पत्ति के लिये जाता है।) पुष्टये व्रजति (पुष्टि के लिये जाता है।)।

यहाँ पाक: में पच् धातु से भाव अर्थ में घञ् प्रत्यय हुआ है, भूति: में भू धातु से भाव अर्थ में क्तिन् प्रत्यय हुआ है और पुष्टि: में पुष् धातु से भाव अर्थ में क्तिन् प्रत्यय हुआ है।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'क्रियार्था क्रिया' की अनुवृत्ति ३.३.१३ तक जायेगी।

अण् प्रत्यय

अण्कर्मणि च - ३.३.१२ - क्रियार्था क्रिया एवं कर्म उपपद में हों तो भविष्यत् काल में धातु से अण् प्रत्यय भी होता हैं। काण्डलाव: व्रजति (शाखा को काटेगा, इसलिये जाता है।) कम्बलदाय: व्रजति (कम्बल देगा, इसलिये जाता है।) गोदाय: (गाय देगा, इसलिये जाता है।)। अश्वदाय: (अश्व देगा, इसलिये जाता है।)।

बाध्यबाधकभाव - यह अण् प्रत्यय 'तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्' से होने वाले ण्वुल् प्रत्यय का अपवाद है।

विशेष - यहाँ से 'भविष्यति' निवृत्त हो गया। भूते, वर्तमान आदि पहिले ही निवृत्त हो चुके हैं। अत: अब जो प्रत्यय होंगे, वे तीनों कालों में सामान्य हैं। अत: कर्ता अर्थ में होने वाले इन सामान्य प्रत्ययों का सम्बन्ध पुन: धातो: के अधिकार के पूर्वोक्त प्रत्ययों से करते हुए हमें बाध्यबाधकभाव का निर्णय करते हुए चलना चाहिये।

यदि पूर्वोक्त प्रत्ययों में से कोई सरूप प्रत्यय यहाँ प्राप्त हो तो उसका नित्य बाध होगा और यदि पूर्वोक्त प्रत्ययों में से कोई असरूप प्रत्यय यहाँ प्राप्त हो तो उसका विकल्प से बाध होगा।

३.३.१३ से ३.३.१५ तक के सूत्रों में लकार प्रत्यय हैं, जिनका कृदन्त से प्रयोजन न होने से उन्हें छोड़कर आगे के सूत्र दे रहे हैं -

घञ् प्रत्यय

पदरुजविशस्पृशो घञ् - (३.३.१६) - पद्, रुज्, विश्, स्पृश्, इन धातुओं से कर्ता अर्थ में घञ् प्रत्यय होता है। पद्यतेऽसौ पाद: (पद् + घञ्)। इसी प्रकार - रुजत्यसौ रोग:। विशत्यसौ वेश:। स्पृशतीति स्पर्श:।

अनुवृत्ति - इसमें ऊपर से 'घञ्' की अनुवृत्ति भी आ रही है। यह 'घञ्' की अनुवृत्ति यहाँ से लेकर 'परौ भुवोऽवज्ञाने ३.३.५५' तक चलेगी। उसके बाद निवृत्त हो जायेगी।

यह भी ध्यान दें कि 'कर्तरि कृत्' सूत्र सारे कृत् प्रत्ययों को कर्ता अर्थ में ही कहता है। अत: जब तक कोई अन्य सूत्र उन प्रत्ययों को अन्य किसी अर्थ में न कहे, तब तक कृत् प्रत्यय कर्ता अर्थ में ही होते हैं, यह जानना चाहिये।

बाध्यबाधकभाव - ध्यान दें कि पहिले 'नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यच: ३.१.१३४' सूत्र में 'अज्विधि: सर्वधातुभ्य:' कहकर धातुमात्र से कर्ता अर्थ में अच् का विधान किया गया है। परन्तु यहाँ इन चार धातुओं से कर्ता अर्थ में घञ् कहा जा रहा है। देखिये कि घञ्=अ और अच्=अ, ये सरूप प्रत्यय हैं। अत: सरूप होने के कारण यह कर्त्रर्थक घञ् प्रत्यय, कर्त्रर्थक अच् प्रत्यय को नित्य बाधेगा। तो इन चार धातुओं से कर्ता अर्थ में घञ् होगा और शेष धातुओं से कर्ता अर्थ में से अच् होगा। ऐसा ही आगे सर्वत्र समझना चाहिये।

स्पृश उपताप इति वक्तव्यम् (वा.) - स्पृश् धातु से उपताप अर्थ में ही घञ् प्रत्यय का विधान है। स्पृशतीति स्पर्श उपताप:। ध्यान दें कि यह 'घञ्' प्रत्यय भी कर्ता अर्थ में हुआ है।

सृ स्थिरे - (३.३.१७) - सृ धातु से स्थिर अर्थात् चिरस्थायी कर्ता वाच्य हो तो घञ् प्रत्यय होता है। चन्दनस्य सार: चन्दनसार:। खदिरसार:। (यह देर तक रहता हुआ कालान्तर तक सरण करता है।) यह 'घञ्' प्रत्यय भी कर्ता अर्थ में हुआ है। 'सारो बले दृढांशे च'।

व्याधिमत्स्यबलेष्विति वक्तव्यम् (वा.) - व्याधि, मत्स्य तथा बल अर्थ में सृ धातु से घञ् प्रत्यय होता है। अतीसारो व्याधि:, विसारो मत्स्य:, सारो बलम्। यह 'घञ्' प्रत्यय भी कर्ता अर्थ में हुआ है।

'भावे' का अधिकार

भावे (३-३-१८) - भाव अर्थात् धात्वर्थ वाच्य हो, तो धातुमात्र से घञ् प्रत्यय होता है। **यह अधिकार सूत्र है -**

इस 'भावे' का अधिकार यहाँ से लेकर 'आक्रोशे नञ्यनि:' ३.३.११२' सूत्र तक जायेगा। इसका अर्थ है कि ३.३.१८ से ३.३.११२ सूत्रों तक भाव अर्थ में 'घञ्' प्रत्यय का अधिकार है।

भाव का अर्थ होता है 'धात्वर्थ=धातु का अर्थ'। हम जानते हैं कि धातु का अर्थ होता है 'क्रिया'। वही 'क्रिया' अर्थ इस अधिकार में आने वाले प्रत्ययों का भी होगा।

प्रश्न होता है कि धातु जिस अर्थ को कह रहा है, ठीक उसी अर्थ को कहने के लिये प्रत्यय की क्या आवश्यकता है ?

तो इसका उत्तर यह है कि धातु में जो अर्थ होता है, वह पूर्वापरीभूत अपरिनिष्पन्न होता है। जैसे उठना, बैठना, खाना, सोना, जागना, देखना, सुनना आदि। यह अर्थ आख्यातस्वरूप है अर्थात् साध्यरूप है। हम चाहें कि इसमें किसी लिङ्ग, वचन विभक्ति का अन्वय कर लें, तो अशक्य है। अतः इस साध्यावस्थापन्न क्रिया को सिद्धावस्थापन्न बनाने के लिये और उसमें लिङ्ग, संख्या, कारक आदि द्रव्यधर्मों का संयोग करके उन्हें सुबन्त पद बनने की योग्यता प्रदान करने के लिये इन धातुओं में भाववाची प्रत्यय लगाने की आवश्यकता है।

भाववाची प्रत्यय होने का तात्पर्य यह है कि ये प्रत्यय यद्यपि उसी अर्थ को बतलाते हैं, जो अर्थ धातु में पहिले से ही है। किन्तु धातु के अर्थ में जो लिङ्ग, संख्या, कारक आदि द्रव्यधर्मों का सम्बन्ध नहीं है, उसे उसमें ये उत्पन्न कर देते हैं। इस प्रकार इन भाववाची प्रत्ययों को लगाकर बने हुए शब्दों के दो भाग होते हैं।

१. धातुभाग। यह आख्यातरूप होता है। इसमें क्रिया लिङ्ग, संख्या, कारक आदि से विहीन होकर साध्यावस्था में रहती है। जैसे - पच्, त्यज्, वह्, गम्, हृ, नी, आदि।

२. प्रत्ययभाग। यह सत्त्वरूप (द्रव्यरूप) होता है। इसमें क्रिया सिद्धावस्था में रहती है और इसका लिङ्ग, संख्या, कारक आदि से सम्बन्ध हो सकता है। अतः दोनों के अर्थ अलग अलग होने के कारण धातुओं में भाववाची प्रत्यय लगाने का औचित्य है ही।

जैसे 'पचति' आदि में 'पच्' इस प्रकृतिभाग से क्रिया कही जाती है और प्रत्ययभाग 'तिप्' से उसकी साधनता (कारकता) कही जाती है, उसी प्रकार 'पाकः' आदि में प्रकृतिभाग से 'साध्यरूप अर्थ' कहा जाता है और प्रत्ययभाग से उसकी सिद्धरूपता कही जाती है।

जैसे - पचनं पाकः (पच् + घञ्) (पकाना) / त्यजनं त्यागः (त्यज् + घञ्) (त्यागना) / रञ्जनं रागः (रञ्ज् + घञ्) (रँगना) / आवाहः (कन्या को विवाह करके लाना) (वह् + घञ्) / विवाहः (ब्याहना)। **इसी बात को कहा है -**

आख्यातशब्दे भागाभ्यां साध्यसाधनवर्तिता।
प्रकल्पिता यथा शास्त्रे स घञादिष्वपि क्रमः।।

साध्यत्वेन क्रिया तत्र धातुरूपनिबन्धना।
सत्त्वभावस्तु यस्तस्याः स घञादिनिबन्धनः।।

घञब्बतः (पुंसि) (लिङ्गानुशासन) - घञन्त, अबन्त शब्द पुंल्लिङ्ग में होते हैं। अन्य भाववाची प्रत्ययों के लिङ्ग आगे बतलाते जायेंगे।

'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्' का अधिकार

अकर्तरि च कारके संज्ञायाम् (३-३-१९) - कर्ता से भिन्न कारक में धातु से संज्ञाविषय में 'घञ्' प्रत्यय होता है।

आवाहः (कन्या को विवाह करके लाना)। विवाहः (कन्या को विवाह करके लाना)। प्रासः (भाला)। प्रसेवः (थैला), आदि।

चकार कहने से कभी कभी 'को भवता दायो दत्तः' 'को भवता लाभो लब्धः', इत्यादि में संज्ञाभिन्न अर्थ में भी हो जाता है।

यह भी अधिकार सूत्र हैं - यह अधिकार यहाँ से लेकर 'आक्रोशे नञ्यनिः' ३.३.११२' सूत्र तक जाता है। हम जानते हैं कि 'भावे' का अधिकार भी ३.३.११२ तक जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि ३.३.१९ से ३.३.११२ सूत्रों के बीच जो भी प्रत्यय होंगे, उनमें दोनों का अधिकार जायेगा।

अतः ३.३.१९ से ३.३.११२ सूत्रों के बीच के सूत्रों से जो प्रत्यय होंगे, वे भाव अर्थ में होंगे तथा कर्ता से भिन्न कारक संज्ञा अर्थ में होंगे, यह जानना चाहिये।

कर्ता से भिन्न कारक अर्थ में होने का तात्पर्य यह है 'कर्तरि कृत् ३.४.६७' सूत्र के अनुसार कृत् प्रत्यय कर्ता अर्थ में अर्थात् 'करने वाला' में होते हैं। इसीलिये तृच् का अर्थ होता है - करोति इति कर्ता। ण्वुल् का अर्थ होता है - करोति इति कारकः, आदि।

किन्तु अब 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम् ३.३.१९' से लेकर 'आक्रोशे नञ्यनिः ३.३.११२' सूत्र तक जो प्रत्यय होंगे, वे कर्ता अर्थ में नहीं होंगे। अतः उनका अर्थ 'कर्ता अर्थात् करने वाला' नहीं होगा। जैसे -

प्रास्यन्ति तं इति प्रासः (भाला) (प्र + अस् + घञ्) (जो फेंका जाये, वह भाला), यह कर्म अर्थ है।

प्रसीव्यन्ति तं इति प्रसेवः (थैला), (प्र + सिव् + घञ्) (जो सिया जाये, वह थैला), यह कर्म अर्थ है।।

आहरन्ति रसं तस्मादिति आहारः (भोजन) (आ + हृ + घञ्), जिससे रस निकाला जाये वह आहार। यह अपादान अर्थ है।

बाध्यबाधकभाव -

जो सामान्य बनकर सबके लिये कहा जाये, वह उत्सर्ग होता है और जो उसी के भीतर किसी विशेष के लिये कह दिया जाये, वह उसका अपवाद होता है।

हम जानते हैं कि यहाँ से लेकर 'आक्रोशे नञ्यनिः ३.३.११२' सूत्र तक 'भावे' और 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्', इन अर्थों का अधिकार है और 'भावे' सूत्र में घञ् की अनुवृत्ति है, इसलिये धातुमात्र से 'भावे' और 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्', इन अर्थों में औत्सर्गिक प्रत्यय 'घञ्' ही है।

किन्तु हम देखते हैं कि 'पदरुजविशस्पृशो घञ्' सूत्र से जो 'घञ्' प्रत्यय की अनुवृत्ति आ रही है, वह अनुवृत्ति केवल 'परौ भुवोऽवज्ञाने ३.३.५५' तक ही चलती है। उसके बाद 'भावे' और 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्', इन अर्थों में दूसरे प्रत्यय कहे जाते हैं।

जैसे - 'एरच् ३.३.५६' सूत्र 'भावे' और 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्', इन अर्थों में इकारान्त धातुओं से अच् प्रत्यय कहता है और 'ऋदोरप् ३.३.५७' सूत्र ऋकारान्त तथा उकारान्त धातुओं से 'भावे' और 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्', इन अर्थों में 'अप्' प्रत्यय कहता है।

अतः 'भावे' और 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्', इन्हीं अर्थों में कहे जाने वाले अच् और अप् प्रत्यय, घञ् प्रत्यय के अपवाद बनते हैं।

अब हम ध्यान दें कि इकारान्त धातुओं से 'एरच् ३.३.५६' सूत्र से 'भावे' और 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्', इन अर्थों में अच् प्रत्यय कहे जाने के बाद भी यदि 'इङश्च' सूत्र इकारान्त धातुओं से घञ् प्रत्यय कहता है, तो हमें इस प्रकार जानना चाहिये -

भाव अर्थ में सारे धातुओं से घञ् प्रत्यय का विधान होने के कारण इङ् धातु से 'भावे' सूत्र से 'घञ्' ही प्रथमतः प्राप्त होता है, उसे बाधकर 'एरच्' सूत्र से इङ् धातु को अच् प्रत्यय प्राप्त होता है और उस अच् प्रत्यय को पुनः बाधकर 'इङश्च' सूत्र से उसे 'घञ्' प्रत्यय होता है।

इस प्रकार 'भावे' और 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्', इन अर्थों में होने वाले प्रत्ययों का बाध्यबाधकभाव समझते हुए चलना चाहिये।

अभी ३.३.५५ तक औत्सर्गिक प्रत्यय घञ् ही है। इसलिये आगे जो भी प्रत्यय आयेंगे, वे इस घञ् के अपवाद बनकर ही आयेंगे।

परिमाणाख्यायाम् सर्वेभ्यः (३-३-२०) - सब धातुओं से परिमाण की आख्या = कथन, गम्यमान हो तो घञ् प्रत्यय होता है। निचीयते यः स निचायः = राशिः - तण्डुलानां निचायः तण्डुलनिचायः। एकस्तण्डुलनिचायः (एक ढेर चावल) (नि + घञ्)। द्वौ शूर्पनिष्पावौ (दो सूपे साफ किया हुआ तण्डुलादि)(निस् + पू + घञ्)। त्रयः काराः (तीन बिखेरन) (कॄ + घञ्)।

बाध्यबाधकभाव - प्रश्न होता है कि जब ३.३.५५ सूत्र तक घञ् प्रत्यय का अधिकार है ही, तब फिर उसी ३.३.५५ तक के बीच में बार बार घञ् प्रत्यय का विधान (तीन सूत्रों को छोड़कर) क्यों किया जा रहा है ?

इसे इस प्रकार समझना चाहिये -

पुरस्तादपवादा अनन्तरानेव विधीन् बाधन्ते नोत्तरान् (परिभाषा) -

यदि अपवादशास्त्र (बाधक), उत्सर्गशास्त्र (बाध्य) के पहिले ही कह दिया जाये, तब वह आगे आने वाले अनेक उत्सर्गों में से केवल उसी को बाधेगा, जो उसे सबसे पहिले प्राप्त होगा। जैसे -

भाव अर्थ में तथा कर्ता से भिन्न कारक अर्थ में -

इकारान्त धातुओं से 'एरच् ३.३.५६' सूत्र अच् प्रत्यय का विधान कर रहा है और ऋकारान्त तथा उवर्णान्त धातुओं से 'ऋदोरप् ३.३.५७' सूत्र अप् प्रत्यय का विधान कर रहा है। इनका बाधक घञ्, इनके पहिले ही ३.३.२० में बैठा हुआ है।

जब अपवादसूत्र उत्सर्गसूत्र के पहिले ही बैठ जाता है, तब उसे 'पुरस्तादपवाद' कहा जाता है। 'पुरस्तादपवाद' का अर्थ है कि इसे चलते चलते जो प्रथम बाध्य सूत्र मिलता है, उसी को यह बाध सकता है, उससे आगे वालों को छोड़ देता है। 'पुरस्तादपवादा अनन्तरानेव विधीन् बाधन्ते नोत्तरान्।'

यहाँ बाधक प्रत्यय 'घञ्' है, उसे चलते चलते सबसे पहिले 'एरच्' मिलता है, तो यह उसी को बाध सकता है, उसके आगे आने वाले अप् को नहीं।

परन्तु हम चाहते हैं कि यह घञ् प्रत्यय आगे आने वाले अप् को भी बाध ले, इसलिये इस सूत्र में 'सर्वेभ्यः' कहा है। वह यह बतलाने के लिये ही कहा है कि इस अधिकार में यदि 'परिमाण अर्थ' कहना हो, तो सारे धातुओं से घञ् ही होगा, अन्य कोई प्रत्यय नहीं।

दारजारौ कर्तरि णिलुक् च - कर्ता अर्थ में हेतुमण्ण्यन्त दृ तथा जॄष् धातुओं से णिलोप तथा घञ् प्रत्यय होता है। दारयन्तीति दाराः। जरयन्तीति जाराः।

बाध्यबाधकभाव - देखिये कि भाव अर्थ में तथा कर्ता से भिन्न कारक अर्थ में ऋकारान्त तथा उवर्णान्त धातुओं से 'ऋदोरप्' सूत्र अप् प्रत्यय का विधान कर रहा है। इकारान्त धातुओं से 'एरच्' सूत्र अच् प्रत्यय का विधान कर रहा है। तब भी इस घञ् प्रत्यय के अधिकार में अर्थात् ३.३.५५ के बीच, अनेक इकारान्त, उकारान्त और ऋकारान्त धातुओं से घञ् प्रत्यय किया जा रहा है। अत: ३.३.५५ तक, इकारान्त धातुओं से होने वाले घञ् प्रत्यय को 'एरच्' सूत्र से होने वाले अच् प्रत्यय का अपवाद समझना चाहिये तथा उकारान्त और ऋकारान्त धातुओं से होने वाले घञ् प्रत्यय को 'ऋदोरप्' सूत्र से होने वाले अप् प्रत्यय का अपवाद समझना चाहिये।

इङश्च (३-३-२१) - इङ् धातु से कर्तृभिन्न कारक में संज्ञा विषय में तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है। अध्याय: (जिसका अध्ययन किया जाता है) (अधि + इङ् + घञ्) / इसी प्रकार - उपाध्याय: (जिसके समीप जाकर पढ़ा जाता है)।

बाध्यबाधकभाव - हम देखते हैं कि इकारान्त धातुओं से 'एरच् ३.३.५६' सूत्र अच् प्रत्यय का विधान कर रहा है अत: इकारान्त धातु 'इङ्' से होने वाला यह घञ् प्रत्यय एरच् से होने वाले अच् प्रत्यय का अपवाद है।

अपादाने स्त्रियामुपसंख्यानम् तदन्ताच्च वा ङीष् (वा.) - अपादानार्थ में स्त्रीत्व विवक्षा में इङ् धातु से घञ् प्रत्यय तथा घञन्त शब्द से स्त्रीत्व में ङीष् होता है।

उपाध्याया, उपाध्यायी।

शॄ वायुवर्णनिवृतेषु (वा.) - वायु, वर्ण तथा निवृत अर्थों में शॄ धातु से घञ् प्रत्यय होता है। शारो वायु:। शारो वर्ण: (चितकबरा रङ्ग)। शारो निवृतम् (चितकबरी चादर)।

बाध्यबाधकभाव - यह घञ् प्रत्यय 'ऋदोरप्' सूत्र से होने वाले अप् प्रत्यय का अपवाद है।

उपसर्गे रुव: (३-३-२२) - उपसर्ग उपपद रहने पर रु धातु से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में तथा भाव में। संराव: (आवाज) (रु + घञ्) / इसी प्रकार - उपराव: (आवाज) / विराव: (आवाज)।

बाध्यबाधकभाव - यह घञ् प्रत्यय 'ऋदोरप्' सूत्र से होने वाले अप् प्रत्यय का अपवाद है।

समि युद्रुदुव: (३-३-२३) - सम् पूर्वक यु, द्रु, दु धातुओं से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में, संज्ञाविषय में, तथा भाव में। संयाव: (हलुवा) (सम् + यु + घञ्)।

इसी प्रकार - सन्द्रावः (भागना)। सन्दावः (भागना)।

बाध्यबाधकभाव - यह घञ् प्रत्यय 'ऋदोरप्' सूत्र से होने वाले अप् प्रत्यय का अपवाद है। इसी प्रकार आगे भी घञधिकार के भीतर इकारान्त धातुओं से होने वाले घञ् प्रत्यय को 'एरच्' सूत्र का अपवाद समझना चाहिये, और उकारान्त और ऋकारान्त धातुओं से होने वाले घञ् प्रत्यय को 'ऋदोरप्' सूत्र का अपवाद समझना चाहिये।

श्रिणीभुवोऽनुपसर्गे (३-३-२४) - उपसर्ग रहित श्रि, णी, भू इन धातुओं से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में, संज्ञाविषय में, तथा भाव में। श्रायः (आश्रय)(श्रि + घञ्) / इसी प्रकार - नायः (ले जाना) / भावः (होना)।

वौ क्षुश्रुवः (३-३-२५) - वि पूर्वक क्षु तथा श्रु धातु से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में, संज्ञाविषय में, तथा भाव में। विक्षावः (शब्द करना)(वि + क्षु + घञ्) / इसी प्रकार - विश्रावः (अति प्रसिद्धि होना)।

अवोदोर्नियः (३-३-२६) - अव और उद् उपसर्ग पूर्वक नी धातु से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में, संज्ञाविषय में, तथा भाव में। अवनायः (अवनति) (अव + नी + घञ्) / इसी प्रकार - उन्नायः (उन्नति)।

प्रे द्रुस्तुस्रुवः (३-३-२७) - प्र पूर्वक द्रु, स्तु, स्रु, इन धातुओं से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय में, तथा भाव में। प्रद्रावः (भागना)(प्र + द्रु + घञ्) / इसी प्रकार - प्रस्तावः (प्रस्ताव) / प्रस्रावः (बहना)।

निरभ्योः पूल्वोः (३-३-२८) - निर् तथा अभि पूर्वक पू, लू धातुओं से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। निष्पावः (पवित्र करना) (निस् + पू + घञ्) / इसी प्रकार - अभिलावः (काटना)।

उन्योर्ग्रः (३-३-२९) - उद् नि उपपद में रहते गॄ धातु से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में, संज्ञाविषय में, तथा भाव में। उद्गारः (वमन, आवाज) (उद् + गॄ + घञ्) / इसी प्रकार - निगारः (भोजन)।

कॄ धान्ये (३-३-३०) - उद् नि उपपद में रहते कॄ धातु से धान्यविषय में घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। उत्कारो धान्यस्य (धानों को इकट्ठा करना और ऊपर उछालना) (उत् + कॄ + घञ्) / इसी प्रकार - निकारो धान्यस्य (धान का ऊपर फेंकना)।

यज्ञे समि स्तुवः (३-३-३१) - यज्ञ के विषय में सम् पूर्वक स्तु धातु से घञ्

प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। संस्तावः (सामगान करने वाले ऋत्विजों का स्तुति करने का स्थान) (सम् + स्तु + घञ्)।

प्रे स्त्रो यज्ञे (३-३-३२) - यज्ञ के विषय को छोड़कर प्र पूर्वक स्तॄञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। शङ्खप्रस्तारः (शङ्खों का फैलाव, विस्तार)(प्र + स्तॄ + घञ्)।

प्रथने वावशब्दे (३-३-३३) - वि पूर्वक स्तॄञ् धातु से अशब्दविषयक प्रथन = विस्तार, को न कहना हो तो घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। पटस्य विस्तारः (कपड़े का फैलाव) (वि + स्तॄ + घञ्)।

छन्दोनाम्नि च (३-३-३४) - वि पूर्वक स्तॄञ् धातु से छन्द का नाम कहना हो तो घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में।

(वि + स्तॄ + घञ्) विस्तीर्यन्तेऽस्मिन्नक्षराणि इति, इस अधिकरण अर्थ में घञ् प्रत्यय करके अनन्तर उत्तरपद से कर्मधारय समास करके - विष्टारबृहती छन्दः, विष्टारपङ्क्तिश्छन्दः।

उदि ग्रहः (३-३-३५) - उद् पूर्वक् ग्रह् धातु से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। उद्ग्राहः (विद्या का विचार)(उद् + ग्रह् + घञ्)।

बाध्यबाधकभाव - ग्रह् धातु से होने वाला घञ् प्रत्यय 'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' सूत्र से होने वाले अप् प्रत्यय का अपवाद है।

छन्दसि निपूर्वादपीष्यते स्रुगुद्यमननिपातनयोः - स्रुक् के उद्यमन और निपातन अर्थ में ग्रह् धातु से घञ् प्रत्यय होता है। उद्ग्राभं च निग्राभं च ब्रह्म देवा अवीवृधन्। (उद् + ग्रह् + घञ्)

समि मुष्टौ (३-३-३६) - सम् पूर्वक् ग्रह् धातु से धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय में, तथा भाव में, मुष्टि = मुट्ठीविषय में घञ् प्रत्यय होता है। अहो मल्लस्य संग्राहः (अहो, पहलवान की पकड़)(सम् + ग्रह् + घञ्)।

परिन्योर्नीणोर्द्यूताभ्रेषयोः (३-३-३७) - परि तथा नि उपपद में रहते यथासंख्य करके नी तथा इण् धातु से द्यूत तथा अभ्रेष (उचित आचरण करना) के विषय में घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। परिणायेन शारान् हन्ति (चारों ओर से जाकर पाँसों को मारता है।) (परि + नी + घञ्)। द्यूत अर्थ न होने पर अच् होकर - परिणयो विवाहः।

अभ्रेष अर्थ में - एषोऽत्र न्याय: (यहाँ यही उचित है।) (नि + इ + घञ्)। अभ्रेष अर्थ न होने पर - न्ययो नाश:।

बाध्यबाधकभाव - यह घञ् प्रत्यय, 'एरच्' सूत्र से होने वाले 'अच् प्रत्यय' का अपवाद है। आगे भी ३.३.५५ तक, इकारान्त धातुओं से होने वाले घञ् प्रत्यय को इसी प्रकार अच् प्रत्यय का अपवाद समझिये।

परावनुपात्यय इण: (३-३-३८) - परि पूर्वक इण् धातु से अनुपात्यय क्रम, = परिपाटी, गम्यमान होने पर घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में, संज्ञाविषय में, तथा भाव में। तव पर्याय: (तेरी बारी) (परि + इ + घञ्) / इसी प्रकार - मम पर्याय: (मेरी बारी)।

व्युपयो: शेते: पर्याये (३-३-३९) - वि उप पूर्वक शीङ् धातु से पर्याय (प्राप्तावसरता) गम्यमान होने पर घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। तव विशाय: (तेरी सोने की बारी है।) (वि + शी + घञ्)। मम विशाय: (मेरी सोने की बारी है।)। तव राजोपशाय:। तव राजानम् उपशयितुं पर्याय:, इत्यर्थ:, तेरी राजा के पास सोने की बारी है।

हस्तादाने चेरस्तेये (३-३-४०) -चोरी अर्थ न हो, तो हाथ से ग्रहण करना गम्यमान होने पर चिञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। पुष्पप्रचाय: (हाथ से फूल तोड़ना।)(प्र + चि + घञ्)। पुष्पावचाय:।

दूरी होने पर हाथ से न चुनकर यदि लाठी इत्यादि से चुना जाये तो अच् ही होगा - वृक्षशिखरे पुष्पप्रचयं करोति। चौर्य अर्थ होने पर भी अच् ही होगा - पुष्पप्रचयश्चौर्येण।

उच्चयस्य प्रतिषेधो वक्तव्य: (वा.) - उत्पूर्वक चि धातु से उक्त अर्थ में घञ् प्रत्यय नहीं होता है। अत: एरच् से अच् होकर उच्चय: बनता है।

निवासचितिशरीरोपसमाधानेष्वादेश्च क: (३-३-४१) - निवास, चिति, शरीर, उपसमाधान, इन अर्थों में चिञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है, तथा चिञ् के आदि चकार को ककारादेश होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय में, तथा भाव में।

निवास अर्थ में - काशीनिकाय:। एषोऽस्य निकाय: (यह इसका निवास स्थान है।)

चिति (चुनना) अर्थ में - चीयतेऽस्मिन्नस्थ्यादिकम् इति काय:। आकायमग्निं

चिन्वीत (श्मशान की आग का चयन किया जाये।)

शरीर अर्थ में - अनित्यकाय: (शरीर अनित्य है।) अकायं ब्रह्म (ब्रह्म शरीररहित है।)।

उपसमाधान (ढेर बनाना) अर्थ में - महान् फलनिकाय: (बड़ा भारी फलों का ढेर)। गोमयनिकाय:।

सङ्घे चानौत्तराधर्ये (३-३-४२) - ऐसा सङ्घ, जिसमें औत्तराधर्य (ऊपर नीचे का भेद) न हो, वाच्य होने पर, चिञ् धातु से घञ् प्रत्यय होता है, तथा आदि चकार को ककारादेश होता है। कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में।

भिक्षुकनिकाय: (भिक्षुकों का समुदाय) (भिक्षुक + नि + चि + घञ्)।

इसी प्रकार - ब्राहणनिकाय: (ब्राहणों का समुदाय)। वैयाकरणनिकाय: (वैयाकरणों का समुदाय)। इनमें औत्तराधर्य नहीं है।

किन्तु सूकर के बच्चे स्तनपान के लिये एक दूसरे के ऊपर नीचे होकर लोट जाते हैं। इसमें औत्तराधर्य है। प्राणियों का ऐसा समुदाय होने पर घञ् प्रत्यय न होकर अच् ही होता है - सूकर + अच् = सूकरनिचय:। यदि सुअर के बच्चे भी भिक्षुवत् पृथक् पृथक् अवस्थित हों, तो घञ् ही होगा। सङ्घ प्राणिविषयक ही होता है, अत: कृताकृतसमुच्चय:, प्रमाणसमुच्चय:, आदि में अच् ही होगा।

णच् प्रत्यय

कर्मव्यतिहारे णच्स्त्रियाम् (३-३-४३) - कर्मव्यतिहार = क्रिया का अदल बदल गम्यमान हो, तो स्त्रीलिङ्ग में, धातु से, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा विषय में तथा भाव में णच् प्रत्यय होता है। णच् प्रत्यय होने पर 'णच: स्त्रियामञ् ५.४.१४' सूत्र से स्वार्थिक अञ् तद्धित प्रत्यय होता है।

व्यावक्रोशी वर्तते (वि + अव + क्रुश् + णच् + अञ् + ङीप्। व्यावलेखी वर्तते (वि + अव + लिख् + णच् + अञ् + ङीप्।) व्यावहासी वर्तते (वि + अव + हस् + णच् + अञ् + ङीप् = व्यावहासी।)।

बाध्यबाधकभाव - यह णच् प्रत्यय घञ् प्रत्यय का अपवाद है।

इनुण् प्रत्यय

अभिविधौ भाव इनुण् - ३.३.४४ - अभिविधि अर्थात् अभिव्याप्ति गम्यमान हो तो धातु से भाव में इनुण् प्रत्यय होता है। सांकूटिनं वर्तते , साराविणं वर्तते ।

बाध्यबाधकभाव - यह इनुण् प्रत्यय घञ् प्रत्यय का अपवाद है।

आक्रोशे वन्योर्ग्रहः (३.३.४५) - आक्रोश गम्यमान हो तो अव तथा नि पूर्वक ग्रह् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में घञ् प्रत्यय होता है। आक्रोश, क्रोध से कुछ कहने को कहते हैं।

अवग्राहो दुष्ट ! ते भूयात्। निग्राहो दुष्ट ! ते भूयात्। (अव + ग्रह् + घञ्)। (नि + ग्रह् + घञ्)। आक्रोश अर्थ न होने पर - अवग्रहः पदस्य। निग्रहश्चोरस्य।

प्रे लिप्सायाम् (३-३-४६) - लिप्सा = प्राप्त करने की इच्छा, गम्यमान हो तो प्र पूर्वक ग्रह् धातु से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। पात्रप्रग्राहेण चरति भिक्षुकोऽन्नार्थी, (पात्र + ङस् + ग्रह् + घञ्)। स्रुवप्रग्राहेण चरति द्विजो दक्षिणार्थी (स्रुव + ङस् + ग्रह् + घञ्)। अन्यत्र पात्रप्रग्रहः।

परौ यज्ञे (३-३-४७) - यज्ञ विषय में परि उपसर्ग पूर्वक ग्रह् धातु से घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय में, तथा भाव में। उत्तरः परिग्राहः (खड्गाकृति दारुमय पात्रविशेष से वेदिदेशको घेरना।) अधरः परिग्राहः (नींव का निर्माण)।

बाध्यबाधकभाव - इन सभी में ग्रह् धातु से होने वाला घञ् प्रत्यय 'ग्रहवृदृनिचिगमश्च' सूत्र से होने वाले अप् प्रत्यय का अपवाद है।

नौ वृ धान्ये (३-३-४८) - नि पूर्वक वृ धातु से धान्यविशेष को कहना हो तो घञ् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। नीवाराः व्रीहयः (नीवार नाम का धान्य विशेष)

उदि श्रयतियौतिपूद्रुवः (३-३-४९) - उत् उपसर्ग पूर्वक श्रि, यु, पू, द्रु, इन धातुओं से घञ् प्रत्यय से होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञाविषय में, तथा भाव में।

उच्छ्रायः (ऊँचाई) (उत् + श्रि + घञ्) / उद्यावः (इकट्ठा करना) (उत् + यु + घञ्) / उत्पावः (यज्ञीय पात्रों का संस्कार विशेष) (उत् + पू + घञ्) / उद्द्रावः (भागना) (उत् + द्रु + घञ्)।

विभाषाङि रुप्लुवोः (३-३-५०) - आङ् उपसर्ग पूर्वक रु तथा प्लु धातुओं से घञ् प्रत्यय विकल्प से होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में।

इसलिये एक पक्ष में तो घञ् प्रत्यय होगा तथा एक पक्ष में अप् प्रत्यय होगा। घञ् प्रत्यय लगने पर - आरावः (आ + रु + घञ्) (आवाज)। आप्लावः (आ + प्लु + घञ्) (डुबकी मारना)। अप् प्रत्यय लगने पर - आरवः, आप्लवः।

अवे ग्रहो वर्षप्रतिबन्धे (३-३-५१) - वर्ष अभिधेय होने पर अव उपसर्ग पूर्वक ग्रह धातु से घञ् प्रत्यय विकल्प से होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। इसलिये एक पक्ष में तो घञ् प्रत्यय होगा तथा एक पक्ष में अप् प्रत्यय होगा।

घञ् प्रत्यय लगने पर - अवग्राहो देवस्य / अप् प्रत्यय लगने पर - अवग्रहो देवस्य (देव का न बरसना)

प्रे वणिजाम् (३-३-५२) - प्र उपसर्ग पूर्वक ग्रह् धातु से घञ् प्रत्यय विकल्प से होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में, यदि घञ् प्रत्यय से बने हुए शब्द का वाच्य वणिक् सम्बन्धी हो तो।

इसलिये एक पक्ष में तो घञ् प्रत्यय होगा तथा एक पक्ष में अप् प्रत्यय होगा। घञ् प्रत्यय लगने पर - तुलाप्रग्राहेण चरति - (तराजू का मध्यसूत्र पकड़े घूमता है।) अप् प्रत्यय लगने पर - तुलाप्रग्रहेण चरति - (तराजू का मध्यसूत्र पकड़े घूमता है।)

रश्मौ च (३-३-५३) - रश्मि अर्थात् घोड़े की लगाम वाच्य हो तो प्र उपसर्ग पूर्वक ग्रह् धातु से घञ् प्रत्यय विकल्प से होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में। इसलिये एक पक्ष में तो घञ् प्रत्यय होगा तथा एक पक्ष में अप् प्रत्यय होगा। घञ् प्रत्यय लगने पर - प्रग्राहः / अप् प्रत्यय लगने पर - प्रग्रहः (लगाम, रस्सी)।

वृणोतेराच्छादने (३-३-५४) - आच्छादन अर्थ में प्र उपसर्ग पूर्वक वृञ् धातु से घञ् प्रत्यय विकल्प से होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में।

इसलिये एक पक्ष में तो घञ् प्रत्यय होगा तथा एक पक्ष में अप् प्रत्यय होगा। घञ् प्रत्यय लगने पर - प्रवारः (आ + वृ + घञ्) / अप् प्रत्यय लगने पर - प्रवरः - (चादर)।

परौ भुवोऽवज्ञाने (३-३-५५) - तिरस्कार अर्थ में वर्तमान परि उपसर्ग पूर्वक भू धातु से घञ् प्रत्यय विकल्प से होता है, कर्तृभिन्न कारक में संज्ञाविषय में, तथा भाव में।

इसलिये एक पक्ष में तो घञ् प्रत्यय होगा तथा एक पक्ष में अप् प्रत्यय होगा। घञ् प्रत्यय लगने पर - परिभावः / अप् प्रत्यय लगने पर - परिभवः - (निरादर)।

यहाँ से घञ् प्रत्यय का अधिकार निवृत्त हो गया।

अच् प्रत्यय

एरच् (३-३-५६) - इवर्णान्त धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अच् प्रत्यय होता है। जयः, चयः, नयः, क्षयः, अयः।

बाध्यबाधकभाव - यह अच् प्रत्यय घञ् प्रत्यय का अपवाद है।

अज्विधौ भयादीनामुपसंख्यानं नपुंसके क्तादिनिवृत्त्यर्थम् (वा.) - नपुंसकलिङ्ग में परत्वात् होने वाले क्त, ल्युट् आदि को रोककर अच् प्रत्ययान्त भयादि शब्द होते हैं। भयम्। वर्षम्।

जवसवौ छन्दसि वक्तव्यौ (वा.) - वेद विषय में अप् को बाधकर अच्प्रत्ययान्त जव तथा सव शब्द होते हैं। ऊर्वोरस्तु मे जवः। पञ्चौदनसवः।

अप् प्रत्यय

ऋदोरप् (३-३-५७) - ऋकारान्त तथा उवर्णान्त धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है। करः, गरः, शरः। यवः, लवः, पवः।

बाध्यबाधकभाव - यह अप् प्रत्यय घञ् प्रत्यय का अपवाद है।

ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च (३-३-५८) - ग्रह्, वृ, दृ तथा निर् पूर्वक चि एवं गम् इन धातुओं से से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है। ग्रहः, वरः, दरः, निश्चयः, गमः।

बाध्यबाधकभाव - निस् + चि धातु से होने वाला अप् प्रत्यय, एरच् से होने वाले अच् प्रत्यय का अपवाद है और शेष धातुओं से होने वाला अप् प्रत्यय घञ् प्रत्यय का अपवाद है।

वशिरण्योरुपसंख्यानम् (वा.) - वश् तथा रण् धातुओं से भी अप् प्रत्यय होता है। वशः, रणः।

बाध्यबाधकभाव - यह अप् प्रत्यय घञ् प्रत्यय का अपवाद है।

घञर्थे कविधानं स्थास्नापाव्यधिहनियुध्यर्थम् (वा.) - स्था, स्ना, पा, व्यध्, हन्, युध्, से घञर्थ में क प्रत्यय होता है। प्रतिष्ठितेऽस्मिन्निति प्रस्थः पर्वतस्य। प्रतिष्ठन्तेऽस्मिन् धान्यानि इति प्रस्थः। प्रस्नात्यस्मिन्प्रस्नः। प्रपिबन्त्यस्यामिति प्रपा। आविध्यन्ति तेनेत्याविधः। विहन्यन्तेऽस्मिन् मनांसि इति विघ्नः। आयुध्यतेऽधेनेत्यायुधम्।

इसी प्रकार क प्रत्यय से चक्रम्, चिक्लिदम्, चङ्क्रमः, चक्नसः, आदि।

उपसर्गेऽदः (३-३-५९) - उपसर्ग उपपद में रहते अद् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है। विघसः। प्रघसः। उपसर्ग न होने पर घञ् ही होता है - घासः।

नौ ण च (३-३-६०) - नि उपसर्ग पूर्वक अद् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा

में तथा भाव में ण प्रत्यय होता है तथा चकार से अप् प्रत्यय भी होता है।

नि + अद् + ण = न्यादः। नि + अद् + अप् = निघसः।

(ध्यान दें कि 'घञपोश्च' सूत्र २.४.४८ से, केवल घञ् और अप् प्रत्यय परे होने पर अद् धातु को घस् आदेश होता है। अतः ण प्रत्यय परे होने पर अद् धातु को घस् आदेश नहीं हुआ है।)

व्यधजपोरनुपसर्गे (३-३-६१) - उपसर्गरहित व्यध तथा जप धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है। व्यध् + अप् = व्यधः। जप् + अप् = जपः। उपसर्ग होने पर घञ् ही होता है - आव्याधः, उपजापः।

बाध्यबाधकभाव - यह अप् प्रत्यय घञ् प्रत्यय का अपवाद है।

स्वनहसोर्वा (३-३-६२) - उपसर्गरहित स्वन तथा हस् धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है। स्वनः, स्वानः। हसः हासः।

यमः समुपनिविषु च (३-३-६३) - सम्, उप, नि, वि उपसर्ग पूर्वक तथा निरुपसर्ग भी यम् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है। संयमः, संयामः। उपयमः, उपयामः। नियमः, नियामः। वियमः, वियामः। अनुपसर्ग से भी हो सकता है - यमः, यामः।

नौ गदनदपठस्वनः (३-३-६४) - नि पूर्वक गद्, नद्, पठ् तथा स्वन् धातुओं से विकल्प से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है। निगदः, निगादः। निनदः, निनादः। निपठः, निपाठः।

क्वणो वीणायां च (३-३-६५) - निपूर्वक क्वण धातु से, अनुपसर्ग क्वण् धातु से तथा वीणा विषय होने पर निभिन्न उपसर्ग पूर्वक भी क्वण् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में विकल्प से अप् प्रत्यय होता है। विकल्प कहने से पक्ष में घञ् होगा।

निपूर्वकाद् - नि + क्वण् + अप् = निक्वणः, नि + क्वण् + घञ् = निक्वाणः।

अनुपसर्गात् - क्वण् + अप् = क्वणः, क्वण् + घञ् = क्वाणः।

वीणायाम् - कल्याणप्रक्वणा वीणा, कल्याणप्रक्वाणा।

नित्यं पणः परिमाणे (३-३-६६) - 'पण व्यवहारे स्तुतौ च' इस धातु से परिमाण गम्यमान होने पर नित्य ही अप् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में। मूलकपणः, शाकपणः।

(विक्रय के लिये जो शाक, मूली आदि को मुट्ठी में लेकर बाँध दिया जाता है,

उसे ही शाकपण, मूलकपण, आदि कहा जाता है।)

मदोऽनुपसर्गे (३-३-६७) - उपसर्गरहित मद् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है। विद्यया मदः विद्यामदः। धनेन मदः धनमदः। कुलेन मदः कुलमदः।

उपसर्ग होने पर घञ् प्रत्यय ही होता है। उन्मादः, प्रमादः।

प्रमदसंमदौ हर्षे (३-३-६८) - हर्ष अभिधेय होने पर प्रमद और सम्मद ये शब्द अप् प्रत्ययान्त निपातन किये जाते हैं, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में।

कन्यानां प्रमदः। कोकिलानां सम्मदः।

हर्ष अर्थ न होने पर घञ् ही होता है - संमादः, प्रमादः।

समुदोरजः पशुषु (३-३-६९) - सम्, उत् उपसर्गपूर्वक अज् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है, समुदाय से पशुविषय प्रतीत हो तो।

सम् पूर्वक अज् धातु का अर्थ समुदाय होता है - सम् + अज् + अप् = समजः पशूनाम्। (पशुओं का समुदाय।)

उद् पूर्वक अज् धातु का अर्थ प्रेरित करना होता है - उद् + अज् + अप् = उदजः पशूनाम्। (पशुओं को हाँकना, प्रेरित करना।)

पशु अर्थ न होने पर घञ् ही होता है - ब्राह्मणानां समाजः। क्षत्रियाणां उदाजः।

अक्षेषु ग्लहः (३-३-७०) - अक्ष शब्द का अर्थ है देवन अर्थात् जुआ खेलना। उस जुए में जो पणरूप से ग्राह्य हो, उस अर्थ में ग्रह् धातु से अप् प्रत्यय होता है तथा निपातन से लत्व होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में। अक्षस्य ग्लहः (द्यूतक्रीडा में लगाई गई वस्तु, जिसे जीतने वाला ग्रहण करता है)।

('ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च ३-३-५८' सूत्र से अप् प्रत्यय तो सिद्ध ही था, अतः यह सूत्र लत्व निपातन के लिये ही है।)

प्रजने सर्तेः (३-३-७१) - प्रजन अर्थ में वर्तमान सृ धातु से अप् प्रत्यय होता है, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में। गवामुपसरः (गायों का प्रथम बार गर्भग्रहण)। पशूनामुपसरः (पशुओं का प्रथम बार गर्भग्रहण)।

(जो अवसरः, प्रसरः आदि शब्द बनते हैं, वे पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण ३.३.११८, सूत्र से घ प्रत्यय करके बनते हैं।)

ह्वः सम्प्रसारणं च न्यभ्युपविषु (३-३-७२) - नि, अभि, उप तथा वि पूर्वक

ह्वेञ् धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है तथा ह्वेञ् धातु को सम्प्रसारण भी हो जाता है। नि + ह्वेञ् + अप् = निहवः। इसी प्रकार - अभिहवः। उपहवः। विहवः।

आङि युद्धे (३-३-७३) - युद्ध अभिधेय हो तो आङ्पूर्वक ह्वेञ् धातु को सम्प्रसारण होता है तथा धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अप् प्रत्यय होता है। आहूयन्तेऽस्मिन् = आहवः।

निपानमाहावः (३-३-७४) - निपान अभिधेय हो तो आङ् पूर्वक ह्वेञ् धातु से अप् प्रत्यय सम्प्रसारण तथा वृद्धि भी निपातन से करके 'आहावः' शब्द सिद्ध करते हैं, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में। आ + ह्वेञ् + अप् = आहावः।

आहूयन्ते पशवो जलपानाय यत्र स आहावः। आहावस्तु निपानं स्यादुपकूपजलाशये।

भावेऽनुपसर्गस्य (३-३-७५) - उपसर्गरहित ह्वेञ् धातु से भाव में अप् प्रत्यय तथा सम्प्रसारण हो जाता है। हवः। हवे हवे सुहवं शूरमिन्द्रम्।

उपसर्ग होने पर घञ् होकर आह्वायः ही बनेगा।

('भावे' का अधिकार चल ही रहा था, तब भी भावे इसलिये कहा कि कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में यह न हो।)

अनुवृत्ति - 'भावेऽनुपसर्गस्य' की अनुवृत्ति ३.३.७६ तक जायेगी।

हनश्च वधः (३-३-७६) - अनुपसर्ग हन् धातु से भाव अर्थ में अप् प्रत्यय होता है तथा अप् प्रत्यय होने पर हन् को वध आदेश भी होता है। वधश्चौराणाम्, कंसस्य वधः। हन् + अप् = वधः। चकाराद् घञ् प्रत्यय भी होता है। हन् + घञ् = घातः।

मूर्तौ घनः (३-३-७७) - मूर्ति अभिधेय होने पर हन् धातु से भाव अर्थ में अप् प्रत्यय होता है और अप् प्रत्यय लगने पर हन् धातु को घन् आदेश भी होता है। हन् + अप् - घन् + अ = घनो मेघः / घनं वस्त्रम्। अभ्रघनः (अभ्रस्य काठिन्यम्)।

सैन्धवघनमानय, इसमें घन धर्म है, उसका आनयन संभव नहीं है। अतः धर्म शब्द से धर्मी का आनयन समझना चाहिये।

अब यहाँ से पुनः कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भावे, ये दोनों अर्थ चलने लगेंगे।

अन्तर्घनो देशः (३-३-७८) - देश अभिधेय होने पर कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा में भाव में अन्तर्घन शब्द अन्तर् पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय तथा हन् को घन् आदेश करके किया जाता है। अन्तर्घनो देशः।

अगारैकदेशे प्रघणः प्रघाणश्च (३-३-७९) - गृह का एकदेश वाच्य हो तो प्र उपसर्ग पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय और हन् को घन आदेश कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में निपातन किये जाते हैं। प्र + हन् + अप् = प्रघणः / प्र + हन् + घञ् = प्रघाणः।

उद्घनोत्याधानम् (३-३-८०) - अत्याधान वाच्य हो, तो कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा में भाव में हन् धातु से अप् प्रत्यय तथा हन् को घन् आदेश होता है। उद्घनः (जिस काष्ठ पर काष्ठ को रखकर बढ़ई लोग छीलते हैं, वह काष्ठ)।

यह अप् प्रत्यय अधिकरण अर्थ में हुआ है। (जिस काष्ठ को फाड़ना होता है, उसके नीचे एक काष्ठ और रखने की क्रिया को अत्याधान करना कहते हैं।)

अपघनोऽङ्गम् (३-३-८१) - अपपूर्वक हन् धातु से अङ्ग = शरीर का अवयव अभिधेय हो, तो हन् धातु से अप् प्रत्यय तथा हन् को घन् आदेश करके अपघन शब्द निपातन किया जाता है। अपहन्यतेऽनेनेति अपघनः। (हाथ या पैर।)

करणेऽयोविद्रुषु (३-३-८२) - अयस्, वि तथा द्रु उपपद में रहते हन् धातु से करण कारक में अप् प्रत्यय होता है तथा हन् के स्थान में घनादेश भी होता है। अयो हन्यतेऽनेनेति अयोघनः (हथौड़ा)। विघनः (हथौड़ा)। द्रुघनः (कुल्हाड़ा)।

अनुवृत्ति - यहाँ से करणे की अनुवृत्ति ३.३.८४ तक जायेगी।

स्तम्बे क च (३-३-८३) - स्तम्ब शब्द उपपद में रहते करण कारक में हन् धातु से क प्रत्यय तथा अप् प्रत्यय भी होता है। स्तम्बो हन्यतेऽनेनेति स्तम्बघ्नः। स्तम्ब + ङस् + हन् + क। स्तम्बो हन्यतेऽनेनेति स्तम्बघनः। स्तम्ब + ङस् + हन् + अप्। (जिससे घास काटी जाये, वह खुरपी।)

स्त्रियां स्तम्बघ्ना, स्तम्बघना इति इष्यते - स्त्रीलिङ्ग में स्तम्बघ्ना, स्तम्बघना शब्द निपातन से बनते हैं।

परौ घः (३-३-८४) - परिपूर्वक हन् धातु से करण कारक में अप् प्रत्यय होता है तथा हन् के स्थान में घ आदेश भी होता है।

परि + हन् + अप् - परि + घ + अ = परिघः।

उपघ्न आश्रये (३-३-८५) - उपघ्न शब्द में उपपूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय तथा हन् की उपधा का लोप निपातन किया जाता है, आश्रय सामीप्य होने पर, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में। पर्वतेन उपहन्यते - पर्वतोपघ्नः (पर्वत के समीपस्थ)। ग्रामेण उपहन्यते ग्रामोपघ्नः (ग्राम के समीपस्थ)। यह अप् प्रत्यय कर्म अर्थ में हुआ है।

संघोद्धौ गणप्रशंसयोः (३-३-८६) - सङ्घ और उद्घ शब्द यथासङ्ख्य करके गण अभिधेय होने पर तथा प्रशंसा गम्यमान होने पर निपातन किये जाते हैं, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा विषय में तथा भाव में। संहननं सङ्घः (सम् + हन् + अप्)। सङ्घः पशूनाम् (पशुओं को इकट्ठा करना)। यह अप् प्रत्यय भाव अर्थ में हुआ है।

उद्हन्यते उत्कृष्टो ज्ञायत इति उद्घो मनुष्याणाम्। (मनुष्यों में प्रशस्त)। यह अप् प्रत्यय कर्म अर्थ में हुआ है।

निघो निमित्तम् (३-३-८७) - निमित अभिधेय होने पर नि पूर्वक हन् धातु से अप् प्रत्यय, टि भाग का लोप तथा घ आदेश निपातन करके निघ शब्द सिद्ध होता है।

जो सब प्रकार से मित है, अर्थात् जिसकी ऊँचाई और स्थूलता समान हैं, उसे निमित कहते हैं। निर्विशेषं हन्यन्ते ज्ञायन्ते इति निघा वृक्षाः। यह अप् प्रत्यय कर्म अर्थ में हुआ है।

क्त्रि प्रत्यय

ड्वितः क्त्रि (३-३-८८) - जिन धातुओं में डु इत् संज्ञक है, उन धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में क्त्रि प्रत्यय होता है। डुपचष् - पाकेन निर्वृत्तम् पक्त्रिमम्। उप्त्रिमम्। कृत्रिमम्।

(मप् प्रत्यय के बिना क्त्रि प्रत्यय का प्रयोग कहीं नहीं होता है।)

अथुच् प्रत्यय

ट्वितोऽथुच् (३-३-८९) - जिन धातुओं में टु इत् संज्ञक है, उन धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अथुच् प्रत्यय होता है। टुवेपृ + अथुच् = वेपथुः। टुओश्वि + अथुच् = श्वयथुः। टुक्षु + अथुच् = क्षवथुः।

नङ् प्रत्यय

यजयाचयतविच्छप्रच्छरक्षो नङ् (३-३-९०) - यज, याच आदि धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में नङ् प्रत्यय होता है। यज् + नङ् = यज्ञः। याच् + नङ् = याच्ञा। यत् + नङ् = यत्नः। विश् + नङ् = विश्नः। प्रच्छ् + नङ् = प्रश्नः। रक्ष् + नङ् = रक्ष्णः।

नन् प्रत्यय

स्वपो नन् (३-३-९१) - ञिष्वप् शये धातु से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा

भाव में नन् प्रत्यय होता है। स्वप् + नन् = स्वप्नः।

कि प्रत्यय

उपसर्गे घोः किः (३-३-९२) - उपसर्ग उपपद में रहते घुसंज्ञक धातुओं से कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में कि प्रत्यय होता है।

वि + धा + कि = विधिः। नि + धा + कि = निधिः। इसी प्रकार - प्रतिनिधिः। अन्तर्द्धिः। प्र + दा + कि = प्रदिः। उपाधीयतेऽनेन इति उपाधिः।

कर्मण्यधिकरणे च (३-३-९३) - कर्म उपपद में रहते अधिकरण कारक में भी घुसंज्ञक धातुओं से कि प्रत्यय होता है। जलानि धीयन्तेऽस्मिन्निति जलधिः। शरा धीयन्तेऽस्मिन्निति शरधिः। उदकं धीयतेऽस्मिन्निति उदधिः।

स्त्रियाम् का अधिकार

यहाँ से अर्थात् ३.३.९४ से 'स्त्रियाम् क्तिन्' सूत्र से लेकर 'स्त्रियाम्' का अधिकार आगे आने वाले 'कृत्यल्युटो बहुलम्' के पहिले तक अर्थात् ३.३.११२ तक चलेगा।

तात्पर्य यह कि ३.३.११२ तक जो प्रत्यय होंगे, वे स्त्रीलिङ्ग में ही होंगे।

हम जानते हैं कि पूरी अष्टाध्यायी की यह व्यवस्था है कि जहाँ अपवाद सूत्र प्राप्त है, वहाँ उत्सर्ग सूत्र कार्य नहीं कर सकता। अतः अपवादसूत्र उत्सर्गसूत्रों के नित्य बाधक होते हैं। किन्तु 'वाऽसरूपोऽस्त्रियाम् ३.१.९४' सूत्र के अनुसार कृत् प्रत्ययों के लिये व्यवस्था यह है, कि अनुबन्धों को हटाने के बाद यदि उत्सर्ग और अपवाद प्रत्ययों का स्वरूप अलग अलग प्रकार का है, तब तो अपवाद प्रत्यय, उत्सर्ग प्रत्यय को विकल्प से बाधता है। अर्थात् हम चाहें तो उत्सर्ग प्रत्यय भी लगा सकते हैं, और चाहें तो अपवाद प्रत्यय भी लगा सकते है।

किन्तु यदि अनुबन्धों को हटाने के बाद उत्सर्ग और अपवाद प्रत्ययों का स्वरूप बिल्कुल एक सा है, तब तो अपवाद प्रत्यय, उत्सर्ग प्रत्यय को नित्य ही बाधता है। अर्थात् तब हम केवल अपवाद प्रत्यय ही लगा सकते हैं, उत्सर्गप्रत्यय नहीं लगा सकते। जैसे -

'ण्यत्', 'क्यप्' और 'यत्' प्रत्ययों के अनुबन्धों को हटाने के बाद तीनों में 'य' ही शेष बचता है। अतः जब 'ण्यत्' का अपवाद बनकर 'यत्' आता है, तब 'यत्' प्रत्यय 'ण्यत्' प्रत्यय का नित्य बाधक बनता है। अर्थात् अब हम अदुपध पवर्गान्त धातुओं से केवल अपवाद प्रत्यय 'यत्' ही लगा सकते हैं, उत्सर्गप्रत्यय 'ण्यत्' नहीं लगा सकते।

इसी प्रकार, 'कर्मण्यण्' और 'आतोऽनुपसर्गे कः' सूत्रों से कहे जाने वाले अण् और क प्रत्ययों में अनुबन्धों को हटाने के बाद 'अ' ही शेष बचता है। अतः अपवाद प्रत्यय 'क', उत्सर्ग प्रत्यय 'अण्' को नित्य ही बाधता है। अर्थात् अब हम अनुपसर्ग आकारान्त धातुओं से केवल अपवाद प्रत्यय 'क' ही लगा सकते हैं, उत्सर्गप्रत्यय 'अण्' नहीं लगा सकते।

अस्त्रियाम् - सूत्र में दिये हुये 'अस्त्रियाम्' शब्द का अर्थ है कि यदि कृत् प्रत्यय स्त्रीलिङ्ग में हुए हैं, तब तो अपवाद प्रत्यय असरूप होने के बाद भी उत्सर्ग प्रत्यय का नित्य बाधक होगा। जैसे - 'स्त्रियां क्तिन्' सूत्र से धातुमात्र से स्त्रीलिङ्ग में क्तिन् प्रत्यय होता है। धातुमात्र से होने के कारण यह उत्सर्ग प्रत्यय है।

इसी प्रकरण में 'अ प्रत्ययात्' सूत्र आता है। यह प्रत्ययान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में 'अ' प्रत्यय का विधान करता है। देखिये कि अनुबन्धों को हटाने के बाद 'ति' तथा 'अ' की आकृति सर्वथा भिन्न-भिन्न है, तब भी स्त्रीप्रत्यय होने के कारण यह 'अ' प्रत्यय 'क्तिन्' प्रत्यय का नित्य ही बाधक होता है। इसलिये प्रत्ययान्त धातुओं से 'अ' ही होगा और शेष धातुओं से 'क्तिन्' ही होगा।

इसी प्रकार जागृ धातु से 'जागर्तेरकारो वा', इस वार्तिक से स्त्रीलिङ्ग में श (अ) प्रत्यय तथा 'अ' प्रत्यय विकल्प से विहित हैं। इनकी आकृति 'क्तिन्' से सर्वथा भिन्न है, तब भी स्त्रीप्रत्यय होने के कारण ये 'श' और 'अ' प्रत्यय 'क्तिन्' प्रत्यय के नित्य ही बाधक होंगे, तो 'श' लगाकर जागर्या और 'अ' लगाकर जागरा प्रयोग बनेंगे, 'क्तिन्' बिल्कुल नहीं लगेगा।

इसी प्रकार जो धातु निष्ठा में सेट् हों साथ ही हलन्त गुरुमान् भी हों, उनसे 'गुरोश्च हलः' सूत्र स्त्रीलिङ्ग में 'अ' प्रत्यय कहता है। आकृति भिन्न होने के कारण यह 'अ' प्रत्यय 'क्तिन्' प्रत्यय का नित्य ही बाधक होगा। अतः निष्ठा में सेट् हलन्त गुरुमान् धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में 'अ' प्रत्यय ही होगा, 'क्तिन्' बिल्कुल नहीं लगेगा।

इसे स्मरण रखकर ही हम निर्णय करें कि ३.३.९४ से ३.३.११२ के बीच जो भी भाववाची कृत् प्रत्यय स्त्रीलिङ्ग में कहे गये हैं, उनमें से किस धातु से कौन सा भाववाची कृत् प्रत्यय हमें लगाना है।

स्त्रियां क्तिन् (३-३-९४) - धातुमात्र से स्त्रीलिङ्ग में, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में क्तिन् प्रत्यय होता है।

हम जानते हैं कि इकारान्त धातुओं से भाव अर्थ में 'एरच्' सूत्र से अच् प्रत्यय का विधान है। उसे परत्वात् बाधकर इस सूत्र से इकारान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में भाव अर्थ में क्तिन् प्रत्यय होता है - चि + क्तिन् = चितिः।

हम जानते हैं कि उकारान्त तथा ऋकारान्त धातुओं से भाव अर्थ में 'ऋदोरप्' सूत्र से 'अप्' प्रत्यय का विधान है। उसे परत्वात् बाधकर इस सूत्र से उकारान्त तथा ऋकारान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में भाव अर्थ में 'क्तिन्' प्रत्यय होता है -

कृ + क्ति = कृतिः। भू + क्तिन् = भूतिः।

हम जानते हैं कि हलन्त धातुओं से भाव अर्थ में 'हलश्च' (३.३.१२१) सूत्र से घञ् प्रत्यय का विधान है। उसे अपवादत्वात् बाधकर इस सूत्र से हलन्त धातुओं से भाव अर्थ में स्त्रीलिङ्ग में क्तिन् प्रत्यय होता है - मन् + क्तिन् = मतिः। गम् + क्तिन् = गतिः। स्फाय् + क्तिन् = स्फातिः। चर् + क्तिन् = चूर्तिः। फल् + क्तिन् = फुल्तिः। अप् + चाय् + क्तिन् = अपचितिः।

इस प्रकार यह क्तिन् प्रत्यय, घञ्, अच् और अप् प्रत्ययों का अपवाद है। अतः पुंस्त्वविशिष्ट भावादि अर्थ होने पर यथाप्राप्त घञ्, अच् और अप् प्रत्यय होते हैं और स्त्रीत्वविशिष्ट भावादि अर्थों में धातुओं से क्तिन् प्रत्यय होता है।

क्तिन्नाबादिभ्यश्च वक्तव्या (वा.) - आप् आदि धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में क्तिन् प्रत्यय होता है। ये आप् आदि प्रयोग से जानना चाहिये। आप्तिः। राद्धिः। दीप्तिः। स्रस्तिः। ध्वस्तिः। आस्तिः। लब्धिः।

(आगे 'गुरोश्च हलः सूत्र ३.३.१०३' से, हलन्त गुरुमान् धातुओं से स्त्रीलिङ्ग कर्तृ भिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में 'अ' प्रत्यय कहा जायेगा, उसका अपवाद यह क्तिन् प्रत्यय है।)

श्रुयजिस्तुभ्यः करणे (वा.) - श्रु, यज् तथा स्तु धातुओं से करण कारक में क्तिन् प्रत्यय होता है। श्रूयतेऽनयेति श्रुतिः। इज्यतेऽनयेति इष्टिः। स्तूयतेऽनयेति स्तुतिः।

(स्त्रियां क्तिन् ३-३-९४ सूत्र, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में क्तिन् प्रत्यय का विधान कर रहा है, किन्तु यह सूत्र श्रु, यज् तथा स्तु धातुओं से केवल करणकारक अर्थ में क्तिन् प्रत्यय का नियमन कर रहा है।)

ग्लाम्लाज्याहाभ्यो निः (वा.) - ग्ला, म्ला, ज्या, हा इन धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में नि प्रत्यय होता है। ग्लानिः, म्लानिः, ज्यानिः, हानिः।

ॠकारल्वादिभ्यः क्तिन्निष्ठावद् भवति इति वक्तव्यम् (वा.) - ॠकारान्त तथा ल्वादि धातुओं से परे आने वाला क्तिन् प्रत्यय, निष्ठा के समान होता है।

कॄ + क्तिन् / 'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' सूत्र से निष्ठा के तकार को नकार करके - कीर्णिः। इसी प्रकार - शीर्णिः, गीर्णिः, जीर्णिः, लूनिः, पूनिः।

प्र + ह्लाद् + क्तिन् = प्रह्लन्निः।

संपदादिभ्यः क्विप् (वा.) - सम् आदिपूर्वक पद् धातु से स्त्रीलिङ्ग में, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में क्विप् प्रत्यय होता है। संपत्, विपत्, प्रतिपत्।

संपद्। विपद्। आपद्। प्रतिपद्। परिषद् **।। एते संपदादय।।**

क्तिन्नपीष्यते (वा.) - सम् उपपदपूर्वक पद् धातु से क्तिन् प्रत्यय भी होता है। संपत्तिः। विपत्तिः।

स्थागापापचो भावे (३-३-९५) - स्था, गा, पा, पच् इन धातुओं से स्त्रीलिङ्ग भाव में क्तिन् प्रत्यय होता है। प्रस्थितिः, उद्गीतिः, संगीतिः, प्रपीतिः, सम्पीतिः, पक्तिः।

(भाव अर्थ न होने पर अङ् ही होगा - प्रपिबन्ति अस्यां प्रपा।)

बाध्यबाधकभाव - आगे 'आतश्चोपसर्गे' (३.३.१०६) सूत्र सोपसर्ग आकारान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग भाव में क्तिन् प्रत्यय को बाधकर 'अङ्' प्रत्यय का विधान कर रहा है। उस अङ् का अपवाद यह क्तिन् प्रत्यय है। अतः सोपसर्ग स्था, गा, पा, धातुओं से स्त्रीलिङ्ग भाव में क्तिन् ही होगा। जो स्था धातु से अवस्था, संस्था, आदि शब्द अङ् प्रत्ययान्त बनते हैं, उन्हें इस प्रकार जानना चाहिये कि - 'पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञायाम् १.१.३४' इस सूत्र में अवस्था शब्द का प्रयोग आचार्य ने किया है, उसी के ज्ञापन से हम भी अवस्था, संस्था शब्द बना लेंगे। डुपचष् धातु से षित्वात् अङ् प्राप्त था, उसका अपवाद यह क्तिन् है। अतः पच् धातु से क्तिन् ही होगा।

मन्त्रे वृषेषपचमनविदभूवीरा उदात्तः (३-३-९६) - मन्त्रविषय में वृष् इष् आदि धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में क्तिन् प्रत्यय होता है, और वह उदात्त होता है। वृष्टिः, इष्टिः, पक्तिः, मतिः, वित्तिः, भूतिः, यन्ति वीतये, रातिः।

('ञ्नित्यादिर्नित्यम् (६.१.१९१)' इस सूत्र से नित् प्रत्ययान्त शब्द को आद्युदात्त प्राप्त था, उसे बाधकर यहाँ प्रत्यय को उदात्त कर दिया है।)

ऊतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च (३-३-९७) - ऊत्यादि शब्द भी अन्तोदात्त निपातन किये जाते हैं।

अव् + क्तिन् = ऊतिः। यु + क्तिन् = यूतिः। जु + क्तिन् = जूतिः। षो + क्तिन् = सातिः। हा + क्तिन् = हेतिः। कॄत् + क्तिन् = कीर्तिः।

ध्यान दें कि 'क्तिन्' प्रत्यय तो सामान्य सब धातुओं से सिद्ध ही था, इनमें होने वाले विशेष कार्य ही निपातन से करते हैं।

व्रजयजोर्भावे क्यप् च (३-३-९८) - व्रज् तथा यज् धातुओं से स्त्रीलिङ्ग भाव में क्यप् प्रत्यय होता है, और वह उदात्त होता है। व्रज्या, इज्या।

संज्ञायां समजनिषदनिपतमनविदषुञ्शीङ्भृञिणः (३-३-९९) - संज्ञाविषय में सम् पूर्वक अज्, नि पूर्वक षद् तथा पत् आदि धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में क्यप् प्रत्यय होता है, और वह उदात्त होता है।

समजन्त्यस्याम् = समज्या। निषीदन्त्यस्याम् = निषद्या (आपण)। निपत्या (फिसलनी या ऊँची नीची भूमि)। मन्यते तया मन्या (गलपार्श्वशिरा)। विदन्त्यिनया = विद्या (वेदादिक शास्त्र)। सुन्वन्ति तस्यां सुत्या (सोमेज्या)। शेरते तस्यां शय्या। भरणं = भृत्या (जीविका)। ईयते गम्यतेऽनया इत्या (शिबिका)।

विशेष - १. यहाँ 'स्थागापापचो भावे' से 'भावे' की अनुवृत्ति नहीं है किन्तु 'भावे' का अधिकार है, अतः इस सूत्र से विधीयमान क्यप् प्रत्यय का वाच्य भाव ही होता है, कर्म नहीं। अतः कर्म अर्थ में 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्र से ण्यत् होकर भार्या शब्द बनता है। २. यद्यपि स्त्र्यधिकार में उत्सर्ग प्रत्यय का नित्य बाध होता है, किन्तु 'मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च' 'कर्मणि भृतौ' और 'रजःकृष्यासुति' सूत्रों के ज्ञापन से मति, भृति और आसुति, ये क्तिन् प्रत्ययान्त शब्द भी बन सकते हैं। ३. इस सूत्र से संज्ञा अर्थ में स्त्रीलिङ्ग में क्यप् कहा जा रहा है, अतः संज्ञा अर्थ में पुंल्लिङ्ग में ण्यत् ही होगा। भार्या नाम क्षत्रियाः।

कृञः शः च (३-३-१००) - कृञ् धातु से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा तथा भाव में श प्रत्यय होता है तथा चकार से क्यप् भी होता है।

भाष्य में वावचनं क्तिन्नर्थं कहकर क्तिन् का भी विधान होने से कृ धातु से तीन प्रत्यय हुए। कृ + श = क्रिया। कृ + क्यप् = कृत्या। कृ + क्तिन् = कृतिः।

इच्छा (३-३-१०१) - भाव स्त्रीलिङ्ग में इष् धातु से श प्रत्ययान्त इच्छा शब्द निपातन किया जाता है। भावार्थक प्रत्यय होने के कारण श परे होने पर 'सार्वधातुके यक्' सूत्र से यक् भी प्राप्त था। उसका अभाव भी निपातन से होता है।

परिचर्यापरिसर्यामृगयाऽटाट्यानामुपसंख्यानम् - श प्रत्ययान्त परिचर्या,

परिसर्या, मृगया, अटाट्या शब्दों को भी निपातन किया जाता है।

परि + चर् + श + यक् = परिचर्या। परि + सृ + श + यक् = परिसर्या। मृग + श + यक् = मृगया। अट् + श + यक् = अटाट्या।

(अट् धातु से श, यक् परे होने पर, टकार को द्वित्व, पूर्वभाग में यकार की निवृत्ति, और दीर्घ, ये सारे कार्य निपातन से होते हैं।)

जागर्तेरकारो वा - जागृ धातु से विकल्प से 'अ' प्रत्यय तथा 'श' प्रत्यय होते हैं। जागृ + अ = जागरा। जागृ + श + यक् = जागर्या।

अ प्रत्ययात् (३-३-१०२) - प्रत्ययान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अ प्रत्यय होता है। चिकीर्ष + अ = चिकीर्षा। इसी प्रकार - जिहीर्ष् + अ = जिहीर्षा। पुत्रीय + अ = पुत्रीया। पुत्रकाम्य + अ = पुत्रकाम्या। लोलूय + अ = लोलूया। कण्डूय + अ = कण्डूया।

गुरोश्च हलः (३-३-१०३) - हलन्त जो गुरुमान् धातु, उनसे भी स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अ प्रत्यय होता है। कुण्ड् + अ = कुण्डा। इसी प्रकार - हुण्डा, ईहा, ऊहा।

निष्ठायां सेट इति वक्तव्यम् (वा.) - जो निष्ठा प्रत्यय परे होने पर सेट् हों, ऐसे जो हलन्त गुरुमान् धातु, उनसे ही स्त्रीलिङ्ग कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में अ प्रत्यय होता है।

अतः हमें निष्ठा प्रत्यय में जाकर, निष्ठा प्रत्ययों की इडागम व्यवस्था देखकर, निष्ठा प्रत्यय परे होने पर सेट् हलन्त गुरुमान् धातुओं का निर्णय करना चाहिये और उनसे ही 'अ' प्रत्यय लगाना चाहिये। यथा -

अर्द् धातु हलन्त गुरुमान् है, किन्तु यह निष्ठा प्रत्यय परे होने पर, 'अर्देः संनिविभ्यः' सूत्र से सम्, नि, वि, उपसर्गों के साथ अनिट् होता है तथा 'अभेश्चाविदूर्ये' सूत्र से अभि उपसर्ग के साथ आविदूर्य अर्थ में भी अनिट् होता है। अन्यत्र यह सेट् होता है। अतः सम्, नि, वि, अभि उपसर्गों के साथ होने पर इससे क्तिन् प्रत्यय होना चाहिये और अन्यत्र 'अ' प्रत्यय होना चाहिये। अञ्च् धातु निष्ठा प्रत्यय परे होने पर, 'अञ्चेः पूजायाम्' सूत्र से पूजा अर्थ में सेट् होता है, अन्यत्र अनिट् होता है। अतः पूजा अर्थ होने पर इससे 'अ' प्रत्यय होना चाहिये और अन्यत्र 'क्तिन्' प्रत्यय होना चाहिये।

प्रक्रिया खण्ड में सारे हलन्त गुरुमान् धातुओं से 'अ' प्रत्यय लगाकर रूप

दिये गये हैं। उन्हें वहीं देखें।

षिद्भिदादिभ्योऽङ् (३-३-१०४) - षकार इत्संज्ञक है जिनका, ऐसे धातुओं से तथा भिदादिगण पठित धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में अङ् प्रत्यय होता है कर्त्तृ भिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में। जृष् - जरा। त्रपूष् - त्रपा। भिदादिभ्यः - भिदा, छिदा, विदा।

भिदादिगण - भिदा विदारणे। छिदा द्वैधीकरणे। विदा क्षिपा। गुहा गिर्योषध्योः। श्रद्धा। मेधा। गोधा। आरा। शख्याम्। हारा। कारा। बन्धने। क्षिया। तारा ज्योतिषि। धारा प्रपातने। रेखा। चूडा। पीडा। वपा। वसा। मृजा। कृपेः संप्रसारण च, कृपा ।।
इति भिदादिः ।।

क्रपेः संप्रसारणम् (गणसूत्र) - क्रप् धातु से अङ् प्रत्यय होता है तथा प्रकृति को सम्प्रसारण भी हो जाता है। कृप् + अङ् = कृपा।

चिन्तिपूजिकथिकुम्बिचर्चश्च (३-३-१०५) - चिन्त्, पूज्, कथ्, कुम्ब्, चर्च् धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में अङ् प्रत्यय होता है कर्त्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में।

चिन्ता, पूजा, कथा, कुम्बा, चर्चा।

आतश्चोपसर्गे (३-३-१०६) - उपसर्ग उपपद में रहते आकारान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में अङ् प्रत्यय होता है कर्त्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में। संज्ञायतेऽनेनेति संज्ञा (सम् + ज्ञा + अङ्)। इसी प्रकार - उपधा। प्रदा। उपधा। प्रधा।

श्रदन्तरोरुपसर्गवद्वृत्तिः (वा.) - अङ्विधि में श्रत् तथा अन्तर् शब्दों को उपसर्गवत् माना जाता है। अतः श्रत् तथा अन्तर् शब्द उपपद में होने पर भी आकारान्त धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में अङ् प्रत्यय होता है कर्त्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में। श्रद्धा। अन्तर्द्धा।

ण्यासश्रन्थो युच् (३-३-१०७) - ण्यन्त धातुओं से तथा आस उपवेशने, श्रन्थ विमोचनप्रतिहर्षयोः धातुओं से युच् प्रत्यय होता है कर्त्तृभिन्न कारक संज्ञा में तथा भाव में।

ण्यन्त कृ धातु - कृ + णिच् - कारि / कारि + युच् = कारणा। इसी प्रकार - हारणा। आस् + युच् = आसना। इसी प्रकार - श्रन्थना।

घट्टिवन्दिविदिभ्यः उपसंख्यानम् (वा.) - घट्ट्, वन्द् तथा विद् धातुओं से भी स्त्रीलिङ्ग में युच् प्रत्यय होता है। घट्टना। वन्दना। वेदना।

इषेरनिच्छार्थस्य उपसंख्यानम् (वा.) - अनिच्छार्थक इष् धातु से भी युच् प्रत्यय होता है। अध्येषणा। अन्वेषणा।

परेर्वा - परिपूर्वक इष् धातु से विकल्प से युच् प्रत्यय होता है। पर्येषणा, परीष्टिः।

रोगाख्यायां ण्वुल्बहुलम् (३-३-१०८) - रोगविशेष की संज्ञा होने पर, धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में भाव अर्थ में ण्वुल् प्रत्यय बहुल करके होता है। यथा - प्रच्छर्दिका। (वमन)। विचर्चिका। (दाद)। प्रवाहिका। (पिचिश)

धात्वर्थनिर्देशे ण्वुल् वक्तव्यः (वा.) - धात्वर्थ के निर्देश के लिये धातु से ण्वुल् प्रत्यय होता है। आशिका, शायिका।

इक्श्तिपौ धातुनिर्देशे इति वक्तव्यम् (वा.) - धातुमात्र के निर्देश के लिये धातु से इक् तथा तिप् प्रत्यय होते हैं।

इक् प्रत्यय - भिदिः। छिदिः। क्तिन् प्रत्यय - पचतिः। पठतिः।

वर्णात्कारः (वा.) - वर्णवाचक शब्दों से कार प्रत्यय होता है। अकारः। इकारः।

रादिफः (वा.) - र शब्द से इफ प्रत्यय होता है। रेफः

मत्वर्थाच्छः (वा.) - मत्वर्थ शब्द से छ प्रत्यय होता है। मत्वर्थीयः।

इणजादिभ्यः (वा.) - अज् आदि धातुओं से इण् प्रत्यय होता है। आजिः, आतिः, आदिः।

इक् कृष्यादिभ्यः (वा.) - कृष् आदि धातुओं से इक् प्रत्यय होता है। कृषिः, करिः।

संज्ञायाम् - (३.३.१०९) - संज्ञा विषय में धातुओं से स्त्रीलिङ्ग में भाव अर्थ में ण्वुल् प्रत्यय होता है। उद्दालकपुष्पभञ्जिका, वारणपुष्पप्रचायिका, अभ्यूषखादिका, आचोषखादिका, शालभञ्जिका, तालभञ्जिका। (ये सब खेलों के नाम हैं।)

विभाषाख्यानपरिप्रश्नयोरिञ्च - (३.३.११०) - उत्तर तथा प्रश्न गम्यमान होने पर, धातु से स्त्रीलिङ्ग में, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में, तथा भाव अर्थ में विकल्प से ण्वुल् तथा इञ् प्रत्यय होते हैं। विभाषा कहने के कारण पक्ष में अन्य भाववाची प्रत्यय भी हो सकते हैं।

परिप्रश्न अर्थ में इञ् प्रत्यय - त्वं कां कारिम् अकार्षीः ? (तुमने क्या काम किया?) **परिप्रश्न अर्थ में ण्वुल् प्रत्यय** - त्वं कां कारिकाम् अकार्षीः? (तुमने क्या काम किया ?) **परिप्रश्न अर्थ में श प्रत्यय** - त्वं कां क्रियाम् अकार्षीः? (तुमने क्या काम किया?) **परिप्रश्न अर्थ में क्तिन् प्रत्यय** - त्वं कां कृतिम् अकार्षीः ? (तुमने क्या काम किया ?), परिप्रश्न अर्थ में क्यप् प्रत्यय - त्वं कां कृत्याम् अकार्षीः ? (तुमने क्या काम किया ?)।

आख्यान अर्थ में सारे प्रत्यय - अहं सर्वां कारिं, कारिकां, क्रियां, कृतिं, कृत्यां वा अकार्षम्। (मैंने सब काम कर लिया।)

इसी प्रकार - कां गणिम्, गणिकाम्, गणनाम्, वा त्वम् अजीगणः ? (तुमने क्या गिनती की ?) अहं सर्वां गणिम्, गणिकाम्, गणनाम्, वा अजीगणम् ? (मैंने सब गिनती कर ली।)

कां पाठिम्, पाठिकां, पठितिम्, वा त्वम् अपठीः? (तुमने क्या पाठ पढ़ा ?) अहं सर्वां पाठिम्, पाठिकां, पठितिम्, वा अपठिषम् ? (मैंने सब पाठ पढ़ लिया।)

कां याजिम्, याजिकां, यष्टिम्, वा त्वम् अयक्षीः ? अहं सर्वां याजिम्, याजिकां, यष्टिम्, वा अयक्षम्।

पर्यायार्हर्णोत्पत्तिषु ण्वुच् (३-३-१११) - पर्याय, अर्ह, ऋण, उत्पत्ति, इन अर्थों में धातु से स्त्रीलिङ्ग में, कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में, तथा भाव अर्थ में विकल्प से ण्वुच् प्रत्यय होता है। यथा -

पर्याये - भवतः शायिका (आपके सोने की बारी)। भवतः अग्रग्रासिका (आपके प्रथम भोजन की बारी)। भवतः जागरिका (आपके जागने की बारी)।

अर्हे - भवान् इक्षुभक्षिकाम् अर्हति (आप गन्ना खाने के योग्य हैं।)। भवान् पयःपायिकाम् अर्हति (आप दूध पीने के योग्य हैं।)।

ऋणे - भवान् इक्षुभक्षिकां मे धारयति (मुझे गन्ना खिलाने का ऋण आपके ऊपर है।) भवान् ओदनभोजिकां मे धारयति (मुझे भात खिलाने का ऋण आपके ऊपर है।)।

उत्पत्तौ - इक्षुभक्षिका मे उदपादि। ओदनभोजिका मे उदपादि। पयःपायिका मे उदपादि। पक्षे - तव चिकीर्षा। मम चिकीर्षा।

आक्रोशे नञ्यनिः (३-३-११२) - आक्रोश = क्रोधपूर्वक चिल्लाना, गम्यमान हो, तो नञ् उपपद में रहते धातु से स्त्रीलिङ्ग में कर्तृभिन्न कारक संज्ञा में, तथा भाव अर्थ में विकल्प से अनि प्रत्यय होता है। अकरणिस्ते वृषल ! भूयात्। (नीच ! तेरी करनी नष्ट हो जाये।) इसी प्रकार - अजीवनिस्ते शठ भूयात्। अप्रयाणिः।

(यहाँ से 'भावे' 'अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्' और स्त्रियाम्' ये तीनों निवृत्त हो गये।)

कृत्यल्युटो बहुलम् (३.३.११३) - कृत्य प्रत्यय और ल्युट् प्रत्यय जिन प्रकृतियों

से जिन अर्थों में विहित हैं, उनसे भिन्न अर्थों में भी बहुल करके हो जाते हैं। यथा -

स्नान्ति अनेन स्नानीयं चूर्णम्। यहाँ ल्युट् प्रत्यय करण अर्थ में हुआ है।

दीयते अस्मै दानीयो विप्रः। यहाँ ल्युट् प्रत्यय सम्प्रदान अर्थ में हुआ है।

नपुंसके भावे क्तः - (३.३.११४) - नपुंसकलिङ्ग भाव में धातुमात्र से क्त प्रत्यय होता है। हसितम् (हँसना), सुप्तम् (सोना), जल्पितम् (कहना, बकना)।

ल्युट् च - (३.३.११५) - नपुंसक लिङ्ग भाव में धातुमात्र से क्त प्रत्यय होता है। हसनं छात्रस्य शोभनम् (छात्र का हँसना सुन्दर है।)। शयनम् (सोना)। आसनम् (बैठना)।

कर्मणि च येन संस्पर्शात्शरीरसुखम् - (३.३.११६) - जिस कर्म के संस्पर्श से संस्पृश्यमान कर्ता को शरीर का सुख उत्पन्न हो, ऐसे कर्म के उपपद में रहतें भी धातु से ल्युट् प्रत्यय होता है।

ध्यान रहे कि जब उपपद के रहते किसी धातु से किसी कृत् प्रत्यय का विधान होता है, तब 'उपपदमतिङ् २.२.१९' सूत्र से उस उपपद के साथ कृत्प्रत्ययान्त शब्द का नित्य समास होता है। अतः कर्म के साथ ल्युडन्त का नित्य समास करके - पयःपानं सुखम् / ओदनभोजनं सुखम्।

करणाधिकरणयोश्च - (३.३.११७) - धातुमात्र से करण तथा अधिकरण कारक अर्थ में भी ल्युट् प्रत्यय होता है।

(यहाँ से करणाधिकरणयोश्च की अनुवृत्ति ३.३.१२५ तक जायेगी।)

करण अर्थ में - इध्मप्रव्रश्चनः (प्रवृश्च्यते अनेन इति प्रव्रश्चनः। इध्मानां प्रव्रश्चनः इध्मप्रव्रश्चनः कुठारः)। इसी प्रकार - पलाशशातनः (शात्यते अनेन इति शातनः। पलाशानां शातनः पलाशशातनः कुठारः)।

अधिकरण अर्थ में - गोदोहनी। (दुह्यन्ते अस्याम् इति दोहनी। गवां दोहनी गोदोहनी स्थाली)। इसी प्रकार - सक्तुधानी (धीयन्ते अस्याम् इति धानी। सक्तूनां धानी सक्तुधानी)।

पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण - (३.३.११८) - धातुमात्र से करण तथा अधिकरण कारक अर्थ में पुंल्लिङ्ग में प्रायः करके घ प्रत्यय होता है, यदि समुदाय से संज्ञा प्रतीत होती हो तो। **करण अर्थ में** - दन्ताः छाद्यन्तेऽनेनेति दन्तच्छदः। उरः छाद्यतेऽनेनेति उरश्छदः।

अधिकरण अर्थ में - एत्य तस्मिन् कुर्वन्तीति आकरः। आलीयतेऽस्मिन्निति आलयः।

अनुवृत्ति - यहाँ से 'घः' की अनुवृत्ति ३.३.११९ तक, 'पुंसि संज्ञायाम्' की अनुवृत्ति ३.३.१२५ तक और 'प्रायेण' की अनुवृत्ति ३.३.१२१ तक जाती है।)

बाध्यबाधकभाव - 'करणाधिकरणयोश्च' सूत्र से धातुमात्र से करण तथा अधिकरण कारक अर्थ में ल्युट् प्रत्यय कहा गया है, उसका अपवाद यह घ प्रत्यय है।

गोचरसंचरवहव्रजव्यजापणनिगमाश्च - (३.३.११९) - गोचर आदि शब्द भी करण या अधिकरण कारक में संज्ञाविषय में 'घ' प्रत्ययान्त पुंल्लिङ्ग, निपातन किये जाते हैं।

बाध्यबाधकभाव - आगे 'हलश्च' (३.३.१२१) सूत्र करणाधिकरण अर्थ में हलन्त धातुओं से घञ् प्रत्यय कह रहा है। उसका अपवाद यह 'घ' प्रत्यय है।

करण अर्थ में - गावश्चरन्ति अस्मिन्निति गोचरः (जहाँ गायें चरती हैं)। सञ्चरन्तेऽनेनेति सञ्चरः (मार्ग)। वहन्ति तेन वहः (स्कन्ध)। व्रजन्ति तेन व्रजः (गाड़ी)। व्यजन्ति तेन व्यजः (पङ्खा)। आपणन्ते तस्मिन् इति आपणः (बाजार)। निगच्छन्ति अनेन इति निगमः छन्दः (वेद)।

(निपातित शब्दों में जो कार्य प्रक्रिया से न बनें उन कार्यों को ही निपातन से जानना चाहिये। यथा व्यजः में अज् को वी आदेश न होना आदि।)

अवे तॄस्त्रोर्घञ् - (३.३.१२०) - अवपूर्वक तॄञ्, स्तॄञ् धातुओं से करण और अधिकरण कारक में पुंल्लिङ्ग में संज्ञाविषय में प्रायः करके घञ् प्रत्यय होता है। अवतरन्ति अनेन इति अवतारः (कुएँ में उतरने की सीढ़ियाँ)। अवस्तारः (जवनिका या परदा)।

बाध्यबाधकभाव - यह घञ् प्रत्यय 'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' सूत्र से होने वाले 'घ' प्रत्यय का अपवाद है।

हलश्च - (३.३.१२१) - हलन्त धातुओं से भी संज्ञाविषय होने पर करण तथा अधिकरण कारक में पुंल्लिङ्ग में प्रायः करके घञ् प्रत्यय होता है। लिख् + घञ् = लेखः। विद् + घञ् = वेदः (विद्येते ज्ञायेते अनेन धर्माधर्मौ इति वेदः)। वेष्ट् + घञ् = वेष्टः। बन्ध् + घञ् = बन्धः। मृज् + घञ् = मार्गः। अप + मृज् + घञ् = अपामार्गः (अपमृज्यते अनेन व्याधिरिति अपामार्गः)। वि + मृज् + घञ् = वीमार्गः।

(अपामार्गः और वीमार्गः में 'उपसर्गस्य घञ्यमनुष्ये बहुलम् ६.३.१२२' सूत्र से दीर्घ हुआ है।)

बाध्यबाधकभाव - 'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' सूत्र से धातुमात्र से करण तथा अधिकरण कारक अर्थ में पुंल्लिङ्ग में 'घ' प्रत्यय कहा गया है। उसका अपवाद यह 'घञ्' प्रत्यय है।

अध्यायन्यायोद्यावसंहाराश्च - (३.३.१२२) - अधिपूर्वक इङ् धातु से अध्यायः, नि पूर्वक इण् धातु से न्यायः, उत्पूर्वक यु धातु से उद्यावः तथा सम्पूर्वक हृ धातु से संहारः ये घञन्त शब्द भी पुंल्लिङ्ग में करण तथा अधिकरण कारक संज्ञा में निपातन किये जाते हैं। अधीयतेऽस्मिन्निति अध्यायः। नीयन्तेऽनेन कार्याणि इति न्यायः। उद्युवन्ति अस्मिन्निति उद्यावः। संहरन्त्यनेन इति संहारः।

(अजन्त धातुओं से पुंल्लिङ्ग में करण तथा अधिकरण कारक संज्ञा में घ प्रत्यय प्राप्त था, इस सूत्र से निपातन से घञ् प्रत्यय होता है।)

अवहाराधारावायानामुपसंख्यानम् (वा.) - ये शब्द भी घञन्त निपातित होते हैं। आध्रियतेऽस्मिन्निति आधारः। आवयन्त्यस्मिन्निति आवायः।

उदङ्कोऽनुदके - (३.३.१२३) - उदक विषय न हो तो पुँल्लिङ्ग में उत् पूर्वक अञ्चु धातु से घञ् प्रत्ययान्त उदङ्क शब्द निपातन किया जाता है, अधिकरण कारक में संज्ञाविषय होने पर। तैलम् उदच्यते उद्ध्रियतेऽस्मिन्निति तैलोदङ्कः (तिल रखने का कुप्पा)। घृतम् उदच्यते उद्ध्रियतेऽस्मिन्निति घृतोदङ्कः (घी रखने का कुप्पा)।

जालमानायः - (३.३.१२४) - जाल अभिधेय हो तो आङ्पूर्वक नी धातु से संज्ञा अर्थ में घञ् प्रत्ययान्त आनाय शब्द निपातन किया जाता है। आनयन्त्यनेनेति आनायो मत्स्यानाम् (मछलियों का जाल)। आनायो मृगाणाम् (मृगों का जाल)।

खनो घ च - (३.३.१२५) - खन् धातु से करण और अधिकरण कारक में पुंल्लिङ्ग में संज्ञाविषय में घ प्रत्यय होता है तथा चकार से घञ् प्रत्यय होता है।

आ + खन् + घ = आखनः। आ + खन् + घञ् = आखानः।

डो वक्तव्यः (वा.) - खन् धातु से ड प्रत्यय भी होता है। आखः।

डरो वक्तव्यः (वा.) - खन् धातु से डर् प्रत्यय भी होता है। आखरः।

इको वक्तव्यः (वा.) - खन् धातु से इक् प्रत्यय भी होता है। आखनिकः।

इकवको वक्तव्यः (वा.) - खन् धातु से इकवक प्रत्यय भी होता है। आखनिकवकः।

(यहाँ से 'पुंसि संज्ञायाम्' 'करणाधिकरणयोश्च' 'घञ्' 'घ' आदि सब निवृत्त हो गये।)

b"knn~q% d`PN Pd`PN FkZs"kq [ky~ ¼3-3-126½ & कृच्छ्र अर्थवाले तथा अकृच्छ्र अर्थ वाले, ईषत्, दुर् तथा सु ये उपपद हों, तो धातु से खल् प्रत्यय होता है। ईषत्करो भवता कट: (ईषत् + कृ + खल्) (आपके द्वारा चटाई सरलता से बनती है)। दुष्कर:। सुकर:। ईषत्भोज: (ईषत् + भुज् + खल्) सुगमता से खाना। दुर्भोज:। सुभोज:।

('न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम्' २.३.६९' सूत्र से लादेश कृत् प्रत्ययों के योग में अनुक्त कर्म में षष्ठी न होकर द्वितीया कही गई है। अत: खलर्थ प्रत्ययान्तों के अनुक्त कर्म में द्वितीया ही होगी।)

अनुवृत्ति - यहाँ से ईषद्दु:सुषु कृच्छ्राकृच्छ्रार्थेषु की अनुवृत्ति ३.३.१२९ तक जायेगी।

कर्तृकर्मणोश्च भूकृञो: - (३.३.१२७) - कर्ता उपपद में होने पर भू धातु से तथा कर्म उपपद में होने पर कृञ् धातु से, कृच्छ्र तथा अकृच्छ्र अर्थ में वर्तमान ईषद्, दुर्, सु उपपद होने पर खल् प्रत्यय होता है।

कर्ता उपपद में होने पर भू धातु से खल् - अनाढ्येन भवता ईषदाढ्येन शक्तं भवितुम् = ईषदाढ्यंभवं भवता (आप सुगमता से धनाढ्य होने के योग्य हैं।) अनाढ्येन भवता दुराढ्येन शक्तं भवितुम् = दुराढ्यंभवं भवता (आप कठिनता से धनाढ्य होने के योग्य हैं।)। इसी प्रकार - स्वाढ्यंभवं भवता।

कर्म उपपद में होने पर कृञ् धातु से खल् - अनाढ्य:, ईषदाढ्य:, क्रियते इति ईषदाढ्यंकरो देवदत्त:। इसी प्रकार - दुराढ्यंकर:। स्वाढ्यंकरो देवदत्त:।

कर्तृकर्मणोश्च्व्यर्थयोरिति वक्तव्यम् (वा.) - अभूततद्भावार्थक कर्ता तथा कर्म उपपद में होने पर भू तथा कृञ् धातुओं से ही खल् प्रत्यय होता है। अत: स्वाढ्येन भूयते आदि में खल् नहीं होगा।

आतो युच् - (३.३.१२८) - आकारान्त धातुओं से कृच्छ्र तथा अकृच्छ्र अर्थ में ईषदादि उपपद रहते युच् प्रत्यय होता है। ईषत्पान: सोमो भवता। दुष्पान:। सुपान:। ईषद्दानो गौर्भवता। दुर्दान:। सुदान:।

छन्दसि गत्यर्थेभ्य: - (३.३.१२९) - वेदविषय में गत्यर्थक धातुओं से कृच्छ्र तथा अकृच्छ्र अर्थ में ईषदादि उपपद हो तो युच् प्रत्यय होता है। सूपसदनोऽग्नि:। (सु + उप + सद् + युच्) सूपसदनमन्तरिक्षम्।

अन्येभ्योऽपि दृश्यते - (३.३.१३०) - वेदविषय में गत्यर्थक धातुओं से भी कृच्छ्र तथा अकृच्छ्र अर्थ में ईषदादि उपपद में रहते युच् प्रत्यय होता है। सुदोहनाम् अकृणोद् ब्रह्मणे गाम्। सुवेदनाम् अकृणोद् ब्रह्मणे गाम्।

भाषायां शासियुधिदृशिधृषिमृषिभ्यो युज् वक्तव्यः - लोक में भी शास्, युध्, दृश्, धृष्, मृष् धातुओं से युच् प्रत्यय होता है। दुःशासनः। दुर्योधनः। दुर्दर्शनः। दुर्द्धषणः। दुर्मर्षणः।

अत्यावश्यक - ३.३.१३१ से ३.३.१५७ तक के सूत्रों में लकार प्रत्यय हैं, जिनका कृदन्त से प्रयोजन न होने से उन्हें छोड़कर आगे के सूत्र दे रहे हैं -

समानकर्तृकेषु तुमुन् (३.३.१५८) - समान है कर्ता जिनका, ऐसे इच्छार्थक धातुओं के उपपद रहते, धातुमात्र से तुमुन् प्रत्यय होता है।

देवदत्तः इच्छति भोक्तुम्। देवदत्तः कामयते भोक्तुम्। देवदत्तः वाञ्छति भोक्तुम्। देवदत्तः वष्टि भोक्तुम्। (देवदत्त खाना चाहता है।)

इन वाक्यों में इच्छति, कामयते, वाञ्छति, वष्टि आदि क्रियाओं के उपपद में रहने पर भुज् धातु से तुमुन् प्रत्यय हुआ है। यहाँ ध्यान दें कि जो कर्ता इच्छा का है, वही कर्ता भोजन का भी है। अतः इच्छ् और भुज्, ये दोनों धातु समानकर्तक हैं। अतः इच्छार्थक धातुओं के उपपद में रहने पर भुज् धातु से तुमुन् प्रत्यय हुआ है।

प्रैषातिसर्गप्राप्तकालेषु कृत्याश्च (३.३.१६३) - प्रैष = प्रेरणा करना, अतिसर्ग = कामाचारपूर्वक आज्ञा देना, प्राप्तकाल = समय आ जाना, इन अर्थों में धातु से 'कृत्यसंज्ञक' प्रत्यय होते हैं तथा चकार से लोट् प्रत्यय भी होता है। अज्ञातज्ञापनं विधिः। प्रैषणं प्रैषः।

कृत्य प्रत्यय - भवता कटः करणीयः। कटः कर्तव्यः, कटः कृत्यः। कटः कार्यः।

लोट् प्रत्यय - करोतु कटं भवान् इह प्रेषितः। करोतु कटं भवान् इह अतिसृष्टः। भवतः प्राप्तकालः कटकरणे। **इसी प्रकार** - प्रेषितो भवान् गच्छतु ग्रामम् (हमारी प्रेरणा है कि आप गाँव जायें।)। अतिसृष्टो भवान् गच्छतु ग्रामम् आदि (हमारी प्रेरणा से आप गाँव जायें।) भवतः प्राप्तकालः कटकरणे (आपका चटाई बनाने का समय आ गया है।)

कालसमयवेलासु तुमुन् (३.३.१६७) - काल, समय, वेला, ये शब्द उपपद रहते धातु से तुमुन् प्रत्यय होता है। कालो भोक्तुम् (खाने का समय हो गया है।)। समयो भोक्तुम्। वेला भोक्तुम्। (खाने का समय है।) अनेहा भोक्तुम्।

अर्हे कृत्यतृचश्च (३.३.१६९) - अर्ह अर्थात् योग्य कर्ता वाच्य हो या गम्यमान हो तो धातु से कृत्यसंज्ञक तथा तृच् प्रत्यय होते हैं तथा चकार से लिङ् भी होता है।

भवता खलु पठितव्या विद्या, पाठ्या, पठनीया वा। तृच् - पठिता विद्याया भवान्। भवान् विद्यां पठेत्।

विशेष - ३.१.९५ से ३.१.१३२ सूत्रों के द्वारा सामान्य रूप से कृत्य प्रत्ययों का विधान हो चुकने के बाद भी इस सूत्र से जो अर्ह अर्थ में कृत्य का विधान किया जा रहा है, वह इसलिये कि अर्ह अर्थ में लिङ् के द्वारा कृत्य प्रत्यय बाधित न हो जायें।

आवश्यकाधमर्ण्ययोर्णिनिः (३.३.१७०) - आवश्यक और आधमर्ण्य = ऋण विशिष्ट कर्ता वाच्य हो तो धातु से णिनि प्रत्यय होता है। धर्मोपदेशी, प्रातःस्नायी, अवश्यङ्कारी। आधमर्ण्ये - शतंदायी, सहस्रंदायी, निष्कंदायी।

कृत्याश्च (३.३.१७१) - आवश्यक और आधमर्ण्य = ऋण विशिष्ट कर्ता वाच्य हो तो धातु से कृत्यसंज्ञक प्रत्यय होते है। **आवश्यक अर्थ में** - भवता खलु अवश्यं कटः कर्तव्यः, करणीयः, कार्यः, कृत्यः। **आधमर्ण्य अर्थ में** - भवता शतं दातव्यम्, सहस्रं देयम्।

विशेष - ३.१.९५ से ३.१.१३२ सूत्रों के द्वारा सामान्य रूप से कृत्य प्रत्ययों का विधान हो चुकने के बाद भी इस 'कृत्याश्च' सूत्र से आवश्यक तथा आधमर्ण्य अर्थ में कर्तरि कृत्य का विधान इसलिये किया जा रहा है कि जो 'भव्यगेय.' सूत्र से 'भव्यः' 'गेयः' 'प्रवचनीयः' 'उपस्थानीयः' 'जन्यः' 'आप्लाव्यः' 'आपात्यः' शब्द कर्ता अर्थ में निपातन से बनते हैं, 'अजर्यं संगतम्' सूत्र से 'अजर्यम्' शब्द कर्ता अर्थ में निपातन से बनता है, 'राजसूयसूर्यमृषोद्यरुच्य.' सूत्र से 'रुच्यः' 'कुप्यः' कृष्टपच्यः' 'अव्यथ्यः' शब्द कर्ता अर्थ में निपातन से बनते हैं, इनमें होने वाले कृत्य प्रत्यय का बाध 'आवश्यकाधमर्ण्ययोर्णिनिः' सूत्र से होने वाले 'कर्तरि णिनि' प्रत्यय के द्वारा न हो जाये।

शकि लिङ् च (३.३.१७२) - शक्यार्थ गम्यमान हो, तो धातु से लिङ् प्रत्यय होता है तथा चकार से कृत्यसंज्ञक प्रत्यय भी होते हैं। जैसे - भवान् शत्रुं जयेत्। (आप शत्रुओं को जीत सकते हैं।)

आशिषि लिङ्लोटौ (३.३.१७३) - आशीः का अर्थ होता है - अप्राप्त को पाने की इच्छा, न कि आशीर्वाद देना। इस अर्थ में लिङ् तथा लोट् लकारों का प्रयोग होता है। यथा - लोट् - चिरं जीवतु भवान्। लिङ् - चिरं जीव्याद् भवान् / इसी प्रकार - आयुष्यं भूयात्। शत्रुः म्रियात्।

क्तिच्क्तौ च संज्ञायाम् (३.३.१७४) - आशीर्वाद विषय में धातु से क्तिच् तथा क्त प्रत्यय भी होते हैं। तनुतात् तन्तिः। सनुतात् सन्तिः। भवतात् भूतिः। क्त - देवा एनं देयासुः देवदत्तः। ❀❀❀

तृतीयाध्याये चतुर्थः पादः

धातुसम्बन्धे प्रत्ययाः - (३.४.१) - दो धात्वर्थों का सम्बन्ध होने पर भिन्न काल में विहित प्रत्यय भी कालान्तर में साधु होते हैं।

धातु शब्द से यहाँ धात्वर्थ का ग्रहण करना चाहिये। वाक्य में प्रधान होने के कारण क्रिया की प्रधानता होती है और कारकों की गौणता होती है। अतः क्रिया को कहने वाले तिङन्तों की प्रधानता और सुबन्तों की गौणता होती है। इसलिये तिङन्त विशेष्य बनते हैं और सुबन्त विशेषण बन जाते हैं। अतः सुबन्त में होने वाले प्रत्यय जिस भी काल में कहे गये हों, तिङन्त का योग होने पर वे प्रत्यय तिङन्त के काल को ही कहने लगते हैं।

यथा - अग्निष्टोमयाजी अस्य पुत्रो जनिता। यहाँ 'अग्निष्टोमयाजी' में यज् धातु से भूतकाल में करणे यजः (३.२.८५) सूत्र से 'णिनि' प्रत्यय हुआ है। अग्निष्टोमयाजी का अर्थ है अग्निष्टोमेन इष्टवान्। अर्थात् ऐसा व्यक्ति जिसने अग्निष्टोम यज्ञ किया है।

जनिता में जन् धातु से अनद्यतन भविष्य अर्थ में 'लुट् प्रत्यय' (३.३.१५) हुआ है। अब देखिये कि अग्निष्टोमयाजी में 'णिनि' प्रत्यय भूतकाल को कह रहा है और जनिता में लुट् प्रत्यय भविष्यत्काल को कह रहा है। भूतकाल को कहने वाला अग्निष्टोमयाजी सुबन्त होने से विशेषण है और भविष्यत्काल को कहने वाला जनिता यहाँ तिङन्त होने से विशेष्य है। अग्निष्टोमयाजी और जनिता में जो धातु हैं, उन धातुओं के अर्थों का विशेषणविशेष्यभाव है।

इस सूत्र से अग्निष्टोमयाजी शब्द अपने भूतकाल अर्थ को छोड़कर अब जनिता के भविष्यत्काल अर्थ को ही कहेगा। अतः अग्निष्टोमयाजी अस्य पुत्रो जनिता, इस वाक्य का अर्थ होगा - अग्निष्टोम यज्ञ करेगा, ऐसा उसका पुत्र होगा।

कृतः कटः श्वो भविता। इसमें कृतः में कृ धातु से जो क्त प्रत्यय हुआ है वह भूते (३.२.८४) के अधिकार में होने के कारण भूतकाल अर्थ को कह रहा है।

भविता में भू धातु से अनद्यतन भविष्य अर्थ में लुट् प्रत्यय (३.३.१५) हुआ है। अब देखिये कि कृतः में क्त प्रत्यय भूतकाल को कह रहा है और भविता में लुट् प्रत्यय भविष्यत्काल को कह रहा है। भूतकाल को कहने वाला कृतः सुबन्त होने से विशेषण है और भविष्यत्काल को कहने वाला भविता यहाँ विशेष्य है। कृतः और भविता का

विशेषणविशेष्यभाव से धात्वर्थसम्बन्ध है। अतः भिन्नकालोक्त कृतः और भविता भी साधु माने गये। इसलिये अर्थ हुआ - चटाई बनी, यह बात कल होगी।

अत्यावश्यक - ३.४.२ से लेकर ३.४.८ तक के सूत्र कृत् प्रत्यय नहीं लगा रहे हैं, अपितु लकारार्थ को बतला रहे हैं, अतः उन्हें छोड़कर हम आगे चलें -

तुमर्थे सेसेनसेऽसेन्क्सेकसेनध्यैअध्यैन्कध्यैकध्यैन्शध्यैशध्यैन्तवैतवेङ्तवेनः - (३.४.९) - वेद विषय में धातुमात्र से तुमुन् प्रत्यय के अर्थ में, से, सेन् आदि प्रत्यय होते हैं।

प्रयै रोहिष्यै अव्यथिष्यै - (३.४.१०) - प्रयै, रोहिष्यै, अव्यथिष्यै ये शब्द तुमर्थ में निपातन किये जाते हैं। प्रयातुम् = प्रयै, रोढुं = रोहिष्यै, अव्यथितुम् = अव्यथिष्यै।

दृशे विख्ये च - (३.४.११) - दृशे और विख्ये ये शब्द भी तुमर्थ में निपातन किये जाते हैं। दृशे विश्वाय सूर्यम्। विख्ये त्वा हरामि।

शकि णमुल्कमुलौ (३-४-१२) - शक् धातु उपपद में हो तो वेद के विषय में तुमर्थ में धातु से णमुल् और कमुल् प्रत्यय होते हैं। अग्निं वै देवा विभाजम् नाशक्नुवन् (विभाजन नहीं कर सके।)। अपलुपं नाशक्नुवन्, (अपलोप नहीं कर सके।)

ईश्वरे तोसुन्कसुनौ - (३.४.१३) - ईश्वर शब्द उपपद में हो तो वेद के विषय में तुमर्थ में धातु से तोसुन् और कसुन् प्रत्यय होते हैं। ईश्वरोऽभिचरितोः अभिचरितुमित्यर्थः। ईश्वरो विलिखः, विलेखितुमित्यर्थः। ईश्वरो वितृदः।

कृत्यर्थे तवै केन्केन्यत्वनः - (३.४.१४)) - कृत्यार्थ में वेदविषय में धातु से तवै, केन, केन्य तथा त्वन् ये चार प्रत्यय होते हैं। अन्वेतवै, अन्वेतव्यमित्यर्थः। परिस्तवै परिस्तरितुमित्यर्थः। परिधातवै परिधातव्यमित्यर्थः। केन् - नावगाहे, नावगाहितव्यमित्यर्थः। दिदृक्षेण्यः, शुश्रूषेण्यः। कर्त्वं हविः, कर्तव्यमित्यर्थः।

अवचक्षे च - (३.४.१५) - कृत्यार्थ अभिधेय हो तो अवपूर्वक चक्षिङ् धातु से शेन् प्रत्ययान्त अवचक्षे शब्द भी निपातन किया जाता है। अवचक्षे इति अवख्यातव्यमित्यर्थः।

भावलक्षणे स्थेण्कृञ्वदिचरिहुतमिजनिभ्यस्तोसुन् - (३.४.१६) - भाव के लक्षण में वर्तमान स्था, इण्, कृञ्, वदि, चरि, हु, तमि, जनि आदि धातुओं से तोसुन् प्रत्यय होता है।

आ संस्थातोर्वेद्यां सीदन्ति। पुरा सूर्यस्योदेतोराधेयः। पुरा वत्सानामपाकर्तोः। पुरा प्रवदितोरग्नौ प्रहोतव्यम्। पुरा प्रचरितोराग्नीध्रे होतव्यम्। आ होतोरप्रमत्तस्तिष्ठति। आ तमितोरासीत। आ विजनितोः सम्भवामेति।

सृपितृदो कसुन् - (३.४.१७) - भावलक्षण में वर्तमान सृपि तथा तृद् धातुओं से वेद विषय में तुमर्थ में कसुन् प्रत्यय होता है। पुरा क्रूरस्य विसृपो विरप्शिन्। पुरा जर्त्रुभ्यः आतृदः।

अलंखल्वोः प्रतिषेधयोः प्राचां क्त्वा - (३.४.१८) - प्रतिषेधवाची अलं तथा खलु शब्द उपपद रहते प्राचीन आचार्यों के मत में धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है।

अलं बाले रुदित्वा (हि बालिके, मत रो)। अलं कृत्वा, (हे बालिके, मत कर)। खलु कृत्वा (हि बालिके, मत कर)।

अन्य आचार्यों का मत कहा है, अतः विकल्प से क्त्वा नहीं भी होता है। क्त्वा न होने पर भाव में ल्युट् आदि प्रत्यय भी हो सकते हैं - अलं करणेन (हि बालिके, मत कर), अलं रोदनेन (हि बालिके, मत रो)। खलु करणेन (हि बालिके, मत कर)।

उदीचां माङो व्यतीहारे - (३.४.१९) - व्यतीहार अर्थ वाले मेङ् धातु से उदीच्य आचार्यों के मत में क्त्वा प्रत्यय होता है।

(यहाँ यह समझना चाहिये कि 'समानकर्तृकयोः पूर्वकाले' सूत्र से होने वाला क्त्वा प्रत्यय पूर्वकाल में होता है, यह क्त्वा अपूर्वकाल में हो रहा है, अतः पृथक् सूत्र बनाया।)

अपमित्य याचते। (भिक्षुक पहिले माँगता है, बाद में विनिमय करता है, अतः याचना पूर्वकालिक है और विनिमय अपूर्वकालिक है। इस सूत्र से अपूर्वकालिक क्रिया से क्त्वा हो गया है।)

अपमित्य हरति। (भिक्षुक पहिले लाता है, बाद में विनिमय करता है, अतः लाना पूर्वकालिक है और विनिमय अपूर्वकालिक है। इस सूत्र से अपूर्वकालिक क्रिया से क्त्वा हो गया है।)

अन्य आचार्यों के मत में यथाप्राप्त पूर्वकालिक क्रियावाची धातु से क्त्वा भी हो सकता है। ग्राचित्वा अपमयते। हृत्वा अपमयते।

परावरयोगे च - (३.४.२०) - जब पर का योग अवर के साथ तथा पूर्व का योग पर के साथ गम्यमान हो तो भी धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है।

अप्राप्य नदीं पर्वतः स्थितः (पर भाग में स्थित नदी के पूर्व में पर्वत स्थित है।)।

अतिक्रम्य तु पर्वतं नदी स्थिता (पूर्व भाग में स्थित पर्वत के बाद में नदी स्थित है।)।

क्त्वा तथा णमुल् प्रत्यय

जहाँ दो क्रियाओं में पौर्वापर्य होता है तथा उनका एक ही कर्ता होता है, उनमें जो पूर्वकाल में वर्तमान धातु है, उससे क्त्वा तथा णमुल् प्रत्यय होते हैं। असरूप अपवाद प्रत्यय होने के कारण विकल्प से दोनों हो सकते हैं।

पर यह ध्यान रखना चाहिये कि उपसर्ग होने पर 'समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप्' सूत्र से क्त्वा के स्थान पर ल्यप् आदेश हो जाता है, अतः सोपसर्ग धातुओं से ल्यप् और अनुपसर्ग धातुओं से क्त्वा प्रत्यय होगा। णमुल् प्रत्यय दोनों से ही हो सकेगा।

समानकर्तृकयोः पूर्वकाले - (३.४.२१) - समान अर्थात् एक ही कर्ता है जिन दो क्रियाओं का, उनमें जो पूर्वकाल में वर्तमान धातु है, उससे क्त्वा प्रत्यय होता है।

देवदत्तो भुक्त्वा व्रजति (दिवदत्त खाकर जाता है।), देवदत्तः पीत्वा व्रजति, (दिवदत्त पीकर जाता है।) देवदत्तः स्नात्वा भुङ्क्ते (दिवदत्त नहाकर जाता है।)। यह क्त्वा पूर्वकालिक क्रिया से होता है। इसे ही पूर्वकालिक कृदन्त कहते हैं।

आस्यं व्यादाय स्वपिति, चक्षुः सम्मील्य हसतीत्युपसंख्यानमपूर्वकालत्वात्।

आस्यं व्यादाय स्वपिति (मुँह खोलकर सोता है।), चक्षुः सम्मील्य हसति (आँख बन्द करके हँसता है।) यहाँ यह अर्थ नहीं है कि पहिले मुँह खोलता है, तब सोता है अथवा इनमें पहिले आँख बन्द करता है, तब हँसता है। अतः यहाँ अपूर्वकालिक क्रिया से क्त्वा जानना चाहिये।

आभीक्ष्ण्ये णमुल् च - (३.४.२२) - आभीक्ष्ण्य अर्थात् पौनःपुन्य अर्थ में समानकर्तृक दो धातुओं में जो पूर्वकालिक धातु है, उससे णमुल् प्रत्यय होता है तथा चकार से क्त्वा प्रत्यय भी होता है। स्मारं स्मारं नमति शिवम्, स्मृत्वा स्मृत्वा नमति शिवम् (स्मरण कर करके शिव को नमन करता है।) भोजं भोजं व्रजति, भुक्त्वा भुक्त्वा व्रजति (खा खाकर जाता है।)

न यद्यनाकाङ्क्षे (३.४.२३) - समानकर्तावाले धातुओं में से पूर्वकालिक धात्वर्थ में वर्तमान धातु से यद् शब्द के उपपद होने पर, णमुल् तथा क्त्वा प्रत्यय नहीं होते हैं, यदि पूर्वोत्तर क्रियाओं को कहने वाला वाक्य, अन्य वाक्य की आकाङ्क्षा न रखता हो, तो।

यदयं भुङ्क्ते, ततः पठति (यह पहले खा लेता है, तभी पढ़ता है।)

यदयं अधीते, ततः शेते (यह पहले पढ़ लेता है, तभी सोता है।)

विभाषाग्रेप्रथमपूर्वेषु - (३.४.२४) - अग्रे, प्रथम, पूर्व शब्द उपपद हों, तो समानकर्तृक पूर्वकालिक धातु से आभीक्ष्ण्य अर्थ न होने पर भी विकल्प से क्त्वा, णमुल् प्रत्यय होते हैं। अग्रे भोजं व्रजति। अग्रे भुक्त्वा व्रजति। प्रथमं भोजं व्रजति। प्रथमं भुक्त्वा व्रजति। पूर्वं भोजं व्रजति। पूर्वं भुक्त्वा व्रजति। (ध्यान दें कि आभीक्ष्ण्य अर्थ न होने के कारण णमुलन्त पद को द्वित्व नहीं हुआ है।)

कर्मण्याक्रोशे कृञः खमुञ् - (३.४.२५) - कर्म उपपद में रहते, आक्रोश गम्यमान होने पर समानकर्तृक पूर्वकालिक कृञ् धातु से खमुञ् प्रत्यय होता है। चौरङ्कारमाक्रोशति। (चोर है, ऐसा कहकर चिल्लाता है।) इसी प्रकार - दस्युङ्कारमाक्रोशति।

स्वादुमि णमुल् (३-४-२६) - स्वादुवाची शब्द उपपद में होने पर समानकर्तृक पूर्वकालिक कृञ् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। स्वादुङ्कारम् भुङ्क्ते। इसका अर्थ है कि जो वस्तु अस्वाद्वी है, उसे स्वाद्वी बनाकर खाता है। यहाँ स्वादु शब्द को मान्तत्व निपातन हुआ है। इसी प्रकार - सम्पन्नङ्कारम् भुङ्क्ते। लवणङ्कारम् भुङ्क्ते।

अन्यथैवंकथमित्थं सुसिद्धाप्रयोगश्चेत् (३-४-२७) - अन्यथा, एवं, कथं शब्दों के उपपद में होने पर समानकर्तृक पूर्वकालिक कृञ् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है, यदि कृ धातु का अप्रयोग सिद्ध हो, तो।

अन्यथाकारम् भुङ्क्ते (अन्यथा करके खाता है।)। एवङ्कारम् भुङ्क्ते (इस प्रकार खाता है।) कथङ्कारम् भुङ्क्ते (किस प्रकार खाता है।)। इत्थङ्कारम् भुङ्क्ते (इस प्रकार खाता है।) यहाँ यदि कृ धातु के बिना, केवल अन्यथा भुङ्क्ते कहा जाता, तब भी वही अर्थ निकल सकता था, अतः कृ धातु का प्रयोग भी अप्रयोग जैसा है।

यथातथयोरसूयाप्रतिवचने (३-४-२८) - यथा, तथा शब्द उपपद रहते निन्दा से प्रत्युत्तर गम्यमान हो तो कृञ् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है, यदि कृञ् का अप्रयोग सिद्ध हो तो। यथाकारमहम् भोक्ष्ये, तथाकारम्, किं तवानेन।

कर्मणि दृशिविदोः साकल्ये (३-४-२९) - साकल्य = सम्पूर्णताविशिष्ट कर्म उपपद हो तो दृशिर् तथा विद् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। यवनदर्शम् हन्ति (जिसे जिसे यवन देखता है, सबको मारता है।) ब्राह्मणवेदं भोजयति (जिसे जिसे ब्राह्मण समझता है, सबको खिलाता है।)।

यावति विन्दजीवोः (३-४-३०) - यावत् शब्द उपपद में रहते विद्लृ लाभे एवं जीव प्राणधारणे धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है। यावद्वेदं भोजयति (जितना पाता

है, उतना खिलाता है।) यावज्जीवमधीते (जब तक जीता है, तब तक पढ़ता है।)

चर्मोदरयोः पूरे (३-४-३१) - चर्म तथा उदर कर्म उपपद में होने पर ण्यन्त पूरी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। चर्मपूरं स्तृणाति (सब चमड़े को ढाँकता है।)। उदरपूरं भुङ्क्ते (पेट को भरते हुए खाता है।)

वर्षप्रमाण ऊलोपश्चास्यान्यतरस्याम् (३-४-३२) - वर्षा का प्रमाण गम्यमान हो तो कर्म उपपद में होने पर ण्यन्त पूरी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है तथा इस पूरी धातु के ऊकार का विकल्प से लोप होता है।

गोष्पदप्रम् वृष्टो देवः, गोष्पदपूरं वृष्टो देवः (भूमि में गाय के खुर से होने वाले गड्ढे के भरने जितनी वर्षा हुई।) सीताप्रम् वृष्टो देवः, सीतापूरं वृष्टो देवः (भूमि में हल के फाल से होने वाले गड्ढे के भरने जितनी वर्षा हुई।)।

चेलेः क्नोपे (३-४-३३) - चेलवाची कर्म उपपद में हो तो वर्षा का प्रमाण गम्यमान होने पर ण्यन्त क्नूयी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। चेलक्नोपम् वृष्टो देवः, वस्त्रक्नोपं, वसनक्नोपम्। (कपड़ा भींग जाये, इतनी वर्षा हुई।)

निमूलसमूलयोः कषः (३-४-३४) - निमूल तथा समूल शब्द उपपद में होने पर कष् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। निमूलकाषम् कषति (जड़ को छोड़कर काटता है।) समूलकाषम् कषति (जड़ समेत काटता है।)

शुष्कचूर्णरूक्षेषु कषः (३-४-३५) - शुष्क, चूर्ण तथा रूक्ष कर्म उपपद में होने पर पिष् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। शुष्कपेषम् पिनष्टि (सूखे को पीसता है)। चूर्णपिषम् (चूर्ण को पीसता है।)। रूक्षपेषम् (रूखे को पीसता है।)

समूलाकृतजीवेषु हन्कृञ्ग्रहः (३-४-३६) - समूल, अकृत तथा जीव कर्म उपपद में हो तो यथासङ्ख्य करके हन्, कृञ् तथा ग्रह् धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है। समूलघातम् हन्ति (मूल समेत मारता है।)। अकृतकारम् करोति (न किये को करता है।) जीवग्राहम् गृह्णाति (जिन्दा पकड़ता है।)

करणे हनः (३-४-३७) - करणकारक उपपद में हो तो हन् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। पाणिभ्यामुपहन्ति इति पाण्युपघातं वेदिं हन्ति (हाथों से वेदी को कूटता है।) पादाभ्यामुपहन्ति इति पादोपघातं वेदिं हन्ति (पैरों से वेदी को कूटता है।)

पूर्वविप्रतिषेधेन हन्तेर्हिंसार्थस्यापि प्रत्ययोऽनेनैवेष्यते (वा.) - हिंसार्थक हन् धातु से भी णमुल् प्रत्यय इसी सूत्र से, पूर्वविप्रतिषेध के कारण होता है, न कि आगे आने

वाले सूत्र 'हिंसार्थानां च समानकर्मकाणां' से होता है। असिघातं हन्ति (तलवार से मारता है।) शरघातं हन्ति (बाण से मारता है।)

स्नेहने पिषः (३-४-३८) - स्नेहनवाची करणकारक उपपद में हो तो पिष् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। उदपेषं पिनष्टि (पानी से पीसता है।)। तैलपेषं पिनष्टि (तिल से पीसता है।)

हस्ते वर्तिग्रहोः (३-४-३९) - हस्तवाची करणकारक उपपद में हो तो वृत् तथा ग्रह् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। हस्तवर्तम् वर्तयति, करवर्तं वर्तयति (हाथ से गुलिका करता है।) हस्तग्राहं गृह्णाति, करग्राहं गृह्णाति (हाथ से ग्रहण करता है।)।

स्वे पुषः (३-४-४०) - स्ववाची करण उपपद में होने पर पुष् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। स्व शब्द के चार अर्थ होते हैं। आत्मा, आत्मीय, ज्ञाति और धन।

इन चारों अर्थ वाले स्व शब्द से अथवा उसके पर्यायवाची शब्दों से भी णमुल् प्रत्यय होता है।

आत्मा अर्थ में - स्वपोषम् पुष्णाति (अपने द्वारा पुष्ट करता है।) आत्मपोषं पुष्णाति।

आत्मीय अर्थ में - गोपोषम् पुष्णाति।
ज्ञाति अर्थ में - पितृपोषम् पुष्णाति।
धन अर्थ में - धनपोषम् पुष्णाति, रैपोषम् पुष्णाति, आदि।

अधिकरणे बन्धः (३-४-४१) - अधिकरणवाची शब्द उपपद होने पर बन्ध धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। चक्रे बध्नाति - चक्रबन्धम् बध्नाति (चके में बाँधता है।) इसी प्रकार - कूटे बध्नाति - कूटबन्धम् बध्नाति (निहाई में बाँधता है।) मुष्टौ बध्नाति - मुष्टिबन्धम् बध्नाति (मुट्ठी में बाँधता है।) चोरके बध्नाति - चोरकबन्धम् बध्नाति (चोरक में बाँधता है।)

संज्ञायाम् (३-४-४२) - संज्ञाविषय में बन्ध् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। क्रौञ्चबन्धम् बध्नाति। मयूरिकाबन्धम् बध्नाति।अट्लालिकाबन्धम् बध्नाति। ये सब बन्धविशेष के नाम हैं।

कर्त्रोर्जीवपुरुषयोर्नशिवहोः - (३-४-४३) - कर्तृवाची जीव तथा पुरुष शब्द उपपद में हो तो यथासङ्ख्य करके नश् तथा वह् धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है। जीवनाशं नश्यति (जीव नष्ट होता है।)। पुरुषवाहं वहति (पुरुष वहन करता है।)

ऊर्ध्वे शुषिपूरोः (३-४-४४) - कर्तृवाची ऊर्ध्व शब्द उपपद हो तो शुषि शोषणे तथा पूरी आप्यायने धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है। ऊर्ध्वशोषं शुष्यति (ऊपर सूखता है।)। ऊर्ध्वपूरम् पूर्यति (ऊपर भरता है)।

उपमाने कर्मणि च (३-४-४५) - उपमानवाची कर्म उपपद रहते तथा चकार से कर्ता उपपद रहते भी धातुमात्र से णमुल् प्रत्यय होता है। जिससे उपमा दी जाये वह उपमान होता है। मातृधायम् धयति (जैसे माता का दूध पीता है, वैसे पीता है।)। गुरुसेवम् सेवते (जैसे गुरु की सेवा करता है, वैसे सेवा करता है।) सिंहगर्जम् गर्जति (जैसे सिंह गरजता है, वैसे गरजता है।)। बालकरोदम् रोदिति (जैसे बच्चा रोता है, वैसे रोता है।)

कषादिषु यथाविध्यनुप्रयोगः (३-४-४६) - निमूलसमूलयोः कषः सूत्र से लेकर इस सूत्र तक के धातु कषादि धातु हैं। इनके लिये व्यवस्था यह है कि जिस भी धातु से णमुल् प्रत्यय करेंगे, उसी धातु का उस णमुलन्त के बाद प्रयोग करेंगे।

उपदंशस्तृतीयायाम् (३-४-४७) - तृतीयान्त शब्द उपपद में रहते उपपूर्वक दंश धातु से णमुल् प्रत्यय होता है।

विशेष - उपदंशस्तृतीयायाम् (३.४.४७) सूत्र से लेकर अन्वच्यानुलोम्ये (३.४.६४) सूत्र तक जितने भी उपपद कहे गये हैं, उनका 'तृतीयाप्रभृतीन्यन्यतरस्याम्' (२.२.२१) सूत्र से विकल्प से समास होता है। अतः यहाँ से तीन तीन उदाहरण होंगे और समास हो जाने पर 'समासेऽनञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप्' (७.१.३७) सूत्र से क्त्वा के स्थान पर ल्यप् आदेश होगा।

मूलकेनोपदंशं भुङ्क्ते, मूलकोपदंशम् भुङ्क्ते। (मूली को काट काट कर भोजन करता है।) आर्द्रकेनोपदंशं भुङ्क्ते, आर्द्रकोपदंशम् भुङ्क्ते। (अदरख को काट काट कर भोजन करता है।) ल्यप् होने पर मूलकेनोपदश्य भुङ्क्ते। (यहाँ ध्यातव्य है कि मूलक आदि उपदंश क्रिया के कर्म हैं और भोजन क्रिया के करण हैं।)

हिंसार्थानाम् च समानकर्मकाणाम् (३-४-४८) - अनुप्रयुक्त धातु के साथ समान कर्मवाली हिंसार्थक धातुओं से भी तृतीयान्त उपपद रहते णमुल् प्रत्यय होता है।

अनुप्रयोग किये हुए धातु का तथा जिससे णमुल् हो रहा हो उन धातुओं का समान कर्म होना चाहिये। दण्डेनोपघातं गाः कालयति। 'तृतीयाप्रभृतीन्यन्यतरस्याम्' सूत्र से विकल्प से समास होकर - दण्डोपघातं गाः कालयति।

सप्तम्यां चोपपीडरुधकर्षः (३-४-४९) - तृतीयान्त तथा सप्तम्यन्त उपपंद हो तो उपपूर्वक पीड्, रुध् तथा भ्वादिगण के कृष् धातुओं से भी णमुल् प्रत्यय होता है।

पीड् धातु से - तृतीयान्त उपपद होने पर - पार्श्वाभ्यामुपपीडं शेते (बगल से या बगल में दबाकर सोता है।)। सप्तम्यन्त उपपद होने पर - पार्श्वयोरुपपीडं शेते। 'तृतीयाप्रभृतीन्यन्यतरस्याम्' सूत्र से विकल्प से समास होकर - पार्श्वोपपीडं शेते।

रुध् धातु से - व्रजेनोपरोधं गाः स्थापयति / व्रजे उपरोधं गाः स्थापयति / समास होने पर - व्रजोपरोधं गाः स्थापयति।

कृष् धातु से - पाणिनोपकर्षं धानाः संगृह्णाति (हाथ से धानों को इकट्ठा करता है।) / पाणावुपकर्षं धानाः संगृह्णाति / समास होने पर - पाण्युपकर्षं धानाः संगृह्णाति।

समासत्तौ (३-४-५०) - समासत्ति अर्थात् सन्निकटता गम्यमान हो तो तृतीयान्त तथा सप्तम्यन्त उपपद रहते धातु से णमुल् प्रत्यय होता है।

सप्तम्यन्त उपपद होने पर - केशेषु ग्राहं युध्यन्ते / केशैर्ग्राहं युध्यन्ते / तृतीयाप्रभृतीन्यन्यतरस्याम् सूत्र से विकल्प से समास होकर - केशग्राहं युध्यन्ते (केश पकड़ पकड़कर युद्ध कर रहे हैं)। इसी प्रकार हस्तेषु ग्राहं युध्यन्ते / हस्तैर्ग्राहं युध्यन्ते / हस्तग्राहं युध्यन्ते (हाथ पकड़ पकड़कर युद्ध कर रहे हैं), आदि बनाइये।

प्रमाणे च (३-४-५१) - प्रमाण = लम्बाई गम्यमान हो तो भी सप्तम्यन्त तथा तृतीयान्त उपपद रहते धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। द्व्यङ्गुलेनोत्कर्षं खण्डिकां छिनत्ति। द्वयङ्गुल उत्कर्षं खण्डिकां छिनत्ति / समास होने पर - द्व्यङ्गुलोत्कर्ष खण्डिकां छिनत्ति (दो दो अङ्गुल छोड़ छोड़कर लकड़ी के टुकड़े काटता है।)

अपादाने च परीप्सासाम् (३-४-५२) - परीप्सा = शीघ्रता गम्यमान हो तो अपादान उपपद रहते धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। शय्याया उत्थायं धावति। समास होने पर - शय्योत्थायं धावति (खाट से उठकर भागता है।)

द्वितीयायां च (३-४-५३) - द्वितीयान्त उपपद रहते भी शीघ्रता गम्यमान हो तो धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। यष्टिं ग्राहं युध्यन्ते। असिं ग्राहं युध्यन्ते। लोष्टं ग्राहं युध्यन्ते। समास होने पर - यष्टिग्राहं युध्यन्ते। असिग्राहं युध्यन्ते। लोष्टग्राहं युध्यन्ते।

स्वाङ्गे ध्रुवे (३-४-५४) - अध्रुव स्वाङ्गवाची द्वितीयान्त शब्द उपपद रहते धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। अक्षि निकाणं जल्पति (आँख बन्द करके बड़बडाता है।), भ्रुवं विक्षेपं कथयति (भौंह मटकाकर कहता है।)।

समास होने पर - अक्षिनिकाणं जल्पति, भ्रूविक्षेपं कथयति।

(जिस अङ्ग के कट जाने पर भी प्राणी मरे नहीं, उसे अध्रुव अङ्ग कहते हैं। इसलिये शिरः उत्क्षिप्य कथयति में समास नहीं होगा।)

परिक्लिश्यमाने च (३-४-५५) - चारों ओर से क्लेश को प्राप्त हो रहा हो ऐसा स्वाङ्गवाची द्वितीयान्त शब्द उपपद हो तो भी धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। उरः पेषं युध्यन्ते, उरःपेषं युध्यन्ते (सम्पूर्ण छाती को कष्ट देते हुए लड़ते हैं।) शिरः पेषं युध्यन्ते, शिरःपेषम् युध्यन्ते (सम्पूर्ण सिर को कष्ट देते हुए लड़ते हैं।)।

विशिपतिपदिस्कन्दां व्याप्यमानासेव्यमानयोः (३-४-५६) - व्याप्यमान तथा आसेव्यमान गम्यमान हो तो द्वितीयान्त उपपद रहते विशि, पति, पदि तथा स्कन्द धातुओं से णमुल् प्रत्यय होता है।

समास होने पर - गेहानुप्रवेशमास्ते (घर घर में घुसकर रहता है।) इसी प्रकार - गेहानुप्रपातमास्ते। गेहानुप्रपादमास्ते। गेहावस्कन्दमास्ते।

ध्यान दें कि समास होने पर वीप्सा अर्थ समास से उक्त हो जाने के कारण 'नित्यवीप्सयोः ८.१.४' सूत्र से द्वित्व नहीं होता है, किन्तु समास न होने पर द्वित्व होगा।

असमासपक्ष में व्याप्यमानता अर्थ होने पर द्रव्यवाची शब्द को द्वित्व होगा और आसेवा अर्थ होने पर क्रियावाची शब्द को द्वित्व होगा।

व्याप्यमानता अर्थ में द्रव्यवाची शब्द को द्वित्व करके - गेहं गेहमनुप्रवेशमास्ते। गेहं गेहमनुप्रपातमास्ते। गेहं गेहमनुप्रपादमास्ते। गेहं गेहमवस्कन्दमास्ते।

आसेवा अर्थ में क्रियावाची शब्द को द्वित्व करके - गेहमनुप्रवेशमनुप्रवेशमास्ते। गेहमनुप्रपातमनुप्रपातमास्ते। गेहमनुप्रपादमनुप्रपादमास्ते। गेहमवस्कन्दमवस्कन्दमास्ते।

गेहं गेहमनुप्रवेशमास्ते। गेहं गेहमनुप्रपातमास्ते। गेहं गेहमनुप्रपादमास्ते। गेहं गेहमवस्कन्दमास्ते।

अस्यतितृषोः क्रियान्तरे कालेषु (३-४-५७) - क्रिया के अन्तर व्यवधान में वर्तमान असु तथा तृष् धातुओं से कालवाची द्वितीयान्त शब्द उपपद रहते णमुल् प्रत्यय होता है। द्व्यहात्यासं गाः पाययति। द्व्यहमत्यासम् गाः पाययति। द्व्यहं तर्षम् गाः पाययति। द्व्यहतर्षम् गाः पाययति। (दो दिन के अन्तर से अथवा दो दिन प्यासे रखकर गायों को पानी पिलाता है।)

नाम्न्यादिशिग्रहोः (३-४-५८) - द्वितीयान्त नाम शब्द उपपद रहते

आङ्पूर्वक दिश् तथा ग्रह् धातु से णमुल् प्रत्यय होता है। नामादेशमाचष्टे। नामग्राहमाचष्टे (नाम लेकर कहता है)।

अव्यये यथाभिप्रेताख्याने कृञः क्त्वाणमुलौ (३-४-५९) - अयथाभिप्रेताख्यान अर्थात् इष्ट का कथन जैसा होना गम्यमान हो तो अव्यय शब्द उपपद रहते कृञ् धातु से क्त्वा और णमुल् प्रत्यय होते हैं।

ब्राह्मण! पुत्रस्ते जातः। किं तर्हि मूर्ख! नीचैः कृत्वाचक्षे। नीचैःकारमाचक्षे। समास होने पर - नीचैःकृत्याचक्षे। (प्रिय बात को जोर से कहना चाहिये, धीरे कह रहा है, अतः यह अयथाभिप्रेत आख्यान है।)

इसी प्रकार - ब्राह्मण! कन्या ते गर्भिणी, किं तर्हि मूर्ख! उच्चैःकारमाचक्षे, उच्चैः कृत्वाचक्षे। समास होने पर - उच्चैःकृत्याचक्षे (अप्रिय बात को धीरे से कहना चाहिये, जोर से कह रहा है, अतः यह भी अयथाभिप्रेत आख्यान है।)

तिर्यच्यपवर्गे (३-४-६०) - तिर्यक् शब्द उपपद रहते अपवर्ग गम्यमान होने पर कृञ् धातु से क्त्वा तथा णमुल् प्रत्यय होते हैं। तिर्यक्कृत्वा गतः। तिर्यक्कारम्, गतः। समास होने पर - तिर्यक्कृत्य गतः।

स्वाङ्गे तस्प्रत्यये कृभ्वोः (३-४-६१) - तस्प्रत्यान्त स्वाङ्गवाची शब्द उपपद हो तो कृ तथा भू धातुओं से क्त्वा तथा णमुल् प्रत्यय होते हैं।

कृ धातु से - मुखतः कृत्वा गतः, मुखतः कारं गतः (सामने करके चला गया।)। समास होने पर - मुखतःकृत्य गतः।

इसी प्रकार - पाणितः कृत्वा गतः। पाणितः कारं गतः। समास होने पर - पाणितःकृत्य गतः।

भू धातु से - मुखतो भूत्वा तिष्ठति (सामने खड़ा होता है।)। मुखतो भावं तिष्ठति। समास होने पर - मुखतोभूय तिष्ठति। इसी प्रकार - पाणितो भूत्वा गतः, पाणितोभावम् गतः। समास होने पर - पाणितोभूय गतः।

नाधार्थप्रत्यये च्व्यर्थे (३-४-६२) - च्व्यर्थ में वर्तमान नाधार्थप्रत्ययान्त शब्द उपपद हो तो कृ तथा भू धातुओं से क्त्वा तथा णमुल् प्रत्यय होते हैं।

नार्थप्रत्ययान्त उपपद होने पर - अनाना नाना कृत्वा गतः - नानाकृत्य गतः, नाना कृत्वा, नानाकारम्। (जो भिन्न प्रकार का नहीं है, उसे भिन्न प्रकार का करके चला गया।) विनाकृत्य गतः, विना कृत्वा, विनाकारम् गतः (जो छोड़ने योग्य नहीं है,

उसे छोड़कर चला गया।) । अनाना नाना भूत्वा गतः - नानाभूय, नाना भूत्वा, नाना भावम्। विनाभूय, विना भूत्वा, विनाभावम्।

धार्थ प्रत्ययान्त उपपद होने पर -अद्विधा द्विधाकृत्वा गतः, द्विधाकृत्य, द्विधा कृत्वा। द्विधाकारम्। द्वैधंकृत्य, द्वैधं कृत्वा, द्वैधं कारम् (जो दो प्रकार का नहीं है, उसे दो प्रकार का करके चला गया।) । अद्विधा, द्विधा भूत्वा गतः - द्विधाभूय द्विधा भूत्वा, द्विधाभावम्। द्वैधंभूय, द्वैधंभूत्वा, द्वैधंभावम्।

(विनञ्भ्यां नानाञौ न सह ५..२.५७ सूत्र से ना, नाञ् प्रत्यय होते हैं। संख्याया विधार्थे धा ५.३.४२ सूत्र से धा प्रत्यय होता है। द्वित्र्योश्च धमुञ् ५.३.४५ सूत्र से धमुञ् प्रत्यय होता है।)

तूष्णीमि भुवः (३-४-६३) - तूष्णीम् शब्द उपपद हो तो भू धातु से क्त्वा, णमुल् प्रत्यय होते हैं। तूष्णीं भूय गत, तूष्णीं भूत्वा गतः (चुप होकर चला गया।) / तूष्णीं भावम्।

अन्वच्यानुलोम्ये (३-४-६४) - आनुलोम्य अर्थात् अनुकूलता गम्यमान हो तो अन्वक् शब्द उपपद रहते भू धातु से क्त्वा, णमुल् प्रत्यय होते हैं।

अन्वग्भूयास्ते (अनुकूल बनकर रहता है।) इसी प्रकार अन्वग्भूत्वा, अन्वग्भावम्।

विशेष - यहाँ से क्त्वा, णमुल् प्रत्यय समाप्त हुए। 'तृतीयाप्रभृतीन्यन्यतरस्याम्' (२.२.२१) सूत्र से जिनका विकल्प से समास कहा गया है, वे उपपद यहीं तक हैं।

शकधृषज्ञाग्लाघटरभलभक्रमसहार्हास्त्यर्थेषु तुमुन् (३-४-६५) -

शक, धृष, ज्ञा, ग्ला, घट, रभ, लभ, क्रम, सह, अर्ह तथा अस्ति अर्थवाले धातुओं के उपपद रहते धातुमात्र से तुमुन् प्रत्यय होता है।

तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् ३.३.१० सूत्र से तुमुन् प्राप्त था। तो भी पुनर्विधान इसलिये किया कि क्रियार्था क्रिया उपपद में न होने पर भी तुमुन् हो जाये।

शक्नोति भोक्तुम् (खाने में प्रवीण है।)। धृष्णोति भोक्तुम् (खाने में प्रवीण है।) जानाति भोक्तुम् (खाने में प्रवीण है।) ग्लायति भोक्तुम् (खाने में अशक्त है।) घटते भोक्तुम् (खाने में योग्य है।) आरभते भोक्तुम् (खाना शुरू करता है।) लभते भोक्तुम् (भोजन प्राप्त करता है।) प्रक्रमते भोक्तुम् (खाना आरम्भ करता है।) उत्सहते भोक्तुम् (खाने में प्रवृत्त होता है।) अर्हति भोक्तुम् (खाने में योग्य है।) अस्ति भोक्तुम् (भोजन है।) भवति भोक्तुम् (भोजन है।) विद्यते भोक्तुम् (भोजन है।)

पर्याप्तिवचनेष्वलमर्थेषु (३-४-६६) - अलम् अर्थ वाले पर्याप्तिवाची शब्दों

के उपपद रहते धातुओं से तुमुन् प्रत्यय होता है।

पर्याप्ति का अर्थ अन्यूनता या परिपूर्णता है। यह दो प्रकार से संभव है। भोजन के आधिक्य से अथवा भोक्ता के सामर्थ्य से। यहाँ पर्याप्ति शब्द भोक्ता के सामर्थ्य को बतला रहा है। पर्याप्तो भोक्तुम् । समर्थो भोक्तुम्। अलं भोक्तुम्। (खाने में समर्थ है।)

अब लकारों तथा कृत् प्रत्ययों के अर्थ बतलाये जा रहे हैं -

कर्तरि कृत् (३-४-६७) - इस धातु के अधिकार में सामान्यविहित कृत् संज्ञक प्रत्यय कर्ता कारक अर्थ में होते हैं। कर्ता, कारकः, नन्दनः, ग्राही, पचः।

विशेष - धातोः ३.१.९१ सूत्र से लेकर पर्याप्विचनेष्वलमर्थेषु ३.४.६६ सूत्रों तक जो भी प्रत्यय कहे गये हैं, उनकी कृदतिङ् ३.१.९३ सूत्र से कृत् संज्ञा होती है। धातुओं से ये कृत् प्रत्यय कर्ताकारक अर्थ में होते हैं। अर्थात् इनके लगने पर जो शब्द बनता है, उसका अर्थ होता है - उस कार्य को करने वाला। जैसे - कर्ता = करने वाला, कारकः = करने वाला, नन्दनः = प्रसन्न करने वाला, ग्राही = ग्रहण करने वाला, पचः = पकाने वाला।

भव्यगेयप्रवचनीयोपस्थानीयजन्याप्लाव्यापात्या वा (३-४-६८) -

भव्य गेयादि कृत्यप्रत्ययान्त शब्द कर्ता में विकल्प से निपातन किये जाते हैं।

कर्ता अर्थ में - भवत्यसौ भव्यः। कर्म अर्थ में - भव्यमनेन।

कर्ता अर्थ में - गेयो माणवकः साम्नाम्। कर्म अर्थ में - गेयानि माणवकेन सामानि।

कर्ता अर्थ में - प्रवचनीयो गुरुः, स्वाध्यायस्य। कर्म अर्थ में - प्रवचनीयो गुरुणा स्वाध्यायः।

कर्ता अर्थ में - उपस्थानीयः शिष्यो गुरोः। कर्म अर्थ में - उपस्थानीयः शिष्येण गुरुः।

कर्ता अर्थ में - जायतेऽसौ जन्यः। कर्म अर्थ में - जन्यमनेन।

कर्ता अर्थ में - आप्लवतेऽसौ आप्लाव्यः। कर्म अर्थ में - आप्लाव्यमनेन।

कर्ता अर्थ में - आपतत्यसौ आपात्यः। कर्म अर्थ में - आपात्यतेऽनेन।

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः (३-४-६९) - सकर्मक धातुओं से लकार कर्मकारक में होते हैं, चकार से कर्ता कारक में भी होते हैं तथा अकर्मक धातुओं से लकार भाव अर्थ में होते हैं तथा चकार से कर्ता कारक में भी होते हैं। सकर्मक - पठ्यते विद्या

ब्राह्मणेन, पठति विद्यां ब्राह्मण:। अकर्मक - आस्यते देवदत्तेन, हस्यते देवदत्तेन, आस्ते देवदत्त:, हसति देवदत्त:।

तयोरेव कृत्यक्तखलर्था: (३-४-७०) - कृत्यसंज्ञक प्रत्यय, क्त तथा खलर्थ प्रत्यय, भाव तथा कर्म अर्थ में ही होते हैं।

कर्म अर्थ में तव्य प्रत्यय - कर्तव्यो घट: कुलालेन।
भाव अर्थ में तव्य प्रत्यय - आसितव्यं भवता।
कर्म अर्थ में क्त प्रत्यय - कृतो घट: कुलालेन।
भाव अर्थ में क्त प्रत्यय - आसितं भविता।
कर्म अर्थ में खलर्थ प्रत्यय - ईषत्पच ओदनो देवदत्तेन।
भाव अर्थ में खलर्थ प्रत्यय - ईषत्स्वापं भवता।

आदिकर्मणि क्त: कर्तरि च (३-४-७१) - आदिकर्म अर्थ में विहित जो क्त प्रत्यय, वह कर्ता, कर्म तथा भाव अर्थ में होता है।

(यदि क्रिया प्रारम्भ हो गई है, और पूरी नहीं हुई है, अर्थात् उस क्रिया के केवल आदिक्षण भूत हो गये हैं, तब ऐसी स्थिति में सारी क्रिया को भूत नहीं कहा जा सकता, क्योंकि क्रिया 'एकफलोद्देशसमूहरूपा' होती है, इसलिये क्रिया के सम्पूर्ण समूह के व्यवपृक्त होने पर ही उसमें भूतत्व का व्यवहार संभव है।

अत: ऐसी क्रिया, जिसके कुछ क्षण भूत हो चुके हैं और कुछ चल रहे हैं उसे आदिकर्म कहते हैं। आदिकर्म का वर्तमान से भेद यह है कि वर्तमानकाल में केवल क्रिया के चलते रहने का बोध होता है। उसमें भूतत्व का लेश भी नहीं होता किन्तु आदिकर्म में क्रिया के कुछ क्षण भूत हो चुके होते है। कुछ चल रहे हैं और यह भी बोध होता है कि क्रिया आगे भी चलेगी।) ऐसे आदिकर्म अर्थ में विहित जो क्त प्रत्यय, वह कर्ता, कर्म तथा भाव अर्थ में होता है।

कर्ता अर्थ में क्त प्रत्यय -

देवदत्त: कटं प्रकृत: = देवदत्त ने चटाई बनाना आरम्भ कर दिया है।
देवदत्त: ओदनं प्रभुक्त: = देवदत्त ने भात खाना प्रारम्भ कर दिया है।

कर्म अर्थ में क्त प्रत्यय -

देवदत्तेन कट: प्रकृत: - देवदत्त के द्वारा चटाई बनाना प्रारम्भ कर दिया गया है।
देवदत्तेन ओदन: प्रभुक्त: - देवदत्त के द्वारा भात खाना प्रारम्भ कर दिया गया है।

भाव अर्थ में क्त प्रत्यय –

देवदत्तेन प्रकृतम् – देवदत्त के द्वारा काम करना प्रारम्भ कर दिया गया है।

देवदत्तेन प्रभुक्तम् – देवदत्त के द्वारा खाना प्रारम्भ कर दिया गया है।

विशेष – रामायण तथा भागवत दोनों में ही प्रयोग मिलता है – 'त्वां भक्ताः'। यहाँ टीकाकारों ने समाधान किया है – त्वां प्रति भक्ताः। किन्तु यह उचित नहीं है। भक्त का अर्थ यह नहीं है कि जो भजन कर चुका है अपितु भक्त का अर्थ यह है कि जो भजन कर चुका है, कर रहा है और आगे भी करेगा। अतः 'भक्तः' में भज् धातु से आदिकर्म अर्थ में क्त है।

इसी प्रकार 'ज्वलितोऽग्निः में भी आदिकर्म अर्थ में क्त है। इसका अर्थ है 'जलता हुआ अग्नि'। जो अग्नि जल चुकी है, जल रही है और आगे भी जलेगी।

'ज्वलितेऽग्नौ जुहोति' का अर्थ है – जो आग जल चुकी है, जल रही है, और आगे भी जलेगी। ऐसी आग में ही हवन करता है, जल चुकी हुई भस्म में नहीं।

जल चुकी हुई आग में कोई हवन नहीं होता, अतः 'ज्वलितः' में 'आदिकर्म' अर्थ में क्त प्रत्यय है। इस प्रकार क्त प्रत्यय के अर्थ का विचार करना चाहिये कि कहाँ वह भूतार्थ में है और कहाँ आदिकर्म अर्थ में है।

जो रघुवंश में 'पीतप्रतिबद्धवत्साम्' प्रयोग आया है, उसमें भी 'पीत' शब्द में भूतार्थ में क्त नहीं है। मल्लिनाथ ने पा धातु से भाव अर्थ में 'नपुंसके भावे क्तः' सूत्र से क्त प्रत्यय लगाकर भावार्थक क्त प्रत्यय लगाया है और 'पीतं पानमस्यास्ति इति' इस अर्थ में 'अर्श आदिभ्योऽच्' सूत्र से मत्वर्थीय अच् प्रत्यय लगाकर इसे स्पष्ट किया किया है।

जो महाभाष्य में भुक्ता ब्राह्मणाः, पीता गावः, आदि प्रयोग आये हैं, वे भी इसी प्रकार अच् प्रत्यय करके बने हैं। भुक्तं भोजनमेषामस्तीति भुक्ताः। पीतं पानमेषामस्तीति पीताः।

गत्यर्थाकर्मकश्लिषशीङ्स्थावसजनरुहजीर्यतिभ्यश्च (३-४-७२) – गत्यर्थक, अकर्मक तथा श्लिष्, शीङ्, स्था, आस्, वस्, जन्, रुह्, जॄ, धातुओं से होने वाला क्त प्रत्यय, 'कर्ता, कर्म, भाव', इन तीनों अर्थों में होता है।

इन धातुओं से, कर्ता अर्थ में क्त प्रत्यय –

गत्यर्थक धातु कर्ता अर्थ में – देवदत्तः ग्रामं गतः – देवदत्त गाँव को गया।

अकर्मक धातु कर्ता अर्थ में	- देवदत्तः ग्लानः	- देवदत्त ने ग्लानि की।
श्लिष धातु कर्ता अर्थ में	- माता कन्यां उपश्लिष्टा	- माता ने कन्या का आलिङ्गन किया।
शीङ् धातु कर्ता अर्थ में	- देवदत्तः गुरुं उपशयितः	- देवदत्त गुरुजी के पास रहा।
स्था धातु कर्ता अर्थ में	- देवदत्तः गुरुं उपस्थितः	- देवदत्त गुरुजी के पास रहा।
आस् धातु कर्ता अर्थ में	- देवदत्तः गुरुं उपासितः	- देवदत्त ने गुरुजी की उपासना की।
वस् धातु कर्ता अर्थ में	- देवदत्तः गुरुं अनूषितः	- देवदत्त गुरुजी के पास रहा।
जन् धातु कर्ता अर्थ में	- पुत्रः कन्यां अनुजातः	- पुत्र कन्या के बाद पैदा हुई।
रुह् धातु कर्ता अर्थ में	- देवदत्तः वृक्षं आरूढः	- देवदत्त पेड़ पर चढ़ा।
जॄ धातु कर्ता अर्थ में	- देवदत्तः दुर्जनं अनुजीर्णः	- देवदत्त ने दुर्जन को मार मार कर क्षीण कर दिया।

इन धातुओं से, कर्म अर्थ में क्त प्रत्यय -

गत्यर्थक धातु कर्म अर्थ में	- देवदत्तेन ग्रामः गतः	- देवदत्त के द्वारा गाँव जाया गया।
श्लिष् धातु कर्म अर्थ में	- मात्रा कन्या उपश्लिष्टा	- माता के द्वारा कन्या का आलिङ्गन किया गया।
शीङ् धातु कर्म अर्थ में	- देवदत्तेन गुरुः उपशयितः	- देवदत्त के द्वारा गुरुजी के पास रहा गया।
स्था धातु कर्म अर्थ में	- देवदत्तेन गुरुः उपस्थितः	- देवदत्त के द्वारा गुरुजी के पास रहा गया।
आस् धातु कर्म अर्थ में	- देवदत्तेन गुरुः उपासितः	- देवदत्त के द्वारा गुरुजी की उपासना की गयी।
वस् धातु कर्म अर्थ में	- देवदत्तेन गुरुः अनूषितः	- देवदत्त के द्वारा गुरुजी के पास निवास किया गया।
जन् धातु कर्म अर्थ में	- पुत्रेण कन्या अनुजाता	- पुत्र ने कन्या के बाद जन्म लिया।
रुह् धातु कर्म अर्थ में	- देवदत्तेन वृक्षः आरूढः	- देवदत्त के द्वारा पेड़ पर चढ़ा गया।

जॄ धातु कर्म अर्थ में - देवदत्तेन दुर्जनः अनुजीर्णः - देवदत्त के द्वारा दुर्जन को मार मार कर क्षीण कर दिया गया।

इन धातुओं से, भाव अर्थ में क्त प्रत्यय -

गत्यर्थक धातु भाव अर्थ में - देवदत्तेन गतम् - देवदत्त के द्वारा जाया गया।
अकर्मक धातु भाव अर्थ में - देवदत्तेन ग्लानम् - देवदत्त के द्वारा ग्लानि की गई।
श्लिष धातु भाव अर्थ में - मात्रा उपश्लिष्टम् - माता के द्वारा आलिङ्गन किया गया।
शीङ् धातु भाव अर्थ में - देवदत्तेन उपशयितम् - देवदत्त के द्वारा रहा गया।
स्था धातु भाव अर्थ में - देवदत्तेन उपस्थितम् - देवदत्त के द्वारा रहा गया।
आस् धातु भाव अर्थ में - देवदत्तेन उपासितम् - देवदत्त के द्वारा उपासना की गयी।
वस् धातु भाव अर्थ में - देवदत्तेन अनूषितम् - देवदत्त के द्वारा रहा गया।
जन् धातु भाव अर्थ में - पुत्रेण अनुजातम् - पुत्र के द्वारा बाद में पैदा हुआ गया।
रुह् धातु भाव अर्थ में - देवदत्तेन आरूढम् - देवदत्त के द्वारा चढ़ा गया।
जॄ धातु भाव अर्थ में - देवदत्तेन अनुजीर्णम् - देवदत्त के द्वारा क्षीण हुआ गया।

दाशगोघ्नौ संप्रदाने (३-४-७३) - दाश तथा गोघ्न कृदन्त शब्द संप्रदान कारक में निपातन किये जाते हैं।

दाशन्ति तस्मै दाशः। गां हन्ति तस्मै गोघ्नोऽतिथिः।

भीमादयोऽपादाने (३-४-७४) - भीमादि उणादिप्रत्ययान्त शब्द अपादान कारक में निपातन किये जाते हैं। बिभ्यति जनाः अस्माद् इति भीमः, भीष्मो वा। प्रस्कन्दति अस्मादिति प्रस्कन्दनः। प्रक्षरति अस्मादिति प्रक्षरः। मुह्यति अस्मादिति मूर्खः।

भीम। भीष्म। भयानक। वह। चर। प्रस्कन्दन। प्रपतन। समुद्र। स्रुव। स्रुक्। वृष्टि। दृष्टि। रक्षः। संकसुक। शङ्कुसुक। मूर्ख। खलति **।। आकृतिगणोऽयम् इति भीमादिः ।।**

आकृतिगण होने का तात्पर्य यह है कि जो भी शब्द इस प्रकार के दिखें, उन्हें इसी गण के समझ लेना चाहिये।

ताभ्यामन्यत्रोणादयः (३-४-७५) - ताभ्याम् पद से यहाँ उपर्युक्त सम्प्रदान तथा अपादान कारक लिये गये हैं। उणादि प्रत्यय सम्प्रदान तथा अपादान कारकों से अन्यत्र कर्मादि कारकों में भी होते हैं। कृष्यतेऽसौ कृषिः। ततो असौ भवति तन्तुः। वृत्तं तद् इति वर्त्म। चरितं तद् इति चर्म।

क्तोऽधिकरणे च ध्रौव्यगतिप्रत्यवसानार्थेभ्यः (३-४-७६) - ध्रौव्यार्थक (अकर्मक) गत्यर्थक तथा प्रत्यवसानार्थक (भोजनार्थक) धातुओं से विहित जो क्त प्रत्यय, वह अधिकरण कारक में होता है तथा चकार से कर्ता, कर्म, भाव कारक में भी होता है।

मुकुन्दस्यासितमिदमिदं यातं रमापतेः।
भुक्तमेतदनन्तस्येत्यूचुर्गोप्यो दिदृक्षवः।।

ध्रौव्यार्थक	-	आस्यतेऽस्मिन्निति आसितम्	=	आसनम्।
गत्यर्थक	-	यायतेऽस्मिन्निति यातम्	=	मार्गः।
प्रत्यवसानार्थक	-	भुज्यतेऽस्मिन्निति भुक्तम्	=	भोजनम्।

।। श्रीकृष्णार्पणमस्तु ।।

परिशिष्ट

१. णिजन्त धातु बनाने की विधि।

२. धातुपाठ।

३. धातुसूची।

४. सूत्र - वार्तिक - गणसूत्रानुक्रमणिका।

परिशिष्ट

धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाने की विधि

धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाकर णिजन्त धातु बनाने की विधि -

णिच् प्रत्यय दो प्रकार का होता है -

१. चुरादिगण के धातुओं से लगने वाला 'स्वार्थिक' णिच् प्रत्यय -

चुरादिगण के धातुओं में किसी भी प्रत्यय को लगाने के पहिले णिच् प्रत्यय लगाया जाता है। इसके लगने से धातु के अर्थ में कोई भी वृद्धि नहीं होती। अत: इसे 'स्वार्थिक' णिच् प्रत्यय कहते हैं। इसके लिये सूत्र है -

सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच् - सत्याप, पाश, रूप, वीणा, तूल, श्लोक, सेना, लोम, त्वच्, वर्म, वर्ण, चूर्ण, इन प्रातिपदिकों से तथा 'चुरादि गण के सारे धातुओं से' किसी भी प्रत्यय को लगाने के पहिले, णिच् प्रत्यय अवश्य लगाया जाता है।

२. प्रयोज्य प्रयोजक व्यापार बतलाने के लिये में किसी भी धातु से लगने वाला णिच् प्रत्यय -

तत्प्रयोजको हेतुश्च - जब एक कर्ता कोई काम करे, और दूसरा कर्ता उससे उस काम को करवाये, तब जो काम कराने वाला है, उसे प्रयोजक कर्ता कहा जाता है, तथा जिससे काम कराया जा रहा है, उसे प्रयोज्य कर्ता कहा जाता है। जैसे -

गुरु: शिष्यं पाठयति - गुरु शिष्य को पढ़ाता है। इस वाक्य के भीतर, शिष्य: पठति, गुरु: प्रेरयति ये दो वाक्य हैं।

यहाँ शिष्य पढ़ रहा है, अत: वह प्रयोज्य कर्ता है, तथा गुरु उसे पढ़ने के लिये प्रेरित कर रहा है, अत: वह प्रयोजक कर्ता है।

इसी प्रकार देवदत्त: यज्ञदत्तं गमयति - देवदत्त यज्ञदत्त को भेजता है। इस वाक्य के भीतर, यज्ञदत्त: गच्छति, देवदत्त: प्रेरयति ये दो वाक्य हैं।

यहाँ यज्ञदत्त जाने का काम कर रहा है, अत: वह प्रयोज्य कर्ता है तथा देवदत्त उसे जाने के लिये प्रेरित कर रहा है, अत: वह प्रयोजक कर्ता है।

जो प्रयोजक कर्ता होता है, उसे 'हेतु' कहा जाता है।

हेतुमति च - जब इस प्रकार का प्रयोज्य प्रयोजक व्यापार वाच्य हो, तब किसी

भी धातु से णिच् प्रत्यय लगा देना चाहिये। णिच् प्रत्यय लगाने से यह प्रेरणा अर्थ अभिव्यक्त हो जाता है। यथा पठ् का अर्थ पढ़ना है, किन्तु यदि इस पठ् में हम णिच् लगा दें तो पठ् + णिच् का अर्थ 'पढ़ाना' हो जायेगा।

इसी प्रकार गम् का अर्थ है जाना। यदि गम् में हम णिच् लगा दें, तो गम् + णिच् का अर्थ 'भेजना' हो जायेगा।

खाद् का अर्थ है 'खाना'। इसमें यदि णिच् लगा दें तो खाद् + णिच् का अर्थ हो जायेगा 'खिलाना'।

अब हम देखें कि 'पठ्' तो धातुपाठ में पढ़ा गया है, अतः 'भूवादयो धातवः' (पृष्ठ १) सूत्र से इसका नाम धातु है, किन्तु पठ् + णिच् तो धातुपाठ में पढ़ा नहीं गया है, अतः हम पहिले 'सनाद्यन्ता धातवः' (पृष्ठ ३) सूत्र से इसकी धातुसंज्ञा करेंगे, उसके बाद ही इससे धातुओं से लगने वाले सभी प्रत्यय लगा सकेंगे।

इस प्रकार हमने जाना कि धातु दो प्रकार के होते हैं -

१. धातुपाठ में पठित धातु, जिनकी 'भूवादयो धातवः' सूत्र से धातु संज्ञा होती है।

२. प्रत्ययान्त धातु, जिनकी 'सनाद्यन्ता धातवः' सूत्र से धातु संज्ञा होती है।

अब हम धातुओं से णिच् प्रत्यय लगाकर णिजन्त धातु बनायें।

यह कार्य हम दो खण्डों में करें।

१. अजन्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाने की विधि।

२. हलन्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाने की विधि।

अजन्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाने की विधि

अजन्त धातुओं को आकारान्त, इकारान्त, उकारान्त, ऋकारान्त, ॠकारान्त आदि क्रम से अपनी दृष्टि के सामने रख लीजिये।

आकारान्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाना -

अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुङ्णौ - ऋ धातु, ह्री धातु, ब्ली धातु री धातु, क्नूय् धातु, क्ष्मायी धातु तथा सभी आकारान्त धातुओं का पुक् को आगम होता है।

णिच् में, ण्, च् की इत्संज्ञा होकर 'इ' शेष बचता है। पुक् में उ, क्, की इत् संज्ञा करके प् शेष बचता है।

दा + णिच् = दा + पुक् + इ - दापि
धा + णिच् = धा + पुक् + इ - धापि

अब इस णिच् लगे हुए इन धातुओं की अर्थात् दाप् + इ - दापि / धाप् + इ - धापि आदि, की 'सनाद्यन्ता धातवः' सूत्र से धातुसंज्ञा कीजिये। धातुसंज्ञा हो जाने से अब इसमें कोई भी प्रत्यय लगाये जा सकते हैं।

हमने देखा कि णिजन्त धातु के अन्त में सदा णिच् = इ, ही होता है।

एजन्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाना -

आदेच उपदेशेऽशिति - अशित् प्रत्यय परे होने पर सारे एजन्त अर्थात् ए, ऐ, ओ, औ से अन्त होने वाले धातुओं को 'आ' अन्तादेश होता है। जैसे - ग्लै - ग्ला, म्लै - म्ला, ध्यै - ध्या, शो - शा, सो - सा, वे - वा, छो - छा।

अब देखिये कि ए, ऐ, ओ, औ से अन्त होने वाले धातु भी आकारान्त बन गये। अतः णिच् प्रत्यय परे होने पर इन्हें भी आकारान्त मानकर 'अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुङ्णौ' सूत्र से पुक् (प्) का आगम कीजिए -

ध्यै - ध्या + णिच् - ध्या + पुक् + इ - ध्यापि
म्लै - म्ला + णिच् - ध्या + पुक् + इ - म्लापि

कुछ आकारान्त धातुओं में पुगागम नहीं होता। वे इस प्रकार हैं -

पुगागम के अपवाद - शो, छो, षो, ह्वे, व्ये, वे, पा धातु -

शाच्छासाह्वाव्यावेपां युक् - शो - शा / छो - छा / सो - सा / ह्वे - ह्वा / व्ये - व्या / वे - वा / और पा इन सात आकारान्त धातुओं को पुक् (प्) का आगम न होकर युक् (य्) का आगम होता है -

शो - शा + युक् + णिच् - शायि
छो - छा + युक् + णिच् - छायि
सो - सा + युक् + णिच् - सायि
ह्वे - ह्वा + युक् + णिच् - ह्वायि
व्ये - व्या + युक् + णिच् - व्यायि
वे - वा + युक् + णिच् - वायि
पै - पा + युक् + णिच् = पायि

पा रक्षणे धातु - लुगागमस्तु तस्य वक्तव्यः (वा.) - देखें कि पा पाने धातु को युक् का आगम कहा गया है, किन्तु पा रक्षणे धातु को लुक् का आगम होता है।

पा - पा + लुक् + णिच् - पालि

वा धातु - वो विधूनने जुक् - वा धातु का अर्थ यदि हवा झलना, कँपाना हो तो उसे जुक् का आगम होता है -

वा - वा + जुक् + णिच् - वाजि

ला धातु - लीलोर्नुग्लुकावन्यतरस्यां स्नेहनिपातने - स्नेहनिपातन अर्थात् घी पिघलाना आदि अर्थ में, ला धातु को लुक् का आगम विकल्प से होता है।

लुक् का आगम होने पर -

ला - ला + लुक् + णिच् - लालि

लुक् का आगम न होने पर 'अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुङ्णौ' सूत्र से पुक् का आगम कीजिये -

ला - ला + पुक् + णिच् - लापि

ली धातु इकारान्त वर्ग में बतला रहे हैं।

मित् आकारान्त धातु - ज्ञा, ग्ला, स्ना, श्रा धातु - ध्यान रहे कि ये धातु 'घटादयो मितः' से मित् हैं।

घटादयो मितः - भ्वादिगण का धातुपाठ देखिये। इसमें ९१५ से ९७२ तक धातुओं का घटादि अन्तर्गण है। घटादि अन्तर्गण के ये धातु मित् धातु कहलाते हैं। इन मित् धातुओं की उपधा के 'अ' को मितां ह्रस्वः सूत्र से ह्रस्व होता है -

ज्ञा + णिच् = ज्ञाप् + इ - ज्ञापि - ज्ञपि
ग्ला + णिच् = ग्लाप् + इ - ग्लापि - ग्लपि
स्ना + णिच् = स्नाप् + इ - स्नापि - स्नपि

इकारान्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाना -

इनके अन्तिम इ, ई को णिच् परे होने पर **अचो ञ्णिति** सूत्र से वृद्धि करके ऐ बनाइये तथा एचोऽयवायावः सूत्र से आय् आदेश कीजिये -

नी + णिच् - नै + इ - नाय् + इ - नायि

इसके अपवाद - वी धातु - प्रजने वीयतेः - इसका अर्थ यदि प्रजनन हो, तो इसे 'आ' अन्तादेश होता है।

प्रजनन अर्थ में - इसे 'आ' आदेश कीजिये और आकारान्त होने के कारण 'अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुङ्णौ' सूत्र से पुक् का आगम कीजिये -

वी - वा + पुक् + णिच् - वापि

प्रजनन अर्थ न होने पर - वी + णिच् / अचो ञ्णिति सूत्र से इ को वृद्धि करके

- वै + इ / एचोऽयवायाव: सूत्र से आय् आदेश करके - वाय् + इ - वायि।

स्मि धातु - नित्यं स्मयते: - स्मि धातु के 'इ' को 'आ' अन्तादेश होता है, हेतु से भय होने पर।

विस्मि + णिच् / वि + स्मा + णिच् / आकारान्त होने से 'अर्तिह्रीब्ली. सूत्र से सूत्र से पुक् का आगम करके - वि + स्मा + पुक् + णिच् - विस्मापि।

हेतु से भय न होने पर - आकार अन्तादेश नहीं होगा। अत: विस्मि + णिच् / अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके - विस्मै + इ / एचोऽयवायाव: सूत्र से आय् आदेश करके - विस्माय् + इ = विस्मायि।

क्री, जि, अधि + इ धातु -

क्रीङ्जीनां णौ - क्री, जि, अधि + इ धातु, इनके 'इ' को 'आ' अन्तादेश होता है। उसके बाद 'अर्तिह्रीब्ली. सूत्र से सूत्र से पुक् का आगम होता है।

क्री - क्रा + पुक् + णिच् - क्रापि
जि - जा + पुक् + णिच् - जापि
अधि + इ - अध्या + पुक् + णिच् - अध्यापि

चि धातु - चिस्फुरोर्णौ - चि धातु तथा स्फुर् धातु के एच् के स्थान पर विकल्प से 'आ'होता है।

'आ' आदेश होने पर - चि + णिच् / अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके - चै + इ / चिस्फुरोर्णौ सूत्र से ऐ के स्थान पर 'आ' आदेश करके - चा + इ / आकारान्त होने के कारण 'अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुङ्णौ' सूत्र से इसे पुक् का आगम करके - चाप् + इ - चापि।

'आ' आदेश न होने पर - चि + णिच् / अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके चै + इ / एचोऽयवायांव: सूत्र से आय् आदेश करके - चाय् + इ = चायि।

ध्यान दीजिये कि 'चि' धातु दो हैं। एक स्वादिगण में तथा दूसरा चुरादिगण में। स्वादिगण के 'चि' धातु से चापि, चायि, दो रूप बनते हैं।

चुरादिगण का चि धातु 'नान्ये मितोऽहेतौ' इस गणसूत्र से मित् होता है। अत: इसे मितां ह्रस्व: सूत्र से ह्रस्व करके चापि - चपि / चायि - चयि, रूप बनते हैं। स्फुर् धातु आगे बतलायेंगे।

भी धातु - बिभेतेर्हेतुभये - भी धातु के अन्त को विकल्प से 'आ' आदेश होता

है, यदि प्रयोजक कर्ता से भय हो तो।

भीस्म्योर्हेतुभये - प्रयोजक कर्ता से भय होने पर, भी धातु तथा स्मि धातु से आत्मनेपद होता है।

भी धातु को 'आ' आदेश होने पर - इसे 'अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुङ्णौ' सूत्र से पुक् का आगम कीजिये -

भी - भा + णिच् + पुक् - भापि

भी धातु को 'आ' आदेश न होने पर -

भियो हेतुभये षुक् - जब प्रयोजक कर्ता (हेतु) से भय हो, और आत्व न हो तब, 'भी' धातु को षुक् का आगम होता है।

भी - भी + णिच् + षुक् - भीषि

अन्य किसी से भय होने पर -

यदि प्रयोजक कर्ता (हेतु) से भय न होकर अन्य किसी से भय हो, तब धातु के अन्त को न तो 'आ' होता है, न पुक् का आगम होता है, न ही षुक् का आगम होता है। तब भी + णिच् / अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके भै + इ / एचोऽयवायावः सूत्र से आय् आदेश करके - भाय् + इ = भायि।

'कुञ्चिकया एनं भाययति' में डराने वाले प्रयोजक कर्ता (हेतु) से भय नहीं है, अपितु कुञ्चिका (करण) से भय है, अतः आत्व नहीं हुआ है।

प्री धातु - धूञ्प्रीञोर्नुग्वक्तव्यः (वा.) - प्री, धू धातुओं को नुक् का आगम होता है। प्री - प्री + नुक् + णिच् - प्रीणि। धू धातु उकारान्त वर्ग में बतला रहे हैं।

ली धातु - लीलोर्नुग्लुकावन्यतरस्यां स्नेहनिपातने - ली धातु को घी बिलोने अर्थ में विकल्प से नुक् का आगम होता है। नुक् का आगम होने पर -

ली - ली + नुक् + णिच् - लीनि

विभाषा लीयतेः - जब भी 'ली' धातु को गुण होकर 'ए' हो, तब उस 'ए' को विकल्प से 'आ' आदेश होता है।

नुक् का आगम न होने पर, विभाषा लीयतेः से 'आ' अन्तादेश करके 'अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुङ्णौ' सूत्र से पुक् का आगम कीजिये -

ली - ला + पुक् + णिच् - लापि

नुक् का आगम न होने पर तथा 'आ' अन्तादेश न होने पर -

अन्तिम ई को अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके एचोऽयवायावः सूत्र से आय् आदेश

कीजिये - ली + णिच् - लै + इ - लाय् + इ - लायि

ह्री, ब्ली, री, धातु - इन्हें 'अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुङ्णौ' सूत्र से पुक् का आगम कीजिये तथा पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से गुण कीजिये -

ह्री - ह्री + पुक् + णिच् - ह्रेपि

ब्ली - ब्ली + पुक् + णिच् - ब्लेपि

री - री + पुक् + णिच् - रेपि

इण् तथा इक् धातु - णौ गमिरबोधने - अबोधन अर्थ वाले इण् धातु को गम् आदेश होता है -

अबोधन अर्थ मे गम् आदेश होने पर -

इण् + णिच् / गम् + णिच् - गमि

बोधन अर्थ में गम् आदेश न होने पर -

बोधन अर्थ में प्रति उपसर्ग पूर्वक 'इ' धातु से णिच् लगाने पर - प्रति + इ + णिच् / अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके - प्रति + ऐ + णिच् / एचोऽयवायाव: सूत्र से आय् आदेश करके - प्रति + आय् + इ / इको यणचि से यण् सन्धि करके - प्रत्याय् + इ - प्रत्यायि।

इण्वदिक: - इण् धातु के समान इक् धातु को भी गम् आदेश होता है - इक् + णिच् - गम् + णिच् - गमि।

उकारान्त, ऊकारान्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाना-

इनके अन्तिम उ, ऊ को णिच् परे होने पर अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके औ बनाइये तथा एचोऽयवायाव: सूत्र से आव् आदेश कीजिये -

भू + णिच् - भौ + इ - भाव् + इ + भावि

लू + णिच् - लौ + इ - लाव् + इ + लावि

पू + णिच् - पौ + इ - पाव् + इ + पावि

द्रु + णिच् - द्रौ + इ - द्राव् + इ + द्रावि

इसके अपवाद - धू धातु - धूञ्प्रीञोर्नुग्वक्तव्य: (वा.) - प्री, धू धातुओं को नुक् का आगम होता है।

धू- धू + नुक्+ णिच् - धूनि

ऋकारान्त, ॠकारान्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाना-

इनके अन्तिम ऋ, ॠ को अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके आर् बनाइये -

कृ + णिच् - कार् + इ - कारि
हृ + णिच् - हार् + इ - हारि
तॄ + णिच् - तार् + इ - तारि

इसके अपवाद -

१. जागृ धातु - जाग्रोऽविचिण्णल्ङित्सु - जहाँ वृद्धि प्राप्त हो, अथवा जहाँ गुण, वृद्धि का निषेध प्राप्त हो, वहाँ जागृ धातु के अन्तिम ऋ को गुण ही होता है। इससे जागृ धातु को गुण करके अर् बनाइये - जागृ + णिच् - जागर् + इ - जागरि

२. दॄ, नॄ, जॄ धातु - इनके अन्तिम ऋ, ॠ को अचो ञ्णिति सूत्र से वृद्धि करके आर् बनाइये। ये धातु मित् हैं। अतः मितां ह्रस्वः सूत्र से उसे ह्रस्व कर दीजिये।

दॄ + णिच् - दार् + इ - दारि - दरि
नॄ + णिच् - नार् + इ - नारि - नरि
जॄ + णिच् - जार् + इ - जारि - जरि

३. स्मृ धातु - जब इसका अर्थ आध्यान अर्थात् चिन्तन हो तब मितां ह्रस्वः सूत्र से इसे ह्रस्व कर दीजिये। यथा -

स्मृ + णिच् - स्मार् + इ - स्मारि - स्मरि

चिन्तन अर्थ न होने पर, मितां ह्रस्वः सूत्र से इसे ह्रस्व मत कीजिये -

स्मृ + णिच् - स्मार् + इ - स्मारि - स्मारि

४. ऋ धातु - इसे 'अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्याताम् पुङ्णौ' सूत्र से पुक् का आगम कीजिये तथा पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से गुण कीजिये -

ऋ + णिच् - अर्+ पुक् + णिच् - अर्पि

यह अजन्त धातुओं में 'णिच्' लगाने का विचार पूर्ण हुआ।

हलन्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाने की विधि

पहिले हम अपवादों का विचार करके उनके रूप बना लें -

णिच् प्रत्यय परे होने पर -

१. स्फाय् धातु - स्फायो वः - स्फाय् धातु को स्फाव् आदेश होता है। स्फाय् + णिच् - स्फावि

२. शद् धातु - शदेरगतौ तः - शद् धातु को शत् आदेश होता है। शद् + णिच् - शाति

३. रुह् धातु - रुहः पोऽन्यतरस्याम् - रुह् धातु के ह् को विकल्प से 'प्' आदेश

होता है। 'प्' आदेश न होने पर - रुह् + णिच् - रोहि।

'प्' आदेश होने पर - रुह् + णिच् - रोपि बनाइये।

४. रध्, जभ् धातु - रधिजभोरचि - रध्, जभ् धातुओं को नुम् का आगम होता है। रध् + णिच् - रन्धि / जभ् + णिच् - जम्भि।

५. लभ् धातु - लभेश्च - लभ् धातु को नुम् का आगम होता है। लभ् + णिच् - लम्भि।

६. जभ् धातु - रभेरशब्लिटोः - रभ् धातु को नुम् का आगम होता है। रभ् + णिच् - रम्भि।

७. दुष् धातु - दोषो णौ / वा चित्तविरागे - दुष् धातु की उपधा को 'ऊ' आदेश होता है, चित्तविकार अर्थ होने पर। दुष् + णिच् - दूषि।

चित्तविकार अर्थ न होने पर दुष् + णिच् / पुगन्तलघूपधस्य च से गुण करके - दोषि बनाइये।

८. सिध् धातु - सिध्यतेरपारलौकिके - सिध् धातु के 'एच्' को पारलौकिक ज्ञानविशेष से भिन्न अर्थ में 'आ' आदेश होता है।

भोजन बनाने या जाने अर्थ में - सिध् + णिच् - पुगन्तलघूपधस्य च से गुण करके - सेध् + इ / ए को 'आ करके - साध् + इ - साधि।

तपस्या अर्थ में - सिध् + णिच् - पुगन्तलघूपधस्य च से गुण करके - सेध् + इ - सेधि।

९. स्फुर् धातु - चिस्फुरोर्णौ - स्फुर् धातु के 'एच्' को विकल्प से 'आ' आदेश होता है।

'आ' आदेश होने पर - स्फुर् + णिच् / पुगन्तलघूपधस्य च से गुण करके - स्फोर् + णिच् / एच् को 'आ' करके - स्फार् + णिच् - स्फारि।

'आ' आदेश न होने पर - स्फुर + णिच् - स्फोरि।

१०. क्नूय् धातु - 'अर्तिह्रीब्ली. सूत्र से पुक् का आगम करके, पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से गुण कीजिये - क्नूय् + णिच् - क्नोपि।

११. हन् धातु - हन् + णिच् / 'हो हन्तेर्ञ्णिन्नेषु' सूत्र से कुत्व करके हन् धातु के 'ह' को 'घ' बनाकर -- घन् + इ / अत उपधायाः सूत्र से 'अ' को वृद्धि करके - घान् + इ / 'हनस्तोऽचिण्णलोः' सूत्र से न् को त् करके - घाति।

१२. **कॄत् धातु - उपधायाश्च** - उपधा के दीर्घ ॠ को 'इ' आदेश होता है, सभी प्रत्यय परे होने पर।

यहाँ ॠ के स्थान पर 'इ' होना कहा गया है, अतः 'इ' के स्थान पर **'उरण् रपरः'** सूत्र से 'इर्' होगा - कॄत् + णिच् - किर्त् + इ / तथा **'उपधायाञ्च'** सूत्र से उसे दीर्घ होगा - कीर्त् + इ - कीर्ति।

१३. **चुरादिगण के अदन्त धातु -**

पद गतौ	गृह ग्रहणे	मृग अन्वेषणे
कुह विस्मापने	कथ वाक्यप्रबन्धे	वर ईप्सायाम्
गण संख्याने	शठ श्वठ सम्यगवभाषणे	पट वट ग्रन्थे
रह त्यागे	स्तन देवशब्दे	गदी देवशब्दे
पत गतौ	पष अनुपसर्गात् गतौ	स्वर आक्षेपे
रच प्रतियत्ने	कल गतौ	चह परिकल्कने
मह पूजायाम्	कृप श्रथ दौर्बल्ये	स्पृह ईप्सायाम्
ध्वन शब्दे	कुण गुण चामन्त्रणे	पुट संसर्गे
वट विभाजने	लज प्रकाशने	रस आस्वादनस्नेहनयोः
व्यय वित्तसमुत्सर्गे	छद अपवारणे	व्रण गात्रविचूर्णने
क्षिप प्रेरणे	वस निवासे	

बहुलमेतन्निदर्शनम् इत्येके (गणसूत्र) - कुछ का मत है कि अदन्त धातु केवल इतने ही नहीं हैं अपितु बाहुलक से भी अन्य हो सकते हैं। जैसे - आन्दोलयति, प्रेङ्खोलयति विडम्बयति अवधीरयति इत्यादि।

अतो लोपः - अत् का लोप होता है, आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर।

णिच् प्रत्यय भी आर्धधातुक है। अतः इसके परे होने पर, इस सूत्र से इन अदन्त धातुओं के 'अ' का लोप कर दें। कथ + णिच् - कथ् + इ -

(इन अदन्त धातुओं में जो 'अ' का लोप होता है, वह अलोप 'अचः परस्मिन् पूर्वविधौ' सूत्र से स्थानिवत् हो जाता है, अतः उस स्थान पर 'अ' के दिखने के कारण णिच् प्रत्यय परे होने पर भी उसे निमित्त मानकर, इस लुप्त अ के पूर्व, इन धातुओं को कोई अङ्गकार्य नहीं होता। अतः - कथ् + इ - कथि।)

कथ् + णिच् - कथि   गुण् + णिच् - गुणि
मृग् + णिच् - मृगि   क्षिप् + णिच् - क्षिपि

१४. घटादि मित् धातु -

घट्	व्यथ्	प्रस्	कख्	रग्	लग्	ह्नग्	ष्टग्	षग्
कग्	प्रथ्	म्रद्	क्रप्	त्वर्	ज्वर्	गड्	नट्	भअ्
णट्	चक्	अत्	अग्	कण्	रण्	चण्	शण्	श्रण्
श्रथ्	श्लथ्	क्रथ्	क्लथ्	वन्	ज्वल्	ह्वल्	ह्मल्	क्नस्
जन्	फण्							

घटादयो मितः - घटादि अन्तर्गण के ये धातु मित् धातु कहलाते हैं।

इन अदुपध धातुओं की उपधा के 'अ' को 'अत उपधायाः' सूत्र से वृद्धि करके, 'मितां ह्रस्वः' सूत्र से उसे पुनः ह्रस्व कीजिये। जैसे - घट् + णिच् - घाट् + इ / उपधा को मितां ह्रस्वः सूत्र से पुनः ह्रस्व करके - घटि। घट् + णिच् - घाट् + इ - घाटि - ह्रस्व करके घटि।

ठीक इसी प्रकार - व्यथ् + णिच् - व्यथि। प्रस् + णिच - प्रसि। त्वर् + णिच् - त्वरि, आदि बनाइये।

नान्ये मितोऽहेतौ - चुरादिगण के ज्ञप्, यम्, चह्, रह्, बल्, चिञ्, ये धातु भी मित् कहलाते हैं। इनमें भी णिच् प्रत्यय लगने के बाद इन मित् धातुओं की उपधा के 'अ' को 'अत उपधायाः' सूत्र से वृद्धि करके, 'मितां ह्रस्वः' सूत्र से उसे पुनः ह्रस्व कीजिये।

ज्ञप् + णिच् - ज्ञाप् + इ - ज्ञापि - ज्ञपि
यम् + णिच् - याम् + इ - यामि - यमि
चह् + णिच् - चाह् + इ - चाहि - चहि
रह् + णिच् - राह् + इ - राहि - रहि
बल् + णिच् - बाल् + इ - बालि - बलि

(चि धातु से चायि, चापि बनते हैं, इन्हें इकारान्त वर्ग में देखें।)

अर्थ विशेष में मित् होने वाले घटादि धातु

अब कुछ ऐसे धातु बतला रहे हैं, जो सदा मित् नहीं होते, अपितु किसी अर्थ विशेष में ही मित् होते हैं, तथा दूसरे अर्थ में होने पर वे मित् नहीं होते। ध्यान रहे कि मित् होने पर ही इनकी उपधा को 'मितां ह्रस्वः' सूत्र से ह्रस्व होता है। अन्यथा जो रूप ऊपर कही गई प्रक्रिया से बनता है, वही रहता है।

मदी हर्षग्लेपनयोः - यह धातु दिवादिगण का है। हर्ष और ग्लेपन अर्थ में मित् होने पर इससे 'अत उपधायाः' सूत्र से वृद्धि करके, तथा 'मितां ह्रस्वः' सूत्र से उसे पुनः

ह्मालि / नम् - नमि, नामि / ऐसे दो दो रूप बनते हैं।

शमो दर्शने - दिवादिगण का शम उपशमे धातु, दर्शन = देखना अर्थ में मित् नहीं होता। अतः वहाँ वृद्धि होकर - निशामि रूप बनता है। उपशम अर्थ में मित् होता है, अतः वहाँ शम् - शमि रूप बनता है।

चुरादिगण के शम आलोचने को **नान्ये मितोऽहेतौ** से मित्व निषेध होता है, अतः चुरादिगण में शम् - शामि, ही बनता है।

स्खदिर् अवपरिभ्यां च - स्खदिर् धातु अव या परि उपसर्गों के साथ मित् नहीं होता तो वहाँ अवस्खद् - अवस्खादि / परिस्खद् - परिस्खादि बनेगा। किन्तु उपसर्गरहित होने पर स्खद् - स्खदि, ही बनेगा।

नॄ नये - यह धातु क्र्यादिगण का है। जब इसका 'नय' अर्थ होता है, तब इसका पाठ घटादिगण में होता है, तभी यह मित् होता है, अन्य अर्थों में यह मित् नहीं होता है, तो 'नय' अर्थ में 'अचो ञ्णिति' सूत्र से वृद्धि करके, तथा 'मितां ह्रस्वः' सूत्र से उसे पुनः ह्रस्व करके नॄ - नरि, बनेगा तथा अन्य अर्थों में नॄ - नारि, बनेगा।

दॄ भये - यह धातु क्र्यादिगण का है। जब इसका 'भय' अर्थ होता है, तब इसका पाठ घटादिगण में होता है, तभी यह मित् होता है, अन्य अर्थों में यह मित् नहीं होता है, तो 'भय' अर्थ में 'अचो ञ्णिति' सूत्र से वृद्धि करके, तथा 'मितां ह्रस्वः' सूत्र से उसे पुनः ह्रस्व करके दॄ - दरि, बनेगा तथा अन्य अर्थों में दॄ - दारि, बनेगा।

श्रा पाके - एक श्रा धातु अदादिगण का है। एक भ्वादिगण के श्रै पाके धातु को भी आत्व होकर श्रा बन जाता है। जब इन दोनों धातुओं का अर्थ 'पाक' होता है, तब इनका पाठ घटादिगण में होता है, तभी ये मित् होते हैं, अन्य अर्थों में ये मित् नहीं होते हैं, तो 'पाक' अर्थ में श्रा - श्रपि, बनेगा तथा अन्य अर्थों में श्रा - श्रापि, बनेगा ।

ज्ञा मारणतोषणनिशामनेषु - एक ज्ञा अवबोधने धातु क्र्यादिगण का है तथा एक ज्ञा धातु चुरादिगण का है।

जब इनका अर्थ मारण, तोषण, निशामन, होता है, तब इनका पाठ घटादिगण में होता है, तभी ये मित् होते हैं, अन्य अर्थों में ये मित् नहीं होते तो 'मारण, तोषण, निशामन' अर्थों में ज्ञा - ज्ञपि, बनेगा तथा अन्य अर्थों में ज्ञा - ज्ञापि।

चलि कम्पने - यह धातु भ्वादिगण का है तथा एक चलि धातु चुरादिगण का भी है। जब इनका अर्थ 'कम्पन' होता है, जब इनका पाठ घटादिगण में होता है, तभी

ये मित् होते हैं, अन्य अर्थों में ये मित् नहीं होते हैं।

अतः 'कम्पन' अर्थ में 'अत उपधायाः' सूत्र से वृद्धि करके, तथा 'मितां ह्रस्वः' सूत्र से उसे पुनः ह्रस्व करके चल् - चलि, बनेगा तथा अन्य अर्थों में चल् - चालि, बनेगा।

लडि जिह्वोन्मथने - यह धातु भी भ्वादिगण तथा चुरादिगण में है। जब इसका अर्थ लड़ना होगा तभी यह मित् होगा। तब 'अत उपधायाः' सूत्र से वृद्धि करके, तथा 'मितां ह्रस्वः' सूत्र से उसे पुनः ह्रस्व करके इसका रूप बनेगा - लड् - लडि / अन्यत्र बनेगा लड् - लाडि।

छदिर् ऊर्जने - यह धातु चुरादिगण का है जब इसका अर्थ बलवान् बनाना, ऐसा होगा, तभी यह मित् होगा। तब इसका रूप बनेगा - छद् - छदि। जब इसका अर्थ ढाँकना ऐसा होगा, तब इसका रूप बनेगा - छद् - छादि।

यमोऽपरिवेषणे - यह यम् धातु भ्वादिगण का है। जब इसका अर्थ 'परोसना' ऐसा होगा, तभी यह मित् होगा। तब इसका रूप बनेगा - यम् - यमि / अन्यत्र इसका रूप बनेगा आयम् - आयामि। वहाँ यह मित् नहीं होगा।

अब जो हलन्त धातु बचे हैं, उनके पाँच वर्ग बनाइये। अदुपध, इदुपध, उदुपध ऋदुपध तथा शेष। इनमें इस प्रकार णिच् प्रत्यय लगाइये -

१. अदुपध हलन्त धातु -

अत उपधायाः - अदुपध धातुओं की उपधा के 'अ' को वृद्धि होती है ञित् अथवा णित् प्रत्यय परे होने पर।

पठ् + णिच् = पाठ् + इ - पाठि
वद् + णिच् = वाद् + इ - वादि
पत् + णिच् = पात् + इ - पाति
नट् + णिच् = नाट् + इ - नाटि

२. इदुपध हलन्त धातु -

पुगन्तलघूपधस्य च - जिनकी उपधा में लघु इ, लघु उ, लघु ऋ हैं, ऐसे लघु इगुपध धातुओं की उपधा के 'लघु इक्' को गुण होता है।

इस सूत्र से उपधा के 'इ' को 'ए' गुण करके -

लिख् + णिच् - लेख् + इ = लेखि
छिद् + णिच् - छेद् + इ = छेदि

३. उदुपध हलन्त धातु – पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के 'उ' को 'ओ' गुण करके –

मुद् + णिच् - मोद् + इ = मोदि
बुध् + णिच् - बोध् + इ = बोधि

४. ऋदुपध हलन्त धातु – पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से उपधा के 'ऋ' को 'अर्' गुण करके –

वृष् + णिच् - वर्ष् + इ = वर्षि
कृष् + णिच् - कर्ष् + इ = कर्षि

५. शेष हलन्त धातु – इनके अलावा जितने भी हलन्त धातु बचे उनमें बिना कुछ किये णिच् प्रत्यय जोड़ दीजिये –

बुक्क् + णिच् - बुक्क् + इ = बुक्कि
एध् + णिच् - एध् + इ = एधि

णिजन्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाना – णिजन्त धातुओं से जब दूसरा णिच् लगाते हैं, तब पूर्व णिच् का 'णेरनिटि' सूत्र से लोप हो जाता है। यथा – पाठि + णिच् / 'णेरनिटि' सूत्र से पूर्व णिच् का लोप करके – पाठ् + इ = पाठि।

सन्नन्त तथा यङन्त धातुओं में णिच् प्रत्यय लगाना – सन्नन्त तथा यङन्त धातुओं से जब णिच् लगाते हैं, तब सन्नन्त तथा यङन्त धातुओं के अन्तिम 'अ' का 'अतो लोपः' सूत्र से लोप हो जाता है। यथा – पिपठिष + णिच् / 'अतो लोपः' सूत्र से 'अ' का लोप करके – पिपठिष् + इ = पिपठिषि। पापठ्य + णिच् / 'अतो लोपः' सूत्र से 'अ' का लोप करके – पापठ्य् + इ = पापठ्यि।

इस प्रकार सभी धातुओं में, णिच् प्रत्यय जोड़ने की विधि पूर्ण हुई। इनसे सार्वधातुक प्रत्यय परे होने पर 'कर्तरि शप्' सूत्र से शप् विकरण होगा।

अनिडादि आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर 'णेरनिटि' सूत्र से णिच् का लोप होगा। निष्ठा प्रत्यय परे होने पर 'निष्ठायां सेटि' सूत्र से णिच् का लोप होगा। अन्य प्रत्यय परे होने पर लोप न होकर यथाविहित अङ्गकार्य होंगे।

❀ ❀ ❀

धातुपाठ

इस धातुपाठ में पाणिनीय धातुपाठ के सारे धातु यथावत् लिये गये हैं। केवल उनके क्रम में अङ्गकार्यों के अनुसार कुछ परिवर्तन किया गया है। धातुपाठ में जो संख्या धातु के पहिले दी गई है, वह इस धातुपाठ का धातु-क्रमाङ्क है। जो संख्या धातु के बाद दी गई है, वह पाणिनीय धातुपाठ का धातु-क्रमाङ्क है। प. = परस्मैपद। आ. = आत्मनेपद। उ. = उभयपद। छा. = छान्दस अर्थात् वैदिक।

भ्वादिगण

१.	दृशिर् प्रेक्षणे ९८८	दृश्	प.
२.	ऋ गतिप्रापणयो: ९३६	ऋ	प.
३.	सृ गतौ ९३५	सृ	प.
४	शद्लृ शातने ८५५	शद्	आ.
५.	षद्लृ विशरण गत्यवसादनेषु ८५४	सद्	प.
६.	गुपू रक्षणे ३९५	गुप्	प.
७.	धूप सन्तापे ३९६	धूप	प.
८.	पण व्यवहारे स्तुतौ च ४३९	पण्	प.
९.	पन च ४४०	पन्	प.
१०.	टुभ्राशृ ८२४	भ्राश्	आ.
११.	टुभ्लाशृ दीप्तौ ८२५	भ्लाश्	आ.
१२.	भ्रमु चलने ८५०	भ्रम्	प.
१३.	क्रमु पादविक्षेपे ४७३	क्रम्	आ.
१४.	लष कान्तौ ८८८	लष्	उ.
१५.	यम उपरमे ९८४	यम्	प.
१६.	गम्लृ गतौ ९८२	गम्	प.
१७.	गुहू संवरणे ८९६	गुह्	उ.
१८.	गुप गोपने ९७०	गुप्	उ.
१९.	तिज निशाने ९७१	तिज्	उ.
२०.	कित निवासे ९९३	कित्	प.
२१.	मान पूजायाम् ९७२	मान:	उ.
२२.	बध बन्धने ९७३	बध्	उ.
२३.	दान खण्डने ९९४	दान्	उ.
२४.	शान तेजने	शान्	उ.
२५.	दंश दंशने ९८९	दंश्	प.
२६.	ष्वञ्ज परिष्वङ्गे ९७६	स्वञ्ज्	आ.
२७.	षञ्ज सङ्गे ९८७	सञ्ज्	प.
२८.	रञ्ज रागे ९९९	रञ्ज्	उ.
२९.	धिवि प्रीणने ५९३	धिन्व्	प.
३०.	कृवि हिंसाकरण योश्च ५९८	कृण्व्	प.
३१.	श्रु श्रवणे ९४२	श्रु	प.
३२.	अक्षू व्याप्तौ ६५४	अक्ष्	प.
३३.	तक्षू तनूकरणे ६५५	तक्ष्	प.
३४.	कृपू सामर्थ्ये ७६२	कल्प्	आ.
३५.	ष्ठिवु निरसने ५६०	ष्ठिव्	प.
३६.	आ + चमु अदने ४६९	आचम्	प.
३७.	षस्ज गतौ २०२	सज्ज्	प.
३८.	कमु कान्तौ ४४३	कम्	आ.
३९.	जभी गात्रविनामे ३८८	जभ्	आ.
४०.	लछ लक्षणे २०६	लच्छ्	प.
४१.	ह्रीछ लज्जायाम् २१०	ह्रीच्छ्	प.

भ्वादिगण के आकारान्त धातु

४२.	पा पाने ९२५	पा	प.

४३.	घ्रा गन्धोपादाने ९२६	घ्रा	प.
४४.	ध्मा शब्दाग्नि - संयोगयोः ९२७	ध्मा	प.
४५.	ष्ठा गतिनिवृतौ ९२८	स्था	प.
४६.	म्ना अभ्यासे ९२९	म्ना	प.
४७.	दाण् दाने ९३०	दा	प.
४८.	गाङ् गतौ ९५०	गा	आ.

भ्वादिगण के इकारान्त धातु

४९.	जि जये ५६१	जि	प.
५०.	टुओश्वि गति - वृद्धयोः १०१०	श्वि	प.
५१.	जि ९४६	जि	प.
५२.	ज्रि अभिभवे ९४७	ज्रि	प.
५३.	क्षि क्षये २३६	क्षि	प.
५४.	ष्मिङ् ईषद्हसने ९४८	स्मि	आ.
५५.	श्रिञ् सेवायाम् ८९७	श्रि	उ.

भ्वादिगण के ईकारान्त धातु

५६.	डीङ् विहायसा - गतौ ९६८	डी	आ.
५७.	णीञ् प्रापणे ९०१	नी	उ.

भ्वादिगण के उकारान्त धातु

५८.	ध्रु स्थैर्ये ९४३	ध्रु	प.
५९.	दु गतौ ९४४	दु	प.
६०.	द्रु गतौ ९४५	द्रु	प.
६१.	स्रु गतौ ९४०	स्रु	प.
६२.	षु प्रसवैश्वर्ययोः ९४१	सु	प.
६३.	गुङ् अव्यक्ते - शब्दे ९४९	गु	आ.
६४	कुङ् ९५१	कु	आ.
६५.	घुङ् ९५२	घु	आ.
६६.	उङ् ९५३	उ	आ.
६७.	ङुङ् शब्दे ९५४	ङु	आ.

(उङ्, कुङ्, खुङ्, घुङ्, गुङ्, ङुङ्, इत्यन्ये)

६८.	च्युङ् ९५५	च्यु	आ.
६९.	ज्युङ् ९५६	ज्यु	आ.
७०.	प्रुङ् ९५७	प्रु	आ.
७१.	प्लुङ् गतौ ९५८	प्लु	आ.
७२.	रुङ् गतिरेषणयोः ९५९	रु	आ.

भ्वादिगण के ऊकारान्त धातु

७३.	भू सत्तायाम् १	भू	प.
७४.	पूङ् पवने ९६६	पू	आ.
७५.	मूङ् बन्धने ९६७	मू	आ.

भ्वादिगण के ऋकारान्त धातु

७६.	ह्वृ कौटिल्ये ९३१	ह्वृ	प.
७७.	ह्वृ संवरणे ९३४	ह्वृ	प.
७८.	स्वृ शब्दोपतापयोः९३२	स्वृ	प.
७९.	स्मृ चिन्तायाम् ९३३	स्मृ	प.
	सृ गतौ ९३५	सृ	प.
८०.	गृ ९३७	गृ	प.
८१.	घृ सेचने ९३८	घृ	प.
८२.	ध्वृ हूर्च्छने ९३९	ध्वृ	प.
८३.	धृङ् अवध्वंसने ९६०	धृ	आ.
८४.	भृञ् भरणे ८९८	भृ	उ.
८५.	हृञ् हरणे ८९९	हृ	उ.
८६.	धृञ् धारणे ९००	धृ	उ.

भ्वादिगण के ॠकारान्त धातु

८७.	तॄ प्लवनतरणयोः९६९	तॄ	प.

भ्वादिगण के एजन्त (ए, ओ, ऐ, औ से अन्त होने वाले) धातु

८८.	धेट् पाने ९०२	धे	प.
८९.	ग्लै ९०३	ग्लै	प.
९०.	म्लै हर्षक्षये ९०४	म्लै	प.
९१.	द्यै न्यक्करणे ९०५	द्यै	प.
९२.	द्रै स्वप्ने ९०६	द्रै	प.
९३.	ध्रै तृप्तौ ९०७	ध्रै	प.
९४.	ध्यै चिन्तायाम् ९०८	ध्यै	प.

९५.	रै शब्दे ९०९	रै	प.
९६.	स्त्यै ९१०	स्त्यै	प.
९७.	ष्ट्यै शब्दसंघातयोः ९११	स्त्यै	प.
९८.	खै खदने ९१२	खै	प.
९९.	क्षै ९१३	क्षै	प.
१००.	जै ९१४	जै	प.
१०१.	षै क्षये ९१५	सै	प.
१०२.	कै ९१६	कै	प.
१०३.	गै शब्दे ९१७	गै	प.
१०४	शै ९१८	शै	प.
१०५	श्रै पाके ९१९ स्रै इति केषुचित्पाठः	श्रै	प.
१०६.	पै ९२०	पै	प.
१०७.	ओवै शोषणे ९२१	वै	प.
१०८.	ष्टै ९२२	स्तै	प.
१०९.	ष्णै वेष्टने ९२३ (शोभायां चेत्येके)	स्नै	प.
११०.	दैप् शोधने ९२४	दै	प.
१११.	ष्यैङ् वृद्धौ ९६४	स्यै	आ.
११२.	मेङ् प्रणिदाने ९६१	मे	आ.
११३.	देङ् रक्षणे ९६२	दे	आ.
११४.	त्रैङ् पालने ९६५	त्रै	आ.
११५	श्यैङ् गतौ ९६३	श्यै	आ.
११६.	वेञ् तन्तुसन्ताने १००६	वे	उ.
११७.	व्येञ् संवरणे १००७	व्ये	उ.
११८.	ह्वेञ् स्पर्धायां शब्दे च १००८	ह्वे	उ.

भ्वादिगण के अदुपध धातु

११९.	बद स्थैर्ये ५१	बद्	प.
१२०.	खद स्थैर्ये हिंसायां च५०	खद्	प.
१२१.	अत सातत्यगमने ३८	अत्	प.
१२२.	कख हसने १२०	कख्	प.
१२३.	गद व्यक्तायां वाचि५२	गद्	प.
१२४.	रद विलेखने ५३	रद्	प.
१२५.	णद अव्यक्ते शब्दे ५४	नद्	प.
१२६.	नद शब्दे ५६	नद्	प.
१२७.	तक हसने ११७	तक्	प.
१२८.	बख १३०	बख्	प.
१२९.	मख १३२	मख्	प.
१३०.	णख १३४	नख्	प.
१३१.	रख १३६	रख्	प.
१३२.	लख गत्यर्थाः १३८	लख्	प.
१३३.	घघ हसने १५९	घघ्	प.
१३४.	ध्रज गतौ २१७	ध्रज्	प.
१३५	ध्वज गतौ २२१	ध्वज्	प.
१३६.	अज गतिक्षेपणयोः २३०	अज्	प.
१३७.	खज मन्थे २३२	खज्	प.
१३८.	लज भर्जने २३८	लज्	प.
१३९.	जज युद्धे २४२	जज्	प.
१४०.	गज शब्दे २४६	गज्	प.
१४१.	वज गतौ २५२	वज्	प.
१४२.	व्रज गतौ २५३	व्रज्	प.
१४३	अट २९५	अट्	प.
१४४.	पट गतौ २९६	पट्	प.
१४५.	रट परिभाषणे २७९	रट्	प.
१४६.	लट बाल्ये २९८	लट्	प.
१४७.	शट रुजाविशरण - गत्यवसादनेषु २९९	शट्	प.
१४८.	वट वेष्टने ३००	वट्	प.
१४९.	जट ३०५	जट्	प.
१५०.	झट संघाते ३०६	झट्	प.
१५१.	भट भृतौ ३०७	भट्	प.
१५२.	तट उच्छ्राये ३०८	तट्	प.
१५३	खट काङ्क्षायाम् ३०९	खट्	प.
१५४.	नट नृतौ ३१०	नट्	प.
१५५	हट दीप्तौ ३१२	हट्	प.
१५६.	षट अवयवे ३१३	सट्	प.

१५७.	पठ व्यक्तायां वाचि ३३०	पठ्	प.
१५८.	वठ स्थौल्ये ३३१	वठ्	प.
१५९.	मठ मदनिवासयो: ३३२	मठ्	प.
१६०.	कठ कृच्छ्रजीवने ३३३	कठ्	प.
१६१.	रट परिभाषणे ३३४	रट्	प.
१६२.	हठ प्लुतिशठत्वयो: ३३५ बलात्कार इत्यन्ये	हठ्	प.
१६३.	शठ कैतवे च ३४०	शठ्	प.
१६४.	अड उद्यमे ३५८	अड्	प.
१६५	लड विलासे ३५९ लल इत्येके	लड्	प.
१६६	कड मदे ३६० कडि इत्येके	कड्	प.
१६७.	जप व्यक्तायां - वाचि ३९७	जप्	प.
१६८.	चप सान्त्वने ३९९	चप्	प.
१६९.	षप समवाये ४००	सप्	प.
१७०.	रप ४०१	रप्	प.
१७१.	लप व्यक्तायां - वाचि ३९७	लप्	प.
१७२.	रफ गतौ ४१३	रफ्	प.
१७३	अण ४४४	अण्	प.
१७४	रण ४४५	रण्	प.
१७५.	वण ४४६	वण्	प.
१७६.	भण ४४७	भण्	प.
१७७	मण ४४८	मण्	प.
१७८.	कण ४४९	कण्	प.
१७९.	क्वण ४५०	क्वण्	प.
१८०.	व्रण ४५१	व्रण्	प.
१८१.	भ्रण ४५२	भ्रण्	प.
१८२.	ध्वण शब्दार्था: ४५३ (धण इत्यादि केचित्)	ध्वण्	प.
१८३.	ध्रन शब्दे, वण इत्यपि केचित् ४५९	ध्रन्	प.
१८४.	ष्टन ४६१	स्तन्	प.
१८५	वन शब्दे ४६२	वन्	प.
१८६.	वन ४६३	वन्	प.
१८७.	षण सम्भक्तौ ४६४	सन्	प.
१८८.	अम गत्यादिषु ४६५	अम्	प.
१८९.	द्रम ४६६	द्रम्	प.
१९०.	हय गतौ ५१२	हय्	प.
१९१.	अल भूषणपर्याप्ति - वारणेषु ५१५	अल्	प.
१९२.	फल निष्पत्तौ ५३०	फल्	प.
१९३.	स्खल सञ्चलने ५४४	स्खल्	प.
१९४.	खल सञ्चये ५४५	खल्	प.
१९५	गल अदने ५४६	गल्	प.
१९६.	षल गतौ ५४७	सल्	प.
१९७.	दल विशरणे ५४८	दल्	प.
१९८.	श्वल आशुगमने ५४९	श्वल्	प.
१९९.	त्सर छद्मगतौ ५५४	त्सर्	प.
२००.	क्मर हूर्च्छने ५५५	क्मर्	प.
२०१.	चर गत्यर्थ: ५५९ चरतिर्भक्षणेऽपि	चर्	प.
२०२.	मव बन्धने ५९९	मव्	प.
२०३.	अव रक्षणगतिकान्ति - प्रीतितृप्त्यवगमप्रवेश - श्रवणस्वाम्यर्थदीप्त्य - वाप्त्यालिङ्गनहिंसा - दानभागयाचन - क्रियेच्छावृद्धिषु ६००	अव्	प.
२०४.	कष ६८५	कष्	प.
२०५.	खष ६८६	खष्	प.
२०६.	जष ६८८	जष्	प.
२०७.	झष ६८९	झष्	प.
२०८.	मष ६९२	मष्	प.
२०९.	शष ६९०	शष्	प.
२१०.	वष हिंसायाम् ६९१	वष्	प.

२११.	भष भर्त्सने ६९५	भष्	प.
२१२.	ह्लस ७१२	ह्लस्	प.
२१३.	रस शब्दे ७१३	रस्	प.
२१४	लस श्लेषण - क्रीडनयो: ७१४	लस्	प.
२१५.	रह त्यागे ७३१	रह्	प.
२१६.	मह पूजायाम् ७३०	मह्	प.
२१७.	चह परिकल्कने ७२९	चह्	प.
२१८.	मश शब्दे, रोष - कृते च ७२४	मश्	प.
२१९.	शव गतौ ७२५	शव्	प.
२२०.	शश प्लुतगतौ ७२६	शश्	प.
२२१.	षम ८२९	सम्	प.
२२२.	ष्टम अवैकल्ये ८३०	स्तम्	प.
२२३.	रभ राभस्ये ९७४	रभ्	आ.
२२४.	हद पुरीषोत्सर्गे ९७७	हद्	आ.
२२५.	डुलभष् प्राप्तौ ९७५	लभ्	आ.
२२६.	यभ मैथुने ९८०	यभ्	प.
२२७	णम प्रह्वत्वे शब्दे च ९८१	नेम्	प.
२२८.	दह भस्मीकरणे ९९१	दह्	प.
२२९.	तप सन्तापे ९८५	तप्	प.
२३०.	त्यज हानौ ९८६	त्यज्	प.
२३१.	कटी गतौ ३२०	कट्	प.
२३२.	कनी दीप्तिकान्ति - गतिषु ४६०	कन्	प.
२३३.	छमु ४७०	छम्	प.
२३४	जमु ४७१	जम्	प.
२३५.	झमु अदने ४७२ जिषु इति केचित्	झम्	प.
२३६.	शसु हिंसायाम् ७२७	शस्	प.
२३७.	ञिफला विशरणे ५१६	फल्	प.
२३८.	घस्लृ अदने ७१५	घस्	प.
	गम्लृ गतौ ९८२	गम्	प.

२३९.	दध धारणे ८	दध्	आ.
२४०.	दद दाने १७	दद्	आ.
२४१.	ष्वद आस्वादने १८	स्वद्	आ.
२४२.	कक लौल्ये ९०	कक्	आ.
२४३	चक तृप्तौ प्रतिघाते च ९३	चक्	आ.
२४४.	षच सेचने, सेवने च १६३	सच्	आ.
२४५	शच व्यक्तायां - वाचि १६५	शच्	आ.
२४६.	श्वच गतौ १६६	श्वच्	आ.
२४७.	कच बन्धने १६८	कच्	आ.
२४८	मच कल्कने १७१	मच्	आ.
२४९	अय ४७४	अय्	आ.
२५०.	वय ४७५	वय्	आ.
२५१.	पय ४७६	पय्	आ.
२५२	मय ४७७	मय्	आ.
२५३	चय ४७८	चय्	आ.
२५४.	तय ४७९	तय्	आ.
२५५	णय गतौ ४८०	नय्	आ.
२५६	दय दानगतिरक्षा - दानेषु ४८१	दय्	आ.
२५७	रय गतौ लय च ४८२	रय्	आ.
२५८	शल चलनसंव - रणयो: ४९०	शल्	आ.
२५९.	वल संवरणे - संचरणे च ४९१	वल्	आ.
२६०.	मल धारणे ४९३	मल्	आ.
२६१.	भल परिभाषण - हिंसादानेषु ४९५	भल्	आ.
२६२.	कल शब्दसंख्या - नयो: ४९७	कल्	आ.
२६३.	णस कौटिल्ये ६२७	नस्	आ.
२६४.	भ्यस भये ६२८	भ्यस्	आ.

२६५	ग्लह ग्रहणे ६५१	ग्लह्	आ.
२६६	यती प्रयत्ने ३०	यत्	आ.
२६७	ग्रसु ६३०	ग्रस्	आ.
२६८	ग्लसु अदने ६३१	ग्लस्	आ.
२६९	त्रपूष् लज्जायाम् ३७४	त्रप्	आ.
२७०	क्षमूष् सहने ४४२	क्षम्	आ.
२७१	कबृ वर्णे ३८०	कब्	आ.
२७२	व्यय गतौ ८८१	व्यय्	उ.
२७३.	अस गतिदीप्त्यादानेषु अष इत्येके ८८६	अस्	उ.
२७४	स्पश बाधन - स्पर्शनयोः ८८७	स्पश्	उ.
	लष कान्तौ ८८८	लष्	उ.
२७५	चष भक्षणे ८८९	चष्	उ.
२७६.	छष हिंसायाम् ८९०	छष्	उ.
२७७	झष आदान - संवरणयोः ८९१	झष्	उ.
२७८.	डुपचष् पाके ९९६	पच्	उ.
२७९.	षच समवाये ९९७	सच्	उ.
२८०.	भज सेवायाम् ९९८	भज्	उ.
२८१.	शप आक्रोशे	शप्	उ.
२८२	खनु अवदारणे ८७८	खन्	उ.
२८३	कटे वर्षावरणयोः २९४	कट्	प.
२८४	हसे हसने ७२१	हस्	प.
२८५	चते ८६५	चत्	उ.
२८६	चदे याचने ८६६	चद्	उ.

भ्वादिगण के इदुपध धातु

२८७.	चिती संज्ञाने ३९	चित्	प.
२८८	षिध गत्याम् ४७	सिध्	प.
२८९.	षिधू शास्त्रे माङ्गल्ये च ४८	सिध्	प.
२९०.	इख गतौ १४० रिख लिख इति केचित्	इख्	प.
२९१.	किट ३०१	किट्	प.
२९२	खिट त्रासे ३०२	खिट्	प.
२९३	शिट ३०३	शिट्	प.
२९४.	षिट अनादरे ३०४	सिट्	प.
२९५	चिट परप्रेष्ये ३१५	चिट्	प.
२९६.	विट आक्रोशे हिट इत्येके ३१७	विट्	प.
२९७.	विट शब्दे ३१६	विट्	प.
२९८.	पिट शब्दसंघातयोः ३११	पिट्	प.
२९९.	मिह सेचने ९९२	मिह्	प.
३००.	किट गतौ ३१९	किट्	प.
३०१.	तिल गतौ ५३४	तिल्	प.
३०२.	शिष हिंसायाम् ६८७	शिष्	प.
३०३	रिष हिंसायाम् ६९४	रिष्	प.
३०४.	जिषु ६९७	जिष्	प.
३०५	विषु ६९८	विष्	प.
३०६	मिषु सेचने ६९९	मिष्	प.
३०७	श्रिषु ७०१	श्रिष्	प.
३०८.	श्लिषु दाहे ७०२	श्लिष्	प.
३०९	क्षिबु निरसने ५६७	क्षिव्	प.
३१०.	पिसृ गतौ ७१९	पिस्	प.
३११.	णिश समाधौ ७२२	निश्	प.
३१२	मिश शब्दे ७२३	मिश्	प.
३१३	णिदृ कुत्सासन्नि - कर्षयोः ८७१	निद्	प.
३१४.	ञिष्विदा अव्यक्ते - शब्दे ९७८	स्विद्	प.
३१५.	पिठ हिंसासंक्लेश - नयोः ३३९	पिठ्	प.
३१६.	विथृ याचने ३३	विथ्	आ.
३१७	टिकृ १०३	टिक्	आ.
३१८.	तिकृ गतौ १०५	तिक्	आ.
३१९	प्लिह गतौ ६४२	प्लिह्	आ.

३२०.	तिपृ क्षरणे ३६२	तिप्	आ.
३२१	ष्टिप क्षरणे ३६४	स्तिप्	आ.
३२२	त्विष दीप्तौ १००१	त्विष्	उ.
३२३	मिदृ मेघाहिंसनयो: ८६८	मिद्	उ.

भ्वादिगण के उदुपध धातु

३२४.	च्युतिर् आसेचने ४०	च्युत्	प.
३२५.	श्चुतिर् क्षरणे ४१	श्चुत्	प.
	श्च्युतिर् इत्येके	श्च्युत्	प.
३२६	उख गतौ १२८	उख्	प.
३२७.	शुच शोके १८३	शुच्	प.
३२८..	कुच शब्दे तारे १८४	कुच्	प.
३२९	म्रुचु १९५	म्रुच्	प.
३३०.	म्लुचु गतौ १९६	म्लुच्	प.
३३१	ग्रुचु १९७	ग्रुच्	प.
३३२	ग्लुचु १९८	ग्लुच्	प.
३३३	कुजु १९९	कुज्	प.
३३४.	खुजु स्तेयकरणे २००	खुज्	प.
३३५	तुज हिंसायाम् २४४	तुज्	प.
३३६.	मुज शब्दे २५०	मुज्	प.
३३७	स्फुट विकसने २६०	स्फुट्	आ.
३३८.	लुट विलोडने ३१४	लुट्	प.
३३९.	मुड मर्दने ३२३	मुड्	प.
३४०.	प्रुड मर्दने ३२४	प्रुड्	प.
३४१	स्फुटिर् विशरणे ३२९	स्फुट्	प.
३४२.	रुठ ३३६	रुठ्	प.
३४३	लुठ उपघाते ३३७	लुठ्	प.
३४४	उठ च (ऊठ इत्येके)३३८	उठ्	प.
३४५.	शुठ गतिप्रतिघाते ३४१	शुठ्	प.
३४६.	चुप मन्दायां गतौ ४०३	चुप्	प.
३४७	हुडृ गतौ ३५२	हुड्	प.
३४८.	तुडृ तोडने ३५१	तुड्	प.
३४९	तुप ४०४	तुप्	प.
३५०.	त्रुप ४०६	त्रुप्	प.
३५१.	तुफ ४०८	तुफ्	प.
३५२	त्रुफ हिंसार्था: ४१०	त्रुफ्	प.
३५३	घुण भ्रमणे ४३७	घुण्	आ.
३५४.	घुषिर् अविशब्दने ६५३	घुष्	प.
३५५.	रुष हिंसायाम् ६९३	रुष्	प.
३५६	उष दाहे ६९६	उष्	प.
३५७	पुष पुष्टौ ७००	पुष्	प.
३५८.	प्रुष ७०३	प्रुष्	प.
३५९.	प्लुषु दाहे ७०४	प्लुष्	प.
३६०.	तुस शब्दे ७१०	तुस्	प.
३६१.	तुहिर् ७३७	तुह्	प.
३६२	दुहिर् अर्दने ७३८	दुह्	प.
३६३	बुधिर् बोधने ८७५	बुध्	उ.
३६४.	उहिर् अर्दने ७३९	उह्	प.
३६५.	मुद हर्षे १६	मुद्	आ.
३६६.	गुद क्रीडायाम् २४	गुद्	आ.
३६७.	युतृ ३१	युत्	आ.
३६८.	जुतृ भासने ३२	जुत्	आ.
३६९	कुक आदाने ९१	कुक्	आ.
३७०.	ष्टुच प्रसादे १७५	स्तुच्	आ.
३७१	ष्टुभु स्तम्भे ३९४	स्तुभ्	आ.
३७२	शुभ भाषणे भासने च ४३२	शुभ्	प.

भ्वादिगण के ऋदुपध धातु

३७३.	धृज गतौ २१९	धृज्	प.
३७४	गृज शब्दे २४८	गृज्	प.
३७५.	पृषु सेचने ७०५	पृष्	प.
३७६	वृषु सेचने हिंसा - संक्लेशनयोश्च ७०६	वृष्	प.
३७७.	मृषु सेचने, सहने च ७०७	मृष्	प.
३७८	घृषु संघर्षे ७०८	घृष्	प.

३७९	हृषु अलीके ७०९	हृष्	प.
३८०.	हस शब्दे ७११	हस्	प.
३८१	दृह वृद्धौ ७३३	दृह्	प.
३८२.	बृह वृद्धौ, ७३५ बृहिर् इत्येके	बृह्	प.
३८३.	कृष विलेखने ९९०	कृष्	प.
३८४.	सृभु हिंसायाम् ४३०	सृभ्	प.
३८५	सृप्लृ गतौ ९८३	सृप्	प.
३८६.	वृक आदाने ९२	वृक्	आ.
३८७.	ऋज गतिस्थाना - र्जनोपार्जनेषु १७६	ऋज्	आ.
३८८.	भृजी भर्जने १७८	भृज्	आ.
३८९.	वृतु वर्तने ७५८	वृत्	आ.
३९०	वृधु वृद्धौ ७५९	वृध्	आ.
३९१.	शृधु ८७३	शृध्	उ.
३९२	मृधु उन्दने ८७४	मृध्	उ.
३९३	गृहू गर्हणे ६५०	गृह	आ.

भ्वादिगण के शेष हलन्त धातु

३९४.	मुर्वी बन्धने ५७५	मुर्व्	प.
३९५.	उर्वी ५६९	उर्व	प.
३९६	तुर्वी ५७०	तुर्व्	प.
३९७.	थुर्वी ५७१	थुर्व्	प.
३९८	दुर्वी ५७२	दुर्व्	प.
३९९.	धुर्वी हिंसार्थाः ५७३	धुर्व्	प.
४००.	गुर्वी उद्यमने ५७४	गुर्व्	प.
४०१	हुर्छा कौटिल्ये २११	हुर्च्छ्	प.
४०२.	मुर्छा मोहसमुच्छ्रा - ययोः २१२	मुर्च्छ्	प.
४०३.	स्फुर्छा विस्तृतौ २१३	स्फुर्च्छ्	प.
४०४.	उर्द माने क्रीडायां च २०	उर्द्	आ.
४०५	कुर्द २१	कुर्द्	आ.
४०६	खुर्द २२	खुर्द्	आ.
४०७.	गुर्द क्रीडायाम् २३	गुर्द्	आ.

भ्वादिगण के इजादि गुरुमान् धातु

४०८.	ओखृ शोषणाल - मर्थयोः १२१	ओख्	प.
४०९.	एजृ कम्पने २३४	एज्	प.
४१०.	ईट गतौ ३१८	ईट्	प.
४११.	ओणृ अपनयने ४५४	ओण्	प.
४१२	ईर्क्ष्य ५१०	ईर्क्ष्य्	प.
४१३.	ईर्ष्य ईर्ष्यार्थौ ५११	ईर्ष्य्	प.
४१४.	उच्छी विवासे २१६	उच्छ्	प.
४१५	ईष उञ्छे ६८४	ईष्	प.
४१६.	उक्ष सेचने ६५७	उक्ष्	प.
४१७.	ऊष रुजायाम् ६८३	ऊष्	प.
४१८	एध वृद्धौ २	एध्	आ.
४१९.	एजृ दीप्तौ १७९	एज्	आ.
४२०.	ईज गतिकुत्सनयोः१८२	ईज्	आ.
४२१.	एठ विबाधायाम् २६७	एठ्	आ.
४२२	ईक्ष दर्शने ६१०	ईक्ष्	आ.
४२३.	ईष गतिहिंसादर्शनेषु ६११	ईष्	आ.
४२४.	ईह चेष्टायाम् ६३२	ईह्	आ.
४२५.	ऊह वितर्के ६४८	ऊह	आ.
४२६.	एषृ गतौ ६१८	एष्	आ.
४२७.	ऊयी तन्तुतन्ताने ४८३	ऊय्	आ.
	इवि व्याप्तौ ५८७	इन्व्	प.
	इदि परमैश्वर्ये ६३	इन्द्	प.
	उखि १२९	उन्ख्	प.
	इखि १४१	इन्ख्	प.
	ईखि १४२	ईन्ख्	प.
	इगि १५३	इन्ग्	प.
	उछि उञ्छे २१५	उन्छ्	प.
	ऋजि भर्जने १७७	ऋन्ज्	आ.

भ्वादिगण के इदित् धातु

४२८	इवि व्याप्तौ ५८७	इन्व्	प.

४२९.	कुथि ४३	कुन्थ्	प.
४३०.	पुथि ४४	पुन्थ्	प.
४३१	लुथि ४५	लुन्थ्	प.
४३२	मथि हिंसासंक्लेश - नयो:४६	मन्थ्	प.
४३३.	अति ६१	अन्त्	प.
४३४	अदि बन्धने ६२	अन्द्	प.
४३५	इदि परमैश्वर्ये ६३	इन्द्	प.
४३६.	बिदि अवयवे ६४	बिन्द्	प.
४३७	गडि वदनैकदेशे ६५	गन्ड्	प.
४३८.	णिदि कुत्सायाम् ६६	निन्द्	प.
४३९	टुनदि समृद्धौ ६७	नन्द्	प.
४४०	चदि आह्लादे - दीप्तौ च ६८	चन्द्	प.
४४१	त्रदि चेष्टायाम् ६९	त्रन्द्	प.
४४२.	कदि ७०	कन्द्	प.
४४३.	क्रदि ७१	क्रन्द्	प.
४४४.	क्लदि आह्वाने - रोदने च ७२	क्लन्द्	प.
४४५	क्लिदि परिदेवने ७३	क्लिन्द्	प.
४४६.	तकि कृच्छ्रजीवने (शुक गतौ) ११८	तन्क्	प.
४४७.	उखि १२९	उन्ख्	प.
४४८.	वखि १३१	वन्ख्	प.
४४९.	मखि १३३	मन्ख्	प.
४५०.	रखि १३७	रन्ख्	प.
४५१	णखि १३५	नन्ख्	प.
४५२	लखि १३९	लन्ख्	प.
४५३.	इखि १४१	इन्ख्	प.
४५४	ईखि १४२	ईन्ख्	प्र.
४५५	रगि १४४	रन्ग्	प.
४५६	लगि १४५	लन्ग्	प.
४५७.	अगि १४६	अन्ग्	प.
४५८.	वगि १४७	वन्ग्	प.
४५९	मगि १४८	मन्ग्	प.
४६०	तगि १४९	तन्ग्	प.
४६१	श्रगि १५१	श्रन्ग्	प.
४६२.	श्लगि १५२	श्लन्ग्	प.
४६३.	इगि १५३	इङ्ग्	प.
४६४	रिगि १५४	रन्ग्	प.
४६५	लिगि गत्यर्था: १५५	लिन्ग्	प.
४६६	त्वगि गतौ, कम्पने च १५०	त्वन्ग्	प.
४६७.	युगि १५६	युन्ग्	प.
४६८.	जुगि १५७	जुन्ग्	प.
४६९	बुगि वर्जने १५८	बुन्ग्	प.
	दघि पालने १५९	दन्घ्	प.
	लघि शोषणे, इति केचित्	लन्घ्	प.
४७०.	मघि मण्डने १६०	मन्घ्	प.
४७१	शिघि आघ्राणे १६१	शिन्घ्	प.
४७२	गुजि अव्यक्ते - शब्दे २०३	गुन्ज्	प.
४७३.	लाछि लक्षणे २०७	लान्छ्	प.
४७४.	वाछि इच्छायाम् २०८	वान्छ्	प.
४७५	आछि आयामे २०९	आन्छ्	प.
४७६.	उछि उञ्छे २१५	उन्छ्	प.
४७७.	ध्रजि गतौ २१८	ध्रन्ज्	प.
४७८	मडि भूषायाम् ३२१	मन्ड्	प.
४७९.	कुडि वैकल्ये ३२२	कुन्ड्	प.
४८०	चुडि अल्पीभावे ३२५	चुन्ड्	प.
४८१	रुटि ३२७	रुन्ट्	प.
४८२	लुटि स्तेये ३२८ रुठि, लुठि, रुडि, लुडि इत्येके	लुन्ट्	प.
४८३.	कुठि गतिप्रतिघाते ३४२	कुन्ठ्	प.
४८४	लुठि आलस्ये ३४३	लुन्ठ्	प.
४८५	शुठि शोषणे ३४४	शुन्ठ्	प.
४८६	रुठि ३४५	रुन्ठ्	प.

४८७	लुठि गतौ ३४६	लुन्ठ्	प.
४८८.	गडि वदनैकदेशे ३६१	गन्ड्	प.
४८९.	कुबि आच्छादने ४२६	कुन्ब्	प.
४९०	लुबि अर्दने ४२७	लुन्ब्	प.
४९१	तुबि अर्दने ४२८	तुन्ब्	प.
४९२.	चुबि वक्त्रसंयोगे ४२९	चुन्ब्	प.
४९३.	पिवि ५८८	पिन्व्	प.
४९४.	मिवि ५८९	मिन्व्	प.
४९५	णिवि सेचने ५९०	निन्व्	प.
४९६.	हिवि ५९१	हिन्व्	प.
४९७	दिवि ५९२	दिन्व्	प.
४९८	जिवि प्रीणनार्थाः ५९४	जिन्व्	प.
४९९.	रिवि ५९५	रिन्व्	प.
५००.	रवि ५९६	रन्व्	प.
५०१.	धवि गत्यर्थाः ५९७	धन्व्	प.
५०२	काक्षि ६६७	कान्क्ष्	प.
५०३.	वाक्षि ६६८	वान्क्ष्	प.
५०४	माक्षि काङ्क्षायाम् ६६९	मान्क्ष्	प.
५०५	द्राक्षि ६७०	द्रान्क्ष्	प.
५०६	धाक्षि ६७१	धान्क्ष्	प.
५०७.	ध्वाक्षि घोरवाशिते - च ६७२	ध्वान्क्ष्	प.
५०८.	रहि गतौ ७३२	रन्ह्	प.
५०९.	दृहि ७३४	दृन्ह्	प.
५१०.	बृहि वृद्धौ ७३६	बृन्ह्	प.
५११.	स्कुदि आप्रवणे ९	स्कुन्द्	आ.
५१२.	श्विदि श्वैत्ये १०	श्विन्द्	आ.
५१३.	वदि अभिवादन - स्तुत्योः ११	वन्द्	आ.
५१४.	भदि कल्याणे सुखे - च १२	भन्द्	आ.
५१५	मदि स्तुतिमोदमद - स्वप्नकान्तिगतिषु १३	मन्द्	आ.
५१६.	स्पदि किञ्चिच्चलने १४	स्पन्द्	आ.
५१७.	क्लिदि परिदेवने १५	क्लिन्द्	आ.
५१८.	श्रथि शैथिल्ये ३५	श्रन्थ्	आ.
५१९.	ग्रथि कौटिल्ये ३६	ग्रन्थ्	आ.
५२०.	स्रकि ८३	स्रन्क्	आ.
५२१.	श्रकि ८४	श्रन्क्	आ.
५२२	श्लकि गतौ ८५	श्लन्क्	आ.
५२३.	शकि शङ्कायाम् ८६	शन्क्	आ.
५२४.	अकि लक्षणे ८७	अन्क्	आ.
५२५	वकि कौटिल्ये ८८	वन्क्	आ.
५२६.	मकि मण्डने ८९	मन्क्	आ.
५२७	ककि ९४	कन्क्	आ.
५२८	वकि ९५	वन्क्	आ.
५२९	श्वकि ९६	श्वन्क्	आ.
५३०	त्रकि गत्यर्थाः ९७	त्रन्क्	आ.
५३१	रघि १०७	रन्घ्	आ.
५३२	लघि गत्यर्थौ १०८	लन्घ्	आ.
५३३.	अघि १०९	अन्घ्	आ.
५३४	वघि ११०	वन्घ्	आ.
५३५	मघि गत्याक्षेपे कैतवे च १११	मन्घ्	आ.
५३६.	श्वचि गतौ १६७	श्वन्च्	आ.
	शचि च	शन्च्	आ.
५३७.	कचि १६९	कन्च्	आ.
५३८	काचि दीप्तिबन्ध - नयोः १७०	कान्च्	आ.
५३९	मुचि कल्कने १७२	मुन्च्	आ.
५४०.	मचि धारणोच्छ्राय - पूजनेषु १७३	मन्च्	आ.
५४१	पचि व्यक्तीकरणे १७४	पन्च्	आ.
५४२	ऋजि भर्जने १७७	ऋन्ज्	आ.
५४३.	धृजि २२०	धृन्ज्	प.
५४४	ध्वजि गतौ ध्रिज च २२२	ध्वन्ज्	प.
५४५	खजि गतिवैकल्ये २३३	खन्ज्	प.

५४६.	लजि भर्जने २३९	लन्ज्	प.
५४७	लाजि भर्जने भर्त्सने च २४१	लान्ज्	प.
५४८	जजि युद्धे २४३	जन्ज्	प.
५४९	तुजि पालने २४५	तुन्ज्	प.
५५०.	गजि २४७	गन्ज्	प.
५५१.	गृजि २४९	गृन्ज्	प.
५५२	मुजि शब्दार्था: २५१	मुन्ज्	प.
५५३.	अठि गतौ २६१	अन्ठ्	आ.
५५४.	वठि एकचर्यायाम् २६२	वन्ठ्	आ.
५५५	मठि शोके २६३	मन्ठ्	आ.
५५६	कठि शोके २६४	कन्ठ्	आ.
५५७	मठि पालने २६५	मन्ठ्	आ.
५५८	हिडि गत्यना - दरयो: २६८	हिन्ड्	आ.
५५९.	हुडि सङ्घाते २६९	हुन्ड्	आ.
५६०.	कुडि दाहे २७०	कुन्ड्	आ.
५६१.	वडि विभाजने २७१	वन्ड्	आ.
५६२	मडि च २७२	मन्ड्	आ.
५६३.	भडि परिभाषणे २७३	भन्ड्	आ.
५६४.	पिडि सङ्घाते २७४	पिन्ड्	आ.
५६५	मुडि मार्जने २७५	मुन्ड्	आ.
५६६.	तुडि तोडने २७३	तुन्ड्	आ.
५६७	हुडि वरणे, २७७ (हरणे इत्येके)	हुन्ड्	आ.
५६८	मुडि खण्डने ३२६	मुन्ड्	प.
५६९	चडि कोपे २७८	चन्ड्	आ.
५७०	शडि रुजायां - सङ्घाते च २७९	शन्ड्	आ.
५७१	तडि ताडने २८०	तन्ड्	आ.
५७२	पडि गतौ २८१	पन्ड्	आ.
५७३.	कडि मदे २८२	कन्ड्	आ.
५७४.	खडि मन्थे २८३	खन्ड्	आ.
५७५	कपि चलने ३७५	कन्प्	आ.
५७६	रबि ३७६	रन्ब्	आ.
५७७.	लबि ३७७	लन्ब्	आ.
५७८.	अबि शब्दे ३७८	अन्ब्	आ.
५७९.	लबि अवस्रंसने च ३७९	लन्ब्	आ.
५८०.	ष्टभि ३८६	स्तन्भ्	आ.
५८१.	स्कभि प्रतिबन्धे ३८७	स्कन्भ्	आ.
५८२.	जृभि गात्रविनामे ३८९	जृन्भ्	आ.
५८३.	रफि गतौ ४१४	रन्फ्	प.
५८४.	घुषि कान्तिकरणे ६५२	घुन्ष्	आ.
५८५	घिणि ४३४	घिन्ण्	आ.
५८६.	घुणि ४३५	घुन्ण्	आ.
५८७	घृणि ग्रहणे ४३६	घृन्ण्	आ.
५८८.	वहि ६३३	वन्ह्	आ.
५८९.	महि वृद्धौ ६३४	मन्ह्	आ.
५९०.	अहि गतौ ६३५	अन्ह्	आ.
५९१	आङः शसि इच्छायाम् ६२९	आशन्स्	आ.

भ्वादिगण के अनिदित् धातु

५९२	मन्थ विलोडने ४२	मन्थ्	प.
५९३.	शुन्ध शुद्धौ ७४	शुन्ध्	प.
५९४	कुञ्च १८५	कुञ्च्	प.
५९५.	क्रुञ्च कौटिल्याल्पी - भावयो: १८६	क्रुञ्च्	प.
५९६.	लुञ्च अपनयने १८७	लुञ्च्	प.
५९७	अञ्चु गतिपूज - नयो: १८८	अञ्च्	प.
५९८.	वञ्चु १८९	वञ्च्	प.
५९९.	चञ्चु १९०	चञ्च्	प.
६००.	तञ्चु १९१	तञ्च्	प.
६०१.	त्वञ्चु १९२	त्वञ्च्	प.
६०२	म्रुञ्चु १९३	म्रुञ्च्	प.
६०३.	म्लुञ्चु गत्यर्था: १९४	म्लुञ्च्	प.
६०४	ग्लुञ्चु गतौ २०१	ग्लुञ्च्	प.

६०५.	तुम्प ४०५	तुम्प्	प.
६०६.	त्रुम्प ४०७	त्रुम्प्	प.
६०७	तुम्फ ४०९	तुम्फ्	प.
६०८.	त्रुम्फ हिंसार्था: ४११	त्रुम्फ्	प.
६०९.	षृम्भु हिंसार्थ: ४३१ (षिभु, षिम्भु इत्येके)	सृम्भ्	प.
६१०.	शुम्भ भाषणे ४३३	शुम्भ्	प.
६११	हम्म गतौ ४६७	हम्म्	प.
६१२	शंसु स्तुतौ ७२८	शंस्	प.
६१३.	अञ्चु गतौ ८६२	अञ्च्	प.
६१४	उबुन्दिर् निशामने ८७६	बुन्द्	उ.
६१५.	स्कन्दिर् गति - शोषणयो: ९७९	स्कन्द्	प.
६१६.	श्रम्भु प्रमादे ३९३	श्रम्भ्	आ.
६१७.	स्रंसु ७५४	स्रंस्	आ.
६१८.	ध्वंसु अवस्रंसने गतौ च ७५५	ध्वंस्	आ.
६१९.	भ्रंसु अवस्रंसने ७५६	भ्रंस्	आ.
६२०.	स्रंभु विश्वासे ७५७	स्रम्भ्	आ.
६२१	स्यन्दू प्रस्रवणे ७६१	स्यन्द्	आ.
	दंश दंशने ९८९	दंश्	प.
	ष्वञ्ज परिष्वङ्गे ९७६	स्वञ्ज्	प.
	षञ्ज सङ्गे ९८७	सञ्ज्	प.
	रञ्ज रागे ९९९	रञ्ज्	प.

भ्वादिगण के शेष हलन्त धातु

६२२.	टुओस्फूर्जा वज्र - निर्घोषे २३५	स्फूर्ज्	प.
६२३.	ह्लादी सुखे च २७	ह्लाद्	आ.
६२४	पूयी विशरणे दुर्गन्धे च ४८४	पूय्	आ.
६२५.	क्नूयी शब्दे उन्दे च ४८५	क्नूय्	आ.
६२६.	क्ष्मायी विधूनने ४८६	क्ष्माय्	आ.
६२७.	स्फायी ४८७	स्फाय्	आ.
६२८.	ओप्यायी वृद्धौ ४८८	प्याय्	आ.
६२९.	क्षेवु निरसने ५६८	क्षेव्	प.
६३०	त्वक्षू तनूकरणे ६५६	त्वक्ष्	प.
६३१.	गाहू विलोडने ६४९	गाह्	आ.
६३२	राखृ १२२	राख्	प.
६३३.	लाखृ १२३	लाख्	प.
६३४.	द्राखृ १२४	द्राख्	प.
६३५.	धाखृ शोषणाल - मर्थयो: १२५	धाख्	प.
६३६.	खादृ भक्षणे ४९	खाद्	प.
६३७.	शाखृ १२६	शाख्	प.
६३८.	श्लाखृ व्याप्तौ १२७	श्लाख्	प.
६३९.	शौटृ गर्वे २९०	शौट्	प.
६४०.	यौटृ बन्धे २९१	यौट्	प.
६४१.	म्लेटृ २९२	म्लेट्	प.
६४२.	म्रेडृ उन्मादे २९३	म्रेड्	प.
६४३.	क्रीडृ विहारे ३५०	क्रीड्	प.
६४४	हूडृ ३५३	हूड्	प.
६४५	होडृ गतौ ३५४	होड्	प.
६४६.	रौडृ अनादरे ३५५	रौड्	प.
६४७	रोडृ ३५६	रोड्	प.
६४८.	लोडृ उन्मादे ३५७	लोड्	प.
६४९.	शोणृ वर्णगत्यो: ४५५	शोण्	प.
६५०.	श्रोणृ संघाते ४५६	श्रोण्	प.
६५१.	श्लोणृ च ४५७	श्लोण्	प.
६५२.	पैणृ गतिप्रेरण - श्लेषणेषु ४५८	पैण्	प.
६५३.	मीमृ गतौ शब्दे च ४६८	मीम्	प.
६५४.	वेलृ ५३५	वेल्	प.
६५५.	चेलृ ५३६	चेल्	प.
६५६.	केलृ ५३७	केल्	प.
६५७.	खेलृ ५३८	खेल्	प.

६५८.	क्ष्वेलृ चलने ५३९	क्ष्वेल्	प.
६५९.	पेलृ ५४१	पेल्	प.
६६०.	फेलृ ५४२	फेल्	प.
६६१.	शेलृ गतौ ५४३ (षेलृ इत्येके)	शेल्	प.
६६२	खोलृ ५५१	खोल्	प.
६६३.	खोर्ऋ गतिप्रतिघाते ५५२	खोर्	प.
६६४.	धोर्ऋ गतिचातुर्ये ५५३	धोर्	प.
६६५.	पेसृ गतौ ७२०	पेस्	प.
६६६.	लाघृ ११३	लाघ्	आ.
६६७.	द्राघृ सामर्थ्ये ११४	द्राघ्	आ.
६६८.	श्लाघृ कत्थने ११५	श्लाघ्	आ.
६६९.	लोचृ दर्शने १६४	लोच्	आ.
६७०.	भ्रेजृ १८०	भ्रेज्	आ.
६७१.	भ्राजृ दीप्तौ १८१	भ्राज्	आ.
६७२	हेडृ अनादरे २८४	हेड्	आ.
६७३	होडृ अनादरे २८५	होड्	आ.
६७४.	बाडृ आप्लाव्ये २८६	बाड्	आ.
६७५.	द्राडृ २८७	द्राड्	आ.
६७६	धाडृ विशरणे २८८	धाड्	आ.
६७७.	शाडृ श्लाघायाम् २८९	शाड्	आ.
६७८.	तेपृ ३६३	तेप्	आ.
६७९.	ष्टेपृ क्षरणार्थाः ३६५	स्तेप्	आ.
६८०.	ग्लेपृ दैन्ये ३६६	ग्लेप्	आ.
६८१.	टुवेपृ कम्पने ३६७	वेप्	आ.
६८२	केपृ ३६८	केप्	आ.
६८३.	गेपृ ३६९	गेप्	आ.
६८४.	ग्लेपृ च ३७०	ग्लेप्	आ.
६८५	मेपृ ३७१	मेप्	आ.
६८६	रेपृ ३७२	रेप्	आ.
६८७.	लेपृ गतौ ३७३	लेप्	आ.
६८८.	क्लीबृ अधाष्ट्र्ये ३८१	क्लीब्	आ.
६८९.	क्षीबृ मदे ३८२	क्षीब्	आ.
६९०.	शीभृ कत्थने ३८३	शीभ्	आ.
६९१.	चीभृ च ३८४	चीभ्	आ.
६९२	रेभृ शब्दे ३८५	रेभ्	आ.
६९३.	तायृ संतान - पालनयो: ४८९	ताय्	आ.
६९४	तेवृ ४९९	तेव्	आ.
६९५.	देवृ देवने ५००	देव्	आ.
६९६.	षेवृ ५०१	सेव्	आ.
६९७	गेवृ ५०२	गेव्	आ.
६९८.	ग्लेवृ ५०३	ग्लेव्	आ.
६९९.	पेवृ ५०४	पेव्	आ.
७००.	मेवृ ५०५	मेव्	आ.
७०१.	म्लेवृ सेवने ५०६ शेवृ केवृ, क्लेवृ इत्येके	म्लेव्	आ.
७०२.	रेवृ प्लवगतौ ५०७	रेव्	आ.
७०३.	गेषृ अन्विच्छायाम्	गेष्	आ.
	ग्लेषृ इत्येके ६१४	ग्लेष्	आ.
७०४.	पेषृ प्रयत्ने ६१५ एषृ इत्यके, येषृ इत्यप्यन्ये	पेष्	आ.
७०५.	जेषृ ६१६	जेष्	आ.
७०६.	णेषृ ६१७	नेष्	आ.
७०७.	प्रेषृ गतौ ६१९	प्रेष्	आ.
७०८.	रेषृ ६२०	रेष्	आ.
७०९.	हेषृ ६२१	हेष्	आ.
७१०.	ह्रेषृ अव्यक्ते शब्दे ६२२	ह्रेष्	आ.
७११.	कासृ शब्द - कुत्सायाम् ६२३	कास्	आ.
७१२	भासृ दीप्तौ ६२४	भास्	आ.
७१३.	णासृ ६२५	नास्	आ.
७१४.	रासृ शब्दे ६२६	रास्	आ.
७१५.	वेहृ (बेहृ) ६४३	वेह	आ.

७१६.	जेहृ ६४४	जेह्	आ.
७१७.	वाहृ प्रयत्ने ६४५ (जेहृ गतावपि)	वाह्	आ.
७१८.	द्राहृ निद्राक्षये ६४६	द्राह्	आ.
७१९.	काशृ दीप्तौ ६४७	काश्	आ.
७२०.	गाधृ प्रतिष्ठालिप्स - योर्ग्रन्थे च ४	गाध्	आ.
७२१.	बाधृ लोडने ५	बाध्	आ.
७२२	नाथृ ६	नाथ्	आ.
७२३	नाधृ याच्ञोपता - पैश्वर्याशीःषु ७	नाध्	आ.
७२४.	वेथृ याचने ३४	वेथ्	आ.
७२५	शीकृ सेचने ७५	शीक्	आ.
७२६.	लोकृ दर्शने ७६	लोक्	आ.
७२७.	श्लोकृ संघाते ७७	श्लोक्	आ.
७२८.	द्रेकृ ७८	द्रेक्	आ.
७२९.	ध्रेकृ शब्दोत्साहयोः ७९	ध्रेक्	आ.
७३०.	रेकृ शङ्कायाम् ८०	रेक्	आ.
७३१.	सेकृ गतौ ८१	सेक्	आ.
७३२	स्रेकृ गतौ ८२	स्रेक्	आ.
७३३.	टीकृ १०४	टीक्	आ.
७३४.	तीकृ गत्यर्थाः १०६	तीक्	आ.
७३५.	राघृ सामर्थ्ये ११२	राघ्	आ.
७३६	ढौकृ गतौ ९८	ढौक्	आ.
७३७.	त्रौकृ गतौ ९९	त्रौक्	आ.
७३८.	टुयाचृ याच्ञायाम् ८६३	याच्	उ.
७३९.	प्रोथृ पर्याप्तौ ८६७	प्रोथ्	उ.
७४०.	मेदृ मेधाहिंसनयोः ८६९	मेद्	उ.
७४१	मेधृ सङ्गमे च ८७०	मेध्	उ.
७४२.	णेदृ कुत्सासन्नि - कर्षयोः ८७२	नेद्	उ.
७४३.	चीवृ आदान - संवरणयोः ८७९	चीव्	उ.

७४४.	चायृ पूजानि - शामनयोः ८८०	चाय्	उ.
७४५	दाशृ दाने ८८२	दाश्	उ.
७४६	भेषृ भये ८८३ गतावित्येके	भेष्	उ.
७४७.	भ्रेषृ ८८४	भ्रेष्	उ.
७४८	भ्लेषृ गतौ ८८५	भ्लेष्	उ.
७४९.	दासृ दाने ८९४	दास्	उ.
७५०	माहृ माने ८९५	माह्	उ.
७५१.	वेणृ गतिज्ञानचिन्ता - निशामनवादित्र - ग्रहणेषु ८७७	वेण्	उ.
७५२.	स्पर्ध सङ्घर्षे ३	स्पर्ध्	आ.
७५३.	ह्राद अव्यक्ते शब्दे २६	ह्राद्	आ.
७५४.	षूद क्षरणे २५	सूद्	आ.
७५५.	स्वाद आस्वादने २८	स्वाद्	आ.
७५६	पर्द कुत्सिते शब्दे २९	पर्द्	आ.
७५७.	कत्थ श्लाघायाम् ३७	कत्थ्	आ.
७५८.	स्वर्द आस्वादने १९	स्वर्द्	आ.
७५९.	अर्द गतौ याचने च ५५	अर्द्	प.
७६०	गर्द शब्दे ५७	गर्द्	प.
७६१	तर्द हिंसायाम् ५८	तर्द्	प.
७६२	कर्द कुत्सिते शब्दे ५९	कर्द्	प.
७६३.	खर्द दन्दशूके ६०	खर्द्	प.
७६४	ष्वष्क १००	ष्वष्क्	आ.
७६५.	वस्क १०१	वस्क्	आ.
७६६	मस्क गत्यर्थाः १०२	मस्क्	आ.
७६७	फक्क नीचैर्गतौ ११६	फक्क्	प.
७६८.	बुक्क भषणे ११९.	बुक्क्	प.
७६९.	वल्ग गत्यर्थः १४३	वल्ग्	प.
७७०.	वर्च दीप्तौ १६२	वर्च्	आ.
७७१	अर्च पूजायाम् २०४	अर्च्	प.
७७२	म्लेच्छ अव्यक्ते	म्लेच्छ्	प.

	शब्दे २०५		
७७३	युच्छ प्रमादे २१४	युच्छ्	प.
७७४	कूज अव्यक्ते शब्दे २२३	कूज्	प.
७७५	अर्ज २२४	अर्ज्	प.
७७६	सर्ज अर्जने २२५	सर्ज्	प.
७७७	गर्ज शब्दे २२६	गर्ज्	प.
७७८	तर्ज भर्त्सने २२७	तर्ज्	प.
७७९	कर्ज व्यथने २२८	कर्ज्	प.
७८०	खर्ज पूजने च २२९	खर्ज्	प.
७८१	तेज पालने २३०	तेज्	प.
७८२	क्षीज पालने २३७	क्षीज्	प.
७८३	लाज भर्जने २४०	लाज्	प.
७८४	अट्ट अतिक्रम - हिंसयोः २५४	अट्ट्	आ.
७८५.	वेष्ट वेष्टने २५५	वेष्ट्	आ.
७८६.	चेष्ट चेष्टायाम् २५६	चेष्ट्	आ.
७८७.	गोष्ट २५७	गोष्ट्	आ.
७८८.	लोष्ट सङ्घाते २५८	लोष्ट्	आ.
७८९.	घट्ट चलने २५९	घट्ट्	आ.
७९०.	हेठ विबाधायाम् २६६	हेठ्	आ.
७९१	चुड्ड भावकरणे ३४७	चुड्ड्	प.
७९२	अड्ड अभियोगे ३४८	अड्ड्	प.
७९३	कड्ड कार्कश्ये ३४९	कड्ड्	प.

चुड्डादयस्त्रयो दोपधाः (चुड्ड, अड्ड, कड्ड, ये तीन धातु दकारोपध हैं।)

७९४	हर्य गतिकान्त्योः ५१४	हर्य्	प.
७९५	शल्भ कत्थने ३९०	शल्भ्	आ.
७९६	वल्भ भोजने ३९१	वल्भ्	आ.
७९७	गल्भ धार्ष्ट्ये ३९२	गल्भ्	आ.
७९८	जल्प व्यक्तायां वाचि जपे मानसे च ३९८	जल्प्	प.
७९९.	पर्प ४१२	पर्प्	प.
८००.	अर्ब ४१५	अर्ब्	प.
८०१.	पर्ब ४१६	पर्ब्	प.
८०२.	लर्ब ४१७	लर्ब्	प.
८०३.	बर्ब ४१८	बर्ब्	प.
८०४	भर्ब ४१९	भर्ब्	प.
८०५	कर्ब ४२०	कर्ब्	प.
८०६.	खर्ब ४२१	खर्ब्	प.
८०७.	गर्ब ४२२	गर्ब्	प.
८०८.	शर्ब ४२३	शर्ब्	प.
८०९.	षर्ब ४२४	सर्ब्	प.
८१०.	चर्ब गतौ ४२५	चर्ब्	प.
८११.	घूर्ण भ्रमणे ४३८	घूर्ण्	आ.
८१२.	भाम क्रोधे ४४१	भाम्	आ.
८१३.	वल्ल संवरणे सञ्चरणे च ४९२	वल्ल्	आ.
८१४.	मल्ल धारणे ४९४	मल्ल्	आ.
८१५.	भल्ल परिभाषण - हिंसादानेषु ४९६	भल्ल्	आ.
८१६.	वल्ल अव्यक्ते शब्दे अशब्द इति स्वामी ४९८	वल्ल्	आ.
८१७.	मव्य बन्धने ५०८	मव्य्	प.
८१८.	सूर्क्ष्य ईर्ष्यार्थः ५०९	सूर्क्ष्य्	प.
८१९.	शुच्य अभिषवे ५१३ चुच्य इत्येके	शुच्य्	प.
८२०.	मील ५१७	मील्	प.
८२१.	श्मील ५१८	श्मील्	प.
८२२.	स्मील ५१९	स्मील्	प.
८२३.	क्ष्मील निमेषणे ५२०	क्ष्मील्	प.
८२४.	पील प्रतिष्टम्भे ५२१	पील्	प.
८२५.	नील वर्णे ५२२	नील्	प.
८२६.	शील समाधौ ५२३	शील्	प.
८२७.	कील बन्धने ५२४	कील्	प.
८२८.	कूल आवरणे ५२५	कूल्	प.
८२९.	शूल रुजायां - सङ्घोषे च ५२६	शूल्	प.

८३०.	तूल निष्कर्षे ५२७	तूल्	प.
८३१.	पूल संङ्घाते ५२८	पूल्	प.
८३२.	मूल प्रतिष्ठायाम् ५२९	मूल्	प.
८३३.	चुल्ल भावकरणे ५३१	चुल्ल्	प.
८३४	फुल्ल विकसने ५३२	फुल्ल्	प.
८३५	चिल्ल शैथिल्ये - भावकरणे च ५३३	चिल्ल्	प.
८३६.	वेल्ल चलने ५४०	वेल्ल्	प.
८३७.	खल्ल आशुगमने ५५०	खल्ल्	प.
८३८.	अभ्र ५५६	अभ्र्	प.
८३९.	वभ्र ५५७	वभ्र्	प.
८४०.	मभ्र गत्यर्था: ५५८	मभ्र्	प.
८४१.	जीव प्राणधारणे ५६२	जीव्	प.
८४२.	पीव ५६३	पीव्	प.
८४३.	मीव ५६४	मीव्	प.
८४४	तीव ५६५	तीव्	प.
८४५	णीव स्थौल्ये ५६६	नीव्	प.
८४६	पूर्व ५७६	पूर्व्	प.
८४७	पर्व ५७७	पर्व्	प.
८४८.	मर्व पूरणे ५७८	मर्व्	प.
८४९.	चर्व अदने ५७९.	चर्व्	प.
८५०	भर्व हिंसायाम् ५८०	भर्व्	प.
८५१.	कर्व ५८१	कर्व्	प.
८५२.	खर्व ५८२	खर्व्	प.
८५३	गर्व दर्पे ५८३	गर्व्	प.
८५४	अर्व ५८४	अर्व्	प.
८५५	शर्व ५८५	शर्व्	प.
८५६.	षर्व हिंसायाम् ५८६	सर्व्	प.
८५७.	धावु गतिशुद्ध्योः ६०१	धाव्	उ.
८५८.	धुक्ष ६०२	धुक्ष्	आ.
८५९	धिक्ष संदीपन - क्लेशनजीवनेषु ६०३	धिक्ष्	आ.
८६०.	वृक्ष वरणे ६०४	वृक्ष्	आ.
८६१.	शिक्ष विद्योपादाने ६०५	शिक्ष्	आ.

८६२.	भिक्ष भिक्षायामलाभे लाभे च ६०६	भिक्ष्	आ.
८६३.	क्लेश अव्यक्तायां वाचि बाधने इति दुर्ग: ६०७	क्लेश्	आ.
८६४.	दक्ष वृद्धौ शीघ्रार्थे च ६०८	दक्ष्	आ.
८६५.	दीक्ष मौण्ड्येज्योपन - यननियमव्रतादेशेषु ६०९	दीक्ष्	आ.
८६६.	भाष व्यक्तायां - वाचि ६१२	भाष्	आ.
८६७.	वर्ष स्नेहने ६१३	वर्ष्	आ.
८६८.	गर्ह ६३६	गर्ह्	आ.
८६९	गल्ह कुत्सायाम् ६३७	गल्ह्	आ.
८७०	बर्ह ६३८	बर्ह्	आ.
८७१.	बल्ह प्राधान्ये ६३९	बल्ह्	आ.
८७२.	वर्ह ६४०	वर्ह्	आ.
८७३	वल्ह परिभाषण - हिंसाच्छादनेषु ६४१	वल्ह्	आ.
८७४	रक्ष पालने ६५८	रक्ष्	प.
८७५	णिक्ष चुम्बने ६५९	निक्ष्	प.
८७६.	त्रक्ष गतौ ६६०	त्रक्ष्	प.
८७७.	ष्ट्रक्ष ६६१ (तृक्ष, ष्टृक्ष इत्येके)	स्त्रक्ष्	प.
८७८	णक्ष गतौ ६६२	नक्ष्	प.
८७९.	वक्ष रोषे ६६३ (संघात इत्येके)	वक्ष्	प.
८८०.	मृक्ष संघाते ६६४ (म्रक्ष इत्येके)	मृक्ष्	प.
८८१.	तक्ष त्वचने ६६५ (पक्ष परिग्रह इत्येके)	तक्ष्	प.
८८२.	सूर्क्ष आदरे ६६६ (षर्क्ष इति केचित्)	सूर्क्ष्	प.
८८३.	चूष पाने ६७३	चूष्	प.
८८४.	तूष तुष्टौ ६७४	तूष्	प.

८८५	पूष वृद्धौ ६७५	पूष्	प.
८८६.	मूष स्तेये ६७६	मूष्	प.
८८७.	लूष ६७७	लूष्	प.
८८८	रूष भूषायाम् ६७८	रूष्	प.
८८९	शूष प्रसवे ६७९	शूष्	प.
८९०	यूष हिंसायाम् ६८०	यूष्	प.
८९१	जूष च ६८१	जूष्	प.
८९२.	भूष अलंकारे ६८२	भूष्	प.
८९३.	जर्ज ७१६	जर्ज्	प.
८९४	चर्च ७१७	चर्च्	प.
८९५	झर्झ परिभाषणहिंसा - तर्जनेषु ७१८	झर्झ्	प.
८९६	अर्ह पूजायाम् ७४०	अर्ह्	प.
८९७.	हिक्क अव्यक्ते - शब्दे ८६१	हिक्क्	उ.
८९८	रेटृ परिभाषणे ८६४	रेट्	उ.
८९९.	भ्रक्ष ८९२	भ्रक्ष्	उ.
९००	भ्लक्ष अदने ८९३	भ्लक्ष्	उ.

भ्वादिगण का द्युतादि अन्तर्गण

९०१.	द्युत दीप्तौ ७४१	द्युत्	आ.
९०२.	रुच दीप्तावभिप्रीतौ - च ७४५	रुच्	आ.
९०३.	घुट परिवर्तने ७४६	घुट्	आ.
९०४	रुट ७४७	रुट्	आ.
९०५	लुट ७४८	लुट्	आ.
९०६.	लुठ प्रतिघाते ७४९	लुठ्	आ.
९०७	शुभ दीप्तौ ७५०	शुभ्	आ.
९०८.	क्षुभ सञ्चलने ७५१	क्षुभ्	आ.
९०९.	तुभ हिंसायाम् ७५३	तुभ्	आ.
९१०	णभ हिंसायाम् अभावे- च ७५२	नभ्	आ.
	स्रंसु ७५४	स्रंस्	आ.
	ध्वंसु ७५५	ध्वंस्	आ.
	भ्रंसु अवस्रंसने ७५६	भ्रंस्	आ.
	ध्वंसु गतौ च ७५७	ध्वंस्	आ.
	भ्रुशु इत्यपि केचित्		
	स्रंभु विश्वासे ७५७	स्रंभ्	आ.
	वृतु वर्तने ७५८	वृत्	आ.
	वृधु वृद्धौ ७५९	वृध्	आ.
९११.	शृधु शब्द - कुत्सायाम् ७६०	शृध्	आ.
	स्यन्दू प्रस्रवणे ७६१	स्यन्द्	आ.
	कृपू सामर्थ्ये ७६२	कल्प्	आ.
९१२.	श्विता वर्णे ७४२	श्वित्	आ.
९१३.	ञिमिदा स्नेहने ७४३	मिद्	आ.
९१४.	ञिष्विदा स्नेहन - मोचनयो: ७४४	स्विद्	आ.

भ्वादिगण का घटादि अन्तर्गण

घटादि अन्तर्गण के अदुपध धातु

९१५.	कखे हसने ७८४	कख्	प.
९१६.	रगे शङ्कायाम् ७८५	रग्	प.
९१७.	लगे सङ्गे ७८६	लग्	प.
९१८.	ह्रगे ७८७	ह्रग्	प.
९१९.	ह्लगे ७८८	ह्लग्	प.
९२०.	षगे ७८९	सग्	प.
९२१.	ष्टगे संवरणे ७९०	स्तग्	प.
९२२.	कगे नोच्यते ७९१	कग्	प.
९२३.	घट चेष्टायाम् ७६३	घट्	आ.
९२४.	व्यथ भयसञ्च - लनयो: ७६४	व्यथ्	आ.
९२५.	प्रथ प्रख्याने ७६५	प्रथ्	आ.
९२६.	प्रस विस्तारे ७६६	प्रस्	आ.
९२७	म्रद मर्दने ७६७	म्रद्	आ.
९२८.	स्खद स्खदने ७६८	स्खद्	आ.
९२९.	दक्ष गतिहिंस - नयो: ७७०	दक्ष्	आ.

९३०. हेड वेष्टने ७७८ हेड् प.
९३१. क्रप कृपायां - गतौ च ७७१ क्रप् आ.
९३२. ञित्वरा सम्भ्रमे ७७५ त्वर् आ.
९३३. ज्वर रोगे ७७६ ज्वर् प.
९३४. गड सेचने ७७७ गड् प.
९३५ नट ७७९. नट् प.
९३६. भट परिभाषणे ७८० भट् प.
९३७. णट नृतौ, गतौ ७८१ नट् प.
९३८. चक तृप्तौ ७८३ चक् प.
९३९ अक ७९२ अक् प.
९४०. अग कुटिलायां - गतौ ७९३ अग् प.
९४१. कण ७९४ कण् प.
९४२. रण गतौ ७९५ रण् प.
९४३ चण ७९६ चण् प.
९४४ शण ७९७ शण् प.
९४५ श्रण दाने च शण गतावित्यन्ये ७९८ श्रण् प.
९४६. श्रथ ७९९ श्रथ् प.
९४७. श्लथ ८०० श्लथ् प.
९४८. क्रथ ८०१ क्रथ् प.
९४९ क्लथ हिंसार्था: ८०२ क्लथ् प.
९५०. वन च ८०३ वन् प.
९५१. ज्वल दीप्तौ ८०४ ज्वल् प.
९५२. ह्वल ८०५ ह्वल् प.
९५३. ह्मल चलने ८०६ ह्मल् प.

घटादि अन्तर्गण के ऋदुपध धातु

९५४. षृक प्रतिघाते ७८२ सृक् प.

घटादि अन्तर्गण के शेष धातु

९५५ क्षजि गतिदानयो: ७६९ क्षन्ज् आ.
९५६. कदि ७७२ कन्द् आ.
९५७. क्रदि ७७३ क्रन्द् आ.
९५८. क्लदि वैकल्ये इत्येके ७७४ क्लन्द् आ.
९५९. स्मृ आध्याने ८०७ स्मृ प.
९६०. ध्वन शब्दे ८१६ ध्वन् प.
९६१. स्वन अवतंसने ८१७ स्वन् प.
९६२. चलि कम्पने ८१२ चल् प.
९६३ लडि जिह्वोन्म - थने ८१४ लड् प.
९६४. यमोऽपरिवेषणे ८१९ यम् प.
९६५. मदी हर्षग्लेप - नयो: ८१५ मद् प.
९६६. शमो दर्शने ८१८ शम् प.
९६७. स्खदिर् अवपरिभ्यां च ८२० स्खद् प.
९६८. नॄ नये ८०९ नॄ प.
९६९. दॄ भये ८०८ दॄ प.
९७०. श्रा पाके ८१० श्रा प.
९७१. ज्ञा मारणतोषण - निशामनेषु ८११ ज्ञा प.
९७२. छदिर् ऊर्जने ८१३ छद् प.

भ्वादिगण का फणादि अन्तर्गण

९७३. फण गतौ ८२१ फण् प.
९७४. स्यमु ८२६ स्यम् प.
९७५ स्वन ८२७ स्वन् प.
९७६ ध्वन शब्दे ८२८ ध्वन् प.
९७७ राजृ दीप्तौ ८२२ राज् उ.
९७८ टुभ्राजृ ८२३ भ्राज् आ.
टुभ्राशृ ८२४ भ्राश् आ.
टुभ्लाशृ दीप्तौ ८२५ भ्लाश् आ.

भ्वादिगण का ज्वलादि अन्तर्गण

अदुपध ज्वलादि धातु

९७९ ज्वल दीप्तौ ८३१ ज्वल् प.
९८०. चल कम्पने ८३२ चल् प.
९८१. जल घातने ८३३ जल् प.

९८२.	टल ८३४	टल्	प.
९८३.	ट्वल् वैक्लव्ये ८३५	ट्वल	प.
९८४.	ष्ठल् स्थाने ८३६	स्थल्	प.
९८५	हल विलेखने ८३७	हल्	प.
९८६.	णल गन्धे ८३८ (बन्धन इत्येके)	नल्	प.
९८७.	पल गतौ ८३९	पल्	प.
९८८	बल प्राणने, धान्यावरोधने च ८४०	बल्	प.
९८९.	शल गतौ ८४३	शल्	प.
९९०.	क्षर सञ्चलने ८५१	क्षर्	प.
९९१.	षह मर्षणे ८५२	सह्	आ.
९९२.	कस गतौ ८६०	कस्	प.
९९३.	टुवम् उद्गिरणे ८४९	वम्	प.
	भ्रमु चलने ८५०	भ्रम्	प.
	षद्लृ विशरण - गत्यवसादनेषु ८५४	सद्	प.
	शदलृ शातने ८५५	शद्	आ.
९९४.	रमु क्रीडायाम् ८५३	रम्	आ.
९९५.	पत्लृ गतौ ८४५	पत्	प.
९९६.	क्वथे निष्पाके ८४६	क्वथ्	प.
९९७.	पथे गतौ ८४७	पथ्	प.
९९८.	मथे विलोडने ८४८	मथ्	प.

उदुपध ज्वलादि धातु

९९९.	पुल महत्वे ८४१	पुल्	प.
१०००.	कुल संस्त्याने बन्धुषु च ८४२	कुल	प.
१००१.	हुल गतौ ८४४	हुल्	प.
१००२.	क्रुश आह्वाने रोदने च ८५६	क्रुश्	प.
१००३.	कुच सम्पर्चन - कौटिल्यप्रतिष्टम्भ - विलेखनेषु ८५७	कुच्	प.
१००४.	बुध अवगमने ८५८	बुध्	प.
१००५.	रुह बीजजन्मनि - प्रादुर्भावे च ८५९	रुह्	प.

भ्वादिगण का यजादि अन्तर्गण

१००६.	यज देवपूजासङ्गति - करणदानेषु १००२	यज्	उ.
१००७.	डुवप् बीजसन्ताने १००३	वप्	उ.
१००८.	वह प्रापणे १००४	वह्	उ.
१००९.	वस निवासे १००५	वस्	प.
१०१०.	वद व्यक्तायां ० १००५	वद्	प.
	वेञ् तन्तुसन्ताने १००६	वे	उ.
	व्येञ् संवरणे १००७	व्ये	उ.
	ह्वेञ् स्पर्धायाम् - शब्दे च १००८	ह्वे	उ.
	टुओश्वि गति ० १०१०	श्वि	प.

अदादिगण

अदादिगण के आकारान्त धातु

१०११.	या प्रापणे १०४९	या	प.
१०१२.	वा गतिगन्धनयोः १०५०	वा	प.
१०१३.	भा दीप्तौ १०५१	भा	प.
१०१४.	ष्णा शौचे १०५२	स्ना	प.
१०१५.	श्रा पाके १०५३	श्रा	प.
१०१६.	द्रा कुत्सायाम् गतौ १०५४	द्रा	प.
१०१७.	प्सा भक्षणे १०५५	प्सा	प.
१०१८.	पा रक्षणे १०५६	पा	प.
१०१९.	रा दाने १०५७	रा	प.
१०२०.	ला आदाने १०५८	ला	प.
१०२१.	दाप् लवने १०५९	दा	प.
१०२२.	ख्या १०६०	ख्या	प.
१०२३.	प्रा पूरणे १०६१	प्रा	प.
१०२४.	मा माने १०६२	मा	प.

अदादिगण के इकारान्त धातु

१०२५. इण् गतौ १०४५ इ प.
१०२६. इङ् अध्ययने १०४६ इ आ.
१०२७. इक् स्मरणे १०४७ इ प.

अदादिगण के ईकारान्त धातु

१०२८. वी गतिव्याप्तिप्रजन - कान्त्यसनखदनेषु १०४८ वी प.
१०२९. शीङ् स्वप्ने १०३२ शी आ.

अदादिगण के उकारान्त धातु

१०३०. यु मिश्रणेऽमिश्रणे च १०३३ यु प.
१०३१. णु स्तुतौ १०३५ नु प.
१०३२. टुक्षु शब्दे १०३६ क्षु प.
१०३३. क्ष्णु तेजने १०३७ क्ष्णु प.
१०३४. ष्णु प्रस्रवणे १०३८ स्नु प.
१०३५. द्यु अभिगमने १०४० द्यु प.
१०३६. षु प्रसवैश्वर्ययोः १०४१ सु प.
१०३७. कु शब्दे १०४२ कु प.
१०३८. ऊर्णुञ् आच्छादने १०३९ ऊर्णु उ.
१०३९. रु शब्दे १०३४ रु प.
१०४०. ष्टुञ् स्तुतौ १०४३ स्तु प.
१०४१. ह्नुङ् अपनयने १०८२ ह्नु आ.

अदादिगण के ऊकारान्त धातु

१०४२. ब्रूञ् व्यक्तायां - वाचि १०४४ ब्रू उ.
१०४३. षूङ् प्राणिगर्भ - विमोचने १०३१ सू आ.

अदादिगण के चकारान्त धातु

१०४४. वच परिभाषणे १०६३ वच् प.
१०४५. पृची सम्पर्चने १०३० पृच् आ.

अदादिगण के जकारान्त धातु

१०४६ णिजि शुद्धौ १०२६ निंज् आ.
१०४७. वृजी वर्जने १०२९ वृज् आ.
१०४८. शिजि अव्यक्ते - शब्दे १०२७ शिंज् आ.
१०४९. पिजि वर्णे १०२८ पिंज् आ.
१०५०. मृजू शुद्धौ १०६६ मृज् प.

अदादिगण के डकारान्त धातु

१०५१. ईड स्तुतौ १०१९ ईड् आ.

अदादिगण के तकारान्त धातु

१०५२. षस्ति स्वप्ने १०७९ संस्त् प. छा.

अदादिगण के दकारान्त धातु

१०५३ अद भक्षणे १०११ अद् प.
१०५४. विद ज्ञाने १०६४ विद् प.

अदादिगण के नकारान्त धातु

१०५५. हन हिंसागत्योः १०१२ हन् प.

अदादिगण के रेफान्त धातु

१०५६. ईर गतौ कम्पने च १०१८ ईर् आ.

अदादिगण के शकारान्त धातु

१०५७. वश कान्तौ १०८० वश् प. छा.
१०५८. ईश ऐश्वर्ये १०२० ईश् आ.

अदादिगण के षकारान्त धातु

१०५९. द्विष अप्रीतौ १०१३ द्विष् उ.
१०६०. चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि १०१७ चक्ष् आ.

अदादिगण के सकारान्त धातु

१०६१. वस आच्छादने १०२३ वस् आ.
१०६२. आस उपवेशने १०२१ आस् आ.
१०६३. आङः शासु - इच्छायाम् १०२२ आशास् आ.
१०६४. कसि गतिशास - नयोः १०२४ कंस् आ.
१०६५. णिसि चुम्बने १०२४ निंस् आ.
१०६६. षस स्वप्ने १०७८ सस् प. छा.
१०६७. अस भुवि १०६५ अस् प.

अदादिगण के हकारान्त धातु

१०६८. दुह प्रपूरणे १०१४ दुह् उ.
१०६९. दिह उपचये १०१५ दिह् उ.
१०७०. लिह आस्वादने १०१६ लिह् प.

अदादिगण का अन्तर्गण - रुदादिगण

१०७१. रुदिर् अश्रु - विमोचने १०६७ रुद् प.
१०७२. ञिष्वप् शये १०६८ स्वप् प.
१०७३. श्वस प्राणने १०६९ श्वस् प.
१०७४. अन च १०७० अन् प.
१०७५ जक्ष भक्षहसनयोः १०७१ जक्ष् प.

अदादिगण का अन्तर्गण जक्षादिगण

जक्ष भक्षहसनयोः १०७१ जक्ष् प.
१०७६. दरिद्रा दुर्गतौ १०७३ दरिद्रा प.
१०७७. दीधीङ् दीप्ति - देवनयोः १०७६ (छा.) दीधी आ.
१०७८. वेवीङ् वेतिना - तुल्ये १०७७ (छा.) वेवी आ.
१०७९ जागृ निद्राक्षये १०७२ जागृ प.
१०८०. चकासृ दीप्तौ १०७४ चकास् प.
१०८१. शासु अनुशिष्टौ १०७४ शास् प.
१०८२. चर्करीतं च (गणसूत्र)
यह यङ्लुक् की संज्ञा है।

जुहोत्यादिगण

जुहोत्यादिगण के आकारान्त धातु

१०८३. माङ् माने १०८८ मा आ.
१०८४. ओहाङ् गतौ १०८९ हा आ.
१०८५. ओहाक् त्यागे १०९० हा प.
१०८६. डुदाञ् दाने १०९१ दा उ.
१०८७. डुधाञ् धारण - पोषणयोः १०९२ धा उ.
१०८८. गा स्तुतौ ११०६ (छा.) गा प.

जुहोत्यादिगण के इकारान्त धातु

१०८९. कि ज्ञाने ११०१ कि प.

जुहोत्यादिगण के ईकारान्त धातु

१०९०. ञिभी भये १०८४ भी प.
१०९१. ह्री लज्जायाम् १०८५ ह्री प.

जुहोत्यादिगण के उकारान्त धातु

१०९२. हु दानादानयोः १०८३ हु प.

जुहोत्यादिगण के ऋकारान्त धातु

१०९३ डुभृञ् धारण - पोषणयोः १०८७ भृ उ.
१०९४. सृ गतौ १०९९ सृ प. छा.
१०९५. घृ क्षरणदीप्त्योः १०९६ घृ प. छा.
१०९६. हृ प्रसह्यकरणे १०९७ हृ प. छा.
१०९७. ऋ गतौ १०९८ ऋ प. छा.

जुहोत्यादिगण के ॠकारान्त धातु

१०९८. पॄ पालनपूरणयोः १०८६ पॄ प.

जुहोत्यादिगण के अदुपध धातु

१०९९. भस भर्त्सनदीप्त्योः ११०० भस् प. छा.
११००. धन धान्ये ११०४ धन् प. छा.
११०१. जन जनने ११०५ जन् प. छा.

जुहोत्यादिगण के इदुपध धातु

११०२. धिष शब्दे ११०३ धिष् प. छा.
११०३. णिजिर् शौच - पोषणयोः १०९३ निज् उ.
११०४. विजिर् पृथग्भावे १०९४ विज् उ.
११०५. विष्लृ व्याप्तौ १०९५ विष् उ.

जुहोत्यादिगण के उदुपध धातु

११०६. तुर त्वरणे ११०२ तुर् प. छा.

दिवादिगण

दिवादिगण का अन्तर्गण पुषादिगण

पुषादिगण के अदुपध धातु

११०७. शक विभाषितो - शक् उ.

	मर्षणे ११८७		
११०८.	असु क्षेपणे १२०९	अस्	प.
११०९.	जसु मोक्षणे १२११	जस्	प.
१११०.	तसु उपक्षये १२१२	तस्	प.
११११.	दसु उपक्षये १२१३	दस्	प.
१११२	वसु स्तम्भे १२१४	वस्	प.
	भसु इत्यपि केचित्		
१११३.	मसी परिणामे १२२१	मस्	प.
१११४.	णभ १२४०	नभ्	प.

पुषादिगण के इदुपध धातु

१११५.	शिलष आलिङ्गने ११८६	शिलष्	प.
१११६.	ष्विदा गात्र - प्रक्षरणे ११८८ ञिष्विदा इत्येके	स्विद्	प.
१११७.	षिधु संसिद्धौ ११९२	सिध्	प.
१११८.	बिस प्रेरणे १२१७	बिस्	प.
१११९.	रिष हिंसायाम् १२३१	रिष्	प.
११२०.	डिप क्षेपे १२३२	डिप्	प.
११२१.	क्लिदू आर्द्री - भावे १२४२	क्लिद्	प.
११२२.	ञिमिदा स्नेहने १२४३	मिद्	प.
११२३.	ञिक्ष्विदा स्नेहन - मोचनयोः १२४४	क्ष्विद्	प.

पुषादिगण के उदुपध धातु

११२४.	पुष पुष्टौ ११८२	पुष्	प.
११२५.	शुष शोषणे ११८३	शुष्	प.
११२६.	तुष प्रीतौ ११८४	तुष्	प.
११२७.	दुष वैकृत्ये ११८५	दुष्	प.
११२८.	क्रुध क्रोधे ११८९	क्रुध्	प.
११२९.	क्षुध बुभुक्षायाम् ११९०	क्षुध्	प.
११३०.	शुध शौचे ११९१	शुध्	प.
११३१.	व्युष विभागे १२१५ (व्युस इत्यन्ये)	व्युष्	प.
११३२.	प्लुष दाहे १२१६	प्लुष्	प.
११३३.	बुस उत्सर्गे १२१९	बुस्	प.
११३४.	मुस खण्डने १२२०	मुस्	प.
११३५.	लुट विलोडने १२२२	लुट्	प.
११३६.	उच समवाये १२२३	उच्	प.
११३७.	रुष हिंसायाम् १२३०	रुष्	प.
११३८.	कुप क्रोधे १२३३	कुप्	प.
११३९.	गुप व्याकुलत्वे १२३४	गुप्	प.
११४०.	युप १२३५	युप्	प.
११४१.	रुप १२३६	रुप्	प.
११४२	लुप विमोहने १२३७ (ष्टुप समुच्छ्राये)	लुप्	प.
११४३.	लुभ गार्ध्ये १२३८	लुभ्	प.
११४४.	क्षुभ सञ्चलने १२३९	क्षुभ्	प.
११४५.	तुभ हिंसायाम् १२४१	तुभ्	प.

पुषादिगण के ऋदुपध धातु

११४६.	भृशु अधःपतने १२२४	भृश्	प.
११४७.	वृश वरणे १२२६	वृश्	प.
११४८.	कृश तनूकरणे १२२७	कृश्	प.
११४९.	ञितृषा पिपासा - याम् १२२८	तृष्	प.
११५०.	हृष तुष्टौ १२२९	हृष्	प.
११५१.	ऋधु वृद्धौ १२४५	ऋध्	प.
११५२.	गृधु अभिकाङ्क्षा - याम् १२४६	गृध्	प.

पुषादिगण के अनिदित् धातु

	कुंस संश्लेषणे १२१८	कुंस्	प.
	भ्रंशु अधःपतने १२२५	भ्रंश्	प.

पुषादि अन्तर्गण का शमादि अन्तर्गण

११५३.	शमु उपशमे १२०१	शम्	प.
११५४.	तमु काङ्क्षायाम् १२०२	तम्	प.
११५५.	दमु उपशमे १२०३	दम्	प.
११५६.	श्रमु तपसिखेदे च १२०४	श्रम्	प.
११५७.	भ्रमु अनवस्थाने १२०५	भ्रम्	प.

११५८.	क्षमू सहने १२०६	क्षम्	प.
११५९.	क्लमु ग्लानौ १२०७	क्लम्	प.
११६०.	मदी हर्षे १२०८	मद्	प.

पुषादि अन्तर्गण का 'रधादि' अन्तर्गण

११६१.	रध हिंसासंरा - द्ध्योः ११९३	रध्	प.
११६२.	णश अदर्शने ११९४	नश्	प.
११६३.	तृप् प्रीणने ११९५	तृप्	प.
११६४.	दृप हर्षमोहनयोः ११९६	दृप्	प.
११६५.	द्रुह जिघांसायाम् ११९७	द्रुह्	प.
११६६.	मुह वैचित्ये ११९८	मुह्	प.
११६७.	ष्णुह उद्गिरणे गरणे ११९९	स्नुह्	प.
११६८.	ष्णिह प्रीतौ गरणे १२००	स्निह्	प.

दिवादिगण के सम्प्रसारणी धातु

११६९.	व्यध ताडने ११८१	व्यध्	प.

दिवादिगण के जन्, यस् धातु

११७०.	जनी प्रादुर्भावे ११४९	जन्	आ.
११७१.	यसु प्रयत्ने १२१०	यस्	प.

दिवादिगण के ओदित् धातु

११७२.	षूङ् प्राणिप्रसवे ११३२	सू	आ.
११७३.	दूङ् परितापे ११३३	दू	आ.
११७४.	दीङ् क्षये ११३४	दी	आ.
११७५.	डीङ् विहायसा गतौ ११३५	डी	आ.
११७६.	धीङ् आधारे ११३६	धी	आ.
११७७.	मीङ् हिंसायाम् ११३७	मी	आ.
११७८.	रीङ् स्रवणे ११३८	री	आ.
११७९.	लीङ् श्लेषणे ११३९	ली	आ.
११८०.	व्रीङ् वृणोत्यर्थे ११४०	व्री	आ.

दिवादिगण के वकारान्त इगुपध धातु

११८१.	दिवु क्रीडाविजिगीषा - व्यवहारद्युतिस्तुतिमोद - मदस्वप्नकान्ति - गतिषु ११०७	दिव्	प.
११८२.	षिवु तन्तुसन्ताने ११०८	सिव्	प.
११८३.	स्रिवु गति - शोषणयोः ११०९	स्रिव्	प.
११८४.	ष्ठिवु निरसने १११०	ष्ठिव्	प.

दिवादिगण के अनिदित् धातु

११८५.	रञ्ज रागे ११६७	रञ्ज्	उ.
११८६.	कुंस संश्लेषणे १२१८	कुंस्	प.
११८७.	भ्रंशु अधःपतने १२२५	भ्रंश्	प.

अन्तर्गणों से बचे हुए दिवादिगण के धातु

आकारान्त धातु

११८८.	माङ् माने ११४२	मा	आ.

ईकारान्त धातु

११८९.	पीङ् पाने ११४१	पी	आ.
११९०.	ईङ् गतौ ११४३	ई	आ.
११९१.	प्रीङ् प्रीतौ ११४४	प्री	आ.

ॠकारान्त धातु

११९२.	जॄष् ११३०	जॄ	प.
११९३.	झॄष् वयोहानौ ११३१	झॄ	प.

ओकारान्त धातु

११९४.	शो तनूकरणे ११४५	शो	प.
११९५.	छो छेदने ११४६	छो	प.
११९६.	षो अन्तकर्मणि ११४७	सो	प.
११९७.	दो अवखण्डने ११४८	दो	प.

अदुपध धातु

११९८.	ष्णसु निरसने १११२	स्नस्	प.
११९९.	क्नसु ह्वरणदीप्त्योः १११३	क्नस्	प.
१२००.	त्रसी उद्वेगे १११७	त्रस्	प.
१२०१.	षह चक्यर्थे ११२८	सह	प.
१२०२.	तप दाहे ऐश्वर्ये वा ११५९	तप्	आ.

१२०३. णह बन्धने ११६६ नह उ.
१२०४. शप आक्रोशे ११६८ शप् उ.
१२०५. पद गतौ ११६९ पद् आ.
१२०६. अण प्राणने ११७५ अण् आ.
(अन इत्येके)
१२०७. मन ज्ञाने ११७६ मन् आ.

इदुपध धातु

१२०८. क्षिप प्रेरणे ११२१ क्षिप् प.
१२०९. तिम आर्द्रीभावे ११२३ तिम प.
१२१०. ष्टिम ११२४ स्तिम् प.
१२११. इष गतौ ११२७ इष् प.
१२१२. क्लिश उपतापे ११६१ क्लिश् आ.
१२१३. खिद दैन्ये ११७० खिद् आ.
१२१४. विद सत्तायाम् ११७१ विद् आ.
१२१५. लिश अल्पीभावे ११७९ लिश् आ.

उदुपध धातु

१२१६. ष्णुसु अदने स्नुस् प.
अदर्शन इत्यपरे ११११
(आदान इत्येके)
१२१७. व्युष दाहे १११४ व्युष् प.
१२१८. प्लुष च १११५ प्लुष् प.
१२१९. कुथ पूतीभावे १११८ कुथ् प.
१२२०. पुथ हिंसायाम् १११९ पुथ् प.
१२२१. गुध परिवेष्टने ११२० गुध् प.
१२२२ षुह चक्यर्थे ११२९ सुह् प.
१२२३. ई शुचिर् पूतीभावे ११६५ शुच् उ.
१२२४. बुध अवगमने ११७२ बुध् आ.
१२२५. युध संप्रहारे ११७३ युध् आ.
१२२६. अनोरुध कामे ११७४ अनुरुध् आ.
१२२७. युज् समाधौ ११७७ युज् आ.

ऋदुपध धातु

१२२८. नृती गात्रविक्षेपे १११६ नृत् प.
१२२९. वृतु वरणे ११६० वृत् आ.
(वावृतु इ प. केचित्)
१२३०. मृष तितिक्षायाम् ११६४ मृष् उ.
१२३१. सृज विसर्गे ११७८ सृज् आ.

शेष धातु

१२३२. पुष्प विकसने ११२२ पुष्प् प.
१२३३. ष्टीम आर्द्रीभावे ११२५ स्तीम् प.
१२३४. व्रीड चोदने - लज्जायाञ्च ११२६ व्रीड् प.
१२३५. दीपी दीप्तौ ११५० दीप् आ.
१२३६. पूरी आप्यायने ११५१ पूर् आ.
१२३७. तूरी गतित्वरण - हिंसयोः ११५२ तूर् आ.
१२३८. धूरी हिंसागत्योः ११५३ धूर् आ.
१२३९. गूरी हिंसागत्योः ११५४ गूर् आ.
१२४०. घूरी हिंसावयो - हान्योः ११५५ घूर् आ.
१२४१. जूरी हिंसावयो - हान्योः ११५६ जूर् आ.
१२४२. शूरी हिंसास्तम्भ - नयोः ११५७ शूर् आ.
१२४३. चूरी दाहे ११५८ चूर् आ.
१२४४. काशृ दीप्तौ ११६२ काश् आ.
१२४५. वाशृ शब्दे ११६३ वाश् आ.
१२४६. राधोऽकर्मकाद् - वृद्धावेव ११८० राध् प.

स्वादिगण

स्वादिगण के अजन्त धातु

१२४७. षिञ् बन्धने १२४८ सि उ.
१२४८. शिञ् निशाने १२४९ शि उ.
१२४९. डुमिञ् प्रक्षेपणे १२५० मि उ.
१२५०. चिञ् चयने १२५१ चि उ.
१२५१. हि गतौ वृद्धौ - च १२५७ हि प.

१२५२. रि हिंसायाम् १२७५ (छा.) रि प.
१२५३. क्षि हिंसायाम् १२७६ (छा.) क्षि प.
१२५४. चिरि हिंसायाम् १२७७ (छा.) चिरि प.
१२५५. जिरि हिंसायाम् १२७८ (छा.) जिरि प.
१२५६. षुञ् अभिषवे १२४७ सु उ.
१२५७. धुञ् कम्पने १२५५ धु उ.
धूञ् इत्येके १२५५ धू उ.
१२५८. टुदु उपतापे १२५६ दु प.
१२५९. स्तृञ् आच्छादने १२५२ स्तृ उ.
१२६०. कृञ् हिंसायाम् १२५३ कृ उ.
१२६१. वृञ् वरणे १२५४ वृ उ.
१२६२. पृ प्रीतौ १२५८ पृ प.
१२६३. स्पृ प्रीतिपालनयोः १२५९ स्पृ प.
१२६४. दृ हिंसायाम् १२८० (छा.) दृ प.

स्वादिगण के हलन्त धातु

१२६५. अह व्याप्तौ १२६० (छा.) अह् प
१२६६. शक्लृ शक्तौ १२६१ शक् प.
१२६७. षघ हिंसायाम् १२६८ (छा.) सघ् प.
१२६८. दघ घातने पालने - च १२७३ (छा.) दघ् प.
१२६९. चमु भक्षणे १२७४ (छा.) चम् प.
१२७०. अशू व्याप्तौ सङ्घाते - च १२६४ अश् आ.
१२७१. तिक १२६६ (छा.) तिक् प
१२७२. तिग आस्कन्दने - गतौ च १२६७ (छा.) तिग् प.
१२७३. ष्टिघ आस्कन्दने १२६५ (छा.) स्तिघ् आ.
१२७४. ञिधृषा प्रागल्भ्ये १२६९ (छा.) धृष् प.
१२७५. ऋधु वृद्धौ १२७१ (छा.) ऋध् प.
तृप प्रीणन इत्येके • तृप् प.
१२७६. दाशृ हिंसायाम् १२७९ (छा.) दाश् प.
१२७७. आप्लृ व्याप्तौ १२६० आप् प.
१२७८. राध संसिद्धौ १२६२ राध् प.
१२७९. साध संसिद्धौ १२६३ साध् प.

स्वादिगण के अनिदित् धातु

१२८०. दम्भु दम्भने १२७० (छा.) दम्भ् प.

तुदादि गण

तुदादिगण के इकारान्त धातु

१२८१. रि गतौ १४०४ रि प.
१२८२. पि गतौ १४०५ पि प.
१२८३. धि गतौ १४०६ धि प.
१२८४. क्षि निवासगत्योः १४०७ क्षि प.

तुदादिगण के उकारान्त धातु

१२८५. गु पुरीषोत्सर्गे १३९९ गु प.
१२८६. ध्रु गतिस्थैर्ययोः १४०० ध्रु प.
१२८७. कुङ् शब्दे १४०१ कु आ.

तुदादिगण के ऊकारान्त धातु

१२८८. णू स्तवने १३९७ नू प.
१२८९. धू विधूनने १३९८ धू प.
१२९०. षू प्रेषणे १४०८ सू प.

तुदादिगण के ऋकारान्त धातु

१२९१. पृङ् व्यायामे १४०२ पृ आ.
१२९२. मृङ् प्राणत्यागे १४०३ मृ आ.
१२९३. दृङ् आदरे १४११ दृ आ.
१२९४. धृङ् अवस्थाने १४१२ धृ आ.

तुदादिगण के ॠकारान्त धातु

१२९५. कॄ विक्षेपे १४०९ कॄ प.

१२९६.	गॄ निगरणे १४१०	गॄ	प.

तुदादिगण का 'मुचादि' अन्तर्गण

१२९७.	मुच्लृ मोक्षणे १४३०	मुच्	उ.
१२९८.	लुप्लृ छेदने १४३१	लुप्	उ.
१२९९.	विद्लृ लाभे १४३२	विद्	उ.
१३००.	लिप उपदेहे १४३३	लिप्	उ.
१३०१.	षिच क्षरणे १४३४	सिच्	उ.
१३०२.	खिद परिघाते १४३६	खिद्	प.
१३०३.	कृती छेदने १४३५	कृत्	प.
१३०४.	पिश अवयवे १४३७	पिश्	प.

तुदादिगण के सम्प्रसारणी धातु

१३०५	ओव्रश्चू छेदने १२९२	व्रश्च्	प.
१३०६.	व्यच व्याजीकरणे १२९३	व्यच्	प.
१३०७.	प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् १४१३	प्रच्छ्	प.
१३०८.	भ्रस्ज पाके १२८४	भ्रज्ज्	उ.

तुदादिगण के विशेष धातु

१३०९.	ओलस्जी - व्रीडायाम् १२९१	लज्ज्	आ.
१३१०.	टुमस्जो शुद्धौ १४१५	मज्ज्	प.
१३११.	इष इच्छायाम् १३११	इष्	प.
१३१२	विच्छ गतौ १४२३	विच्छ	प.

तुदादिगण के शेष धातु

तुदादिगण के अदुपध धातु

१३१५.	चल विलसने १३५६	चल्	प.

तुदादिगण के इदुपध धातु

१३१६.	दिश अतिसर्जने १२८३	दिश्	उ.
१३१७.	क्षिप प्रेरणे १२८५	क्षप्	उ.
१३१८.	ओविजी भय - चलनयो: १२८९	उद्विज्	आ.
१३१९.	रिफ कत्थनयुद्ध - निन्दाहिंसादानेषु १३०६ (रिह इत्येके)	रिफ्	प.
१३२०.	विध विधाने १३२५	विध्	प.
१३२१.	मिष स्पर्धायाम् १३५२	मिष्	प.
१३२२.	किल श्वैत्यक्री - डनयो: १३५३	किल्	प.
१३२३.	तिल स्नेहने १३५४	तिल्	प.
१३२४.	चिल वसने १३५५	चिल्	प.
१३२५.	इल स्वप्नक्षेप - णयो: १३५७	इल्	प.
१३२६.	विल संवरणे १३५८	विल्	प.
१३२७.	बिल भेदने १३५९	बिल्	प.
१३२८.	णिल गहने १३६०	निल्	प.
१३२९.	हिल भावकरणे १३६१	हिल्	प.
१३३०.	शिल उञ्छे १३६२	शिल्	प.
१३३१.	षिल उञ्छे १३६३	सिल्	प.
१३३२.	मिष श्लेषणे १३६४	मिष्	प.
१३३३.	लिख अक्षर - विन्यासे १३६५	लिख्	प.
१३३४.	रिश हिंसायाम् १४२०	रिश्	प.
१३३५.	लिश गतौ १४२१	लिश्	प.
१३३६.	विश प्रवेशने च १४२४	विश्	प.
१३३७.	मिल सङ्गमे १४२९	मिल्	उ.

तुदादिगण के उदुपध धातु

१३३८.	तुद व्यथने १२८१	तुद्	उ.
१३३९.	णुद प्रेरणे १२८२	नुद्	उ.
१३४०.	जुषी प्रीति - सेवनयो: १२८८	जुष्	आ.
१३४१.	लुभ विमोहने १३०५	लुभ्	प.
१३४२.	तुप १३०९	तुप्	प.
१३४३.	तुफ हिंसायाम् १३११	तुफ्	प.
१३४४.	गुफ ग्रन्थे १३१७	गुफ्	प.
१३४५.	उभ पूरणे १३१९	उभ्	प.
१३४६.	शुभ शोभार्थे १३२१	शुभ्	प.
१३४७.	जुड गतौ १३२६	जुड्	प.
१३४८.	तुण कौटिल्ये १३३२	तुण्	प.

१३४९.	पुण कर्मणि शुभे १३३३	पुण्	प.
१३५०.	मुण प्रतिज्ञाने १३३४	मुण्	प.
१३५१.	कुण शब्दो - पकरणयोः १३३५	कुण्	प.
१३५२.	शुन गतौ १३३६	शुन्	प.
१३५३.	तुण हिंसागति - कौटिल्येषु १३३७	तुण्	प.
१३५४.	घुण भ्रमणे १३३८	घुण्	प.
१३५५.	खुर ऐश्वर्य - दीप्त्योः १३४०	खुर्	प.
१३५६.	कुर शब्दे १३४१	कुर्	प.
१३५७.	खुर छेदने १३४२	खुर्	प.
१३५८.	मुर संवेष्टने १३४३	मुर्	प.
१३५९.	क्षुर विलेखने १३४४	क्षुर्	प.
१३६०.	घुर भीमार्थ - शब्दयोः १३४५	घुर्	प.
१३६१.	पुर अग्रगमने १३४६	पुर्	प.
१३६२.	रुजो भङ्गे १४१६	रुज	प.
१३६३.	भुजो कौटिल्ये १४१७	भुज्	प.
१३६४.	छुप स्पर्शे १४१८	छुप्	प.
१३६५.	रुश हिंसायाम् १४१९	रुश्	प.
१३६६.	णुद प्रेरणे १४२६	नुद्	प.
१३६७.	कृष विलेखने १२८६	कृष्	उ.
१३६८.	ऋषी गतौ १२८७	ऋष्	प.
१३६९.	ऋच स्तुतौ १३०२	ऋच्	प.
१३७०.	तृप १३०७	तृप्	प.
१३७१.	दृप १३१३	दृप्	प.
१३७२.	ऋफ हिंसायाम् १३१५	ऋफ्	प.
१३७३.	दृभी ग्रन्थे १३२३	दृभ्	प.
१३७४.	चृती हिंसाश्रन्थ - नयोः १३२४	चृत्	प.
१३७५.	मृड सुखने १३२७	मृड्	प.
१३७६.	पृड च १३२८	पृड्	प.
१३७७.	पृण प्रीणने १३२९	पृण्	प.
१३७८.	वृण च १३३०	वृण्	प.
१३७९.	मृण हिंसायाम् १३३१	मृण्	प.
१३८०.	वृहू उद्यमने १३४७	वृह्	प.
	(बृहू इत्यन्ये)	बृह्	प.
१३८१.	तृहू १३४८	तृह्	प.
१३८२.	स्तृहू हिंसार्थौ १३४९	स्तृह्	प.
१३८३.	सृज विसर्गे १४१४	सृज्	प.
१३८४.	स्पृश संस्पर्शने १४२२	स्पृश्	प.
१३८५.	मृश आमर्शने १४२५	मृश्	प.

तुदादिगण के अनिदित् धातु

१३८६.	तृम्फ तृप्तौ १३०८	तृम्फ्	प.
१३८७.	तुम्प हिंसायाम् १३१०	तुम्प्	प.
१३८८.	तुम्फ हिंसायाम् १३१२	तुम्फ्	प.
१३८९.	दृम्फ उत्क्लेशे १३१४	दृम्फ्	प.
१३९०.	ऋम्फ हिंसायाम् १३१६	ऋम्फ्	प.
१३९१.	गुम्फ ग्रन्थे १३१८	गुम्फ्	प.
१३९२.	उम्भ पूरणे १३२०	उम्भ्	प.
१३९३.	शुम्भ शोभार्थे १३२२	शुम्भ्	प.
१३९४.	तृन्हू हिंसार्थः १३५०	तृंह्	प.

तुदादिगण का 'कुटादि' अन्तर्गण

१३९५.	कुट कौटिल्ये १३६६	कुट्	प.
१३९६.	पुट संश्लेषणे १३६७	पुट्	प.
१३९७.	कुच सङ्कोचने १३६८	कुच्	प.
१३९८.	गुज शब्दे १३६९	गुज्	प.
१३९९.	गुड रक्षायाम् १३७०	गुड्	प.
१४००.	डिप क्षेपे १३७१	डिप्	प.
१४०१.	छुर छेदने १३७२	छुर्	प.
१४०२.	स्फुट विकसने १३७३	स्फुट्	प.
१४०३.	मुट आक्षेप - मर्दनयोः १३७४	मुट्	प.
१४०४.	त्रुट छेदने १३७५	त्रुट्	प.
१४०५.	तुट कलहकर्मणि १३७६	तुट्	प.
१४०६.	चुट छेदने १३७७	चुट्	प.

१४०७.	छुट छेदने १३७८	छुट्	प.
१४०८.	जुट बन्धने १३७९	जुट्	प.
१४०९.	कड मदे १३८०	कड्	प.
१४१०.	लुट संश्लेषणे १३८१	लुट्	प.
१४११.	कृड घनत्वे १३८२	कृड्	प.
१४१२.	कुड बाल्ये १३८३	कुड्	प.
१४१३.	पुड उत्सर्गे १३८४	पुड्	प.
१४१४.	घुट प्रतिघाते १३८५	घुट्	प.
१४१५.	तुड तोडने १३८६	तुड्	प.
१४१६.	थुड १३८७	थुड्	प.
१४१७.	स्थुड सम्वरणे १३८८	स्थुड्	प.
१४१८.	स्फुर सञ्चलने - स्फुरणे च १३८९	स्फुर्	प.
१४१९.	स्फुल सञ्चलने १३९०	स्फुल्	प.
१४२०.	स्फुड संवरणे १३९१	स्फुड्	प.
१४२१.	चुड सम्वरणे १३९२	चुड्	प.
१४२२.	व्रुड सम्वरणे १३९३	व्रुड्	प.
१४२३.	क्रुड १३९४	क्रुड्	प.
१४२४.	मृड निमज्जने १३९५	मृड्	प.
१४२५.	गुरी उद्यमने १३९६	गुर्	प.
	णू स्तवने १३९७	नू	प.
	धू विधूनने १३९८	धू	प.
	गु पुरीषोत्सर्गे	गु	प.
	ध्रु गतिस्थैर्ययो: १४००	ध्रु	प.
	कुङ् शब्दे १४०१	कु	आ.

कुछ लोग लिख धातु को कुटादि मानते हैं।

तुदादिगण के शेष धातु

१४२६.	उछि उञ्छे १२९४	उञ्छ्	प.
१४२७.	उच्छी विवासे १२९५	उच्छ्	प.
१४२८.	ऋच्छ गतीन्द्रिय - प्रलयमूर्तिभावेषु १२९६	ऋच्छ्	प.
१४२९.	मिच्छ उत्क्लेशे १२९७	मिच्छ्	प.
१४३०.	जर्ज १२९८	जर्ज्	प.
१४३१.	चर्च १२९९	चर्च्	प.
१४३२.	झर्झ परिभाषण - भर्त्सनयो: १३००	झर्झ्	प.
१४३३.	त्वच संवरणे १३०१	त्वच्	प.
१४३४.	उब्ज आर्जवे १३०३	उब्ज्	प.
१४३५.	उज्झ उत्सर्गे १३०४	उज्झ्	प.
१४३६.	घूर्ण भ्रमणे १३३९	घूर्ण्	प.
१४३७.	ओलजी व्रीडायाम् १२९०	लज्	आ.

तुदादिगण का 'किरादि' अन्तर्गण

कॄ विक्षेपे १४०९	कॄ	प.
गॄ निगरणे १४१०	गॄ	प.
दृङ् आदरे १४११	दृ	आ.
धृङ् अवस्थाने १४१२	धृ	आ.
प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् १४१३	प्रच्छ्	प.

रुधादिगण

रुधादिगण के चकारान्त धातु

१४३८.	विचिर् पृथग्भावे १४४३	विच्	उ.
१४३९.	रिचिर् विरेचने १४४२	रिच्	उ.
१४४०.	तञ्चू सङ्कोचने १४६०	तञ्च्	प.
१४४१.	पृची सम्पर्के १४६३	पृच्	प.

रुधादिगण के जकारान्त धातु

१४४२.	युजिर् योगे १४४५	युज्	उ.
१४४३.	भञ्जो आमर्दने १४५४	भञ्ज्	प.
१४४४.	भुज पालनाभ्य - वहारयो: १४५५	भुज्	उ.
१४४५.	अञ्जू व्यक्तिमर्षण - कान्तिगतिषु १४५९	अञ्ज्	प.
१४४६.	ओविजी भय - चलनयो: १४६१	विज्	प.
१४४७.	वृजी वर्जने १४६२	वृज्	प.

रुधादिगण के तकारान्त धातु

१४४८.	कृती वेष्टने १४४८	कृत्	प.

रुधादिगण के दकारान्त धातु

१४४९.	छिदिर् द्वैधीकरणे १४४१	छिद्	उ.
१४५०.	भिदिर् विदारणे १४४०	भिद्	उ.
१४५१.	क्षुदिर् सम्पेषणे १४४४	क्षुद्	उ.
१४५२.	उच्छृदिर् दीप्तिदेवनयो: १४४६	छृद्	उ.
१४५३.	उतृदिर् हिंसानादरयो: १४४७	तृद्	उ.
१४५४.	खिद दैन्ये १४५०	खिद्	आ.
१४५५.	विद विचारणे १४५१	विद्	आ.
१४५६.	उन्दी क्लेदने १४५८	उन्द्	प.

रुधादिगण के धकारान्त धातु

१४५७.	रुधिर् आवरणे १४३९	रुध्	उ.
१४५८.	ञिइन्धी दीप्तौ १४४९	इन्ध्	आ.

रुधादिगण के षकारान्त धातु

१४५९.	शिष्लृ विशेषणे १४५२	शिष्	प.
१४६०.	पिष्लृ संचूर्णने १४५३	पिष्	प.

रुधादिगण के सकारान्त धातु

१४६१.	हिसि हिंसायाम् १४५७	हिंस्	प.

रुधादिगण के हकारान्त धातु

१४६२.	तृह हिंसायाम् १४५६	तृह्	प.

तनादिगण

१४६३.	तनु विस्तारे १४६३	तन्	उ.
१४६४.	षणु दाने १४६४	सन्	उ.
१४६५.	क्षणु हिंसायाम् १४६५	क्षण्	उ.
१४६६.	क्षिणु हिंसायाम् १४६६	क्षिण्	उ.
१४६७.	ऋणु गतौ १४६७	ऋण्	उ.
१४६८.	तृणु अदने १४६८	तृण्	उ.
१४६९.	घृणु दीप्तौ १४६९	घृण्	उ.
१४७०.	वनु याचने १४७०	वन्	आ.
१४७१.	मनु अवबोधने १४७१	मन्	आ.
१४७२.	डुकृञ् करणे १४७२	कृ	उ.

क्र्यादिगण

क्र्यादिगण के अजन्त धातु

१४७३.	ज्ञा अवबोधने १५०७	ज्ञा	उ.
१४७४.	षिञ् बन्धने १४७७	सि	उ.
१४७५.	डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये १४७३	क्री	उ.
१४७६.	प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च १४७४	प्री	उ.
१४७७.	श्रीञ् पाके १४७५	श्री	उ.
१४७८.	मीञ् बन्धने १४७६	मी	उ.
१४७९.	स्कुञ् आप्रवणे १४७८	स्कु	उ.
१४८०.	युञ् बन्धने १४७९	यु	उ.
१४८१.	द्रूञ् १४८१	द्रू	उ.
१४८२.	क्नूञ् शब्दे १४८०	क्नू	उ.
१४८३.	व्री वरणे १५०४	व्री	प.
१४८४.	भ्री भये १५०५	भ्री	प.
१४८५.	क्षीष् हिंसायाम् १५०६	क्षी	प.
१४८६.	वृङ् सम्भक्तौ १५०९	वृ	आ.

क्र्यादिगण का 'प्वादि' अन्तर्गण १४८७ से १५०८ तक

१४८७.	पूञ् पवने १४८२	पू	उ.

क्र्यादिगण का 'ल्वादि' अन्तर्गण १४८८ से १५०८ तक

१४८८.	लूञ् छेदने १४८३	लू	उ.
१४८९.	धूञ् कम्पने १४८७	धू	उ.
१४९०.	स्तृञ् आच्छादने १४८४	स्तॄ	उ.
१४९१.	कॄञ् हिंसायाम् १४८५	कॄ	उ.
१४९२.	वॄञ् वरणे १४८६	वॄ	उ.
१४९३.	शॄ हिंसायाम् १४८८	शॄ	प.
१४९४.	पॄ पालनपूरणयो: १४८९	पॄ	प.

१४९५.	वृ वरणे १४९० (भरण इत्येके)	वृ	प.
१४९६.	भृ भर्त्सने १४९१	भृ	प.
१४९७.	मृ हिंसायाम् १४९२	मृ	प.
१४९८.	दृ विदारणे १४९३	दृ	प.
१४९९.	जृ वयोहानौ १४९४	जृ	प.
१५००.	नृ नये १४९५	नृ	प.
१५०१.	कृ हिंसायाम् १४९६	कृ	प.
१५०२.	ॠ गतौ १४९७	ॠ	प.
१५०३.	गृ शब्दे १४९८	गृ	प.
१५०४.	ज्या वयोहानौ १४९९	ज्या	प.
१५०५.	री गतिरेषणयोः १५००	री	प.
१५०६.	ली श्लेषणे १५०१	ली	प.
१५०७.	ब्ली वरणे १५०२	ब्ली	प.
१५०८.	प्ली गतौ १५०३	प्ली	प.

क्र्यादि गण के हलन्त धातु

क्र्यादिगण के अनिदित् हलन्त धातु

१५०९.	बन्ध बन्धने १५०८	बन्ध्	प.
१५१०.	श्रन्थ विमोचन - प्रतिहर्षयोः १५०९	श्रन्थ्	प.
१५११.	मन्थ विलोडने १५१०	मन्थ्	प.
१५१२.	श्रन्थ सन्दर्भे १५११	श्रन्थ्	प.
१५१३.	ग्रन्थ सन्दर्भे १५१३	ग्रन्थ्	प.
१५१४.	कुन्थ संश्लेषणे १५१४	कुन्थ्	प.

क्र्यादिगण के शेष हलन्त धातु

१५१५.	मृद क्षोदे १५१५	मृद्	प.
१५१६.	मृड च १५१६	मृड्	प.
१५१७.	गुध रोषे १५१७	गुध्	प.
१५१८.	कुष निष्कर्षे १५१८	कुष्	प.
१५१९.	क्षुभ सञ्चलने १५१९	क्षुभ्	प.
१५२०.	णभ हिंसायाम् १५२०	नभ्	प.
१५२१.	तुभ हिंसायाम् १५२१	तुभ्	प.
१५२२.	क्लिशू विबाधने १५२२	क्लिश्	प.
१५२३.	अश भोजने १५२३	अश्	प.
१५२४.	उध्रस् उञ्छे १५२४	ध्रस्	प.
१५२५.	इष आभीक्ष्ण्ये १५२५	इष्	प.
१५२६.	विष विप्रयोगे १५२६	विष्	प.
१५२७.	प्रुष १५२७	प्रुष	प.
१५२८.	प्लुष स्नेहनसेवन - पूरणेषु १५२८	प्लुष्	प.
१५२९.	पुष पुष्टौ १५२९	पुष्	प.
१५३०.	मुष स्तेये १५३०	मुष्	प.
१५३१.	खच भूतप्रादुर्भावे १५३१	खच्	प.
१५३२.	हेठ च १५३२	हेठ्	प.
१५३३.	ग्रह उपादाने १५३३	ग्रह्	उ.

स्तम्भु, स्तुम्भु, स्कम्भु, स्कुम्भु रोधने। ये चार धातु सौत्र परस्मैपदी हैं।

चुरादिगण

चुरादिगण के अजन्त धातु

१५३४.	ज्ञा नियोगे १७३२	ज्ञा	उ.
१५३५.	चिञ् चयने १६२९	चि	उ.
१५३६.	च्यु सहने १७४६ (हसने चेत्येके)	च्यु	उ.
१५३७.	भुवोऽवकल्कने (चिन्तने इत्येके)	भू	उ.
१५३८.	घृ प्रस्रवणे १६५०	घृ	उ.
१५३९.	पृ पूरणे १५४८	पृ	उ.

अदुपध धातु

१५४०.	लड उपसेवायाम् १५४०	लड्	उ.
१५४१.	जल अपवारणे १५४३	जल्	उ.
१५४२.	नट अवस्यन्दने १५४५	नट्	उ.
१५४३.	श्रथ प्रयत्ने १५४६	श्रथ्	उ.
१५४४.	बध संयमने १५४७	बध्	उ.
१५४५.	प्रथ प्रख्याने १५५३	प्रथ्	उ.
१५४६.	शठ १५६४	शठ्	उ.
१५४७.	श्वठ असंस्कारगत्योः	श्वठ्	उ.

श्वठि इत्येके १५६५

१५४८.	श्रण दाने १५७८	श्रण्	उ.
१५४९.	तड आघाते १५७९	तड्	उ.
१५५०.	खड भेदने १५८०	खड्	उ.
१५५१.	क्षल शौचकर्मणि १५९७	क्षल्	उ.
१५५२.	तल प्रतिष्ठायाम् १५९८	तल्	उ.
१५५३.	कल क्षेपे १६०४	कल्	उ.
१५५४.	चल भृतौ १६०८	चल्	उ.
१५५५.	लष हिंसायाम् १६१०	लष्	उ.
१५५६.	व्रज मार्गसंस्कार - गत्यो: १६१७	व्रज्	उ.
१५५७.	गज शब्दार्थ: १६४७	गज्	उ.
१५५८.	ह्लप व्यक्तायां - वाचि १६५८	ह्लप	उ.
	क्लप इत्येके, ह्वप इत्यन्ये		
१५५९.	कण निमीलने १७१५	कण्	उ.
१५६०.	पश बन्धने १७१९	पश्	उ.
१५६१.	अम रोगे १७२०	अम्	उ.
१५६२.	चट भेदने १७२१	चट्	उ.
१५६३.	घट संघाते १७२३	घट्	उ.
१५६४.	लस शिल्पयोगे १७२८	लस्	उ.
१५६५.	भज विश्राणने १७३३	भज्	उ.
१५६६.	यत निकारो - पस्कारयो: १७३५	यत्	उ.
१५६७.	रक १७३६	रक्	उ.
१५६८.	लग आस्वादने १७३७	लग्	उ.
१५६९.	त्रस धारणे १७४१	त्रस्	उ.
१५७०.	नस स्नेहच्छेदा - पहरणेषु १७४४	नस्	उ.
१५७१.	चर संशये १७४५	चर्	उ.
१५७२.	ष्वद आस्वादने १८०५	स्वद्	उ.

ज्ञपादि छह मित् धातु

१५७३.	ज्ञप ज्ञानज्ञापनमारण - तोषणनिशामनेषु १६२४	ज्ञप	उ.
१५७४.	यम च परिवेषणे १६२५	यम्	उ.
	चान्मित् ।		
१५७५.	चह परिकल्कने १६२६	चह्	उ.
	चप इत्येके		
१५७६.	रह त्यागे १६२७	रह्	उ.
१५७७.	बल प्राणने १६२८	बल्	उ.
	चिञ् चयने १६२९	चि	उ.

इदुपध धातु

१५७८.	पिस गतौ १५६८	पिस्	उ.
१५७९.	ष्णिह स्नेहने १५७२	स्नेह्	उ.
१५८०.	स्मिट अनादरे १५७३	स्मिट्	उ.
१५८१.	श्लिष श्लेषणे १५७४	श्लिष्	उ.
१५८२.	पिच्छ कुट्टने १५७६	पिच्छ्	उ.
१५८३.	विल क्षेपे १६०५	विल्	उ.
१५८४.	बिल भेदने १६०६	बिल्	उ.
१५८५.	तिल स्नेहने १६०७	तिल्	उ.
१५८६.	तिज निशातने १६५२	तिज्	उ.
१५८७.	डिप क्षेपे १६७१	डिप्	उ.
१५८८.	इल प्रेरणे १६६०	इल्	उ.

उदुपध धातु

१५८९.	चुर स्तेये १५३४	चुर्	उ.
१५९०.	चुद संचोदने १५९२	चुद्	उ.
१५९१.	तुल उन्माने १५९९	तुल्	उ.
१५९२.	दुल उत्क्षेपे १६००	दुल्	उ.
१५९३	पुल महत्वे १६०१	पुल्	उ.
१५९४.	चुल समुच्छ्राये १६०२	चुल्	उ.
१५९५.	चुट छेदने १६१३	चुट्	उ.
१५९६.	मुट संचूर्णने १६१४	मुट्	उ.
१५९७.	शुठ आलस्ये १६४४	शुठ्	उ.
१५९८.	जुड प्रेरणे १६४६	जुड्	उ.
१५९९.	स्फुट भेदने १७२२	स्फुट्	उ.
१६००.	मुद संसर्गे १७४०	मुद्	उ.

१६०१. मुच प्रमोचने - मोदने च १७४३ मुच् उ.
१६०२. रुष रोषे १६७० (रुट इत्येके) रुष् उ.
१६०३. ष्टुप समुच्छ्राये स्तुप् उ.
१६०४. घुषिर् विशब्दने १७२६ घुष् उ.

ऋदुपध धातु

१६०५. पृथ प्रक्षेपे १५५४ पृथ उ.

ॠदुपध धातु

१६०६. कॄत संशब्दने १६५३ कीर्त् उ.

शेष हलन्त धातु

१६०७. पुंस अभिवर्धने १६३७ पुंस् उ.
१६०८. षम्ब सम्बन्धने १५५५ सम्ब् उ.
१६०९. शम्ब सम्बन्धने १५५६ शम्ब् उ.
१६१०. लुण्ट स्तेये १५६३ लुण्ट् उ.
१६११. घट्ट चलने १६३० घट्ट् उ.
१६१२. मुस्त सङ्घाते १६३१ मुस्त् उ.
१६१३. खट्ट संवरणे १६३२ खट्ट् उ.
१६१४. षट्ट १६३३ सट्ट् उ.
१६१५. स्फिट्ट हिंसायाम् १६३४ स्फिट्ट् उ.
१६१६. पूल सङ्घाते १६३६ पूल् उ.
१६१७. धूस कान्तिकरणे १६३९ धूस् उ.
१६१८. कीट वर्णे १६४० कीट् उ.
१६१९ चूर्ण सङ्कोचने १६४१ चूर्ण् उ.
१६२० पूज पूजायाम् १६४२ पूज् उ.
१६२१. मार्ज शब्दार्थः १६४८ मार्ज् उ.
१६२२. मर्च च १६४९ मर्च् उ.
१६२३. वर्ध छेदन - पूरणयोः १६५४ वर्ध् उ.
१६२४. म्रक्ष म्लेच्छने १६६१ म्रक्ष् उ.
१६२५. म्लेच्छ अव्यक्तायां - वाचि १६६२ म्लेच्छ् उ.
१६२६. ब्रूस १६६३ ब्रूस् उ.
१६२७. बर्ह हिंसायाम् १६६४ बर्ह उ.
१६२८. गुर्द पूर्वनिकेतने १६६५ गूर्द् उ.
१६२९ ईड स्तुतौ १६६७ ईड् उ.
१६३०. चर्च अध्ययने १७१२ चर्च् उ.
१६३१. बुक्क भषणे १७१३ बुक्क् उ.
१६३२. शब्द उपसर्गादा - विष्कारे च १७१४ शब्द् उ.
१६३३. षूद क्षरणे १७१७ सूद् उ.
१६३४. अर्ज प्रतियत्ने १७२५ अर्ज् उ.
१६३५. आङः क्रन्द - सातत्ये १७२७ आक्रन्द् उ.
१६३६. भूष अलङ्करणे १७३० भूष् उ.
१६३७. लक्ष दर्शनाङ्क - नयोः १५३८ लक्ष् उ.
१६३८. पीड अवगाहने १५४४ पीड् उ.
१६३९. ऊर्ज बलप्राण - नयोः १५४९ ऊर्ज् उ.
१६४०. पक्ष परिग्रहे १५५० पक्ष् उ.
१६४१. वर्ण १५५१ वर्ण् उ.
१६४२. चूर्ण प्रेरणे १५५२ चूर्ण उ.
१६४३. भक्ष अदने १५५७ भक्ष् उ.
१६४४. कुट्ट छेदनभर्त्स - नयोः १५५८ कुट्ट् उ.
१६४५. पुट्ट १५५९ पुट्ट् उ.
१६४६. चुट्ट अल्पीभावे १५६० चुट्ट् उ.
१६४७. अट्ट १५६१ अट्ट् उ.
१६४८. षुट्ट अनादरे १५६२ सुट्ट् उ.
१६४९ षान्त्व सम्प्रयोगे १५६९ सान्त्व् उ.
१६५०. श्वल्क परिभाषणे १५७० श्वल्क् उ.
१६५१. वल्क परिभाषणे १५७१ वल्क् उ.
१६५२. छर्द वमने १५८९ छर्द् उ.
१६५३. पुस्त १५९० पुस्त् उ.

१६५४. बुस्त आदराना - दरयोः १५९१ बुस्त् उ.
१६५५. नक्क १५९३ नक्क् उ.
१६५६. धक्क नाशने १५९४ धक्क् उ.
१६५७. चक्क १५९५ चक्क् उ.
१६५८. चुक्क व्यथने १५९६ चुक्क् उ.
१६५९. मूल रोहणे १६०३ मूल् उ.
१६६०. पाल रक्षणे १६०९ पाल् उ.
१६६१. शुल्ब माने १६११ शुल्ब् उ.
१६६२. शूर्प च १६१२ शूर्प् उ.
१६६३. शुल्क अतिस्पर्शने अतिसर्जने इत्येके १६१८ शुल्क् उ.
१६६४. श्वर्त गत्याम् १६२२ श्वर्त् उ.
१६६५. श्वभ्र च १६२३ श्वभ्र् उ.
१६६६. अर्ह पूजायाम् १७३१ अर्ह् उ.
१६६७. बर्ह १७६९ बर्ह् उ.
१६६८. वल्ह भाषार्थौ, भासार्थौ वा १७७० वल्ह् उ.
१६६९. अर्क स्तवने १६४३ तपन इत्येके अर्क् उ.
१६७०. यत्रि संकोचे १५३६ यन्त्र् उ.
१६७१. कुद्रि अनृत - भाषणे १५३९ कुन्द्र उ.

चुरादिगण के वैकल्पिक णिच् वाले धातु

१. वैकल्पिक णिच् वाले इदित्, ईदित्, उदित्, ऊदित् तथा अन्य धातु

१६७२. चिति स्मृत्याम् १५३५ चिन्त् उ.
१६७३. स्फुडि परिहासे १५३७ स्फुन्ड् उ.
१६७४. मिदि स्नेहने १५४१ मिन्द् उ.
१६७५ ओलडि उत्क्षेपणे १५४२ लन्ड् उ.
१६७६. तुजि १५६६ तुन्ज् उ.
१६७७. पिजि हिंसाबलादान - निकेतनेषु तुज, पिज इति केचित्। लज, लुजि इत्येके १५६७ पिन्ज् उ.
१६७८. पथि गतौ १५७५ पन्थ् उ.
१६७९. छदि सम्वरणे १५७७ छन्द् उ.
१६८०. खडि १५८१ खन्ड् उ.
१६८१. कुडि भेदने १५८२ कुन्ड् उ.
१६८२. कुडि रक्षणे १५८३ कुन्ड् उ.
१६८३. गुडि वेष्टने १५८४ गुन्ड् उ.
१६८४. खुडि खण्डने १५८५ खुन्ड् उ.
१६८५. वटि विभाजने १५८६ वन्ट् उ.
१६८६. मडि भूषायाम् - हर्षे च १५८७ मन्ड् उ.
१६८७. भडि कल्याणे १५८८ भन्ड् उ.
१६८८. पडि नाशने १६१५ पन्ड् उ.
१६८९ पसि नाशने १६१६ पंस् उ.
१६९०. चपि गत्याम् १६१९ चम्प् उ.
१६९१. क्षपि क्षान्त्याम् १६२० क्षम्प् उ.
१६९२. छजि कृच्छ्र - जीवने १६२१ छन्ज् उ.
१६९३. चुबि हिंसायाम् १६३५ चुम्ब् उ.
१६९४. टकि बन्धने १६३८ टन्क् उ.
१६९५. शुठि शोषणे १६४५ शुन्ठ् उ.
१६९६. पचि विस्तार - वचने १६५१ पन्च् उ.
१६९७. कुबि आच्छादने १६५५ कुम्ब् उ.
१६९८. लुबि १६५६ लुम्ब् उ.
१६९९. तुबि अदर्शने १६५७ तुम्ब् उ.
१७००. चुटि छेदने १६५९ चुन्ट् उ.
१७०१. जसि रक्षणे १६६६ जंस उ.
१७०२. पिडि सङ्घाते १६६९ पिन्ड् उ.
१७०३. जभि नाशने १७१६ जम्भ् उ.
१७०४. तसि अलङ्करणे १७२९ तंस् उ.

१७०५.	लिगि चित्रीकरणे १७३९	लिन्ग्	उ.
	पूरी आप्यायने १८०३	पूर्	उ.
	वृजी वर्जने १८१२	वृज्	उ.
	छृदी संदीपने १८२०	छृद्	उ.
	दृभी ग्रन्थे (भये) १८२१	दृभ्	उ.
१७०६.	अञ्चु विशेषणे १७३८	अञ्च्	उ.
	वञ्चु प्रलम्भने १७०३	वञ्च्	उ.
१७०७	दिवु मर्दने १७२४	दिव्	उ.
	दिवु परिकूजने	दिव्	उ.
१७०८.	जसु ताडने १७१८	जस्	उ.
१७०९	जसु हिंसायाम् १६६८	जस्	उ.
१७१०.	शृधु प्रसहने १७३४	शृध्	उ.
१७११.	वृतु १७८१	वृत्	उ.
१७१२.	वृधु भाषार्थौ १७८२	वृध्	उ.
	तनु श्रद्धोपकरणयो:, उपसर्गाच्चदैर्घ्ये - चन श्रद्धो पहननयो: इत्येके १८४०	तन्	उ.
१७१३.	उध्रस उञ्छे १७४२	उध्रस्	उ.
	मृजू शौचा - लङ्कारयो: १८४८	मृज्	उ.
	भुवोऽवकल्कने चिन्तने इत्येके	भू	उ.
१७१४.	कृप अवकल्कने १७४८	कल्प्	उ.

२. चुरादिगण के वैकल्पिक णिच् वाले 'आस्वदीय' अन्तर्गण के धातु

१७१५.	ग्रस ग्रहणे १७४९	ग्रस्	उ.
१७१६.	दल विदारणे १७५१	दल्	उ.
१७१७.	रुज हिंसायाम् १८०४	रुज्	उ.
१७१८.	पुष धारणे १७५०	पुष्	उ.
१७१९.	जि (जुचि) १७९३	जि	उ.
१७२०.	चि १७९४	चि	उ.
१७२१.	पट १७५२	पट्	उ.
१७२२.	घट १७६६	घट्	उ.
१७२३.	णद १७७८	नद्	उ.
१७२४.	नट १७९१	नट्	उ.
१७२५.	तड १८०१	तड्	उ.
१७२६.	नल च १८०२	नल्	उ.
१७२७.	पुट १७५३	पुट्	उ.
१७२८.	लुट १७५४	लुट्	उ.
१७२९.	गुप १७७१	गुप्	उ.
१७३०.	पुथ १७७५	पुथ्	उ.
१७३१.	कुप १७७९	कुप्	उ.
१७३२.	रुट १७८३	रुट्	उ.
	वृतु १७८१	वृत्	उ.
	वृधु १७८२	वृध्	उ.
१७३३.	तुजि १७५५	तुन्ज्	उ.
१७३४.	मिजि १७५६	मिन्ज्	उ.
१७३५.	पिजि १७५७	पिन्ज्	उ.
१७३६.	लुजि १७५८	लुन्ज्	उ.
१७३७	भजि १७५९	भन्ज्	उ.
१७३८.	लघि १७६०	लन्घ्	उ.
१७३९.	त्रसि १७६१	त्रंस्	उ.
१७४०.	पिसि १७६२	पिंस्	उ.
१७४१.	कुसि १७६३.	कुंस्	उ.
१७४२	दशि १७६४	दंश्	उ.
१७४३	कुशि १७६५	कुंश्	उ.
१७४४	घटि १७६७	घन्ट्	उ.
१७४५	बृहि १७६८	बृंह्	उ.
१७४६.	लजि १७८४	लन्ज्	उ.
१७४७.	अजि १७८५	अन्ज्	उ.
१७४८.	दसि १७८६	दंस्	उ.
१७४९.	भृशि १७८७	भृंश्	उ.
१७५०.	रुशि १७८८	रुंश्	उ.
१७५१.	रुसि १७९०	रुंस्	उ.
१७५२.	पुटि १७९२	पुन्ट्	उ.

१७५३. रघि १७९५ रन्घ् उ.
१७५४. लघि १७९६ लन्घ् उ.
१७५५. अहि १७९७ अंह् उ.
१७५६. रहि १७९८ रंह् उ.
१७५७. महि १७९९ मंह् उ.
१७५८. लडि १८०० लन्ड् उ.
१७५९. विच्छ १७७३ विच्छ् उ.
१७६०.. चीव १७७४ चीव् उ.
१७६१. लोकृ १७७६ लोक् उ.
१७६२. लोचृ १७७७ लोच् उ.
१७६३. तर्क १७८० तर्क् उ.
१७६४. शीक १७८९ शीक् उ.
१७६५ धूप भाषार्थाः, १७७२ भासार्थाः वा धूप् उ.
१७६६ पूरी आप्यायने १८०३ पूर् उ.

३. चुरादिगण के वैकल्पिक णिच् वाले आधृषीय अथवा युजादि अन्तर्गण के धातु

इकारान्त आधृषीय धातु

१७६७. ली द्रवीकरणे १८११ ली उ.
१७६८. व्रि वयोहानौ १८१५ व्रि उ.
१७६९. मी गतौ १८२४ मी उ.
१७७०. प्रीञ् तर्पणे १८३६ प्री उ.

उकारान्त आधृषीय धातु

१७७१. भू प्राप्तौ १८४४ आत्मनेपदी णिच् सन्नियोगेनैव आत्मनेपदमित्येके भू उ.
१७७२. धूञ् १८३५ धू उ.

ऋकारान्त आधृषीय धातु

१७७३. वृञ् आवरणे १८१३ वृ उ.
१७७४. जृ वयोहानौ १८१४ जृ उ.

अदुपध आधृषीय धातु

१७७५. षह मर्षणे १८०९ सह् उ.
१७७६. तप दाहे १८१८ तप् उ.
१७७७. श्रथ मोक्षणे १८२३ श्रथ् उ.
१७७८. छद अपवारणे १८३३ छद् उ.
१७७९. तनु श्रद्धोपकरणयोः, उपसर्गाच्चदैर्घ्ये, चन श्रद्धोपहननयोः इत्येके १८४० तन् उ.
१७८०. वद सन्देशवचने १८४१ वद् उ.
१७८१. वच परिभाषणे १८४२ वच् उ.
१७८२. आङः षद पद्यर्थे १८३१ आसद् उ.

इदुपध आधृषीय धातु

१७८३. रिच वियोजन - सम्पर्चनयोः १८१६ रिच् उ.
१७८४. शिष असर्वोपयोगे १८१७ शिष् उ.
१७८५. युज संयमने १८०६ युज् उ.
१७८६. जुष परितर्कणे १८३४ जुष् उ.

ऋदुपध आधृषीय धातु

१७८७. पृच संयमने १८०७ पृच् उ.
१७८८. वृजी वर्जने १८१२ वृज् उ.
१७८९. तृप तृप्तौ १८१९ तृप् उ.
१७९०. छृदी संदीपने १८२० छृद् उ.
१७९१. दृभी ग्रन्थे (भये) १८२१ दृभ् उ.
१७९२. दृभ सन्दर्भे १८२२ दृभ् उ.
१७९३. मृजू शौचा - लङ्कारयोः १८४८ मृज् उ.
१७९४. मृष तितिक्षायाम् १८४९ मृष् उ.
१७९५. धृष प्रसहने १८५० धृष् उ.

शेष आधृषीय धातु

१७९६. ग्रन्थ बन्धने १८२५ ग्रन्थ उ.
१७९७. ग्रन्थ सन्दर्भे १८३८ ग्रन्थ् उ.
१७९८ श्रन्थ सन्दर्भे १८३७ श्रन्थ उ.
१७९९. शुन्ध शौचकर्मणि १८३२ शुन्ध् उ.

१८००.	हिसि हिंसायाम् १८२९	हिंस्	उ.
१८०१.	कठि शोके, प्रायेण उत्पूर्वः १८४७	कन्ठ	उ.
१८०२.	अर्च पूजायाम् १८०८	अर्च्	उ.
१८०३.	ईर क्षेपे १८१०	ईर्	उ.
१८०४.	शीक आमर्षणे १८२६	शीक्	उ.
१८०५.	चीक आमर्षणे १८२७	चीक्	उ.
१८०६.	अर्द हिंसायाम् १८२८	अर्द्	उ.
१८०७.	अर्ह पूजायाम् १८३०	अर्ह्	उ.
१८०८.	आप्लृ लम्भने १८३९	आप्	उ.
१८०९.	मान पूजायाम् १८८३	मान्	उ.
१८१०.	गर्ह विनिन्दने १८४५	गर्ह्	उ.
१८११.	मार्ग अन्वेषणे १८४६	मार्ग्	उ.
	कत्र शैथिल्ये	कत्र्	आ.
	कर्त इत्येके १९१४	कर्त्	आ.
	अर्थ उपयाच्ञायाम् १९०५	अर्थ्	आ.
	गर्व माने १९०७	गर्व	आ.
	मूत्र प्रस्रवणे १९०९	मूत्र	आ.
	पत गतौ, वा णिजन्तः, वा अदन्त इत्येके १८६१	पत्	उ.

चुरादिगण का आकुस्मीय अन्तर्गण

अजन्त आकुस्मीय धातु

१८१२.	यु जुगुप्सायाम् १७१०	यु	आ.
१८१३.	गृ विज्ञाने १७०७	गृ	आ.

अदुपध आकुस्मीय धातु

१८१४.	डप सङ्घाते १६७६	डप्	आ.
१८१५.	स्पश ग्रहण - संश्लेषणयोः १६८०	स्पश्	आ.
१८१६.	लल ईप्सायाम् १६८७	लल्	आ.
१८१७.	शठ श्लाघायाम् १६९१	शठ्	आ.
१८१८.	स्मय वितर्के १६९३	स्मय्	आ.
१८१९.	शम आलोचने १६९५	शम्	आ.
१८२०.	गल स्रवणे १६९९	गल्	आ.
१८२१.	भल आभण्डने १७००	भल्	आ.
१८२२.	मद तृप्तियोगे १७०५	मद्	आ.

इदुपध आकुस्मीय धातु

१८२३.	चित संचेतने १६७३	चित्	आ.
१८२४.	डिप संघाते १६७७	डिप्	आ.
१८२५.	दिवु परिकूजने	दिव्	आ.
१८२६.	विद चेतनाख्यान - निवासेषु १७०६	विद्	आ.

उदुपध आकुस्मीय धातु

१८२७.	त्रुट छेदने १६९८	त्रुट्	आ.

ऋदुपध आकुस्मीय धातु

१८२८.	वृष शक्तिबन्धने १७०४	वृष्	आ.

शेष आकुस्मीय धातु

१८२९.	तर्ज तर्जने १६८१	तर्ज्	आ.
१८३०.	दशि दंशने १६७४	दंश्	आ.
१८३१.	दसि दर्शन - दंशनयोः १६७५	दंस्	आ.
१८३२.	तत्रि कुटुम्ब - धारणे १६७८	तन्त्र्	आ.
१८३३.	मत्रि गुप्तपरि - भाषणे १६७९	मन्त्र्	आ.
१८३४.	भर्त्स तर्जने १६८२	भर्त्स्	आ.
१८३५.	बस्त अर्दने १६८३	बस्त्	आ.
१८३६.	गन्ध अर्दने १६८४	गन्ध्	आ.
१८३७.	विष्क हिंसायाम् १६८५	विष्क्	आ.
१८३८.	निष्क परिमाणे १६८६	निष्क्	आ.
१८३९.	कूण सङ्कोचे १६८८	कूण्	आ.
१८४०.	तूण पूरणे १६८९	तूण्	आ.
१८४१.	भ्रूण आशा - विशङ्कयोः १६९०	भ्रूण्	आ.
१८४२.	यक्ष पूजायाम् १६९२	यक्ष्	आ.
१८४३.	गूर उद्यमने १६९४	गूर	आ.
१८४४.	लक्ष आलोचने १६९६	लक्ष्	आ

१८४५.	कुत्स अनक्षेपणे १६९७	कुत्स्	आ.
१८४६.	कूट आप्रदाने १७०१ अवसादने इत्येके	कूट्	आ.
१८४७.	कुट्ट प्रतापने १७०२	कुट्ट्	आ.
१८४८.	वञ्चु प्रलम्भने	वन्च्	उ.
१८४९.	मान स्तम्भने १७०९	मान्	आ.
१८५०.	कुस्म नाम्नो वा १७११	कुस्म्	आ.

चुरादिगण के अदन्त धातुओं का वर्ग

अदन्त धातुओं के अन्तर्गत, आगर्वीय धातु

१८५१.	पद गतौ	पद्	आ.
१८५२.	गृह ग्रहणे १८९९	गृह्	आ.
१८५३.	मृग अन्वेषणे १९००	मृग्	आ.
१८५४.	कुह विस्मापने १९०१	कुह्	आ.
१८५५.	शूर १९०२	शूर्	आ.
१८५६.	वीर विक्रान्तौ १९०३	वीर्	आ.
१८५७.	स्थूल परिबृंहणे १९०४	स्थूल्	आ.
१८५८.	सत्र सन्तान - क्रियायाम् १९०६	सत्र्	आ.
१८५९.	अर्थ उपयाच्ञा - याम् १९०५	अर्थ्	आ.
१८६०.	गर्व माने १९०७	गर्व	आ.

चुरादिगण के शेष अदन्त धातु

१८६१.	कथ वाक्यप्रबन्धे १८५१	कथ्	उ.
१८६२.	वर ईप्सायाम् १८५२	वर्	उ.
१८६३.	गण संख्याने १८५३	गण्	उ.
१८६४.	शठ १८५४	शठ्	उ.
१८६५.	श्वठ सम्यगव - भाषणे १८५५	श्वठ्	उ.
१८६६.	पट १८५६	पट्	उ.
१८६७.	वट ग्रन्थे	वट	उ.
१८६८.	रह त्यागे १८५८	रह्	उ.
१८६९.	स्तन देवशब्दे १८५९	स्तन्	उ.
१८७०.	गद देवशब्दे १८६०	गद्	उ.
१८७१.	पत गतौ वा णिजन्तः, वा अदन्त इत्येके १८६१	पत्	उ.
१८७२.	पष अनुपसर्गात् - गतौ १८६२	पष्	उ.
१८७३.	स्वर आक्षेपे १८६३	स्वर्	उ.
१८७४.	रच प्रतियत्ने १८६४	रच्	उ.
१८७५.	कल गतौ, संख्याने - च १८६५	कल्	उ.
१८७६.	चह परिकल्कने १८६६	चह्	उ.
१८७७.	मह पूजायाम् १८६७	मह्	उ.
१८७८.	सार १८६८	सार्	उ.
१८७९.	कृप १८६९	कृप्	उ.
१८८०.	श्रथ दौर्बल्ये १८७०	श्रथ्	उ.
१८८१.	स्पृह ईप्सायाम् १८७१	स्पृह्	उ.
१८८२.	भाम क्रोधने १८७२	भाम्	उ.
१८८३.	सूच पैशुन्ये १८७३	सूच्	उ.
१८८४.	खेट भक्षणे, १८७४ खोट इति अन्ये	खेट्	उ.
१८८५.	क्षोट क्षेपे १८७५	क्षोट्	उ.
१८८६.	गोम उपलेपने १८७६	गोम्	उ.
१८८७.	कुमार क्रीडायाम् १८७७	कुमार्	उ.
१८८८.	शील उपधारणे १८७८	शील्	उ.
१८८९.	साम सान्त्व - प्रयोगे १८७९	साम्	उ.
१८९०.	वेल कालोपदेशे, काल इति पृथग् धातुरित्येके १८८०	वेल्	उ.
१८९१.	पल्यूल लवन - पवनयोः १८८१	पल्यूल्	उ.
१८९२.	वात सुखसेवनयोः, गतिसुखसेवनेषु इति केचित् १८८२	वात्	उ.
१८९३.	गवेष मार्गणे १८८३	गवेष्	उ.

१८९४.	वास उपसेवायाम् १८८४	वास्	उ.
१८९५.	निवास - आच्छादने १८८५	निवास्	उ.
१८९६.	भाज पृथक्कर्मणि १८८६	भाज्	उ.
१८९७.	सभाज प्रीतिदर्शनयोः, प्रीतिसेवनयो - रित्येके १८८७	सभाज्	उ.
१८९८.	ऊन परिहाणे १९८८	ऊन	उ.
१८९९.	ध्वन शब्दे १८८९	ध्वन्	उ.
१९००.	कूट परितापे १८९० परिदाह इत्यन्ये	कूट्	उ.
१९०१.	संकेत १८९१	संकेत्	उ.
१९०२.	ग्राम १८९२	ग्राम्	उ.
१९०३.	कुण १८९३	कुण्	उ.
१९०४.	गुण चामन्त्रणे १८९४	गुण्	उ.
१९०५.	केत श्रावणे - निमन्त्रणे १८९५	केत्	उ.
१९०६.	कूट सङ्कोचनेऽपि - १८९६	कूट्	उ.
१९०७.	स्तेन चौर्ये १८९७	स्तेन्	उ.
१९०८.	सूत्र वेष्टने १९०८	सूत्र्	उ.
१९०९.	मूत्र प्रस्रवणे १९०९	मूत्र्	उ.
१९१०.	रूक्ष पारुष्ये १९१०	रूक्ष्	उ.
१९११.	पार १९११	पार्	उ.
१९१२.	तीर कर्मसमाप्तौ १९१२	तीर्	उ.
१९१३.	पुट संसर्गे १९१३	पुट्	उ.
१९१४.	धेक दर्शने १९१४	धेक्	उ.
१९१५.	कत्र शैथिल्ये कर्त इत्येके	कत्र्	उ.

प्रातिपदिकाद्धात्वर्थे बहुलमिष्ठवच्च।
तत्करोति तदाचष्टे।
तेनातिक्रामति।
धातु रूपं च।
आख्यानात्कृतस्तदाचष्टे कृल्लुक्प्रकृति - प्रत्ययापत्तिः प्रकृतिवच्च कारकम्।
कर्तृकरणाद्धात्वर्थे।

१९१६.	वष्क दर्शने १९१६	वष्क्	उ.
१९१७.	चित्र चित्रीकरणे - १९१७ कदाचिद्दर्शने	चित्र्	उ.
१९१८.	अंस समाघाते १९१८	अंस्	उ.
१९१९.	वट विभाजने १९१९	वट्	उ.
१९२०.	लज प्रकाशने १९२० वटि लजि इत्येके	लज्	उ.
१९२१.	मिश्र सम्पर्के १९२१	मिश्र्	उ.
१९२२.	सङ्ग्राम युद्धे १९२२ अयमनुदात्तेत्	सङ्ग्राम्	आ.
१९२३.	स्तोम श्लाघायाम् १९२३	स्तोम्	उ.
१९२४.	छिद्र कर्णभेदने करण भेदने इत्येके कर्ण इति धात्वन्तरमित्यपरे १९२४	छिद्र्	उ.
१९२५.	अन्ध दृष्ट्युपघाते उपसंहार इत्येके १९२५	अन्ध्	उ.
१९२६.	दण्ड दण्ड - निपातने १९२६	दण्ड्	उ.
१९२७.	अङ्क पदे लक्षणे - च १९२७	अङ्क्	उ.
१९२८.	अङ्ग १९२८	अङ्ग	उ.
१९२९	सुख १९२९	सुख्	उ.
१९३०.	दुःख तत्क्रियायाम् १९३०	दुःख्	उ.
१९३१.	रस आस्वादन - स्नेहनयोः १९३१	रस्	उ.
१९३२.	व्यय वित्त - समुत्सर्गे १९३२	व्यय्	उ.
१९३३.	रूप रूपक्रियायाम् १९३३	रूप्	उ.
१९३४.	छेद द्वैधीकरणे १९३४	छेद्	उ.
१९३५.	छद अपवारणे १९३५	छद्	उ.

१९३६. लाभ प्रेरणे १९३६ लाभ् उ.
१९३७. व्रण गात्रविचूर्णने १९३७ व्रण् उ.
१९३८. वर्ण वर्णगुणक्रिया - विस्तारवचनेषु १९३८ वर्ण् उ.
१९३९. पर्ण हरितभावे १९३९ पर्ण् उ.
१९४० विष्क दर्शने १९४० विष्क् उ.
१९४१. क्षिप प्ररेणे १९४१ क्षिप् उ.
१९४२. वस निवासे १९४२ वस् उ.
१९४३. तुत्थ आवरणे १९४३ तुत्थ् उ.

कण्ड्वादिगण

१९४४. कुषुभ क्षेपे कुषुभ् प.
१९४५. सुख तत्क्रियायाम् सुख् प.
१९४६. दुःख तत्क्रियायाम् दुःख् प.
१९४७. सपर पूजायाम् सपर् प.
१९४८. अरर आराकर्मणि अरर् प.
१९४९. इषुध शरधारणे इषुध् प.
१९५०. चरण चरण् प.
१९५१. वरण गतौ वरण् प.
१९५२. चुरण चौर्ये चुरण् प.
१९५३. तुरण त्वरायाम् तुरण् प.
१९५४. भुरण धारणपोषणयोः भुरण् प.
१९५५. गद्गद वाक्स्खलने गद्गद् प.
१९५६. लिटअल्पकुत्सनयोः लिट् प.
१९५७. लाट जीवने लाट् प.
१९५८. अगद नीरोगत्वे अगद् प.
१९५९. तरण गतौ तरण् प.
१९६०. अम्बर अम्बर् प.
१९६१. संवर संवरणे संवर् प.
१९६२. वेद धौर्त्ये स्वप्ने च वेद् प.
१९६३. मगध परिवेष्टने मगध् प.
१९६४. लेट् लेट् प.
१९६५. लोट् धौर्त्ये स्वप्ने - पूर्वभावे च लोट् प.
१९६६. लेला दीप्तौ लेला प.
१९६७. मेधा आशुग्रहणे मेधा प.
१९६८. एला एला प.
१९६९. केला केला प.
१९७०. खेला विलासे खेला प.
१९७१. लेखा स्खलने च लेखा प.
१९७२. रेखा श्लाघासादनयोः रेखा प.
१९७३. महीङ् पूजायाम् मही आ.
१९७४. हृणीङ् रोषणे - लज्जायाम् च हृणी आ.
१९७५. कण्डूञ् गात्रविघर्षणे कण्डू उ.
१९७६. मन्तु अपराधे मन्तु प.
१९७७. वल्गु पूजामाधुर्ययोः वल्गु प.
१९७८. असु उपतापे असु प.
१९७९. इरस् इरस् प.
१९८०. इरज् इरज् प.
१९८१. इरज् ईर्ष्यायाम् इर् प.
१९८२. उषस् प्रभातीभावे उषस् प.
१९८३. तन्तस् तन्तस् प.
१९८४. पम्पस् दुःखे पम्पस् प.
१९८५. भिषज् चिकित्सायाम् भिषज् प.
१९८६. भिष्णज् चिकित्सायाम् भिष्णज् प.
१९८७. द्रवस् परितापपरि - चरणयोः द्रवस् प.
१९८८. तिरस् अन्तर्धौ तिरस् प.
१९८९. उरस् बलार्थः उरस् प.
१९९०. पयस् प्रसृतौ पयस् प.
१९९१. संभूयस् प्रभूतभावे संभूयस् प.

❀❀❀

धातु - सूची

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
अ		अदि	४३४	अश	१५२३	इल	१३२५	उङ्	७७
अक	९३९	अन	१०७४	अशू	१२७०	इल	१५८८	उच	११३६
अकि	५२४	अनोरुध	१२२६	अस	२७३	इवि	४२८	उच्छि	४७६
अक्षू	३२	अन्ध	१९२५	अस	१०६७	इष	१२११	उच्छी	४१४
अग	९४०	अबि	५७८	असु	११०८	इष	१५२५	उच्छी	१४२६
अगद	१९५८	अभ्र	८३८	असु	१९७८	इष	१३११	उच्छी	१४२७
अगि	४५७	अम	१८८	अह	१२६५	इषुध	१९४९	उज्झ	१४३५
अघि	५३३	अम	१५६१	अहि	५९०	**ई**		उठ	३४४
अङ्क	१९२७	अम्बर	१९६०	अहि	१७५५	ईक्ष	४२२	उध्रस	१७१३
अङ्ग	१९२८	अय	२४९	अंस	१९१८	ईखि	४५४	उध्रस	१५२४
अज	१३६	अरर	१९४८	**आ**		ईङ्	११९०	उन्दी	१४५६
अजि	१७४७	अर्क	१६६९	आछि	४७५	ईज	४२०	उब्ज	१४३४
अञ्चु	५९७	अर्च	७७१	आप्लृ	१८०८	ईट्	४१०	उभ	१३४५
अञ्चु	७१३	अर्च	१८०२	आप्लृ	१२७७	ईड	१०५१	उम्भ	१३९२
अञ्चु	१७०६	अर्ज	७७५	आस	१०६२	ईड	१६२९	उरस्	१९८९
अञ्चु	१४५६	अर्ज	१६३४	**इ**		ईर	१०५६	उर्द	४०४
अट	१४३	अर्थ	१८५९	इक्	१०२७	ईर	१८०३	उर्वी	३९५
अट्ट	१६४७	अर्द	१८०६	इख	२९०	ईर्क्ष्य	४१२	उष	३५६
अट्ट	७८४	अर्द	७५९	इखि	४५३	ईश	१०५८	उषस्	१९८२
अठि	५५३	अर्ब	८००	इगि	४७३	ईष	४२३	उहिर्	३७४
अड	१७४	अर्व	८५४	इङ्	१०२६	ईष	४१५	**ऊ**	
अड्ड	७९२	अर्ह	८९६	इण्	१०२५	ईर्ष्य	४१३	ऊन	१८९८
अण	१२०६	अर्ह	१६६६	इदि	४३५	ईह	४२४	ऊयी	४२७
अण	१७३	अर्ह	१८०७	इन्धी	१४५८	**उ**		ऊर्ज	१६३५
अत	१२१	अल	१९१	इरस्	१९७९	उक्ष	४१६	ऊर्णुञ्	१०३८
अति	४३३	अव	२०३	इरज्	१९८०	उख	३२६	ऊष	४१७
अद	१०५३			इरज्	१९८१	उखि	४४७	ऊह	४२५

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
ऋ .		कगे	९२२	कल	१८७५	कुड	१४१२	कूट	१८४६
ऋ	२	कच	२४७	कल	१५५३	कुडि	१६८२	कूट	१९००
ऋ	१०९७	कचि	५३७	कष	२०४	कुडि	४७९	कूण	१८३९
ऋच	१३६९	कटी	२३१	कस	९९२	कुडि	५६०	कूल	८२८
ऋच्छ	१४२८	कटे	२८३	कसि	१०६४	कुडि	१६८१	कृञ्	१२६०
ऋज	३८७	कठ	१६०	काक्षि	५०२	कुण	१३५१	कृञ्	१४७२
ऋजि	५४२	कठि	५५६	काचि	५३८	कुण	१९०३	कृड	१४११
ऋणु	१४६७	कठि	१८०१	काश्रृ	७१९	कुत्स	१८४५	कृती	१३०३
ऋधु	१२७५	कड	१४०९	काशृ	१२४४	कुथ	१२१९	कृती	१४४८
ऋधु	११५१	कड	१७७	कासृ	७११	कुथि	४२९	कृप	१८७९
ऋफ	१३७२	कडि	५७३	कि	१०८९	कुद्रि	१६७१	कृप	१७१४
ऋम्फ	१३९०	कड्ड	७९३	किट	२९१	कुन्थ	१५१४	कृपू	३४
ऋषी	१३६८	कण	१७८	किट	३००	कुन्स	११८६	कृवि	३०
ॠ .		कण	९४१	कित	२०	कुप	११३८	कृश	११४८
ॠ	१५०२	कण	१५५९	किल	१३२२	कुप	१७३१	कृष	३८३
ए .		कण्डूञ्	१९७५	कीट	१६१८	कुबि	४८९	कृष	१३६७
एजृ	४१९	कत्र	१९१५	कील	८२७	कुबि	१६९७	कॄ	१५०१
एजृ	४०९	कथ	१८६१	कु	१०३७	कुमार	१८८७	कॄ	१२९५
एठ	४२१	कत्थ	७५७	कुक	३६९	कुर	१३५६	कॄञ्	१४९१
एध	४१८	कदि	४४२	कुङ्	६४	कुर्द	४०५	कॄत	१६०६
एला	१९६८	कदि	९५६	कुङ्	१२८७	कुल	१०००	केत	१९०५
एषृ	४२६	कनी	२३२	कुच	३२८	कुशी	१७४३	केपृ	६८२
ओ .		कपि	५७५	कुच	१००३	कुष	१५१८	केला	१९६९
ओखृ	४०८	कवृ	२७१	कुच	१३९७	कुषुभ	१९४४	केलृ	६५६
ओणृ	४११	कमु	३८	कुजु	३३३	कुंस	११८६	कै	१०२
क .		कर्ज	७७९	कुञ्च	५९४	कुसि	१७४१	क्नसु	११९९
कक	२४२	कर्द	७६२	कुट	१३९५	कुस्म	१८५०	क्नूञ्	१४८२
ककि	५२७	कर्ब	८०५	कुट्ट	१६४४	कुह	१८५४	क्नूयी	६२५
कख	१२२	कर्व	८५१	कुट्ट	१८४७	कूज	७७४	क्मर	२००
कखे	९१७	कल	२६२	कुठि	४४८३	कूट	१९०६	क्रथ	९४९

धातु	क्रमाङ्क
क्रदि	९५७
क्रदि	४४३
क्रन्द	१६७१
क्रप	९३१
क्रमु	१३
क्रीञ्	१४७५
क्रीडृ	६४३
क्रुञ्च	५९५
क्रुड	१४२३
क्रुध	११२८
क्रुश	१००२
क्लथ	९४९
क्लिदि	४४५
क्लदि	४४४
क्लदि	९५८
क्लमु	११५९
क्लिदि	५१७
क्लिदू	११२१
क्लिश्	१२१२
क्लिशू	१५२२
क्लीबृ	६८८
क्लेश	८६३
क्वण	१७९
क्वथे	९९६
क्षजि	९५५
क्षणु	१४६५
क्षपि	१६९१
क्षमू	११५८
क्षमूष्	२७०
क्षर	९९०
क्षल	१५५१
क्षि	१२८४
क्षि	१२५३
क्षि	५३
क्षिणु	१४६६
क्षिप	१२०८
क्षिप	१९४१
क्षिप	१३१७
क्षिवु	३०९
क्षीज	७८२
क्षीबृ	६८९
क्षीष्	१४८५
क्षु	१०३२
क्षुदिर्	१४५१
क्षुध	११२९
क्षुभ	१०९
क्षुभ	११४४
क्षुभ	१५१९
क्षुर	१३५९
क्षेवु	७२९
क्षोट	१८८५
क्षै	९९
क्ष्णु	१०३३
क्ष्मायी	६२७
क्ष्मील	८२३
क्ष्विदा	११२३
क्ष्वेलृ	६५८
ख.	
खच	१५३१
खज	१३७
खजि	५४५
खट	१५३
खट्ट	१६१३
खड	१५५०
खडि	१६८०
खडि	५७४
खद	१२०
खनु	२८२
खर्ज	७८०
खर्द	७६३
खर्ब	८०६
खर्व	८५२
खल्ल	८३७
खल	१९४
खष	२०५
खादृ	६३६
खिट	२९२
खिद	१२१३
खिद	१३०२
खिद	१४५४
खुजु	३३४
खुडि	१६८४
खुर	१३५५
खुर	१३५७
खुर्द	४०६
खेट	१८८४
खेला	१९७०
खेलृ	६५७
खै	९८
खोर्ऋ	६६३
खोलृ	६६२
ख्या	१०२२
ग.	
गज	१४०
गज	१५५७
गजि	५५०
गड	९३४
गडि	४३७
गडि	४८८
गण	१८६३
गद	१२३
गद्गद	१९५५
गदी	१८७०
गन्ध	१८३६
गम्लृ	१६
गर्ज	७७७
गर्द	७६०
गर्ब	८०७
गर्व	८५३
गर्व	१८६०
गर्ह	८६८
गर्ह	१८१०
गल	१९५
गल	१८२०
गल्भ	७९७
गल्ह	८६९
गवेष	१८९३
गा	१०८८
गाङ्	४८
गाधृ	७२०
गाहू	६३१
गु	१२८५
गुङ्	६४
गुज	१३९८
गुजि	४७२
गुड	१३९९
गुडि	१६८३
गुण	१९०४
गुद	३६६
गुध	१२२१
गुध	१५१७
गुप	१८
गुप	११३९
गुप	१७२९
गुपू	६
गुफ	१३४४
गुम्फ	१३९१
गुरी	१४२५
गुर्द	४०७
गुर्द	१६२८
गुर्वी	४००
गुहू	१७
गूर	१८४३

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
गूरी	१२३९	ग्रसु	२६७	घृ	१५३८	चर्च	८९४	चुक्क	१६५८
गृ	८०	ग्रह	१५३३	घृणि	५८७	चर्च	१४३१	चुच्य	७७४
गृ	१८१३	ग्राम	१९०२	घृणु	१४६९	चर्च	१६३०	चुट	१४०६
गृज	३७४	ग्रुचु	३३१	घृषु	३७८	चर्ब	८११	चुट	१५९५
गृजि	५५१	घ.		घ्रा	४३	चर्व	८५०	चुट्ट	१६४६
गृधु	११५२	घघ	१३३	ङ.		चल	९८०	चुटि	१७००
गृह	१८५२	घट	९२३	ङुङ्	१९	चल	१३१५	चुड	१४२१
गृहू	३९३	घट	१५६३	च.		चल	१५५४	चुडि	४८०
गॄ	१५०३	घट	१७२२	चक	२४३	चलि	९६३	चुड्ड	७९२
गॄ	१२९६	घट्ट	१६११	चक	१३९	चष	२७५	चुद	१५९०
गेपृ	६८३	घटि	७४३	चक्क	१६५७	चह	२१७	चुप	३४६
गेवृ	६९७	घटि	१७४४	चकासृ	१०८०	चह	१८७६	चुबि	४९२
गेषृ	७०३	घस्लृ	२३८	चक्षिङ्	१०६०	चह	१५७५	चुबि	१६९३
गै	१०३	घिणि	५८५	चञ्चु	५९९	चायृ	७४५	चुर	१५८९
गोम	१८८६	घुङ्	६५	चट	१५६२	चि	१७२०	चुरण	१९५२
गोष्ट	७८७	घुट	९०३	चडि	५६८	चिञ्	१२५०	चुल	१५९४
ग्लसु	२६८	घुट	१४१४	चण	९४३	चिञ्	१५३५	चुल्ल	८३४
ग्लह	२६५	घुण	३५३	चते	२८५	चिट	२९५	चूरी	१२४३
ग्लुचु	३३२	घुण	१३५४	चदि	४४०	चित	१८२३	चूर्ण	१६११
ग्लुञ्चू	६०४	घुणि	५८६	चदे	२८६	चिति	१६७२	चूर्ण	१६४२
ग्लेपृ	६८०	घुर	१३६०	चप	१६८	चिती	२८७	चूष	८८३
ग्लेपृ	६८४	घुषि	५८४	चपि	१६९०	चित्र	१९१७	चृती	१३७४
ग्लेवृ	६९८	घुषिर्	३५४	चमु	३८	चिरि	१२५४	चेलृ	६५७
ग्लै	८९	घुषिर्	१६०४	चमु	१२६९	चिल	१३२४	चेष्ट	७८६
ग्रथि	५१९	घूर्ण	८११	चय	२५३	चिल्ल	८३६	च्यु	१५३६
ग्रन्थ	१५१३	घूर्ण	१४३६	चर	२०१	चीक	१८०५	च्युङ	६८
ग्रन्थ	१७९७	घूरी	१२४०	चर	१५७१	चीभृ	६९१	च्युतिर	३२४
ग्रन्थ	१७९६	घृ	८१	चरण	१९५०	चीव	१७६०	छ.	
ग्रस	१७१५	घृ	१०९५	चर्करीतं	१०७१	चीवृ	७४४	छजि	१६९२

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
तप	२२९	तुजि	५४८	तुस	३६०	त्रुट	१८२७	दल	१७१६
तप	१२०२	तुजि	१६७६	तुहिर्	३६१	त्रुप	३५०	दंश	२५
तप	१७७६	तुजि	१७३३	तूण	१८४०	त्रुफ	३५२	दशि	१७४२
तमु	११५४	तुट	१४०५	तूरी	१२३७	त्रुम्प	६०६	दशि	१८३०
तय	२५४	तुड	१४१५	तूल	८३०	त्रुम्फ	६०८	दसि	१८३१
तरण	१९५९	तुडि	५६५	तूष	८८४	त्रैङ्	११४	दसि	१७४८
तर्क	१७६३	तुड्ड	३४८	त्रक्ष	८७५	त्रौकृ	७३७	दसु	११११
तज	१८२९	तुण	१३५३	तृणु	१४६८	त्वक्ष	६३०	दह	२२८
तर्ज	७८१	तुण	१३४८	तृदिर्	१४४४	त्वच	१४३३	दाञ्	१०८६
तर्द	७६१	तुत्थ	१९४३	तृप	११६३	त्वगि	४६६	दाण्	४७
तल	१५५२	तुद	१३३८	तृप	१७८९	त्वञ्चु	६०१	दान	२३
तसि	१७०४	तुप	३४९	तृप	१३७०	त्वर	९३२	दाप्	१०२१
तसु	१११०	तुप	१३४२	तृम्फ	१३८६	त्विंष	३२२	दाश	१२७६
तायृ	६९४	तुफ	३५१	तृषा	११४९	त्सर	१९९	दाशृ	७४५
तिक	१२७१	तुफ	१३४३	तृह	१४६२		थ.	दासृ	७४९
तिकृ	३१८	तुबि	४९१	तृहू	१३८१	थुड	१४१६	दिवि	४९७
तिग	१२७२	तुबि	१६९९	तृंहू	१३९४	थुर्वी	३९७	दिवु	१८२५
तिज	१९	तुभ	९०९	तॄ	८७		द.	दिवु	११८१
तिज	१५८६	तुभ	११४५	तेज	७८१	दक्ष	९२९	दिवु	१७०७
तिपृ	३२०	तुभ	१५२१	तेपृ	६७८	दक्ष	८६४	दिश	१३१६
तिम	१२०९	तुम्प	६०५	तेवृ	६९४	दघ	१२६८	दिह	१०६९
तिल	३०१	तुम्प	१३८७	त्यज	२३०	दण्ड	१९२६	दीक्ष	८६५
तिरस्	१९८८	तुम्फ	६०७	त्रकि	५३०	दद	२४०	दीङ	११७४
तिल	१३२३	तुम्फ	१३८८	त्रदि	४४१	दध	२३९	दीधीङ्	१०७७
तिल	१५८५	तुर	११०६	त्रपूष्	२६९	दमु	११५५	दीपी	१२३५
तीकृ	७३४	तुरण	१९५३	त्रस	१५६९	दम्भु	१२८०	दु	५९
तीव	८४४	तुर्वी	३९६	त्रसि	१७३९	दय	२५६	दु	१२५८
तीर	१९१२	तुल	१५९१	त्रसी	१२००	दरिद्रा	१०७६	दुःख	१९३०
तुज	३३५	तुष	११२६	त्रुट	१४०४	दल	१९७	दुःख	१९४६

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
दुर्वी	३९८	द्राक्षि	५०५	धूप	१७६५	ध्वन	९२९	पट	१७२१
दुल	१५९२	द्राखृ	५८६	धूरी	१२३८	ध्वन	१८९९	पट	१८६६
दुष	११२७	द्राघृ	६६७	धूस	१६१७	ध्वसुं	६१८	पठ	१५७
दुह	१०६८	द्राडृ	६७५	धृङ्	८३	ध्वाक्षि	५०७	पठ	१७६६
दुहिर्	३६२	द्राह	७१८	धृङ्	१२९४	ध्वृ	८२	पडि	५७१
दूङ्	११७३	द्रु	६०	धृज	३७३	न.		पडि	१६८८
दृ	१२६४	द्रुह	११६५	धृजि	५४२	नक्क	१६५५	पण	८
दृङ्	१२९३	द्रूञ्	१४८१	धृञ्	८६	नट	१५४	पत	१८७१
दृप	११६४	द्रेकृ	७२८	धृष	१७९५	नट	१३६	पत्लृ	९९५
दृप	१३७१	द्रै	९२	धृषा	१२७४	नट	१५४२	पथि	१६७८
दृभ	१७९२	द्विष	१०५१	धृषा	१९१४	नट	१७२४	पथे	९९७
दृभी	१३७३	ध.		धेट्	८८	नदि	४३९	पद	१२०५
दृभी	१७९१	धक्क	१६५६	धोर्ऋ	६६४	नल	१७२६	पद	१८५१
दृम्फ	१३८९	धन	११००	ध्मा	४४	नद	१२६	पन	९
दृशिर्	१	धवि	५०१	ध्यै	९४	नस	१५७०	पम्पस्	१९८४
दृह	३८१	धाञ्	१०८७	ध्रज	१३४	नाथृ	७२२	पयस्	१९९०
दृहि	५०९	धावु	८५७	ध्रजि	४७७	नाधृ	७२३	पय	२५१
दॄ	९७०	धि	१२८३	ध्रन	१८३	निवास	१८९५	पर्ण	१९३९
दॄ	१४९८	धिक्ष	८५९	ध्राक्षि	५०६	निष्क	१८३८	पर्द	७५६
देङ्	११३	धिवि	२९	ध्राखृ	६३५	नील	८२५	पर्प	७९९
देवृ	६९६	धिष	११०२	ध्राड्	६७६	नृती	१२२८	पर्ब	८०१
दैप्	११०	धीङ्	११७६	ध्रु	५८	नॄ	९६८	पर्व	८४७
दो	११९७	धुक्ष	८५८	ध्रु	१२८६	नॄ	१५००	पल	९८७
द्यु	१०३५	धुञ्	१२५७	ध्रेकृ	७२९	प.		पल्यूल	१८९१
द्युत	९०१	धुर्वी	३९९	ध्रै	९३	पक्ष	१६४०	पश	१५६०
द्यै	९१	धू	१२८९	ध्वज	१३५	पचष्	२७८	पष	१८७२
द्रम	१८९	धूञ्	१४८९	ध्वजि	५४४	पचि	५४१	पसि	१६८९
द्रवस्	१९८७	धूञ	१७७२	ध्वण	१८२	पचि	१६९६	पा	४२
द्रा	१०१६	धूप	७	ध्वन	९७५	पट	१४४	पा	१०१८

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
पार	१९११	पुथ	१२२०	पृथ	१६०५	प्लुङ्	७१	बिदि	४३६
पाल	१६६०	पुथि	४३०	पृषु	३७५	प्लुष	११३२	बिल	१३२७
पि	१२८२	पुर	१३६१	पॄ	१०९८	प्लुष	१५२८	बिल	१५८४
पिच्छ	१५८२	पुल	९९९	पॄ	१४९४	प्लुष	१२१८	बिस	१११८
पिजि	१०४९	पुल	१५९३	पॄ	१५३९	प्लुषु	३५९	बुक्क	७७०
पिजि	१६७७	पुष	३५७	पेलृ	६५९	प्सा	१०१७	बुक्क	१६३१
पिजि	१७३५	पुष	११२४	पेवृ	६९९	फ.		बुगि	४६९
पिट	२९८	पुष	१५२९	पेषृ	७०४	फक्क	७६७	बुध	१२२४
पिठ	३१५	पुष	१७१८	पेसृ	६६५	फण	९७३	बुध	१००४
पिडि	५६४	पुष्प	१२३२	पै	१०६	फल	१९२	बुधिर्	३६३
पिवि	४९३	पुस्त	१६५३	पैणृ	६५२	फला	२३७	बुन्दिर्	७१३
पिडि	१७०२	पुंस	१६०७	प्यायी	६२७	फुल्ल	८३४	बुस	११३३
पिश	१३०४	पूङ्	७४	प्यैङ्	६३	फेलृ	६६०	बुस्त	१६५४
पिष्लृ	१४६०	पूज	१६२०	प्रच्छ	१३०७	ब.		बृह	३८२
पिस	१५७८	पूञ्	१४८७	प्रथ	९२५	बद	११९	बृहि	४१०
पिसि	१७४०	पूयी	६२४	प्रथ	१५४५	बध	२२	बृहि	१७४५
पिसृ	३१०	पूरी	१२३६	प्रस	९२६	बध	१५४४	ब्रूञ्	१०४२
पीङ्	११८९	पूरी	१७६६	प्रा	१०२३	बन्ध	१५०९	ब्रूस	१६६२
पीड	१६३८	पूल	८३१	प्रीङ्	११९१	बर्ब	८०३	ब्ली	१५०७
पील	८२४	पूल	१६१६	प्रीञ्	१४७६	बर्ह	८७२	भ.	
पीव	८४२	पूर्व	८४६	प्रीञ्	१७७०	बर्ह	१६६७	भक्ष	१६४३
पुट	१३९६	पूष	८८५	प्रुङ्	७०	बर्ह	१६२७	भज	२८०
पुट	१९१३	पृ	१२६२	प्रुड	३४०	बल	९८७	भज	१५६५
पुट	१७२७	पृङ्	१२९१	प्रुषु	१५२७	बल	१५७७	भजि	१७३७
पुटि	१७५२	पृच	१७८७	प्रुषु	३५८	बल्ह	८७१	भञ्जो	१४४३
पुट्ट्	१६४५	पृची	१०४५	प्रेषृ	७०७	बस्त	१८३५	भट	१५१
पुड	१४१३	पृची	१४४१	प्रोथृ	७३९	बाडृ	६७४	भट	९३६
पुण	१३४९	पृड	१३७६	प्लिह	३१९	बाधृ	७२१	भडि	५६३
पुथ	१७३०	पृण	१३७७	प्ली	१५०३	बिट	२४९	भडि	१६८७

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
भण	१७६	भृञ्	८४	मगध	१९६३	मर्व	८४९	मिदा	११२२
भदि	५१४	भृञ्	१०९३	मगि	४५९	मल	२६०	मिदि	१६७४
भर्व	८०५	भृशि	१७४९	मघि	४७०	मल्ल	८१५	मिदृ	३२३
भर्त्स	१८३४	भृशु	११४६	मघि	५३५	मव	२०२	मिल	१३३७
भल	२६१	भॄ	१४९६	मच	२४८	मव्य	८१८	मिष	१३३२
भल	१८२१	भेषृ	७४७	मचि	५४०	मष	२१८	मिषु	३०६
भल्ल	८१६	भ्यस	२६४	मठ	१५९	मष	२०८	मिवि	४९४
भष	२११	भ्रक्ष	९००	मठि	५५५	मस्क	७६७	मिश	३१२
भस	१०९९	भ्रण	१८१	मठि	५५७	मसी	१११३	मिश्र	१९२१
भा	१०१३	भ्रमु	१२	मडि	५७८	मस्जो	१३१०	मिष	१३२१
भाज	१८९६	भ्रमु	११५७	मडि	५६२	मह	२१६	मिषु	२५२
भाम	८१३	भ्रंशु	११८७	मडि	१६८६	मह	१८७७	मी	१७६९
भाम	१८८२	भ्रस्ज	१३०८	मण	१७७	महि	५८९	मीङ्	११७७
भाष	८६७	भ्रंशु	६२०	मत्रि	१८३३	महि	१७५७	मीञ्	१४७८
भासृ	६६५	भ्राजृ	६७२	मथि	४३२	महीङ्	१९७३	मीमृ	६५४
भिक्ष	८६३	भ्राजृ	९७८	मथे	९९८	मा	१०२४	मील	८२१
भिदिर्	१४५०	भ्राषृ	१०	मद	१८२२	माक्षि	५०४	मीव	८४४
भिषज्	१९८५	भ्री	१४८४	मदि	५१५	माङ्	१०८३	मुच	१६०१
भिष्णज्	१९८६	भ्रूण	१८४१	मदी	११६०	माङ्	११८८	मुच्लृ	१२९७
भी	१०९०	भ्रेजृ	६७१	मदी	९६६	मान	२१	मुचि	५३९
भुज	१४४४	भ्रेषृ	६९९	मन	१२०७	मान	१८४९	मुज	३३६
भुजो	१३६३	भ्रेषृ	७४८	मनु	१४७१	मान	१८०९	मुजि	५५२
भुवो	१५३७	भ्लक्ष	९०१	मन्थ	५९२	मार्ग	१८११	मुट	१४०३
भुरण	१९५४	भ्लाशृ	११	मन्थ	१५११	मार्ज	१६२१	मुट	१५९६
भू	७३	भ्लेषृ	७४९	मन्तु	१९७६	माहृ	७५१	मुड	३३९
भू	१७७१	म.		मभ्र	७९५	मिच्छ	१४२९	मुडि	५६५
भूष	८९३	मकि	५२६	मय	२५२	मिजि	१७३४	मुडि	५६८
भूष	१६३६	मख	१२९	मर्च	१६२२	मिञ्	१२४९	मुण	१३५०
भृजी	३८८	मखि	४४९	मर्ब	७५९	मिदा	९१४	मुद	३६५

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
मुद	१६००	मेङ्	११२	यसु	११७१	रट	१६१	रिगि	४६४
मुर	१३५८	मेदृ	७४१	या	२०९२	रण	१७४	रिच	१७८३
मुर्छा	४०२	मेधृ	७४२	याचृ	७३९	रण	९४३	रिचिर्	१४३९
मुर्वी	३९४	मेधा	१९६७	यु	१०३०	रद	१२४	रिफ	१३१९
मुष	१५३०	मेपृ	६३८	यु	१८१२	रध	११६१	रिवि	४९९
मुस	११३४	मेवृ	७०१	युगि	४६७	रप	१७०	रिश	१३३४
मुस्त	१६१२	म्रा	४६	युच्छ	७७४	रफ	१७२	रिष	१११९
मुह	११६६	म्रक्ष	१६२४	युज	१२२७	रफि	५८३	रिष	३०३
मूङ्	७५	म्रद	९२८	युज	१७८५	रबि	५७६	री	१५०५
मूत्र	१९०९	म्रुचु	३२९	युजिर्	१४४२	रभ	२२३	रीङ्	११७८
मूल	८३३	म्रुञ्चु	६०३	युञ्	१४८०	रमु	९९४	रु	१०३९
मूल	१६५९	म्रेडृ	६४३	युतृ	३६७	रय	२५७	रुङ्	७२
मूष	८८७	म्लुचु	३३०	युध	१२२५	रवि	५००	रुच	९०३
मृक्ष	८८१	म्लुञ्चु	६०४	युप	११४०	रस	२१३	रुज	१७१७
मृग	१८५३	म्लेच्छ	७७३	यूष	८९१	रस	१९३१	रुजो	१३६२
मृङ्	१२९२	म्लेच्छ	१६२५	यौटृ	६४१	रह	२१५	रुट	९०५
मृजू	१०५०	म्लेटृ	६४२	र.		रह	१८६८	रुट	१७३२
मृजू	१७९३	म्लेवृ	७०२	रक	१५६७	रह	१५७६	रुटि	४८१
मृड	१५१६	म्लै	९०	रक्ष	८७५	रहि	५०८	रुठ	३४२
मृड	१४२४	य.		रख	१३१	रहि	१७५६	रुठि	४८६
मृड	१३७५	यक्ष	१८४२	रखि	४५०	रा	१०१९	रुदिर्	१०७१
मृण	१३७९	यज	१००६	रगि	४५५	राखृ	६३३	रुधिर्	१४५७
मृद	१५१५	यत	१५६६	रगे	९१७	राघृ	७३६	रुप	११४१
मृधू	३९२	यती	२६६	रघि	५३१	राजृ	९७७	रुश	१३६५
मृश	१३८५	यत्रि	१६७०	रघि	१७५३	राध	१२७८	रुशि	१७५०
मृष	१२३०	यष	१७८	रच	१८७४	राधो	१२४६	रुष	३५५
मृष	१७९४	यम	१५७४	रञ्ज	२८	रासृ	७१५	रुष	११३७
मृषु	३७७	यम	१५	रञ्ज	११८५	रि	१२८१	रुष	१६०२
मॄ	१४९७	यम	२२६	रट	१४५	रि	१२५२	रुसि	१७५१

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
रूक्ष	१९१०	लजि	१७४६	लिगि	१६०५	लूञ्	१४८८	वटि	१६८५
रूप	१९३३	लजी	१४३७	लिट	१९५६	लूष	८८८	वठ	१५८
रूष	८८९	लट	१४६	लिप	१३००	लेखा	१९७१	वठि	५५४
रूह	१००५	लड	१५४०	लिश	१२१५	लेपृ	६८८	वडि	५६१
रेकृ	७३१	लड	१६५	लिष	१३३५	लेट्	१९६४	वण	१७५
रेखा	१९७२	लडि	९६४	लिह	१०७०	लेला	१९६६	वद	१०१०
रेटृ	८९९	लडि	१६७५	ली	१५०६	लोकृ	७२७	वद	१७८०
रेपृ	६८७	लडि	१७५८	ली	१७६७	लोकृ	१७६१	वदि	५१३
रेधृ	६४५	लप	१७१	लीङ्	११७९	लोचृ	६७०	वन	१८५
रेवृ	७०३	लबि	५७९	लुजि	१७३६	लोचृ	१७६२	वन	१८६
रेषृ	७०९	लबि	५७७	लुट	३३८	लोट	१९६५	वन	९५१
रै	९५	लभष्	२२५	लुट	९०६	लोडृ	६४९	वनु	१४७०
रोडृ	६४८	लर्ब	८०३	लुट	११३५	लोष्ट	७८९	वनु	९०५
रौडृ	६४७	लल	१८१६	लुट	१७२८	व.		वप्	१००७
ल.		लष	१४	लुट	१४१०	वकि	५२८	वभ्र	८४०
लक्ष	१८४४	लष	१५५५	लुठ	३४३	वकि	५२५	वम	९९३
लक्ष	१६३७	लस	२१४	लुठ	९०७	वक्ष	८८०	वय	२५०
लख	१३२	लस	१५६४	लुठि	४८४	वख	८०	वर	१८६२
लखि	४५२	लस्जी	१३०९	लुठि	४८७	वखि	४४८	वरण	१९५१
लग	१५६८	ला	१०२०	लुठि	४८२	वगि	४५८	वर्च	७७१
लगि	४५६	लाखृ	६३४	लुण्ट	१६१०	वघि	५३४	वर्ण	१६४१
लगे	९१८	लाघृ	६६७	लुञ्च्	५९६	वच	१०४३	वर्ण	१९३८
लघि	५३२	लाछि	४७३	लुथि	४३१	वच	१७८१	वर्ध	१६२३
लघि	१७५४	लाज	७८४	लुप	११४२	वज	१४१	वर्ष	८६८
लघि	१७३८	लाजि	५४७	लुप्लृ	१२९८	वञ्चु	५९९	वर्ह	८७३
लछ	४०	लाट्	१९५७	लुबि	४९०	वञ्चु	१८४८	वल	२५९
लज	१३८	लाभ	१९३६	लुबि	१६९८	वट	१४८	वल्क	१६५१
लज	१९२०	लिख	१३३३	लुभ	११४३	वट	१९१९	वष्क	१९१६
लजि	५४६	लिगि	४६५	लुभ	१३४१	वट	१८६७	वल्ग	७७०

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
वल्भ	७९७	विथृ	३१६	वृतु	१७११	व्युष	११३१	शर्ब	८०९
वल्गु	१९७७	विद	१०५४	वृतु	१२२९	व्येञ्	११७	शर्व	८५६
वल्ल	८१४	विद	१२१४	वृधु	३९०	व्रज	१४२	शल	९८९
वल्ल	८१७	विद	१४५५	वृधु	१७१२	व्रज	१५५६	शल	२५८
वल्ह	८७४	विद	१८२६	वृश	११४७	व्रण	१८०	शल्भ	७९६
वल्ह	१६६८	विद्लृ	१२९९	वृष	१८२८	व्रण	१९३७	शव	२१९
वश	१०५७	विध	१३२०	वृषु	३७६	व्रश्चू	१३०५	शर्व	८१०
वष	२१०	विल	१५८३	वृहू	१३८०	व्री	१४८३	शश	१७२
वस्क्	७६६	विल	१३२६	वॄ	१४९५	व्रीङ्	११८०	शश	२२०
वस	१०६१	विश	१३३६	वॄञ्	१४९२	व्रीड	१२३४	शसि	५९१
वस	१००९	विष	१५२६	वेञ्	११६	श.		शशु	१८८
वस	१९४२	विषु	३०५	वञ्चु	५५१	शक	११०७	शसुं	२३६
वसु	१११२	विष्क	१८३७	वेणु	७२५	शकि	५२३	शाखृ	६३८
वह	१००८	विष्क	१९४०	वेथृ	७२५	शक्लृ	१२६६	शाडृ	६७८
वहि	५८८	विष्लृ	११०५	वेद	१९६२	शच	२४५	शान	२४
वा	१०९९	वी	१०२८	वेपृ	६८२	शट	१४७	शासु	१०६४
वाक्षि	५०३	वीर	१८५६	वेल	१८९०	शठ	१६३	शासु	१०८१
वाछि	४७४	वृक	३८६	वेलृ	६५५	शठ	१८१७	शिक्ष	८६२
वात	१८९२	वृक्ष	८६१	वेल्ल	८३४	शठ	१८६४	शिचि	४२४
वाश्रृ	१२४५	वृङ्	१४८६	वेवीङ्	१०७८	शडि	५७०	शिजि	१०४८
वास	१८९४	वृजी	१०४७	वेष्ट	७८६	शण	९४५	शिञ्	१२४८
वाहृ	७१८	वृजी	१४४७	वेहृ	७१६	शद्लृ	४	शिट	२९३
विचिर्	१४३८	वृजी	१७८८	वै	१०७	शद्लृ	१३१४	शिल	१३३०
विच्छ	१७५९	वृञ्	१७७३	व्यच	१३०६	शप	२८१	शिष	३०२
विच्छ	१३१२	वृञ्	१२६१	व्यथ	२५९	शप	१२०४	शिष	१७८४
विजिर्	११०४	वृञ्	१४९६	व्यय	२७२	शब्द	१६३२	शिष्लृ	१४५९
विजि	१३१८	वृड	१४२२	व्यय	१९३२	शम	१८१९	शीक	१८०४
विजि	१४४६	वृण	१३७८	व्यध	११६९	शमु	११५३	शीकृ	७२६
विट	२९६	वृतु	३८९	व्युष	१२१७	शमो	९६९	शीङ्	१०२९
								शीभृ	६९१

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
शील्ट	८२७	शेल्ट	६६१	श्रोणृ	६५०	षञ्ज	२७	षिल	१३३१
शील्ट	१८८८	शै	१०४	श्लकि	५२२	षट	१५६	षिवु	११८२
शुच	३२७	शो	११९४	श्लगे	४१५	षट्ट्	१६१४	षु	६२
शुचिर्	१२२३	शोणृ	६४९	श्लथ	९४७	षण	१८७	षु	१०३६
शुच्य	८२०	शौटृ	६३९	श्लाखृ	६३८	षणु	१४६४	षुञ्	१२५६
शुठ	३४५	श्चुतिर्	३२५	श्लाघृ	६६८	षद	१७८२	षुट्ट्	१६४८
शुठ	१५९७	श्मील	७७५	श्लिष	१११५	षद्लृ	५	षुह	१२२२
शुठि	४८५	श्यैङ्	११५	श्लिष	१५८१	षद्लृ	१३१३	षू	१२९०
शुठि	१६९५	श्रकि	५२१	श्लिषु	३०८	षप	१६९	षूङ्	१०४३
शुध	११३०	श्रगि	४६१	श्लोकृ	७२७	षम	२२१	षूङ्	११७२
शुन	१३५२	श्रण	९४५	श्लोणृ	६५१	षम्ब	१६०८	षूद	७५४
शुन्ध	५९३	श्रण	१५४८	श्वकि	५२९	षर्व	८०९	षूद	१६३३
शुन्ध	१७९९	श्रथ	९४६	श्वच	२४६	षर्व	८५७	षृक	९५४
शुभ	३७२	श्रथ	१७७७	ष्वचि	५३६	षल	१९६	षृभु	३८४
शुभ	९०८	श्रचि	४७१	श्वठ	१८६५	षत	१०४९	षेवृ	६९७
शुभ	१३४६	श्रथ	१५४३	श्वठ	१५४७	षस्ज	३७	षै	१०१
शुम्भ	१३९३	श्रन्थ	१५१२	श्वभ्र	१६६५	षस्ति	१०५२	षो	११९६
शुम्भ	६११	श्रन्थ	१५१०	श्वर्त	१६६४	षह	१७७५	ष्टगे	९२२
शुल्क	१६६३	श्रन्थ	१७९८	श्वल	१९८	षह	९९१	ष्टन	१८४
शुल्व	१६९७	श्रमु	११५६	श्वल्क	१६५०	षह	१२०१	ष्टभि	५७९
शुष	११२५	श्रम्भु	६१६	श्वस	१०७३	षान्त्व	१६४९	ष्टम	२२२
शूर	१८५५	श्रा	९७०	श्वि	५०	षिच	१३०१	ष्टिघ	१२७३
शूरी	१२४२	श्रा	१०१५	श्विता	९१२	षिञ्	१२४७	ष्टिपृ	३२१
शूर्प	१६६२	श्रिञ्	५५	श्विदि	५१२	षिञ्	१४७४	ष्टिम	१२१०
शूल	८३०	श्रिषु	३०७	ष.		षिट	२९४	ष्टीम	१२३३
शूष	८९०	श्रीञ्	१४७७	षगे	९२०	षिध	२८८	ष्टुच	३७०
शृधु	९१२	श्रु	३१	षघ	१२६७	षिधु	१११७	ष्टुङ्	१०४०
शृधु	३९१	श्रृधु	१७१०	षच	२४४	षिधू	२८९	ष्टुप	१६०३
शॄ	१४९३	श्रय	५७	षच	२७९	षिम्भु	५६१	ष्टुभु	३७१

धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क	धातु	क्रमाङ्क
होडृ	६४५	ह्री	१०९१	ह्लप	१५५८	ह्वल	९५२	हृ	७६
होडृ	६७३	ह्रीछ	४१	ह्लस	२१२	ह्वगे	९१८	हृ	७७
ह्राद	७५३	ह्लगे	९१९	ह्लादी	६२३	ह्मल	९५३	ह्वेञ्	११८

सूत्र-वार्तिकानुक्रमणिका

डॉ० पुष्पा दीक्षित

12 जून 1943 को जबलपुर नगर में, प्रख्यात आयुर्वेद चिकित्सक तथा न्याय, वेदान्त और संस्कृत साहित्य के गम्भीर विद्वान प्राणाचार्य पण्डित सुन्दरलाल जी शुक्ल के घर जन्म। बाल्यकाल से ही पूज्यपिताजी से तथा अनन्तर काशी की विद्वत्परम्परा के महनीय आचार्य पण्डित विश्वनाथ जी त्रिपाठी, प्राचार्य, कृष्णबोधाश्रम संस्कृत महाविद्यालय, जबलपुर से नव्यव्याकरण का अध्ययन। एम० ए०, पी–एच०डी० करके सन् 1965 से मध्यप्रदेश शासन/छत्तीसगढ़ शासन की महाविद्यालयीन शिक्षा में प्राध्यापक पद से सेवानिवृत्त। आपने पाणिनीय अष्टाध्यायी के वैज्ञानिक क्रम का अनुसंधान करके व्याकरणशास्त्र में एक सर्वथा नवीन प्रस्थान को जन्म दिया, जिससे 6 मास में सम्पूर्ण अष्टाध्यायी अधिगत हो जाती है।

प्रकाशित ग्रन्थ

1. **अष्टाध्यायी सहजबोध,** भाग 1 सार्वधातुक लकार। 2. **अष्टाध्यायी सहजबोध,** भाग 2 आर्धधातुक लकार। 3. **अष्टाध्यायी सहजबोध,** भाग 3 कृदन्तप्रकरणम्। 4. **अष्टाध्यायी सहजबोध** भाग 4 तद्धितप्रकरणम्। 5. **आर्धधातुक प्रत्ययों की इडागम व्यवस्था।** 6. **अग्निशिखा** (गीतिकाव्य)। 7. **शाम्भवी** (गीतिकाव्य)। 8. **शीघ्रबोध व्याकरणम्। 9. अष्टाध्यायीसूत्रपाठः।**

प्रकाश्यमानग्रन्था

10. कृदन्तरूपकोशः। 11. तिङन्तरूपकोशः। 12. प्रक्रियानुसारपाणिनीयधातुपाठः। 13. पारिभाषेन्दुशेखरस्य बहुतरपरिभाषाणामन्यथासिद्धिः। 14. अष्टाध्यायीसहजबोध के अवशिष्ट चार भाग। **15. नव्यसिद्धान्तकौमुदी** तथा अन्य।

ग्रन्थ के विषय में

डॉ० पुष्पा दीक्षित का यह **'अष्टाध्यायी सहजबोध'** महामुनि पाणिनि की अन्तरात्मा को निश्चित ही आनन्दित करेगा। इससे संस्कृत साहित्य का अत्यन्त कल्याण सम्भावित है, ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है।

-आचार्य डॉ० रामप्रसाद त्रिपाठी

डॉ० पुष्पा दीक्षित की यह **'सहजबोध'** नामक कृति परम्परागत विद्वानों और विद्यार्थियों में 'पाणिनीय महाशास्त्र' के प्रति अभिनव रुचि जगायेगी एवं शोध की नई–नई दिशाओं का निर्माण करने में सहायक होगी।

-आचार्य डॉ० रामकरण शर्मा

प्रतिभा प्रकाशन
(प्राच्यविद्या प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता)
7259/23 अजेन्द्र मार्केट
प्रेमनगर, शक्ति नगर, दिल्ली-7
e-mail : pratibhabooks@ymail.com